नानक नाम चढ़दी कला

कर्तार सिंह दुग्गल

पब्लिकेशन ब्यूरो
पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला

नानक नाम चढ़दी कला

कर्तार सिंह दुग्गल

पब्लीकेशन ब्यूरो
पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला

NANAK NAM CHARHDI KALA (NOVEL)
by
KARTAR SINGH DUGGAL
Translated by
VIJAY CHAUHAN

ISBN 81-7380-682-9

2001
प्रथम संस्करण : 550
मूल्य : 550-00

डॉ. बलबीर सिंह भाटिया रजिस्ट्रार, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला ने प्रकाशित की तथा राम प्रिंटोग्राफ, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित

दो शब्द

पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला का पंजाबी भाषा विकास विभाग पंजाबी भाषा और संस्कृति विकास में अहम भूमिका निभा रहा है । इस विभाग की गतिविधियों एव विकास कार्यों का मैं आरम्भ से ही भागीदार रहा हूँ । मैने इस विभाग के निर्देशक के नाते कार्य करते हुए अनुभव किया है कि पंजाबी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति के विकास में यह विभाग कारगर भूमिका निभा रहा है । मैं इस विभाग से एक कवि एवं समीक्षक के नाते भी जुड़ा रहा हूँ । मेरा मानना है कि पंजाबी भाषा विकास विभाग अपने दायित्वों के प्रति पूर्णतः सचेत है ।

यह विभाग पंजाबी भाषा में बहुआयामी तथा विभिन्न ज्ञानानुशासनों से संबंधित रचनाएं प्रकाश में ला रहा है । इससे पंजाबी पाठक अन्य विषयों का ज्ञान सहज ही प्राप्त कर रहा है । इस विभाग की एक योजना यह भी रही है कि पंजाबी के उच्च कोटि के साहित्य को हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद के माध्यम से लिया जाये । इसी प्रकार अन्य भाषाओं में उपलब्ध ज्ञानात्मक साहित्य पंजाबी भाषा में अनुवाद कर सभी के लिए लाभकारी बनाया जा सके । इसी श्रृंखला में पंजाबी के प्रतिष्ठित कथाशिल्पी डा० करतार सिंह दुग्गल के दीर्घकाय उपन्यास 'नानक नाम चढ़दी कला' का हिन्दी अनुवाद करवाया गया है । इस अनुवाद से हिंदी पाठक पंजाबी भाषा, संस्कृति से भली भाँति परिचित हो सकेंगे । मुझे पूर्ण विश्वास है ।

यह विभाग पंजाबी भाषा और संस्कृति के विकास के साथ अन्य अनेक विषयों को पंजाबी भाषा में उपलब्ध कराने में अपनी अहम भूमिका निभा रहा है । मैं इस विभाग के बहुमुखी विकास की कामना करता हूँ ।

पंजाबी विश्वविद्यालय,
पटियाला - 147002

डा. जसबीर सिंह आहलूवालिया
उपकुलपति,

विभागी शब्द

पंजाबी यूनिवर्सिटी, पंजाबी भाषा, साहित्य तथा संस्कृति के विकास के लिए वचनबद्ध है। इसी आशय की पूर्ति के लिए पंजाबी भाषा विकास विभाग ने कई प्रकार की योजनायें निर्धारित की हैं। मध्यकालीन एवं आधुनिक साहित्य की बेहतरीन रचनाओं को हिन्दी, उर्दू तथा अंग्रेज़ी भाषा में अनुवाद करवाने का यूनिवर्सिटी ने फैसला लिया है। इसी योजना के अन्तर्गत पंजाबी के प्रसिद्ध विद्वान कर्तार सिंह दुग्गल के नावल "नानक नाम चढ़दी कला" का अनुवाद श्रीमती विजय चौहान ने किया है। यह त्रै-लड़ी नावल की पहली कड़ी है। "तेरे भाणे" तथा "सरबत का भला" इसकी अन्य कड़ियाँ हैं। इसमें गुरु नानक देव जी के समय से लेकर गुरु रामदास जी के समय तक का विवरण है। इस नावल के हस्तलिखित की प्रैस कापी तैयार करवाने में हमारे विभाग के प्रूफ रीडर श्रीमती इन्द्रजीत कौर का कार्य सराहनीय है। मुझे आशा है कि पाठकों के लिए यह पुस्तक लाभकारी सिद्ध होगी।

धनवंत कौर
मुखी

पंजाबी भाषा विकास विभाग
पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला।

नानक नाम चढ़दी कला

प्राचीन पंथ प्रकाश के कर्त्ता भाई रत्न सिंह भंगू का लिखना है कि कैप्टन मरै ने मुझे कहा कि

इतनी बात बताहु
सिंघन पायो राज किम
औ दीनो किन पातशाह ।

भंगू जी ने कहा कि ये सब कृपा गुरु नानक देव जी की है । यह सुन मरै ने कहा : भयो नानक फकीर ।

उन शाही की क्या तदबीर ।

उसको समझाते रत्न सिंह ने कहा कि गुरु नानक शहनशाह है । दीन-दुनी का सच्चा पातशाह है । उसने कई शाह फकीर कर दिए और कई फकीर पीर । खुद वह लापरवाही से घूमते रहे । उनके उपदेश ने ही

चिड़ीअन ते बाज कुहाए ।
छेलन कोलों शेर तुड़ाए ।

यह भ्रम अकेले कैप्टन मरै को ही नहीं लगा और भी अनेक को अब तक लगा हुआ है । कोई विरला जानता है कि जिस तेग ने खालसे की शान फैलायी, उसे तैयार अवश्य गुरु गोबिन्द सिंह ने किया, पर फौलाद गुरु नानक देव जी महाराज कमाकर गए थे ।

मैकालफ ने जब छः जिल्दों में सिक्ख इतिहास सम्पूर्ण कर लिया तब उसने पहला वाक्य ही यह लिखा कि मैं पूर्व से यह मत आपके सामने लेकर आया हूँ जिसमें बनावट नहीं है । पाज के लिए कोई स्थान नहीं । पाज नहीं बिखेरा जाता । आप स्वतंत्र हैं और किसी को गुलाम नहीं देखना चाहते । किए को जानना, न्याय, निर्माणता, निष्पक्षता, सच्चाई दयानतदारी, वफादारी और चारित्रिक और सब भ्रातृत्व की विशेषताएं उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी ।

जैसे अठारहवीं (शताब्दी) के अन्त में और फिर उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में सिक्खों के मूल को जानने की प्रबल इच्छा उठी थी । आज इक्कीसवीं शताब्दी में प्रवेश होने के समय विश्व-भर में बेशक विश्वविद्यालय हैं अथवा सामाजिक संस्थाएं, गुप्त एजेंसियां हैं अथवा सरकारी अदारे, सब में एक दौड़ लगी हुई है कि वह शक्ति ढूंढे जिसके कारण सिक्ख दबाने से भी दबाए नहीं जाते । गुरु नानक देव जी को सुमेर पर्वत पर आए देख सिद्धों के मुंह से यह वाक्य निकला था – "**कौन शक्त तैं इथे लिआई ।**" आज

हर कोई इसे ही ढूँढने में लगा हुआ है । सरदार कर्तार सिंह दुग्गल ने उपन्यास का आश्रय लेकर उन सब रहस्यमयी शक्तियों को ज़ाहिर करने का साहस किया है जिस कारण पहले पंथ प्रकट हुआ, फिर खालसा की स्थापना हुई और एक स्वतंत्र राज्य अस्तित्व में आया ।

गुरु नानक जब प्रकट हुये सारे देश की हालत शोचनीय थी । इतना बुरा हाल था कि तैमूर के हमले को हुये एक शताब्दी से अधिक समय हो गया था परन्तु

लोकी हुक्म तैमूर दा बजा लिआवण ।
उथे की है ताकत महरीआं, नक नत्थां पावण ।
उथे मर्दा कब्जे काठ दे, सिर कुला हंडावन ।
घोडियां दे मुह नाहरीआ न साखत पावण ।

गुरु नानक देव जी ने अपनी वाणी में 'पति' शब्द का प्रयोग तीन सौ बार किया है । इस शब्द का प्रयोग वह भी एक दो बार, कबीर जी के बिना किसी अन्य भक्त ने प्रयुक्त नहीं किया । यहाँ से अनुभव होता है हिन्द की 'पति' ही गुरू नानक देव जी रखने के लिये आये थे । गुरु साहिबान पहले 'पति' वापिस लाये और फ़िर पालने की जाँच सिखलाई । रेगिस्तानों में जो गुरु पातशाहों ने नगर बसाये, यह नखलस्तान की तरह ही थे । वहाँ जाते ही प्रभु का ध्यान आता था । बुराइयाँ भागती थीं । अच्छाइयां घर आती थी । एक अमृतसर को ही देखो जहाँ न शाह व्यापारी का गला काटता था और न व्यापारी दुकानदार का और ग्राहक का । कैसी अनूप रामदासपुर की भाग्यशाली बसती नगरी होगी जहाँ न किसी को सज़ा मिलती थी, न ज़कात, न जज़ीया । 'जेज़ीआ डनु को लए न जगाति' की गवाही गुरु ग्रंथ साहिब में है । सरदार कर्तार सिंह दुग्गल ने बड़े सहज ढंग से इन सब तथ्यों को उजागर किया है । 'नानक नाम चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत दा भला' को प्रतीक मान कर समूचे सिक्ख इतिहास को तीन जिल्दों में अंकित किया है ।

उन्होंने दृढ़ किया है कि गुरु नानक देव जी ने नाम ऐसा दृढ़ करवा दिया कि प्रत्येक चड़दी कला में रहने लगा । भाणे के रस में आया । सब का भला मुख्य रख लिया । वह करामात जो बाबर ने बंदीख़ाने में पड़े बाबे की अपने आप चक्की चलने की सूरत में देखी थी आज शताब्दियाँ बीतने के पश्चात् किसी भी बंदीखाने में कष्ट सहते हुये सिक्खों में देखी जा सकती है । वली कंधारी के गिराये पहाड़ को बाबे ने एक बारी नहीं कई बारी रोका है । कभी तेज़ रफ्तार चलती गाड़ी को रेल की पटड़ी पर रोक कर और कभी ज़ुल्मी बाढ़ को तलवार की नोक से ।

जो उपन्यास में मीर खान (सैदपुर) कहता है वह ही इतिहास के पड़ाव हैं । यहाँ केवल आगे पीछे हुये हैं । मीर खान कहता है कि जब पहली बार उसने ईसा को सूली चढ़ाये जाने की वार्त्ता सुनी तो मेरा अन्तर कह उठा कि अगर मैं वहाँ होता तो सूली चढ़ाने वालों का 'जण बच्चा घाणी' कर देता । फिर सुना तो हृदय बोला कि ईसा जी को बचा कर भाग उठता और तीसरी बारी सुना तब समझ आई कि सच्च के लिये, ईमान के लिये, ईसा जी कुर्बान हुये हैं, मैं उनके साथ ही सूली चढ़ जाता ।

गुरु नानक देव जी ने पहले प्रत्येक हृदय में शहादत का जज़बा भरा । 'सिर धर तली

गली मेरी आने' की चुनौती दी। फिर दूसरे के लिऐ, पर के लिए, दूसरों की भलाई के लिए शीश देने की चाल चलाई और बाद में ऐसे योद्धे पैदा हुए जिन्होंने 'जुल्म ज़लामी' करने वाले की जड़ ही उखाड़ कर रख दी।

भाई गुरुदास (दूसरे) ने इस तरह लिखा है –

निज पंथ चलाइओ खालसा धर तेज करारा।
सिर केस धार कर खड़ग को सब दुष्ट पछारा।
सील जत की कछ पहिरि, पकड़िउ हथिआरा।
तुरक दुसट सब छै कीए हरि नाम उचारा।
तिन अगे कोइ न ठहिरिउ भागे सिरदारा।
जिह राजे शाह अमीरड़े हो सभ छारा।
फिर सुन कर जैसी धमक को कापे गिर भारा।

हमारा इतिहास पहले साखी के रूप में था। उसी को बिलास का रूप दिया गया। बिलास ही बाद में प्रकाश बने। जो अब इतिहास के रूप में हमारे सामने है। साखी को उपन्यास का रूप देने का प्रयत्न यह पुस्तक है। दुग्गल जी ने बहुत प्रयास किया है कि इतिहास का ढांचा न बदले परन्तु कहीं कलम की विलक्षणता देते हुये कोई नया रंग बिखर गया हो तो उसे इतिहास न समझ लेना। पढ़ते-पढ़ते पंजाब की संस्कृति की पूरी झलक अपने आप साथ-साथ मिलती जाती है। परम्पराएँ, कर्मकांड का बोझ हमारे सिर से उतार कर गुरु नानक ने जैसे हमें फूल की तरह हलका कर दिया, उस का नज़ारा भी होता जाता है। जो संघर्ष बरकते (मुगलानी) के मन में हर समय होता रहता है कि क्या बाबा नानक का बताया मार्ग अच्छा है अथवा जिस पर वह अब तक चलती रही है, वह हर उस में होने लग गया था जो करतारपुर, खडूर साहिब, गोइंदवाल अथवा अमृतसर हो आता था। अपनी इज्ज़त हमलावर के हाथों जाती देख बरकते। 'बहुड़ी वे बाबन पुकार उठती थीं। वैसे ही हर वह जिस की ईज्जत को कोई जरवाण हाथ डालता था तो वह बोल उठती थी।

बहुड़ीं वे बाबा डांग वालिआ!

बड़ी तीखी, मर्मस्पर्शी, दिलों को छूने वाली बात कही है दुग्गल जी ने। पता नहीं क्या पढ़कर प्रिंसीपल तेजा सिंह ने कहा था कि दुग्गल के पास सब औज़ार हैं लेकिन रंदा नहीं। इस उपन्यास को पढ़ कर हर एक महसूस करेगा कि दुग्गल जी बात को पूरा करते हैं और कोई नहीं। बहुत लम्बे रास्ते पड़े हैं दुग्गल जी पर मैंने देखा है कि सांस भी उनकी लम्बी है। मुझे विश्वास है कि 'करतार' आप बीच खड़े हो कर इस कार्य को पूरा करेंगे।

उडा ऊडि चढ़ा असमानि।
साहिब संम्रिथ तेरै ताणि

सतिबीर सिंह (प्रिंसीपल)

पटियाला
मई 10, 1989

अपनी तरफ से

(पहले संस्करण की भूमिका)

योजनाबद्ध काम करना मेरे स्वभाव का एक अंग रहा है । पूर्वनिश्चित योजना अनुसार काम करके मैं उजला-उजला, सुबक-सुबक महसूस करता हूँ ।

हाल मुरीदां दा, मां-पिओ-जाए, और जल की प्यास न जाइ, मेरे उपन्यासों की त्रै-लड़ी एक योजनाबद्ध प्राजैक्ट था । इन में मैंने पंजाब की नुहार की तलाश की है । पंजाब, अंगज़ों की गुलामी के चंगुल में फंसा । पंजाब, आज़ादी के लिए संघर्ष कर रहा । आज़ादी की दहलीज़ पर पंजाब जिसे लहू की लीक लगाकर विभाजित कर दिया गया । साम्प्रदायिक फसादों का पंजाब । शरणार्थियों की बाढ़ का पंजाब । दुबारा बसाने के मुअजज़े (गण्यमान्य)का पंजाब । पंजाब आज़ाद भारत में अनाज का भंडार । खाता-पीता पंजाब उस देश का अंग जिसकी ज़िंदगी की सुडौल कीमतों पर पकड़ कभी ढीली हो जाती, कभी कसी जाती । अंतरराष्ट्रीय पैंतड़े-बाजियों का झकझोरा हुआ, बार-बार अपने रास्ते से भटकता हुआ, बार-बार अपने पथ को तलाशता हुआ । कोई 1600 पृष्ठों में मैंने यह कहानी कही है ।

और फिर मेरी निज की दास्तान । कर्तार सिंह दुग्गल वलद बाबा जीवन सिंह की कहानी जो कोई तीन वर्ष हर रविवार पंजाब की तीन अखबारों में शृंखलाबद्ध प्रकाशित होती रही । अपने आप की तलाश जो **किस पहि खोलऊ गंठड़ी** के रूप में 660 पृष्ठों से ज़्यादा आत्मकथा बन कर पाठकों के सामने पेश की गई । यह वार्ता एक पोठोहारी जातक की है जो सती की, शिव की,सुन्दरता की तलाश में लम्बे रास्ते की और गामज़न है ; भटक-भटक रहा, गिर पड़ता, मुड़ फिर उठ कर चल रहा है और आगे बढ़ रहा । इस पिढ़ में **मेरी साहित्यिक जीवनी** के नाम के साथ अपनी एक लेखक की दास्तान मैंने और जोड़ी है ।

अब, यह मेरा तीसरा योजनाबद्ध प्राजैक्ट है जिस में मैं सिक्खी की पहचान का छोटा-तुच्छ यत्न करने जा रहा हूँ । इस का क्षेत्र गुरू नानक से लेकर आज के अकाली आन्दोलन तक मैंने चित्रित किया है । इस त्रै-लड़ी की शुरुआत **नानक नाम चढ़दी कला** से होती है । इसमें गुरु बाबा नानक, गुरु अंगद देव जी, गुरु अमरदास और गुरु रामदास इत्यादि के काल की कहानी है । **तेरे भाणे** और **सरबत का भला** नाम की दो जिलदों में इस कहानी को आगे लेकर जाऊँगा । इस तरह की मेरी योजना हैं ।

सिक्ख माता-पिता के घर पैदा हुआ, सिक्ख भ्रातृत्व में बढ़ा, मैं सिक्खी का दीवाना हूँ, इतिहासकार होने का मेरा दावा नहीं । कहानी लेखक मैं अवश्य हूँ । यह प्रयत्न मेरा सिक्खी की पहचान की कहानी हैं; एक कहानी लेखक की ज़बानी ।

इस बात की चिन्ता है कि ऐतिहासिक पहलू से मैं कहीं भटक न जाऊँ। मैंने अपने मसौदे को गुरू नानक फाऊंडेशन के डायरेक्टर डा. महेन्द्र सिंह और सुप्रसिद्ध सिक्ख इतिहासकार प्रिंसीपल सतिबीर सिंह को देखने का कष्ट दिया है। और उनके सुझावों से मैंने बहुत कुछ हासिल किया है। विशेष रूप में प्रिंसीपल सतिबीर का परामर्श। इन मित्रों का मैं हृदय से धन्यवादी हूँ। पता नहीं उनका यह ऋण कैसे उतार सकूँगा।

यह खत्म करने से पहले मैं अपने पाठकों को स्मरण करवाऊँगा कि यह मेरी पेशकश सिक्ख इतिहास को कहानी नहीं यह एक कहानी है जिसमें सिक्ख इतिहास प्रतिबिम्बित होता है, जैसे मैंने इनको पाया है। और इस तरह करते हुये मेरी अभिलाषा सिक्खी की पहचान रही है और बस। हर साहित्यिक रचना साहित्यकार की अपने अन्तर की तलाश होती है, अपने-आप, अपने इर्द-गिर्द, अपने भ्रातृत्व, अपनी परम्परा इत्यादि को पहचानने का एक ढंग।

मेरी इच्छा है, मैं इस योजना को पूरा कर सकूँ। पथ बड़ा लम्बा है और इधर ज़िंदगी की सांझ हो गई है।

पी-7, होज़ खास एँकलेव
नई दिल्ली-110016
10 मई, 1989

कर्तार सिंह दुग्गल

ततकरा

1.	दो शब्द	*(वी. सी. साहिब से)*	iii
2.	विभागी शब्द	*(डा. धनवंत कौर)*	v
3.	नानक नाम चढ़दी कला	*(सतिबीर सिंह प्रिंसीपल)*	vii
4.	अपनी तरफ से	*(कर्तार सिंह दुग्गल)*	xi
	पहला खंड		1-110
	दूसरा खंड		111-214
	तीसरा खंड		215-320
	चौथा खंड		321-438

पहला खंड

1

प्रातः संध्या गाते हैं। कोई समस्या सामने आती है, कोई मुश्किल आती है, निर्णय करना होता है, हाथ जोड़ कर सभी खड़े हो जाते हैं, प्रार्थना करते हैं। प्रार्थना करते हुये गाते हैं – राज करेगा खालसा। सारा दिन यही गाते रहते हैं।

जेलों में नरक भोग रहे हैं। चक्कियाँ पीसते-पीसते इनके हाथों पर फफोले पड़ गये हैं। खाने के लिए कंकरयुक्त दाल और सूखी रोटियाँ मिलती हैं। पंजाब की सभी जेलें पूरी तरह से भर चुकी हैं। दिल्ली की इस जेल में भी तिल धरने का स्थान नहीं। भूसे की तरह दबाया जा रहा है। भूखे रह लेते हैं, नग्न पड़े रहते हैं, लाठी खा लेते हैं, परन्तु फिर भी होठों पर सदैव यही रहता है – राज करेगा खालसा।

खालसा कैसे राज्य करेगा ? सरकार उनका पंजाबी प्रदेश तो बनने नहीं दे रही। सारे देश को भाषाओं के आधार पर विभाजित कर दिया गया है। आंध्र में तेलगु का एक दीवाना जान पे खेल गया। लोगों ने रेल की पटड़ियाँ उखाड़ फेंकी, डाकखानों और तार घरों को तहस-नहस कर दिया। थानों और चौकियों में पुलिस वालों पर पत्थर बरसाये, गोलियां चली; लोग ज़ख्मी हुये, लोग मारे गये। और फिर सरकार ने तेलगु भाषा का एक अलग प्रदेश स्वीकार कर लिया।

मराठी कहते-हमारी भाषा मराठी है। हमने गुजरातियों के साथ सदैव टंगे नहीं रहना। हमने अपना प्रदेश अलग बनाना है। हमारे प्रदेश की भाषा मराठी होगी। अगर गुजराती आनाकानी करेंगे तो हम इन्हें मार-मार कर बंबई से बाहर निकाल देंगे। हमने अपने प्रदेश का नाम महाराष्ट्र रखना है और उन्होंने बंबई में हड़ताल करवा कर सम्पूर्ण व्यापार वहीं पर ठप्प करवा दिया। छुरेबाज़ी शुरू हो गई। बसों को उलटाया जाने लगा। सचिवालय को घेरा डाल के लोग बैठ गये। मंत्रियों और उच्चाधिकारियों की जान खतरे में थी। अन्त में सरकार ने उनका नया प्रदेश बनाना स्वीकार कर लिया।

सिक्ख कहते, आखिर हमने सरकार का कौन सा गुनाह किया है ? हमें अलग प्रदेश क्यों नहीं दिया जाता ?

सरकार का जवाब था, आंध्र तेलगु भाषा का प्रदेश होगा। महाराष्ट्र ऐसे ही मराठी ज़बान का प्रदेश होगा और पंजाब में हिन्दु अपनी भाषा हिन्दी बताता है। सिक्खों की भाषा बेशक पंजाबी है, परन्तु उनके लिये नया प्रदेश बना तो, बीच में कुछ नहीं रहना। सरहद के साथ लगते इस तरह के कमज़ोर प्रदेश को पाकिस्तान कभी भी समाप्त कर सकता है और साथ ही बाकी प्रदेश भाषाओं के प्रदेश हैं, धर्मों के प्रदेश नहीं। सिक्खों की पंजाबी प्रदेश की मांग में सरकार को सिक्ख प्रदेश की गंध आती है और सिक्खों के नेता इस संदेह को दूर करने में असफल रहे।

और सरकार की जेलें भर गईं । लाखों सिक्ख पंजाबी प्रदेश के नारे लगाते हुये अपने आप को गिरफ्तार करवा रहे हैं । इनमें बच्चे भी हैं, औरतें भी हैं, नौजवान भी हैं, बूढ़े भी हैं । सारा-सारा दिन पाठ करते रहते हैं, शब्द गाते रहते हैं, पंजाबी प्रदेश के नारे लगाते रहते हैं ।

आज सुबह से दिल्ली की इस जेल की हालत बड़ी चिंताजनक है । सैंकडों सिक्ख कैदी कच्छे पहने हुये, नंगे-धड़ँगे, जेलर के दफतर के बाहर धरना देकर बैठे हैं । उनकी मांग है, रसोइया जो उनकी रोटी पकाता है, उसे नौकरी से निकाल दिया जाये ; उन्होंने अपनी आंखों से उसे बीड़ी पीते देखा था । जेलर कहता हैं, वह और सब कुछ कर सकता है, परन्तु किसी को बीड़ी पीने की वजह से नौकरी से नहीं हटा सकता । हिन्दू रसोइया बीड़ी पीता है । उसे कोई कैसे रोक सकता है ? हिन्दू जेलर सोचता है, उसके अपने मुंह के साथ हर वक्त सिगरट लगा रहता है, वह कैसे किसी को बीड़ी पीने से मना कर सकता है ? और फिर जेल के बाकी हिन्दू अफसर मन ही मन में सोचते हैं, यदि सिक्खों की प्रदेश बनने से पहले ही यह मांग है कि कोई हिन्दू बीड़ी नहीं पी सकता तो जब यह इनका प्रदेश बन गया तब ये क्या हाल करेंगे अपने हिन्दू पड़ोसियों का । ये तो मंदिरों से मूर्तियाँ भी उठवा लेंगे । हिन्दू औरतों को कड़े डलवा देंगे और फिर उनमें से कई नौजवान अफसर सोचते, हिन्दू लड़कियाँ तो पहले ही कड़े डाले घूम रही हैं । धातु के कड़े डालना आजकल का फैशन हो गया है । लड़कियाँ एक छोड़ दो-दो, चार-चार कड़े पहने घूम रही हैं और फिर बीच-बीच में से कुछ लोगों को डर लगता । कड़े डालने का फैशन लड़कियों के सौन्दर्य करके नहीं ये तो हिन्दू लड़कियों के अन्दर सिक्ख नवयुवकों का आकर्षण सूचक है । और उनके मुंह का स्वाद फीका हो जाता है । उन्हें अपनी बहनों, भाभियों द्वारा कड़े डालना ज़हर लगने लगता है । वे उन्हें तो कुछ कह नहीं सकते । सिक्खों के प्रति उनका व्यवहार रूखा-रूखा हो जाता है । सीधे मुंह बात नहीं करते । ताली दो हाथों से बजती है । सिक्ख कौन से कम हैं । ईंट का जवाब पत्थर से देते हैं । तोबा ! तोबा ! कितना ज़हर फैल रहा है ।

जेल में अपने दफतर के भीतर बंद जेलर नीचे-ऊपर टेलीफोन कर रहा है । कोई उसे कुछ नहीं बता रहा । और बाहर नंगे कैदी चाहे कुछ भी कर लें । 'शान्तमई', 'शान्तमई' कहते हैं, पर जब आदमी ऊब जाता है तो पता नहीं लगता, इन्सान क्या कर रहा है ? कभी जेलर को भय लगने लगता है, व कभी उसके भीतर का सरकारी अफसर दांत निपोरते हुए कहता है, "सिक्खों का यह दावा नाजायज़ है । इसे किसी भी हालत में स्वीकार नहीं किया जा सकता । किसी हिन्दू को बीड़ी पीने से कैसे रोका जा सकता है ?"

सिक्ख सोचते हैं, हमारा हिन्दुओं के साथ कोई मेल नहीं । ये लोग तम्बाकू पीते हैं । सिक्खों के लिए तम्बाकू पीना मना है । पर सिक्खों के लिए शराब पीना भी तो वर्जित है और शराब सिक्ख ऐसे पीते हैं जैसे मछली पानी पीती है ।

कुछ भी हो, जिन हाथों से कोई बीड़ी पीता है, उन हाथों के साथ वह खालसे का लंगर तैयार नहीं करेगा । सिक्ख अपना धर्म इस तरह से भ्रष्ट नहीं होने देंगे ।

और बाहर बैठे सिक्ख कैदी मरने-मारने के लिए तैयार हैं। सुबह से भूखे हैं। जेलर अंदर अपने दफतर में कैद है। ऊपर से उसे बस यही कहा जा रहा है, सरकार को कमज़ोरी नहीं दिखानी चाहिए। किसी का हक नहीं मारना चाहिए, किसी के अधिकार पर कब्ज़ा नहीं करना चाहिए। परन्तु सरकार को न्याय के लिए डट कर मुकाबला करना चाहिए। और जेलर सोचता है, न्याय खालसे के पक्ष में नहीं। लेकिन उन्होंने ज़िद पकड़ ली है। हठ करके बैठ गए हैं। बैठे रहें और कितना समय बैठे रहेंगे, सुबह की बात और थी, दोपहर की बात और थी। बेशक सर्दियां अभी शुरू नहीं हुई। वायु में नमी बढ़ रही है। संध्या में जब अपने-आप इनकी पीठें ठंड से ठिठुरेंगी, अपनी-अपनी बारकों में जा घुसेंगे। जेलर अपने फैसले पर अडिग है ; वह रसोइये के विरुद्ध बीड़ी पीने के लिए कोई कार्यवाही नहीं करेगा। न ही इस शिकायत की वजह से उसे नौकरी से हटायेगा।

और जेलर ने टेलीफोन करके पुलिस भी और मंगवा ली। जेल के सुरक्षाकर्मियों (गारद) को भी सचेत कर दिया है।

जहाँ तक नज़र काम करती है। बाहर सिक्ख ही सिक्ख हैं। आंगन में सड़क पर, सड़क से दूर खेल के मैदान में। बारकों की तरफ जा रही गलियां सिक्खों से भरी पड़ी हैं। पाँवों से नंगे, सिर से नंगे, केवल कच्छा पहने, सुबह से भूखे बैठे हैं। कभी गाने लग जाते थे, कभी नारे लगाने लग जाते हैं :

जो बोले सो निहाल
सत् श्री अकाल।
पंजाबी सूबा
        ज़िंदाबाद !
लेकर रहेंगे
        पंजाबी सूबा।

कभी-कभी चटाई वाली खिड़की में से देखते हुए जेलर को लगता है, यदि कभी ये लोग इस तरह नारे लगाते हुए उसके दफतर पर आक्रमण कर दें तो ईंट के साथ ईंट बज जाएगी, तीलियों की तरह सारी बारक तहस-नहस कर देंगे। परन्तु फिर उसे चारों तरफ तैनात पुलिस के सिपाही दिखाई देते हैं। गार्द के संतरी दिखाई देते हैं जिनके कंधों पर संगीनों वाली बन्दूकें गोलियों से भरी हैं और जेलर सोचता है ताकत का मुकाबला ताकत से किया जा सकता है। और सरकार की ताकत का कोई अंत नहीं।

जैसे-जैसे संध्या हो रही है, वैसे-वैसे नारे ऊँचे होते जा रहे हैं। जैसे-जैसे नारे ऊँचे हो रहे हैं , हवा में ज़हर फैलता जा रहा है और हर क्षण बाहर पुलिस की गाड़ियां अत्यधिक सिपाही लाकर जेल अधिकारियों की मदद के लिए पहुंचा रही हैं।

दोनों पक्ष अपने-अपने निर्णय पर अडिग हैं। सिक्ख कहते हैं, जब तक रसोइये को सज़ा नहीं दी जाती, न वे कुछ खाएंगे, न कुछ पहनेंगे, न बारकों में जाएंगे। जेल के अधिकारी कहते हैं, बीड़ी पीना कानून की नज़र में कोई गुनाह नहीं। बीड़ी पीने के लिए वह अपने मुलाज़िमों को सज़ा नहीं दे सकते। जेल का प्रत्येक उच्चाधिकारी खुद तम्बाकू

का नशा करता है ।

दोनों पक्ष टस से मस नहीं हो रहे ।

पता नहीं किस समय क्या हो जाए ।

और एकदम वर्षा होने लग गई है । आकाश में बादलों का नामोनिशान ही नहीं था । परन्तु एकदम वर्षा होने लगी है । हवा में पहले ही नमी थी । अब वर्षा की वजह से ठंड और बढ़ जाएगी । और सिक्ख कैदी नंगे हैं, भूखे हैं, सुबह से नारे लगाते थके-टूटे हैं ।

और फिर जेलर को कोई बताता है, वर्षा चारों तरफ हो रही है पर सिक्ख कैदी वैसे -के-वैसे हैं । जहां-जहां नारे लगा रहे नंगे सिक्ख बैठे हैं, वहां वहां वर्षा की एक बूंद भी नहीं पड़ रही । यह करिश्मा देख कर कैदियों के नारे और ऊँचे हो गए हैं । ऊँचे और ऊँचे ! यह करामात देखकर जेलर के हाथ-पैर ठंडे पड़ गए हैं । अपने कमरे की खिड़की में चटाई में से वह देख रहा है । सचमुच जहाँ-जहाँ खालसा बैठा है वहां बूंदें नहीं पड़ रही हैं और आगे-पीछे चारों तरफ वर्षा हो रही है ।

जेलर टैलीफोन पर अपने उच्चाधिकारियों को राय देता है कि कैदियों के साथ समझौता कर लेना चाहिए । जेल में करामात हो रही है, वह अपनी आंखों से देख रहा है । आगे-पीछे वर्षा हो रही है । परन्तु खालसे पर एक बूंद पानी की नहीं पड़ रही । इसी को तो करामात कहते हैं । जेल में करामात हो रही है ।

2

''करामात ।''

''करामात ! करामात !!'' सारी जेल में शोर मच गया । एक कैदी की चक्की अपने आप चल रही थी , जिस अंधेरी कोठरी में उसे कैद किया गया था वह दिव्य प्रकाश से जगमगा रही थी । ''धन्य निरंकार'',''धन्य निरंकार'' की मधुर ध्वनि दरो-दीवार से फूट रही थी ।

चक्की अपने आप चल रही थी और सामने वह विराजमान था ।

दूध-सी सफ़ेद दाढ़ी । दीप्तिमान चौड़ा मस्तक ! घनी भौंवों तले अलमस्त मूँदे कोमल नयन । गुलाबी दमकते गाल । अलौकिक आनन्द में जुड़े ओंठ । हिंदुओं जैसी सूरत, तुर्क-पठानों जैसा पहरावा । चारों तरफ़ ख़ुशबू ही ख़ुशबू, जैसे कोई खिली फुलवाड़ी हो । आकाश पर काली घटा उमड़ आई थी । आस पास की झाड़ियों में मोर पपीहे गा रहे थे । क़ैदख़ाने में जैसे ठँडक छा गई । धीरे धीरे शोर -शराबा, चीख़-चहाड़ा, कूक-पुकार मिटती जा रही थी । लेटे हुए, बैठे हुए, खड़े कैदियों के हाथ जुड़ते जा रहे थे । आँखें मूंदती जा रही थी । ओठों पर राम-रहीम का नाम थिरकने लगा था ।

और फिर मूँदी आँखों वाले दरवेश की दाईं ओर बैठे उसके साथी ने रबाब छेड़ी । संगीत की इस मधुर धुन पर फ़कीर गाने लगा :

खुरासान खसमाना कीआ, हिंदुस्तानु डराइआ ॥
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चढ़ाइआ ॥

ऐती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ ॥

"ऐती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ" दो, चार, दस, सैंकड़ों, हज़ारों क़ैदी गा रहे थे। यहां आकर शब्द रुक गया था। एक सुर, एक ताल में सारा कै़दखा़ना यही गा रहा था– ऐती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ ? शब्द की इस तुक को बार-बार गाते हुए कै़दियों की आवाज़ ऊँची होती जा रही थी। ऊँची, और ऊँची। हर सुर में एक फ़रियाद थी। एक शिकायत थी। एक चुनौती थी।

और कै़दियों की भीगी पलकों के सामने सदियों से उकेरे चित्र तैर रहे थे।

712 ई० में मुहम्मद बिन क़ासिम का सिंध पर हमला। हिदूंओं के मंदिरों को उसने ध्वस्त किया। एक एक देवी-स्थान को मलिया-मेट किया। अकेले मेवाड़ में ही छः हज़ार हिंदुओं को मौत के घाट उतार दिया गया।

तेरहवीं सदी के पहले दशक में कुतुबुद्दीन का हमला। मेरठ में उसने सात सौ मंदिरों को गिरा कर उसके स्थान पर मसजिदें बनवा दीं। बँसपालों ने इस हिंसा के खिलाफ़ आवाज़ उठाई तो उनके ख़ानदान के तीन हज़ार लोगों को क़त्ल कर दिया गया। कालिंजर में एक लाख बत्तीस हज़ार हिंदुओं का वध किया गया। पचास हज़ार मर्द और औरतें, ग़ुलाम बना कर ग़ज़नी भेज दिये गये।

फ़ीरोज़शाह ख़िलजी का मालवा पर हमला। उसका हुक्म था कि उसके किले के बाहर हिंदू देवी देवताओं की मूर्तियों को उसके उपासकों के लहु से नहलाया जाये। इस खेल के लिये हज़ारों हिन्दू कत्ल होते रहे।

चौदहवीं सदी के पूर्वार्ध में मुहम्मद तुग़लक का फ़रमान था कि उसके महल के सामने हर बारह घण्टे बाद एक हज़ार ताज़ी हिंदू लाशें बिछाई जायें।

अल्लाऊदीन ख़िज़र ने दिल्ली में किला बनवाया, जब किला बनकर तैयार हुआ, बादशाह ने हुक्म दिया कि शहर के तेरह हज़ार प्रतिष्ठित हिंदुओं का क़त्ल करके उनके सिरों से किले की दीवारें सजाई जायें। रात के समय इन सिरों पर दीये रखकर चिराग़ां किया गया।

1398 ई० में अमीर तैमूर ने सात लाख बावन हज़ार हिंदुओं का क़त्ल किया। उनतीस हज़ार हिंदुओं को ज़िंदा जला दिया गया। दिल्ली पर क़ब्ज़े के बाद उसने हिंदू कै़दियों को ख़त्म करने का फ़रमान जारी किया। एक लाख हिंदू कै़दी एक दिन में काटे गये।

सिकंदर लोधी का मँदरिल, हनुमानगढ़ और मथुरा में हिंदू मंदिरों और शिवालयों को गिरा कर उनके स्थान पर मस्जिदें और सरायें बनवाना। प्रजा को जमुना में स्नान करने की अनुमति न देना। उनकी मूर्तियों के बाट बनवा कर माँस तोलने के लिये कसाइयों में बाँटना। नाइयों को बादशाह का हुक्म था कि वह हिंदुओं के बाल नहीं मूंड सकते थे।

और फिर बोधन नामक ब्राह्मण की हृदयविदारक घटना :

"मा-बदौलत क्या सुन रहे हैं ! गुस्ताख़ ब्राह्मण, तू लोगों को कहता फिरता है कि सब धर्म एक से हैं। इस्लाम और हिंदू मत में कोई फ़र्क नहीं ?

"यह सच है ।"

"क्या सच है ? तेरी ज़बान जड़ से उखेड़ दी जायेगी ।"

"सब धर्म बराबर हैं । हिंदू मत और इस्लाम में कोई अंतर नहीं ।"

"तो फिर तुझे मुसलमान बनना स्वीकार है ?"

"नहीं ।"

"अगर हिंदू मत और इस्लाम में फ़र्क नहीं तो तूं मुसलमान क्यों नहीं बन सकता ?"

"क्योंकि मैं हिंदू पैदा हुआ हूँ। मेरे पूर्वज हिंदू थे । अपने माता पिता का धर्म मुझे अधिक प्यारा है ।"

"तुझे अपने बादशाह के मज़हब से प्यार नहीं ?"

"सरकार ! मज़हब को प्यार करना और बात है, पराये मज़हब को धारण कर लेना और बात है ।"

"कुत्ते ब्राह्मण ! तेरा बादशाह तुझे पराया है । कोई है ? इस मनहूस इन्सान को काल-कोठरी में फेंक दो । फिर इसकी बोटी-बोटी को कुत्तों से नुचवाया जाये । दरबार बर्ख़ास्त होता है ।"

और फिर बाबर का पहला हमला, दूसरा हमला, तीसरा हमला, चौथा हमला । अब पाँचवीं बार उसने हिंदुस्तान पर चढ़ाई की थी ।

हिंदू बच्चों को नेज़ों पर उछाला गया । सात-सात पर्दों में रहने वाली हिंदू सुंदरियों के सुहाग लूटे गये । हिंदू मर्द अपने शिवालयों - अपने मंदिरों और अपने आंगनों की पवित्रता के लिये कट-कट मरते रहे । माताओं की झोलियों में उनके बच्चों के टुकड़े डाले गये । पिता अपनी क्वारी कंजकों को बलात्कर से न बचा सके । ज़ालिमों की तलवार के सामने हिंदू के लिये तीन रास्ते खुले थे । या तो मुसलमान बन जायें, या शहीद हो जायें या "ज़िम्मी" बनकर ज़िंदा रहे, जिसे जज़िया देना होगा, हर बार यात्रा पर जाने से पहले जिस पर कर लगाया जायेगा, जिसकी हर गतिविधि पर पाबंदी होगी, जिसे हर कदम पर नई मौत मरना पड़ेगा । हिंदू हवन नहीं कर सकेगा । हिंदू सज नहीं सकेगा, उजले कपड़े नहीं पहन सकेगा । हिंदू झाड़ू देंगे, दाने भूनेंगे या पानी ढोयेंगे । मुग़ल का कुत्ता भी गुज़रे तो हिंदू को उठकर उसे आदर देना होगा ।

और लाखों हिंदू कै़द कर लिये गये, जिनकी विदेशों की गलियों में घूमकर क़ीमत लगाई जाने वाली थी ।

इन कै़दियों में यह दरवेश भी था । "ऐती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ" विद्रोह के इस नारे की ध्वनि बादशाह के कानों तक भी पहुंची । घबराये हुए अहलकारों ने आकर बताया, फ़कीर बाबा की चक्की अपने आप चल रही है । फिर जेल का दरोगा कहने लगा, जब उस दरवेश को गठरियाँ ढोने के लिये कहा गया तो हर बार गठरी उसके सर से ऊँची उठी रहती थी । लेकिन दरोगा ने ख़ास ध्यान नहीं दिया । इतने कै़दी थे, इतना माल ढोया जा रहा था । उसे लगा जैसे उसकी आँखों को धोखा हो रहा है । हर बार उसके

मातहतों ने इस चमत्कार का ज़िक्र उससे किया, उसने सुनी-अनसुनी कर दी। लेकिन अब तो हर कोई देख रहा था। दरवेश आँखें मूँद कर गा रहा था। उसके साथ बैठा उसका साथी रबाब बजा रहा था और दोनों की चक्कियाँ अपने आप चल रही थी।

बादशाह को विश्वास नहीं आ रहा था। हिंदुस्तानियों के बारे में वह हमेशा इस तरह की कहानियां सुना करता था। उसे विश्वास नहीं होता था। फिर वह कै़दख़ाने की ओर चल पड़ा, ताकि अपनी आँखों से इस चमत्कार को देख सके।

चक्की तो चल रही थी, रबाब की धुन पर फ़कीर बाबा गा रहा था और दोनों चक्कियां अपने आप चल रहीं थीं।

इस तरह का करामती फ़कीर अपने आप को कै़द होने से क्यों नहीं रोक सका ? इस तरह के पहुंचे हुए दरवेश अपने मुल्क को विदेशियों के हमलों से क्यों नहीं बचा सकते ? जिस तरह का क़त्लेआम इनकी धरती पर होता है, क्या इन दरवेशों को उसका पता नहीं होता ?

इस तरह के कुछ सवाल बाबर के मन में बार-बार मचल रहे थे कि दरवेश बाबा ने एक और शब्द का उच्चारण किया :-

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी ज्ञानु वे लालो ॥
पाप की जंज लै काबलहु धाइआ, जोरी मँगै दानु वे लालो ॥
सरमु धरमु दुइ छपि खलोऐ, कूड़ु, फिरै परधानु वे लालो ॥
काजीआ, बामणा की गल थकी अगद, पड़ै सैतानु, वे लालो ॥
मुसलमानीआ पड़हि कतेबा कस्ट महि करहि खुदाइ वे लालो ॥
जाति सनाती होर हिदवाणीआ एहि भी लेखै लाइ वे लालो ॥
खून के सोहिले गावीअहि नानक रतु का कुँगू पाइ वे लालो ॥१॥
साहिब के गुण नानक, गावै मास पुरी विचि आखु मसोला ॥
जिनि उपाई रंगि खाई बैठा वेखै वखि इकेला ॥
सचा सो साहिबु, सचु तपावसु सचड़ा निआऊ करेगु मसोला ॥
काइया कपड़ु टुकु टुकु होसी हिन्दुस्तान समालसी बोला ॥
आवनि अठतरै जानि सतानवै होरु भी उठसी मरद का चेला ॥
सच की बाणी नानकु आखै सचु सुणाइसी सच की बेला ॥२॥३॥४॥

बादशाह के कपाट खुल गये। इस तरह के फ़कीर को कौन कै़द कर सकता था। पर दरवेश बाबा की शर्त यह थी कि बंदीख़ाने के सभी द्वार खोल दिये जायें तभी वह कै़द से रिहाई स्वीकार करेगा।

3

तभी फ़ौरन बाबर ने बंदीख़ाना ख़ाली करवा दिया। लेकिन बाबर को महसूस होने लगा कि उससे ग़लती हुई थी। वह बेकार में ही झाँसे में आ गया था। वह बार-बार अपने अहलकार मीर ख़ान पर ख़फा होने लगा। बाबर के बाक़ी अधिकारी भी शशोपंज दुविधा

में थे। अजीब अजीब कहानियाँ उस दरवेश के बारे में सुनने में आ रही थीं। बाबर के हमले से पहले लालो नाम के अपने एक शिष्य को दरवेश ने बता दिया था कि पठानों का राज ख़त्म होने वाला है। बाबर हिन्दुस्तान पर हमला करेगा। एक ब्राह्मण से उसने कहा था कि वह शहर से तीन मील की दूरी पर एक तालाब पर जाकर रहे। जो लोग सैदपुर शहर में रहेंगे, उनका नाश हो जायेगा।

"अगर यह सब सच है। अगर वह इतना पहुँचा फ़कीर है, तो वह इस क़त्लेआम को रोक क्यों नहीं सका ?" बाबर बार-बार कह रहा था और उसके साथियों के पास इसका कोई जवाब न था।

मीर ख़ान बार-बार कसमें खा रहा था, उसने अपनी आँखों से देखा था, उठाने के लिये जो गठरी दरवेश को दी गई थी, वह उसके सर से कहीं ऊपर उठकर उसके साथ-साथ चल रही थी। उसका साथी रबाब बजाने में मस्त था और जिस बेकाबू घोड़े की लगाम उसे थमाई गई थी वह खुद-ब-खुद उसके पीछे चला जा रहा था। बाबे की ख़ुद ब खुद चलती चक्की तो सुलतान ने अपनी आँखों से देखी थी।

पर इस सवाल का जवाब किसी को नहीं सूझ रहा था। कि अगर वह इतना चमत्कारी फ़कीर था तो वह इस सारे ख़ून ख़राबे को रोक क्यों नहीं सका। हज़ारों घर जल कर राख हो गये थे। हज़ारों आँगन वीरान हो गये थे। हज़ारों औरतों की इज्ज़त लूटी गई थी। हज़ारों बच्चे मसल दिये गये थे।

यही सवाल दरवेश का साथी भी अपने पीर से पूछ रहा था। आख़िर लोगों ने क्या गुनाह किया था विशेषकर सैदपुर के उन सारे लोगों ने जो हमलावरों के हाथों से उनका सफ़ाया हो गया था ?

एक पेड़ की ओर इशारा करते हुए दरवेश ने अपने साथी को उसके नीचे जाकर सोने के लिये कहा। जब वह सो कर उठेगा, बाबा उसे उसके सवाल का जवाब देगा। रबाबी हुक्म का बँधा, पेड़ के नीचे जाकर सो गया। सोये हुए चेले की छाती पर पेड़ से शहद की एक बूंद आ टपकी। चुँकि वह सो रहा था, चींटियां शहद खाने के लिये उसकी छाती पर चढ़ आईं। नींद में रबाबी ने सारी चींटियों को मसल कर रख दिया। जब वह जागा तो बाबा नानक ने उससे पूछा, "तूने यह क्या किया ? एक चींटी ने तुझे काटा और तूने सारी चींटियों को ख़त्म कर दिया ?" और उसकी आँखें खुल गईं।

बाबर बार-बार सोचता है उसके साथ छल हुआ है। अगर वह फ़कीर इतना करामाती था, तो वह इस मार-धाड़ को क्यों नहीं रोक सका। हिंदुस्तान पर हमेशा हमले होते रहे हैं। ये लोग इतनी करनी वाले सुने जाते हैं। अपने मंदिरों की ख़ातिर मर सकते हैं, उन्हें बचा नहीं सकते। जिन मूर्तियों की ये दिन रात पूजा करते हैं, उनकी बेहुरमती देखकर खून के आँसू रो सकते हैं, उनकी रक्षा नहीं कर सकते। जो अपने आपको नहीं बचा सकते, वे अपने उपासकों की क्या सहायता करेंगे ? जिस मूर्ति के सामने हाथ जोड़ कर ये औलाद माँगते हैं, उस मूर्ति के सामने उसी बच्चे के टुकड़े टुकड़े कर दिये जाते हैं और मूर्ति बिट बिट देखती रहती है। पत्थर का पत्थर। इन लोगों के मंदिरों के आँगनों में गायों को काटा

गया, फिर भी ये गायों को पूजते हैं और मंदिरों का आदर करते है । इनकी माताओं, बहनों, बीबियों और बेटियों को लाखों की तादाद में मुसलमान बना लिया गया फिर भी ये अपने धर्म को सीने से लगाये बैठे हैं । हर दूसरे साल इन पर हमले होते हैं; इनका जीवन बिखर जाता है । फिर भी ये अपनी बिखरी ज़िन्दगी में पैबन्द लगाकर फिर आगे चल पड़ते हैं ।

मुसलमान हमलावरों की यह मजबूरी थी, क्योंकि उनसे लड़ने वाले ज़्यादातर हिंदू होते थे, काफ़िरों का नाश करना उनका फ़र्ज़ बन जाता था । बाबर की मुश्किल यह थी कि उसकी मां ने उसके बेटे का नाम हिंदाल रखा था । अगर वह हिंदुस्तान पर हमला न करता, अगर वह हिन्दुस्तान पर कब्ज़ा न करता तो वह अपनी मां का कर्ज़दार बना रहता । बाबर की यह बड़ी मज़बूरी थी । जब उसकी बीवी दिलदार मां बनने वाली थी, महल की औरतों ने दो पुतले बनवाये, एक लड़की का, एक लड़के का । पानी में डालने से लड़की का पुतला गल गया और लड़के का पुतला ज्यों का त्यों बना रहा । सारे महल में ख़ुशी की लहर दौड़ गई, बेग़म के घर बेटा पैदा होने वाला था । वली अहद आने वाला था । और जब बच्चा पैदा हुआ, कुरान में उसका नाम कुछ और निकला, पर बाबर की मां ने अपनी मर्ज़ी के मुताबिक पोते का नाम हिंदाल रखा । हिन्दुस्तान पर कब्ज़ा करने वाला बाबर सोचता वह हिन्दुस्तान की बादशाहत अपने बेटे को विरासत में देगा ।

पर यह देश बाबर को एक आँख नहीं भाता था । यहां के लोग उसे अच्छे नहीं लगते थे । वह सोचता था कि इनका रहन-सहन नीरस और बेहूदा है । न इन्हें खाने का ढंग आता है, न पीने का । किसी हुनर में यह लोग माहिर नहीं हैं । जीवन को जीने का एक सलीका होता है । जिससे ये लोग अनजान हैं । किसी हिन्दुस्तानी में मुझे कोई ख़ास प्रतिमा नहीं दिखाई देती । अकसर लोग फूहड़ और बद्तमीज़ हैं । हमदर्दी का तो कहीं नाम तक नहीं । इनके घरों की बनावट घटिया है । इनके फल बेस्वाद हैं । ठंडा पानी कहीं मुयस्सर नहीं । इनकी मंडियां सूनी पड़ी हैं । ऊँची शिक्षा का कोई प्रबंध नहीं । मोमबती तक का इस्तेमाल ये लोग नहीं जानते । रात को अगर पढ़ना हो तो एक नंग-धड़ंगा जमदूत मशाल लेकर पास खड़ा हो जाता है । कोई पढ़े तो क्या !

बाबर के दरबारी उसकी शिकायतें सुन-सुन कर हँसते । उनका बादशाह किस तरह की बातें करता था । उनकी नज़र में हिन्दुओं की हैसियत घटिया किस्म के, दूसरे दरजे के शहरियों की थी जिनका काम जब हाकिम कहे अपना सोना निकाल कर, कर के रूप में उसे पेश करना था, जब हाकिम थूकना चाहे तो उसके लिए अपना मुंह खोल दें और बस ।

पर एक सैदपुर का नवाब मीर ख़ान था, जो उनसे सहमत नहीं था । हर बात पर सिर हिलाकर इन्कार कर रहा था ।

"इस पर दरवेश का जादू हो गया है ।" एक दरबारी कहता है ।

"हां, हिन्दू फ़कीर इस पर जादू कर गया है ।" बाबर की भी यही राय है ।

मीर ख़ान को इससे इन्कार नहीं ।

"अगर उसकी गठरी को कोई और उठा सकता है तो वह अपने देश के दुश्मनों को

देश से बाहर क्यों नहीं निकाल सकता ? अपने हम सायों पर हो रहे अत्याचार को क्यों नहीं रोक सकता'' बाबर की आँखों के सामने बर्बरता के वे घिनौने दृश्य घूम रहे थे, जो युद्ध में उसने अपनी आँखों से देखे थे ।

''अगर ये लोग इतने पहुंचे हुए हैं, अगर ये लोग इतने खुदापरस्त हैं तो फिर इन्हें हर दूसरे साल मार क्यों पड़ती है ? हर चौथे दिन इनका अपमान क्यों होता है ?'' हर दरबारी की ज़बान पर यह सवाल था ।

और नवाब मीरख़ान ने अपनी आप बीती सुनायी । जब पहली बार उसने हज़रत ईसा को सूली पर चढ़ाये जाने की कहानी सुनी, उसका ख़ून खौलने लगा । उसके जी में आया, काश अगर वह वहां होता, तो जिन लोगों ने ईसा को इस तरह यातनायें दे दे कर मारा था, उनके पूरे ख़ानदान को जड़ से मिटा देता । फिर दूसरी बार जब उसने हज़रत ईसा को सूली पर चढ़कर शहीद होने की कहानी सूनी तो उसका दिल कहने लगा, काश अगर वह वहां होता तो हज़रत ईसा को बचा लेता, चाहे उसे कुछ भी क़ुर्बानी देनी पड़ती, अल्लाह के उस नबी को वह किसी-न-किसी तरह ज़रूर बचा लेता और फिर जब उसने तीसरी बार वह कहानी सुनी, हज़रत ईसा के सूली पर चढ़कर सच के लिए, ईमान के लिए क़ुर्बान हो गये - तो मीरख़ान के दिल ने कहा, काश अगर वह वहां होता तो वह हज़रत ईसा के साथ क़ुर्बान हो जाता । उस महबूब पैगम्बर के साथ वह भी जान दे देता ।

मीरख़ान की आप बीती सूनकर दरबारी सोच में डूब गये । हर कोई सकते में आ गया था । बादशाह चुप, अहलकार चुप और जब अचानक ख़बर आई कि कँधार के हाकिम शुजाहबेग़ ने क़ाबुल पर हमला कर दिया है, तब जाकर यह सकता टूटा ।

फ़ौज को फ़ौरन पीछे कूच करने का हुक्म दे दिया गया ।

4

तेज़ रफ़तार से क़ाबुल की ओर लोटते हुए, हर पड़ाव पर बाबर को लोग बाबा नानक के बारे में अजीब-अजीब कहानियाँ सुनाते थे । इस फ़क़ीर की कीर्ति चारों दिशाओं में फैली हुई थी । शहर-शहर धर्मशालें थीं जहां लोग इकट्ठे होकर 'धन्न निरंकार' का जाप करते थे । जहां भी चार साधु-संत इकट्ठे होते, पंजाब के इस दरवेश की कहानियां सुनाने लगते थे :

बाबा नानक अभी सात महीने के थे तो इस तरह पालथी मार कर बैठते थे, जैसे कोई योगीराज हो । माता पिता सोचते शायद उसकी टाँग में बल पड़ जाता है । वे बच्चे की पालथी खोलकर टाँगें सीधी कर देते थे । लेकिन जब तक वे उसे पकड़े रहते टाँग सीधी रहती, लेकिन छोड़ते ही टाँगें पूर्ववत पद्मासन में मुड़ जाती ।

× × × ×

जब बाबा आठ बरस के हुए, न, बोलते, न चालते, न देखते, न सुनते थे । तब दादा कालू ने मुल्ला बुलवाया । मुल्ला ने आकर वज़ीफ़ा पढ़ा और बाबे नानक को तावीज़ दे दिया । तब भी बाबा बिल्कुल नहीं बोले, इस पर मुल्ला बहुत उदास हो गया और बोला, ''हे नानक जी, तूँ आपने खुदाइ दे नाइ बोलु । रजाइ, ख़ुदाइ आपने ख़ुदइिसआ दे अर्थ

बोलु । एकु भोरा कु बोलि रजाइ-ख़दाइ ।'' तो बाबा नानक बोला-

दुनीआ मुकामे फ़ानी । तहकीकु दिलदानी ॥

ममसर मूइ अजराईल ग्रिफताह । दिल हेचि न दानी ॥

आठ बरस का पंजाबी बालक कैसे फ़ारसी बोलता था ? मुल्लां हैरान हो गया ।

× × × ×

जब गुरू बाबा तेरह-चौदह बरस का हुआ तो एक दिन दादा कालू ने कहा,''बच्चा नानक ! अजु हाणी, पाली, राखे सभि जिंमी गोडण गए है । खेत की गुड़ाई बच्चा ! तूँ खेत दै बंनै जाइ खड़ा होहि जे चिड़िआ खेतु न खाइजानी ।'' खेत के कोने पर एक पेड़ था, नानक उसी पेड़ के नीचे पड़ कर सो गया । उसी राह पर राइ भोइ की सवारी आ रही थी । राइ ने अपना नौकर भेजा, यह देखने के लिये कि सुबह के पहर वहां कौन सो रहा है । नौकर ने आकर बताया - कालू बेदी का बेटा सो रहा है । राइ भोइ अपनी राह चला गया । तीसरे पहर वह फिर उसी रास्ते से लौटा । देखा तो राह में कोई वैसे ही सो रहा था । नौकर ने बताया कि वह सोने वाला नानक ही था । राइ भोइ ने पूछा, ''जींदा है कि नहीं ? सास तो है सूं तद राइ घोड़िऊँ उतर के बाबे कोल आइआ । वेखे तां होरनां रुखां दी छाँ चली गई है पर उस रुख दी छाँ गुरू बाबे उपर उंज-दी-उंज खड़ी है । वेख के राइ भोइ हैरान हो गिआ । बड़ा हैरान होइआ, कोई वली खुदा उह पैदा होइआ है । बड़ा बुज़र्ग है । बड़ी अज़मत वाला है । तां राइ भोइ ने बाबे नानक ताईं कोर्निश कीती । चलें चल के कोर्निश करे । पैर पिआदा ही घर गिआ ।''

× × × ×

बाबा नानक का बहनोई जैराम सुल्तानपुर के नवाब दौलतख़ान का अहलकार था । उसने नानक को अपने पास बुलवा कर नवाब के यहाँ मोदी रखवा दिया । सुल्तानपुर में बाबा प्रतिदिन स्नान करने के लिये नदी पर जाता । सवा पहर रात रहते वह नदी पर पहुंच जाता । एक नौकर साथ में होता । जब स्नान करके निकलता तो नौकर कपड़े पेश करता । एक दिन रात के अंतिम पहर में बाबा नहाने गया । कपड़े उतार कर नौकर को पकड़ा दिए । बालों को जूड़े में बाँध कर नदी में ऐसी डुबकी लगाई कि फिर बाहर न निकला । जब नानक को डुबकी मारे करीब एक घड़ी बीत गई तो नौकर को चिन्ता होने लगी । नीचे ऊपर देखने लगा । बाबा तो कहीं भी नहीं था । डुबकी मारे जब एक पहर हो गया तो नौकर विलाप करने लगा । न घर लौट सके न नदी में घुस सके । फिर यह ख़बर शहर में पहुँच गई । हज़ारों लोग लगे रोने । नवाब को पता चला तो वह ख़ुद आया । मल्लाह बुलवा कर नदी में जाल डलवाये । तीन चार कोस तक नदी का चप्पा-चप्पा छाना गया । लेकिन कोई ख़बर न मिली । तीसरे दिन बाबा नदी में से ख़ुद ब ख़ुद निकल आया । ये तीन दिन बाबा ने निरंजन निरँकार की दरगाह में गुज़ारे थे । पारब्रह्म ने नानक से कहा, ''ऐ नानक ! तूँ मैं मुक्ता कीआ। जि कोई तुमको देखहिगे से मुकते कीऐ । जि तुमके सुणहि से मैं मुकते कीए । जे तेरा नाम लहिगे से मैं मुकते कीऐ । जिनको तूँ बखसहिँगा, तिन को मैं बख़शूँगा । तूँ मैं निहाल कीता है ।''......... नदी में से तीन दिन बाद बाबा नानक के निकल आने की ख़बर सारे शहर में

फैल गई । लोग हुम हुमा कर दर्शनों के लिये आये । नवाब दौलतख़ान ख़ुद आया । लोक जहान कहने लगा, "नानक ! अगे तूँ किछु होर सी, अब तूँ होर होआ । इक हिन्दुआं दा राह है, इक मुसलमानां दा राह है, पर तूँ केहड़े राह विच है ?" तब गुरू बाबा नानक जी ने कहा, "ना कोई हिंदू है ना कोई मुसलमान है । मैं किस दे राह होवाँ ? मैं ख़ुदाइ दे राहि होवाँ । ख़ुदाइ न हिंदू ना मुसलमान है, मैं जिहा ख़ुदाइ दे राहि हाँ ।"

× × × ×

एक दिन बाबा नानक नवाब दौलतख़ान के पास बैठे आध्यात्मिक चर्चा कर रहे थे कि सांझ की नमाज़ का वक्त हुआ । उज साजि आगे काज़ी, खड़ा हुआ, पीछे ख़ान, साथ में दूसरे अहलकार खड़े हुए । काज़ी ने सिजदा किया । उसके पीछे औरों ने भी सिजदा किया । बाबा नानक क़हक़हा मार कर हंस पड़े । दूसरी बार जब लोगों ने सिजदा किया तो बाबा नानक फिर खिलखिला कर हँस पड़े । जब वे नमाज़ अदा कर चुके तो क़ाज़ी ने सुलतान को शिकायत की, नानक उनकी नमाज़ पर हँसा था । ख़ान ने बाबा नानक से इसका कारण पूछा । बाबा ने जवाब दिया, "जी जदि एह निवाज़ उपरि खड़ा होआ तब एसदा जीउ होर लै गैअ । घोड़ी घर सूई ससु जां नमाज़ उपर खड़ोते सिजदा देंदे ही उस घोड़ी विच जाइ जीउ पाइउस, एह गल जी विच धारे जि, जाहि जांदी, एहु हवेली विच खूह सी, विच घोड़ी बंधी है पिछे 'वछेरइ है, न कोई घोड़ी पासि आदमी बहालिआ न घोड़ी ही वख बधी । एआणा वछेरदू है खूह विच पै मरेगा । एथे सिजदा देंदे, जीउ घोड़ी विच । एड तकसीर करिकै एस दी नमाज़ थाइ न पईआ ।" काजी पुछिअै जी:, "एह बात सच है कि ना ? " और काजी ने कहा, "ख़ान जी सलामत ! एहु बात सचु है" यह सुनकर सभी हैरान हो गये ।

× × × ×

एक बार बाबा गँगा के तट पर जा उतरा । वैसाखी का पर्व था । असँख्य लोग इकट्ठे स्नान कर रहे थे । स्नान करते हुए लोगों ने सूरज को अर्घ दिया । गुरू बाबा नानक स्नान करते हुए पाश्चिम की ओर अर्घ चढ़ाने लगे । यात्री सोचने लगे यह कोई बावला है या फिर तुर्क है । तब उनमें से एक यात्री ने पूछा "जी, तुमि जि पछम की कुँट पानी देते हउ ।" गुरू बाबा ने कहा "जी मन जि देते है लाहोरि के नजदीक हमारा घर है और खेतर है, उहां बडे बडे मींह पड़ि रहे है, पर उतु मेरे खेतरे कदे मींह, नाही पड़िआ, मैं उस खेतर कउ पाणी देता हऊँ" तब वे लोग हँस पड़ें । सचमुच यह कोई बावला है । तब गुरू नानक ने उनसे पूछा, "तुमि जि सूरज कुँटि पाणी देते होउ सो किसु कऊं देते हो ?" उन्होंने कहा, "हम पितरी कउ देते हैं पाणी ।" बाबा ने कहा, "तुम्हारीआं पितरी कहाँ है ?" कहने लगे, "जी, देवलोक, उणवजह करोड़ी है ईहां ते, हम उहां कऊँ पाणी देते हैं ।" तब गुरू नानक ने कहा "ईहाँ का दीआ पाणी ऊहाँ पहुँचता है ?" लोग कहने लगे "जी, पहुंचता है ।" तब गुरू नानक हंस पड़े । "जे पाणी उणवँजा करोड़ देव लोक जाइगा ताँ लाहौर दी धरती तक नहीं जावेगा ?" तब वे लोग समझ गये, यह बावरा नहीं, यह तो कोई महापुरूष है । बाबा नानक ने उन्हें दिव्य दृष्टि दी : चम दृष्टि उनकी दूर हुई ।

× × × ×

गुरू नानक मक्का की ज़ियारत पर गये। वहां पहुंच कर मौलानाओं के गाँव की मस्जिद में सो गये। वह मस्जिद गांव के सरदार की थी। शाम के वक्त उस मस्जिद में लोग इकट्ठे हुए, देखते हैं एक आदमी जूते पहने, काबे की तरफ़ पैर फैलाये सो रहा है। उन्होंने बाबा को जगाया और बाबा को बेअदबी करने के लिये फटकारा। नानक ने कहा, "ऐ बाबा साहिब दिअुहु ! जिस तरफ़ नाहीं साहिब दा घर, उसे ही जाहगा एहि मेरै पैज़ार रक्ख आवहु ! अर जिस तरफ़ नाहीं काबा उस तरफ़ मेरे पैज़ार करहु। जिऊँ जिउँ तुसीं जागदे हो तिउँ तिउँ तूसीं करुहु।" इस पर सब की आंखें खुल गईं। एक दूसरे का मुंह ताकने लगे।

× × × ×

फिर बाबा सैदपुर गये। मरदाना उनके साथ था। सैदपुर में वे लालो नाम के एक बढ़ई के घर में टिके। शहर में बड़ी चर्चा हुई। कोई खत्री एक शूद्र के यहाँ आकर टिका है। कुछ दिनों बाद शहर के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति मलिक भागो ने भोज दिया जिसमें चारों वर्णों के लोग आये। नानक को भी न्यौता दिया गया। पर बाबा नहीं गये। जब भागो को पता चला तो उसने गुरू नानक को बुला भेजा। मलिक भागो बड़े क्रोध में था ; बाबा एक नीच जात के आदमी के यहाँ भोजन कर सकता था, लेकिन मलिक भागो की दावत को उसने क़बूल नहीं किया था ! यह देखकर गुरू बाबा ने मलिक भागो से उनके हिस्से का भोजन मँगवाने के लिये कहा। लालो से भी कहा गया कि वह अपने घर की रोटी भी ले आये। जब दोनों थाल सामने आये तो गुरू नानक ने लालो की रूखी-मिस्सी रोटी दाँये हाथ में पकड़ी और मलिक भागो की घी से तर लूची बांये हाथ में। बाबा ने दोनों मुट्ठियों को दबाया। लालो की रोटी में से दूध टपका और मलिक भागो की लूची में से लहू। लोग देख कर हैरान हो गये। लालो की कमाई हक हलाल की थी और मलिक भागो की कमाई हराम की।

× × × ×

बाबर सोचता- 'किस अज़मत के लोग इस धरती ने पैदा किये हैं। एक ओर वली शेख़ फ़रीद पंजाब में हुआ था। गंगा के किनारे कबीर नाम का एक संत रहता था। नीचे उज्जैन में भर्तथरी था। उधर गोरख नाथ कोई सिद्ध था। तब भी इस देश का पतन होता रहा है। इसका क्या राज़ है ? बाबर सोचता, यह भेद जानने के लिये उसे एक बार फिर हिंदुस्तान आना पड़ेगा और फिर वह इस देश में अपना राज्य कायम करके यहां रहेगा। उसका बेटा हिन्दुस्तान का शहनशाह बनेगा।

भाँग पीते हुए उस शाम बाबर को बार बार बाबा नानक की याद आ रही थी। अजीब कलंदर क़िस्म का इन्सान था। जिन लोगों ने उसे क़ैद किया, जिन फ़ौजों ने उसके देशवासियों की हत्या की, उनके बादशाह को उसने अपने देश पर हुक्मरानी का वर दिया था।

आवन अठत्तरै जानि सत्तानवै
होरुभी उठसी मर्द का चेला

और अपने हाकिमों के बारे में उसने कहा था-

रतन विगाड़ि विगोए कुती; मुइआ सार न काई ॥

5

''तेजीये !''

नहीं ''तानी'', अब उसका नाम मुमताज़ था। और गुजरी ने तेजी को सीने से लगा लिया। इस लड़की का क्या हाल हो गया था। उलझी लटें, मैले कीचड़ कपड़े, चेहरे पर झाईयाँ। फटी फटी आँखें, गालों की हड्डियाँ निकली हुई। सूखे छिलकों जैसे ओंठ।

मलकाँ की यह बेटी हाथ लगाये मैली होती थी। सात पर्दों के भीतर ढकी छिपी, किसी बाहर वाले ने उसकी आवाज़ तक नहीं सुनी थी। और अब बावली सी बढ़ईयों के घर में आ घुसी थी। बातें करके अपना मन कुछ हल्का करने के लिये।

''लेकिन यह तेरा हाल क्या हो रहा है ?'' गुजरी ने उससे पूछा, पेट बढ़ रहा था। पेट तो बढ़ना ही था। पहले हल्ले में ही उन लोगों ने इसे उठा लिया था। किसी ने हमलावरों के पास जाकर मुख़बरी की थी कि तेजी के बाप मलिक के पास सबसे ज़्यादा रुपया है। उसकी बेटी शहर की सबसे सुन्दर लड़की है। सुन्दर और क्ँवारी। जैसे अनबेंधा मोती हो।

'' मैं और सब कुछ कर लेती हूँ।'' तेजी बता रही थी, ''और सब कुछ मैं कर लेती हूं लेकिन चौका कीये बग़ैर मैं कुछ नहीं खा सकती। कितने कितने वक्त मैं भूखी प्यासी पड़ी रहती हूं। उनके बर्तनों में पका मेरे गले से नीचे नहीं उतरता। उसका बीज अपनी कोख में संभाले फिरती हूं पर मुझसे उसका भी जूठा कभी नहीं खाया गया।

जब लुक-छिप कर अपने हाथों से पोचा फेर कर वह कुछ पका सकती तो तेजी पेट भर कर खा लेती थी, नहीं तो भूखी-प्यासी पड़ी रहती, कभी कोई बहाना, कभी कोई बहाना करके टालती रहती।

''मैंने उसे कहा, ''तूने मुझे कलमा पढ़ा कर मुसलमान बनाया है, मुझे नमाज़ पढ़नी भी सिखा ; मैं तेरे साथ नमाज़ पढ़ने जाया करूंगी।'' कहने लगा - ''मुसलमान औरत मस्जिद में नहीं जा सकती। यह अल्लाताला का हुक्म है।'' ''मेरी मां मुझे मन्दिर जाने के लिये कहा करती थी, लेकिन मैं कभी उधर मुंह नहीं करती थी। अब मैं मस्जिद नहीं जा सकती।''

दीवानों की तरह कभी तेजी चुप्पी साध लेती। कभी बोलने लग जाती तो बोलती ही जाती।

''शुरू-शुरू में भीतर घुसकर अपने माथे पर टीका लगाया करती थी। टीका लगाकर कितनी कितनी देर तक आरसी में अपना चेहरा देखती रहती थी। बाहर निकलती तो टीका मिटा देती। मैंने उसे कहा-''तू निकाह से पहले मेरे साथ कुछ न कर। मैं टीका लगाऊंगी, अपनी मांग को सिंदूर से सजाऊंगी, और फिर तेरी हो जाऊंगी।'' उसने सुना तो हँसने लगा, हँसे जाये, हँसे जाये। कहने लगा, ''मैं काबुल से तेरे लिये बारात चढ़ा कर लाया हूं।'' और मैंने उसके हाथों की ओर देखा, लहु से सने थे। जिन हाथों पर शगनों की मेंहदी लगी होनी चाहिये थी, वे हाथ मासूम बच्चों और औरतों के लहु से सने थे।''

तेजी की आँखें सजल हो गईं। गर्म गर्म आंसुओं के मोती उसकी पलकों से फिसल

कर उसके गालों पर ढुलक रहे थे । उसके ओठ काँप रहे थे ।

"मैंने उसे बातों में उलझा रखा था, इतने में साथ के तँबू में से किसी की चीख़ों की आवाज़ आने लगी जैसे किसी बकरी को काटा जा रहा हो । वह प्रीतो थी । प्रीतो और मैं एक साथ पकड़ी गईं थीं । हमारे घर की परछत्ती के पीछे दोनों छिपी हुई थीं ।" "क्षण भर के लिये वह पास वाले बँमू में से आ रही चीख़ों की आवाज़ सुनता रहा, फिर उसकी आंखों से एक अकथनीय वहशत झलक उठी । उसने फूंक मार कर अपने तँबू की बत्ती बुझा दी । फिर साथ वाले तँबू की चीखों में हमारे तँबू की चीखें शामिल होने लगीं । कुछ देर बाद इस तरह की चीख़ें हर तँबू में से आ रही थीं । जैसे जानवरों की मँडी में भेड़-बकरियाँ डकरा रही हों ।"

तेजी के आँसू अब छल छल बह रहे थे । अपने कुतरे हुए बालों की लट को वह बार-बार पीछे हटाती, बार बार वह उसके माथे पर आ गिरती ।

"मुझे कहने लगा-"मैं तेरे लिये मंज़िलें पार करके आया हूं । मैं तेरे लिये लम्बे सफ़र के लाख जोख़िम उठाकर आया हूँ । मेरा मज़हब तनहाई से शुरू होता है और तनहाई पर आकर ख़त्म हो जाता है, जब मैं पहाड़ों से गुज़र रहा था, नदियां पार कर रहा था, बार बार एक हिन्दू हसीना की तस्वीर मेरी आँखों के आगे घूमती थी, वह तू थी । तेरा रंग, तेरे नैन, तेरे ओंठ, तेरी चीखें, तेरी फ़रियादें, तेरे आँसू ।"

तेजी के आँसू एकदम थम गये । उसके चेहरे पर जैसे कोई हसीन याद खेलने लगी ।

"कहने लगा- हम लोगों में रात भर के लिये निकाह हो जाता है । मुसाफ़िर ने जहाँ पड़ाव किया, उसने रातभर के लिये वहीं किसी से शादी कर ली । अगली सुबह अपने रास्ते पर चल पड़ा । सिर्फ़ एक रात के लिये दुल्हन बन जाना । सिर्फ़ एक रात के लिये सुहाग का सुख लेना । औरत की सारी उम्र का एक रात में सिमट कर रह जाना । एक अँधेरी रात का ज़िन्दगी की सारी चाँदनी रातों को झूठला देना ।"

फिर तेजी सामने लगी चमेली में से चुन चुनकर फूल तोड़ने लगी । फूलों की अँजलि भर कर उन्हें सूँघे जा रही थी । एक नशा सा उस पर चढ़ रहा था ।

"मुझे एक बू आती रहती है अपने-आप से । आठों पहर मुझे लगता है जैसे मेरे भीतर कोई लोथड़ा सड़ रहा हो । शायद यह उसका बीज है । ज़ालिम का बीज । कहने लगा-"इसे फ़ौज में भर्ती करवाना । यह सिपहसालार बनेगा । मैंने दिल में कहा, मैं इसे जन्म देकर सूली पर चढ़ाऊँगी । फिर इसकी बोटी बोटी कुत्तों से नुचवाऊँगी ।"

तेजी अपनी भरी अँजुलि में से चमेली की कलियाँ सुँघती जा रही थी और एक उन्माद में अपने आप बोलती जा रही थी ।

"मर्द ज़ात ने कभी औरत की ताक़त को पहचाना ही नहीं । उसने हमारे मंदिरों को तबाह किया, मैं उसकी औलाद से इन मंदिरों का पानी भरवाया करूँगी । उसने हमारे शिवालयों की पवित्रता भंग की है, मैं उसके जाये से इन मूर्तियों के आगे माथा रगड़वाया करूँगी । उसने हमारे देवताओं का अपमान किया, उसका तुख़्म इन देवताओं के आगे हाथ

फैला फैला कर मुरादें मांगा करेगा ।''

फिर तेजी हँसने लगी । पगलियों की तरह हँसती जा रही थी, हँसती जा रही थी ।

''मैं उसकी औलाद को सिपाही बनाऊँगी और अगली बार जब वह आयेगा, अगली बार जब उन लोगों ने इस देश पर हमला किया, तो मेरा बेटा उनके छक्के छुड़ा देगा । जो आँखें हमारे वतन को मैली नज़रों से देखेंगी, उन आँखों को फोड़ फोड़ डालेगा । मेरा सूरमा बेटा अपने देश की पवित्र धरती पर परायों को पैर नहीं रखने देगा । फिर कोई सात पर्दों में ढँक कर रखी किसी की जाई का इस तरह सत भंग नहीं कर सकेगा । किसी के अछूते कँवारेपन को इस तरह ख़्वार नहीं होना पड़ेगा ।''

तेजी अब जैसे एक नशे की हालत में डूब गई थी । उसकी आँखें चढ़ी हुई थीं ।

''एक बार आपके यहां एक महात्मा आया था । तेरे पिता की रूखी मिस्सी रोटी खाकर खुश था और मेरे पिता की लूचियों, कचौड़ियों को जिसने ठुकरा दिया था । मुझे उस संत की तलाश है । सुना है ज़ालिमों ने उसे क़ैद किया था और फ़कीर ने बाबर के बेटे को कई बरसों का राज बख़्शा है । ..... इसका मतलब यह है कि वह फिर आयेगा मेरे होने वाले बच्चे का बाप । फिर आयेगा.... हमारा रिश्ता कोई एक रात का थोड़े ही था । यह तो धुर के बंधन हैं । मैं उसकी इंतजार कर लूँगी ।.... ताकि वह आये और मैं उसके मुंह पर थूक सकूँ । मेरा बेटा अपनी अबला माँ का बदला ले सके ।''

तेजी पहले की तरह नशे में बोलती जा रही थी । ''भाँग का लबालब भरा कटोरा पी जाता कहता, हमारा बादशाह भी भाँग पीता है, हम भी भाँग पीते हैं । एक बार हमारा बादशाह बीमार पड़ गया, हकीमों ने उसका दारू पीना बन्द कर दिया । हकीमों की बात तो उसने मान ली, लेकिन हर शाम अपने दरबारियों को महल में बुलवा कर उन्हें दारू पीते देखता था । और इस तरह वह खुश हो जाता । जैसे बादशाह, वैसे दरबारी ।''

तब फिर तेजी ''जैसा बादशाह, वैसे दरबारी'' कहती हुई जैसे उस आँगन में घुसी थी, वैसे ही अपने-आप चली गई ।

गुजरी हक्की-बक्की उसकी तरफ़ देखती रही ।

6

''इतनी मार पड़ी, इतनी मार पड़ी, लेकिन आप लोगों को कुछ नहीं कहा ज़ालिमों ने ?'' तेजी हैरान-सी संती से सवाल करती है । संती से उसकी मुलाक़ात गली में हो गई थी और वे खड़ी होकर बातें कर रही थी ।

''हमें भला कोई क्या कहेगा ? नीच जात, हम आप लोगों के घरों में झाड़ू देते थे, मल मूत्र ढोते थे, उनके सामने भी हाथ जोड़कर यही कुछ करने के लिये तैयार हो गये । आख़िर उन्हें भी तो ज़रूरत थी, कोई उनका मूत्र समेटे, कोई उनकी विष्ठा ढोए ।''

''मैंने उसे कहा, तू मुझे अपने साथ ले चल यहाँ अब मेरा कोई नहीं रहा । मेरे सारे परिवार को आपने ख़त्म कर दिया है, अब मैं किसके सहारे जीऊँगी ?'' कहने लगा-वहाँ मेरी तीन बीवियाँ हैं, तेरे प्राण खींच लेंगी । तुझे कच्चा चबा जायेंगी ।''

''इनमें चार बीवियों का रिवाज है । तू चौथे स्थान पर हुई । तुझे यहाँ छोड़ गया

है । ज़रूर वापस आयेगा ।''

बाबे नानक ने तो उनको वरदान दिया है । फ़कीरों का कहा हमेशा सच होता है ।'' पहले बाबा ने कहा था- ''न कोई हिन्दू ना कोई मुसलमान; वह बात भी सच साबित हुई । हिन्दू माँ-बाप के घर में जनमी-पली, मेरे पेट में मुसलमान का बीज पनप रहा है । ना कोई हिन्दू ना कोई मुसलमान !''

''बाबा ने यह बात थोड़े ही कही थी । उसने तो कहा था, ना कोई हिन्दू न कोई मुसलमान है ; अरे सभी इन्सान हैं । एक रब्ब, एक ईश्वर की औलाद । आप ठहरे उँची जातों वाले । यह बात तो आपने सुनी नहीं । और के और ही अर्थ के अनर्थ निकाल लिये ।''

यह बात सुनी होती तो हमारा यह हाल क्यों होता, जो आज हुआ है ?'' प्रीतो जैसे धरती में से प्रगट हुई हो, रेशमी जोड़ा, उपर तिल्ले वाला दुपट्टा । ऐसे बोल रही थी, जैसे कभी कुछ हुआ ही न हो । सन्ती और तेजी उसे देख देखकर हैरान हो रही थी ।

''नी प्रीतो ! तू कैसी सुन्दर लग रही है, जैसे कोई तस्वीर हो ।'' तेजी उसके हाथों की मेंहदी को देख रही थी ।

''मेरा नाम नूरजहाँ है । हम तो मुसलमान हैं । मैंने क़लमा पढ़ लिया है । कौन हिन्दू बने हर रोज़ इन ज़ालिमों की मार खाने के लिये ?''

''तौबा, तौबा ! अरे तू कैसी बातें करती है ।'' संती ने प्रीतो को टोका ।

''कलमा तो मैंने भी पढ़ा है, लेकिन एक बार मुँह से कलमा पढ़ कर कोई मुसलमान थोड़े ही हो जाता है ।'' तेजी कह रही थी । और जो मेरे पेट में उसका बीज है ?''

''वह तो मेरी कोख में भी है ।'' तेजी को जैसे शर्म आ रही हो । उसकी नज़रें नीचे झुक गईं ।

''भला कोई अपना धर्म थोड़े ही फेंक देता है ।'' अब संती बोल रही थी ।'' हम आप लोगों का मलमूत्र ढोते थे । ज़ालिम आये, उनका भी ढोते रहे। आप लोगों का कूड़ा-कर्कट भी समेटते थे, उनका भी समेटते रहे, हमारा अपना धर्म ज्यों का त्यों मौजूद है । हिन्दू धर्म बार बार थोड़े ही मिलता है ।''

''औरत का धर्म उसके बच्चे का धर्म होता है । हम तो मुसलमान हैं । जात के सैयद । मेरा वह सैयदज़ादा है !'' प्रीतो के नख़रे का क्या कहना ।

''तौबा, तौबा, कैसी बातें करती है, प्रीतो बहना ! मेरे साथ भी वही कुछ हुआ जो तेरे साथ हुआ । लेकिन मुझसे तो हिन्दू धर्म छोड़े भी ना छूटे । मेरे बाप के बाप का धर्म । मेरी माँ की माँ की माँ का धर्म ।''

''जिस धर्म में कोई ऊँची जात का है, जिस धर्म में कोई नीची जात का है ?'' प्रीतो नाक चढ़ा रही थी ।

''तो फिर क्या हुआ ?'' संती उसे समझा रही थी, ''हम नीची जात के हैं, नीच जात का होना कोई बुराई थोड़े ही है । मुझे कोई ऊँची जात का बनने के लिये बोले, मैं तो

कभी न अपनी जात छोड़ूँ । हमें तो अपनी जात जान से भी प्यारी है । दसों नाखूनों की कमाई करनी । उसके बराबर भला कौन-सी जात होगी ?''

''मेहनत करनी और बाँट के खाना,'' सुनते हैं, बाबा नानक भी यहीं कहते हैं ।''

''उस बेचारे की बात कौन सुनता है ?'' प्रीतो पहले की तरह बोल रही थी । उन लोगों ने उसे भी पकड़ कर बन्दीख़ाने में फेंक दिया ।''

''बाबर ने बाबा के साथ दोस्ती की है ।''

''और बाबा ने उसे बादशाहत बख़्शी ।'' बाबर के ख़ानदान ने यहाँ राज करना है । हम लोगों ने तो शुक्र मनाया है कि हिन्दू धर्म से जान छूटी । ब्रहमणों को खिला खिला कर हम लोगों ने तो उमर गाल ली है । इस्लाम में सब बराबर हैं । संती मेरी बहन है ।''

''न बाबा, मैं तो तेरी बहन ना बनूँ ।'' संती ने जैसे उसके मुंह पर थप्पड़ दे मारा हो ।

''मुसलमान होकर मैं तेरी थाली में से [illegible] सकती हूं ।'' प्रीतो जैसे उसे याद दिला रही थी ।

''हाँ बीबी, लेकिन मैं तो तेरी थाली में से कभी न खाऊँ । हिन्दू धर्म बार-बार हाथ नहीं आता ।''

''तो फिर ढोती रह हर किसी का विष्ठा,'' प्रीतो तेजी और संती के सामने थूक कर अपने रास्ते चली गई ।

तेजी और संती उसे दूर जाते देखती रहीं । फिर वह गली में मुड़ गई ।

''मैं कहती हूँ--- कहते कहते संती रूक गई । उसके दाँत उसके ओंठों से मिंच कर रह गये ।

अगली सुबह तेजी अभी सोकर नहीं उठी थी कि संती उसके आँगन में आ घुसी, उसकी सांस फूल रही थी । उसके हाथ में एक छुरा था, लहु से सना हुआ ।

''मैं एक ज़लिम को ख़त्म करके आई हूँ ।'' संती दाँत पीस रही थी ।

''क्या मतलब ?'' तेजी ने घबरा कर पूछा ।

''मैंने उसके पेट में पहले छुरा झोका, वहीं जहां वह उस आदमी का तुख़्म पाल रही है ।

''किसके ?'' तेजी परेशान हो गई ।

''बीबी नूरां के,'' संती ने कहा और तेजी के आँगन की एक नुक्कड़ में पड़े गूदड़ में छुरा फेंक दिया ।

''बीबी, जन्म जन्मांतर से आप लोग हमारे धर्म के रक्षक थे । आप खत्री लोग । मैं एक शूद्र अपने हिन्दू धर्म की रक्षा कर आई हूं ।''

तेजी बिट-बिट उसके मुँह की तरफ़ देख रही थी ।

''मैंने उसके पेट में छुरा झोंका, वह मुझे कहने लगी- हैं, संतीए तू ? मैंने उसके गले को दोनों हाथों से पकड़ कर उसका टेंटुआ दबा दिया । उसकी आँखों की पुतलियों बाहर निकल आईं ।

"तो फिर ?"

"तो फिर मैं चुपचाप उसकी ड्योढ़ी में से निकल आई। लहू से सना छुरा भी उठा लाई, यह सोच कर कि कहीं तुम्हें एतबार न आये, कोई निशानी तो होनी चाहिये।"

"मैं मरी, संतीए, तूने तो हद ही कर दी।"

"ले बीबी अब मुँह तो मीठा करवा। हम लोग तुम्हारे कम्मी होते हैं।" अब संती वैसे ही बोल रही थी, जैसे कभी-कभी झाड़ू दे कर वह कोई फटा पुराना कपड़ा-लत्ता, या रात की बची-खुची रोटी, सालन-सब्जी माँगा करती थी।

7

तेजी के घर से लड्डू खाकर संती बाकी बचे लड्डू अपने घरवालों के लिये पल्ले में बाँध कर ले गई। घर पहुँच कर उसने अपनी कोठरी के आले में वे लड्डू रखे और फिर बग़ल में टोकरी और दूसरे हाथ में झाड़ू उठाकर वह अपने बँधे हुए आँगन कमाने चल पड़ी। झाड़ू देते हुए, पोचे फेरते हुए, मल-मूत्र, कूड़ा-कर्कट समेटते हुए वह प्रीतो की हत्या के बारे में भूल गई थी। तेज़ धूप निकल आई थी। संती कई घर निपटा चुकी थी।

और उधर सैदपुर में वावेला मच गया। किसी ने तड़के ही प्रीतो की हत्या कर दी थी। लहू के छप्पड़ में उसकी लाश पड़ी थी।

संती बदहवासी ख़ून से लथपथ छुरे को उठाकर तेजी के घर ले आई थी। उसने यह नहीं सोचा था कि लहू से भीगे छुरे से गिरी लहू की बूँदें उसके पाँव के निशान को बता रही थी। वही बात हुई। कोतवाली वालों ने तफ़तीश करते हुए उसका सुराग़ लगा लिया और वे तेजी के घर पहुँच गये। यही नहीं जब उन्होंने घर की तलाशी ली तो संती का छुरा भी तेजी के आँगन के एक कोने में कूड़े कर्कट के नीचे पड़ा मिल गया। लगता था किसी ने उसे वहीं छिपाने की कोशिश की थी।

उन लोगों ने तेजी को पकड़ लिया। तेजी की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। अगर सच बोले तो संती पकड़ी जायेगी। संती बेशक कसूरवार थी, पर तेजी को उससे पूरी हमदर्दी थी। जब संती हत्या करके लौटी थी, तेजी का कलेजा ठंडा हो गया था। जो कुछ संती ने किया था, उसे खुद करके तेजी अपने को सुर्ख़रू समझती। "बड़ी आई थी 'बेग़म' बनने की चाह लेकर।" तेजी का ख़ून बार-बार खौल उठता।

इससे पहले कि तेजी कोई फ़ैसला कर पाती, यह ख़बर संती तक भी पहुँच गई कि प्रीतो की हत्या के शक में तेजी को उन लोगों ने पकड़ लिया था। तेजी के आँगन के एक कोने में से वह छुरा भी बरामद हो गया था, जिसका इस्तेमाल इस वारदात में हुआ था।

संती ने सुना तो उसके तन बदन में आग लग गई। उसके साथ धोखा और द्रोह किया गया था। यह कारनामा तो उसने किया था। इस बात का गर्व तो उसे था कि उसने एक 'बेग़म' से बदला लिया था। अपने धर्म, अपने देश का तिरस्कार करने की सज़ा दी थी। बेशक उसने कलमा पढ़कर धर्म बदल लिया था, लेकिन सवाल यह है कि कोई अपने देश से कैसे द्रोह कर सकता है। उस धरती से जिसपर किसी ने जन्म लिया हो, उस मिट्टी

से जिसमें कोई पैदा हुआ हो, यह तो अपनी माँ को नकारने वाली बात हुई ।

और संती जिस घर में काम कर रही थी, वहीं झाड़ू पटक कर कोतवाली पहुँच गई, वह हाथ जोड़कर इक़बाल करने लगी थी कि प्रीतो का क़त्ल उसी ने किया था । कहने लगी, ''मुझे तो रात भर नींद नहीं आई, किस तरह वह परायों की तरह अपने रहन सहन, अपने की बुराई कर रही थी । उसकी छाती में छुरा झोंक कर मेरा कलेजा तो ठंडा हो गया था । हाथ में लहू से सना छुरा पकड़े मैंने तेजी बीबी का दरवाज़ा खटखटाया था, ताकि कोई गवाह तो हो कि यह कारनामा मैंने किया था । मेरी ग़ैरत ने मुझसे यह कत्ल करवाया और मैं इसकी सज़ा भुगतने के लिये हाज़िर हूँ । तेजी बीबी का कोई कसूर नहीं । इसे परेशान न किया जाये ।''

कोतवाली वालों ने संती को भी तेजी के साथ हवालात में बन्द कर दिया ।

अब हवालात में संती हाथ पटक पटक कर तेजी से लड़ रही थी । बार बार कहती, ''तू कौन होती है मेरा हक़ मारने वाली ? क़त्ल मैंने किया और फाँसी किसी और को मिले ! यह भी कोई बात हुई ? तुम ऊँची जात वालों ने हमेशा हमारा हक़ मारा है । जिस जगह को बुहार बुहार कर बेहाल होते हैं ; तुम लोग वहाँ बैठकर, भगवान का नाम लेकर कहीं न कहीं पहुँच जाते हो ।''

''तेरी बात ठीक है संतीए, पर ये सारे नियम मर्दजात के बनाये हुए हैं । औरत तो पैर की जूती है, उसे कभी किसी ने पूछा है ?'' तेजी बड़े धीरज से संती को समझाने लगी ।

''क्या मजाल है, मेरा मर्द मूझसे दुई कर जाये । मैं उसके बराबर-बल्कि उससे सवाया काम करती हूँ । उसके बराबर, बल्कि उससे सवाये घर मैं कमाती हूँ ।''

''इस लिये कि तूने यह मान लिया है कि तू नीच जात हैं, तुझसे हम ऊँची जात वालों को कोई डर नहीं ।''

''मैं अपनी नीच जात को ऊँचा मानती हूँ । हमने तो कभी किसी ऊँची जात की तरफ़ पलट कर भी नहीं देखा । बाबा नानक तब कह रहे थे :

''नीचा अंदरि नीच जाति, नीची हूँ अति नीचु''

''तभी तो तू ऐसे सोच सकती है । तुझे पता है, हम ऊँची जात वाले किन बँधनों में बँधे हुए हैं । मैत्रियानी संहिता में औरत और बंदी को एक ही समझा गया है । शतपथ-ब्राह्मण में औरत, शूद्र, कुत्ते और कौऐ को बराबर का दर्जा दिया गया है । इन सबको कपटी माना गया है ।''

''फिर तो हम दोनों एक जैसी हुईं,'' संती खुश होकर तेजी के नज़दीक आकर बैठ गई ।

''मनु ने औरत को मर्द की दासी कहा है । वह कहता है कि पति अपनी पत्नी का मालिक होता है । उसे पीट सकता है और अगर वह गुस्ताख़ी करे तो उसे घर से बाहर निकाल सकता है । मर्द कैसे भी हो, बुरे से बुरा, मनहूस से मनहूस, औरत का फ़र्ज है, उसकी पूजा करे । औरत के लिये वेदपाठ करना मना है । औरत और शूद्र बराबर समझे गये है ।''

''तभी तो हम एक ही हवालात में बंद हैं।'' संती को जैसे मज़ा आ रहा था।

''औरत विधवा हो जाये तो दोबारा शादी नहीं कर सकती। उसका शादी न करना अच्छा समझा जाता है। शास्त्रों और स्मृतियों में सती की प्रथा को सराहा गया है। ख़ासतौर पर लड़ाकू जातियों और क़बीलों में इसे ऊँचे दर्जे की क़ुर्बानी समझा जाता रहा है। ऊँची जातों में यह ज़रूरी होता था कि इससे पहले कि लड़की जवानी की दहलीज़ पार करे, उसकी शादी कर दी जाये। मनु ने कहा है तीस बरस के मर्द को तेरह बरस की लड़की के साथ शादी करनी चाहिये या फिर चौबीस बरस के नौजवान को आठ बरस की कंजक के साथ। और तो और लड़की के जन्म को आज भी घटिया समझा जाता है और अक्सर पैदा होते ही बेटियों को ख़त्म कर दिया जाता है।''

''लो, हमने तो बड़ी आरजू और मिनतों से यह बेटी पाई है। बेटियां नहीं होंगी तो बेटा कौन पैदा करेगा ?''

तेजी और संती उस बात से बेफ़िक्र थीं कि उन्हें क़त्ल के जुर्म में पकड़ा गया था, इधर उधर की गप्पें लड़ा रही थी। इसी वक्त हवालात का दरवाज़ा खोल कर उन्हें कोतवाल के सामने पेश किया गया।

संती किसी को बात नहीं करने दे रही थी। चटाख़ पटाख़ लगातार बोले जा रही थी। ''हजूर ऐसा जुल्म मत कीजियेगा। एक तो मैंने प्रीतो का क़त्ल किया है, दूसरे अपना कसूर किसी दूसरे के मत्थे मढ़कर क्या मैं एक और पाप कमाऊँ ? यह नहीं मैं होने दूँगी। आख़िर मैंने भी तो आगे जाकर किसी को जवाब देना है ; हमारा भी तो कोई धर्म है। ये ऊँची जातों वाले हमारे हर हक को हड़प जाते हैं। मुझसे एक ही ग़लती हुई है। प्रीतो का क़त्ल करके तेजी को बताने चल पड़ी। उसके सामने ही तो कल शाम प्रीतो बढ़ बढ़ कर बातें कर रही थी। मुग़लाणी बनने के सपने देख रही थी।''

''हजूर, कोई हिन्दू से मुसलमान बन सकता है। ख़ुशी से बने। मुसलमान हमारे लिये कोई पराये नहीं। लेकिन कोई हिन्दू भला मुग़ल कैसे हो सकता है, पठान कैसे हो सकता है ? धर्म बदल सकता है, पर देश तो नहीं बदलता, जहां कोई पैदा हुआ हो, अपने वतन की जगह तो नहीं कोई ले सकता ?''

''बात तो पते की कर रही है जमादारिन,'' कोतवाल ने अपने मातहत से कहा।

''हजूर प्रीतो के पेट में मुग़ल का बीज था। मैंने एक नहीं दो जानें ली हैं। मुझे कड़ी से कड़ी सज़ा दीजिये। लेकिन इस बीबी का कोई क़सूर नहीं। इसे घर भेज दीजिये। इस पर पहले ही बड़ा क़हर टूट चुका है।''

''मैं तो सोचता हूँ, कत्ल न संती जमादारिन ने किया है, न तेजी ने। कत्ल करने वाले इस तरह इक़बाल थोड़े ही करते हैं ! इस मामले में मुझे कोई गदरी साज़िश मालूम होती है। मुझे यक़ीन है कि यह क़त्ल किसी और ने किया है। इन बेचारियों को दारोग़ा वैसे ही पकड़ लाया है। और तफ़तीश करनी पड़ेगी। यह कह कर कोतवाल ने संती और तेजी दोनों को घर भेज दिया।

"हज़ूर, लेकिन मुज़रिम के घर से लहू से सना छुरा बरामद हुआ है," कोतवाल के मुहर्रिर ने कहा।

"छुरा वहाँ रखा भी तो जा सकता है।" कोतवाल ने कहा और मुहर्रिर ख़ामोश हो गया।

8

संती बच नहीं सकी। दरअसल उसने किसी को मौक़ा ही नहीं दिया कि उसे बचाया जा सके। गली गली घूमती यही ढिंढोरा पीटती रहती थी, "मैंने प्रीतो को छुरा मारा है। बड़ी आई थी 'बेग़म' बनने वाली!" जहाँ बैठती यही किस्सा छेड़ देती। बकरे की माँ कब तक ख़ैर मनाती। आख़िरकार उन लोगों ने उसे फिर गिरफ़तार कर लिया। संती ने अपना जुर्म क़बूल लिया। कोई और होता तो वे लोग उसे फँासी पर चढ़ा देते। लेकिन सैदपुर के काज़ी ने उसे उम्र क़ैद सुनाई। तेजी एकदम बच गई। संती ने सारा क़सूर अपने सर ले लिया, तेजी पर आँच नहीं आने दी, हालाँकि लहू से सना छुरा उसके आँगन में से बरामद हुआ था।

संती को क़ैद हुए पाँच बरस हो गये थे। मजाल है जो उसके उठने-बैठने में कोई फ़रक आया हो। जैसे जेल के बाहर वह झाड़ू लगाती थी, उसी तरह जेल में भी वह मैला ढोती और झाड़ू पोचा लगाती रहती। बाहर भी उसके नसीबों में रूखी मिस्सी रोटी ही खाना लिखा था उसी तरह का टुक्कड़ उसे जेल में भी मयस्सर हो जाता।

संती खुश रहती थी। कभी कभी उसका घरवाला उसे आकर मिल जाता था। मुलाक़ात करके उसे अच्छा लगता। जिस घरवाले के साथ सुबह शाम वह झगड़ती रहती थी, अब वह उसका इंतज़ार करती रहती थी। मुंह का कड़वा था, लेकिन दिल का बुरा नहीं था।

जेल का ब्राह्मण दारोग़ा संती के काम से खुश था। बहुत खुश। जब कहीं उसे देख लेता तो पूछने लगता, "संतीए तुझे कोई तक़लीफ़ तो नहीं?" "आपके राज में तक़लीफ़ क्या होगी दारोग़ा जी, हम तो बाहर भी झाड़ू लगाते थे, यहाँ भी झाड़ू लगाते हैं।"

"नहीं कई बार आगे पीछे के बाक़ी क़ैदी भी कुछ बुराई कर बैठते हैं।"

"हां, लेकिन दारोग़ा जी आपने मेरा झाड़ू देखा है------" संती दारोगा को अपने हाथ में पकड़े झाड़ू की मूठ दिखाती, उसकी नज़रें कहती- जो मेरी ओर बुरी नज़र से देखे मैं तो उसकी हड्डी-पसली तोड़कर रख दूँ, उसकी आँखें नोंच लूँ।

ग़ज़ब की औरत है! दरोगा का मन कहता। छड़ी जैसी पतली-छरहरी। लेकिन दिल जैसे ताज़ी ब्याई शेरनी का सा- अपनों के लिये मुहब्बत से लबरेज, और परायों को फाड़ खाने के लिये उतावली।

और दारोगा को-उसका नाम गोस्वामी था- संती के सपने आने लगे। हर सुन्दर औरत में उसे संती की छवि मूर्ति परछाई दिखाई देती। कोई उसकी तरह हँसती थी। किसी का मुश्की रंग संती जैसा था, कोई चलती संती की तरह थी- मस्त मोर की चाल। किसी के दाँत संती जैसे थे; मोतियों के दाने। किसी की कमर संती जैसी थी; हचकोले खाती

हुई। तीखी नाक, पतले ओंठ, हंसी बिखेरती काली आँखें। आगे पीछे की हर हसीन औरत गोस्वामी को संती की मूर्त मालूम होती। अधेड़ उम्र में जब औरत किसी पर फ़िदा होती है तो लहर-बहर कर देती है। आगे पीछे नहीं देखती। पूरी की पूरी क़ुर्बान हो जाती है। इस उम्र में इश्क कर रही और न किसी घरवाले की, न किसी बहन भाई की परवाह करती है। शर्म हया को छींके पर टाँग देती है।

और गोस्वामी संती पर लट्टू हो गया था। हर वक्त संती का ख़्याल और कुछ नहीं।

संती उसे समझाती, ''पंडित जी हम लोग तो अछूत हैं। हमारे साथ भ्रष्ट होकर आप कहीं मुँह दिखाने के क़ाबिल नहीं रहेंगे। दीन दुनियाँ गँवा बैठेंगे।''

''संतीए तू हमारे साथ छल नहीं कर सकती। हमारी किताबों में तुझे खत्रानी दर्ज किया गया है। हमने तो खत्रानी को दिल दिया है।'' दारोगा गोस्वामी कहता।

संती सुनती तो क़हक़हा मार कर हँसने लगती। इस तरह हँसती हुई वह दारोगा को और भी सुन्दर लगती।

''किसी नीच जात की क्या मजाल कि वह किसी ऊँची जात वाले का क़त्ल करे। जो काम तूने किया है यह तो कोई खत्रानी ही कर सकती है। बेशक तू हमारी मिसलें किसी से पढ़वा ले।''

''दारोगा जी, हैं तो हम लोग अछूत। यह अलग बात है कि मेरी माँ को कोई खत्री टकर गया हो। हमारे जैसे कम्मी-कामे की क्या मजाल कि आगे से सर उठा सकें।''

''तू तो इतनी बुरी है कि किसी को हाथ नहीं लगाने देती।''

''मेरी और बात है। मुझे जो हाथ लगायेगा, उसका हाथ तोड़ दूंगी। मेरा घरवाला सुख से चार और संतियों से निपट सकता है।

संती की इस बात पर गोस्वामी का दिल थर थर काँपने लगता। बड़ी ज़बरदस्त औरत थी। कुछ भी कर सकती थी। कुछ देर के लिये पंडित जी की गर्मी मन्द पड़ जाती। दो चार दिन बीतने पर फिर वही जुनून सवार हो जाता। लेकिन संती दारोगे को घास नहीं डालती थी।

दारोग़े के भीतर का सरकारी अहलकार इस तलाश में रहता कि संती के काम में ज़रा सी भी कसर रह जाये तो वह उसे क़ाबू में लाये। लेकिन संती उसे इस तरह का कोई मौका नहीं देती थी। जेल में और भी जमादार और जमादारिनें थी, लेकिन संती का आँगन शीशे की तरह चमकता था। उसके काम में कोई नुक्स नहीं निकाल सकता था।

पिछले कुछ दिनों से दारोग़ा ने संती को अपने दफ़्तर की सफ़ाई के लिये तैनात कर दिया था। संती ने ख़ुशी से यह अतिरिक्त ज़िम्मेदारी भी अपने सर ले ली। गोस्वामी जी का दफ़्तर इन दिनों चमचमा उठा था। संती जी-जान से अपनी ज़िम्मेदारी निभाती। आस पास के सब लोग अश अश कर उठते।

एक दिन सुबह जब संती उसके दफतर की सफ़ाई कर रही थी तो गोस्वामी जानबूझ कर समय से पहले आ गया। अभी तक कोई अहलकार वहां नहीं पहुँचा था। बाहर गेट

पर सिर्फ़ संतरी थे । संती दफ़तर को बुहार कर झाड़-पोंछ करने लगी । दारोग़ा दोचिती में पड़ा बरामदे में खड़ा संती के छलकते हुए जोबन की ओर देखता रहा, और वह अपना काम निपटा कर चली गई ।

सारा दिन दारोगा अपने आप को कोसता रहा । अगर किसी ने मुंह ही काला करना हो तो चाहे सियाही से कर ले, चाहे क़ालिख़ से, फ़र्क क्या पड़ता है ? लेकिन नहीं, गोस्वामी के बाप के बाप-के बाप के संस्कार, उसकी जुर्रत नहीं पड़ी कि वह संती को कुछ कह सके ।

संती के भीतर की खेली-खाई औरत दारोग़ा की मजबूरी जानती थी । मन ही मन उस पर हँसती रहती । ऐसे में कभी कभी संती को बेचारे ब्राह्मण पर तरस आने लगता । "कर ले जो उसने करना है । कौन से मेरे लाटू उतार लेगा," संती का दिल कहता ।

कुछ दिन बाद दरोग़ा ने संती से बाकी काम छुड़वा कर सिर्फ़ अपने दफ़तर का काम सुपुर्द कर दिया ।

सुबह सुबह सफ़ाई करने के बाद सारा दिन पीपल के पेड़ के नीचे ख़ाली बैठी रहती। आते जाते का मुंह देखती रहती । दरोग़ा भीतर बैठा अपना काम करता रहता था, या जब फ़ुर्सत मिलती तो बाहर पीपल के चबूतरे पर बैठी संती की तरफ़ देखता रहता । संती बाहर से उसे नहीं देख सकती थी । लेकिन कभी कभी वह अपने को बेपर्दा महसूस करती थी । कोई उसका चीरहरण कर रहा था । उसे ऐसा महसूस होता जैसे कोई धीरे-धीरे उसकी छातियों को टटोल रहा हो । कभी उसे लगता जैसे कोई कोमल-कोमल उँगलियाँ उसकी जाँघों पर सरक रही हो । संती क़ो आग-सी लग जाती । उसकी छाती में लपटें उठने लगती । उसके अंग-अंग से लावा फूटने लगता ।

और सामने दरवाज़े पर टँगे पर्दों के पीछे अकेले बैठी दरोग़ा की सूरत उसकी आँखों के सामने तैरने लगती ।

फिर संती के बाल खिचड़ी होने लगे । दरोग़ा भी छड़ी के सहारे चलने लगा । छड़ी खटखटाते हुए सुबह दफ़तर आता, छड़ी खटखटाता शाम को घर लौट जाता । कुछ ही दिनों बाद दरोग़ा की छुट्टी हो गई ।

गोस्वामी की जगह एक पठान की नियुक्ति हुई थी । हट्टा कट्टा, हर वक्त मूछों को ताव दिये रखता था । पहले दिन ही उसकी नज़र संती पर पड़ गई । खंडहरों से ही उसने अंदाज लगा लिया कि इमारत कभी बुलन्द थी । एक दिन, दो दिन, तीन दिन, संती को देखते हुए नया जेलर, जिसका नाम अयूब ख़ान था, सोच रहा था, औरत कभी बूढ़ी नहीं होती । हसीन औरत हमेशा जवान रहती है । फिर एक शाम जब दूसरे अहलकार छुट्टी करके जा चुके थे, अयूब ख़ान ने संती को अपनी मसनद पर ही गिरा लिया । संती बार-बार कहने लगी, "अरे खान, मैं भंगिन हूँ, मैं भंगिन हूँ ।" मैं भंगिन हूँ ।" लेकिन दारू में बदमस्त जेलर बस यही कहे जा रहा था, "हम लोगों में कोई ऊँची जात का नहीं होता, कोई नीची जात का नहीं होता ।"

9

तेजी का बेटा आठवाँ बरस पूरा कर रहा था। हू-बहू ज़ालिम की शक्ल और अब उसकी हरकतें भी वैसी ही मालूम होने लगी थी । अक्खड़, मुँहज़ोर, माँ को कभी चैन से न बैठने देता । गली मुहल्ले से उसकी शिकायतें आती रहतीं । तेजी बहुत परेशान हो उठती । उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था । उसके मुसलमान पड़ौसी उसे ताजी कहकर पुकारते थे, हिन्दू उसे तेजी नाम से ही याद करते थे ।

तेजी ने ज़ालिम की औलाद का नाम अमन रखा था । लड़ाई में पैदा हुए, लड़ाई में परवरिश पाये बच्चे को जब तेजी अमन कहकर पुकारती तो उसके दिल को सान्त्वना मिलती ।

हिन्द में रसे-बसे मुसलमान सोचते थे कि मुग़ल या पठान हमलावर उन्हें कुछ नहीं कहेंगे, यह बात बिल्कुल ग़लत साबित हुई । हमलावरों ने मुसलमान लड़कियों की आबरू उसी तरह लूटी थी, जैसे हिन्दू क्वँारी, कंजकों के साथ मुंह काला किया था । मुसलमान घरों को भी उसी तरह लूटा था, जैसे हिन्दुओं की बस्तियों को । मुसलमानों की जायदादों को भी उसी तरह उजाड़ा था, जैसे हिन्दुओं की सम्पत्ति को तहस-नहस किया था ।

तेजी के मायके वाले गाँव की एक सहेली नसरीम के आँगन में भी एक लड़का खेल रहा था । हू-ब-हू तेजी के बेटे अमन की शक्ल । वैसा ही नटखट, वैसी ही बड़ी बड़ी काली-काली आँखें, हँसता हुआ चेहरा, शरारत भरी हँसी । और तो और शैली और अमन की उम्र भी एक थी । गोरा-चिट्टा जैसे एक को छिपाओ- दूसरे को निकालो ।

बाबर के हमले के दौरान तेजी के साथ जो हुआ, उसकी जानकारी तो पूरी बिरादरी को थी । बेचारी किसी को मुँह दिखाने के क़ाबिल नहीं रही थी । किसी तरह दिन काट रही थी । उसके जैसी अनगिनत और थीं । फ़ौज की फ़ौज । अपने करमों को कोसती रहती थी । लेकिन नसरीन जैसियों के साथ जो बीती, उस पर लोग जहाँ तक हो सकता था, पर्दा डाल कर रखते ।

और आज जब अमन और शैली खेलते खेलते कोठरी में अकेली बैठी अपनी माँओं के सामने आ खड़े हुए, जैसे एक ही सांचे में ढले हों, उन्हें देखकर नसरीन की आँखों से अचानक छल छल आँसू बहने लगे । जैसे कोई बादल फट पड़ा हो । और फिर उसने अपनी सहेली तेजी को बताया । ज़ालिम जब लौट रहे थे, गाँव के बाहर नदी किनारे उन्होंने रात भर के लिये डेरा डाला था । शाम पड़ने पर वह हाजत फराग़त के लिए गई थी । उसका मन उसे रोक रहा था लेकिन दिशा मैदान जाने से कोई कैसे रुके ? और वही बात हुई, जंगल पानी से वह निपटी ही थी कि बुरछे का बुरछा कोई उसके सर पर आ खड़ा हुआ । उसके घाघरे का नाला अभी उसके हाथ में ही था ।

"मेरे साथ जब वह मुँह काला कर चुका तो मैंने उसे कहा- तू मुझे अपने साथ ले चल । अब मैं यहाँ किसी को अपना मुँह दिखाने के क़ाबिल नहीं रही । मैं तेरी दीन की बहन हूँ । वह कहने लगा, पीछे मेरे तीन तीन आँगन सँभाले बैठी हैं, वे तेरी बोटी बोटी, काट डालेंगी ।" नसरीन रो रो कर तेजी को बता रही थी ।

तेजी को लगा जैसे यह सब वह पहले भी सुन चुकी थी ।

"मैंने तो उसका पल्ला पकड़ लिया । कितना सुन्दर जवान था । मैंने उसे कहा, मैं मुसलमान हूं– तू मेरे साथ निकाह पढ़वा ले । कहने लगा, सारे हिन्दू मुसलमान पहले हिन्दू थे और हिन्दू कभी नहीं बदलता । एक बार हिन्दू, सदा के लिये हिन्दू । "मैंने उसका पीछा किया, कितनी दूर पागलों की तरह उसके पीछे भागती चली गई । आख़िर वह खड़े हो कर मुझे समझाने लगा, "मेरे डेरे वालों को अगर पता चल गया तो एक एक करके सब तुझ पर टूट पड़ेंगे । तेरी कोख में मेरा बीज है, इसे सँभाल कर रखना । तेरा बेटा होगा, इसका नाम फ़रूख़ रखना ।"

"हाय री किस्मत यही बात किसी ने तेजी से कही थी । और तेजी की नज़र बार बार बाहर आँगन में खेल रहे नसरीन के बेटे पर पड़ रही थी । फिर बहुत देर तक सर से सर जोड़ कर बैठीं वे अपने दुखड़े रोती रहीं ।

"मुझे कहता था, मैं फिर आऊँगा । मेरी अमानत को संभालकर रखना ।" तेजी अपनी सहेली नसरीन को बता रही थी । बिल्कुल यही बात तो उसने नसरीन से भी कही थी ।

"हो न हो भेड़िये, हम दोनों को एक ही शिकारी ने मारा है ।" अब नसरीन कह रही थी । और वह टुकुर टुकुर बाहर खेल रहे लड़कों की ओर देखने लगती ।

कुछ देर बाद दोनों बच्चे नसरीन के आँगन में लगे सुर्ख बेरों से लदे पेड़ पर चढ़ गये । नीचे की ज़मीन लाल सुर्ख बेरों से भर गई । तेजी और नसरीन चुन चुन कर बेर खा रही थी ।

"मैं शैली के गिराये बेर खा रही हूँ । तू अमन के गिराये बेर खाती जा । ना मेरे बेर भ्रष्ट होंगे न तेरे बेर ।" नसीरां ने अपने समाज की मान्यताओं पर चोट की । दोनों उस समाज की दुर्दशा देख चुकी थी । उसके सड़ेगलेपन का डंक दोनों ने झेला था ।

पता नहीं, सचमुच पता नहीं, तेजी और नसरीन की यह सांझ, यह सहेलापा दिनों दिन बढ़ने लगा । हर रोज़ मिलतीं, घंटों मिल बैठती दिलों की बातें करती रहती ।

नसरीन ने तेजी को बताया, जिस दिन उसके बेटा पैदा हुआ था, बच्चे को देखकर उसके घरवाले का मुँह उतर गया था । ज़बान से तो कुछ न बोला पर भीतर ही भीतर कुढ़ता रहता था । राजपूत की ग़ैरत, उसके बाद उसने नसरीन को कभी मुँह नहीं लगाया, न ही उसके जाये की तरफ़ कभी पलटकर देखा । भीतर ही भीतर घुलकर उसे तपेदिक हो गया । नसरीन ने भरसक कोशिश की, अपने सारे गहने बेचकर उसका इलाज करवाया । जहाँ जहाँ किसी सयाने का पता चलता, वहीं उसे ले जाती रही । लेकिन, कोई फ़रक नहीं पड़ा । फिर वह अल्लाह को प्यारा हो गया । नसरीन को एक ही तसल्ली थी, आँखें मूँदने से पहले उसके शौहर ने उसे माफ़ कर दिया था । कहने लगा, "जो कुछ बंदे की तक़दीर में लिखा होता है वह होकर रहता है । तेरा कोई कसूर नहीं । मैंने तुझे सुर्ख़रू किया ।"

नसरीन ने रो रो कर उससे माफ़ियां माँगीं ।– "मेरा कोई क़सूर नहीं । मुझ पर जुल्म हुआ । औरत जात, मुझसे ज़्यादती की गई । मैं कर भी क्या सकती थी ? औरत जात, मैं तो

बस हाथ ही जोड़ सकती थी, फ़रियाद ही कर सकती थी.... ।"

कितनी देर तक नसरीन ऐसे बोलती रही, पता नहीं वह सुन रहा था या नहीं सुन रहा था, उसने पलकें नहीं उठाई । नसरीन उसकी कलाई थामे थी । और फिर उसे महसूस हुआ जैसे उसने सूखी टहनी अपने हाथ में पकड़ रखी हो ।

आजकल तेजी और नसरीन पड़ोसियों की परवाह न करते हुए सुबह शाम एक साथ उठती-बैठती, खाती-पीती, अब न तेजी का धर्म भ्रष्ट होता, न नसरीन का दामन नापाक होता ।

अगर कोई उनकी निंदा करता तो उनका बस एक ही जवाब होता - ना हम हिन्दू ना मुसलमान ।

यही तो बाबा नानक कहता फिरता था । देश के चप्पे-चप्पे में घूम कर उसने यही पैग़ाम दिया था ।

फिर एक वक्त आया जब गाँव वालों ने उनका जीना दूभर कर दिया । गाँव के मुसलमानों को नसरीन एक आँख नहीं भाती थी । गाँव के हिन्दू तेजी को मुंह लगाने के लिये तैयार नहीं थे । गाँव के कुओं से वे पानी नहीं भर सकती थीं । गाँव की बाऊली पर वे नहा नहीं सकती थीं । गाँव के दुकानकार उन्हें कोई चीज़ बेचने के लिये राज़ी नहीं थे ।

उनकी ज़िन्दगी ख़राब हो गई थी । फिर उन्हें किसी ने बताया, बाबा नानक ने करतारपुर नाम का एक गाँव बसाया था, जहाँ जाकर उनके अनेक श्रद्धालु बस गये थे । एक दिन तेजी और नसरीन भी सब कुछ समेट कर करतारपुर के लिये चल पड़ीं । "क्या पता उस दरगाह में इन्साफ़ मिले, "वे मन ही मन सोच रही थीं।

10

कभी पैदल, कभी खच्चर, कभी बैलगाड़ी, कभी टट्टू, कहीं इक्का, कहीं बेड़ी, तेजी और नसरीन क़दम क़दम अपनी मंज़िल की ओर चली जा रही थीं । रास्ते में कुछ गाँव, कुछ क़स्बे आये जहाँ गुरू नानक के श्रद्धालु रोज़ इकट्ठे होते और बाबा नानक के बताये हुये राह के मुताबिक़ मिलकर 'अकाल पुरुख' की स्तुति करते । इस तरह के स्थान को कहीं धर्मशाला कहते थे, कहीं मँजी । जहाँ तक मुमकिन होता नसरीन और तेजी ऐसी ही जगह पर टिकतीं । उनकी बहुत ख़ातिर होती । कई श्रद्धालु हसरतभरी निगाहों से उन्हें देखते । भाग्यशालिनी हैं, सतगुरू के चरणों में जाकर निवास करेंगी । कोई उनके कानों में फुसफुसा कर कहती- "बहनों आप चले , आपके पीछे-पीछे मुझे भी आई समझो ।" फिर रात गये तक लोग मिलकर गाते :

सतगुरां ने जहाज बनाया, चलो जिनां पार लगणा । (सतगूरू ने जहाज़ बनाया है, चलो जिन्हें पार लगना है)

जिन गाँवों, जिन शहरों में बाबा नानक खुद आये थे, चाहे घड़ी भर के लिये टिककर वहां से गुज़रे थे, चाहे रात दिन टिके थे, जिन लोगों ने उनके दर्शन किये थे, उनके नैनों में एक सोया सोया सा नशा नसरीन और तेजी को महसूस होता । चाहे वे हिन्दू थे या

मुसलमान । हिन्दू उन्हें अपना गुरू समझते थे, मुसलमान उन्हें अपना पीर बनाये हुए थे ।

बाबा नानक शाह फ़कीर
हिन्दू दा गुरू मुसलमान दा पीर ।

पंजाब में चारों ओर ऐसी ध्वनि सुनाई देती थी । जहाँ बाबा नानक के चार श्रद्धालु मिल बैठते वहीं उनकी कहानियाँ चल पड़ती । इन कहानियों को सुन कर नसरीन और तेजी के मन में बाबा के दर्शन का चाव मचल उठता ।

रावी के किनारे कर्तारपुर जाने से पहले तेजी और नसरीन के मन में आया कि वे तलवंडी राइ भोइ भी होती जायें, जहाँ बाबे का जन्म हुआ था । घूम कर तो जाना पड़ेगा, तो क्या हुआ ? रास्ते में चूड़काना नाम का शहर पड़ता था । शहर से बाहर, साधुओं के एक ठिकाने पर सुस्ताने के लिए वे रुकी थीं, उनके साथ आये नौकर ने उन्हें बताया कि उस स्थान पर बाबा नानक ने सच्चा सौदा किया था । घर से पूँजी लेकर व्यापार के लिये निकले । यहाँ साधुओं को भूखा-नंगा देखा तो उन्हें खिला-पिला कर घर लौट गये । नौकर उस महंत के दर्शन करके आया था, जिसके चेलों को बाबा नानक ने वस्त्र लाकर दिये थे, भोजन करवाया था । तेजी और नसरीन महंत के चरणों में जा गिरी । प्यारे गुरू नानक की प्यारी बातें सुनने की हसरत लिये महंत की मिन्नतें कर रही थीं कि वे उन्हें आँखों देखी, कान से सुनी सारी कथा सुनाये । महंत बहुत वृद्ध हो गया था । यह साखी उसके एक चेले ने उन्हें सुनाई :

''नानक वीह रूपईये लै करि बाले पासहु महंत के आगे रखे ताँ महँत कहिआ किउ रे बाले एह हमारे कंमि के नहीं । अरे तुझ कड बाप ने दीए बेपार के ताई । तू जो फ़कीरो कउ देता है, तै किआ समझिआ है । नानक आखिआ महँत जी मैंनू पिता ने आखिआ है, जो खरा सउदा कर आवीं । सो खरा सउदा एहु है । होर सउदे सभे खोटे है । ताँ महँत किहा, सुन रे बाले, तेरा नाउ किआ है, तूँ होता कउणु है ?'' ''जी नाउ मेरा नानक निरँकारी है । कालू खत्री दा पुत्र हाँ ।'' फेर महँत ने कहिआ, अरे बाले एह किआ निरंकारी अरु खत्री का बेटा किआ ?'' फेरि नानक कहिआ दुआपर जुग बिखे हम निरंकार की भक्ति करी थी, तब भी निरंकारी थे । अब भी निरंकारी हैं । फेर महँत कहिआ, अरे बाले तू किछु मँगु, ''नानक कहिआ किआ मंगउ । एक निरंकार होइ माँगता है । अउर किछू नाही माँगता । महँत कहिआ, अरे बाले तूँ ते आपे निरंकार होइ रहिआ है । हम तुझि को क्या देवै ? पर काम कर एह रूपए लैकर आपनी गाँठ बाँधि । अते तां इनका सीधा लिआउ । अतीताँ नूँ खलाओ । होरु हमारे कामि नाही ।'' ताँ नानक बाले सँधू नूँ साथि ले करि शहर गइआ । आइ सीधा अते लकाड़ीआँ अते कोरे भाँडे लीते । जाइ महँत के आगे रखे । महँत कहिआ नानक निरंकारी तूँ ते निरँकार ही है । ---

''नानक घरु न वड़िआ । बाला घर आया कालू नूँ खबर हुई जो बाला नफ़र आइआ है, नानक नहीं आइया । ताँ कालू नूँ हउल पइआु, कालू बाले दे घर आइआ । जाइ बाबे नूँ सदिउस । बाबा घरों निकलि बाहर आइआ । कालू पुछिआ, नानक किथै है, बीह रूपइये किथे हैनि । ताँ बाला कहिआ महता कालू बीह रूपइये जाँदे ही फ़कीराँ नूँ खवाइउसु । तैनूँ

नालि भेजिआ सी । सो इसी वासते भेजिआ सी जो फ़कीराँ ने खवाइउसु ?'' महिता कालू, तउ नानक नूँ आखिआ सी जो पुत्तर तू खरा सवदा कर आवी । उस मैनूँ आखिआ, सुणि बाला, असाँ खरा सउदा करणा । उस खरा सउदा कीता हई । तूँ भावें कुढ़ भावें न कुढ़ । कालू कहिआ बाला मैनूँ दस ताँ सही उहु किथे है कै नहीं ? बाला कालू नूँ लेकर झलि विच आइआ । बाले कहिआ वेख महिता जी नानक बैठा हई । आइ कर नानक नूँ फड़िआ । कालू पुछणि लगा । अवै, रूपइयै किथै हैनि । नानक अगे बोलै नाही । ताँ कालू गुस्सा खा कै नानक के दुइ तमाचे सजे हथ दे खबी गल ते मारे ते हिक तमाचा खबे हथ दा सजी गल ते मारा । ता नानक दी हँझू निकलि पइआ । --- ता नानकी नू खबरि होई । नानकी दउड़ी कालू दे पैराँ उते ढ़हि पई । आखिउस जी एहु गुनाह मैनूँ बाख़्शि । नानकी कालू दी धी गुनाह माफ़ करवाइउस ।

''इकस आदमी राइ बुलार भेजा जाइ कहिआ । राइ कहिआ जु हिकु आदमी कालू नूँ बुलाइ लै आवै । --- राइ कहिआ कालू तैनूँ ख़बरि नाही । जितनी दुनीआ अँदर दउलत है सभनां दा नानक खावंद है । असीं इस दा दिता खांदे हाँ ।'' (बाले वाली जनम साखी ।)

यह सुनकर कि पिता कालू ने बाबा नानक को दायें बाएं चपेड़ें मारीं थीं, तेजी और नसरीन की आँखों में से आँसू फूट आए । रोती जायें, रोती जायें । आँसू थे कि थमते ही न थे ।

दो दिन बाद तेजी और नसरीन तलवंडी राइ भोइ पहुँच गईं । इतना चाव था उनमें उस पवित्र स्थान के दर्शन करने का जहाँ बाबा नानक का जन्म हुआ था । जहाँ उन्होंने अनेक बाल लीलाएँ की, जहाँ उन्होंने पशु चराये, जहाँ उन्हें मुल्ला के पास पढ़ने के लिये भेजा गया, जहां उनके यज्ञोपवीत संस्कार का आयोजन किया गया । बाबा के जनेऊ की कथा उन्हें गाँव के एक आदमी ने सुनाई :

''जब बाबा नानक जी नवाँ बरसा का हूआ तब गुरू बाबे नानक जी का उणेत हूआ, जनेऊ लागे बाहणे । ब्राह्मण चउका दे करि सिक्खाँ लागे देवणे । प्रात साँध्या मँध्यिा । त्रिकाल सँध्या । तरपण । गाइत्री । लगा ब्राहमण सिखालणे । अर सिखा सूत धोती जनेऊ माला की सूच्च लगा सिखा लवे । सात्र बेद की मिरजादा लागा सिखालणे । खट करम लगा बतावणे। सालिग्राम की सेवा लगा सिखालणे । जितना बेद कहता था, हिन्दु धरमु सभु परकिरति लागा सिखावणे । तब पँडित चउका दे करि गुरू बाबा नानक जी नवाइ कर, आवि चउके ऊपर बैठाइआ, जनेऊ लागा पावणै । तब गुरू बाबे नानक जी कहिआ जि, ''ऐ पँडित । तू जि जनेऊ बाहता है सि ऐसु जनेऊ बाहणै का कवणु धर्म है ?'' तब ब्राहमण कहिआ ''ऐ नानक । इस जनेऊ पावन का ऐहु बीचारु है । ऐदु अर्थ पउदा है कि खत्री ब्रहमण कउ नेम होता है कि चवुके ते भिट्टा* अन्न जेवणा नाही । खत्री ब्रहमण कोउ जनेऊ की सर्म होती है । कि कुचील बस्तु के नेड़े न जाणे । जनेऊ होदै कुचलीलु रहना नाही । अरु बिनां नाते दे चउके ना जाणा। जब एस कउ जनेऊ पड़ै तो खत्री धर्म महि आवै । गाइत्री, तरपन, सँधआ सेवा करै, भली जुगति मै रहै, इस निमति कारणि खत्री ब्रहमण को जनेऊ पड़ता है । बिनां जनेऊ के खत्री

* अपवित्र

ब्रहमण का धरमु रहता नाही ।'' तब गुरू बाबे नानक जी कहिआ जि ''ऐ पँडित । खत्री ब्राहमण का धरमु जनेऊ सउ रहता है कि करम करि करि धर्म रहता है ?'' जब एहु बात गुरू बाबे नानक जी कही तब जितने लोग इकत्र भदे थे सभ हैरानि भये जि ''ऐ परमेसुर । इहु तउ बालक है, पर कैसी बात करता है ।'' तब ब्रहमण कहिआ जि, ''जी जितु करमि धरमि ऐसु का धरमु रहता है खत्री ब्राहमण का सु बताइऔ ।'' तब गुरू बाबा नानक जी बानी बोली उपदेशी :

''दइया कपाह सँतोखु सूतु जतु गँढी सतु वटु ॥'
ऐहु जनेऊ जीअ का हई त पाडे धतु ॥
न ऐहू, तुट्टै न मलु लगै न एहु जलै न जाइ ॥
घंनु सु माणस नानका जो गलि चले पाइ....॥
नाइ मनियै पति ऊपजै सालाही सच्चु सूतु ॥
दरगाह अँदरि पाईऔ तगु न तूटसि पूत ॥

(वार आसा महला १)

तब उनि पँडित और सबनहु नमस्कारु, कीआ जे, वाह नानक ! धन्न नानक । सत्त नानक ।''*

तेजी और नसरीन सुन कर गदगद हो गईं ।

11

करतारपुर दिनों दिन बड़ा गाँव हो रहा था । और ज़्यादा ज़मीन को खेती के क़ाबिल बनाय़ा जा रहा था । बड़ी संख्या में गुरू बाबा के श्रद्धालु आ कर बस रहे थे । हर वक्त आव़ाजाही रहती । गाँव में गहमागहमी रहती ।

मरदाना सोचता, अभी कल की ही तो बात है, जब बाबा नानक तलवंडी से उत्तर पश्चिम की ओर चलते-चलते लाहौर पहुँचे थे । फिर रावी नदी के साथ उत्तर पूर्व की दिशा में चलते-चलते लाहौर से कोई पचास कोस दूर रावी के किनारे इस अत्यंत रमणीक स्थान पर ध्यान में लीन हो गये । जब उन्होंने नैन खोले, तो फ़रमान हुआ कि सतगुरू अब यहीं ठिकाणा करेंगे । इस स्थान से चार क़दम दूर दोदे गोत के एक जाट ने जब सुना कि बाबा नानक उसके गाँव के पास आकर टिके हैं, तो पति-पत्नी दोनों बाबा जी के दर्शनों के लिये आये । सतुगुरु की एक छोह से वह निहाल हो गये दोनों वक्त वे बाबा की सेवा में हाज़िर होते । जो भी सुनता, बाबा के दर्शनों के लिये चल पड़ता । एक बार कुछ साधु बाबा को मिलने आये । उस वक्त मर्दाना रबाब बजा रहा था, और गुरू नानक देव जी अपने मुखारविंद से यह गायन कर रहे थे ।

कूड़ निखुट्टे नानका उड़कि सचि रही ।

बाबा जी को मिलने आये साधु इतने प्रभावित हुए कि वे जहाँ भी जाते, ''कूड़ निखुट्टे नानका उड़कि सचि रही '' गाते जाते । एक धूम-सी मच गई । आगे पीछे बाबा नानक की बातें होने लगी ।

---

* मिहिरबान व़ाली जनम साखी

यह ख़बर बाबा जी के एक श्रद्धालु दुनीचन्द तक पहुँची । दुनीचन्द लाहौर का रहने वाला था । वह बाबा जी के इस नये स्थान पर आया और अपनी देख-रेख में गुरू बाबे के रहने के लिये कोठा और एक धर्मशाला बनवा कर चला गया । धीरे-धीरे और इमारतें बनने लगी ।

इलाके के करोड़िये को जब ख़बर मिली कि उसके इलाक़े में कोई फ़कीर आकर बसा है, और उसकी महिमा चारों तरफ़ फैलती जा रही है तो उसके मन में ईर्ष्या जगी । उसने फ़ैसला किया, वह बाबा नानक को अपने इलाके में नहीं बसने देगा; हर रोज़ नई नई बातें करता है, उसकी नई नई कहानियां सुनने में आ रही थी । पहले रोज़ जब करोड़िया सजधज के घर से चलने लगा तो उसका घोड़ा बिदक गया । अगले दिन फिर वह घर से चलने लगा तो अचानक उसकी आँख में कोई चीज़ आ पड़ी । फिर उसे अपना इरादा छोड़ना पड़ा । अब करोड़िये को अक़्ल आई कि वह अहंकार में अँधा हो रहा था । फ़कीर तो कोई करामाती था, रब्ब को पहुँचा हुआ । उसकी महिमा चारों दिशाओं में फैली हुई थी । करोड़िया बहुत पछताया । कुछ दिनों के बाद बाबे के दर्शनों के लिये हाज़िर हुआ तो उनके चरण स्पर्श प्राप्त करके उसने अपना जन्म सँवारा ।

और कुछ दिनों बाद रावी पार से एक गाँव से उबारे ख़ाँ नाम का कोई पठान गुरू बाबे से मिलने आया ।

* उबारे ख़ाँ : असलामा-लेकम नानक तपा ।

गुरू नानक : वा अलेकम सलाम । आओ उबार खाँ पठान

उबारे ख़ाँ : कहु नानक तू हिन्दू के मुसलमान ।

गुरू नानक : अरु हिन्दू दे हो दिनस चारि के होती खेह
नाउ उसका सो मिटे न जाइ ।
नानक असथिर एक ख़ुदाइ ।

उबारे ख़ाँ : नानक तपा जैसा सुणीता था तैसा ही देखिआ । पाउ बाहिर निकालो हम तुम्हारे पाउ चुमे ।

गुरू नानक : भाई उबारे खाँ, फ़कीर का उगरा कबूल करके जाओ

उबारे ख़ाँ : तपा जी ऊगरिऊँ की कुछ हाजित नहीं रही । हमने तो अपणे दिल महि इऊँ ही जाणिआ है ।

गुरू नानक : जी तुमारे ऊपरि ख़ुदाइ की अैसी मिहर हूई है ।

उबारे ख़ाँ : जी हम फेरि आवेगे । अब हमको तुम करम बखशी करो ।

गुरू नानक : तुम को ख़ुदाइ की करम बक्शी है ।
घर लौटते वक्त रास्ते में उबारे खाँ ने शाह आद्रमान से बाबा नानक की तारीफ़ की । यह सुनकर आद्रमान को गुस्सा आया ।

आद्रमान : हिन्दू पलीत है, उठाए दूर करेंगे ।

---

* भाई बाले वाली साखी

उबारे ख़ाँ : शेख़ जी किस को उठाओगे ?
आद्रमान : जिसकी तू तारीफ़ करता है ।
उबारे ख़ाँ : शेख़ जी ख़ुदाइ को उठाउगे ? उह तो ख़ुदाइ दा है ।
आद्रमान : पठान, तू हिन्दू की तारीफ़ करता है ? हिन्दू को ख़ुदाइ कहता है ?
उबारे ख़ाँ : शेख़, उह तो हिन्दू अरु मुसलमान दोनों सो फ़रक है । वह तो बजिनिस ख़ुदाइ है । बात समझ करि कहो । ऐसी बात कहै लाज़म न होते हो ।

जब बाबा नानक को इस बात की ख़बर मिली तो वे भाई बाले के साथ आद्रमान के यहाँ जा पहुँचे । शेख़ ने 'दस्तपोशी' ली और कहा–

आद्रमान : ख़ैर है ?
गुरू नानक : ख़ैर है पर नाही खैरि ।
आद्रमान : तपा यह किआ, खैर है और नाही ख़ैर । मुझ को यह हैरानगी लगी है ।
गुरू नानक : शेख़ जी ख़ैरि पुर इस वास्ते नाहीं ख़ैरि जो तुम कहिआ, उठाइ देवेगो । तुम्हारी कउण सी जहा मा हमो रोकी है तुम हमारे पासि तै छुड़ाइ लेउ ।
आद्रमान : तपा, कउण कहता है ?
गुरू नानक : शेख़ जी तुम कहते हो ।
आद्रमान : जो कहता है सो झख मारता है ।
उबारे ख़ाँ : किउँ शेख़ तूँ कहता था । जो किआ हिन्दू की तारीफ़ करता है, उठाइ देवेगा । अब किऊँ मुकरता है ?
आद्रमान : हम जाणे तपा जाणे, तुभको किआँ पहुचता है । हम दोनों फ़कीर है, आपस में झगड़ लइगे । तूँ आपने ठिकाणे बैठा रहु ।
उबारे ख़ाँ : हमारा ठिकाणा तपे के साथि है हम तपे के मुरीद हैं ।
गुरू नानक : भला ख़ाँ जी हम अर इह फकीर है । तूँ किस तरह चाहीते हो ?
आद्रमान : कहु तपा जी, तूँ हिन्दू हैं के मुसलमान ?
गुरू नानक : ना हम हिन्दू, न मुसलमान । न बेद पढ़िआ ना पढ़े कुरान......
आद्रमान : सुन तों नानक तेरा मज़हब किआ है ?
गुरू नानक : मज़हब हमारा सच्चा नाउ । जिनि ऐ केत कीऐ अनिक उपाउ ।
आद्रमान : किउँ जी जो ख़ुदाइ के प्यारे हैं उह कुछ नाहीं ?
गुरू नानक : जो ख़ुदाइ के प्यारे तिनां ख़ुदाइ पिआरा ।
आद्रमान : सुण तेरे तपा तेरी नजरि तले कोई नाहीं आवता ।
गुरू नानक : नदर हमारी सभ ते दूरि जहा खुलकत रहे हजूरि
आद्रमान : सुन नानक तपा तैनूँ वडी इनाइित हूई है । अर हम को दीदारु दीआ करो, मिहरबानी कीता करो ।
गुरू नानक : शेख जी, वडी मिहरवानगी ऐहा है जे कीते नूँ कीते ही जानणा । हम ते दावा किसी नाल बँनणा नहीं । जो पैदाइश है सो सब ख़ुदाइ है । आपहु न कोई चँगा होआ है ना कोई मँदा होउआ है । जेहाँ ख़ुदाइ

बणइआ है तेहा है ।

आद्रमान : (गुरू नानक के पैरों ते हाथ रख कर) हम को कुछ गुस्ताकी पड़ी है सो तुम हमको माफ़ी करनी ।

गुरू नानक : शेख़जी, ख़ुदाइ दे प्आरिआँ विच गुस्ताखी काई नहीं होंदी अते जे कोई भुलिआ चूकि आ पउँदी है तां ख़ुदाइ बखशिंद है । पर आपनी वलों ख़बरदार रहे । उजे कंबीर ख़ुदाइ देइ प्यारे आखिआ है, "जो सतर सै सलार है जा के । सवा लक्ख पैकँबर ताके।" सुन शेख़ जी, जे ख़ुदाइ दे पिआरे हैनि, तिनाँ नू ख़ुदाइ दा खौफ़ दिल ते अठे पहिर वसदा है । उह कदी तगाफ़ल ना करदे ।

आद्रमान : भला, तपाजी, जो कुछु, करदे हो सो दरुस्त है ।

उबारे ख़ान : किउँ शेख़, तपे को उठावते थे ?

आद्रमान : उबारे खाँ, हम जाणते जो अउर हिन्दू जो है सो बुतपरस्ती करदे हैं, यह भी करता होवेगा । अब हम को मालूम होइआ हूआ जो यह बंदा ख़ुदाइ का है ख़ास ।

12

करतारपुर आकर बसने वाले जो श्रद्धालु यह सोचते थे कि दिन रात बाब के दर्शन हुआ करेंगे, दिन रात कीर्तन होगा, राम-नाम की धुन गूँजती रहा करेगी, वे देख-देख कर हैरान होते । बेशक सुबह शाम कीर्तन होता था, संगत जुड़ती पर जो कोई भी करतारपुर पहुँचता था, गुरू साहब उसे खेती या कोई और धंधा करने की ताकीद करते थे । जिसे उपदेश देते हमेशा यही कहते, किरत करो और बाँट कर खाओ । जब करतारपुर में रहते तो गाँव वालों के साथ मिलकर खेती करते, दोनों वक्त संगत के साथ मिल कर एक स्थान पर प्रसाद खाते । हर कोई अपनी सामर्थ्य के मुताबिक मेहनत करता, हर कोई अपनी ज़रूरत के मुताबिक गुज़ारा करता, खाता-पीता, पहनता । खेती साँझी थी । लँगर साँझा था । गाँव में रहने की जगह साँझी थी । न कोई बड़ा था, न कोई छोटा, न कोई हिन्दू था न कोई मुसलमान । सभी इन्सान थे । एक ईश्वर को मानते थे । एक अल्ला की इबादत करते थे । सभी को अपनी मातृभाषा प्यारी थी । न कोई अरबी के पीछे भागता था, न कोई संस्कृत, पालि को सीने में लगाये घूमता था । बाबा नानक ने वेद, कतेब साँझे कर दिये थे ।

फलस्वरूप, दूर से, पास से सतगुरू के श्रद्धालु दल बल सहित करतारपुर में इकट्ठे होने लगे । यह देख कर आगे पीछे के हिन्दू संतों और मुसलमान फ़कीरों में खलबली मच गई । उन्हें लगा कि उनकी गदियाँ डांवाडोल हो रही हैं । उन्हें जब भी मौक़ा मिलता वे बाबा नानक से कोई न कोई बहस छेड़ बैठते । किसी तरह उन्हें हराया जाये, परेशान किया जाये ।

एक बार बाबा नानक शिवरात्रि के मेले में शामिल होने के लिये अचल बटाले

---

* मेहरबान वाली जनम साखी-जिलद दूसरी

गये । बाबा जी के साथ भाई लहना भी थे । बाबा जी अचल बटाले में तालाब के किनारे एक उँचे स्थान पर जाकर विराजमान हुए । यह जानते हुए कि बाबा नानक को रब्बी कीर्तन से लगाव है, मेले के भगत उनके चरणों में आ बैठे और पदे गाने लगे । देखते ही देखते मेले के सब लोग बाबा जी के गिर्द संगत में आकर जुड़ने लगे । सिद्धों के शिवालय की ओर कोई मुँह नहीं कर रहा था । भगतों का लोटा श्रद्धालुओं की भेटों से भरने लगा । हर कोई अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ न कुछ भेंट करता । धीरे-धीरे उस स्थान पर इतनी भीड़ जमा हो गई कि कंधे से कंधा टकराता था । इस भीड़ भड़क्के में ईर्ष्या से बेचैन सिद्धों ने भगतों का लोटा इधर उधर कर दिया । भगत परेशान होने लगे । बाबा जी को जब पता लगा, तो उन्होंने भगतों को बताया लोटा कहाँ छिपा कर रखा था । सिद्ध बहुत शर्मिन्दा हुए । वे बाबा जी के पास आये और उनसे वार्त्तालाप करने लगे । उनका नेता भँगरनाथ नामक एक सिद्ध था । कहने लगा "ऐ नानक, इक दुइ गलाँ असाँ तेरे नाल करणीआँ हैनि । जे तेरी आज्ञा होइ ता आखहू ।" गुरु बाबे ने कहा, "भला होइ जि किछु जी है, सु कहीअै ।" यह सुनकर भँगरनाथ कहने लगे "नानक रिड़कण हारी धिऊँ संजिआ सी, पर फुलु सड़ गइआ । उहु घिउ खाणहु, संजणहु वेचणहु सभ दू गुइआ । घिउ महि दोखु कि भाँड़े विचि दोस ? कै संजण हारीआ विचि दोसु ।"

भँगरनाथ का कहना था कि बाबा नानक उदासी का भेस उतार कर संसारी क्यों बन गये हैं । यह तो ऐसे हुआ जैसे कोई दूध में खटाई मिला दे । बाबे ने उसे समझाया कि गृहस्थ में रहकर भी बन्दे को मन ईश्वर भक्ति में लीन रखना चाहिये । अगर बुद्धि उजली न हो तो नाम रूपी दूध फट जाता है ।

यह सुनकर सिद्धों ने अपनी महानता को ज़ाहिर करने के लिये करामातें दिखानी शुरू कर दी ताकि श्रद्धालुओं को अपनी ओर खींच सके । वे मजमेबाज़ों की भाँति तरह-तरह की क़रामातें दिखाने लगे । गुरू नानक ख़ामोशी से उन्हें देखते रहे । जब सिद्धों ने बाबा नानक को भी करामात दिखाने के लिये कहा तो बाबा जी ने माफ़ी माँगी । "बाझहु सचे नाम दे होर करामात असाथे नही ।"

अचल बटाला से बाबा नानक भ्रमण करते हुए मुलतान पहुँचे । यहाँ कईं मुसलमान फ़कीरों के आस्ताने थे । मुलतान शहर, सूफियों और दरवेशों से भरा पड़ा था । गुरू नानक के आगमन की ख़बर सुनकर शहर के फ़कीरों ने दूध से लबालब भरा कटोरा बाबा जी के लिये भेजा । ख़ुदापरस्त लोगों में ऐसा करना यह बताने का संकेत समझा जाता था कि उस शहर में और किसी फ़कीर की गुँजाइश नहीं, पहले ही वह नगर ठसाठस भरा हुआ था । बाबा नानक दूध का कटोरा देखकर मुस्कराने लगे । उन्होंने सामने रखा चमेली का फूल उठाकर कटोरे के दूध पर रख दिया । इस तरह बाबा जी ने बताया कि बेशक किसी और फ़कीर की उस शहर में जगह नहीं थी लेकिन वे तो चमेली के फूल की तरह वहां कुछ देर के लिये अपनी सुगन्ध छोड़ने के लिये आये थे । बाबा नानक का यह पैग़ाम पाकर मुलतान के दरवेश निहाल हो गये ।

उन दिनों बाबा जो मन में आता, उसी तरह का भेस धारण कर लेते थे । मेहरबान

के मुताबिक- 'तब गुरू बाबा नानक बैरागीअहु फ़कीराहु के रूप फिरै । एक पैर कउस, । एक पैर अध उँचा नीला तहिमद, तेड़ भगवाँ चादर पहनी । सिरि टोपी नीली, माथे तिलक दीआ । ना कोई हिन्दू ही सही करै, ना कोई मुसलमान सही कर सकै। हिन्दुआँ कउ हिन्दुओं का जवाब मिले, मुसलमानाँ कउ मुसलमानाँ का जबाब, मिलै ।''

इस तरह विचरते हुए गुरू नानक अपने एक पुराने परिचित भाई मूले को मिलने के लिये स्यालकोट जा पहुँचे । सामने गली में बाबा जी को आते देख कर मूले की धर्मपत्नी जल्दी-जल्दी भीतर गई और उसने मूले को घर की कोठरी में छिपा दिया । उसे डर था कि उसका पति बाबा नानक के दर्शन करेगा और उनके साथ चल देगा । पहले भी उसने एक बार ऐसा किया था । कई महीने वह घर से बाहर बाबा जी के साथ घूमता फिरा था । इस बार जाने पर क्या पता वह लौटे या न लौटे । हो सकता है करतारपुर ही जा कर बस जाये । यह सोचकर वह बाहर आई । बाबा नानक ने मूले की बीवी से पूछा,* ''मूला किथे है ?'' उसने जवाब दिया, घरि नहीं, कितै ही गिराइ गैआ है । तो गुरू बाबे ने कहा, ''अखै घर नहीं ?'' मूले की बीवी ने फिर वही जवाब दिया, ''घर नाही ।'' तब गुरू नानक ने कहा, ''हाइ हाइ सईअदा, किराड़ा असीं आये तेरे मिलनें दे वास्ते, अतै तूं अगिअहु छपि पैआ ।'' फिर गुरू नानक ने यह सलोक उच्चारण किया :

''नालि किराड़ा दोस्ती कूड़ै कूड़ी पाइ ॥
मरणु न जापै मूलिआ आवे किते थाइ ॥

(सलोक महला १ सलोक वाराँ तों वधीक)

बाबा नानक जब मूले के घर से निकले, मूले की बीवी ने भीतर जाकर देखा, मूला कोठरी में मरा पड़ा था ।

13

उस साल सूखे के कारण फ़सल बिल्कुल नहीं हुई थी । किसान इन्तजार कर कर के थक चुके थे, लेकिन आकाश की आँख में से एक बूँद भी नहीं गिरी थी और आसपास के सारे इलाक़े में खेत झुलस गये थे । करतारपुर की धर्मशाला, जो आम तौर पर श्रद्धालुओं और ज़रूरतमन्दों से भरी रहती थी, आजकल ख़ाली पड़ी थी क्योंकि अच्छे चोखे भोजन की बजाय पिछले कुछ हफ़्तों से दोनों वक्त भुने हुए चने बाँटे जा रहे थे । बस एक भाई लहना थे, उधर घर में गुरू नानक देव जी का परिवार । बाकी गाँव में वे लोग थे, जो यहाँ आकर बस गये थे ।

भाई लहना आजकल जपुजी साहब के संपादन में गुरू बाबे की मदद कर रहे थे ।

तेजी और नसरीन अपने बेटों के साथ जब करतारपुर पहुँची तो गुरू बाबे का डेरा सूना सूना प्रतीत हो रहा था । रास्ते में कई लोग मिले जो उन्हें गुमराह करते रहे लेकिन जवान-जहान लड़कियों की आस्था, उन्होंने किसी की नहीं सुनी । करतारपुर पहुँचकर वे हैरान रह गई, चार कदमों की दूरी पर रावी बहती थी, लेकिन अब सिकुड़ सिकुड़ कर

---

* मेहरबान वाली जन्म साखी

कहीं की कहीं पहुँच गई थी । खेत वीरान थे । आसपास न चील थी न मुर्ग़ा । तेजी और नसरीन का गुरू प्रेम, ये बाबे की दर्शनों के लिये तड़प रही थीं । जैसे किसी प्यासे को एक घूँट पानी की इच्छा हो और बस ।

परमात्मा की रज़ा जिस दिन तेजी और नसरीन करतारपुर पहुँची, उस शाम पता नहीं कहाँ से घटा घिर कर आई और सारी रात मुसलाधार वर्षा होती रही । चारों तरफ़ जल थल हो गया । सब लोग यही कहते थे, लड़कियाँ भाग्यशाली हैं, इनके कदम पड़ते ही सूखे हरे हो गये हैं ।

तेजी और नसरीन बाबा जी के दर्शनों के लिये हाज़िर हुई । गुरू साहब के चेहरे का नूर देखकर उनकी आँखें चौंधिया गई । कितनी देर तक 'धन्न करतार' 'धन्न करतार' कहती हुई उनके चरणों के साथ चिपकी रही । गुरू बाबा 'सत करतार', 'सत करतार' उच्चारते रहे । उनसे क्या छिपा था ? उन्होंने तो अपनी आँखों से सैदपुर में बाबर द्वारा किये गये अत्याचार देखे थे । तेजी और नसरीन बहुत देर तक बिलख़ती हुई अपनी आप बीती सुनाती रही ।

और फिर फ़ैसला हुआ कि वे धर्मशाला में अपना ठिकाना जमा लें, इससे पहले कि वहां फिर भीड़ लग जाये । वही बात हुई, चार दिन बाद ही फिर बाबा नानक के श्रद्धालुओं की भीड़ दर्शन के लिये आने लगी । लोग अक्सर कई-कई दिन वहां टिक जाते थे । करतारपुर में फिर रौनक रहने लगी । तेजी और नसरीन लंगर की सेवा करती, आने वालों की ख़ातिर में हाज़िर रहती ।

बाबा नानक अमृतवेला में उठते, स्नानादि से निवृत्त होकर कीर्तन में बैठ जाते । दर्शनों के लिये आई संगत और गाँव के श्रद्धालु भी आकर शामिल हो जाते । हर कोई बाबा जी के चरणों में माथा नवाने से पहले 'धन्न करतार,' 'धन्न करतार'' कहता, जवाब में बाबा नानक 'सत्त करतार', 'सत्त करतार' कहकर उन्हें आशीर्वाद देते । दिन निकलते ही सब खेतों की ओर चल देते । बाबा नानक भी उनमें शामिल होते । मिल कर हल चलाया जाता । मिलकर बीज बोया जाता । मिलकर गुड़ाई होती । मिलकर खेत की रखवाली की जाती । खेत पकने पर मिलकर फ़सल काटी जाती । मिलकर खलिहान में अनाज को संभाला जाता । सुबह शाम मिलकर सब लोग लँगर में प्रसाद पाते । अपनी अपनी हैसियत के अनुसार श्रद्धालु लंगर की सेवा करते ।

कुछ समय धर्मशाला में टिकने के बाद तेजी और नसरीन ने भी गाँव में अपना घर बना लिया । साथ आये नौकर की मदद से खेती बाड़ी में भी वे पूरा हिस्सा डालती । अपने बेटों को उन्होंने पढ़ने के लिये धर्मशाला में भेज दिया था ।

तेजी और नसरीन देख देख कर हैरान रहती कि भाई लहना जी परछाँई की तरह हर वक्त गुरू नानक जी के साथ रहते थे । इतनी सेवा तो गुरू बाबा जी के अपने बेटे भी नहीं करते थे । मज़ाल है कि गुरू जी के मुख से कोई बात निकले और उसे पूरा न किया जाये । उनके अपने जाये कई बार किसी बात को सुनी अनसुनी कर देते थे, पर लहना जी नहीं ।

उस साल पहले तो वर्षा होने में नहीं आ रही थी और अब जब शुरू हुई, तो थमने

का नाम नहीं ले रही थी । दिन भर, रात भर पानी बरसता रहता । इस तरह की एक झड़ी में बाबा जी के घर की चहारदीवारी का एक कोना गिर पड़ा । रात का वक्त था, मूसलाधार वर्षा हो रही थी । बाबा जी के मन में न जाने क्या आई । शायद उन्होंने सोचा कि चाहरदीवारी के गिरने से घर खाली हो गया था । कहने लगे इस कोने की चिनाई कर दी जाये । उनके बेटों, बाबा श्रीचन्द और लखमी दास ने सुना तो चुप्पी साध ली । बाबा जी ने फिर अपनी फ़र्माइश दुहराई । यह सुनकर पहले एक बेटा, फिर दूसरा बेटा भी बोला कि यह काम तो दिन चढ़े ही हो सकता है । इस आधी रात के वक्त जब पानी टख़नों तक भरा हो, चहारदीवारी की चिनाई की कोई ज़रूरत नहीं थी । लेकिन बाबा जी उनसे सहमत नहीं थे । यह देखकर भाई लहना जी उठे, कही और बेलचा लेकर चहारदीवारी की चिनाई करने लगे । चिनाई ख़त्म करके उन्होंने बाबा नानक जी को सूचित किया । बाबा जी ने चिने हुए कोने को देखा और सिर हिला कर कहने लगे, दीवार तो टेढ़ी है । भाई लहना जी ने सुना तो एक दम खुंभे को ढहाकर फिर उसे चिनना शुरू कर दिया । इस बार फिर दीवार सीधी नहीं थी । बाबा नानक ने फिर उसे रद्द कर दिया । उधर वर्षा थी कि उसके थमने का कोई आसार नहीं था । भाई लहना जी फिर चिनाई में जुट गये । इतने में सुबह हो गई ।

उस दिन जब संगत जुड़ी, हर कोई भाई लहने की श्रद्धा और सच्ची लगन की बड़ाई कर रहा था । हर कोई भाई लहना की वाह-वाह कर रहा था ।

भाई लहना जी की दिनों दिन बढ़ती तारीफ़ बाबा नानक जी के परिवार को अच्छी नहीं लगती थी । ख़ास तौर पर बाबा जी के बेटे श्री चन्द और लखमी दास ख़फा ख़फा से रहते । माता सुलक्खनी जी की हमदर्दी भी अक्सर अपने जायों के साथ होती । परिवार में बदमज़गी रहने लगी । यह देखकर बाबा नानक जी ने भाई लहना जी को अपने गाँव वापिस चले जाने के लिये इशारा किया । अपने गुरू की रज़ा में राज़ी भाई लहना दिल पक्का करके अपने घर लौट गये । बाबा नानक घर में बेकार तनाव नहीं चाहते थे । भाई लहना जी सतगुरू का कहना मान कर चले तो गये, लेकिन उनका मन अपने गाँव में नहीं लगता था । आठों पहर बाबा नानक का ध्यान करते रहते । हर आये गये को अपने सतगुरू की कहानियाँ सुनाते रहते । अपने इष्ट को याद करके उनकी पलकें सजल रहती ।

बहुत समय नहीं गुज़रा था कि घट घट के ज्ञाता बाबा नानक जी ने संदेश भेज कर भाई लहना जी को बुला लिया । साध संगत में फिर गहमा गहमी रहने लगी । संगतों की भीड़ लगी रहती । एक दिन बाबा जी भाई लहना से बोले-"हज़ारों लोग कामनाएँ लेकर इकट्ठे हुए हैं । जैसे मिठाई को चींटियाँ चिपकती हैं और उसका रस चूस लेती हैं, उसी तरह ये स्वार्थी जीव आकर इकट्ठे हुए हैं । सो ये भजन में विघ्न डालते हैं । अब तो इन्हें परखा जाये कि इनमें से कौन प्रीतिवान् है और कौन कामना लेकर आया है ।"

कुछ देर बाद एक जगह पर एक मुर्दा पड़ा था । गुरू जी अपने शिष्यों की ओर देखकर कहने लगे, "भाई इस मुर्दे को खाओ ।" यह सुनकर सब वहाँ से हट गये, पर भाई लहना जी ने मुर्दे पर चादर डाल दी और कहा, "जी आप कहें तो सर की ओर से खाऊँ, कहें तो पैरों की तरफ से खाऊँ ।" बचन हुआ, "बीच में से खाओ ।" तो लहने ने हाथ

जोड़ कर अरदास की । अरदास करके फिर माथा टेका । चादर उठाकर देखा तो हलुए का थाल भरा हुआ था । जो सिक्ख दूर हट गये थे, सबको बुलाया । तभी बाला पलाश के पत्ते लेकर आया तो सबसे पहले पलाश के पत्ते पर प्रसाद डाल कर बाबा जी के आगे रखा । फिर सब को पत्तों पर डाल कर परोसा । तब बाबा नानक ने फ़रमाया, "पुरखा, जो माइआ आपणी जाण के घुट रखी दी सो मुर्दे के समान है, अर जो वाहिगुरू दी जाण के वंड खांदे हन सो कड़ाह दे समान हन ।" तब लहने को बाबे ने अंग से लगाया और सर पर हाथ फेर कर कहा, "जो तू मेरे अँगां थी उत्पत होइआ है, तां ते तेरा नाअँग अँगद धरिआ है ।"*

कुछ समय बाद गुरू बाबे ने अंगद जी को बुला भेजा और कहने लगे, "अँगदा, असाँ नूँ दरगाह दा सदा आइआ है । सो असीं दरगाह जाँदे हाँ अर इह सरीर मिट्टी दी ढेर वत है, सो असीं सिटणे हाँ अते तूँ पिछे ज्ञान गोष्ट कर के सिक्खाँ नूँ परचाई रक्खे ।" ते फिर पाँच पैसे, मिश्री नारियल गुरू अँगद के आगे रख कर बाबा नानक जी ने माथा टेका और बचन हुआ "अँगदा ! तूँ आपने स्वरूप नूँ पछाण । जो सरीर तेरा मेरा पँजाँ तत्ताँ दा है ते चेतन कला तेरे मेरे विच एक ही है । सो जैसे सूरज दा प्रतिबिंब सभनां घरां में उजाला करदा है, पर सूरज थी भिन्न नहीं । सो तूँ सभ ज्ञान दा जातवा हन वही ..... जिहड़ी समझ अर ज्ञान तुसाँ नूँ प्राप्त होइआ है उस अगे असां मथा टेकिआ है ।" ते फिर उठके बाबा जी ने गुरू अँगद नूँ कन्ठ नाल लाइआ अर आपणे सिंघासण दे बराबर बिठाइआ अर श्रीचन्द ते लखमी दास नूँ बुला भेजिआ । उन्हां सुनिआ जो अँगद ने पास बहाल के सानूँ बुलाइआ है, सो उन्हाँ आवण विच ढिल-मठ्ठ कीती । तां होर जितने सिक्ख बैठे सन सो सभनां ने गुरू अँगद जी दे अगे मत्था टिकाइआ । अर बाबे ने पद्मासन कर त्रीकुटी दा ध्यान कीता अर सोहुँ दा जाप जप के पहर रात रहिँदी ब्रहम रँहध नूँ फोड़ के उन्हाँ दे प्राण ब्राहम लोक नूँ तुर गए ।"

14

अमन और शैली पढ़ने के लिये धर्मशाल गये थे । एक घंटे बाद तेजी का बेटा हाँफता हुआ लौट आया और अपनी माँ से कहने लगा-"बीबीजी, बाबाजी मर गये हैं ।"

तेजी ने ज़ोर से बेटे के मुँह पर थप्पड़ मारा- 'क्या बक रहा है, तुझे बात करने की भी तमीज़ नहीं आई । चार दिन बाद तू तेरहवें बरस में जायेगा ।'

इतने में शैली भी हाँफता हुआ आ गया । उसके हाथ में बस्ता था- 'मासी, बाबा जी पूरे हो गये हैं ।'

तेजी की पाँचों उँगलियाँ अमन के गाल में धँस गई थी । बच्चे की आँखों से आँसुओं की अविरल धारा बह रही थी । पर डर के मारे मुँह से आवाज़ नहीं निकल रही थी ।

"तुम लोग यह क्या बोले जा रहे हो ?" तेजी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था । इतने में नसरीन आ गई । खेतों में काम करने गई थी । उसके पीछे पीछे उसकी बकरी थी । "बाबा जी नहीं रहे," उसने आकर बताया । उसका चेहरा उतरा हुआ था, पीला ज़र्द, उसके ओंठ काँप रहे थे । एक नज़र तेजी की तरफ़ और वह फूट पड़ी । एक दूसरे के गले

---

* भाई मनी सिंह वाली जन्म साखी

लग कर वे फूट फूट कर रोने लगीं । कितनी देर तक बिलखती रहीं । फिर उन्होंने अपने आप को संभाला और धर्मशाल की ओर चल पड़ी । बाहर गली में छल छल आँसू बहाते लोग उसी तरफ़ जा रहे थे । हर आदमी विलाप कर रहा था, क्या हिन्दू, क्या मुसलमान ।

"बाबा जी जोती जोत समा गये ।" जब वे धर्मशाल के नज़दीक पहुँची तो कोई कह रहा था । "बाबा अल्ला को प्यारे हो गये ।" एक और आदमी किसी को बता रहा था । मुसलमान यह सुनकर "अल्ला" "अल्ला" पुकार रहे थे । हिन्दू राम नाम जपने लगते थे ।

भीड़ हर क्षण बढ़ती जा रही थी । हर आँख सजल थी । बीच-बीच में कुछ लोग आहें भर रहे थे, सिसक रहे थे । कुछ लोग रह रह कर फफक उठते, विलाप करने लगते । लेकिन गुरू अंगद जी के आदेश के मुताबिक रोना वर्जित था ।

बाबा नानक जैसे चादर से चेहरा ढँक कर लेटे थे, वैसे के वैसे पड़े थे । उनके सिरहाने गुरू अँगद विराजमान थे । उदास मुखड़ा, शोकातुर, लेकिन शाँत जैसे सोई हुई कोई झील हो । उनके चेहरे पर एक आभा थी । उनके अँग अँग में से कोई नूर फूट रहा था, जैसे अभी अभी किसी अटारी में जोत जगाई गई हो ।

कुछ देर बाद गुरू अँगद देव जी ने "सत्त करतार" "सत्त करतार" की धुन एकसुर में उचारनी शुरू कर दी । धर्मशाला में जमा संगत भी उनके पीछे "सत्त करतार" "सत्त करतार" गाने लगी । और श्रद्धालुओं के आने के साथ यह धुन ऊँची होती गई थी । और भी मधुर होती गई थी । "सत्त करतार" की धुन एक संगीत-लहरी की तरह चारों तरफ़ फैलती जा रही थी । बीच-बीच में कोई आह सुनाई दे जाती, कभी कोई टीस फूटने लगती थी । कभी इससे भी ऊँचे स्वर में दिल को चीरती हुई कोई फ़रियाद आगे पीछे हर किसी को झकझोर देती थी ।

"सत्त करतार" की सुहानी रिमझिम रिमझिम वर्षा हो रही थी कि बाबा जी के परिवार के लोग गुरू बाबा के संस्कार की तैयारी करने लगे । यह देख कर उनके मुसलमान श्रद्धालु, जिनकी संख्या हर क्षण बढ़ती जा रही थी, कहने लगे, वे तो अपने पीर बाबा को दफ़नायेंगे । उनकी नज़र में गुरू बाबा मुसलमान थे । मुसलमान ही नहीं, वे तो हाजी थे । उनका पहरावा नीले वस्त्र का था ।

"यह कैसे हो सकता है ?" हिन्दू कहते ।

"वे हमारे मौला थे । बाबा मुसलमान दरवेश थे ।" मुसलमान श्रद्धालु बाबा नानक को दफ़नाने पर तुले हुए थे । उन्होंने तो रावी के किनारे एक रमणीक स्थान पर क़ब्र की खुदाई भी शुरू करवा दी थी । हिन्दू चंदन की लकड़ी इकट्ठी कर रहे थे । दाह संस्कार की सामग्री मँगवा रहे थे ।

और फिर आपस में तूँ तूँ मैं मैं शुरू हो गई । धर्मशाल के बाहर वाद-विवाद का स्वर ऊँचा होने लगा । मुसलमान कहते- बाबा नानक ने जनेऊ पहनने से इन्कार किया था, वे हिन्दू कैसे हुए ? हिन्दू कहते- बाबा नानक का जन्म हिन्दू घर में हुआ । उनके सारे रिश्तेदार हिन्दू हैं, अकेले वे मुसलमान कैसे हो गये ? फिर वे हज करने मक्का मदीना क्यों

गये ? मुसलमान बहस कर रहे थे । ऐसे तो वे हरिद्वार भी गये थे, काशी भी गये थे, जगन्नाथ पुरी भी गये थे– हिन्दू उन्हें याद दिलाते । गंगा में उन्होंने ओर हिन्दुओं की तरह अपने पूर्वजों को पानी नहीं चढ़ाया था । जगन्नाथपुरी में उन्होंने वहाँ के ब्राह्मणों के साथ आरती नहीं उतारी थी– मुसलमान क्रोध में आ रहे थे । अगर यह बात है तो बाबा ने सुलतानपुर के काज़ी के साथ नमाज़ भी तो नहीं पढ़ी थी । हिन्दू अपनी ज़िद पर क़ायम थे । वह और बात थी, वह और बात थी– मुसलमान सच्चे थे । बेशक वे हिन्दू थे, मुसलमान हरगिज़ नहीं थे, उनके हिन्दू श्रद्धालुओं की आवाज़ ऊँची हो रही थी । अगर वे मुसलमान न होते तो वे बाबर को हिन्दुस्तान का राज क्यों बख्शते ? मुसलमान गुस्से से तमतमा रहे थे । ऐसे तो वली कँधारी का अहंकार भी उन्होंने तोड़ा था । उसका सारा पानी छीन लिया था । हिन्दू मुसलमानों को निरूत्तर करने की कोशिश में थे । मुसलमान सूफ़ी उनके साथी थे, मुसलमान हिन्दुओं को याद करवा रहे थे । वे तो हिन्दू सिद्धों, जोगियों और तपस्वियों के साथ गोष्ठियाँ करने मानसरोवर तक गये थे । हिन्दू भी सच कह रहे थे ।

ना हिन्दू थे वे ना मुसलमान थे । किसी मध्यस्थ ने कहा । बाबा ने फरमाया था– 'ना कोई हिन्दू ना मुसलमान ।'

उनका साथी मरदाना मुसलमान था ।

सो तो भाई बाला भी उनके अंग संग रहता था ।

उन्हों में सब से पहले अल्ला का नूर एक मुसलमान, राइ बुलार ने देखा था ।

उससे कहीं पहले उनकी बहन बेबे नानकी उनमें ईश्वरीय चमत्कार को पहचान चुकी थी ।

बाबा नानक ने कभी संध्या की थी ? तिलक लगाया था ? कभी चोटी रखी थी ?

गुरू नानक ने सन्नत करवाई थी ? कभी बकरीद की कुर्बानी दी थी ? कभी रोज़े रखे थे ?

वे हमारे पीर थे ।

वे हमारे गुरू थे ।

हम उनके कफ़न दफ़न का इन्तज़ाम कर भी चुके हैं ।

हम उनका दाह संस्कार करेंगे :

गुरू नानक बाबा शाह फ़कीर ।

हिन्दू दा गुरू

मुसलमान दा पीर ।

धर्मशाला के बाहर जब हिन्दू और मुलसमान बहस कर रहे थे, धर्मशाला के भीतर आँगन में 'सत्त करतार' की ध्वनि ऊँची और ऊँची होती जा रही थी । सारी धर्मशाला बाबा जी के श्रद्धालुओं से खचाखचा भर गई थी। सब 'सत्त करतार' 'सत्त करतार' का उच्चारण कर रहे थे । फिर यह ध्वनि इतनी ऊँची हो गई कि धर्मशाला से बाहर हो रहा वादविवाद 'सत्त करतार' की ध्वनि में डूबने लगा ।

15

"तेजी। तुझे पता है... ?" अगले दिन सो कर उठी नसरीन तेजी से कुछ कहना चाह रही थी, कि वह अपने आप रुक गई। तेजी ने बात कुरेदने की कोशिश नहीं की। नसरीन की आदत थी, अक्सर कोई बात उसके मुँह तक आती थी, तो वह उसे वहीं रोक लेती थी।

"तेजी तुझे पता है... ?" कुछ देर बाद नसरीन ने फिर बात करनी चाही। फिर वह रुक गई। तेजी आँगन बुहार रही थी। उसने बात का पीछा नहीं किया। इस तरह नसरीन ने जो कहना था वह बीच में ही रह गया।

जब वे अकेली बैठी रसोई में नाश्ता कर रही थी, नसरीन ने फिर बात छेड़ी "तुझे पता है तेजीऐ... इससे पहले कि वह रुकती, तेजी ने उसे डाँटा," यह क्या तेरी बुरी आदत है 'तुझे पता है', 'तुझे पता है' कहती रहती है ? बात करके खत्म क्यों नहीं करती ?" तब नसरीन ने मन की घुंडी खोली। "तेजो, तुझे पता है, कल धर्मशाला में बैठी थी, मुझे गुरू अँगद जी में बाबा नानक जी दिखाई दे रहे थे। बिल्कुल वही छवि। वही नूर चेहरे को जगमगाता हुआ। आँखों में वही रहमत.... "

"उसी तरह 'सत्त करतार' का जाप करवा रहे थे जैसे बाबा जी करते थे।" तेजी सहमत थी।

"पहले अपने अंग से लगा कर बाबा जी ने उन्हें लहना से अँगद बनाया, अपने अंग का अंग, फिर उन्हें गुरूआई बक्शी।"

"तूने देखा था, गुरू अँगद जी के सामने थाली में नारियल और पाँच पैसे रखे थे।"

"अपने जायों को एक तरफ़ हटा कर किसी चेले को गुरुआई बक्शना कोई मामूली बात नहीं। कभी किसी ने ऐसा किया है ? मैं तो सोच सोच कर हैरान होती रहती हूँ।"

"बाबा जी के राह न्यारे !"

"मुझे तो लगता है कि उनका परिवार बाबा जी की इस बात से ख़ुश नहीं।"

"सिरी चन्द जी ने तो शादी ही नहीं की, यह सोच कर कि गुरुआई उन्हें मिलेगी।"

"बाबा नानक तो गृहस्थ की शिक्षा दिया करते थे। शादी करो। औलाद पैदा करो। कमाओ बाँट के खाओ। ज़रूरतमंदों की सेवा करो। यह रास्ता है अपने परलोक को सवारने का। यह रास्ता है कल्याण का। गुरू बाबे जैसा नहीं कोई फिर पैदा होगा।"

"वे गये कहां हैं ? वे तो ज्यों के त्यों गुरू अँगद देव जी में विराजमान हैं। बस पहले की तरह अब बूढ़े नहीं रहे। उनके बाल पहले की तरह चाँदी के रंग के नहीं रहे अरि बस।"

इस तरह जहाँ जहाँ लोग बैठते बाबा नानक की कहानियाँ चलती रहती। गुरू बाबा नानक की ज्योति जोत समाने की ख़बर सुनकर श्रद्धालु जन दूर-दूर से गुरू अँगद देव के दर्शनों के लिये करतारपुर आते। हर कोई अपने साथ सतगुरू नानक की यादें लेकर आता और अपने साथी सिक्खों को सुनाता। प्यारे बाबा नानक की प्यारी-प्यारी बातें करते हुए

लोग न थकते, न ऊबते।

आशकपुर से फिरँदा आया। उम्र ज़्यादा होने के कारण चलने फिरने से लाचार था। फिर भी उससे रहा नहीं गया। बाबा नानक से उसका कोई इलाही रिश्ता था। फिरँदे के पास वह रबाब थी, जिसे ख़रीदने के लिये बाबा नानक ने मरदाने को उसके गाँव भेजा था। मरदाना बेबे नानकी से सात रूपये लेकर गया। फिरँदा बैठा मरदाने से हुई अपनी मुलाकात की कहानी श्रद्धालुओं को सुना रहा था।

* फिरँदा : तेरा नाँऊ किआ है ? तूँ हुँदा कौन है ? तूँ भेजिआ किसु है ? अंत तेरा वतन कउन है ?

मरदाना : मेरा वतन राइ भोइ की तलवँडी है। नाऊँ मरदाना है। भेजिआ है नानक वेदी फ़कीर। हुकम रबाब लैण वास्ते।

फिरँदा : तुहानूँ नानक वेदी महीं थे घलिआ है। अते रबाब भी मैथे है। अते नानक वेदी मेरा चिरोकणा असनाउ है।

मरदाना : जी रबाब मैंनूँ देवो।

फिरँदा : सुण मरदाना, लै रबाबु।

मरर्दाना : जी मुल कहो।

फिरँदा : मरदानिआ तेरे पासि इस रबाब दा मुल नाहीं, अते इसदा मुल असां लैना भी नहीं।

मरदाना : ज़ी, ऐदा मुल तुसाँ किओं नहीं लैणा ?

फिरँदा : मरदाने, यह रबाब असानूँ क़ुदरत नाल हथ आइआ है। आवाज़ एस दी एही निकली जो फिरँदा एह रबाब होरस आगे वजावणा नाहीं। हिकु नानक वेदी पतरी होसी इह रबाब उसदे अगे वजावणी। तूँ उस अगे वजावे। मरदाने एस दा मुल असल असाँ लैणा नाहीं।

मरदाना : पर जे हुक्म होवे ता मैं हिक वारी वजाइ देखाँ।

फिरँदा : भाई होरसु अगे हुक्मु नाहीं।

मरदाना : जी मैंनूँ उस नानक भेजिआ है।

फिरँदा : भाई तूँ जाणु। नानक उसे भेजिआ है वजाइ। मरदाने रबाब, हथि लै कर थाहु बणाइ के जे तार बजाई ताँ आवाज़ विचों 'निरँकार' 'निरँकार' ही आवे।

× × × ×

सब से पहली धर्मशाला बाबा नानक ने सज्जन नाम के एक ठग के डेरे पर स्थापित की थी। सतगुरू ने सज्जन का उद्धार तो किया पर उसके नाम के साथ ठग शब्द अभी तक चला आता है। गुरू बाबे की ख़बर सुन कर उस धर्मशाला से भी कई श्रद्धालु आये। एक शाम संग़त में बैठे वे सज्जन ठग की कहानी अपने साथी श्रद्धालुओं को सुनाने लगे–

* भाई बाले वाली जन्म साखी

** विलायत वाली जन्म साखी

* उसका घर पैंडे विचि था । अते ठाकुर द्वारा ते मसीत कर छड्डी सी । जे कोई हिन्दू आवै ताँ ठउर देवे । अते जे मुसलमान जावै ताँ तवज्जह करे । अर जा रात पवे ताँ आखे चलु जी सवहु । अन्दर लै जावे, खुहे विचि पाइ कर मारे । अर जा सबाह होवे ताँ आसा तस्बी हाथि लै मुस्ल्ला पाइ बहै । जब बाबा ते मरदाना गये ताँ ख़िदमति बहुतु कीती उसु । अते आपणिआँ लोगाँ ताई आखिउस, "जे इस दे पल्लै बहुतु दुनिया है, पर गुरजु है । जिस दे मुहि विचि ऐसी भड़क है सो खाली नाहीं, फैलु कहि के फ़कीर होइआ है ।" जब राति पई तब आखिउस, 'उठहु जी सोवहु' । तब बाबे आखिआ-सज्जपे एक शब्द ख़दाइ दी बंद का आखि कर सोवहिंगे । तब शेख़ सज्जनि आखिआ : भला होवे जी, आखुहु जी, रात बहुतु गुज़रदी जाँदी है । तउ बाबे आखिआ, मरदानिआं, रबाबु बजाइ ताँ मरदाने रबाब वजाइआ रागु सूही कीते । गुरू नानक सबद उठायआ :-

उजलु कैहा चिलकणा घोटिम कालड़ी मसु ॥
धोतिआ जूठि ना उतरै जे सऊ धोवा तिसु ॥
सजण सेई नालि मैं चलादिआ नालि चलँनि ॥१॥
जित्थै लेखा मँगीअै तित्थै खड़े दिसँनि ॥रहाऊ ॥
कोठे मँडप माड़ीआ पासहु चितवीआहा ॥
ढठीआ कँमि न आवनी विच्वहु सखणीआहा ॥२॥
बगा बगे कपड़े तीरथ मंझि वसँनि ॥
घुटि घुटि जीआ रवावणो बगे न कहीअन ॥३॥
सिँमल रूखु सरीर मै मै जन देखि भुलँनि ॥
से फल कँमि न आवनी ते गुण मै तनि हनि ॥४॥
अँधले भार, उठाइआ डूगर वाट बहुतु ॥
अखी लोड़ी न लहा हउ चड़ि लंघा कितु ॥
चाकरीआँ चँगिआईआँ अवर सिआणप कितु ॥
नानक नामु समालि तूँ बध्धा छुटहि जितु ॥

(सूही महला १)

तब दर्शन का सदका बुधि होइ आई । जाँ वीचारे, ताँ सभ मेरे गुनाह सही होइ हैनि । तब आइ, उठि दरि पैरी पाइआ, पैर चँमि उसु । आखिउस : "जीउ मेरे गुनाह फदलु करि ।"

× × × ×

तेजी के घर वाले वैष्णव थे । माँस खाना तो दूर रहा, उनके घर में प्याज़ के छिलके तक को किसी ने हाथ नहीं लगाया था । ज़ालिम के साथ हुए हादसे के बाद बेशक वह कभी कभी माँस खा लेती थी । लेकिन माँस उसे रुचिकर नहीं लगता था । उस दिन लंगर में माँस बना था । नसरीन ने ख़ुद देग़ चढ़ाई थी । तेजी को यह अच्छा नहीं लगा था । बार बार कहती, "अभी मातम की चटाई भी नहीं उठाई गई और लँगर में माँस बन रहा है ।" आख़िर नसरीन से न रहा गया । "पहली बात तो यह है," वह कहने लगी, "बाबा जी

अल्ला को प्यारे हो गये हैं । उनके लिये मातमी चटाई बिछाने या उठाने का सवाल ही नहीं उठता । वे हमारे तुम्हारे जैसे थोड़े ही थे, जिनके लिये सोग मनाया जाता है । अल्ला के नबी अपनी मर्ज़ी से आते हैं और जब उनका जी चाहता है, वे चले जाते हैं । हमारे बाबा जी लेटे, उन्होंने चादर ऊपर ली, आँखें मूँदीं और चले गये । उनका माथा तक गर्म नहीं हुआ । उनके लिये मातम नहीं मनाया जा रहा । उनके मुरीद दूर से, पास से चले आ रहे हैं, तांकि वे उनकी कहानियाँ सुनायें, उनकी प्यारी प्यारी बातों को याद किया जा सके और फिर माँस खाने में हैरानी की कौन सी बात है । जैसा माँस वैसा साग.... "

जब तेजी नसरीन को इस तरह समझा रही थी, संगत में उनके पास कुरूक्षेत्र से आया कोई श्रद्धालु बैठा था । वह बीच में बोल उठा । लगा कुरूक्षेत्र में बाबा नानक जी की पंडितों के साथ हुई चर्चा की साखी * सुनाने :

"ताँ बाबा उथे आसन करके बैठ रहिआ । अते मरदाने नूँ किहा जे रबाब वजाइ । ताँ इतने चिर तक राजे की रानी ओर राजे का बेटा आये । अर इक मिरग शिकार दा उन्हाने आण धरिआ ताँ बाबे कहिआ इक कोरा मटका लै आओ । ताँ उह कोरा मटका लै आइआ । फिर कहया घीवु अर मिसाला लिआ के अर, मिरग नूँ कट के पाउ अर हेठ अग बालके रिन्नो । ताँ सभ ब्राहमणाँ ने देखिआ अर कहिआ कि सूरज ग्रहिण दे दिन तूँ जो माँस खाना हैं, तूँ केहा अतीत हैं । ताँ बाबे कहिआ, तुसीं सारे पंडित कुरूक्षेत्र दे इकट्ठे होवहु तद मैं तुहाडे नाल चर्चा करना । तब सभ पंडित कुरूक्षेत्र दे इकट्ठे होइ अते नानूँ चँद जो बड़ा पंडित सी भी विच आइ बैठा ..... । ताँ बाबे कहिआ कि चँहु वेदाँ मे महि राजिआ का धर्म है जो मृगहु कउ मारना, अर जो अहंकारी हन उन को हिंसा का पाप लगता है, अते जो गिआनी हन सो तो सरब में, आत्मा ही जाणते हैं । सो आत्मा का नास होता ही नहीं । अर जो देह है सो त्रैकाल नास रूपी ही है ताँ ते उसकी क्या चिंता है । ताँ बाबा बोलिआ :

पहिला मासहु निंमिआ मासै अंदरि वासु ॥
जीउ पाइ मासु मुहि मिलिआ हड चँमु तनु मासु ॥
मासहु बाहरि कड्डिया मम्मा मासु गिरासु ॥
मुहु मासै का जीभ मासै की मासै अँदरि सासु ॥
बडा होआ विआहिआ घर ले आइआ मासु ॥
मासहु ही मासु ऊपजै मासहु सभो साकु ॥
सतिगुरि मिलिऐ हुक्मु बुझीऐ ताँ को आवै रासि ॥
आपि छुटे नह हू छूटीऐ नानक बचनि बिणासु ॥१॥

(सलोक महला १ ,वार मलार की)

तेजी ने सुना तो उहदी आँखें खुल गई ।

16

आदिनाथ शिव के दो भक्त थे मत्यस्येन्द्र नाथ और जालंधरनाथ । मत्यस्येन्द्र नाथ

---

* भाई मनी सिंह वाली जन्म साखी

सबसे बड़ा चेला गोरखनाथ था। इस संप्रदाय के चेले कनफ़ाड़े जोगी हुआ करते थे। कहा जाता है, गोरखनाथ दसवीं सदी ईसवी में हुए थे। शंकराचार्य के बाद हिन्दू धर्म के प्रचार के लिये उनका योगदान महत्त्वपूर्ण बताया जाता है। उनका कार्यक्षेत्र अधिकतर उत्तर पश्चिम में जेहलम और पेशावर के आसपास था। यहीं गोरख हटड़ी और गोरख टिल्ला नामक कनफटे जोगियों के केन्द्र थे। गुरू नानक के काल में अल्मोड़ा, नैनीताल और तराई के इलाक़े में गोरखपंथियों का बड़ा ज़ोर था।

आज के शहर हल्द्वानी से कोई पाँच किलोमीटर दूर रीठा साहब नाम का एक तीर्थ है, जहाँ सिक्ख श्रद्धालु दूर दूर से यात्रा के लिये आते हैं। इस स्थान पर रीठे का एक पेड़ है जिस पर मीठे रीठे लगते हैं। कहते है कनफटे, गोरख-पंथियों के इस क्षेत्र में बाबा नानक के साथ विचरते हुए मरदाने को भूख लगी। उसे भूख बहुत लगती थी, और वह धरना देकर बैठ जाता था। बाबा नानक के लिये बड़ी मुश्किल बन जाती थी। लेकिन मरदाने की रबाब का साथ, बाबा जी उसके बग़ैर रह भी तो नहीं सकते थे। मरदाने की बेहद ख़ातिर होती।

जब मरदाने ने फिर अपनी भूख की याद दिलाई तो बाबे ने उसे कनफटे गोरखपंथियों के पास भेजा। लेकिन वे लोग किसी पराये धर्म के अनुयायी को भोजन करवाने के लिये तैयार नहीं थे। मरदाना जैसे गया था, वैसा ही भूखा लौट आया। यह सुन कर बाबा नानक, जिस पेड़ के नीचे बैठे थे उन्होंने मरदाने से उसी पेड़ पर चढ़कर अपना पेट भरने के लिये कहा। लेकिन वह तो रीठे का पेड़ था। रीठे के फल का छिलका ज़हर की तरह कड़वा होता है। मरदाना सतगुरू की रज़ा में राज़ी था, रीठे के पेड़ पर चढ़ गया और उसकी हैरानी की हद न रही- रीठे तो मीठे थे। मरदाने ने जीभर के मीठे रीठे खा लिये। इस पेड़ के रीठे अभी तक मीठे हैं। उस सारे इलाक़े में, सारी दुनियां में रीठे का फल कहीं भी मीठा नहीं होता, लेकिन रीठा साहब के तीर्थ स्थान के रीठे आज तक मीठे हैं। गुरू बाबे के श्रद्धालु मीठे रीठों का प्रसाद लेकर यहाँ से वापिस लौटते हैं।

बाबा नानक के ज्योति जोत समाने का सुन कर एक कनफटा जोगी नानक मत्ता के जोगियों की ओर से श्रद्धांजलि भेंट करने के लिये करतारपुर आया हुआ था। उसकी कहानी सुनकर कैसे मरदाने को भूख लगी, कैसे जोगियों ने उसे भोजन कराने से इन्कार किया, कैसे बाबा जी ने मरदाने को रीठे का फल खाकर पेट भरने के लिये कहा, और कैसे कड़वे रीठे मीठे हो गये। तेजी सर ठोंकने लगी। बार बार कहती, "गुरू बाबा तो करामात के ख़िलाफ़ थे। उन्होंने तो बार बार सूफ़ियों, फ़कीरों जोगियों और साधुओं के कहने पर भी कभी करामात नहीं दिखाई थी। वे तो आदमी को ईश्वर की सबसे बड़ी करामात समझते थे। उन्होंने हरगिज़ कुदरत के क़ानून में दख़ल नहीं दिया होगा। करामात नहीं दिखाई होगी।"

"जो तू कहती है, वह ठीक है," नसरीन उसे समझा रही थी, "मैं तेरे साथ बिल्कुल सहमत हूँ। लेकिन बाबा नानक जैसे वली के किसी पेड़ के नीचे जाकर बैठने से, उस पेड़ के नीचे कीर्तन करने से अगर पेड़ के फल मीठे हो जायें तो यह कोई अनोखी बात

तो नहीं ।''

तेजी ने नसरीन की बात सुन ली लेकिन उसकी तसल्ली अभी भी नहीं हुई थी । ''बाबा नानक तो इस तरह के जादू-टोनों के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने आये थे। उन्हें क्या ज़रूरत पड़ी थी, गोरखनाथ के अनुयायियों के सामने अपनी महानता मनवाने के लिये कोई अनहोनी करके दिखायें । थोड़ी देर बाद तेजी फिर भड़क उठी ।''

''बेशक तेरा कहना ठीक है, पर बाबे ने ऐसा करके किसी को नीचा नहीं दिखाया । उन्होंने तो बस शेरों, चीतों से भरे जंगल में अपने मुरीद की भूख मिटाई थी ।''

''मरदाने की भूख, जोगियों को समझाकर भी तो मिटाई जा सकती थी ।''

''गुरू बाबे ने बिल्कुल यही किया । उन्होंने कनफटे जोगियों को यक़ीन करवाया कि ईश्वर जिस प्राणी को धरती पर भेजता है उसकी परवरिश का भी प्रबंध करता है । जब जोगियों को रीठों के मीठे हो जाने की ख़बर मिली तो वे बाबा जी के पास भागे आये, और इस तरह बाबे ने उन्हें सच्चे रास्ते पर डाला । तभी तो जोगियों ने गोरखमत्ते का नाम नानकमत्ता रखा ।''

''यह भी तो हो सकता है कि रीठा पहले से ही मीठा हो ।'' तेजी की अभी भी तसल्ली नहीं हुई थी । ''कुदरत में हर तरह के करिश्मे होते हैं । वह कह रही थी ।

''अगर क़ुदरत कोई अनहोनी कर सकती है तो आदमी क्यों नहीं कर सकता ? गुरू नानक तो ग़ैर मामूली इन्सान थे, महात्मा थे, महापुरूष थे, अल्ला के भेजे नबी थे ।'' नसरीन लगातार बोलती जा रही थी, तेजी की आँखों में छल छल आँसू बहने लगे ।''

तेजी सोचती, नसरीन की तरह उसे विश्वास क्यों नहीं होता था । शायद उसमें आस्था की कमी थी । वह सारा दिन शर्मिंदगी और पश्चाताप के एहसास से अपने को छोटा महसूस करती रही । उस शाम लंगर की सेवा करते हुए उसने किसी को कहते हुए सुना, ''टके की मटकी लेते वक्तआदमी दस बार ठोक बजाकर देखता है । किसी पर विश्वास करने से पहले आदमी को तसल्ली कर लेनी चाहिये ।''

तेजी ने सुना तो वह खिल उठी । वह अकेली नहीं थी । और लोग भी थे जो उसी की तरह सोचते थे । और भी थे, जिन्हें गुरू में श्रद्धा थी, लेकिन विश्वास की नेमत से जो कृतार्थ नहीं हुए थे । और भी थे जो लैनडेरी बना कर उस दरवाज़े पर खड़े थे, प्रतीक्षा कर रहे थे ।

उस रात घर लौट कर तेजी ने लंगर में सुनी बात नसरीन को बताई । सुनकर नसरीन हँसने लगी । ''हाँ, एक बार किसी ने किसी को कोरी मटकी ला कर दी । यह देखने के लिये कि मटकी पक्की है या कच्ची, उसने मटकी को ज़मीन पर पटक दिया । मटकी टुकड़े टुकड़े हो गई ।''

''ज़मीन पर ना पटको, उँगली से ठोंक बजा कर तो देख लेना चाहिये,'' तेजी अपनी राय पर क़ायम थी ।

इतने में बाहर वर्षा होने लगी । देखते ही देखते बौछारें पड़ने लगीं । वर्षा में अगर आदमी छत तले हो तो भीगने से बच जाता है, नसरीन कह रही थी ।

"हाँ !" तेजी फिर सोच में डूब गई ।

"इसलिये पहले छत डलवानी पड़ती है ।"

"यह भी देखना पड़ता है कि छत पक्की है । जिन नीवों पर खड़ी है, वह गहरी हैं ।"

"यह ज़रूरी नहीं होता कि हर किसी को ख़ुद छत डलवानी पड़े । आमतौर पर लोग अपने बाप-दादा के बनवाये घरों में रहते हैं ।"

"बहुत पुरानी छतें चूने लगती हैं । उनके गिरने का डर बना रहता है ।"

"बेशक उन्हें गिराकर नये सिरे से बनाना होगा ।"

"पुरानी छतों को गिराना होगा ।"

"इसलिये तो समय समय पर अल्ला अपने नबी भेजता है । यही पैग़ाम लेकर बाबा नानक आये थे ।"

"वे तो गये; तेजी बाबा नानक की दीवानी थी । भावुक हो उठी थी ।"

"उनका जो काम पूरा नहीं हो पाया, उसे वे अब गुरू अँगद साहब के जामें में पूरा करेंगे ।"

इस तरह धीरे-धीरे बातें करते हुए नसरीन और तेजी की आँख लग गई ।

17

गुरू अँगद देव जी का आदेश था कि दोनों वक्त धर्मशाल में कीर्तन वैसे ही जारी रहे जैसे गुरू नानक देव जी के समय में होता था । गुरू अँगद खुद नियम से कीर्तन में शामिल होते थे । सुबह, शाम कीर्तन के बाद गुरू महाराज ख़ुद "धन्न निरंकार" "सत्त करतार" का जाप करवाते । आगे आगे गुरू साहब बोलते, पीछे साध-संगत गायन करती "एक इलाही" समाँ बँध जाता । सब की पलकें मूँद जातीं, वृत्ति एकाग्र हो जाती । चारों तरफ से "धन्न निरंकार","सत्त करतार" की ध्वनि गूँजने लगती । ऐसे लगता, जैसे घर दीवारें, वन, पक्षी, धरती, आकाश "धन्न निरंकार" "सत्त करतार" जप रहे हों । आसपास कणकण में से सरोदी धुन फूट रही होती । हर कोई फूल सा हल्का उजला उजला नहाया-धोया महसूस करता । हर किसी के चेहरे पर खुशी दिखाई देती, आँखों में एक उन्माद । कोई ऊँचा बोल न बोलता । न कोई वैर, न विरोध । हर कोई किसी के काम आकर खुश होता । हर काम में सेवा भाव । हर कोई मेहनत करता, मेहनत करके, बाँट कर खाने का इच्छुक प्रतीत होता ।

गुरू अँगद देव जी महाराज सुबह कीर्तन के बाद नियमपूर्वक बाहर से करतारपुर आये यात्रियों के बच्चों को गुरमुखी लिपि सिखाते । इनमें अक्सर बड़े भी शामिल हो जाते । पढ़ाई के बाद बच्चों के खेल होते । गुरू साहब को बच्चों से बड़ा स्नेह था । उनकी पढ़ाई-लिखाई, सेहत वग़ैरह की तरफ़ वे विशेष ध्यान देते थे ।

भाई बाला आने जाने वाले गुरसिक्खों से बाबा नानक की प्यारी प्यारी बातें सुनते, और उन्हें कलमबद्ध करते जाते । हर नये यात्री को ले कर बैठ जाते । कुछ स्थानों पर तो वे खुद बाबा जी के साथ गये थे, लेकिन ज़्यादातर भाई मरदाना ही गुरू नानक का साथ देते

थे। इन "उदासिओं" में भाई बाला की विशेष दिलचस्पी होती थी।

उस दिन तेजी की फ़रमाइश पर भाई बाला कामरूप में बाबा नानक की यात्रा के बारे में बता रहे थे। कामरूप की यात्रा के दौरान भाई बाला और मरदाना दोनों बाबा जी के साथ थे। कामरूप की साखी तेजी ने पहले भी सुन रखी थी, लेकिन वह इसे भाई बाले की ज़बानी सुनना चाहती थी।

"... मरदाने आखिआ, जी एहु शहरु ताँ अच्छा है। कुझ इथों मैं खाइ आवाँ। ताँब गुरू नानक आखिआ, मरदाना, इउ शहिर न वड़ि। मरदाने आखिआ, जिथे बस्दी आँवदी है, उथे आखदा है जाहि नाही। उजाड़ि विच लीता फिरना है। गुरू नानक आखिआ जाहि भाई। मरदाना जाइ बस्ती विच वड़िआ। अगे चार रत्रां खड़ीआँ आपनी बोली विच हसदीआँ आहीआँ। मरदाने जो डिठे ने, लगीआँ बँडीआँ पावणि। उह आखे मैं लैनी आँ उह आखे मैं लैनी आँ। हिकसि धागा गलि विचि पाइ गई। मरदाने नूँ छत्रा कर बहाइआ। हिकु पहरु गुज़र गइआ, मरदाना न आइआ..... ताँ नानक- आखिआ, चल भाई बाला लै आईए मरदाना छत्रा होइआ बैठा है।"

"पर.... " तेजी ने भाई बाले को टोकने की कोशिश की, लेकिन सहम गई। भाई बाला बोलते गये.... "

"अगै जो रत्रा ख़डीआँ आहीआँ सो हामल आईआँ .... गुरू नानक आखिआ भाई बाला जाइ, मरदाने दे गले धागा तोड़ि..... मरदाना आदमी हो गिआ।"

तेजी से यह साखी और सुनी नहीं जा रही थी। वह जल्दी से उठकर घर आ गई। नसरीन उसके मुँह की तरफ ताकती रही। तेजी को इस तरह भाई बाले का अनादर नहीं करना चाहिये था। उसने ख़ुद ही तो इस साखी की फ़र्माइश की थी। फिर नसरीन को ख़्याल आया, मरदाने को मेंढ़ा बनाया जाना और धागे को तोड़ कर उसका फिर इन्सान बन जाना, तेजी को परेशान कर रहा था। वह मन ही मन हँसने लगी। उसे तेजी पर तरस आने लगा।

घर पहुँच कर उसने देखा, तेजी औंधी खाट पर लेटी थी। चिन्ताओं में डूबी हुई। गहरी सोच में मगन। न खाने की सुध न पीने की होश। नसरीन के पूछने से पहले कि उसने यह क्या हाल बना रखा है, तेजी ख़ुद-बख़ुद बोल उठी-

"अगर गले में धागा डालने से कोई इन्सान से मेढ़ा बन जाता है, और धागा तोड़ने से फिर इन्सान बन सकता है तो बाबा नानक को क्या पड़ी थी कि अपने घर वालों से पैसे लेकर साधु संतों को भोजन कराते और गाँव लौट कर अपने पिता कालू से मार खाते ? क्या पड़ी थी बाबा जी को सुलतानपुर जाकर नवाब की नौकरी करते, मोदीखाने की रसद तोल तोल कर हिसाब-किताब रखते, लोगों की बदनामी झेलते कि उन्होंने मोदीख़ाना ग़रीब-गुर्बों में ज़रूरत मँदों में लुटा दिया था ?"

"गुरू नानक अवतार थे, वे नबी थे, अल्लाह के। वे इन बातों को बेहतर समझते थे।" नसरीन ने एक अक़ीदतमन्द के लहज़े में गंभीरता से कहा।

"मैं अपनी आँखों से देखा करती थी, बाबा जी खेतों में हमारे साथ मिल कर खेती

करते थे । मुझे उन पर इतना लाड आता था । हल वाहे साथियों के साथ हल चलाते, खेतिहरों के साथ मिलकर बीज डालते । एक बार हम लोगों ने एक साथ मिलकर गोड़ाई की थी । बाबा जी को यह सब करने की क्या ज़रूरत थी ? आँखें मूँद कर कहते, करतारपुर बस जाये । खेतों में फ़सल पक जाये । गुरू के सिक्खों को दोनों वक्त चोखा खाने को मिल जाया करे । गुरू बाबा तो एक बार बाजरे के गीले डँठलों का बड़ा गट्ठर बना कर सर पर उठाने वाले थे कि सामने से भाई लहना जी आ गये । उसी वक्त वे अपने गाँव से लौटे थे। घर से यह सुनकर कि बाबा जी खेतों में थे, दर्शनों के लिये भागे आये । उन्हें देखकर सतगुरू ने गट्ठर उनके सर पर लाद दिया, कीचड़ में गीले बाजरे का गट्ठर उठाये, जिसमें से पानी चू रहा था, भाई लहना जी घर की ओर चल पड़े । उनके कोरे रेशमी कपड़े पानी से लथपथ हो रहे थे... ''

''घर पहुँचे तो उन्हें देखकर माता जी बाबा जी से ख़फ़ा हुई थी,'' नसरीन ने तेजी को टोक कर कहा, इस पर बाबा नानक कहने लगे, यह कीचड़ नहीं, केसर है !''

''मैं पूछती हूँ, जिस महापुरूष को गुरुगद्दी बख़्शी जाने वाली थी, उससे गीले डंठलों का गट्ठर उठवाने की बजाय करामात से गट्ठर घर क्यों नहीं पहुँचाया जा सकता था ?''

''तेजीये ! मैं तो सोचती थी कि कल रात इस बात का फ़ैसला हो चुका था,'' नसरीन हँस रही थी ।

''अभी तो उनका ढेर सारा काम बाक़ी था, बाबा जी जोती जोत समा गये ।''

''कुदरत के क़ानून में कैसे कोई दख़ल दे सकता है ?''

''यही तो मैं कहती हूँ । जब वक्त आया तो बाबा जी ने आँखें मूँद लीं ।''

''लेकिन उनकी तपस्या ज्यों की त्यों जारी है । बाबा जी ने कुदरत के क़ानून में दख़ल नहीं दिया । यह नहीं कहा कि मुझे अभी ढेर सारा और काम करना है । ढेर सारे और लोगों को रास्ते पर डालना है । इसलिये यह चोला छोड़ने के लिये मैं तैयार नहीं । जब वक्त आया, बाबा नानक ने वह चोला छोड़ दिया, लेकिन अपनी जोत को गुरू अँगद देव जी में मुताकिल कर दिया । जो काम शुरू हुआ था, उसे गुरू अँगद देव जी के रूप में गुरू बाबा पूरा कर रहे है ।''

तेजी सर पटकने लगी, मेरी समझ में कुछ नहीं आता, मुझे तो लगता है, मैं पागल हो जाऊँगी । कभी कभी मैं सोचती हूं, मुझे सब कुछ उठा कर यहाँ नहीं आना चाहिये । ज़ालिम की इन्तज़ार कर लेती जो मेरे बेटे का बाप है । नहीं तो कोई और घर देख लेती ।

''तेजीये, तेजीये ! अभी भी वक्त बीत नहीं गया । तेरा कुछ बिगड़ा नहीं । कमबख़्त किसी को ढूंढ ले । तुझे ज़रूर कोई मिल जायेगा । क्यों अपने साथ ज़ुल्म करती हो ?''

''लेकिन मैंने गुरू नानक का पल्ला पकड़ा है । मैं इसे कभी नहीं छोड़ सकती । तुझे पता है, जिस दिन बाबा जी जोती जोत समाये थे, मेरे मन ने चाहा कि मैं भी आँखें मूंद लूं और मेरी पलकें कभी न खुलें । जिधर बाबा जी गये हैं, उनके पीछे मैं भी चली जाऊं, एक परछाईं की तरह ।''

"तेजीये, यह तो ठीक है, लेकिन अगर दिल के किसी कोने में तुझे मर्द जात की कमी महसूस हो रही है तो बेशक तू अपनी मन मर्ज़ी कर ले। आख़िर बाबा जी ने भी तो शादी की थी। गृहस्थ आश्रम को स्वीकारा था।" यह नहीं दो बेटों के वे पिता थे। क्या प्यार किये बगै़र, ओंठों पर ओंठ रखे बग़ैर कभी कोई बच्चा जन्मा है ?

नसरीन ने सुना और उसका चेहरा लाल सुर्ख हो गया।

उस दिन रात को नसरीन ने सपने में देखा, तेजी चुपचाप कहीं निकल गई है। अपने बेटे को भी कहीं पीछे छोड़ गई है।

जब उसकी आँख खुली तो वह पसीने से तर हो चुकी थी। तेजी सामने अपनी चारपाई पर आँखे खोले बिटबिट आकाश की ओर ताक रही थी। जैसे तारे गिन रही हो।

18

तेजी का बेटा अमन और नसरीन का बेटा शैली ज्यों-ज्यों बड़े हो रहे थे, उनमें अक्सर तू-तू, मैं-मैं हो जाती थी। आये दिन उनके मुंह फूले रहते थे। बर्तन आपस में टकरा ही जाते हैं। फिर दोनों लड़के हम उम्र थे, दोनों बड़े लाडले थे। तेजी और नसरीन लड़कों की आपसी खटपट की तरफ़ कोई ध्यान नहीं देती थीं। बल्कि अच्छा था, घर में रौनक बनी रहती थी। कभी वे लड़-झगड़ रहे होते, कभी उन को डाँटा डपटा जाता, कभी मनाया जाता।

कदकाठ में एक जैसे, शक्ल-सूरत में, एक जैसे, हम उम्र-अकसर लोगों को भ्रम हो जाता। अमन को शैली कहकर बुलाते, शैली को अमन कहकर पुकारते। कई लोग उन्हें जुड़वाँ बच्चे समझते। जुड़वाँ तो वे थे ही। एक मायने में तेजी और नसरीन दो शरीर और एक प्राण थीं। एक दूसरे के बग़ैर उनके गले में कौर नहीं उतरता था।

उस दिन तेजी और नसरीन बैठी हँस रही थी। खेल ही खेल में अमन और शैली में लड़ाई हुई थी। अमन ने शैली को "मुसला" कहा था और शैली अमन को हमेशा दासख़ोर कहकर परेशान करता था। अमन शाकाहारी था। उसे लाख समझाया जाता, लेकिन माँस-मछली खाना उसके बस की बात नहीं थी। और शैली की आदत थी, वह अमन को टिक्के और कबाब दिखा दिखाकर खाता था। हमेशा उसे चिढ़ाता रहता। उधर अमन जब भी कोई शिवालय या पूजा स्थान देखता, चुपके से पैर की जूती उतार कर भीतर चला जाता, माथा टेकता, शैली को यह सब करना अच्छा नहीं लगता था। उसने कभी मंदिर शिवालय में पैर नहीं रखा था।

हाँ, धर्मशाला वे दोनों वक्त जाते थे। कीर्तन सुनते, जाप करते, जो भी सेवा उन्हें सौंपी जाती, ख़ुशी-ख़ुशी उसमें जुट जाते। जहाँ तक मुमकिन होता, एक दूसरे का हाथ बाँटते।

ऐसा ही तो कई और लोग भी करते थे। गुरू नानक, गुरू अँगद के प्रति अपार श्रद्धा; सुबह शाम नितनेम से धराल में इकट्ठे होते, लेकिन साथ ही साथ अपने बाप-दादा के धर्म-कर्म का भी पालन करते रहते। कोई शिवालय देखकर हिन्दू उसमें जा घुसते, ज़रूरत पड़ने

पर मुसलमान नमाज़ पढ़ लेते, रोज़े रख लेते । और तो और अच्छे जोगी अपने आप को नानकपंथी कहते, लेकिन अपना भगवा भेस, योग साधना को ज्यों का त्यों बनाये रखते । यही हाल मुसलमान फ़कीरों का था । बाबा नानक की बड़ाई करते थे । गुरू नानक को अपना पीर मानते थे, लेकिन साथ साथ, जुहद और चिल्ले में भी उनकी आस्था क़ायम थी ।

बाबा नानक ने कभी इन बातों की तरफ़ ज़्यादा ध्यान नहीं दिया था । ज़रूरत पड़ने पर वे हमेशा हिन्दुओं को अच्छा हिन्दू और मुसलमानों को अच्छा मुसलमान बनने की शिक्षा देते थे । उनकी नज़र में अच्छा वही था जो अच्छा इन्सान था । हिन्दू सिर्फ़ हिन्दू होने की वजह से अच्छा नहीं है । मुसलमान सिर्फ़ मुसलमान होने की वजह से अच्छा नहीं है ।

तेजी और नसरीन देखती, धर्मशाला में सुबह शाम हिन्दू और मुसलमान भरे रहते थे । कभी सौ पचास हिन्दू ज़्यादा होते, कभी दस बीस मुसलमान ज़्यादा दिखाई देते । कई यात्रियों को देखकर पता ही नहीं चलता था कि वे हिन्दू हैं या मुसलमान । किसी के चेहरे पर थोड़े ही लिखा होता है कि वह हिन्दू है या मुसलमान है ।

न जाने उन्हें क्या हो गया था, अमन और शैली आजकल सोते-जागते हिन्दू मुसलमान बन बन बैठते थे । अमन को हर वक्त इस बात का एहसास रहता कि वह हिन्दू था, ऊँची जात का ब्राह्मण और शैली उसे बताता, वे लोग सैय्यद मुसलमान हैं । जिनका हर कोई पानी भरता था । तेजी और नसरीन सुन सुन कर आश्चर्य करतीं । कौन उन्हें नई नई बातें सिखाता रहता था ? शैली कहता, बाबा नानक मुसलमानों के पीर थे । अमन कहता, वे हिन्दुओं के गुरू थे । शैली कहता, बाबा नानक को मुसलमान मुरीदों ने दफ़नाया था । अमन कहता गुरू नानक का दाह-संस्कार किया गया था । इस तरह गुस्से में वे झगड़ते झपटते रहते । जब वे बहस कर रहे होते तो तेजी अमन से पूछती, तूने बाबा जी का संस्कार होते देखा था ? वह ख़मोश हो जाता । नसरीन अपने बेटे शैली से सवाल करती, तू बाबा जी के जनाज़े में शामिल हुआ था । वह अपनी माँ के मुंह की ओर देखने लगता ।

फिर वे इस तरह सुनी सुनाई बात को पकड़ कर क्यों लड़ने लगते थे ? यह भी कोई बात थी ?

उस दिन तेजी घर में अकेली थी । नसरीन खेतों में काम करने गई थी । किसी काम से अमन घर आया था । माँ को अकेला देख कर उससे जैसे राज़ की बात पूछने लगा । "बीबी क्या सचमुच बाबा जी का दाह संस्कार नहीं हुआ था, उन्हें दफ़नाया गया था ?"

तेजी अपने जाये के चेहरे का क्लेश देखकर फ़िक्रमन्द हो गई । तेजी ने उसे छाती से लगाया । फिर पास बिठा कर बहुत देर तक उसे लाड करती रही और उसके बालों में उँगलियाँ फेरती रही । इस बीच उसने सोच लिया था कि वह अमन को क्या जवाब देगी ।

"बीबी जी, बताओ ना, बाबा जी को उनके पूरे हो जाने के बाद चिता पर रखा गया था या ज़मीन में दबाया गया था ?"

"बेटो इसमें क्या फ़र्क पड़ता है ? गुरू नानक ईश्वर के भेजे हुए अवतार थे । वे

हमारा कल्याण करने के लिये इस दुनियां में भेजे गये थे । हमें रास्ते पर डालने के लिये । और फिर जब उनकी यात्रा पूरी हुई उन्हें बुलावा आया, तो उन्होंने आँखें मूँद ली और वे चले गये । बाबा नानक जी जैसे महापुरूष कभी मरते थोड़े ही हैं । उन्होंने भाई लहना जी को अपने अंग में लगाया और वे अँगद बन गये । बाबा जी की जोत अब गुरू अँगद में जगामगा रही है । मुझे तो हर बार बाबा जी का झलकारा पढ़ता है जब मैं उतावली नज़र से गुरू अँगद जी के दर्शन करती हूँ । बाबा नानक जैसे धर्मात्मा कभी मरा नहीं करते । उन्हें ईश्वर भेजता है और वक्त आने पर वे ईश्वर के घर चले जाते हैं ।"

तेजी ऐसी श्रद्धा से बोल रही थी, उसके बोलो में कुछ ऐसा जादू था कि गर्मी की सांझ के वक्त माँ के कंधे का सहारा लेकर उसके पास बैठे अमन की आँख लग गई ।

उस रात सोने से पहले जब तेजी और नसरीन इकट्ठी हुईं तो तेजी ने नसरीन को अमन के संदेह के बारे में बताया । नसरीन सुन कर हँस पड़ी । कहने लगी, शैली भी एक दिन एकान्त में यही कुछ पूछ रहा था । आँखों में लाख सवाल लिये । मैंने उसे कहा, पगले, बाबा नानक वली अल्ला थे । वे न पैदा होते हैं, न मरते हैं । यह तो हम दुनियाँदार लोग हैं, जिन्हें हिन्दू मुसलमान के जलाने-दफ़नाने के मसले परेशान करते रहते हैं । बाबा नानक जब अल्लाह को प्यारे हुए, हिन्दू कहने लगे, हम इनका दाह संस्कार करेंगे, मुसलमान कहने लगे, हम इन्हें दफ़नायेंगे । बहुत देर तक बहस होती रही । बीच में रात पड़ गई । अगले दिन जब उन्होंने चादर उठा कर देखा तो नीचे फूलों का ढेर था । बाबा नानक कहीं नहीं थे । आधे फूल हिन्दुओं ने बाँट लिये, आधे फूल मुसलमानों के हिस्से आ गये । हिन्दुओं ने अपने फूलों का दाह संस्कार किया और मुसलमानों ने अपने हिस्से के फूलों को दफ़नाया । कुछ दिनों बाद रावी में ऐसी बाढ़ आई कि बाबा जी की समाधि और उनकी कब्र दोनों को अपने साथ बहाकर ले गई ।

19

गगन मैं थालु रवि चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती ॥
धूपु मलआनलो पवनु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती ॥
कैसी आरती होइ ॥ भव खँडना तेरी आरती ।*

धर्मशाला में सुबह शाम आरती का गायन होता था । होते होते यह गायन हू-ब-हू हिन्दू मंदिरों- शिवालयों में गाई जाने वाली आरती की ध्वनि में पेश किया जाने लगा । दूर से सुनने पर तो पता ही नहीं लगता था कि कौन-सी आरती गाई जा रही थी ।

कुछ दिनों बाद हिन्दू श्रद्धालुओं ने अपने साथ फूल लाने शुरू कर दिये । आरती के साथ-साथ फूलों की वर्षा करने लग पड़ते । गुरू नानक देव जी के समय भी ऐसा किया जाने लगा था, लेकिन उन्होंने सख़्ती से इस हरकत को बंद किया । अब फिर हिन्दू श्रद्धालुओं ने यही सब शुरू कर दिया था । आदत से मजबूर । गुरू अँगद देव जी ने फिर इसकी मनाही की ।

---

* रागु धनासरी महला २

"दो चार दिन गुरू जी का कहा मान लेंगे, फिर शुरू कर देंगे । हिन्दू मुरीद बाज़ आने वाले नहीं ।" नसरीन कह रही थी ।

नसरीन का कहना ठीक था । लेकिन हिन्दू श्रद्धालुओं की मजबूरी यह थी कि बाबा नानक जी की आरती उसी धुन में लिखी गई थी, जिस धुन में जगन्नाथपुरी के महान मंदिर में इसका गायन होता था । और तो और बाबा जी की आरती में उड़िया भाषा के शब्द भी शामिल किये हुए थे । इसकी पुष्टि पुरी से आये श्रद्धालु ने की–

*"तब मरदाने नूँ बाहर बिठाइ कर बाबा जी जगन्नाथ के द्वार पर जाइ बैठे । ताँ पांडे जगन्नाथ की आरती लगे करन अते बाबा जी समाध लाइके बैठे रहे । तब सभ पांडे आरती करके बाबा जी पास आइ बैठे । अर उन्हाँ कहिआ, तुसीं जात्री आये हो । अर असां महाराज दी आरती कीती है अर तुसीं कयों नहीं कीती ? ताँ बाबे ने कहिआ, एक ईश्वर की आरती है अर एक जीव की आरती है । सो हमेशा हम सुनते हैं अर देखते हैं सो अउर हम कैसी आरती करें । ताँ पाँडिआँ किहा कि तुसी कोन सी आरती सुनी है ? ताँ बाबे शब्द आखिआ–'

गगन मैं थालु रवि चँदु दीपक बने तारिका मँडल जनक मोती ॥

(धनासरी राग महला १)

"ताँ इह बचन सुनकर पाँडे चरणाँ पर डिग पड़े । अते फिर रात को जगन्नाथ सुपणे में आइया अर तिनो पाँडिओं को कहा कि मैं ही नानक का रूप धारिआ है । जगत दे उद्धार करन वासते । सो तुसीं प्रिथमें जिस अस्थान पर बाबा जी बैठे हन तिस जगह दीवा अर पूजा करनी.... ।"

नसरीन को पुरी से आये पांडे ने बताया कि गुरू नानक द्वारा उच्चारण की गई आरती का गायन उन दिनों जगन्नाथ जी के मंदिर में भी होता था । थालियों में चंदन, काफ़ूर और बहुत सी सामग्री जला कर आरती की जाती थी । जगन्नाथ जी की पूजा भी की जाती थी और जहाँ तक श्रद्धालुओं को मालूम था, बाबा नानक के आदेश का भी पालन किया जाता था ।

नसरीन को तो इस बात की समझ आ सकती थी, लेकिन शैली और अमन परेशान हो जाते । अब वे बच्चे थोड़े ही थे, जवान लड़के थे । एक दूसरे की हर छोटी बड़ी हरकत बक्खड़ के कांटों की तरह उनके भीतर तक चुभ जाती और वे कितनी कितनी देर तक बहस करते रहते ।

और फिर तेजी और नसरीन को पता चला कि करतारपुर में कई ऐसे लोग थे जो उन्हें उकसाते रहते थे ।

जगन्नाथ पुरी से आये पांडे की ज़बानी बाबा जी की आरती का पुरी में प्रचलन होने की बात सुनकर अमन अपने को विजेता महसूस करता । वह सोचता, बाबा हिन्दू घर में जन्मे हिन्दू थे, लोग चाहे कुछ भी कहें । जो हिन्दू पैदा होता है, वह हमेशा हिन्दू रहता

---

* भाई मान सिंह वाली जन्म साखी

है ।

यह सुनकर नसरीन उसे समझाती– आख़िर हम लोग भी तो कभी हिन्दू थे । हम भी इसी धरती में पैदा हुए हैं और पले हैं । यह और बात है कि हमने इस्लाम क़बूल कर लिया । हम कोई मक्का-मदीने से नहीं आये । तुम लोगों में से ही हम पैदा हुए हैं । यहाँ की हवा में सांस ली है । यहाँ का पानी पिया है । हमारा यह देश है । हम बेशक मुसलमान हैं, लेकिन बाबा नानक के मुरीद हैं । हमने बाबे का दामन पकड़ा है । वही हमें पार लगायेगा । यह हमारा यक़ीन है ।

अमन की समझ में यह बात नहीं आती थी । वह कहता, बाबा नानक हिन्दू थे । उनका होने के लिये हिन्दू होना ज़रूरी है ।

शैली कहता, बाबा नानक ने हम लोगों की तरह इस्लाम मज़हब क़बूल कर लिया था । उनका होने के लिये मुसलमान होना ज़रूरी है । हिन्दू धर्म में लाखों देवी-देवताओं की पूजा की जाती है। गुरू नानक ने रब्ब के एकत्व को स्वीकार किया । इस्लाम में यही तो प्रचार किया गया है । तभी तो वली कंधारी जैसे फ़कीर बाबा जी के चेले बने, उन्होंने गुरू नानक का हुक्म माना ।

बेशक मांएँ उन्हें समझाती रहती थीं, शैली और अमन के बीच की खाई दिन ब दिन बढ़ती जा रही थी । प्रतिदिन वे एक-दूसरे से दूर होते जा रहे थे ।

यह देखकर नसरीन अपने घर का मुक़द्दमा हर आये-गये के सामने रखती । जो भी सुनता गहरी सोच में डूब जाता । लोग ऐसा महसूस करते जैसे बाबा नानक कोई एक टांका लगाये बग़ैर ही चले गये थे । लोग अब उनकी जोत गुरू अँगद देव जी के मुंह की ओर देखने लगते ।

जो भी गुरू अँगद देव जी के चरणों में जाता, वे उसे गुरमुखी सीखने के लिये कहते । गुरमुखी सीख कर गुरबाणी का पाठ करने की हिदायत देते । यह नई बात गुरूघर के श्रद्धालुओं को एकता के सूत्र में बाँध रही थी । न फ़ारसी, न अरबी, न संस्कृत पाली, गुरू बाबा आम लोगों की भाषा में उपदेश देते, आम लोगों में उन्होंने सरल लिपि का प्रचार करना शुरू कर दिया ।

शैली और अमन हर छोटी बड़ी बात पर उलझ जाते, उनमें तकरार हो जाती लेकिन गुरमुखी लिपि और गुरबानी की साँझ उन्हें एक दूसरे से जोड़े हुए थी । पिछले कुछ दिनों से यह और भी प्रबल हो उठी थी । शैली पोथी में से कोई शब्द न समझ पाता तो अमन उसकी मदद कर देता । अमन को इस तरह की कोई कठिनाई होती तो शैली हाज़िर रहता । गुरू नानक की बानी में कहीं सँस्कृत होती थी, कहीं फ़ारसी ।

फिर भी इस बात का एहसास कि वे अलग हैं, एक पहाड़ की तरह उनके बीच खड़ा था ।

तेजी उन्हें समझाती– हम सिक्ख हैं । नसरीन कहती– हम बाबा नानक के मुरीद हैं ।

यह बात तो वे मानते थे, फिर भी उन्हें लगता कि वे अलग हैं । अजीब उलझन थी;

अमन को लगता वह हिन्दू है और शैली हिन्दू नहीं है । शैली सोचता, वह मुसलमान है और मुसलमान और हिन्दू में कोई सांझ नहीं है ।

ऐसे ही एक दिन वे बहस कर रहे थे । बात ख़त्म होने में ही नहीं आ रही थी । सुनते सुनते तेजी और नसरीन के भी कान पकने लगे थे । शैली हिन्दुओं की कमज़ोरियाँ गिनवा रहा था और अमन मुसलमानों के उन अत्याचारों का ज़िक्र कर रहा था, जो वे हिन्दू प्रजा पर ढाते आ रहे थे । नसरीन से न रहा गया और उसने शैली और अमन को अपने पास बैठा कर कहा– "तुम लोगों ने कभी शीशे में अपनी सूरत देखी है ?"

"क्यों ?" शैली बोला ।

"तुम दोनों एक जैसे नहीं लगते ?" एक जैसी सूरत, एक जैसे क़द ।

"तो फिर क्या हुआ ?"

"क्या पता तुम्हारा बाप भी एक हो ।" इस बार तेजी बोली तो लगा जैसे कोई बम फटा हो । दोनों लड़के हक्के-बक्के हो गये और एक दूसरे का मुंह ताकने लगे ।

यह कहकर नसरीन और तेजी झर-झर आँसू बहाने लगीं । ख़ून के आँसू, जैसे कलेजा निकाल कर बाहर रख रहीं हों । ऐसा लगता जैसे दीवारें और छतें उनके साथ रो रही थीं ।

अल्लाह एक है ।

ईश्वर एक है ।

"क्या पता तुम्हारा बाप भी एक हो" तेजी के ये बोल चारों तरफ़ गूँज रहे थे ।

20

बाबा नानक से बिछुड़े संगतों को चालीस दिन हो गये थे । परंपरागत शोक का वह आख़िरी दिन था। पिछली रात से गुरू बाबे के श्रद्धालु नज़दीक और दूर-दूर के स्थानों से गोल बाँध कर आ रहे थे । संगतों के रहने का प्रबंध धर्मशाला में भी था और करतारपुर वासी अपने घरों में भी यात्रियों को ठहरा रहे थे । तेजी धर्मशाला में बैठी थी कि किसी ने उसे लाहौर के एक धनाढ्य दुनीचंद, की पत्नी से मिलाया । दूधिया सफ़ेद बाल, पक्की उम्र, लेकिन चेहरे पर एक नूर बरस रहा था । ऊँची लम्बी, कोमलाँगी । बात करती तो जैसे उसके ओंठों से फूल झरते । हर श्वास के साथ 'धन्न निरंकार' जप रही थी । एक नज़र में ही तेजी ने महसूस किया कि उसे तो लौ लगी हुई है । इसमें रत्ती भर शक नहीं था । जिस औरत ने तेजी को दुनीचन्द की पत्नी से मिलाया था, उसने बताया था कि दुनीचंद को करोड़िया कहा जाता था । उसके घर के बाहर सात ध्वजाये बंधी हुई थीं । जब बाबा नानक वहां आये तो उन्होंने पूछा–

"इह धजा किस कीआँ हैनि ? तब दुनीचन्द आखिआ : जी इह मेरी हैनि" तदुहु बाबे इक सूई दिती, आखिउस , "जो असाडी अमानत राख, असीं आगै मँगि लेहेंगे ।" तब दुनीचन्द सूई त्रीमति पास लै गइआ । आखिउस 'इह सूई रख, गुरू दिती है, अते आखिआ हैस, जो अगै मँगि लैहिगै ।' तदहु त्रीमत आखिआ: "ए परमेश्र के ! इह सूई तेरे साथ चलैगी आगै ?" ताँ दुनीचन्द आखिआ, "किआ करीऐ ?" ताँ त्रीमत आखिआ, "जाह

दे आओ ।'' तो दुनीचन्द सूई फेरि लै आइआ बाबे पासि । आइ आखिउसु : '' इह सूई मेरे पासि आगै चलणै की नाही, फेर लेवहु ।'' तब गुरू बाबे आखिआ : इह धजा किऊँ कर पहुँचा वहिँगा, जो सूई नहीं पहुँचाइ सकदा ? तब दुनीचन्द उठ आइ मथ्था टेकिआ, आखिउसु: जी उहु बात करि जितु अगै पहुँचै । तदहु गुरू आखिआ : ''परमेस्र के नाम तूँ देहि । अतीताँ, अभिआगताँ के मुहि पाइआ, इऊँ साथ पहुँचैगी ।'' तब दुनीचन्द सत लख कीआँ धजा लुटाइ दूर कीतीउसु । हुकमु मँनिआ ।''

दुनीचंद की पत्नी कहती, जो सुख उसे और उसके पति को सात लाख रुपया ग़रीब गुर्बों में बाँट कर प्राप्त हुआ, वह सुख उन्हें जिन्दग़ी भर नहीं मिला था । सतगुरू ने हमें निहाल कर दिया । तेजी को दुनीचंद की पत्नी बहुत अच्छी लगी और वह उसका सामान उठवा कर अपने घर ले आई ।

घर आकर देखा तो नसरीन भाई मूले की विधवा को साथ लिये बैठी थी । एक नूर, एक सकून चेहरे पर । हर श्वास के साथ सिमरन करते हुए ओंठ हिल रहे, विधवा थी तो क्या, माथे पर एक आभा, आँखों में एक लौ, उजला उजला पहरावा, एक ख़ुशबू ख़ुशबू जैसे फैला रही हो । सारा आँगन झमझम कर रहा था ।

तेजी देख देख कर हैरान होती, दुनीचंद की पत्नी लाहौर की थी और भाई मूले की पत्नी स्यालकोट से आई थी, लेकिन उनकी शक्लसूरत जैसे एक सी थी । उनके मुखड़ों की तरफ़ देखकर कलेजा ठंडा होता था ।

''इस लिये कि हम दोनों का बाबा नानक ने कृतार्थ किया है ।,'' दुनीचन्द की पत्नी ने तेजी के आगे राज़ खोला । क्षणभर की मुलाकात मे, वे घी खिचड़ी की तरह आपस में घुलमिल गई । उन्होंने एक दूसरे के बारे में सुन रखा था, चाहे मिलीं पहली बार थीं । दुनीचन्द की पत्नी व्यथा सुनाने लगी, ''बाबा जी, मरदाना और बाला तीनों स्यालकोट गये थे । शहर के बाहर एक बेर के पेड़ के नीचे जा बैठे ।''

*''ताँ गुरू नानक जी मरदाने नूँ इक टका दित्ता अते कहिआ मरदानिआ, इक पैसे दा झूठ खरीद लिआउ अते इक पैसे दा सच लिआउ । ताँ मरदाना टका लै कर सारे बज़ार नूँ टोलदा टोलदा मूले दी हट्टी आइआ । अते मूला धर्मशाला रोज़ इक वेले जाँदा सी अर शबद सुणदा सी सो उसने टका लै के आपने पास रखिआ अते कागद पर लिख दिता, जो मरण सच है, जीवन झूठ है । सो जद बाबे ने कागद डिट्ठा ताँ बाबे ने आखिआ, हे मरदानिआ जिसने मरण सच जाता है अर जीवन झूठ जाता है, चल तिसदा दर्शन करीऐ । तब बाबा जी ते मरदाना अर भाइ बाला भी तृए मूले दी हट्टी आइ बैठे । अर बाबे पुछिआ, मूलिआ तुध मरन सच्च जाता है ? ताँ उह कहय, जी मैं सुनिआ होइआ है । पर तुसाडी कृपा करके सच्च भी जाणाँगा । ताँ बचन होइआ, तैनूँ दृढ़ाईऐगा ताँ उस आखिआ, भला जी । ते फिर मूला भी हट्टी लुटाइ कर बाबे नाल तिआर होइआ..... ''

तो सब घर-बार लुटा के बाबा जी के पीछे चल पड़े । तेजी नसरीन से कहने लगी ।

---

* भाई मनी सिंह वाली जन्म साखी

"और एक हम हैं.... " नसरीन कुछ कहना चाह रही थी कि उसकी ज़बान रूक गई ।

सवालिया निशान !

इतने में उनके बेटे शैली और अमन खेतों से काम करके आ गये । घर में गहमा गहमी होने लगी । दुनीचन्द और भाई मूले की पत्नी की आँखें जवान जहान लड़कों को देखकर अघाती नहीं थी ।

दुनीचन्द और भाई मूले की पत्नी को अमन और शैली में जो बात सबसे अच्छी लगी वह थी उनके हाथों द्वारा नकल की गुरबानी की पोथियाँ, जिन्हें उन्होंने कई महीनों की मेहनत से तैयार किया था । कई रंग के हाशिए, फूल और बूटे अँकित करके हर पन्ने को उन्होंने सजाया था ।

जितने दिन वे वहाँ रहीं, सुबह शाम इन पोथियों में से पाठ करती रहीं । फिर एक दिन प्यार में आकर शैली और अमन ने अपनी अपनी पोथी अपनी नई बनी मौसियों को भेंट कर दी । इतनी बड़ी सौग़ात ! वे लेने के लिये तैयार नहीं थीं, लेकिन लड़के ज़िद पर अड़े थे । कहने लगे वे अपने लिये ओर पोथियाँ तैयार कर लेंगे । दुनीचन्द की पत्नी और भाई मूले की पत्नी गुरबानी की पोथियाँ पा कर गदगद हो उठीं । उन्होंने अपनी अपनी पोथी को चूमा, सर पर रखा, फिर सीने से लगा लिया । रेशमी रुमालों में उन्हें लपेट कर रखती और जितने दिन और वहाँ रहीं, वे अपनी अपनी पोथी को फूल चढ़ाती, उनके सामने धूप और अगरबत्तियाँ जलातीं ।

अमन और शैली देख देखकर आश्चर्य होते । उन्होंने तो ऐसा कभी नहीं किया था ।

हर बार जब उनके लौटने का दिन नज़दीक आता, तेजी और नसरीन कोई न कोई बहाना बना कर उन्हें कुछ दिन और ठहरने के लिये मना लेती । आख़िर और टालना न हो सका । और फ़ैसला यह हुआ कि अमन उन्हें पहुँचाने जायेगा । पहले दुनीचन्द की पत्नी को लाहौर छोड़ेगा, कुछ दिन वहाँ रुक कर भाई मूले की पत्नी को छोड़ने स्यालकोट चला जायेगा ।

यह सुनकर शैली के मुँह में पानी आता रहता, लेकिन पीछे भी तो किसी को रहना था । फिर कुछ दिनों बाद खेतों में कटाई का काम शुरू होने वाला था । उसे इस तरह के कामों में बड़ी दिलचस्पी थी । उसकी माँ नसरीन भी ज़्यादा वक्त खेतों में ही गुज़ारती थी । तेजी धर्मशाला में सेवा करके खुश रहती थी । ख़ास तौर पर लंगर की सेवा करके ।

जब मेहमान महिलायें चलने लगीं तो तेजी और नसरीन को वह दुनियाँ याद आने लगी जिसे छोड़ छाड़ कर वे करतारपुर में आ बसी थी : एक स्वाद उस जीवन का था, एक स्वाद इस जीवन का था । उस जीवन के स्वाद में क़हर का दर्द होता था ।

"दर्द इस जीवन में भी है," जब कभी वे इसका ज़िकर करती तेजी बोला करती, "पर इस दर्द की पीड़ और तरह की है । स्वाद भरा दर्द । भीगी भीगी आँखों का दर्द । जैसे आधी सोती, आधी जागती आखों का दर्द ।"

21

अमन ने भाड़े पर दो घोड़ियाँ ले ली थीं, ताकि दुनीचन्द करोड़िये और भाई मूले की पत्नी को वह आराम से उनके ठिकाने पर पहुँचा आये। करतारपुर रुकने के दौरान उन्होंने ढेर सारी छोटी मोटी चीज़े भी इकट्ठी कर ली थी। खुरजियों में उनका सामान भर कर एक दिन तड़के प्रातः ही वे लोग चल पड़े। तेजी और नसरीन ने उनके साथ लडडू, शकरपारे, अँदराने, मठरियाँ और भी बहुत-सा खाने का सामान बाँध दिया था। करतारपुर में मिली हर चीज़ को प्रसाद समझ कर वे ले जा रही थीं।

तड़के ही रवाना हुए नया दिन चढ़ने पर वे लोग कई कोस का सफ़र तय कर चुके थे।

दुनीचन्द की पत्नी और भाई मूले की पत्नी दोनों ने ढेर-सी बानी कंठस्थ कर रखी थी। तड़के से वे बारी-बारी अपनी सुरीली आवाज़ में पाठ कर रही थीं। जब एक पाठ का उच्चारण करती तो दूसरी सुनती, जब दूसरी की बारी आती पहली श्रवण का आनन्द लेती। ठंडी-मीठी हवा चल रही थी। स्वाद स्वाद में अमन को रत्ती भर थकान महसूस नहीं हो रही थी। घोड़ियाँ भी जैसे सधी हुई हो, अपनी मधुर चाल से चलती जा रही थी। मजाल है कि सवारियों को कोई हचकोला तक आये।

दिन काफ़ी चढ़ आया था, जब अमन ने सोचा कि नाश्ता हो जाना चाहिये। एक तालाब के किनारे पेड़ों के नीचे रुक कर उन्होंने पड़ाव किया। घोड़ियों की लगामें निकाल दी, खुरजियाँ उतार कर उन्हें खुला छोड़ दिया। उन्होंने तालाब में पानी पिया, फिर इधर उधर मुंह मारने लगीं। दुनीचन्द की पत्नी, भाई मूले की पत्नी और अमन दरी बिछाकर नाश्ता कर रहे थे कि पास के गाँव से लट्ठ उठाये खेतों की रखवाली पर बैठे दो जाट चार क़दम दूर उन्हें आकर घूरने लगे।

"खत्रानियाँ हैं।" एक ने कहा

"हां, कराड़ियाँ लगती हैं।" दूसरे ने हामी भरी।

"शक्ल सूरत की अच्छी हैं।"

"तेरी माँ की उम्र की होंगी।"

"तो फिर क्या ? औरतें तो हैं।"

"फिट्टे मुंह।"

"मेरा तो दिल कच्चा कच्चा हो रहा है।"

"इनके साथ जो गबरू है वह तुझे दिखाई नहीं देता ?"

"हिन्दू नहीं हो सकता। शक्ल से मुग़ल लगता है।"

"पूछ कर देख लेते हैं।"

फिर उनमें से एक ने आवाज़ लगाई, "जवान तेरा नाम क्या है ?"

"अमन" आगे से जवाब मिला।

क्षण भर के लिये ग्रामीण ख़ामोश हो गये।

"यह तो मुसलमान है।"

"क्यों, अमन नाम हिन्दू का भी तो हो सकता है।"

"अगर हिन्दू है तो ज़रूर किसी मुसलमान का बीज होगा।"

"जैसे तू ख़ुद है।"

"मेरी माँ ने कलमा पढ़ लिया था।"

"कलमा पढ़कर, सुन्नत करवा कर कोई मुसलमान थोड़े ही हो जाता है। हिन्दू अपना धर्म कभी नहीं बदलता। वह तो दूसरों के दीन को चाहे बदल दे।"

"क्यों ? तू मुझे मुसलमान ही नहीं मानता ? देख तू मेरी इस्लामी शान।"

"देख, कोई ऐसी वैसी बात न कर बैठना। ये तो बाबे नानक के मुरीद लगते हैं। मालूम होता है करतारपुर से लौट रहे हैं।"

"तो क्या ? खत्री तो हैं।"

इतने में नाश्ता करके अमन ने अपना सामान समेट लिया था। अब वह बारी-बारी से अपनी बनाई हुई मौसियों को घोड़ियों पर चढ़ा रहा था।

"ठहरो ! लाठी पकड़े उजड्ड जाट आगे बढ़ा।"

"क्यों ? तुझे क्या तकलीफ़ है ?" अमन ने अपनी हेकड़ी में कहा। उसने कभी किसी का फ़िज़ूल दबदबा नहीं माना था।

"तुम लोग कौन हो ?" हिन्दू से मुसलमान बने ग्रामीण ने धमकी भरे स्वर में पूछा।

"हम बाबा नानक के सिक्ख हैं।"

"मैंने तुझे कहा था न कि ये बाबे के मुरीद हैं। इनसे मंदा न बोलना।"

"ओ तू ठहर भी बड़ा आया बाबे का चेला।" उजड्ड जाट अपने साथी का हाथ झटक कर आगे बढ़ा। अब वह पेड़ के नीचे अमन के पास पहुँच गया था। अपनी अपनी घोड़ी पर बैठी दोनों महिलायें बिट बिट उसकी तरफ़ देख रहीं थीं बेकाबू जाट क्रोध में फुंकार रहा था।

"मैं पूछता हूं तुम कराड़ कबसे घोड़ियों पर बैठने लगे ?" उसने अमन को ललकारा।

"क्या मतलब ?" अमन ने जो करतारपुर गाँव के आज़ाद वातावरण में पला, बड़ा हुआ था, उतनी ही ऊँची आवाज़ में जवाब दिया।

"मतलब मैं तुझे समझाता हूं।" बेकाबू जाट ने आगे बढ़ कर दुनीचन्द की पत्नी और भाई मूले की पत्नी को खींच कर घोड़ियों से नीचे उतार लिया। "तुम लोगों को यह नहीं मालूम कि हमारे राज में कोई सड़ा हिन्दू घुड़सवारी नहीं कर सकता ? घोड़ियों और घोड़ों पर सरदार बैठते हैं। हुक्मरान बैठते हैं। हिन्दू की क्या मजाल है, वह हुक्मरान क़ौम के सामने घोड़ी की सवारी करे ?"

"ओये, ये तो बाबे नानक के मुरीद हैं। क्यों नहीं ?" उसके साथी ने बेक़ाबू जाट को फिर समझाया।

"बेशक हों।" वह वैसे ही अक्खड़पन से बोला। "अहले सुन्नत तो नहीं।"

उसने बिना किसी हील, दलील के सवारियों की घोड़ियों को लाठी दिखा कर आगे खदेड़ दिया ।

"सच कहता है, हमारे यहाँ तो कभी किसी ने घोड़ी की सवारी नहीं की । कुछ दूर, आगे जाकर दुनीचन्द की पत्नी बोली । उसका घरवाला करोड़िया था । उसने भी कभी घोड़ी की सवारी नहीं की थी ।"

"हम तो कभी के घोड़े घोड़ियाँ बेच चुके हैं ।" भाई मूले की पत्नी ने अमन को बताया ।

"लेकिन क्यों ?" अमन की समझ में कुछ नहीं आ रहा था । "हमारे गाँव में तो कितनी घोड़ियाँ हैं ।"

"हम करतारपुर से बहुत दूर निकल आये हैं । दुनीचन्द की बीबी बोली ।"

"शायद बाबे नानक की खुशबू इस गाँव में नहीं पहुँची," भाई मूले की पत्नी कह रही थी ।

"वैसे तो कहते हैं- बाबा नानक शाह फ़कीर, हिन्दू का गुरू, मुसलमान का पीर" अमन सोच रहा था । लेकिन वह बोला नहीं । उसके आत्म-सम्मान को बहुत चोट लगी थी । चार क़दम चलने के बाद वह थका थका महसूस करने लगा । पसीने से तर हो गया था ।

"इससे अच्छी तो मौत है ।" कुछ देर बाद उसके भीतर से आवाज़ आई । हाथ लगाने से भी मैली हो जाने वाली दो बुजुर्ग औरतें उसके साथ चल रही थी और उनके आगे आगे बिना सवारियों की घोड़ियाँ चली जा रहीं थी । घोड़ियाँ उनका बोझ उठा सकती थीं, लेकिन वे घोड़ियों पर नहीं बैठ सकते थे, क्योंकि वे मुसलमान नहीं थे । यह भी कोई बात हुई ?

वे लोग चार कदम दूर गये होंगे कि उन्होंने देखा सामने से एक मिरासी अपनी मरियल-सी घोड़ी पर बैठा आ रहा था । उसे देखकर अमन के जैसे चारों कपड़ों में आग लग गई । वह बुड़बुड़ाया :

"एक मिरासी अपनी मरियल सी घोड़ी पर चढ़ सकता है और.... "

"लाग लेने के लिये निकला होगा ।" भाई मूले की पत्नी ने अमन को समझाया ।

दुनीचन्द की पत्नी अमन की मानसिक हालत से बाकिफ़ थी । कुछ देर बाद वह उसे समझाने लगी, "बेटा राज चाहे तुरकों का हो, चाहे पठानों का, चाहे मुग़लों का, हम लोग उनके जिम्मी हैं । जिम्मी का हक़ सिर्फ जीने का होता है । हर कोई अधिकार उसके पास नहीं होता । हम लोग न नये मंदिर बनवा सकते हैं न उनमें नई मूर्तियां स्थापित कर सकते हैं । हिन्दुओं की जो इमारतें किसी कारण से गिर गई हों; उन्हें फिर से बनाया नहीं जा सकता । अगर कोई मुसलमान मुसाफ़िर चाहे तो वह हिन्दू मंदिर में ठहर सकता है, चाहे मंदिर में मूर्ति हो या न हो । मुसलमान मुसाफ़िर तीन दिनों तक किसी हिन्दू घर में रूक सकता है । मजबूरी की हालत में यह अवधि बढ़ाई भी जा सकती है । अगर कोई हिन्दू इस्लाम क़बूल करना चाहे तो उसे ऐसा करने से रोका नहीं जा सकता । हर मुसलमान का

आदर होना चाहिये। अगर कहीं हिन्दू इकट्ठे होकर कोई सलाह कर रहे हों, ऊपर से कोई मुसलमान आ जाये तो उसे अपनी बातचीत में शामिल करना हिन्दू प्रजा का फ़र्ज़ है। हिन्दू मुसलमानों जैसे लिबास नहीं पहन सकते। न ही वे मुसलमानों जैसे नाम रख सकते हैं। हिंदु काठी और लगाम वाले घोड़े की सवारी नहीँ कर सकते। वे तीर नहीं रख सकते। न दारू रख सकते हैं, न दारू पी सकते हैं। हिन्दू किसी मुसलमान के घर के नज़दीक घर नहीं बना सकते, न उनके कब्रिस्तान के नज़दीक किसी हिन्दू मुर्दे को जलाया जा सकता है। अगर कोई हिन्दू मर जाये तो उसका शोक ऊँची आवाज़ में रो-धो कर नहीं किया जा सकता। कोई हिन्दू किसी मुसलमान के ग़ुलाम को क़ीमत चुका कर ख़रीद नहीं सकता।''

''इस सबसे तो ये लोग मर क्यों नहीं जाते ?'' दुनीचन्द की पत्नी जब बोल चुकी, तो अमन ने अपने मुंह की कड़वाहट को जैसे थूका।

22

रात से पहले रास्ते में एक सराय पड़ी। यह सराय दुनीचन्द ने ख़ुद बनवाई थी। बाबा नानक की शिक्षा के बाद जब उसकी आँखें खुलीं तो उसने अपनी सारी दौलत ग़रीब गुर्बों और ज़रूरतमंद लोगों में बांट दी थी। इस तरह की कई सरायें ओर भी बनवाई थी। उनमें से यह एक थी। करोड़िये की सराय के नाम से जानी जाती थी। लेकिन आजकल सराय का प्रबंध स्थानीय सरकारी अमले के हाथों में था।

पहले तो वे कहने लगे सराय में जगह ही नहीं। कोई बारात आकर ठहरी हुई है। बारात ने पूरे सात दिनों तक सराय में टिकना था। टांडे के सैय्यदों के मेहमान थे।

''बारात ने सारी सराय तो नहीं घेर ली होगी।'' दुनीचन्द की पत्नी ने सराय के कारगुज़ार को कहलवाया, ''हमें तो बस एक रात ही यहाँ टिकना है।''

''वह तो ठीक है, लेकिन सैय्यदों के मेहमान भी तो सैय्यद हैं। उन्होंने सारी सराय ख़ाली करवाई हुई है। वे किसी हिन्दू, किसी कम्मी-काछे को अपने साथ रखने के लिये तैयार नहीं,'' जवाब मिला।

अमन जलता-कुढ़ता बाहर खड़ी अटाटाल औरतों के पास पहुँचा।

लेकिन इसी बीच सराय का कारगुज़ार उसके पीछे पीछे भागता हुआ आया। लगता था उसके दिल में ख़ुदा का ख़ौफ़ आ गया था। कहने लगा, ''कोई बात नहीं, किसी के चेहरे पर थोड़े ही लिखा होता है कि वह अहले दीन नहीं। और फिर हमारे बरख़ुरदार का नाम भी अमन है। फिर आप लोग तो सिर्फ़ एक रात ही तो टिकने वाले हैं। कोने के किसी कमरे में पड़े रहना, उन्हें कानों-कान ख़बर नहीं होगी।''

लेकिन सराय के अहलकार की यह ख़ामख़्याली थी। रात को उनके कमरे पर छापा पड़ गया। हिन्दू होकर वे उस सराय में कैसे आ टिके थे, जहाँ सैय्यदों का डेरा था ?''

सराय का मुहर्रिर साफ़ मुकर गया। कहने लगा, ''बीबियों के साथ आये नौजवान ने अपना नाम अमन बताया तो मैंने सोचा ये लोग मुसलमान हैं। मेरा क़सूर सिर्फ़ इतना ही है कि मैंने इनसे इनका मज़हब नहीं पूछा। बीबियों के मुंह और सिर चादरों से ढँके हुए थे।''

पहला क़सूर तो यह था कि उन्होंने अपने बेटे का इस्लामी नाम क्यों रखा था। अमन को हथकड़ी लगा दी गई। दूसरे, क्योंकि वे लोग करतारपुर की यात्रा करके लौट रहे थे, उन्हें कर देना पड़ेगा। हर ज़िम्मी को तीर्थयात्रा के लिये टैक्स देना होता था। भाई मूले और दुनीचन्द की पत्नियों के लिये मुश्किल यह थी कि वे यह कहने के क़ाबिल भी नहीं थीं कि वे तीर्थयात्रा से नहीं लौटी थीं। तीर्थयात्रा तो थी। वे बाबा नानक की याद में करतारपुर गईं थीं।

सारी रात उन लोगों ने बात को बढ़ाये रखा। दिन निकला तो उनके पास जो भी था उसे दे दिलाकर अमन ने जान छुड़ाई। फिर वे अपने रास्ते चल पड़े। इस बात को भूलकर कि वह सराय दुनीचन्द ने बनवाई थी, दुनीचन्द और भाई मूले की पत्नियों को सरकारी अहलकारों ने कानों और कलाइयों के ज़ेवर उतरवा कर ही जाने दिया।

अमन सोच रहा था, करतारपुर में तो जैसे किसी और की ही बादशाहत हो। इस देश में आम तौर पर लोग यह कैसा जीवन जी रहे हैं ? करतारपुर तो जैसे कोई नख़लिस्तान था। कितनी आज़ादी, कितना अमन-चैन था वहां ! न कोई हिन्दू के रूप में जाना जाता था, न कोई अपने को मुसलमान कह कर अपनी बड़ाई करता था। हर कोई ईश्वर का नाम लेता था। मेहनत करता था और बाँट कर खाता था।

रास्ते में एक मंदिर आया। अमन देखकर हैरान हुआ कि इतना बड़ा मँदिर था, उसकी ऊँची ऊँची दीवारें ध्वस्त हो गई थी। मंदिर की मूर्तियाँ इधर-उधर औंधी पड़ी थी। अहाते के तालाब में चप्पा चप्पा काई जमी हुई थी। छतों पर जगह जगह चिमगादड़ लटक रहे थे। कहीं बरो के छत्ते थे, कहीं मधुमक्खियों के।

मंदिर के खुले आँगन के एक कोने में एक मरियल सी, कुत्तिया के गिर्द छः-आठ आवारा कुत्ते जमा थे। कुत्तिया के जिस्म में सिर्फ़ हड्डियाँ दिखाई देती थीं। जब कोई कुत्ता उसे छेड़ता तो वह चिल्लाने लगती। फिर दूसरे कुत्ते उस कुत्ते पर झपटने लगते। बहुत देर तक गुराते रहते, एक दूसरे को काटते, चींघते रहते। इसी बीच घिरी हुई कुत्तिया अपनी पूंछ पिछली टांगों में दबा कर इधर उधर छिपने की कोशिश करती। कुत्ते फिर जाकर उसे घेर लेते और उनमें से कोई उसे छेड़ देता। कुत्तिया फिर चिल्लाने लगती। कुत्तों का गुराने और एक दूसरे को काटने का सिलसिला फिर शुरू जो जाता।

मंदिर का एक चक्कर लगा कर जब अमन बाहर आया, तो उसने दुनीचन्द की पत्नी से पूछा इस मँदिर की यह दुर्दशा क्यों हो रही थी। जो कहानी दुनीचन्द की पत्नी ने उसे सुनाई; उसे सुनकर अमन के पैरों तले ज़मीन खिसक गई।

"कुछ समय पहले यह इस इलाके का सबसे महत्वपूर्ण मंदिर हुआ करता था।" दुनीचन्द की पत्नी अत्यन्त दुखित स्वर में यह कहानी कह रही थी। "यहाँ से एक कोस की दूरी पर मेरा मायके का गाँव है। हम लोग हर तीज-त्योहर पर इस मंदिर में इकट्ठे हुआ करते थे। चढ़ावे चढ़ाते थे, मन्नतें माँगते थे। दूर और पास के हज़ारों श्रद्धालु इस मँदिर में आते थे। आठों पहर यहाँ गहमागहमी रहती थी।"

"मुग़लों के पिछले हमले के वक्त इलाके के खाते पीते हिन्दू डर के मारे इस मंदिर

में शरण लेने के लिये आकर इकट्ठे हो गये। सुनने में आया कि हमलावरों की एक टुकड़ी इधर धावा करने आ रही थी। भयभीत हिन्दू श्रद्धालुओं की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। मूर्ति के सामने माथे रगड़ रगड़ कर वे थक चुके थे, हाथ जोड़ कर प्रार्थनायें कर करके हार गये थे, लेकिन चारों तरफ़ से बुरी ख़बरें ज्यों की त्यों आ रही थीं। वैसे ही लूटखसोट, मारधाड़, माओं–बहनों के साथ बलात्कार की ख़बरें। लोग बार बार मंदिर के पुजारी से कहते, हमें धन दौलत की परवाह नहीं। हमें जायदाद की चिंता नहीं, हम सब कुछ फिर बना लेंगे। बस हमें डर है तो अपनी बेटियों और बहनों की इज़्ज़त का। किसी तरह उनका सत्त क़ायम रहना चाहिये।"

"हर घड़ी ख़बरें आ रही थी कि हमलावर तेज़ रफ़तार से उनके इलाके की ओर बढ़े चले आ रहे थे। जवान जहान लड़कियों के प्राण खुश्क हो रहे थे। मंदिर का पुजारी जब भी आँखें खोलता तो यही कहता- इस मँदिर के अहाते के बाहर मेरा ज़िम्मा नहीं, इस मँदिर के भीतर अगर किसी तुरक पठान ने क़दम रखा तो वह अंधा हो जायेगा। देवी ने यह वरदान मुझे दिया है। जो कोई देवी की शरण में आयेगा, उसका बाल भी बाँका नहीं होगा।" लोग सुनते तो उनका ढारस बंध जाता। दिन रात खड़तालें बजतीं रहती, भजन पाठ होता रहता, चढ़ावे चढ़ते रहते। दूर पास से ख़ौफ़नाक ख़बरें आ रही थीं, लेकिन मँदिर के महंत को विश्वास था कि उसकी देवी के पवित्र स्थान पर किसी का कोई अनिष्ट नहीं हो सकता। जो कोई भी मंदिर में क़दम रखेगा, अपनी आँखों की ज्योति गँवा बैठेगा। जो हमलावर इस तरफ़ आँख उठाकर देखेगा, वह अँधा हो जायेगा।

"और फिर ख़बर आई कि पास वाले गाँव में वही कुछ हो रहा था जो कुछ आसपास के गाँवों में हुआ था। उसी तरह घरों को लूटा जा रहा था। लूट कर हमलावर उनमें आग लगा देते। उसी तरह मर्दों, बूढों और जवानों को मौत के घाट उतारा जा रहा था। ख़ून की नदियाँ बह रही थी। उसी तरह औरतों की पत्त उतारी जा रही थी। चाहे कोई जवान थी या जवानी पार कर चुकी थी।"

मंदिर में जमा लोगों की भीड़ सोचती, अगर मरना ही है तो लड़कर मरेंगे। कुछ सोचते पीछे जंगल में जा कर छिप जायेंगे। कुछ सोचते थे मुसलमान हो जायेंगे, मुसलमान कौन से बुरे होते हैं; लेकिन हमलावर तो पंजाबी मुसलमानों का भी वही हाल कर रहे थे जो हिन्दुओं का होता था।

"महँत था कि एक ही रट लगा रखी थी, अगर कोई पराया आदमी इस शिवालय में पैर रखेगा, वह अँधा हो जायेगा, उसे देवी का श्राप लगेगा। और लोग ज़्यादा से ज़्यादा चढ़ावे चढ़ाते रहते, दोनों वक्त आरती में शामिल होते। पूजा ख़त्म करते तो माथे रगड़ने लग जाते। कोई महँत जी के चरण धो धो कर पीता। कोई उनकी टांगे दबाने लगता।"

फिर एक शाम हमलावर इस गाँव में भी आ घुसे। इस मँदिर पर भी उन्होंने वैसे ही हमला किया जैसे दूसरे मँदिरों पर होता रहा था। शिवालय की ईंट से ईंट बजा दी गई। कोई मुग़ल अँधा नहीं हुआ। मँदिर के महँत और उसके श्रद्धालुओं के साथ भी वही कुछ हुआ जो बाक़ी शहरियों के साथ हुआ था। सामने वाला तालाब ख़ून से लबालब भर गया और

ज्यों ज्यों रात गहरी होती गई मँदिर के आँगन में जगह जगह कुँआरी लड़कियों की चीख़े सुनाई देने लगीं। सारी रात उनका सत्त लुटता रहा। किसी ने अँधा क्या होना था, अंधेंरा भी उनकी करतूतों से उन्हें नहीं रोक सका।

"उस दिन के बाद से किसी ने इस मँदिर की तरफ़ रुख नहीं किया। न कोई हिन्दू इधर क़दम रखता है, न कोई मुसलमान ही कभी इधर घुसा है।"

"आजकल किसी से बात करो तो लोग कहते हैं महंत जी ने तुर्कों पठानों के लिये अंधे होने की बात की थी, मुग़लों के लिये थोड़े ही कहा था।"

23

जब वे लाहौर पहुँचे तो शाम गहरी हो गई थी। इतना बड़ा शहर, इतनी चहल पहल, घर पहुँचते पहुँचते रात हो गई। लाहौर में कोई जशन मनाया जा रहा था। शाम होते ही सारे शहर में दीपमाला हो गई। मस्जिदों, मंदिरों, दुकानों, हवेलियों, गलियों, बाज़ारों में लट लट दिये जल रहे थे। जगह जगह पर कनातें लगाकर, चाँदनियें बिछा कर नाच गाना हो रहा था। लोग ज़र्क बर्क़ कपड़े पहनकर मटरगश्ती कर रहे थे। बीच बीच में दर्शक ख़ुद नाचने और गाने लगते। एक जगह क़ब्वालियों का कार्यक्रम था। ख्वाजा चिश्ती और फ़रीद शकरगजं का कलाम सुनकर लोग झूम उठते थे। वैसे दारू पीना हराम था। क़ानूनी तौर पर शराब पीने की मनाही थी लेकिन जशनों के दिनों में कोई पूछने वाला नहीं था। कहीं कहीं चटाइयों बिछाकर लोग नरद और चौपड़ खेल रहे थे। इस तरह के जशनों में हाथियों को शराब पिलाई जाती और वे मस्ती में इठलाते फिरते। जगह जगह के बहुरूपिये, तरह तरह के भेस बना कर घूमा करते थे। छोटा, बड़ा, जो भी उनके क़ाबू आ जाता था उससे ठट्ठा-मज़ाक करने लगते थे। इस तरह का एक बहुरूपिया हिजड़ा अमन की पीछे पड़ गया। नौजवान लड़की के भेस में वह चुपचाप पीछे से आया और उसने अमन को पकड़ कर अपनी नकली छातियों से लगा लिया। उसके गाल चूमने लगा। अमन के चेहरा लाल पड़ गया था। आगे पीछे खड़े लोग तालियाँ मार मार कर हँस रहे थे। दुनीचन्द और भाई मूले की पत्नियाँ जान बूझ कर आगे निकल गई थी। जशन के दिनों में इस तरह का अच्छा-बुरा ठट्ठा मख़ौल माफ़ होता था।

दुनीचन्द की हवेली के रास्ते में हुस्न का बाज़ार पड़ता था। यहाँ की रौनक़ का कोई जवाब नहीं था। उसके साथ आई औरतों ने तो चादरें लपेटी हुई थी लेकिन अमन अपने आपको कैसे छिपाये। जवान लड़का, गोरा रँग, गुलाबी गाल, काली आँखें, आगे पीछे सजधज कर हुस्नफ़रोश चेहरे इशारों से अपनी तरफ़ बुला रहे थे। बीच बीच में उस पर आवाज़ें भी कसी जाती।

कान लपेट कर अमन इस बाज़ार में से निकल आया। कुछ दूर आगे रावी के किनारे दुनीचन्द की हवेली थी, हवेली क्या, निरा महल था। अमन की आँखें हैरानी से फैली रह गई।

गाँवों का जीवन कैसा था और लाहौर शहर की गहमा गहमी कैसी थी। देख देख कर, सोच सोच कर अमन हैरान होता रहा।

दुनीचन्द की हवेली का ठाठ देख कर उसकी आँखें जैसे चौंधिया गई। नौकर नौकरानियों का ही कोई हिसाब नहीं था। ज़रबफत के पर्दा, फ़ारस और बुखारे के क़ालीन, किमख़ाब के गिलाफों वाले गाँव तकिये, दीवान और बैठक की मसनदें।

दुनीचन्द की पत्नी घर पहुँची तो लोगों ने उसे और उसके मेहमानों को सिर पर ही उठा लिया। उनके घर की शान-शौकत देखकर अमन बार-बार शर्मिंदा महसूस करने लगता। कितने कोस सफ़र उस भागवान औरत को वह पैदल चलाकर लाया था। धन्य थी दुनीचन्द की पत्नी जिसने एक बार भी माथे बल नहीं डाला था। एक बार भी शिकायत नहीं की थी।

हवेली में फीलख़ाना था, जिसमें तीन हाथी बँधे थे। अस्तबल में घोड़े नहीं थे, गायें थीं, भैंसें थीं, उनकी टहल करने वाले सेवक थे। हाथियों के महावत थे।

हवेली का चक्कर लगाकर जब अमन दीवानख़ाने में आया, छत पर लटके फ़ानूस देख देख कर उसका मन नहीं भरता था। दीवारों पर तरह तरह की तस्वीरें लटकी थीं। जगह जगह अत्यंत सुंदर मूर्तियां थीं, लेकिन मज़ाल है कोई किसी देवी देवता की प्रतिमा हो। गुरू नानक के चित्र थे। एक ओर बाबा खड़ा चँवर डुला रहा था, दूसरी ओर मरदाना बैठा रबाब बजा रहा था। पीछे पेड़ पर एक पिंजरा लटक रहा था, जिसमें तोता बैठा था।

अमन ने औरतों के सोलह शृंगार सुन रखे थे, लेकिन उसने किसी औरत को ऐसा सजा हुआ नहीं देखा था। उस रात बहुत देर तक उसकी आँखों के सामने लाहौर के हुस्न बाज़ार की परियों की सूरते घूमती रही।

अगली सुबह उसकी दुनीचन्द से मुलाक़ात हुई। पिछली रात वे किसी सरकारी महफ़िल से देर गये लौटे थे।

ऊंचा-लंबा, देवता इन्सान। मुखड़े पर एक आभा। आँखों में एक लौ। हिन्दुओं के नैन नक्श, लेकिन पहरावा उनका पठानों जैसा था। खुले पौंचों की सलवार, ऊपर खुले घेरे वाला कुर्ता, बटनों वाली वास्कट। सिर पर कुल्ले से बँधा मुशद्दी का साफा। पैरों में खेड़ियाँ। अभी अभी पाठ करके घर की धर्मशाला से निकला था। उसके ओठों पर अभी भी गुरबानी थी। लेकिन अमन देखकर हैरान हुआ, दुनीचन्द की धर्मशाला घर की सबसे एकान्त नुक्कड़ में थी, जैसे किसी ने सात पर्दों में छिपाकर रखा हो। आँगन, आँगन के पीछे एक कमरा, उसके पीछे बाग़ीचा और बाग़ीचे के कोने में तंग-सी कोठरी। इस में कुछ पोथियाँ थी, बाबा नानक की कुछ निशानियाँ थी। जिनके सामने धूप और अगरबत्तियों का धुँआ उठ रहा था।

उस दिन शाम को जब उसकी फिर दुनीचन्द जी से मुलाक़ात हुई तो अमन से रहा न गया और उसने अपने मेज़बान से इसका कारण पूछा। दुनीचन्द पहले टालता रहा, लेकिन अमन बज़िद था। उसका ख़्याल था कि दुनीचन्द को धर्मशाला वाला कमरा बाहर गली से सटकर बनाना चाहिये था, ताकि मुहल्ले वाले भी उसके भजनपाठ में शामिल हो सकें, संगत जुड़ सके।

आख़िर दुनीचन्द ने अमन को अपनी मजबूरी समझाई। बेशक सरकारी दरबार में उसकी क़ाफ़ी पूछ थी। बेशक गुरू बाबे ने उसे दीक्षा दी थी। वक्त के हुक्मरानों को यह

हरगिज़ गवारा नहीं था कि उनकी प्रजा, ख़ासतौर पर वे लोग जो राजदरबार में आते जाते थे, किसी और धर्म की खुलेआम उपासना करें। लाहौर शहर के सब खाते पीते हिन्दू ऐसा ही करते थे।

अमन ने यह भी महसूस किया कि दुनीचन्द बात-बात में 'इन्शा अल्लाह' कहते थे और बात बात में फ़ारसी और अरबी के हवाले देते थे।

जब अमन दुनीचन्द के पास बैठा वार्तालाप कर रहा था, उनके पीछे के दरवाज़े के पीछे खड़ी दुनीचन्द की जवान जहान बेटी शक्ति यह सब सुन रही थी।

और फिर शक्ति को अमन से एकान्त में मिलने का जो पहला अवसर मिला, उसने हिन्दू क़ौम की मजबूरी से उसे अवगत कराया। कितनी देर तक वह लगातार बोलती रही। उसके ओंठ जैसे आग बरसा रहे थे। उसके शब्दों में ज़हर था। आख़िर में उसने अमन को याद करवाया। बाबा नानक ने हिन्दुओं की इसी मजबूरी का ही ज़िक्र किया था, जब उन्होंने कहा था-

नाउ खुदाई अल्लहु भइआ ॥
नील बस्त्र ले कपड़े पहिरे
तुरक पठाणी अमलु कीआ ॥
....
अँतरि पूजा पड़हि कतेबा
सँजमु तुरका भाई ॥
....
नील वस्त्र पहिरि होवहि परवाणु ॥

जवान-जहान लाहौरन के मुंह से इस तरह फर्र फर्र गुरबानी का उच्चारण और उसकी समझ को देखकर अमन उसके सुन्दर चेहरे की तरफ़ देखता रह गया। उसका एक एक बोल अमन के भीतर घुस गया था और अमन की रग रग में हलचल मचा रहा था।

अगले दिन अमन चाहता था कि वह हिन्दू कौम की इस नीति के बारे में विस्तार से दुनीचन्द से बात करे, लेकिन मालूम हुआ कि वह किसी अमीर के निमंत्रण पर चौगान खेलने गये हुए थे।

"यह चौगान क्या चीज़ है ?" अमन ने शक्ति से पूछा।

"सँजमु तुरका भाई।" जवाब में शक्ति नेअर्थपूर्ण दृष्टि से अमन की ओर देखा।

24

रात सोने से पहले सटी चारपाइयों पर लेटी दुनीचन्द और भाई मूले की पत्नियाँ धीमे स्वर में बातें कर रही थी।

"मुझे तो बेहद पसंद आया है।"

"जैसे सुच्चा मोती हो।"

"उस दिन बदनाम बाज़ार में से गुज़रते वक्त कैसा पसीने में तर हो रहा था।"

"मैंने ख़ुद मुड़ कर देखा था उस का चेहरा लाल सुर्ख़ हो गया था।"

"कितना सुन्दर जवान निकला है !"

"रँडियाँ भी उस पर फ़िदा हो रही थीं।"

"जो भी उसे देखती, वही ल हो जाती थी।"

"एक ने तो उसे आँख भी मारी थी।"

"एक ने ओंठों पर उँगलियों के पोटे रख कर उसे चुँबन दिया था।"

चार क़दम दूर अपने पलंग पर लेटी शक्ति की आँख नहीं लगी थी। वह अपनी माँ और मेहमान मौसी की बातें सुन रही थी लट्टू उनकी बातें सुनकर वह और भी चौकस होती जा रही थी। ये दोनों तो शक्ति से भी कहीं ज़्यादा अमन की दीवानी थीं।

"एक बात है, इसके बाप का कुछ पता नहीं।"

"इसकी माँ कितनी प्यारी है।"

"देखने में जितनी सुन्दर उतनी ही स्वभाव की भी अच्छी।"

"और फिर करतारपुर में बसी हुई है।"

"बाबे नानक ने उसे आशीर्वाद दिया था।"

"जिस जिसने बाबे के दर्शन किये वही निहाल हो गया। यह जन्म सकारथ, अगला जन्म सफल।"

"तेजी के चेहरे पर एक नूर मुझे दिखाई देता था।"

"वही नूर तो इस लड़के के चेहरे पर है।"

"इसे देख देख कर मेरा तो मन नहीं भरता।"

"मुझे तो इसमें से एक ख़ुशबू आती है जैसे कोई शहतूत पका हो।"

शक्ति के कानों में किसी लोकगीत के बोल गूँजने लगे :

दाखां बूरीआँ वे दाखां बूरीआँ
तोते बूर टुक टुक जान दाखां बूरीआँ
(दाखों पर बौर आया है। तोते बौर को काट काट कर खा रहे हैं।)

शक्ति की माँ और मौसी की नींद जैसे उड़ गई थी। लगातार बोलती जा रही थी।

"कैसे सुंदर ढंग से मुझे 'मौसी जी' कहकर पुकारता है, जैसे फूल झड़ रहे हों।"

मुझे भी तो "मौसी जी" "मौसी जी" कहते इसका मुंह नहीं थकता।

"मैं तो अपनी बेटी से इसका रिश्ता पक्का करना चाहती हूँ। कितनी सुंदर उनकी जोड़ी बनेगी। इसे एक नज़र देखते ही मेरे मन ने कहा यह तो मेरी बेटी का सुहाग है।"

इतने में बाहर ज़ोर की बिजली चमकी। फिर बादलों की गर्जन के साथ एक दम पानी बरसने लगा। सर्दी बढ़ गई। सामने खिड़की में से बौछार भीतर आ रही थी। शक्ति ने उठकर खिड़की बँद कर दी।

और भाई मूले की पत्नी ने सोचा, यह कैसे अनर्थ हुया था। शायद जवान जहान लड़की ने वे सारी बातें सुन ली थीं जो इतनी देर से वे आपस में कर रही थी।

दुनीचन्द की पत्नी लंबी सांसें ले रही थी। फिर यह आवाज़ धीरे-धीरे खुर्राटों में बदल गई।

उधर शक्ति को भारी कंबल में भी नींद नहीं आ रही थी। वह दायें से बायें, बायें से दायें करवटें बदल रही थी।

और भाई मूले की पत्नी की भीतर की औरत की भी देर रात गये आँख नहीं लग रही थी। बार बार सोचती आख़िर इस लड़की को नींद क्यों नहीं आ रही। बार बार करवटें बदल रही है।

बाहर बारिश थी कि थमने का नाम नहीं ले रही थी। क़हर का तूफ़ान था। बार बार बिजली चमक रही थी। बादल गरज गरज कर पागल हो रहे थे।

भाई मूले की पत्नी का कलेजा जैसे बैठ गया हो। वह "धन्न निरंकार" "धन्न निरंकार" का जाप करने लगी। थोड़ी देर बाद उसकी आँख लग गई।

सिर्फ़ शक्ति की आँख नहीं लगी। उसकी सारी रात करवटें लेने में गुज़र गई। उसकी दशा उस बच्चे की तरह थी, जिसके हाथ से झूठ बोल कर कोई खिलौना छीन कर ले गया हो।

अगली सुबह जब घर में कोई जागा ही नहीं था, शक्ति नहा धो कर धर्मशाल में बाबा नानक जी की हस्तलिखित 'आसा की वार' की पँद्रह पौड़ियों के सामने माथा रगड़ रही थी। अमन को वह दिल दे बैठी थी। ज़िन्दग़ी में पहली बार कोई नौजवान उसे अच्छा लगा था। वह किसी और का नहीं हो सकता था। उसे शक्ति से कोई नहीं छीन सकता था।

अभी शक्ति दंडवत की मुद्रा में बैठी ही थी कि उसकी माँ भी धर्मशाला में आ गई। अपनी बेटी को इस तरह माथा रगड़ते देखकर उसका दिल भावावेश से भर उठा।

आख़िर वह क्या माँग रही थी बाबा नानक से ? गुरू बाबा तो घट-घट का ज्ञाता था। इस दर से कभी कोई निराश नहीं लौटा था।

जब शक्ति माथा रगड़ कर उठी तो पीछे अपनी अम्मी को खड़ा देखकर पानी पानी हो गई। वह उसी तरह नज़रें नीचे झुका कर धर्मशाला से बाहर निकल आई।

तेज़ कदमों से अपने कमरे की ओर जाते हुए शक्ति ने देखा, अमन भी नहा धो कर धर्मशाला की तरफ़ जा रहा था। उन्होंने एक दूसरे की तरफ़ देखा और उन्हें लगा जैसे वे एक दूसरे की भीतर उतर गये हों।

अभी शक्ति संभल भी नहीं सकी थी कि उसके पिता दुनीचन्द के खाँसने की आवाज़ आई, वे बाहर से सैर करके लौट रहे थे। मुंह में कीकर की दातुन थी, हाथ में छड़ी।

"बेटी, आंज सुबह सुबह कैसे उठ गई ?" दुनीचन्द ने शक्ति को देखकर कहा।

शक्ति ने कोई जवाब नहीं दिया। पिता जी के सामने हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर उनकी तरफ़ देखे बग़ैर तेज़ क़दमों से आगे निकल गई, जैसे किसी के दामन में कोई राज़ हो जो प्रकट होने वाला हो।

अपने कमरे में पहुँच कर उसने भीतर से कुंडी लगा ली। तकिये को सीने से लगाकर पलंग पर लेट गई। पूरी रात जगी थी, न जाने कब उसकी आँख लग गई। नाश्ते

पर उसकी इन्तज़ार होती रही । दोपहर का खाना दस्तरख़ान पर लग चुका था, तब जाकर कहीं उसकी आँख खुली ।

खाने के वक्त सारा परिवार उसकी इन्तज़ार कर रहा था । देख कर शक्ति को बहुत शर्म आई । इन्तज़ार करने वालों में अमन भी तो था ।

25

शक्ति को महसूस होता जैसे उसे स्वर्ग की एक झलक मिली थी, फिर पलक झपकते ही उसका सब कुछ छिन गया था ।

अल्हड़ जवानी, वह अमन को दिल दे बैठी थी । और इधर उसकी माँ को ऐसा लगता कि उसने भाई मूले की पत्नी के सामने हथियार फ़ेंक दिये थे । शक्ति सोचती थी कि एक बार अगर यह लड़का उसके हाथ से निकल गया तो वह हाथ मलती रह जायेगी । जिस दिन भाई मूले की बीवी स्यालकोट के लिये रवाना होगी, अमन भी उसके साथ ही चला जायेगा । स्यालकोट पहुँचते ही भाई मूले की पत्नी वहीं उसे बाँध लेगी । किस तरह उसे "मौसी जी" "मौसी जी" पुकारता रहता था । और वह थी जो अमन की ख़ातिरें करती नहीं थकती थी ।

गुरसिक्ख परिवार में जन्मी-पली लड़की को सिर्फ़ एक ही आसरा सूझ रहा था, पाठ वाले कमरे में जाकर बार बार हाथ जोड़े, जोदड़ी करे । जब भी उसका दिल बेचैन होता शक्ति बाबा जी के कमरे में चली जाती । सेठ दुनीचन्द के घर बाबा नानक उसी कमरे में आकर विराजमान हुए थे । जहाँ बाबा जी आकर बैठे थे, उस स्थान पर दुनीचन्द ने संगमरमर का चबूतरा बना दिया था । चबूतरे पर ज़रबफ़त का बड़ा रूमाल बिछा था । उस पर अपनी अँगियों में लपेटी हुई पोथियाँ रखी थी ।

शक्ति पोथियों के सामने बार बार माथा रगड़ती, बार बार उन्हें खोल कर वाक लेती । हर बार उसके मन की मुराद पूरी होने का इशारा मिलता था लेकिन इधर हालात पूरी तरह विपरीत थे । उसे पूरा विश्वास था कि एक बार लड़का उसके हाथ से निकल गया तो फिर उसके क़ाबू में नहीं आयेगा । सयानी बयानी, पढ़ी लिखी लड़की, उसके हाथ पैर फूल रहे थे ।

उस दिन शाम के वक्त जब सब लोग अपने कामकाज में लगे थे, शक्ति के मन में न जाने क्या आया वह बाबा जी के कमरे में जा घुसी । हाँफ़ती हुई वह आगे बढ़ी जहाँ रेशमी रूमालों में लिपटी पोथियाँ रखी थीं । वह जैसे सजदे में गिर पड़ी । गिड़गिड़ा कर रो रही थी । कुछ देर बाद उसके नीचे चूने से पुते फ़र्श पर बिछी चादर उसके आँसुओं से भीग गई थी ।

अब शक्ति "धन्न गुरू नानक" "धन्न बाबा नानक" का जाप कर रही थी । एक सुर, एक ताल, एक साँस, समाधि में बैठी "धन्न गुरू नानक" "धन्न बाबा नानक" का उच्चारण करती जा रही थी । सिमरन करते हुए उसकी आवाज़ कभी ऊँची और ऊंची हो जाती थी, जैसे कोई किसी को पुकार रहा हो । फिर अपने ही आप नीची होने लगती थी जैसे कोई किसी के नज़दीक सट कर उसे धीरे धीरे याद कर रहा हो । कुछ देर बाद "धन्न

गुरू नानक'' ''धन्न बाबा नानक'' की ध्वनि ऊँची होने लगती जैसे कोई मिन्नते कर रहा हो ।, बेनती कर रहा हो फिर ''धन्न गुरू नानक'' ''धन्न बाबा नानक'' की इस ध्वनि मे जैसे सारा कमरा गूँजने लगा । हर दीवार, हर कोने में से ''धन्न गुरू नानक'' ''धन्न बाबा नानक'' की ध्वनि फूट रही थी । सारा वातावरण ''धन्न गुरू नानक'' ''धन्न बाबा नानक'' की स्मृति से सरशार हो रहा था, निचुड़ कर रह गया था और अब जैसे रिमझिम, रिमझिम ''धन्न गुरू नानक'' ''धन्न बाबा नानक'' की फुहार पड़ने लगी हो ।

थोड़ी देर बाद यह धुन खुशबू की तरह बाबा जी के कमरे से बाहर फैलने लगी । हरे भरे लॉन को पार कर गई । सामने की छत, फिर आँगन । और अब यह सूक्ष्य ध्वनि अमन के एकान्त में बने कमरे में, अकेले बैठे नौजवान मेहमान के दिल को झकझोर रही थी । कुछ देर तक तो उसने इस आवाज़ की तरफ विशेष ध्यान नहीं दिया, लेकिन इस धुन की सँगीत लहरें लगातार उसके कानों से टकरा रही थीं । यह स्वर तो उसका जाना पहचाना था । उसके अंग अंग को झकझोर रहा था, उसे झुनझुना रहा था ।

इधर अमन की पलकें भारी भारी होने लगी । कुछ देर बाद वे मूंदने लगी । रस में विभोर होकर वह मदहोश अवस्था में बैठा रहा ।

इधर शक्ति एक ही साँस, एक सुर में बिना थके हारे, ''धन्न गुरू नानक'' ''धन्न बाबा नानक'' का उच्चारण कर रही थी । जैसे किसी ने कोई दामन थाम लिया हो और उसे कसकर छाती से लगा रही हो ।

उसके कानों में ''धन्न गुरू नानक'' ''धन्न बाबा नानक'' की संगीत लहरी जैसे मीठे शहद की तरह उसकी रग रग में घुलने लगी । उसे लगा जैसे वह मीठी चाशनी में लिपटा जा रहा हो । और फिर जैसे किसी ने उसे झकझोर कर जगा दिया ।

अमन को लगा जैसे कोई विलाप कर रहा हो । लगातार जैसे किसी को पुकार रहा हो । किसी को किसी की इन्तज़ार हो, और कोई पहुँच नहीं रहा था । अब वह दीवानों की तरह एक ही झटके में उठ खड़ा हुआ । आँखें फैला कर आगे पीछे देखने लगा । यह नगमें की सदा कहाँ से आ रही थी ? कौन था जो खुशबूएँ लुटा रहा था ?

और अमन उस ध्वनि की पगडंडी के रास्ते चल पड़ा । घर में इधर उधर सब लोग अपने कामों में लगे थे । लगता था सिर्फ़ उसे ही यह अलौकिक धुन सुनाई दे रही थी और बस । ''धन्न गुरू नानक'' ''धन्न बाबा नानक'' की आवाज़ की लकीर पर चलता हुआ वह आँगन पार कर गया । सामने कमरा, फिर हरा भरा चमन और सामने बाबा जी का कमरा ।

शाम पड़ रही थी । बाबा जी के कमरे में अमन ने क़दम ही रखा तो जैसे कमरे के झुटपुटे में एक रोशनी चमक उठी । अगले क्षण आरती की मुद्रा में खड़ी शक्ति उसकी नज़रों को चौंधिया रही थी ।

और फिर दोनों तरफ़ जैसे फुलझड़ियों छूट रही हों, अनार छोड़े जा रहे हों, शहनाइयाँ गूँज रही हों । एक उन्माद में अमन और शक्ति जहाँ के तहाँ खड़े वहां पहुँच गये जहाँ धरती और आकाश मिलते हैं । वहाँ जहाँ मेंहदी रँग का दुशाला लिये दिन, उनींदे

सागर में डूब जाता है । वहाँ जहाँ इन्सान ईश्वर बन जाता है और देवता इन्सान बनने के लिये बेचैन रहते हैं । वहाँ जहां धरती से चश्में फूटते हैं, झरने बहते हैं, बहारें नाचती है, गाती हैं, बादल उमड़ते हैं, गरजते हैं, बरसते हैं, जल थल एक कर देते हैं ।

अमन और शक्ति एक दूसरे की तरफ़ देखकर मदहोश से हो रहे थे कि दुनीचन्द की पत्नी हाथ में एक कन्दील लिये बाबा जी के कमरे में आ घुसी । उसने अमन को इधर आते देखा था, यह सोचकर कि वहाँ अँधेरा होगा, बत्ती लेकर आ रही थी । अमन और शक्ति को एक नज़र उसने देखा, एक नज़र अमन और शक्ति ने फ़रिश्ता सीरत माँ को देखा । वह उन्हीं क़दमों से पीछे मुड़ गई ।

दुनीचन्द की पत्नी का सारा ख़ून जैसे किसी ने सोख लिया हो, अँधेरा और गहरा हो रहा था । घुप्प गहरी काली रात । उसे नहीं पता चला वह बाबा जी के कमरे से कब लौटी । उसे नहीं पता चला वह कब धड़ाम से अपने पलंग पर गिरी । रात देर तक वह अपने कमरे में बेहोश पड़ी रही । उसके दाँत मिच गये थे । दाँतों के बीच आई उसकी जीभ से फूटी लहू की बूँदे ठुड्डी से सरकती हुई उसकी गर्दन और गले तक आ पहुँची थीं । उसकी कमीज़ का गला लहू से तर था ।

अगले दिन घर के लोग दुनीचन्द की पत्नी की देखभाल में लगे थे । हकीम और वैद्य आ-जा रहे थे । कोई कुछ कहता, कोई कुछ उपचार बताता । कोई कहता पकड़ है, कोई कहता परछावाँ है । कोई कहता कमज़ोरी है । कोई कहता चिंता है, चिंता चिखा बराबर होती है । इसके आँगन में जवान जहान बेटी बैठी है, जितने मुंह उतनी बातें ।

एक दिन, दो दिन, दुनीचन्द की पत्नी की हालत में कोई फ़र्क नहीं पड़ा । होश आने पर वह इधर देखती, आने वाले लोगों के साथ बातें करती, फिर उसे ग़श पड़ जाती । उसकी बीमारी तो लगातार बिगड़ती जा रही थी ।

और फिर भाई मूले की बीवी अमन को लेकर स्यालकोट रवाना हो गई । शक्ति की मूक फ़रियाद ! सामने अमन जा रहा था, उसे लगता जैसे उसके पिंजर में से उसकी जान उसकी हड्डियों को कड़का कड़का कर निकल रही हो ।

शक्ति न माँ को चेहरा दिखाने के काबिल थी । न अमन को ही जाने से रोक सकती थी । और वह स्यालकोट जा रहा था । जहाँ भाई मूले की बीवी उसे अपनी जाई का सुहाग माने बैठी थी ।

क़ुदरत ने शक्ति के साथ यह कैसा खेल खेला था ? गुरू बाबे की शरण में, गुरू बाबे की याद में, गुरू बाबे को रटती हुई वह किस खाई में जा पड़ी थी ? उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था । उसका जी करता खिड़की की सलाख़ों से सर टकरा टकरा कर वह अपने आप को लहूलुहान कर डाले । और उसके सामने ही एक शब्द भी बोले बग़ैर अमन गली के मोड़ पर उसकी आँखों से ओझल हो गया था ।

26

शक्ति की माँ की हालत दिनों दिन बिगड़ती जा रही थी । उसे लगातार बेहोशी के दौरे पड़ रहे थे । एक के बाद एक, शक्ति की तीनों बहनें अपने अपने ससुराल से आ गई

थीं। शक्ति के भाई लेन देन के सिलसिले में बाहर गये हुए थे। दुनीचन्द साहूकार था। सो भी छोटा मोटा साहूकार नहीं। बड़े बड़े राजा और नवाब उसके गुमाश्ते थे।

माँ के कमरे में अकेली जाने की शक्ति में हिम्मत नहीं थी। आये गये या घर के बाकी लोगों की मौजूदगी में तो वह माँ के कमरे में जाती थी। कुछ देर तक उपास खड़ी रहती, फिर माँ से नज़र मिलाये बग़ैर लौट जाती।

दुनीचन्द की पत्नी को यह दुख था कि अगर शक्ति ने किल्ला तोड़ना था, मजबूरी में नेह लगाना था तो उसे कोई और स्थान नहीं मिला ? बाबा जी का कमरा ही इस करतूत के लिये रह गया था ? और शक्ति सोचती उसने जो किया था, बाबा जी को हाज़िर नाज़िर जान कर किया था। उसने तो बाबा जी की मिन्नतें करके अपने महबूब को पाया था। उन्हें साक्षी बना कर उसने अपने आपको अमन के हवाले किया था। यह तो जीवन-मरण का साथ था।

लेकिन अगले ही क्षण उसका दिल कहता कि जिसके साथ उसने शाश्वत साथ जोड़ा था, वह उससे एक शब्द भी बोले बग़ैर अगले पड़ाव की ओर चल पड़ा था। मरद जात। दो चार दिन की बात है, वह भाई मूले की एकलौती बेटी के साथ घी-शक्कर हो रहा होगा। उसकी माँ ने तो पहले से ही अपनी जाई के लिये चुन रखा था। हो सकता है वह उस लड़की की डोली लेकर ही इधर से गुज़रे। वह लाहौर में पड़ाव करेगा, यह दिखाने के लिये कि उसने कैसी हसीन लड़की से रिश्ता गाँठा था।

यह सोचकर शक्ति का मुंह ज़हर की तरह कड़वा हो जाता, जैसे उसने तूम्बे, एक कड़वा फल जो दवाई बनाने में काम आता है को चख लिया हो।

अगले दिन जब वह सो कर उठी तो घर में चीख़ चहाड़ा मचा था। उसकी माँ रब्ब को प्यारी हो गई थी। रात को नींद में उसने प्राण त्याग दिये थे।

शक्ति यह सुन कर स्तब्ध रह गई। क्षण भर में उसके भीतर की पढ़ी लिखी लड़की ने अपने आप को समझा लिया। दोनों में से एक ने तो जाना ही था। या बेटी मरती या माँ। माँ ने जान देकर बेटी का जीना निश्चित कर दिया था।

भला वह माँ, जो दुनीचन्द की पत्नी थी, कैसे यह बात भूल सकती थी, जो उसने अपनी आँखों से देखी थी।

और शक्ति जैसी स्वाभिमानी लड़की मुहब्बत करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझती थी। वह सोचती, उसने कोई गुनाह नहीं किया था। जिसे चाहा था उसके लिये वह मर भी सकती थी। उसने तो सिर्फ़ नज़रों ही नज़रों में अपने आपको उसके हवाले किया था।

अभी उसकी माँ का मातम पूरा भी नहीं हुआ था, कि एक दोपहर बाद वह अपनी सहेली ज़हिरा के साथ दाता गंज बख़्श की दरगाह पर हाज़िर होकर हुजरे के एकान्त में सजदे में गिरी हुई थी। शक्ति ने दाता गंज बख़्श जिनका असली नाम शेख़ अली गंज बख़्श हजवीरी था की रचनायें पढ़ रखी थीं। सभी छोटे बड़े लोग दाता गंज बख़्श की अज़मत के क़ायल थे। और तो और इस दरगाह पर ख़्वाजा मुनीऊद्दीन चिश्ती भी हाज़िर हुए थे।

यहाँ उन्होंने चलीया काटा था। और पीर जी की शान में क़सीदा भी लिखा। शक्ति बहुत सारे सूफ़ी फ़कीरों और उनके कलाम से वाकिफ़ थी। इनमें मख़्दूम अली हजवीरी, बाबा फ़रीद, बाख़्तेयार अली काकी, निज़ामुद्दीन औलिया जैसे महापुरूष थे। फ़रीद के श्लोक तो उसे झकझोर देते थे।

फ़रीदा जे जाणा तिल थोड़ड़े समलि बुकु भरी
जे जाणा सहु नंढड़ा ताँ थोड़ा माणु करी ॥४॥
जे नाणा लड़ु छिजणा पीडी पाईं गँडि
तै जेवडु मै नाहि को सभु जगु डिट्ठा हँढि ॥
देखु फरीदा जि थीआ सकर होई विसु ॥
साँई बाझहु आपने वेदण कहीअै किसु ॥१२॥
फरीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पियारे नेहु ॥
चला त भिजै कँबली रहाँ त तुटै नेहु ॥२४॥
भिजओ सिजओ कँबली अलह वरसउ मेहु ॥
जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाही नेहु ॥२५॥
अजु न सुती कँत सिउ अँगु मुड़े मुड़ जाइ ॥
जाइ पुछहु डोहागणी तुम किउ रैणि विहाइ ॥३०॥
जोबन जांदे न डराँ जे सह प्रीति न जाइ ॥
फरीदा किती जोबन प्रीति बिनु सुकि गए कुमलाइ ॥३४॥
फरीदा चिंत खटोला वाणु दुखु बिरह बिछावण लेफु ॥
एहु हमारा जीवणा तू साहिब सच्चे वेखु ॥३५॥
तनु न तपाइ तनूर जिउ बालणु हड्डु न बालि
सिरि पैरी किआ फेड़िआ अँदरि पिरी निहालि ॥१२०॥

फिर किसी ने शक्ति को राजस्थान की मीराबाई के बारे में बताया। उसके रचे भजन शक्ति के हाथ आ गये। शक्ति को तो जैसे जीने का तरीका मिल गया हो। दिन रात अपने महबूब की याद, मीरा के दर्द भरे बोल उसके ओठों पर सिसकते रहते :

मेरे तो गिरधर गोपाल
दूसरो न कोइ।.....
मैं तो प्रेम दीवानी
मेरा दरदु न जाने कोइ।.....
मैं तो गिरधर के सँग नाचूँगी।
नाचूँगी, नाचूँगी, नाचूँगी।

शक्ति का राज उसकी मां की छाती में ज्यों का त्यों दबा हुआ मां के साथ ही चला गया था। अब शक्ति थी और उसका राज़ था। शक्ति थी और उसके सीने में सुलग रही आग का सेक था। इस आग में वह दिन रात खौलती रहती। उसके घर वाले परेशान थे, पड़ौसी चकित थे, एक-एक करके वह अपनी सहेलियों से दूर होती जा रही थी, अपने

आप में खोई रहती थी ।

घबरा कर उसके पिता दुनीचन्द ने हकीमों, वैद्यों से उसका इलाज करवाना शुरू कर दिया । लेकिन शक्ति की हालत में कोई फ़र्क नहीं पड़ा । दिनों दिन वह कमज़ोर होती जा रही थी । कुछ हफ़्तों में ही उसका चेहरा झुलस गया था, उसका शरीर हड्डियों का पिंजर बन कर रह गया ।

स्यालकोट से अमन की कोई ख़बर नहीं आई थी । आज कई हफ़ते बीत चुके थे । उसका भला क्या रिश्ता था, भाई मूले की पत्नी के साथ कि वह किसी आने जाने वाले से उनकी कुशल क्षेम के बारे में पूछती । यह भी हो सकता था कि अमन भाई मूले की पत्नी को उसके ठिकाने पर पहुँचा कर करतारपुर लौट गया हो । सुना था वहाँ के लिये और भी कई रास्ते थे । यह भी हो सकता था कि वह स्यालकोट में नये प्यार की पेंगें चढ़ा रहा हो । अब तक तो वे लोग न जाने किस मंज़िल तक पहुँच गये होंगे । यह सोचते ही शक्ति के तन मन में आग सी सुलग उठती, उसके मन में आता कि वह अपने साथ कुछ कर बैठे।

इससे कहीं अच्छा होता कि वह मर जाती । उसकी माँ का भला क्या कसूर था कि उसने अपनी जान दे दी थी । मरना तो शक्ति को चाहिये था । शक्ति ने अपनी रहतल के मुल्यों का उलँघन किया था । लेकिन शक्ति यह मानने के लिये तैयार नहीं थी कि उसने कोई पाप किया है । अमन की मुहब्बत ने तो उसके कपाट जैसे खोल दिये थे । उसे अपने दिल में जैसे संपूर्णता अनुभव हो रही थी । उसके नयनों के सामने लाख सपने लटकने लगे थे ।

अरमानों से भरे अपने दिल को देख कर शक्ति को लगता था कि इतनी अमीर तो वह कभी नहीं थी । कभी उसके आँसू छलकने लगते, कभी उसके अँग मुड़ने लगते । कभी उसका रोम रोम व्याकुल हो उठता । कभी उसे अपनी नस नस में दर्द महसूस होने लगता ।

और शक्ति को यह सब अच्छा अच्छा लगने लगा ।

27

अमन की कोई ख़बर नहीं थी । कई महीने बीत गये थे। इतनी देर वह भला स्यालकोट में थोड़े ही रहि सकता था । ज़रूर करतारपुर लौट गया होगा । लेकिन शक्ति के यहाँ नहीं आया था । किस मुंह से आता ? उसे नहीं पता था कि घर की एक मात्र प्राणी जिसे उनकी हरकत का पता था, शक्ति की माँ अब नहीं रही थी । शक्ति के शोक के दिन तो कभी के ख़त्म हो चुके थे ।

अब तो शक्ति पहले की तरह घर में घूमती थी, जैसे वह पहले चारों तरफ़ राज करती थी । शादी के लायक़ जवान जहान बेटी, पंजाबी घरों में जिसके सर पर घर चलाने की पूरी ज़िम्मेदारी होती है, ताकि ससुराल जाने से पहले उसकी सिखलाई हो जाये ।

मातृभाषा पंजाबी के साथ ही शक्ति हिंदवी, फ़ारसी और अरबी की भी विदुषी थी । उसके पिता ने उसके लिये उस्ताद रख दिये थे, जो लगातार बरसों से उसकी पढ़ाई-लिखाई करवाते रहे थे । उसकी हमउम्र अच्छे अच्छे मुसलमान घरानों की लड़कियाँ

फ़ारसी अरबी के मुहावरों के इस्तेमाल में उसका मुक़ाबला नहीं कर सकती थीं। लेकिन जिस दिन से वह गुरवाणी में लीन हुई, जिस दिन से उसने बाबा नानक का दामन पकड़ा, शक्ति को सब कुछ फीका-फीका लगने लगा। दोनों वक्त बाबा जी के कमरे में हाज़िर होकर नित्तनेम करती और बहुत देर तक समाधि में अन्त्रध्यानि हो जाती।

अमन के साथ हुए हादसे के बाद जिस तरह उसकी माँ ने क्लेश में अपने प्राण त्यागे थे, बार-बार यत्न करने और अपने आपको समझाने के बावजूद वह उस तरफ़ अभी तक नहीं गई थी। न ही पहले की तरह उससे नित्तनेम ही हो पा रहा था। लगता था जैसे उसके रब्ब ने उससे दग़ा की हो। उसके भीतर एक विद्रोह मचलता रहता।

शक्ति सोचती, अगर यह गुनाह भी था तो यह उसका पहला गुनाह था ; कभी ऐसा भी हुआ है कि पहले क़सूर पर ही उसकी माँ उससे छीन ली जाये, उसका महबूब उसके लिये पराया हो जाये। उसने तो सोचा था कि अमन की होकर वह बाबा नानक के और भी नज़दीक आ जायेगी। उनके बसाये गाँव में दुल्हन बनकर जायेगी। उस मट्टी को अपनी आँखों से लगायेगी जहाँ बाबा नानक विचरते थे, जहाँ उन्हीं के स्वरूप दूसरे गुरू अँगद अब विराजमान थे। वह अमन की होना चाहती थी और उससे भी अधिक तीव्र इच्छा थी करतारपुर में जाकर बसने की। किस किस तरह के सपने वह देख रही थी।

और फिर अमन कितना सुँदर जवान था। एक ही नज़र में वह उसकी हो गई थी। उसके चेहरे से नज़र फिसल फिसल जाती थी। उसके दमकते गुलाबी गालों की गुलाबी आभा, उसका गोरा चिट्टा रंग, उसके नैनों की मस्ती, जैसे कोई जादू लुटा रहा हो। उसके ओठों से तरन्नुमभरे नग़में फूटते, मुंह से बोल बाद में निकलता, पहले से ही एक सँगीत लहरी वातावरण में तैरने लगती। ऊँचा लंबा, जैसे हाथ लगाने से मैला हो जायेगा, ना हिन्दू, ना मुसलमान। उसे तो ख़ुद बाबा नानक ने आशीर्वाद दिया था।

शक्ति दिन रात अमन की याद को सीने से लगाये, उसे मिलने की योजनायें बनाती रहती। उसने फ़ैसला किया कि बाबा जी की बरसी पर वह करतारपुर की यात्रा पर जायेगी। लेकिन इतनी लबी इन्तज़ार की घड़ियाँ वह कैसे काटेगी ? आख़िर किसी की ज़िंदग़ी में आकर कोई कैसे निकल सकता था ? जैसे मक्खन से बाल निकाला जाता है, उसी तरह अमन चुपचाप उसने रास्ते पर चला गया था। ऐसा तो किसी परदेसी ने भी कभी नहीं किया होगा।

एक तरफ़ महबूब की याद, दूसरी तरफ़ क़सूरवार होने का इल्ज़ाम ; एक तरफ गुरू घर के लिये श्रद्धा, दूसरी तरफ़ हार का एहसास, शक्ति को लगता जैसे वह फीता फीता हो रही हो, उसे हर तरफ़ से कुतरा जा रहा हो।

जब वह पाठ करने बैठती, उसका मन पाठ में नहीं लगता था। वह नाम सिमरन करने लगती तो अमन की याद उसे आकर घेर लेती थी। उस तक पहुँचने का कोई साधन नहीं था उसके पास। कोई तरीका नहीं था उसकी कुशलक्षेम जानने का। शक्ति को तो यह भी मालूम नहीं था कि अमन स्यालकोट में ही था या करतारपुर लौट गया था।

लौट गया होगा, आख़िर इतने दिन स्यालकोट में रूक कर उसने क्या करना था ?

उसका दिल कहता । लेकिन अगले ही क्षण उसे भाई मूले की पत्नी के कौल याद आते । वह तो अमन को अपना जवाई माने बैठी थी । ज़रूर उस औरत ने उसे अपने पास रोक लिया होगा, घर जवाई बनाकर उसकी और कोई औलाद भी तो नहीं थी । पति चला गया । पीछे रह गई अकेली विधवा । ढेर सारी जायदाद, ढेर सारा व्यापार । उसने तो शुक्र मनाया होगा कि अमन जैसा लड़का उसके क़ाबू आ गया है । हो न हो यही सोचकर वह अमन को करतारपुर से लाई होगी । मक्कार औरत । कैसे सहज भाव से कह रही थी – "मैं तो इसे अपनी बेटी के लिये रोकने का सोच रही हूँ । इतनी सुंदर उनकी जोड़ी बनेगी । इसे तो एक नज़र देखते ही मेरे मन ने कहा था, यह तो मेरी बेटी का सुहाग है ।"

शक्ति का मन करता था कि कहीं भाई मूले की पत्नी उसके नज़दीक होती तो वह उसका मुंह सिर नोंच डालती । वह सब लोगों को माफ़ कर सकती थी । अमन को जो उसे मिले बग़ैर चोरों की तरह लाहौर शहर छोड़ कर निकल गया था । वह अपनी माँ को माफ़ कर सकती थी – कुढ़ कुढ़ कर जो अपनी जाई का तिरस्कार करती हुई चली गई थी । लेकिन भाई मूले की पत्नी की याद आते ही शक्ति के तन बदन में आग लग जाती ।

और फिर एक नई मुसीबत आ खड़ी हुई । स्यालकोट से कोई निमन्त्रण पत्र लेकर आया– अगले महीने संग्रान्द के दिन भाई मूले की बेटी सुँदरी की शादी थी ।

लेकिन किसके साथ ? शक्ति यह जानने के लिये उत्सुक थी ।

स्यालकोट से आये व्यापारी को यह सब मालूम नहीं था । वह तो जिस दिन लाहौर आ रहा था, भाई मूले की पत्नी उसके यहाँ आई और मिठाई की एक थैली दे गई इस ताकीद के साथ कि भाई दुनीचन्द की बीवी ज़रूर ज़रूर इस शादी में शामिल हो ।

"उनके घर क्या ऊँचा लम्बा, गोरा चिट्टा कोई मेहमान था ?" इस तरह का सवाल एक अजनबी से नहीं करना चाहिये था । लेकिन शक्ति से रहा न गया । घर के बाकी लोग उसके मुंह की ओर ताकते रह गये ।

अपनी इस उतावली पर शक्ति पानी पानी हो गई । उसे बेहद शर्म आई और वह चुपके से उठकर अपने कमरे में चली गई ।

"वही होगा, वही होगा ।" वह अपने आप से बुड़बुड़ा रही थी "उस जादूगरनी ने उस पर जादू कर दिया होगा । इतने दिन अपने यहाँ रख कर ख़ातिरें की होंगी । और फिर उसे फँसा लिया होगा । अमन जैसे भोले लड़के का क्या है । जिसने बातों में भरमाया, उसी के साथ चल पड़ा ।"

शक्ति को खाना पीना कुछ नहीं भाता था । उसके भीतर प्रचण्ड अग्नि की लपटें उठ रही थीं ।

घरवालों ने भाई मूले की पत्नी के निमन्त्रण को सुना था और वह इस बात को भूल भी गये थे । लेकिन शक्ति उसे पल्ले से बाँधकर बैठ गई । एकाध दिन रूक कर वह कहने लगी, वह तो शादी में शामिल होने के लिये स्यालकोट जायेगी । इस तरह उसकी सैर भी हो जायेगी ।

घर वालों को इसमें क्या ऐतराज़ हो सकता था ?

28

स्यालकोट जाने के लिये शक्ति तैयार हो तो गई, लेकिन मन ही मन एक आशंका उसे घुन की तरह खाये जा रही थी । अगर सुंदरी की शादी अमन से हो रही थी तो वह यह सब कैसे देख सकेगी ? वह तो कुछ खाकर मर जायेगी । अमन कैसे उसे मुंह दिखायेगा ? उसे तो धरती में समाने की भी जगह नहीं मिलेगी ।

शक्ति सोच रही थी, बेशक उसने मिन्नतें करके उसे बुलाया था, लेकिन अगर किसी की मर्ज़ी न हो तो कोई किसी के बुलाने से थोड़े ही आता है ! और जब उन्होंने पहली बार एक दूसरे को देखा, उनकी नज़रें कैसे उलझ कर रह गई थीं । जैसे एक दूसरे में धँस रही हों । आलिँगन में गुँथे साँपों का जोड़ा एक दूसरे के गिर्द लहरा रहा हो । कितनी देर तक वे अपलक एक दूसरे को देखते रहे थे । और फिर खाने के वक्त दस्तरवान पर वह उसके सामने बैठता था । कभी वह शक्ति के सामने बैठता था कभी शक्ति उसके सामने बैठती थी । जो शक्ति उसे पेश करती वही चीज़ खाता एक बार जान बूझ कर शक्ति ने सिर्फ़ दाल का डोंगा उसकी तरफ बढ़ाया- न कोई सब्जी, न गोश्त । शक्ति ने देखा अमन सिर्फ़ दाल के साथ रोटी खाकर उठ खड़ा हुआ था । शक्ति को उसके भोलेपन पर बहुत लाड़ आया। शक्ति ने ज़िद करके दस्तरवान पर रखी मीठी चीज़ खिला कर उसे जाने दिया ।

और फिर एक दिन शाम के वक्त वह बैठक में से निकलकर तेज़ चाल से बाहर जा रही थी । पर्दे के पीछे से अमन भीतर आ रहा था । शक्ति का दुपट्टा अमन के कँधे से छू गया । शक्ति को लगा जैसे किसी ने उसे झकझोर डाला हो । सर से पैरों तक जैसे कोई लहर उसके बदन में दौड़ गई । बहुत देर तक शक्ति को अपने आप में से एक भीनी भीनी ख़ुशबू आती रही । उसका अँग अँग एक अलौकिक स्वाद से भर गया था उसके मुंह में जैसे किसी ने शहद की मिठास घोल दी थी ।

अगर अमन के साथ उसका कोई रिश्ता नहीं था तो वह बार बार क्यों उसे सपने में दिखाई देता था ? इतनी उम्र बीत गई- उसने कभी किसी का सपना नहीं देखा था । जबसे उनकी मुलाक़ात हुई, बस वह शक्ति के सपनों पर कब्ज़ा करके बैठ गया । कभी चुपके से पीछे से आकर अपनी हथेलियों से उसकी पलकें ढाँम लेता था । जब शक्ति उसका नाम पुकारती तब वह अपने हाथ हटाता था । हर बार वह सोचती थी कि उसे इतनी जल्दी उसकी आँखें मूँदने वाले का नाम नहीं बूझना चाहिये था । कुछ देर और अमन के हाथों के स्पर्श का आनन्द उठा लेती, कुछ देर और उस स्पर्श से अपने आप को सरशार कर लेती।

और फिर शक्ति इस खेल की आदी हो गई । उसे दिन में जागने के क्षण फीके फीके लगते । उसे रात के अँधेरे की प्रतीक्षा रहती । कब दिन डूबे और वह अपने महबूब के साथ आँख मिचौली का खेल शुरू करे ।

उस दिन बाबा जी के कमरे में बैठी पाठ कर रही थी, अचानक उसका अंग अंग मचल उठा था । उसका मन पाठ में नही लग रहा था । उसने "धन्न गुरू नानक" ,"धन्न बाबा नानक" का सिमरन शुरू कर दिया । उसे क्या मालूम था कि उसकी विनती इतनी जल्दी सुनी जायेगी । इतनी जल्दी कोई बन्द दरवाज़ा खोल देगा । कोई कच्चे धागे से बँधा

इस तरह उस तक पहुँच जायेगा । उसे तो तनिक भी याद नहीं था, कब वह उस कमरे में आया, कब उसने एक नज़र में उसका स्वागत किया, कब वे नज़रों ही नज़रों में आलिंगनबद्ध हो गये । कब वे एक दूसरे में जैसे विलीन होने लगे । एक दूसरे के भीतर ही भीतर उतरे जा रहे थे । जैसे कोई आकाश में उड़ रहा हो । और फिर उसकी माँ का उस कमरे में कँदील पकड़े क़दम रखना । उसने एक नज़र इन दोनों पर डाली । शक्ति और अमन ने एक नज़र उसे देखा, फिर धड़ाम से जैसे कोई उड़ता पंछी धरती पर आ गिरा हो। निढाल होकर शक्ति बहुत देर तक वहीं की वहीं खड़ी रही । उसे पता ही नहीं चला, कब अमन उसकी नज़रों से अपने आप को अलग करके चला गया था ।

उसके बाद मन मसोस कर वह अपने बंद कमरे में बेहाल पड़ी रहती थी । एक दिन, दो दिन और तीसरे दिन सुबह वह उसे मिले बग़ैर चल दिया था । अपने पीछे शक्ति को सूली पर टँगा छोड़ कर और उसकी माँ को शूलों की सेज पर लेटा छोड़ कर चला गया था ।

उसे भूलना शक्ति के लिये मुश्किल था । उसके रब्ब ने उसके साथ बेहद अन्याय किया था, इसके बावजूद स्यालकोट के रास्ते में उसे जिस किसी धर्मशाल का नाम सुनाई देता, वह वहाँ ज़रूर हाज़िर होती । हाथ जोड़ती, अपनी भूलें बख़्शवाती, फिर ईश्वर से अपने मन की मुराद माँगती और उसकी एक ही माँग थी- अमन । ज्यों ज्यों उसकी मंज़िल नज़दीक आती जा रही थी, त्यों त्यों वह सहमी हुई हर छिन हर पल जाप करती थी । अँधेरे-सवेरे, अन्त्रध्यान हो कर विनती करती रहती । गुरू नानक की दहलीज़ पर धरना देकर बैठी रहती, जिसके द्वार पर उसका यह हाल हुआ था । जैसे किसी ने उसके गालों पर चटाख़ पटाख़ चपेड़ें मारी हों ।

स्यालकोट पहुँच कर भाई मूले के घर जाने से पहले वह पीर हम्ज़ागोश के आस्ताने पर रूक गई । उसने गुँब्द में पड़ी दरार को देखा जिसके रास्ते से रौशनी चलीहा काट रहे दरवेश के हुजरे में जा घुसी थी और हम्ज़ागोश गुरू बाबे के चरणों में आ गिरा था । शक्ति ने पीर के कुँए का पानी पिया जहाँ आकर बाबा नानक विराजमान हुए थे । फिर उसने गुरू बाबा के दर पर मन्नतें माँगी । हाथ जोड़े । तौबा की । माथा रगड़ा । उसकी हमसफ़र औरतें देख देख कर हैरान हो रही थीं, कितनी श्रद्धा थी इस लड़की में । कितना सिदक था भाई दुनीचन्द की जाई में ! यह तो अपने पिता से भी आगे निकल गई थी । "अपनी माँ की गद्दी पर जा बैठी है ।" जो कोई उसे देखता यही कहता । लाहौरनों को क्या लगता इतनी पाठ पूजा से । लाहौरिये तो खाते पीते हैं, ऐशें उड़ाते हैं । मर्द दारू पीते हैं, मुजरे सुनते हैं; औरतें ओंठों पर सक्क* मल कर, सजधज कर, इत्र और फुलेल की ख़ुशबुओं में मदहोश पड़ी रहती हैं ।

भाई मूले के घर की तरफ़ बढ़ते हुए हर क़दम के साथ शक्ति के दिल की धड़कन बढ़ती जा रही थी । पता नहीं क्या होने वाला था । उसकी किस्मत में क्या लिखा था ? एक बाबा नानक का आसरा था । बार बार प्रार्थना में उसके हाथ जुड़ रहे थे, बार बार मन ही

* अखरोट के छिलके की दातुन जिससे ओंठ लाल हो जाते हैं ।

मन सर नवा कर वह अरदासें कर रही थी ।

भाई मूले के घर पहुँची तो लाहौर से आये मेहमानों को देखकर सारे लोग ख़ुशी से खिल उठे । ख़ास तौर पर दुनीचन्द की परी जैसी बेटी को देख कर तो हर कोई गद्गद् हो रहा था ।

इधर शक्ति की नज़रें चारों तरफ़ अमन को ढूँढ रहीं थीं । सीने पर हाथ रख के, अपने दिल को दोनों हाथों में थाम कर वह अपनी क़यामत का इन्तज़ार कर रही थी ।

29

शक्ति इसी शशोपंज में थी कि उसे दुल्हिन से मिलाने के लिये ले जाया गया । सुंदरी माइयों पर बैठी थी । पिछले दो दिनों से न वह नहाई थी, न उसने बालों में कंघी की थी, न कपड़े बदले थे, न ही वह अपने कमरे से बाहर जा सकती थी । उसका साथ देने के लिये अड़ौस-पड़ौस की सहेलियाँ थीं । कभी वे इधर उधर की कहानियाँ सुनाने लगतीं, कभी गाने लगतीं ।

जब वह सुंदरी के कमरे में घुसी तो शक्ति की पलकें खुली की खुली रह गई । अँधेरे किये गये कमरे के कोने में जहाँ दुल्हिन को बैठाया गया था, जैसे एक लौ जगमगा रही थी । इतनी हसीन लड़की तो शक्ति ने कभी देखी ही नहीं थी । सुंदरी सचमुच सुन्दर थी । बला की ख़ुबसूरती । उसका रँग, उसका रूप उसके बिना सँवारे बिखरे हुए बाल, उसके दुपट्टे के पल्लु में जैसे सँभल न रहे हों । सुंदरी ने अपनी माँ से शक्ति के बारे में ढेर सी बातें सुन रखी थीं । वह इतने अमीर ख़ानदान की, इतने बड़े शहर की, इतनी पढ़ी लिखी लड़की से मिल कर बार बार अपने सर को ढँकने की कोशिश कर रही थी । लेकिन उसके घने घुँघराले बाल उसके क़ाबू में नहीं आ रहे थे ।

गँदुमी रंग, सुंदरी गोरी नहीं थी, लेकिन गोरियाँ जैसे उसका पानी भरती हों । पान के पत्ते जैसा मुखड़ा, शरमाया, सकुचाया हुआ चेहरा, अछूत कँवारेपन की जैसे प्रतिमा हो । गहरी काली, अधमूँदी आँखें, एक गर्मी थी उनमें, एक पहचान, एक लगाव । खुला चोड़ा, जगमगाता माथा, जैसे आसती का कोई शिलालेख हो, मुहब्बत का मील-पत्थर । रसीले ओंठ जिन पर कोई नगमें थिरक रहे थे, सुस्ता रहे थे । तराशी हुई ठुड्डी, मुँह खोलती तो गड्ढा पड़ जाता । उसके गोल गुदले गालों में अनेक गड्ढे पड़ जाते ।

इतने में माइयों पर बैठी दुल्हिन के लिये पंजीरी आ गई । आज की पंजीरी उसके ननिहाल से आई थी । घी, नारियल, मेवे, छुहारे, खजूरें, तिल और ढेर सी और चीज़ें । लड़कियों मुट्ठी भर भर कर सुंदरी के मुँह में डालने लगीं । "पंजीरी खा, सुना है लड़का तो मुगदर भाँजता था और कुश्तियाँ लड़ता था अखाड़े में ।" "घाघरा पहन कर जब तू ससुराल के गाँव डोली में से निकलेगी, तेरी कमर में बल पड़ जायेंगे ।" "तेरे जोबन को देखकर अड़ौस पड़ौस की बहुओं के कलेजे में हौल पड़ जायेंगे ।" सुंदरी की सहेलियाँ उसे छेड़ रही थी ।

* शादी से पहले दुल्हिन को दिये की लौ के सामने बैठा दिया जाता है । (अनुवादक)

लेकिन यह कौन था जो मुगदर फेरता और पहलवानों के अखाड़ें में कुश्तियाँ लड़ता था ? शक्ति को अभी तक नहीं मालूम था कि सुंदरी की मँगनी किसके साथ हुई थी, वह किसके साथ ब्याही जा रही थी । एक झिझक, एक डर कि कहीं उसकी आशंका सच ही न साबित हो जाये, वह मुंह खोल कर किसी से पूछ भी नहीं रही थी, न ही आसपास के लोग इस बात को ज़रूरी समझते थे कि आने वाले हर मेहमान को यह बताया जाये कि दो दिनों बाद घोड़ी पर चढ़कर उनके यहाँ आने वाला लड़का कौन था । शक्ति को तो अभी तक यह भी मालूम नहीं था कि बारात कहाँ से आ रही थी । उसके जी में आता कि कोई उसे यह सब बता दे । कभी सोचती कि यह राज़ जितनी देर तक उससे छिपा रहे अच्छा है । क्या मालूम असलियत को जान कर कौनसा क़हर उस पर ढहने वाला था । एक विस्फोट होगा और चारों तरफ़ तहस नहस कर डालेगा, उसके सपनों का महल ढेर होकर रह जायेगा ।

यह ख़्याल आते ही शक्ति मन ही मन "धन्न गुरू नानक", "धन्न बाबा नानक" का सिमरन करने लगती । अपने आप उसके हाथ जुड़ जाते, उसके अँग अँग से प्रार्थनायें फूट कर निकलती थीं ।

अजब उलझन थी । और इधर सुंदरी के हुस्न का चमत्कार देखकर शक्ति का सारा गुमान ढेर हो गया था । इस तरह की सुंदर लड़की को तो कोई भी चुन सकता था । क़ुदरत में उसके लिये कोई मनाही नहीं थी । कोई चीज़ बढ़िया हो, चुनिन्दा हो, उस पर पहला हक़ इस तरह की हसीना का होता है । जिसे रब्ब ने इतना सुंदर बनाया हो, दुनियाँ की हर सुन्दर चीज़ पर उसका सहज अधिकार होता है । पहले वह, फिर कोई और । उसकी पसँद के बाद जो बचे, बाक़ी लड़कियों का । बस उसी की हक़दार हैं । मन ही मन ऊँची पगड़ी वाले पिता भाई दुनीचन्द की बेटी अपने आप को उन्हीं लड़कियों में गिनने लगी थी। सुंदरी को तो रब्ब ने फ़ुर्सत में बनाया था । शक्ति सोच रही थी कि बिना नहाये, मैले कपड़ों में यह लड़की अगर ऐसी दिखती है तो फेरों के लिये जब सजेगी, जब डोली में बैठ कर यह अपने दूल्हे के साथ जायेगी तब तो लोगों की आँखें चौंधिया जायेगी ।

आख़िर शक्ति से रहा न गया, और उसने आगे बढ़ कर सुंदरी का हाथ अपने हाथों में ले लिया । नर्म, नाजुक उँगलियां जैसे मक्खन में गूँधी गई हों । हाय, जब इन हथेलियों में मेंहदी लगेगी, तो यह चुंबक की तरह फड़फड़ कर प्यार की सांकलों से जकड़ लेंगी ।

उसका हाथ अपने हाथ में लेकर शक्ति की आँखें जुड़ गई । इस तरह की सुन्दरता के आगे उसने हथियार डाल दिये । उसे भूलकर अगर अमन इस तरह की हसीना को दिल दे बैठा था तो उसके सौंदर्यबोध की दाद देनी पड़ेगी । इस तरह के सौंदर्य के सामने तो फ़रिश्ते भी सर झुकाते होंगे । इस तरह का रूप समय को बांध सकता है, चाँद तारों की परिक्रमा रोक सकता है ।

इस तरह बेचारगी के एहसास के बीच शक्ति के कानों में सुदरी की किसी सहेली के बोल पड़े–

"लड़का तो नौकरी से आज भी नहीं लौटा ।"

"कल लौटेगा। ख़बर आ गई है।"

"लौटते ही उसे "माईयों" पर बैठा दिया जायेगा।"

"ताकि और तांक झांक न कर सके।"

शक्ति यह क्या सुन रही थी ? यह तो अमन नहीं हो सकता था। यह तो अमन नहीं हो सकता था !! यह तो अमन नहीं हो सकता था !!!

और फिर जैसे उससे रहा न गया, शक्ति ने आगे बढ़ कर सुंदरी की गालों को चूम लिया। एक चुँबन दायें गाल पर एक बायें गाल पर।

"मेरी अम्मी जैसा मुझे बताया करती थी, आप तो उससे भी ज़्यादा सुन्दर हैं।" सुंदरी ने बतौर शुक्राने के शक्ति से कहा।

"हाये ! आपके रूप के सामने तो हर कोई मात है," शक्ति बोली।

"आपकी अम्मी नहीं आये। उनकी कहानियाँ सुनाते हुए मेरी माँ की जीभ नहीं थकती।"

शक्ति ने जानबूझ कर शादी वाले घर में अपनी माँ की मृत्यु की ख़बर किसी को नहीं बताई थी। उसने सोचा था कि अगर ज़रूरत पड़ी तो लौटते वक्त किसी बहाने वह इसका ज़िक्र कर देगी।

"मेरी समझ में यह नहीं आता, माइयों पर बैठी लड़की को इस तरह भँगिन क्यों बना दिया जाता है। बाबा मैं तो अपने साथ कभी ऐसा नहीं होने दूँगी," एक सहेली बोली।

"तभी तो तेरी बारी नहीं आ रही। बड़ी आई मर्यादा को तोड़ने वाली," दूसरी सहेली ने उसे टोका।

असल में बात यह है कि उबटन मल कर नहाते वक्त माइयों पर बैठी लड़की के कपड़े नाइन को दे दिये जाते हैं। "एक और ने राय दी।" इस लिये जितने पुराने और मैले कपड़े हों, उन्हें ही उतार कर दे दिया जाता है।

"यह बात नहीं," अब शक्ति बोल रही थी। माइयों पर बैठी लड़की को नहलाते नहीं, बालों में कंघी नहीं करते, कपड़े नहीं बदलते, ताकि उबटन लगा कर जब वह स्नान करे, नया जोड़ा पहने तो उसका रूप सवाया होकर निखरे, वह और भी सुन्दर लगे। दुल्हिन को देख कर लोगों का मन न भरे।

"हमारी लड़की में और सुन्दर लगने की गुजाइश ही नहीं।" और फिर सबकी सब हसरत भरी नज़रों से सुँदरी के जोबन को देखने लगीं।

30

अगले दिन सुबह अभी सुंदरी सो कर भी नहीं उठी थी कि आँगन में कुछ नये मेहमानों की गहमा गहमी सुनाई दी।

यह वह क्या देख रही थी। यह तो अमन था और उसके साथ ऊँची लम्बी मूर्त जैसी एक औरत थी, जिसे वह बार बार "बीजी", "बीजी" कहकर संबोधित कर रहा था।

उसे देखकर शक्ति की आँखें मूंद गई। यह तो सपना था। उसने अपने आप को

समझाया कि यह तो सपना है ।

अगले ही क्षण उसने अपनी बाँह में चुटकी काटी, नहीं, यह सपना नहीं था । यह तो वही था । फूलों का बंजारा । उसका अमन ! बाबा नानक ने उसकी प्रार्थना सुन ली थी । शक्ति आनन्द में विभोर होकर पलंग पर पड़ी रही । उसे लगा जैसे वह अमन की बाँहों में लिपटी हो । क्षणभर में उसने अपने को फूल जैसे हल्का महसूस किया । बस एक ख़ुशबू और कुछ भी नहीं । जैसे वह हवा में तैर रही हो । एक नग़मा जो आसपास लहरा रहा था । एक स्वाद जो उसकी जीभ पर घुल रहा था । शक्ति एक बार, दूसरी बार, तीसरी बार हिम्मत करके उठ खड़ी हुई ताकि उठकर वह अपने महबूब का स्वागत करे । लेकिन उससे हिला नहीं जा रहा था । शक्ति एक उन्माद में लेटी रही । लेटे लेटे उसकी आँख लग गई ।

बहुत देर तक नहीं । थोड़ी देर बाद उसकी आँख खुली, वह क्या देखती है । सुंदरी आँगन में आई । अमन और उसकी अम्मी के साथ घुलमिलकर बातें कर रही थी । जैसे उनकी क़दीमी जान पहचान हो ।

घर आये मेहमानों में से बार बार कोई न कोई उसे याद करवाता, ''नी कुड़िये, तू तो माइयों पर बैठी हुई है । यह बदशगुनी है ।''

हर बार सुँदरी जवाब में कहती– ''हुआ करे'' और लोगों को चुप करा देती ।

''हाये, साथ साथ खड़े कितने सुन्दर लग रहे हैं ।'' शक्ति ने अपने आप से कहा, ''जैसे एक दूसरे के लिये बनाये गये हों । अमन सुंदरी से हसीन, सुंदरी अमन से कहीं ज़्यादा प्यारी ।''

एक सरूर में शक्ति की आँखें मूँद गईं । एक नशे में मदहोश वह, अलसाई अलसाई सी पलँग पर पड़ी थी । और काफ़ी देर बीत गई ।

अबकी बार जब उसकी आँख खुली तो सुंदरी और अमन उसके कमरे से बाहर बरामदे में, खिड़की के नीचे खड़े फुसफुसाकर बातें कर रहे थे । उन्हें नहीं मालूम था कि बँद खिड़की के पीछे पलँग पर लेटी शक्ति उनकी बातें सुन रही थी– ''अभी भी गिरे बेरों का कुछ नहीं बिगड़ा,'' सुंदरी मिन्नत कर रही थी ।

''क्या मतलब ?'' अमन सुंदरी की बात सुन कर सुन्न पड़ गया था ।

''मतलब साफ़ है, अगर तू बाँह पकड़े.....''

''तो फिर ?''

''हम कहीं निकल चलेंगे ।''

''सुंदरी, तुझे नहीं भूलना चाहिये कि तू माइयों पर बैठी है । अभी कोई आकर तुझे कान पकड़ कर ले जायेगा ।''

''मैं माइयों पर बैठी हूँ, तो तेरी दुल्हिन बनने के लिये । मैंने नहीं किसी सिपाही के पल्ले पड़ना । ढोल सिपाही ! हर चौथे दिन वह किसी न किसी मुहिम पर जाता रहेगा और फिर कोई मौसेरे भाई के साथ भी भला सेज सांझी करता है ?''

''तेरी माँ का फ़ैसला है । वह अपनी बहन के साथ दग़ा नहीं कर सकेगी । और अगर वह अभी तक राज़ी नहीं हुई तो अब बेचारी विधवा औरत के लिये कोई परेशानी न

पैदा कर ।''

''मुझे तो तेरा इन्तज़ार था । अब तू आ गया है । मैं तो तेरे साथ फेरे लूंगी । चाहे दुनियाँ इधर से उधर हो जाये ।''

''और तेरी माँ ?''

''उससे मेरी मौसी तापो ने ज़बरदस्ती यह रिश्ता लिया है । उसकी ज़रा भी मर्ज़ी नहीं थी । वह तो लाहौर से तुझे लाई थी अपनी जाई के लिये । मैंने अपने कानों से सुना है, वह एक दिन ताई रूक्को को बता रही थी ।''

''चलो जो हो गया सो हो गया । अपनी अपनी क़िस्मत होती है ।''

''मेरी माँ छल छल आँसू बहा रही थी । कहती थी मैं तो गुरू बाबे की नगरी से लड़का ढूंढ कर अपने साथ लाई हूँ । उनकी जोड़ी कितनी सुंदर बनती ।''

''सुंदरीये, अब पुरानी बातों को याद करके काहे का रोना । जो हो गया सो हो गया । अब तो पानी सर से ऊपर गुज़र चुका है ।''

''पता नहीं कितनी देर तक अमन सुंदरी को समझाता रहा । पता नहीं कितनी देर तक सुंदरी उसके साथ बहस करती रही । भीतर, अपने कमरे के पलँग पर लेटी शक्ति को उनकी बातें सुन कर ग़श आ रही थी । उसके हाथ पैर मुड़े जा रहे थे । कितनी देर तक वह बेहाल पड़ी रही।''

मालूम नहीं वह और कितनी देर तक पड़ी रहती अगर उबटन लगाने की रस्म के वक्त लोगों को उसकी याद न आती । शक्ति शादी में मेहमान बनकर आई थी, इस बात से अमन बेख़बर था । अमन को भी उसी वक्त पता चला । लोगों की भीड़ भाड़ थी । शादी के घर का शोर शराबा, आपाधापी, कानों पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती थी । आत्म सम्मान वाली लाहौरन शक्ति को इस बार होश आई तो उठकर उबटन मलने की रस्म में जाकर शामिल हो गई ।

घर के आँगन में चौकी बिछा कर सुंदरी को उस पर बैठाया गया था । उसके पैरों के तलुओं के नीचे ढेर सी रेज़गारी रखी थी । जौं और चने के आटे को तेल में गूँध कर, उसमें हल्दी मिला कर उबटन तैयार किया गया था । सबसे पहले कोरे कुज्जे में उबटन भर कर सुहाग की लट में उबटन छुआया गया । फिर शरीके की हर औरत लड़की के शरीर पर उबटन मलने लगी । साथ में हँस रहीं थीं । मज़ाक कर रहीं थीं । सुंदरी के जोबन की सराहना कर रहीं थीं । चुपचाप यह सब होता देख रही सुंदरी ने हृदयविदारक आवाज़ में गाना शुरू कर दिया :

वटणा मैं नहीं मलदी, शाबा !
क्यों कुड़ीए, तू क्यों नहीं मलदी ?
दादे दी सहूँ, बाबे दी सहूँ,
लोकाँ दी बदनामी कोलों अन्दरों अन्दर डरदी
वटणा मैं नहीं मलदी,
इक वटणा, दूजा जौआँ दा आटा

पीठा चक्की भलेरी ।
जाँ बटणे दा वेला होइआ
झुल पई हनेरी
वटणा में नहीं मलदी ।
बाबला वर इह की दिता ई ?
काला मैं ना भावे
कोठे ते चढ़ वेखण लगी
सावण दी घटा आवे
वटणा मैं नहीं मलदी ।
बाबला वर इह की दिता ई ?
मघरा मैं न भावे
कोठे ते चढ़ वेखण लगी
*गीटा रुड़दा आवे ।
वटणा मैं नहीं मलदी
बाबला वर इह की दिता ई ?
मैं ना मैंढ़े जिहा
दस पकावाँ वीह पकावाँ
चप्पा ना रहिँदा बेहा
वटणा मैं नहीं मलदी ।

यह क्या हो रहा था ? सुहाग के गीत गाने की बजाये सुंदरी ने यह कौन-सी रागिनी शुरू कर दी थी ? खुद रो रही थी, आगे पीछे सब की पलकें गीली हो रही थीं ।

31

बात यूँ हुई । जब भाई मूले की बीवी करतारपुर जाने के लिये तैयार हुई तो उसने अपनी बड़ी बहन को बुलवा भेजा ताकि उसके पीछे उसकी जवान जहान बेटी सुंदरी का ध्यान रखे, और फिर इतने बड़े घर की देख-रेख भी तो करनी थी । अनगिनत मेहमान आते रहते थे । जिस भी रिश्तेदार को स्यालकोट में कोई सरकारी काम होता, लेनदेन का मामला होता, उनके घर आ टिकता ।

जिन दिनों सुंदरी की मौसी उनके यहाँ ठहरी हुई थी, उसका बेटा जो फ़ौज में बँदूकची था, अपनी माँ को मिलने आया । छोटा क़द, मैला रंग, लेकिन फ़ौजियों की हेकड़ी । सुंदरी को देखते ही उस पर लट्टू हो गया । उस पर क़हर का जोबन उतरा था ।

माँ इसे समझाती, मौसी की बेटी के साथ कैसे तेरी जोड़ी बनेगी, लेकिन वह तो कुछ सुनने को तैयार नहीं था । कहता, शादी करूँगा तो सुँदरी के साथ, नहीं तो कँवारा रह कर सारी उम्र काट लूँगा । उसकी माँ बहुत तंग आ गई थी ।

---

* खेलने का गोल पत्थर ।

उधर सुंदरी उसे किसी गिनती में नहीं रखती थी। उसका नाम तक लेने को तैयार नहीं थी। सीधे मुँह उससे बात नहीं करती थी। इधर छुट्टी पर आया फ़ौजी अपनी ज़िद पर अड़ा हुआ था।

एकाध बार उसने सुंदरी की ओर हाथ भी बढ़ाया, लेकिन सुंदरी ने उसे फटकार दिया। जहाँ मामला यहाँ तक पहुँच गया हो, वहाँ मंगनी, शादी की बात कैसे चले। तब भी उसकी माँ को भरोसा था कि सुंदरी की माँ उसका कहना कभी नहीं टालेगी। बहनों में हमेशा बेहद प्यार रहा था।

और वही बात हुई, इधर भाई मूले की बीवी अमन के साथ लाहौर से लौटी उधर उसकी बहन अपने बेटे का दुखड़ा ले बैठी। लड़के ने उल्टी खाट पकड़ ली थी। माँ बेहद तँग थी। छुट्टी पर छुट्टी बढ़ा रहा था। माँ सोचती अगर कहीं उसकी नौकरी छूट गई तो फिर उसे कोई नहीं पूछेगा। ठलुआ आवारागर्दी करता फिरेगा। शक्ल सूरत तो पहले ही से गई गुज़री थी।

सुंदरी की माँ ने सुना तो उसके होश उड़ गये। उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। सपनों का वह महल जिसे वह कई दिनों से बना रही थी, उसके क़दमों में ढेरी हो गया था। सचमुच अपनी बड़ी बहन को इन्कार करना उसके लिये मुमकिन नहीं था। उसकी हर बात उसने श्रद्धा से पूरी की थी। इस बहन के साथ तो वह खेलकर बड़ी हुई थी, सुँदरी की माँ पर लाखों अहसान उसने किये थे। मजाल है वह उसकी किसी बात पर इन्कार कर दे। और जब उसके एकलौते बेटे की ज़िंदगी मौत का सवाल था, वह कैसे उसका साथ छोड़ देती।

एकाध दिन ना नुकर करके, टालमटोल करके, आख़िर सुंदरी की माँ ने हथियार डाल दिये। उसकी बहन की ज़बरदस्त ज़िद थी। वह बेचारी भी क्या करती ? उसके बेटे ने उसकी जान सोंसत में कर रखी थी।

मन ही मन भाई मूले की बीवी अमन के सामने अपने को झूठा महसूस कर रही थी। अपने को छोटा महसूस कर रही थी। इतना सुन्दर, इतना सुशीन लड़का उसके हाथों से निकल जायेगा।

इधर अमन को देखकर एक ही नज़र में सुंदरी अपना दिल उसे दे बैठी। जैसे किसी पर पागलपन सवार हो गया हो, अमन को देखकर उसकी नज़रों की भूख नहीं मिटती थी। एक तरफ़ उसकी माँ ने अपनी बहन को सुंदरी के रिश्ते का वचन दे दिया, दूसरी तरफ़ सुँदरी ने अपना सब कुछ अमन पर न्यौछावर कर दिया। दिन रात उसी के सपने देखती। अमन की उस घर में जैसी ख़ातिरें होने लगीं थीं, उन्हें देखकर सुंदरी की माँ को बहुत डर लगने लगा था। लेकिन उसे इस बात पर भी निश्यच था कि उसकी बेटी में यह मज़ाल नहीं थी कि उसकी बात टाल जाये। बेशक अल्हड़ थी, लाड़ली थी, लेकिन बेहद आज्ञाकारी थी। उसने तो बेटों की तरह माँ का ख़्याल रखा था, ऐसा कभी नहीं हुआ कि माँ के मुंह से निकली कोई बात पूरी न हुई हो। उसकी हर बात जैसे पत्थर की लकीर थी।

लेकिन दिल का तकाज़ा, अमन को देखते ही सुंदरी के सारे वादे, सारे इक़रार धरे

के धरे रह जाते ।

अमन को देखकर सुंदरी को लगता जैसे कोई शहसवार, एक के बाद दुसरी मुहिम में जीतें बटोरता हुआ सरपट चाल से उसके दिल में घुसा चला आ रहा हो । उसे ख़ास तौर पर चाव तब चढ़ता जब उसे महसूस होता कि अमन अपने आपको बचा बचा कर रख रहा हो । जैसे वह अपना दिल किसी को बतौर अमानत दे आया हो । जैसे कोई हसीन झरोखा हो जो भीतर से खाली हो ।

सुंदरी जैसी हसीन लड़की तो उड़ते पक्षियों को धरती पर गिरा लेती थी । अमन जैसा नौजवान भला अपने आप को उसके जादू से बचा सकता था ? दो दिन, चार दिन, दस दिन बीतने पर सुंदरी ने उसे अपना राज़दान बना लिया । अमन उसे हमेशा मना करता रहता, हमेशा याद दिलाता कि उसकी पहली ज़िम्मेदारी अपनी विधवा माँ के प्रति थी, जिसने उसे इतने लाड़ से पाला था । वह तो उसके पति की निशानी थी, जो उसके एक छोटे से झूठ के पीछे अपनी जान ग़वा बैठा था । अगर सुंदरी की माँ भाई मूले को भीतर कोठरी में छिपाकर बाबा नानक से यह न कहती कि उसका पति कहीं बाहर गया है तो कभी उसे साँप न डसता, सब लोग यही कहते थे । सुंदरी तो तब बच्ची थी । उसने तो यह सब अड़ौस पड़ौस से सुन रखा था ।

अमन को हमेशा डर लगा रहता था, कहीं वही कुछ न हो जाये जो लाहौर में शक्ति के साथ हुआ था । वह अपने को बचा बचा कर रखता था । लेकिन सुंदरी का इश्क, सुंदरी का हुस्न जैसे वह बर्दाश्त नहीं कर पा रहा था । और फिर एक दिन आया जब जवान जहान लड़के ने हार मान ली। हार तो मान ली लेकिन वह अगले ही दिन करतारपुर लौट गया । सुंदरी ने लाख बार मना किया लेकिन उसने एक न सुनी ।

सुंदरी की माँ न इधर के क़ाबिल थी न उधर के क़ाबिल थी । ज़िन्दगी ने उसके साथ अजब खिलवाड़ किया था । जिस लड़के को वह एक तरह से भगाकर लाहौर से लाई थी, अपने घर पहुँच कर वह उसे अपना नहीं सकती थी । उसे इस बात पर पूरा यकीन था कि भाई दुनीचन्द की पत्नी अमन की प्रशंसक थी । उसका बस चलता तो वह उसे अपनी बेटी के लिये काबू कर लेती, लेकिन संयोग से सुंदरी की माँ ने पहल की थी । उसकी सहेली शराफ़त के मारे ख़ामोश रही । फिर किसी और उलझन के पैदा होने से पहले ही भाई मूले की बीवी उसे जैसे ज़बरदस्ती छीन कर चुपचाप स्यालकोट ले आई थी ।

अमन के करतारपुर रवाना होने वाले दिन सुंदरी ने उससे एक वचन लिया था कि वह उसकी शादी के दिन ज़रूर उसके पास होगा । अगर सुंदरी को डूबना ही है तो वह अपने महबूब की मौजूदगी में डूबेगी ।

32

शक्ति एक अकथनीय संशय की सिथित में थी । जिस नौजवान को वह दिल दे बैठी थी, जिसकी मुहब्बत के आवेश में उसके क़दम लड़खड़ाये थे और वह औंधी जा पड़ी थी, जिसकी तलाश में वह सैंकड़ों कोस का सफ़र करके यहाँ आई थी, उसे शक्ति से कहीं बढ़कर सुघड़, शक्ति से कहीं ज़्यादा क़ाबिल लड़की का प्यार हासिल था । जिन्हें साथ

साथ खड़े देख कर शक्ति के मुंह से अनायास निकला था यह तो जैसे एक दूसरे के लिये बने हैं। और अगर अमन आज ही, इसी वक्त सुंदरी का होना क़बूल नहीं करता तो वह परी जैसी हुस्न की सूरत हमेशा के लिये अनमोल शादी के रसातल में खदेड़ दी जायेगी।

उधर अमन शक्ति को स्यालकोट में देख कर भौंचक्का रह गया था। पीला ज़र्द चेहरा काटो तो ख़ून की बूँद न निकले। जैसे कोई चोर सेंध लगाते हुए पकड़ा जाये। उसे अभी तक मालूम नहीं था कि माँ की मौत की शक्ल में शक्ति पर कैसा क़हर बरसा हुआ था। इस बार स्यालकोट आने के लिये वे लाहौर को एक तरफ़ छोड़ आये थे। शायद अमन ने यह जानबूझ कर किया था।

जैसे खंडे की धार हो, शक्ति को फ़ैसला करना था। वह अमन पर अपना हक़ जमाये रखेगी या सुँदरी को उसका अधिकार दिलवा कर सुर्ख़रू हो जायेगी। पहले प्यार के इस हश्र की बात सोच कर शक्ति मन ही मन ख़ून के आँसू बहा रही थी।

और फिर उसने फ़ैसला कर लिया, उस रोज़ मेहमानों से भरे घर में, जब सब लोग दुल्हिन के ननिहाल वालों के जलूस की प्रतीक्षा में थे, उसने एकान्त में अपने दिल की बातें कहने और अमन के मन की बातें जानने के लिये कुछ क्षण तलाश कर लिये। अब और ज़्यादा इस बात को टाला नहीं जा सकता था। अगले दिन तो बारात आ रही थी।

शक्ति ने अपने आप को लाख बार तैयार किया था कि एकान्त में अमन के सामने वह भावुक नहीं होगी, लेकिन वह ऐसा नहीं कर पाई। इधर उसने दरवाज़ा बँद किया, उधर वह अमन के कँधे पर ढेरी हो गई। उसकी आँखों से छल छल आँसू गिरने लगे। क्षण भर बाद उसने अपने पर क़ाबू पा लिया। और वह अनायास एक वेग में बोलने लगी :

"बेशक मैं यहाँ स्यालकोट, तुम्हारी तलाश में आई हूँ, लेकिन आज मैंने तुम्हें यहाँ यह पूछने के लिये नहीं बुलाया कि तुम मुझसे मिले बग़ैर लाहौर से क्यों चले गये थे। एक बोल तो मेरे साथ बोला होता। ऐसा तो कोई परायों के साथ भी नहीं करता। हम दोनों तो पलक झपकते ही कई मंज़िलें पार कर गये थे। किसी राह गुज़र के साथ अगर कोई थोड़ा रास्ता भी चलता है तो उनमें एक आपसी आत्मीय कायम हो जाता है। बिछुड़ते वक्त पूछताछ करता है, सात और बीस सौंप सुपानियाँ करता है। हमने तो एक दूसरे से सदा की गाँठें बाँधी थी, कसके पक्की की थी। तूने यह तो सोचा होता, जब मैं सोकर उठूँगी, तो अपनी उम्मीदों के चमन को इस तरह रौंदा हुआ देखकर मेरा क्या हश्र होगा। मेरे दिन किस तरह बीता करेंगे। बेशक मैंने आला दे कर तुझे बुलाया था, अपने रब्ब के सामने हाथ जोड़ जोड़ कर मिन्नतें करके तुझे पुकारा था, इस तरह की सदा को सुनने के लिये तुम्हारे कान भी संवेदनशील थे। अगर कोई सुनने के लिये तैयार न बैठा हो तो इस तरह की आवाज़ किसी तक नहीं पहुँचती।"

"मैं तुझे यह बताने के लिये भी नहीं मिल रही कि हमारी उस एक मुलाक़ात की सज़ा मेरी देवी जैसी माँ ने भुगती, जो कुछ ही दिनों में मुझे मातृहीन बना कर चली गई। मुड़कर एक नज़र मुझे देखे बग़ैर उसने हमेशा के लिये आँखें बँद कर ली।"

"हज़ूर, यूँ परेशान होने की ज़रूरत नहीं आपके सामने जो औरत खड़ी है, वह भी

एक ज़िंदा लाश है, बस उसमें हवा आ जा रही है, जान तो उसकी कभी की निकल चुकी है । प्राण नहीं निकले पर जीते, बसते लोगों में से मैं कभी की ख़ारिज हो चुकी हूँ ।''

''ख़ैर ये सब बातें पुरानी हैं, फ़ालतू हैं । जिस लिये मैं हजूर की अर्दल में हाज़िर हुई हूँ, वह तो कहीं ज़्यादा अहम, दुखदाई समस्या है ।''

''जनाब इस बात से इन्कार नहीं कर सकते कि जिस लड़की को कल किसी अवधूत के गले मढ़ा जा रहा है वह आपसे प्यार करती है । आप पर जान देती है । इतने दिन गुरू बाबे के आगे हाथ जोड़ जोड़ कर आपको पुकारती रही है । आपके इन्तज़ार में आठों पहर उसकी पलकें घर की दहलीज़ें पर लगी रही हैं । उस दिन जब इस कमरे से बाहर वह बरामदे में हजूर की मिन्नतें कर रही थी, वह सारी बातें मैंने अपने कानों से सुनी हैं । इस तरह की हसीन लड़की किसी पर फ़िदा हो जाये, मैं तो सोचती हूँ उसे आकाश में उड़ना चाहिये ।''

''सुंदरी जैसी लड़की को निराश करना पाप है । यह बुज़दिली होगी परले दर्जे की । अगर उसे इस तरह किसी के गले मढ़ दिया जाये, जिसकी सूरत देखना भी उसे गवारा नहीं ।''

''इसमें रत्ती भर शक नहीं कि सुंदरी जनाब से प्यार करती है और इसमें भी कोई संदेह नहीं कि जनाब ने उसकी मुहब्बत को स्वीकारा है । कम से कम आपने उसकी मुहब्बत को ठुकराया नहीं । आप इस पगडंडी पर कहाँ तक चले हो, किस पड़ाव तक पहुँचे हो, यह केवल आप ही जानते हो । उस रोज़ सुँदरी जो आपकी मिन्नतें कर रही थी, उससे तो कोई कुछ भी अनुमान लगा सकता है ।''

''मैं हूँ ना पगली । मुझे तो खुश होना चाहिये । मुझे तो शीरनी बाँटनी चाहिये । मेरे रास्ते से एक ख़तरनाक रोड़ा हटाया जा रहा है । मैं इस तरह किसी की वकालत करके अपने लिये खाई खोद रही हूँ, जिसमें गिर कर मैं सारी उम्र तड़पती रहूँगी- जल भुन कर भस्म हो जाऊँगी ।''

इस तरह बोलती बोलती शक्ति दीवानों की तरह हँसने लगी, हँसती जा रही थी, हँसती जा रही थी । अमन जो अभी तक फटी फटी आँखों से उसे बोलते हुए सुन रहा था, एक दम घबरा सा गया । वह परेशान नज़रों से उसकी तरफ़ देख रहा था, इस वक्त नीचे आँगन में शक्ति को लोग ढूंढ रहे थे । ''शक्ति '' ''शक्ति '' पुकारा जा रहा था ।

अमन दबे पाँव, कान लपेट कर, मुंह से एक शब्द भी कहे बग़ैर भीगी बिल्ली की तरह कमरे से निकल गया ।

नीचे आँगन में सचमुच ननिहाल के मेहमान पहुँच चुके थे । आगे आगे ढोलची ढोल बजा रहा था, और पीछे बैलगाड़ी में ननिहाल का सामान भरा था जो वे लोग दहेज में लाये थे । पलंग, बिस्तर, कपड़ों का संदूक, गहनों की संदूकची, ज़ेवर, बैलगाड़ी के आगे पीछे मुहल्ले की लड़कियाँ गा रही थी :

छज उहले छानणी परात उहले तवा उए
नानकिआँ दा मेल आइया सुरीआँ दा खा उए ।

* सलीका

छज उहले छानणी परात उहले गुछछीआं
नानकिआँ दा मेल आया, सभे रन्नाँ लुच्चीयाँ,
छज उहले छानणी, परात उहले छज* उए,
नानकिआँ दा मेल आया, गाउण दा न चज्ज ओए

इतने में ददिहाल की लड़कियाँ ननिहाल के मेल में मामा को न देख कर फिर तालियाँ पीट कर गाने लगीं ।

फुलां भरी चंगेर में इक फुल तोरी दा
ऐसे वेले ज़रूर मामा लोड़ीदा ।

33

अमन की अम्मी शक्ति को तलाश कर रही थी । सुंदरी के ननिहाल से आया दहेज उसे दिखाना चाह रही थी । तेजी जिस दिन से आई थी, शक्ति पर फ़िदा हो गई थी । हर वक्त उसे पास बैठा कर उसकी माँ की बातें करती रहती । भाई दुनीचन्द की पत्नी जितने दिन करतारपुर में रही थी, उसने हर किसी का दिल मोह लिया था ।

उस दिन आँगन में खड़ी तेजी ने देखा कि कुछ देर पहले सीढ़ियाँ उतर कर अमन नीचे आया, बाद में जैसे गिनगिनकर क़दम रखती हुई शक्ति नीचे उतरी । अमन सहमा सहमा सा, चुपचाप था जैसे किसी पर तुषारपात हो और अब शक्ति भी गहरी चिन्ता में डूबी मालूम हो रही थी ।

तेजी ने इस तरफ़ विशेष ध्यान नहीं दिया । ज़्यादा मीन-मेख निकालने की उसकी आदत नहीं थी। ख़ास तौर पर बच्चों के मामले में वह ज़्यादा दख़ल नहीं देती थी ।

मुहल्ले की लड़कियाँ अभी भी गा रही थी :
कुड़ीये भिउँ बठलाँ विच दाणा
मुंडिआ तेरी मत मारी,
हल छड के लड़न नूँ जाणा !
कुड़ीऐ, उठ के झो लै चक्की,
उधर इधर की वेखें
मासड़ ने मासी लाडली रखी ।

''मासड़ ने मासी लाडली रखी'' बार बार ये बोल गाती हुई लड़कियाँ आँगन में नाचने लगीं । इशारा सुंदरी की होने वाली सास की तरफ़ था

''मौसा ने मौसी को लाड से रखा है'' गाती हुई, ननिहाल के लोगों को ताने देती, मसख़रियाँ करती, तालियाँ बजाती ।

अमन से हुई मुलाक़ात के बाद शक्ति को ऐसा लगा जैसे उसे सूप में फटक दिया गया हो । पिछले कुछ दिनों से उसके दिमाग़ में जो धुँध सी छाई हुई थी, वह छँट गई । जैसे गँदला पानी निखर जाता है, वह अपने आप को फूल सा हल्का महसूस कर रही थी । जैसे कोई नहाया धोया हो, उसके अँग अँग पोटे पोटे की मैल उतर गई थी और अब वह तेजी के पुरजोश साथ में निशचिन्त हो गई थी । कुछ देर बाद वह गाती हुई लड़कियों के साथ गा

रही थी, नाच रही लड़कियों के साथ नाच रही थी ।

गुरू नानक के नामलेवा, बिरादरी और रिश्तेदार भाई मूले के परिवार को न हिन्दुओं में गिनते थे, न मुसलमानों में, वे तो नानक पंथी थे । तेजी जैसे जो गुरू भाई सुंदरी की शादी पर इकट्ठे हुए थे, उनके लिये तो जैसे यह उनकी अपनी बेटी की शादी थी । हर काम उन्होंने आपस में बाँट लिया था । तेजी ने दुल्हिन को सजाने, सँवारने की ज़िम्मेदारी ली थी और इस फ़र्ज़ को निभाने के लिये उसने शक्ति को अपनी मदद के लिये चुना था ।

सुंदरी का नाना ऊँची पगड़ी वाला सरदार था । अपनी दोहती के लिये उसने ढेर सारे गहने बनवाये थे । सुंदरी की माँ के पास जो ज़ेवर था, वह भी सुंदरी का ही था । उसकी माँ बेचारी के किस काम का था । शक्ति और तेजी देख देख कर हैरान हो रही थी । इस तरह तो दुल्हिन सोने से लद जायेगी । उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि वे कौन सा ज़ेवर लड़की को पहनायें, कौनसा छोड़ दें । शक्ति के कहने पर यह फ़ैसला उन्होंने सुँदरी पर छोड़ दिया । इतनी सुन्दर, जवान जहान लड़की को मालूम था कि फेरों के वक्त उसने क्या पहनना था । डोली में बैठते वक्त उसने कैसे सजना था । यह सोच कर उन्होंने चार छै चुन्निदा जोड़े और गहनों की दोनों संदूकचियाँ उसके हवाले कर दीं ।

तेजी को यह देखकर हैरानी हो रही थी । सुंदरी को न सजने में कोई दिलचस्पी थी न गहने पहनने का कोई शौक़ था । नये से नये, बढ़िया से बढ़िया जोड़े को देखती ही उसकी आँखों से टपटप आँसू टपकने लगते ।

''हर लाड़ली लड़की के साथ ऐसा ही होता है,'' तेजी सोचती । शक्ति सुनती और ख़ामोश हो जाती । उसे ढेर-सी और बातें मालूम थीं, जिनकी तेजी को अभी ख़बर नहीं थी ।

कभी-कभी शक्ति को लगता जैसे आस पास के सभी लोग दम साधे देख रहे हों, शादी वाले उस घर में जैसे कोई धमाका होने वाला था । आज की रात कुछ न कुछ ज़रूर होकर रहेगा । गहनों की सँदूकचियाँ लेकर अगर कोई निकल जाये तो उम्र भर उसे किसी के आगे हाथ नहीं पसारना पड़ेगा ।

लेकिन नहीं, वह रात ख़ैरीयत से बीत गई, हालाँकि अमन कहीं दिखाई नहीं दे रहा था । फिर पता चला कि भाई मूले की बीवी ने उसे स्यालकोट के नज़दीक वाले गाँव में कीर्तनियों का प्रबंध करने के लिये भेजा था । जल्दी में वह अपनी माँ को बताना भी भूल गया था । उसने सोचा था गाँव दो चार कोस दूर होगा लेकिन वह तो काफ़ी दूर था । लौटते रास्ते में रात पड़ गई । जब वह लौटा तो सुबह हो चुकी थी ।

जितनी देर तक अमन घर नहीं पहुँचा, शक्ति की आँख नहीं लगी, वह करवटें बदल रही थी ।

अगली सुबह कीर्तनिये आ गये । रबाब बजाने वाले । उन्हें बाबा नानक की ढेर सारी बाणी कंठस्थ थी । उन्होंने दोनों वक्त कीर्तन करना शुरू कर दिया । फिर बारात आई । जब तक बारात रही, कोई धूमधाम नहीं हुई, न कोई नाच गाना, न किसी ने दारू पी, न कोई मुजरा देखने गया।

गुरबानी के नाद में लड़की के फेरे हुए। गुरवानी की गूँज में वह डोली में बैठ कर अपनी ससुराल चली गई।

डोली के जाने के बाद ही मेहमानों में घुसर फुसर शुरू होने लगी। न फेरों के वक्त, न डोली के वक्त लड़की की आँखों में किसी को आँसू दिखाई दिया। ऐसा तो कभी नहीं होता। बेटियों तो माँ-बाप के घर से विदा होते कूँजों की तरह रोती बिलखती हैं।

तेजी ने कहा गुरूसिक्ख बेटी को रोने की ज़रूरत नहीं होती और लड़की कौन से पराये घर जा रही थी। माँ से बिछुड़ी, मासी के आँगन में जा बैठेगी। वैसे अगर कोई रोने-धोने का दिखावा करे तो जितना मन चाहे कर ले।

लेकिन शक्ति की तसल्ली नहीं हो रही थी। सुंदरी को जो जोड़ा दिया गया, उसने पहन लिया। जो ज़ेवर उसके सामने रखे गये उसने सजा लिये। जैसे किसी ने कहा, उसने फेरे ले लिये। जब डोली का समय आया, वह शांत, निश्चल भाव से डोली में जा बैठी थी।

तेजी ने कहा यह तो गुरूसिक्खी का मार्ग है।

शक्ति की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

34

सुंदरी अभी भी अपने दूल्हे को मौसेरा भाई कहती थी, जैसे शादी से पहले उसे बुलाती थी। वैसे उसका नाम मंगलसैन था। पैदा जो मंगलबार को हुआ था।

शादी के बाद डोली लेकर बारात के साथ उन्होंने मुश्किल से स्यालकोट छोड़कर एक ही पड़ाव तय किया था कि मंगलसैन के नाम परवाना लेकर सरकारी दरबार से अहलकार उसकी तलाश में आ रहा था। फ़ौज का बुलावा लेकर। मुग़ल राज पर हमले की ख़बरें मिल रही थीं। शेरशाह सूरी भारी लश्कर लेकर बाबर के जाये को ललकार रहा था।

हुक्म यह था कि परवाना मिलते ही वह जहाँ भी हो, चाहे खड़ा हो या बैठा हो, सोया हो या जाग रहा हो, वैसे का वैसे, उसी घड़ी, उसी पल अपनी छावनी के लिये चल पड़े। नहीं तो उसके पूरे ख़ानदान को नष्ट कर दिया जायेगा। अहलकार को हिदायत थी कि अगर हुक्मअदूली का ज़रा भी ख़तरा हो तो मुक़ामी अमले की मदद से उसे फ़ौरन गिरफ़तार कर लिया जाये।

अहलकार ने अपने घोड़े की लगाम मंगल सैन को पकड़ा दी और सुंदरी से एक शब्द बोले बग़ैर उसका मौसेरा अपने रास्ते पर चल दिया।

जब बारात डोली लेकर वज़ीराबाद पहुँची दुल्हा साथ नहीं था। घरवालों को तो इस क़हर का पहले से पता था, उन्होंने ही तो अहलकार को स्यालकोट की तरफ़ भेजा था।

वज़ीराबाद में हिन्दुओं के गिने चुने घर ही होंगे। सारा शहर मुसलमानों का था। गली गली में मस्जिदें थी। हर बाज़ार में गोमाँस बिक रहा था, हलाल की गई गऊओं और भेड़ों-बकरियों के पिंजर दुकानों में लटक रहे थे। हर वक्त बांग की सदा सुनाई देती थी।

सुंदरी को हैरानी हुई, जब डोली अपने ठिकाने पहुँची तो उसका स्वागत मुसलमानी

रस्मों से किया गया। गली के बाहर डोली को आस पड़ोस के लड़के लड़कियों ने रोक लिया और जब तक उन्हें राह खुलाई नहीं दी गई, वे टस से मस नहीं हुए। सुंदरी अपनी नाइन से बार बार कहती– मैं लौट जाती हूँ। बेशक ये लोग राह रोके रहें। रास्ता खुलवाने वाला तो रास्तें में ही धेर लिया गया था।

इसी तरह बिना "सलामी" के दुल्हिन का अपनी सास के गले जा लगना भी शरीके की औरतों को अजीब लगा था। "सलामी" बेशक मुसलमानी रस्म थी। लेकिन मुसलमानी भाईचारे में हिन्दुओं ने इसे अपना लिया था। कुछ लोग उसे "घूंघट उठाई" कहने लगे। दरअसल यह "सलामी" ही थी। दुल्हन झुककर सास को सलाम करती थी, और सास उसकी मुट्ठी को अपनी अपनी क़दर के मुताबिक सोने की मोहरें या चाँदी के रूपये से भर देती थी। कहीं कहीं इस रस्म को "मुंह दिखाई" भी कहा जाता था। "मुंह दिखाई" की रक़म पहले से तय कर ली जाती थी। सुंदरी ने अपनी "मुंह दिखाई" की रक़म ढेर सी बताई थी। अभी तक कोई रिश्तेदार उसके नज़दीक नहीं फटका था।

डोली आई तो पहले तेल चुआया गया। फिर पानी वारा गया, तिल–मेथीदाना खेलने की किसी को याद ही नहीं आई क्योंकि यह शुद्ध हिन्दू रस्म थी :

जितने धरती तिल गिरेसी,
उतने वहुटी पुत जणेसी।

गाना खोलने वाला तो था ही नहीं, इस लिये दुल्हिन का गाना कौन खोलता। न ही कँगन खेलने की रस्म हुई। छाछ में फेंका गया कँगन दुल्हा दुल्हिन को मिलकर ढूँढना पड़ता था। यह रस्म भी दूल्हे के बग़ैर न हो सकी।

जब रिश्ते के एक बच्चे को ला कर दुल्हिन की गोद में बैठाने लगे तो बीच में एक औरत बोल पड़ी, दूल्हे के बग़ैर "गोद भरने" की रस्म का क्या मज़ा। आस पास खड़ी सभी शरीकनें चुप हो गईं। यह तो बदसगुनी थी।

फिर सुंदरी की सास की देवरानी एक परात मे चूरी भर कर ले आई। इसे "गोत कनाला" कहते थे। डोली के स्वागत के लिये इकट्ठे हुए मेहमान परात में से चूरी मुट्ठी भर भर कर खाने लगे। चूरी में से मक्खन चू रहा था। बीच बीच में कोई आकर चूरी का निवाला दुल्हिन के मुंह में डाल जाती। खाने वाली एक थी, खिलाने वाले ढेर सारे थे। लेकिन सुंदरी को यह रस्म बहुत अच्छी लगी। इस तरह लोग नई आई दुल्हिन को अपने गोत में अपने भाईचारे में शामिल कर रहे थे।

मौसी तापो का घर सुंदरी के लिये कोई अजनबी नहीं था। अनेक ब़ार पहले भी वह यहाँ रह गई थी। गली मुहल्ले में उसकी सहेलियाँ भी थी; जिनमें से अधिकाँश की शादी हो चुकी थी।

बस एक महमूदा थी। निकाह तो उसका भी हो चुका था, लेकिन उसकी अपने घरवाले के साथ पटी नहीं थी और वह चौथे दिन ही लड़–झगड़ कर मायके लौट आई थी। सुहाग रात के मौक़े पर दारू पी कर जब उसका दूल्हा अपनी करतूतें गिनवा रहा था तो सुन सुनकर चिढ़ी हुई महमूदा ने भी उसे अपने एक किस्से से वाकिफ़ करवा दिया।

कुरान शरीफ़ की पढ़ाई करवाने हर रोज़ जो मौलवी आया करता था, वह उसके साथ कैसे घुलमिल गई थी। वह तो उसके साथ भागने की बात सोच रही थी कि उसके घर वालों को इसकी ख़बर लग गई और उन्होंने उसकी शादी रचा कर उससे पीछा छुड़वा लिया था। बहुत देर से अपनी बेहूदगियों के किस्से सुना रहा मर्द यह सुन कर गुस्से से पागल हो उठा। उसके तन बदन में आग लग गई। उसने अपने सामने बैठी दुल्हिन को एक थप्पड़ मार दिया। महमूदा ने बताया, "मैं भी कौन सी कम थी, पैरों से नयीं ज़री की जूती उतार कर मैंने उसकी वह दुर्गत बनाई कि लो अल्लाह का नाम ! शराब में मदहोश मर्द जूते खाता रहा। महमूदा ने बताया– बाक़ी रात मैं उसकी मरहम पट्टी करती रही, उसे सहलाती रही। अगले दिन जैसे मैं उस घर में गई थी, उसी तरह अपने माँ बाप के यहाँ लौट आई।"

सुंदरी ने अपनी सहेली महमूदा की आप बीती सुनी और अपने मन को टटोलने लगी। क्या उसे भी अपने मायके चला जाना चाहिये था ? काहे के लिये ? मौसी का घर तो माँ के घर जैसा ही होता है। और फिर महमूदा के साथ सुँदरी के दिन कटने लगे। सुँदरी कुछ फेरों की गुनाहगार थी और महमूदा निकाह के बँधन से कभी की आज़ाद हो चुकी थी।

एक शाम बैठे बैठे सुंदरी अपनी सहेली महमूदा को बता रही थी कि कई लोग सुहाग रात में इस तरह की शेख़ियाँ बघारने लगते हैं और अपने कारनामों का ज़िक्र करते हैं ताकि दुल्हिन पर उनकी मर्दानिगी का रौब पड़े और वह उसके अधीन हो जाये।

"हाँ, लेकिन यह हक़ औरत को भी तो होना चाहिये।" महमूदा बोली और दोनों सहेलियाँ हँसने लगीं।

35

सुंदरी को यह देखकर हमेशा हैरानी होती थी कि उसकी मौसी को जब हिन्दू धर्म की बाबत बात करनी होती तो हमेशा सात परायों के सामने करती। उसका पूजा का स्थान कोठरी में था। जब कोई हिन्दुओं वाली रस्म करनी होती तो पहले बाहर हवेली का दरवाज़ा बँद कर लेती, अगर उसी वक्त कोई पड़ौसी आ जाता तो शर्मिन्दा सी हो जाती।

सुंदरी की माँ, बाबा नानक की सिक्ख थी। उसे कभी इस तरह की सावधानी नहीं बरतनी पड़ी, न ही हिन्दुओं की रीतियों, रस्मों, रिवाजों में उसका कोई ख़ास विश्वास था। जो बात उसके मन को भाती, वह कर लेती, चाहे हिन्दू धर्म के कर्म-काण्ड से सँबन्ध रखती हो, चाहे मुसलमानी रस्मों-रिवाज से। न हिन्दू पड़ौसियों को कभी बुरा लगा, न मुसलमान हमसाये कभी ख़फ़ा हुए थे। गुरू नानक की अनुयाई वह जैसे हिन्दू मुसलमानों के बीच एक कड़ी हो। गुरू नानक साँझीवालता* के अवतार थे।

सुंदरी की मौसी बाबा नानक की श्रद्धालु थी, लेकिन भाई मूले जैसी लौ उनके परिवार को नहीं लगी थी। हिन्दू धर्म की प्राचीनता, हिन्दू धर्म के गौरव, हिन्दू धर्म की महानता पर उसे बड़ा मान था।

---

* समाजवाद जैसी सांभी व्यवस्था

उस दिन वह सुंदरी को नेकी और बदी के संघर्ष की कथा सुना रही थी। दरअसल बात ज़ेवरों के रख रखाव से शुरू हुई और चलती चलती पिछले कुम्भ के मेले पर जा पहुँची थी, जिसमें सुंदरी की मौसी अपने सारे गहने गँवा आई थी।

''कुम्भ का मेला हर बारह बरस बाद बारी बारी से हरिद्वार, प्रयाग राज, नासिक और उज्जैन में लगता हैं,'' सुंदरी की मौसी बता रही थी, ''कुम्भ के स्नान से प्राणी जन्म मरन के चक्कर से मुक्त हो जाता है। हरिद्वार के कुम्भ की बारी आती है जब बृहस्पति कुम्भ राशि में हो और सूर्य, चन्द्रमा मेष राशि में हों।''

''क़रीब 50 बरस पहले आदि शंकराचार्य ने कुम्भ में शामिल होकर स्नान के महत्व पर ज़ोर दिया था। उन्होंने साधु, सँतों और संन्यासी संप्रदायों को ताक़ीद की कि वे कुम्भ के मेले में शामिल हों। इसी तरह साधरण जनता भी इस स्नान द्वारा अपना जन्म सँवार सकती थी। इस तरह यह मेला पहुँचे हुए लोगों और गृहस्थियों के संपर्क का साधन बन गया।''

''कुम्भ की शुरुआत देवताओं और दैत्यों के संग्राम से शुरू हुई. .... सुंदरी की मौसी ने कथा जारी रखी।''

''देवता और दैत्य आदमी के अंदर ही हैं, इन्सान की शुभ और अशुभ वृत्तियों की टकराहट'' सुंदरी ने मौसी को टोक कर कहा।

''कभी देव पक्ष की जीत दर्शाती हैं, कभी दैत्य पक्ष की। बात यूँ हुई कि सतयुग में हारे हुए देवता विष्णु भगवान की शरण में हाज़िर हुए। भगवान ने उन्हें समझाया कि दैत्यों को हराने के लिये अमृत की प्राप्ति बहुत ज़रूरी है। देवताओं ने पूछा, ''अमृत कहाँ है ?'' विष्णु भगवान ने बताया, ''अमृत क्षीर सागर में है। इस लिये क्षीर सागर को मथना पड़ेगा। लेकिन यह काम सिर्फ़ आप देवताओं से नहीं हो सकेगा। इसमें देवताओं को दैत्यों की सहायता की भी ज़रूरत पड़ेगी।..... ''

''जैसे अच्छाई के लिये कभी बुराई भी काम आ जाती है।'' सुंदरी ने फिर मौसी को टोका।

''हाँ, इसलिये देवताओं ने कुछ देर के लिये दैत्यों से समझौता कर लिया। दैत्य राज़ी हो गये। उनको भी अमृत का लालच पढ़ गया। अब मँचार पर्वत को मधानी बनाया गया और वासुकी नाग को रस्सी। मुँह की तरफ़ से नाग को दैत्यों ने पकड़ा और पूंछ की तरफ़ से देवतों ने। वासुकि नाग उत्तरी ध्रुव से लेकर दक्षिणी ध्रुव तक पसरा हुआ था। मथानी को टिकाने के लिये विष्णु भगवान स्वयँ कछुए का रूप धारण करके मधानी के नीचे जा बैठे। समुद्र मथने की प्रक्रिया दस हज़ार बरस तक चलती रही। आख़िरकार समुद्र में से 14 रत्न निकले। इन में से एक धनवन्तरि वैद्य थे, जिनके पास अमृत का कुम्भ था। अब विष्णु जी ने उस घड़े का अमृत केवल देवताओं को ही पिलाना शुरू कर दिया। यह देखकर दैत्यों के होश उड़ गये। उन्होंने सोचा अगर सारे देवता अमर हो गये तो वे कभी हराये नहीं जा सकेंगे। उन्होंने राहु को देवताओं का भेस धारण करवा कर अमृत पिलवा दिया। राहु उन्हीं के पक्ष का था और भेस बदल कर देवताओं में जा बैठा था लेकिन

चन्द्रमा और सूरज ने राहु को पहचान लिया और शोर मचा दिया। यह देख कर विष्णु ने सुदर्शन चक्र चलाया और राहु का सर घड़ से अलग कर दिया। लेकिन राहु तो अमृतपान कर चुका था। बेशक उसके दो टुकड़े हो गये थे। आज तक उसके सर वाले हिस्से को राहू कहते हैं और धड़वाले हिस्से को केतु।''

''राहू पर किये गये हमले के कारण दैत्यों और देवताओं में लड़ाई छिड़ गई। इन्द्र ने अपने पुत्र जयंत को इशारा किया कि वह अमृत का कुम्भ उठा कर स्वर्ग में ले जाये। यह देखकर दैत्यों के गुरू ने अपने चेलों को घड़ा छीन लेने का हुक्म दिया। इस छीना झपटी में अमृत की कुछ बूदें धरती पर गिर पड़ी। यह बूँदें गँगा, त्रिवेणी, गोदावरी की धाराओं में जा गिरी। इस लिये इन स्थानों पर कुम्भ का मेला लगता है। देवताओं के बारह दिन धरती के जीवों के बारह बरस के बराबर माने जाते हैं। तभी तो अभी तक हर बारहवें साल इन चारों तीर्थो में बारी बारी से कुम्भ का मेला लगता है, इन मेलों का बेहद महत्व है, कुम्भ के स्नान से प्राणी अमर हो जाता है..... ।''

''फिर तो मौसी, आपका पल्ला पकड़ कर हम भी पार हो सकते हैं,'' सुंदरी ने अपनी सास को छेड़ा।

''अपने आप को सच्चाई और सूझबूझ से भर कर जीने की इच्छा दरअसल अमृतमय जीवन का उद्देश्य है। दस हज़ार बरस तक देवता और दैत्य इसी इन्तज़ार में मानव सागर के अन्तर्मन को मथते रहे। उस में से अमृत के साथ हलाहल भी निकला। हलाहल प्रतीक है मौत की अटलता का, मौत ज़रूर आकर रहेगी। इसे टाला नहीं जा सकता। शिव ने इस हलाहल को पी लिया जो ज्ञान का प्रतीक है। चौदह रत्नों में ऐरावत हाथी निकला जो शक्ति का प्रतीक है। लक्ष्मी निकली जो ऐश्वर्य की प्रतीक है, कल्प वृक्ष भी निकला जिसके बारे में माना जाता है कि वह हर इच्छा पूरी कर सकता है..... । ''

सुंदरी की सास ऐसी बातें कर रही थी, इतने में सुंदरी की सहेली महमूदा आ टपकी। महमूदा को इस तरह आँगन में आते देख कर सुंदरी की मासी के ओंठों पर जैसे ताला लग गया। महमूदा ने लाख पूछा कि समुद्र में से और क्या निकला। सुँदरी बार बार यह किस्सा लेकर बैठ जाती, लेकिन उसकी मौसी टस से मस न हुई।

उस दिन महमूदा जब अपने घर गई तो सुंदरी की मौसी ने सुँदरी से कहा-''मुसलमान मलेच्छ होते हैं, इनके कानों में ऐसे बचन नहीं पड़ने चाहिये।''

यह सुनकर सुंदरी अपनी मौसी के चेहरे की तरफ़ देखने लगी, वैसे वह महमूदा की कितनी ख़ातिरदारी करती थी। जितनी देर महमूदा वहाँ बैठती वह लगातार उसे कुछ न कुछ खिलाती रहती थी। ''बेटी'' ''बेटी'' कहते उसका मुंह नहीं सूखता था।

सुंदरी सोचती थी उसकी माँ का दिल कितना बड़ा है। उसके लिये हिन्दू और मुसलमान बराबर थे। उसका गुरू बाबा नानक हिन्दुओं को अच्छे हिन्दू और मुसलमानों को अच्छे मुसलमान बनने के लिये कहता था।

ज्यों ज्यों सुंदरी नज़दीक से अपनी मौसी को देखती थी, उसका मन वितृष्णा से भरता जा रहा था। भीतर से कुछ और बाहर से कुछ और। यही हाल शहर के बाकी हिन्दू

संप्रदाय का था।

और फिर जैसे रब्ब ने उसकी सुन ली हो। उसकी माँ का संदेसा आया कि शादी के सभी मेहमान अपने अपने घर लौट गये थे और सूना आँगन अब उसको काटने लगा था। सुंदरी अपने मायके जाने के लिये तैयार हो गई। सुँदरी की मौसी को कोई ऐतराज़ नहीं था। सुंदरी का पति तो लड़ाई पर गया हुआ था।

36

"मेरा आँगन तो भाँय भाँय करता था," उसकी माँ के यह बोल अक्सर सुंदरी के कानों में गूँजने लगते। सचमुच जब वह अपनी शादी पर आये मेहमानों के बारे में सोचती थी तो उसको अपने माँ के आँगन का सूनापन जैसे काटने को दौड़ता था। सिर्फ़ सुँदरी के आने से उसकी माँ को लगा जैसे उसके आसपास का सूनापन भर गया हो।

लेकिन ख़ुद सुंदरी की अलग हालत थी। उसके भीतर अमन की मुहब्बत का खँडहर था। जैसे कोई इमारत बनते बनते ढेरी हो गई हो। इस सच्चाई को उसके भीतर की हिन्दुस्तानी औरत ने क़बूल कर लिया था। कभी इन खँडहरों को वह धर्म की बेलें चढ़ा कर ढँक लेती, कभी बिरादरी, भाईचारे के जर्जर पुराने बरगद के पीछे छिपा देती। कभी अपनी माँ की मजबूरियों के दामन की ओट में विचरने लगती।

सुंदरी सोचती, क़सूर किसी का नहीं था, अपने अपने कर्मों का फल मिलता है, अपने अपने नसीब की देन।

सुंदरी मायके आई तो उसकी माँ ने फिर अपने पति के कारोबार की सुध लेनी शुरू कर दी। उसका साहूकारा पहले से ही बहुत फैला हुआ था। साथ में ही माँ ने और कई झँझट पाल रखे थे। बड़ी मेहनती औरत थी। एक तो ख़ुदापरस्त, फिर अथक काम करने वाली। तड़के उठती, भज़न पाठ से निबट कर अपने धँधे की परेशानियों में उलझ जाती और इसी तरह रात हो जाती।

सुंदरी अकसर माँ का हाथ बटाती थी लेकिन आज कल उसके मन के खोखलेपन ने उसे अशक्त कर दिया था।

उस दिन बातों बातों में उसकी माँ ने सुँदरी को बताया कि शादी के सभी मेहमान अपने घरों को लौट गये थे, लेकिन शक्ति और उसके साथ आई कुछ लाहौरने वैष्णो देवी के दर्शनों के लिये आगे जम्मू की तरफ़ निकल गई थीं। शायद लौटते वक्त शक्ति उनके यहाँ रूकेगी। सुंदरी को यह सुनकर अच्छा अच्छा लगा। अब वह शक्ति के लौटने की इन्तज़ार में रहती। और कोई रास्ता नहीं था, वे स्यालकोट से ही होकर जायेंगी और सुँदरी मन ही मन सोचती कि वह शक्ति को अपने साथ रहने के लिये कुछ दिन के लिये रोक लेगी। क्यों ?

और सुंदरी अपने मन को टटोलने लगती। आख़िर उसका शक्ति के साथ क्या रिश्ता था ?

उन दिनों सुंदरी की माँ अचानक कुछ ज़्यादा व्यस्त हो गई थी। कोई विदेशी सौदागर ढेर सारा माल ख़रीदने के लिये उसे बयाना दे गये थे। बाँस की टोकरियां, सरकंडों

की टोकरियां, खजूर के पत्तों से बनी टोकरियां, खिलौने, कशीदाकारी के लिये कपड़े, सोने चाँदी के गहने। सुंदरी की माँ ने मुहल्ले मुहल्ले में कारीगरों के साथ सौदे तय किये हुए थे जो दिन रात भागदौड़ करके उसके किये गये वादों को पूरा करने में जुट गये। किसी को पेशगी देती किसी को कच्चा माल ख़रीद कर भेजती, किसी के कारीगरों की ख़ुशामदें करती, किसी को अपने पति द्वारा किये गये एहसानों की याद दिलाती। भाई मूले की सारे इलाक़े में बेहद साख थी। लोग उसका नाम लेकर राह पकड़ते थे। मज़ाल है कोई उससे धोखा कर जाये, उसे तो ख़ुद बाबा नानक ने आशीर्वाद दिया था। भाई मूले की दूकान बाज़ार में सबसे बड़ी थी। कई कारिंदे, मुनीम उसमें काम करते थे। जब भाई मूले नहीं रहा, उसकी सुघड़ बीवी ने उसका सारा कारोबार सँभाल लिया था।

कभी कभी सुंदरी बैठे बैठे अचानक उदास हो जाती। उसका दिल डूबने लगता। आख़िर वह आदमी जिसके साथ उसने फेरे लिये थे, क्यों नहीं कभी उसे याद आया था ? न मंगलवार वाले दिन, न किसी और दिन।

उस दिन बाद दोपहर के बाद सुंदरी अपने कमरे में अकेली लेटी थी। गर्मी का मौसम। बाहर बेहद तपिश थी, जैसे कौए की आँख निकल कर बाहर आ रही हो। सुँदरी के कमरे के दरवाज़ों और खिड़कियों पर ख़स की टट्टियाँ लगी थीं, जिन पर पानी छिड़कने के लिये एक नौकरानी दिन भर पानी ढोती रहती थी, ख़स को पानी से तर रखती थी। एक और थी जिसका काम बाहर बरामदे में बैठ कर छत के पँखे की रस्सी को खींचना था। इस तरह के ठँडे किये गये कमरे में भी सुंदरी को लगता जैसे वह तपती भट्ठी में भुनी जा रही हों। बार बार करवटें बदलती। उसे रत्ती भर चैन नहीं आ रहा था। उसे लगता जैसे उसका पलँग खौलते हुए तेल की कड़ाही हो। फिर उसे सुनाई दिया, बाहर बाँदियाँ मिलकर गा रही थी :

घूं घूं चरखड़ा
मैं लाल पूणी कताँ कि ना ?
कत बीबी कत
कत बीबी कत
लँबा मेरा दुखड़ा
मैं दुखड़ा दसाँ कि ना ?
दस बीबी दस
दस बीबी दस
दूर मेरे सहुरे
मैं सहुरे घर बसाँ कि ना ?
बस बीबी बस
बस बीबी बस
माही मेरा परदेसी
परदेसी घर वसाँ कि ना ?

बस बीबी बस
बस बीबी बस

गीत सुन कर जैसे सुंदरी अचानक ठंडी पड़ गई। उसकी बाँदियाँ यह कैसे गीत गा रही थीं ? क्यों गा रही थीं ? उसने तो अपने आप को तक़दीर के हवाले कर दिया था। अपनी माँ की आज्ञा पर फूल चढ़ाये थे। अपने मन को मार लिया था।

और फिर सुंदरी का अर्न्तमन सहसा विलाप कर उठता। उसके मन में से हूक उठती। पहले पड़ाव पर पहुँच कर ही उसे फ़ौज से परवाना आ गया था। अगर ऐसा न होता तो क्या पता सुंदरी कुछ और ही होती। किसी से कोसों दूर निकल आई होती।

लेकिन अब भी भला वह किसके नज़दीक थी ? फिर उसके भीतर कोई उसे याद दिलवाता। कोई उसे छोड़ कर सैकंड़ों कोस दूर चला गया था। उसे तो चाहे किसी ने रास्ते में ही दबोच लिया होगा। पका हुआ अलूचा ! खट्टमिठ्ठा, मुंह में डालते ही जैसे रोम रोम स्वाद से भर जाये।

अमन की मुहब्बत चोरी के बेर की तरह थी। सुंदरी का यक़ीन था कि उसकी माँ का ज़बरदस्त हठ था। वह अपनी बात मनवा कर रहेगी। उसे यह भी पता था कि वह अपनी माँ की बात टाल नहीं सकेगी। और फिर जब उसे इस बात का ऐहसास हो गया कि उसकी माँ सुंदरी से कहीं ज़्यादा अमन को प्यार करती थी, वह तो उसे अपनी बेटी के लिये चुन कर लाई थी, लेकिन घर पहुँच कर उसके साथ यह अनर्थ हुआ तो सुँदरी ने तक़दीर के सामने हथियार डाल दिये थे। ईश्वर का भाना मान लिया था। उसकी रज़ा में राज़ी हो गई थी। बाबा नानक की अनुयायी।

37

आख़िर शक्ति वैश्नो देवी की यात्रा करके लौट आई। उसने कितनी इन्तज़ार करवाई थी ! शक्ति के साथ लाहौर से आये और भी लोग थे जो सिर्फ़ रात भर ठहर कर अपने रास्ते चले गये थे, लेकिन शक्ति नहीं गई। सुंदरी ने उसे रोक लिया। एक ही ज़िद-- मैं तुझे जाने नहीं दूँगी। जबसे इन लोगों को पता चला था कि शक्ति की माँ नहीं रही थी, उन्हें शक्ति पहले से भी ज़्यादा अच्छी लगने लगी थी, ख़ास तौर पर सुंदरी की माँ को। दुनीचन्द की बीवी उसकी घनिष्ट सहेली बन गई थी।

सुंदरी को शक्ति अच्छी लगती थी, क्योंकि वह लाहौर की थी। उसके सपनों का शहर ! जब भी वे मिल बैठतीं, सुंदरी लाहौर की बातें करने लगती। लाहौर के बाज़ार, लाहौर के मकान, लाहौर के बाग़, लाहौर की रावी। लाहौरनों की चटक मटक, लाहौर का दाता गँज बख़्श !

सुंदरी को शक्ति अच्छी लगती थी, क्योंकि उसने ढेर सी पढ़ाई कर रखी थी। हिन्दवी, अरबी, फ़ारसी, सँस्कृत, उसके चेहरे पर उसके इल्म की झलक थी। और उसकी हर बात में उसकी समझदारी और बुद्धिमता साक्षात् दिखाई पढ़ती थी।

और सबसे अधिक शक्ति उसे इस लिये अच्छी लगती थी कि उसमें उसे एक मर्द का इरादा दिखाई देता था। उसकी नज़र में एक मर्द का जज़्बाती उफ़ान था। सुंदरी के

भीतर की औरत की तारें झनझनाने लगतीं। कई बार तो उसे ऐसा लगता कि वह शक्ति की बाहों में औंधे मुँह जा गिरेगी।

शक्ति के पास शक्ति थी। उसकी संगत में सुंदरी हर फ़ैसला उसके हाथ में छोड़ देती। जैसा वह सोचती, सुंदरी भी वैसे ही सोचने लग पड़ती। जो वह कहती उसी को सच मानती। जो कुछ वह करती, उसमें कोई ग़लती नहीं निकालती थी।

इधर शक्ति सुंदरी के हुस्न की क़ायल थी। उसकी बड़ी बड़ी आँखों और स्याह काली पलकों की परछाईयाँ उसमें सिहरन भर देती। उसके पास बैठकर शक्ति सारा वक़्त उसकी चोटी के साथ खेलती रहती थी। कभी उसके हाथों को अपने हाथों में लेकर उसके पोटे पोटे को टोहती, उसकी हथेलियों की लकीरों को पढ़ने की कोशिश करती, कहती, तेरी तक़दीर में बेहद प्यार लिखा है।

"अभी तक तो यह बुत सूना खँडर है।" सुंदरी की आवाज़ में कहरों की पीड़ा होती।

ऐसे क्षणों में शक्ति का मन करता कि वह सुंदरी को अपनी बाहों में भरकर उसके अँग अँग को अपनी मुहब्बत से सरशार कर दे। सुंदरी की नज़रों में एक ख़ुमार था जो शक्ति को मख़मूर करता रहता। जबसे वे दोनों अकेली रहने लगी थी, उनका सहलापा और गहरा हो गया था। सुंदरी की माँ तो अपने कारोबार की सरदर्दी में उलझी रहती थी।

सावन का महीना, बहुत देर से वर्षा की झड़ी लगी हुई थी। शाम पड़ने के साथ ठँडी मीठी हवा चलने लगी थी। हल्की हल्की ठँड पड़ रही थी। उधर जम्मू तवी की ओर से एक घोर काली घटा चढ़कर आ रही थी। यह तो बरस कर रहेगी।

और शक्ति आसपास सुंदरी की तलाश करने लगी। बहुत देर से वह दिखाई नहीं दी थी। जबसे सावन की झड़ी लगी थी, सुंदरी कहीं इधर उधर खिसक जाती थी। जैसे कोई आँख मिचौली खेल रहा हो।

ढूँढती-ढूँढती शक्ति छत पर जा पहुँची। देखा सुंदरी ममटी की ओट में सीढ़ियों की तरफ़ पीठ करके दूर क्षितिज पर घिर आई काली घटा को देख रही थी। अपने ख़्यालों में खोई होई। ऐसा लगता था जैसे किसी प्रवाह में पूरी तरह बह गई हो। उसे शक्ति के क़दमों की आहट सुनाई नहीं दी। शक्ति उसकी पीठ पीछे खड़ी थी, इसका एहसास उसे नहीं हुआ।

और फिर शक्ति ने सहसा बाहें बढ़ा कर हथेलियों से सुंदरी की आँखें बन्द कर लीं।"

भई मत करो।" सुंदरी ने अत्यंत दुखी आवाज़ में कहा और वह शक्ति की बाहों में ढेरी हो गई।

फिर पता नहीं क्या हुआ, कैसे हुआ, वे छत पर पड़ी मूँज की ढीली चारपाई पर लेट गई। जैसे दो लताऐं आपस में लिपट रहीं हों। ओंठों पर ओंठ, छातियों पर छातियाँ, जैसे वे एक दूसरे के भीतर उतरती जा रही थीं। अँधा प्यार, जैसे चिरकाल से बँद धारा का बाँध फूट पड़ा हो। न जाने क्यों, सुंदरी को अपनी बाँहों में भर कर शक्ति को ऐसा लगता जैसे

अमन उसकी बाँहों में हो। न जाने क्यों शक्ति के ओंठों के स्पर्श से सुँदरी को आस पास से अमन की खुशबू आने लगी।

उधर काली घटा एक टोप की तरह सारे शहर पर छा गई जैसे घुप्प अँधेरी रात हो, बादल पागलों की तरह गरज रहे थे। बिजली कूद कूद कर पड़ती जैसे कोई नागिन डसने के लिये तिलमिला रही हो। फिर मूसलाधार वर्षा होने लगी जैसे आकाश में से परनाले फूट रहे हों, जुलाइयाँ टूट रहीं थीं। आकाश बरस-बरस कर पागल हो रहा था। बादल घुमड़ घुमड़ कर आ रहे थे। जैसे आज ही बरसना हो। चारों तरफ़ जल थल एक हो गया था।

उधर नीचे घर में इन दोनों को ढूँढा जा रहा था। "सुंदरी बीबी", "शक्ति बीबी" पुकार पुकार कर नौकरानियाँ बावली हो रहीं थी। हर कमरे में देख रही थीं। हर बरामदे में ढूँढ रही थीं। किसी के दिमाग़ में भी यह बात नहीं आई कि इस तरह की बौछार में वे सबसे ऊपर की छत पर मूँज की चारपाई पर लेटी होंगी और उनके कपड़ों से पानी चू रहा होगा।

और फिर बादल ठँडे पड़ गये। फिर वर्षा रूक गई। शक्ति और सुंदरी भी जैसे फूल की तरह हलकी हो गई थी। वे चारपाई से उठ खड़ी हुईं और एक दूसरे को देखकर खिलखिला कर हँसने लगीं। हँसते हुए वे फिर एक दूसरे के गले से लग गईं।

कुछ देर बाद एक दूसरे की बाँह में बाँह डालकर वे सीढ़ियों से नीचे उतर रही थीं। उनके कपड़ों में से पानी चू रहा था। पानी से तर रेशमी कमीज़ों में से उनका जोबन झाँक रहा था, उछल रहा था।

फिर वे अपने अपने कमरे में कपड़े बदलने चली गईं।

कपड़े तो बदले जा सकते थे, लेकिन बालों को वे क्या करतीं। सुँदरी के बाल भी तो बहुत लँबे और भारी थे। रब्ब का शुक्र था कि सुंदरी की माँ घर में नहीं थी।

कपड़े बदल कर पहला काम सुंदरी ने यह किया कि शक्ति के और उसके कमरे की साँझी दीवार में जो दरवाज़ा था उसकी कुँडी खोल दी। उसकी हैरानी की हद न रही जब वह कुँडी खोल रही थी, ऐन उसी वक्त शक्ति भी अपनी तरफ़ की कुँडी खोल रही थी। फिर वह दरवाज़ा आठों पहर खुला रहता। न कभी रात को बन्द किया गया न दिन में ही उसे बन्द किया जाता। शक्ति और सुंदरी जैसे दो बुत और एक जान हों।

लड़कियों के बढ़ते हुए सहलापे को देख कर सुंदरी की माँ के मन की मुराद जैसे पूरी हो गई हो। उसने रब्ब का शुक्र मनाया। इस तरह सुंदरी का मन लगा रहेगा। उसने ज़िद करके सुंदरी की शादी करवाई थी। शादी का मोहर बाँधे हुए इस तरह उसके दूल्हे का नौकरी पर हाज़िर होने के लिये चल देना, वह हमेशा अपनी बेटी के सामने अपने को झूठी महसूस करती थी।

38

सुंदरी के मायके के घर में इतनी रौनक तो उसकी शादी के दिनों में भी नहीं थी, जितनी आज कल थी। एक सुंदरी थी, एक शक्ति थी, ऐसा लगता था जैसे सारा घर भरा-भरा हो।

लड़कियों को सजने से ही फ़ुर्सत नहीं मिलती थी। कभी एक दूसरे के बाल सँवारने लगतीं, रोज़ नये क़िस्म की चोटियाँ गूँधतीं, कभी टेढ़ी माँग, कभी सीधी माँग; कभी मेढियाँ, कभी पट्टियाँ, कभी जूड़ा चोटी, कभी गर्दन पर लहराती, कभी कमर तक खुले बाल लहराने लगते। दोनों का क़द-बुत एक-सा था, कभी आपस में अदला बदली करके एक दूसरे के सूट पहनती, कभी एक जैसी अँगिया, एक तरह के लहँगे, एक तरह की कमीज़ें, एक तरह की सलवारें एक तरह के दुपट्टे। गली मुहल्ले के घर घर में उनकी चर्चा होने लगी। अड़ौसनें पड़ौसनें उन्हें सजा हुआ देखने के लिये आतीं और उनकी कहानियाँ सुनाती रहतीं।

अपने चौबारे में कभी वह ढोलक पकड़ कर गाने लगती, कभी शहर की नटनियों को बुला भेजतीं और वे मिल कर आँगन में गिद्धा डालतीं। कभी कोई चुहल, कभी कोई चुहल। कभी पूरे तले जा रहे हैं, कभी खीर बन रही है, कभी मुर्ग़ मुसल्लम, कभी कबाब, कभी कलिया, कभी पुलाव।

कभी खेलने लगतीं और खेल कर भी उनका मन न भरता। कभी कोई खेल, कभी कोई खेल।

पड़ौसनों को सबसे ज़्यादा खुशी तब होती जब वे गाने बैठतीं थीं। विरह के दर्द से भरे कैसे-कैसे गीत गाती थीं। सुंदरी का इस तरह के गीत गाना तो उनकी समझ में आता था। उसका दूल्हा फेरे लेकर लाम पर चला गया था, लेकिन दुनीचन्द की बेटी को किसका विरहा सता रहा था, उनकी समझ में यह बात नहीं आती थी। इस तरह के गीत जो कलेजे में हूक पैदा करते थे।

चर्खे दी गूँज सुन के
जोगी उतर पहाड़ों आया

... ...
कदों यार ने खिलाँ दी मुट्ठ मारी
त्रिंजनाँ विच क़तदी नूँ

... ...
चर्ख़ा मैं अपना कताँ
तंद तेरे दुखों दी पावाँ

... ...
कभी लम्बे सुर में शक्ति रावी का गीत गाती :
वगदी ऐ रावी, विच रूड़दे करेले वे
आ मिल चनाँ ! अैवें घड़ीयाँ दे मेले वे।
वगदी ऐ रावी विच रूड़दे पतासे वे
तुर गिऊँ चन्नां, नाले लै गिऊँ हासे* वे

* हंसी

वगदी ऐ रावी विच रूड़दे ने जाले वे
छड गिऊँ बुत रूह लै गिऊँ नाले वे ।
वगदी ऐ रावी विच रूड़दे बहेड़े वे ।
अखीयाँ की लाईयाँ, रोग जिंद लई सहेड़े* वे ।
वगदी ऐ रावी पानी ठँडड़े ने सीताँ** दे
झलणे विछोड़े पैंदे दुखाँ ने प्रीताँ दे ।
शक्ति का गीत सुन कर सुँदरी गाने लगती :
तूता वे हरिअलिआ तूता ! तूत पलम्दे जर्दे
इन्हीं राहीं तूँ जाँदे डिट्ठे, मेरे दो नैणाँ दे बरदे ।
तूता वे हरूियालिआ तूता । तूत पलम्दे सावे
जिहदे सजन परदेस वसेंदे, मराँ तिन्हाँ दे हावे ।
तूता वे हरूियालिआ तूता ! तेरीआँ ठँडीआँ छाईं
तैं कोलों मैंढ़ा माही लंघिआ, हीर निमाणी दा साईं ।

सुंदरी जब इस तरह का कोई गीत गाती तो शक्ति को उस पर बहुत तरस आता । शक्ति को यक़ीन था कि इस तरह के गीत वह अपने मौसेरे भाई की याद में नहीं गाती थी । यह तो कोई और दर्द था । सुंदरी अमन की दीवानी थी, इसका शक्ति को इल्म था, सुंदरी यह नहीं जानती थी, अमन बेशक जानता था । शक्ति ने जानबूझ कर सुंदरी से इसका ज़िक्र नहीं किया था ।

यह एक राज़ था, जिसे सुंदरी ने अभी तक अपने सीने में छिपा रखा था । बेशक वह शक्ति को बेहद प्यार करने लगी थी लेकिन अमन की मुहब्बत एक ख़ुदाई चीज़ थी जिसे वह कसकर सीने से लगाए रखती । वह सोचती किसी को इसकी ख़बर नहीं थी, शक्ति को भी नहीं ।

पिछले कुछ दिनों से सुंदरी और शक्ति ने हवेली की छत पर बरसाती की ओट में सोना शुरू कर दिया था । वर्षा होने पर कई बार रात को बिस्तर लपेटने पड़ते, लेकिन उन्होंने कभी इसकी परवाह नहीं की थी । दो चारपाइयाँ बिछाई जाती । दो बिस्तर लगते, लेकिन सुंदरी की निजी नौकरानी चंपा को शक था कि वे दोनों सोती एक ही चारपाई पर थीं । चाहें शक्ति सुंदरी की चारपाई पर सोती हो, चाहें सुंदरी शक्ति की चारपाई पर पड़ जाती हो, अल्लड़ जवानी ? चंपा ने कभी इसकी पड़ताल नहीं की थी । बड़े लोगों की बड़ी बातें । फिर शक्ति तो लाहौरन थी । लाहौरनों के तो नखरों का ही क्या कहना । आजकल वे जागती भी तो कितनी देर से । तेज धूप निकल आती तब जाकर उनकी आँख खुलती । बेचारी चंपा कई बार ढेर-सी सीढ़ियां चढ़ कर दबे पांव उन्हें देख आती ।

उस दिन चंपा की तबीयत ठीक नहीं थी । वह काम पर नहीं आई थी । सुंदरी की मां की आदत थी कि वह तड़के उठतीं, अपना नितनेम करके कामकाज के लिये निकल

* न्योता दिया
** शीत काल के

जाती। बीच में जब फुर्सत मिलती तो आकर नाश्ता कर लेती, नहीं तो वह अक्सर खाने के वक्त ही घर लौटती थी। घर में कोई नहीं था। लड़कियों सबसे ऊपर की छत पर सोई पड़ी थीं और सुंदरी के ससुराल के गांव से कोई ख़त लेकर आया था। बंती रसोई में खाना पकाने की तैयारी में लगी थी। दामाद के घर से ख़त लेकर आया आदमी उदास उदास सा था। उसके हाथ में जो लिफ़ाफा था उसका एक कोना फटा था। यह देखकर बंती घबरा उठी। तेज़ी से सीढ़ियाँ चढ़ कर वह सबसे ऊपर की छत पर लड़कियों को जगाने के लिये गई, लड़कियाँ तो एक दूसरे के गले में बाहें डाल कर गहरी नींद में सो रही थीं। इस तरह एक दूसरे के गले में बांहें डाले सोई देखकर बंती को बहुत शर्म आई और वह उन्हीं कदमों से वापिस लौट आई। लेकिन इस ख़त में कोई बड़ी ज़रूरी बात थी, बंती पत्रवाहक को नाश्ता पानी पूछ कर फिर सीढ़ियाँ चढ़ कर ऊपर गई, यह सोच कर कि शायद वे जाग उठीं हों। वे तो पहले की तरह बेसुध पड़ी थीं। जैसे रात भर जगराता काटा हो। बंती नीचे आंगन में आई, उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे, क्या न करे। इतने में बीबी आ गई। जल्दी जल्दी उसने अपनी बहन का भेजा हुआ ख़त पढ़ा। पढ़ते ही उसने चीख़ मारी और धड़ाम से आंगन में गिर पड़ी।

यह सुन कर सुंदरी और शक्ति घबराकर जाग उठीं और फ़ौरन नीचे उतर आई। उनकी सांसें फूल गई थी। मुग़लों और अफ़ग़ानों में लड़ाई छिड़ गई थी और पहले ही हमले में सुंदरी का दूल्हा मारा गया था। हाथी पर बैठा था। जब लड़ाई में तोप के गोले छूटे तो हाथी दौड़ पड़े, मंगल हाथी से नीचे गिर पड़ा और अपने ही हाथी के क़दमों के नीचे कुचल कर रह गया।

39

घर की नौकरानियां बार-बार सुंदरी को इशारे करतीं कि वह अपनी कलाइयों में सजी काँच की चूड़ियाँ को तोड़ दे। फिर अड़ोसने पड़ौसनें आईं, उनका भी यही तकाज़ा था। न जाने क्यों ऐसा करने की हिम्मत सुंदरी में नहीं पैदा हो रही थी। फिर उसकी मां को इसका एहसास हुआ और वह अनायास ही विलाप कर उठी, "नहीं, नहीं, नहीं। मेरी जाई यह कुछ नहीं करेगी। सुंदरी अछूत कँवारी है। इस बेचारी का कोई क़सूर नहीं। बस चार फेरों की देनदार यह अपनी चूड़ियाँ नहीं तोड़ेगी। मैंने ही इसे मजबूर करके इस रिश्ते के लिये मनाया था। एक ग़लती करके मैंने अपने सिर का साई गँवा लिया था। दूसरी ग़लती करके मैंने अपनी बेटी का सुहाग उजाड़ लिया। मुझ जैसी अभागिन भी कोई होगी ?"

फिर सुंदरी की मां पत्रवाहक के साथ अपनी बहन के गाँव चल पड़ी। वह सुंदरी को अपने साथ लेकर नहीं गई जब किसी पड़ोसिन ने इस तरफ़ इशारा किया तो वह जैसे बिदक उठी, "इसकी कोई ज़रूरत नहीं। यह बेचारी कहाँ खज्जल ख़्वार होगी ?" सब लोग उसके मुंह की तरफ़ देखते ही रह गये। सुंदरी की मां ने पोटली में चार कपड़े बांधे और चल पड़ी। शक्ति और सुंदरी हक्की बक्की रह गईं और चकित नेत्रों से उसे देखती रह गईं।

सुंदरी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। उसके साथ यह कौन-सा नाटक खेला जा रहा था ? वह अपने मौसेरे भाई से हरग़िज हरग़िज प्यार नहीं करती थी। उसने तो पहली नज़र में ही अपना दिल अमन को दे दिया था। लेकिन उसकी मां का हठ ज़बरदस्त था। उसने अपनी विधवा मां के आगे हथिआर फेंक दिये थे। और फिर जब उनके आंगन में छोलदारी और कनातें लगाकर गुरू बाबे का कीर्तन शुरू हुआ तो उसने अपने आप को होनी के हवाले कर दिया था। सतगुरू की रज़ा में राज़ी हो गई थी। उसकी तक़दीर में जो कुछ था उसे खिले माथे से क़बूल कर लिया था।

और उस अटारी को इस तरह ध्वस्त (तबाह) होते देखकर उसके प्राण सूख गये थे। एक अजीब संशय था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था; वह क्या करे, क्या न करे। कभी उसे लगता जैसे उसकी दुनियां अंधेरी हो गई थी, घुप्प अंधेरी; कभी उसे लगता जैसे उसने कोई ग़लत क़दम उठाया था, और जैसे वह फिर लौट कर अपने ठिकाने पर पहुंच गई हो।

वह सोचती थी कि वह अब अमन को अपना लेगी। कल ही तो शक्ति से अमन का ज़िक्र करते हुए बार बार उसके ओंठों पर यह बात आते आते रह गई कि शक्ति अमन से शादी कर ले। यह तो अच्छा ही हुआ कि वह इस तरह की बेहूदगी नहीं कर बैठी थी। कई बार हाथों से डाली गांठे दाँतों से खोलनी पड़ती हैं।

लेकिन उसके मौसेरे भाई का क्या क़सूर था जो इस तरह जान गंवा बैठा ? उसे किस गुनाह की सज़ा दी गई थी। यह भी कोई बात थी। मां का एकलौता बेटा, बिन आई मौत मर गया था। शक्ल सूरत तो ऐसी वैसी ही थी, लेकिन दिल का बुरा नहीं था। वह सुंदरी से इश्क करने लगा था, इसमें उसका क़सूर क्या था ? दर्जनों नौजवान सुंदरी पर जान देते थे। रूप भी कइयों को पाप बन कर लिपट जाता है, सचमुच हुस्न बड़ी भारी ज़िम्मेदारी होता है।

शक्ति की अजब मुसीबत थी। जो हालात पैदा हो रहे थे उनमें न तो वह सुंदरी को अकेले छोड़ कर जा सकती थी, न इस तरह उन लोगों के यहां पड़ी रह सकती थी, वह करे तो क्या करे ? उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

और जब उसे अमन का ख़्याल आता तो मारे घबराहट के वह बेहाल हो जाती। दिल चाहता उड़कर उसके पास पहुंच जाये। उसका मन टटोल कर देखे। उससे पहले कि कोई अमन को दबोच ले, शक्ति अमन को अपना लेना चाहती थी। उसके साथ कौल इक़रार कर लेना चाहती थी।

उस दिन तो शक्ति के होश उड़ गये जब सुंदरी उसके साथ अमन का ज़िक्र करने लगी। कितना सुंदर है ! कितना सुशील है ! कितना प्यारा लगता है !

फिर एक दिन बैठी बैठी अचानक बोल उठी – जी करता है, बंदा उसे कच्चा खा जाये।

"किसे ?" शक्ति ने पूछा और सुंदरी का चेहरा लाल सुर्ख़ हो गया। शक्ति को पता था कि वह किसे याद करके इस तरह भड़क उठी थी; उसने सुंदरी को नहीं टटोला;

फ़िज़ूल में उसे शर्मिन्दा नहीं किया ।

यही शक्ति को ख़तरा था । आज कल वह सुंदरी से जितना दूर दूर होने की कोशिश करती थी, वह उतनी ही उसके नज़दीक आती जा रही थी । वह सोचती थी कि शक्ति उसकी मदद कर सकती थी । ज़रूरत पड़ने पर दोनों करतारपुर जा सकती थीं । गुरू बाबे के शहर की यात्रा भी हो जायेगी । गुरू अंगद देव जी के दर्शन भी हो जायेंगें और फिर अमन से मुलाक़ात होगी । इस तरह के रिश्ते अजली होते हैं । उसने अमन को दिल दिया था, अब वह संपूर्ण रूप से अपने आपको उसके हवाले कर देगी ।

शक्ति उस रात अपने कमरे में, पलंग पर सोई, सुंदरी अपने कमरे में अपने पलंग पर सोई । उनके कमरों के बीच की दीवार का किवाड़ रात को हवा के झोकों के साथ बंद हो गया । सारी रात दरवाज़ा ज्यों का त्यों बंद रहा ।

अगली सुबह भोर के समय शक्ति भजन पाठ वाले कमरे में माथा टेकने के लिये हाज़िर हुई । देखा तो सुंदरी पहले से ही वहां विराजमान थी । देखकर शक्ति हैरान रह गई । वैसे पिछले कई दिनों से उन्होंने इस कमरे की तरफ़ रूख नहीं किया था । उस दिन के बाद से रोज़ दोनों लड़कियां अपना नित्तनेम करतीं । कभी मिलकर, कभी अलग अलग । मज़ाल है कभी नागा कर जायें । शक्ति मंगल का व्रत रखती थी । मंगलवार ही को तो अमन के साथ उसका हादसा हुआ था । सुंदरी ने भी मंगलवार का व्रत रखना शुरू कर दिया । शक्ति मन ही मन सुंदरी पर हंसती रहती । वह बिना मतलब फ़ाके करती थी । शक्ति की तो बात और थी । उसकी ज़िन्दगी में तो मंगलवार मील का पत्थर बन गया था । बेचारी सुंदरी को क्या पता, मंगलवार की उस शाम शक्ति ने क्या पाया था, क्या खोया था ।

ऐसा लगता था शक्ति की फिर हार हो रही थी । शतरंज की चाल कुछ इस तरह चली जा रही थी कि उसकी मात होकर रहेगी । बात यूं हुई कि उस रात मुश्किल से शक्ति की आँख लगी थी कि सुंदरी आहिस्ता से उसके बिस्तर में आ घुसी । लेटते ही सिसकियां लेने लगी । शक्ति बार-बार उससे लाड़ करती, बार-बार उसकी भावुकता का कारण पूछती । सुंदरी और भी ऊँची आवाज़ में रोने लगी । आखिर उसने अपने दिल की गांठ खोली । "मैं अमन से प्यार करती हूं ।" वह फफक उठी । "मैं एक ही नज़र में उस पर क़ुर्बान हो गई । जितने दिन वह हमारे यहां रहा, मैं उसकी पूजा करती रही । इतना भोला, इतना प्यारा, मैं तो उसके साथ भागने को भी तैयार थी, लेकिन वह कम्बख़्त टस से मस नहीं हुआ । शक्ति भैना अब किसी तरह तू उसके साथ मेरा मेल करवा दे । मैं तेरे हाथ जोड़ती हूं । मैं उसे मना लूंगी । पता नहीं शायद मेरे मौसेरे भाई की मौत इसीलिये हुई कि हम एक दूसरे के लिये ...." सुंदरी बोलती बोलती फफक कर रोने लगी । रोते रोते उसकी घिग्घी बंध गई ।

यह सब सुन कर, देख कर कोई करे तो क्या करे ? शक्ति ने उससे वायदा किया कि सुंदरी की मां के लौटते ही वे किसी बहाने से करतारपुर चलेगी । रास्ते में सुंदरी लाहौर भी शक्ति के घर रह लेगी ।

40

सबसे बड़ी समस्या जो सुंदरी को परेशान कर रही थी, वह यह थी, कि अपनी बहन के साथ इतने दिन गुज़ार कर जब उसकी मां लौटेगी तो वह तुरंत अपनी बेटी को करतारपुर भेजने के लिये भला कैसे राज़ी होगी ? और अगर शक्ति भी लाहौर वापिस चली गई तो वह पीछे अकेली रह जायेगी । आठों पहर उसका दिल डूबता रहेगा ।

और इधर महीने से ऊपर समय बीत गया था, उसकी मां के आने की कोई ख़बर नहीं थी ।

कुछ दिन और बीत गये । फिर वह लौटी । स्यालकोट पहुंचते ही अगले दिन वह करतारपुर जाने की तैयारियां करने लगी । सुंदरी की जैसे रब्ब ने सुन ली हो । उसकी मां का कारोबार कारिन्दे चला रहे थे, चलाते रहेंगे । उसे उनकी कोई चिन्ता नहीं थी । फिर रास्ते में वे शक्ति को भी लाहौर पहुंचाते जायेंगे । उसकी मां का अफ़सोस करने के लिये भी तो जाना था । भाई दुनीचंद अकेले रह गये थे । सुंदरी की मां कुछ इस तरह सोच रही थी ।

लेकिन शक्ति को तो सुंदरी अपने साथ करतारपुर ले जाना चाहती थी । शक्ति उसकी अभिन्न हमराज सहेली बन गई थी । सुंदरी सोचती वह शक्ति के बग़ैर अमन को अपने बस में नहीं कर सकेगी । जितने दिन अमन उनके यहां रहा था, उसने परों पर पानी नहीं पड़ने दिया था । वह उसको न चाहता हो, ऐसी बात नहीं थी । सुंदरी की मुहब्बत का तीर बेशक उस पर चल चुका था । लेकिन एक शराफ़त एक झिझक, एक संकोच, वह अपने आपको जैसे संभाल संभाल कर रखता था । कई बार सुंदरी को लगता जैसे अनकहा प्यार उसकी नज़रों में से छलक रहा हो, उसके अंग अंग में एक विह्वलता मचल रही होती, लेकिन अगले क्षण वह सुन्न पड़ जाता, जैसे किसी ने उसे गहरे कुऐं में डुबकी देकर निकाला हो ।

एक बार वे अपनी सवारी में कहीं जा रहे थे । उनकी मां एक तरफ़ बैठी थी, दूसरी तरफ़ सुंदरी थी, अमन बीचोंबीच बैठा था । अचानक सुंदरी को महसूस हुआ, कि उसकी दाईं और से जहां अमन बैठा था, मन्द-मन्द गर्मी का सेक आ रहा था । जाड़ों के दिन थे । कुछ देर बाद, अगले मोड़ पर उसकी बांह सुंदरी की बांह से रगड़ खाती हुई जैसे जुड़ कर रह गई । फिर कुछ देर बाद जैसे उसका लहू इसके लहू में बह रहा हो, इसका लहू उसके लहू में बह रहा हो । एक ऐसा स्वाद, ऐसी सनसनाहट जो बयान से बाहर थी । सुंदरी की आंखें मूंद गई । पता नहीं सवारी कितने योजन, कितने युगों तक चलती रही । कितने जन्म बीत गये उस मादकता में । जब सवारी उनके आंगन के बाहर आकर रूकी तो उसे झकझोर कर उठाया गया । सुंदरी को बहुत शर्म आई । जैसे वह बैठी बैठी किसी गहरी नींद में सो गई थी ।

सवारी में से निकल कर वह अपने कमरे में जाकर पलंग पर औंधे मुंह गिर पड़ी । सारा दिन वह अधसोई सी मदहोश पड़ी रही ।

उस रात दस्तर ख़ान पर जब अमन से उसकी मुलाक़ात हुई, सुंदरी को उसकी

नज़रों से ऐसा लगा जैसे कोई अपने को छोटा छोटा-सा महसूस कर रहा हो। जैसे कोई लज्जित-सा हो।

किस लिये ?

और पहला मौक़ा मिलते ही, जब उसकी मां उठकर रसोई में कुछ परसने गई थी, सुंदरी ने उसका हाथ पकड़ कर ज़ोर से दबाया और अमन ने उसकी तरफ़ इस तरह देखा जैसे कोई बंधन ढीले पड़ गये हों, कोई गांठें पड़ गई हों।

और फिर उन दोनों को एक दूसरे की ओर देखना अच्छा लगता, एक दूसरे के काम आना अच्छा लगता। एक दूसरे की इन्तज़ार करना अच्छा लगता। मौसेरे भाई के साथ सुंदरी की मंगनी की लाख चर्चायें होतीं रहती, इन दोनों ने जो नई खेल शुरू की थी, उसमें वे आगे ही आगे बढ़ते जा रहे थे।

लाहौर से करतारपुर के लिये चलने से पहले शक्ति ने साफ़ साफ़ शब्दों में सुंदरी से पूछा था कि अमन के साथ उसकी पहचान किस हद तक पहुंची थी। शक्ति के लिये यह जानना ज़रूरी था, इसके पहले कि वह अपने आप को ज़िन्दगी मौत के इस खेल में दांव पर लगाती और सुंदरी ने उसे सारी सच्ची बात बता दी। अपने सच्चे प्यार की पवित्रता की कहानी।

शक्ति सोच रही थी कि उसे भी अपने दिल का भेद सुंदरी को बता देना चाहिये। लेकिन उसकी हिम्मत नहीं पड़ती थी। सुंदरी अमन की मुहब्बत में कहां कहां पहुंच गई थी, उसे बेहद धक्का लगेगा। उसके मौसेरे भाई की मौत न हुई होती तो और बात थी, अब अगर सुंदरी को एक और चोट लगी तो वह कभी बच नहीं सकेगी।

शक्ति की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। दिन रात, दिन रात वह अपने गुरू बाबे के आगे हाथ जोड़ती रहती, विनती करती रहती, एक तरफ़ अमन की मुहब्बत दूसरी तरफ़ सुंदरी का प्यार, वह टुकड़े टुकड़े हो रही थी।

फिर उसने फ़ैसला कर लिया वह करतारपुर सुंदरी और उसकी मां के साथ जायेगी और अपने आपको गुरू महाराज के सामने पेश कर देगी। अगर उसकी क़िस्मत में हार लिखी हुई थी तो वह अपने आप को क़िस्मत के हवाले कर देगी।

इधर सुंदरी ने उसे "दीदी" कहकर पुकारना शुरू कर दिया था। शक्ति बेशक उससे साल छः महीने बड़ी थी, ज्यों ज्यों करतारपुर नज़दीक आ रहा था, सुंदरी को जैसे भीतर का कोई ख़ोफ़ खाये जा रहा था। वह थर थर कांपने लग जाती। जब वे अकेली होती, वह शक्ति के सामने हाथ जोड़ने लग जाती- "दीदी, तुमने मेरी आबरू रखनी है। मैंने अपनी कश्ती तेरे हवाले कर दी है।"

शक्ति का दिल कहता, उस जैसी प्यारी लड़की के साथ वह कैसे नाइन्साफ़ी कर सकेगी। हर घड़ी, हर पल शक्ति अपने आपको सूली पर चढ़ने के लिये तैयार करती रहती। यह सोचकर उसकी पलकें भीग भीग जाती। ऐसा अक्सर होता था, सुंदरी के साथ इस तरह का कोई वायदा करते वक्त शक्ति का गला भर उठता। सुंदरी की समझ में कुछ न आता। क्षण भर की कमज़ोरी के लिये शक्ति को कितनी बड़ी सज़ा भुगतनी पड़ रही

थी । जैसे वह अपना सलीब अपने कंधों पर ढो रही है ।

सफ़र की आख़िरी मंज़िल में सुंदरी के हाथ पैर ठंडे हो रहे थे । हर समय वह शक्ति का हाथ या बांह थामें रहती थी । "दीदी" "दीदी" कहते उसका मुँह नहीं थकता था । उसकी मानसिक दशा अजीब सी हो रही थी । एक उतावली, एक विह्वलता, एक ख़ौफ़, कुछ भी हो सकता था । क्या पता इतने दिनों में अमन ने कोई और जीवनसाथी ढूंढ लिया हो । हो सकता है उसने शादी भी कर ली हो । शादी के क़ाबिल तो था ही । अगर ऐसा हो गया तो वह क्या करेगी ? अगर सुंदरी के प्रति उसका व्यवहार वैसे ही ठंडा हुआ जैसा स्यालकोट में था तो वह क्या करेगी ?

धीरे धीरे अंधेरा छा गया था जब वे करतारपुर पहुंचे । सामने गुरू बाबे की नगरी उनकी प्रतीक्षा कर रही थी । उनके आने की ख़बर भाई मूले की पत्नी की सहेलियों को पहले से मिल गई थी । शहर से बाहर के पड़ाव पर घोड़ी लेकर वे लोग इनके स्वागत के लिये आये खड़े थे । काफ़िले में बहुत से और यात्री भी थे जिनकी इन्तज़ार बहुत से करतारपुर वासी कर रहे थे । अमावस की रात थी, अंधेरा बढ़ रहा था, घुप्प अंधेरा ।

काफ़िला पड़ाव पर पहुंचा तो एक दम आंधी चलने लगी । इससे पहले उनके मेज़मानों ने अपने मेहमानों को देख लिया था, पहचान लिया था । आंधी ज़ोर से चलने लगी । हर चीज़ को उड़ा उड़ा कर फेंक रही थी । हाथ को हाथ नहीं सूझ रहा था । यात्रियों का काफ़िला तितर बितर हो गया था । कोई कहां कोई कहां जा पड़ा था । क्षण भर में चारों तरफ़ कोलहल मच गया । आंधी फूत्कार कर रही थी । मुट्ठी-मुट्ठी रेत मुंह और आंखों में गिर रही थी । सुंदरी का हाथ शक्ति के हाथ से कभी का छूट गया था । शक्ति का पता नहीं था, न ही सुंदरी की मां का पता था । आंधी हरेक को औंधे मुंह गिरा रही थी । इतने में सुंदरी की जान में जान आ गई । यह तो अमन था । सुंदरी ने अपना हाथ उसके हाथ में थमा दिया । फिर कस कर पकड़ लिया । ज़ोर से, जैसा उसने स्यालकोट में किया था ।

बेचारी सुंदरी, जिसका हाथ उसने पकड़ा था, वह तो शैली था । अमन तो कभी का खडूर गया हुआ था । उनके स्वागत के लिये शैली अपनी मां और मौसी के साथ आया था । सुंदरी का भी क्या क़सूर, अमन और शैली की एक-सी सूरत थी, एक सा क़द, एक को छिपाओ, दूसरे को निकालो ।

दूसरा खंड

1

ठाठें मारती रावी नदी के किनारे बसा करतारपुर बढ़कर, फैलकर अच्छा ख़ासा शहर बन गया था। क़रीब 20 हज़ार की आबादी धर्मशाला, गलियां, मुहल्ले, बाज़ार का कहना ही क्या; शहर के एक सिरे से शुरू होकर दूसरे सिरे तक निकल गया था। क़िस्म क़िस्म की दूकानें, लाखों का व्यापार। उधर गुरू नानक के श्रद्धालु, जिसका मन उदास होता, झुंडों के झुंड अपना जन्म सफल करने के लिये बाबे की नगरी में आये रहते। कई तो दर्शन मेला करके लौट जाते, कुछ यहीं टिक जाते। खेतिहरों के लिये खेतीबाड़ी की सहूलतें थीं, कारीगरों के लिये काम की कमी नहीं थी। नदी किनारे होने के कारण व्यापारी सोचते, किसी दिन करतारपुर लाहौर और मुलतान जैसी मंडी बन जायेगा।

गुरू नानक का बसाया शहर करतारपुर गुरू सिक्खों का मक्का बनता जा रहा था। बाबा नानक के उपासक चाहे वे नज़दीक रहते हों, चाहे दूर, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान इस शहर की चरण-धूलि के लिये तरसते रहते। धर्मशाल, में आठों पहर रब्बी कीर्तन-कथावार्ता "धन्न निरंकार" का प्रवाह जारी रहता, संत महात्मा जुड़ते। योग साधना, गोष्ठियां होती, बेहद गहमा गहमी रहती।

और फिर अचानक गुरू बाबा नानक देव जी के ज्योति जोत समाने के कारण ऐसा लगता जैसे सब कुछ ठप हो गया हो। न आगे बढ़ सकते थे न पीछे हट सकते थे, करतारपुर वासियों की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

एक के बाद दूसरी मुसीबत तब आ पड़ी जब एक दिन अचानक गुरू अंगद देव जी करतारपुर छोड़ कर कहीं चले गये। इसका कारण हर किसी को मालूम था। इस लिये न भाई बुड्ढा जी, न कोई और गुरू प्यारा इस मामले में दख़ल देने की ज़ुर्रत दिखा रहा था।

शहर में बहुत दिनों से एक शोक-सा छाया रहता। फिर लोग इकट्ठे हो कर भाई बुड्ढा जी के पास गये। भाई बुड्ढा जी को- गुरू बाबे का वरदान था- "तैथों न कदे उहले होसां।" भाई बुड्ढा जी करतारपुर के पांच प्रमुख लोगों को साथ लेकर गुरू अंगददेव जी की तलाश में निकले। जो पांच बुजुर्ग उनके साथ गये उनके नाम थे- भाई आजिता रंधावा, भाई धीरो जी, भाई बूड़ा कलाल, भाई भगीरथ अनंद और भाई साधारण।

अमन भी इनके साथ चला गया। जवान जहान लड़का, वह सोचता और कुछ नहीं तो गुरू महाराज के दर्शन तो हो ही जायेंगे।

अगली सुबह सो कर उठी शक्ति और सुंदरी दोनों फटी-फटी आंखों से आसपास अमन को ढूँढ रही थी। कल रात तो अंधेरे के बाद पहुंचने के कारण, थकी मांदी वे खा पीकर सो गई थी।

यह जानकर कि कल रात जिसे अमन समझकर उसने जिसका हाथ पकड़ लिया था, वह तो कोई और था, सुंदरी शर्मिन्दा हो रही थी। जब उसने ज़ोर से शैली का हाथ दबाया था, सुंदरी को लगा जैसे बिजली चमकने के साथ ही शक्ति ने भी उन्हें देख लिया था।

बेशक शक्ति ने उन्हें देख लिया था लेकिन ख़फ़ा होने की बजाये शक्ति जैसे राहत महसूस कर रही थी। बिना किसी देरी के मंज़िल पर पहुंचने की उतावली में सुंदरी गलत गली में घुस गई थी। यह बात अलग थी कि शक्ति को बस उसकी पीठ ही दिखाई दी थी।

उधर शर्मिन्दा होने की बजाये सुंदरी अपने आपको सान्त्वना दे रही थी। कोई बात नहीं, अंधेरे में टटोलते हुए उसके हाथ जो मोती लग रहे थे, वह भी माणिक था, हीरा था। कोई पत्थर कंकर नहीं था।

सचमुच शैली तो अमन से भी कहीं अधिक सुंदर था। अमन जैसे नैन-नक्श लेकिन उससे ज़्यादा गोरा। अमन जैसी शक्ल सूरत, लेकिन उससे कहीं सुंदर डील डौल। अमन जैसी शक्ल, लेकिन पलकों में उससे ज़्यादा जादू भरा हुआ। अमन जैसा मृदुभाषी, अमन की तरह हर किसी के काम में आकर ख़ुश, हर किसी की सेवा में हाज़िर।

बेशक यह सब ठीक था, लेकिन शक्ति के लिये अगर वह अमन नहीं था तो वह कुछ भी नहीं था। शक्ति किसी और मट्टी की बनी थी। शक्ति नौजवान थी, सुंदर थी, लेकिन दानिश थी, उस पर विद्वता का रंग चढ़ा था। सुंदरी में अल्हड़ जवानी थी जो सब सीमायें लांघ रही हो, बेजोड़ हुस्न जैसे बेनक़ाब होने के लिये बेताब हो रहा हो।

पीले रंग की धूप निकल आई थी, लेकिन अमन कहीं नहीं था। औरत जात का संकोच, न शक्ति न सुन्दरी का मुंह खोलकर उसके बारे में पूछने का साहस कर रही थी। ऐसा लगता था कि सुंदरी की मां ने अपने ढंग से यह जानकारी कल रात ही हासिल कर ली थी। अमन तो कभी का खडूर गया हुआ था।

एक निहायत दिलचस्प तनाव था। शक्ति सोचती अमन के बारे में जानने का हक सिर्फ़ उसी को है। सुंदरी मन ही मन अमन पर अपना कब्ज़ा बनाये हुए थी। उसी की ख़ातिर तो वह और उसकी मां इतनी मंज़िलें तय करके यहां आई थी। शक्ति सोचती थी, इन बेचारे स्यालकोटियों को क्या पता कि उसके भीतर की लाहौरिन कितने पड़ाव आगे बढ़ चुकी थी।

जब वे मत्था टेकने के लिये धर्मशाला जाने की तैयारी कर रही थीं, तब शक्ति ने मन ही मन सोचा, अगर शैली भी उनके साथ चल पड़ेगा तो इसका अर्थ यह होगा कि सुंदरी का तीर निशाने पर लग चुका है। वह अभी यह सोच ही रही थी कि सुंदरी सज-धज कर सामने कमरे में से निकल कर शैली से कहने लगी- आप नहीं हमारे साथ चलेंगे ? शैली सुबह अमृतवेला में अपनी मां और मौसी के साथ धर्मशाला का नेम पूरा कर चुका था, तब मेहमान सो कर भी नहीं उठे थे, लेकिन वह सुंदरी की फरमाइश पर उनके साथ जाने के

लिये तैयार हो गया ।

सुंदरी ख़ुश थी । यह देख कर शक्ति उससे भी ज़्यादा ख़ुश थी ।

सुंदरी की मां सबसे आगे जा रही थी । सुंदरी और शक्ति के बीच चल रहा शैली उन्हें बाबा नानक के ज्योति जोत समाने के बाद करतारपुर में हुई फजूल की कहानियां सुना रहा था । चूंकि सिरीचन्द जी को गदद्दी नहीं मिली थी, इस लिये वे सख़्त ख़फ़ा थे । वे गुरू अंगददेव जी को गुरू नानक देव जी का उतराधिकारी मानने के लिये हरग़िज तैयार नहीं थे । परिवार के बाक़ी लोग सिरीचन्द जी की नाराज़गी से सहमत थे ।

धर्मशाला से लौटते वक्त बातों ही बातों में सुंदरी और शक्ति को इस बात का पता चल गया कि अमन तो गुरू अंगददेव जी के दर्शनों के लिये बहुत दिनों से करतारपुर से बाहर गया हुआ था । फिर वहीं गुरू महाराज के चरणों में टिक गया था । आज कल तो सिर्फ़ उसके ख़त आते थे ।

2

अगले दिन अमन का एक ख़त उनके हाथ आ गया ।

''जब हम करतारपुर से चले तो जत्थे के सभी लोग परेशान थे, सिवाये भाई बुड्ढा जी के । बस वे ही पूरे उत्साह में थे । हम लोग फ़िक्रमंद थे, क्योंकि किसी को नहीं पता था कि गुरू महाराज कहां निकल गये हैं । छः महीने होने लगे थे । उनकी कोई खोज ख़बर नहीं थी ।

''लेकिन एक भाई बुड्ढा थे कि अपने नाक की सीध पर चले जा रहे थे । सब सोच रहे थे कि यह तो अंधेरे में टटोलने जैसी बात है । लेकिन भाई बुड्ढा जी के मुखड़े की ओर देखकर मुझे लगता कि उन्हें अपनी मंज़िल की पहचान है । कोई रौशनी थी जो उन्हें खींच कर अपनी तरफ़ ले जा रही थी । कोई ख़ुशबू थी जिसके रास्ते पर वे अपने आप चले जा रहे थे । ''

''चलते चलते हम खडूर के नज़दीक विराई नाम के गांव में पहुंच गये । हमारी हैरानी की हद न रही, आगे आगे भाई बुड्ढा जी, और पीछे पीछे हम, वे निहाली नाम की एक औरत के घर के बाहर जाकर रूक गये । मामूली सी हवेली थी । ड्योढ़ी का दरवाज़ा गली की ओर खुलता था । बाहर की दीवार पर उपले पाथे हुए थे । कुछ उपले सूख गये थे, कुछ ताज़े ताज़े थापे गये मालूम होते थे । उनके बीच में से गोबर निचुड़ रहा था । ''इसका मतलब है कि घर की मालकिन भीतर ही है,'' कहते हुए भाई बुड्ढा जी ने दरवाज़ा खटखटाया । हमारी समझ में कुछ नहीं आ रहा था । इस तरह के मामूली से घर में गुरू महाराज भला कैसे हो सकते हैं ? हम सभी लोगों के ओंठों पर यही सवाल था ।

''इतने में भीतर से एक बीबी आई । साधारण-सी शक्ल सूरत, लेकिन सुंदर । भाई बुड्ढा जी को देखकर मंद मंद मुस्कराने लगी । जैसे उनकी पुरानी जान पहचान हो ।'' निहालिये! हम लोगों ने गुरू महाराज के दर्शन करने हैं, ''घर की मालकिन को देखते ही भाई बुड्ढा जी ने फ़र्माया । वह हक्की बक्की रह गई । हम सब हैरान थे कि भाई बुड्ढा जी

को उस औरत का नाम कैसे पता चल गया था। वैसे तो वह कह रहे थे कि इस तरफ़ मैं कभी नहीं आया।

''निहाली पत्थर का बुत बनी बिट बिट आँखों से भाई बुड्ढा जी के चेहरे की तरफ़ ताके जा रही थी। न हाँ कर सकती थी, न ना कर सकती थी। भाई बुड्ढा जी के मुखड़े का जलाल, उनके सामने कोई झूठ कैसे बोले ? लेकिन निहाली की मजबूरी यह थी कि उसे गुरू महाराज का आदेश था कि वह किसी से इस बात का ज़िक्र न करे कि गुरू अंगददेव जी महाराज उसके घर में विराजमान थे। उन्होंने तो अपने कमरे को भीतर से बंद कर रखा था। पिछले छ: महीनों से वे समाधि में लीन थे। निहाली बस एक लोटा दूध उनकी कोठरी के सामने रख देती थी। उन्होंने और किसी को अपनी शक्ल नहीं दिखाई थी। न ही निहाली ने गांव में किसी से इसका ज़िक्र किया था।

''गुरू महाराज का हुक्म नहीं।''

''यह सुनकर भाई बुड्ढा जी ने हम लोगों से शब्द पढ़ने के लिये कहा और हम सब गाने लगे :

''जे सड चन्दा उगवहि, सूरज चढ़हि हजार ॥
ऐते चानण होदिआं, गुर बिनु घोर अंधार ''

(आसा की वार, महला १)

''गुरू महाराज के कानों में शब्द की धुन पहुँची तो उन्होंने झट पट भीतर से कुंडी खोल दी।''

''निहाली अजीब असमंजस में थी।''

''भाई बुड्ढा जी से गुरू महाराज गले लग कर मिले। कितनी देर तक बाबा नानक जी की चर्चायें होती रहीं। भाई बुड्ढा जी ने बताया कि उनका नाम बाबा नानक जी ने ही रखा था इसलिये कि वे बड़ी सयानी बातें करते थे।''

''भाई बुड्ढा जी के आदर के कारण गुरू महाराज कोठरी में से तो निकल आये लेकिन उनका करतारपुर लौटने का कोई इरादा नहीं है। बार-बार यही कहते हैं- गुरू नानक देव जी ने मुझे गुरुआई बख़्शी है। बाकी सब चीज़ों पर उनके साहबज़ादों का अधिकार है, गुरू के खेत गुरू का घर, गुरू की धर्मशाल। गुरू अंगददेव जी ने फ़ैसला किया है कि वे अब करतारपुर नहीं लौटेंगे।

''और यहां खडूर में माई विराई के यहां गुरू नानक देव जी की मंजी है। एक बार गुरू नानक देव जी यहां आये थे। जब बाबा जाने लगे तो विराई ने श्रद्धा में आकर गुरू बाबे को कुछ दिन और रुकने का आग्रह किया। गुरू बाबा मेहर में थे, कहने लगे, कुछ दिन नहीं, बहुत दिनों तक तुम्हारे यहां आकर रहेंगे। इसी मंजी* पर आकर बैठा करेंगे।''

''यही नहीं, जब बाबा नानक जी ने गुरू अंगद देव जी को गुरू गद्दी सौंपी तो उन्होंने फ़रमाया था,-पुरखा जी, तुसीं खडूर जाके रहो। माई विराई दे घर साडे बैठण दी मंजी

---

* चारपाई (अनुवादक)

है। उस पर जाइ के तुम बैठो। मेरा सिंघासन वही है। तुसीं उथे जाइ कर बैठो। असीं तुहाडे पास आवांगे।*

"और फिर विराई बीबी के साथ गुरू अंगद देव जी का पुराना प्यार है। उन्होंने ही तो सँघर के साहूकार देवीचंद मरवाह के साथ गुरू महाराज का रिश्ता करवाया था। अब गुरू जी यहीं रहा करेंगे। एकाध दिन तक भाई बुड्ढा जी और बाकी गुरसिक्ख करतारपुर लौट रहे हैं। मुझ पर सतगुरू की कृपा-दृष्टि है। मैं उनकी सेवा में हाज़िर रहता हूं। उन्होंने मुझे अपने चरणों में स्थान बख़्शा हुआ है। मैं महाराज की सेवा टहल करके अपना जन्म सँवार रहा हूं।"

फिलहाल वापिस लौटने की मेरी कोई मर्ज़ी नहीं, यह ख़त मैं अपने जत्थे के साथ भेज रहा हूं। ये लोग कल करतारपुर लौटेंगे।

इस ख़त को लिखते हुए मेरी आँखों के सामने बार-बार वह नज़ारा आ रहा है जब हम गुरू महाराज के छः महीने से बन्द किवाड़ को खुलवा कर भीतर घुसे तो भाई बुड्ढा जी ने आँखों में आंसू भर कर यह श्लोक गाया :-

जिसु प्यारे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ॥
धिृगु जीवणु संसारि ताकै पाछै जीवणा ॥

"और फिर कुछ देर के लिये आगे पीछे एक सक्ता सा छा गया। गुरू महाराज ख़ामोश। हम सारे चुप बिट बिट एक दूसरे की ओर देख रहे थे। कुछ देर बाद गुरू महाराज ने यह श्लोक उचारा :

जो सिरु सांई ना निवै सो सिरु दीजै डारि
नानक जिसु पिंजर महि बिरहा नहीं सो पिंजरु लै जारि ॥

"और फिर भाई बुड्ढा ही महाराज की बाहों में थे और हम उनके चरणों को अपने आँसुओं से धो रहे थे। इस तरह के गुरू को छोड़ कर कोई कैसे आये ?"

3

अमन का ख़त एक बार परिवार को पढ़ कर सुनाया गया। फिर बारी-बारी से सबने यह ख़त ख़ुद पढ़ा। सारा दिन यह ख़त हाथों हाथ घूमता रहा। जो भी पढ़ता, ख़ामोश हो जाता। जैसे उनकी ज़बान पर ताले लग गये हों।

आख़िर भाई मूले की पत्नी ने ख़ामोशी तोड़ी, "मैं सोचती हूं कि हमें भी खडूर जाना चाहिये। गुरू महाराज के दर्शनों के लिये आये हैं। मुराद पूरी हो जायेगी।" वह बोली। लेकिन शब्द अभी उसके मुंह में ही थे कि उसकी अन्तर्आत्मा ने उसे कचोटा, वह ग़लतबयानी कर रही थी। वह अमन के लिये आई थी, अमन के लिये ही वह खडूर जाने की बात सोच रही थी। गुरू महाराज के दर्शन तो हो ही जायेंगे। इसमें क्या शक था।

शक्ति का स्वाभिमान, वह सोच रही थी, इतनी कोस सफ़र करके वह करतारपुर

* महिमा प्रकाश

आई थी, अगर अमन के दिल में उसके लिये तिल भर जगह थी, तो उसे अपने घर आये मेहमानों से मिलने आना चाहिये था। भला यह भी कोई बात हुई, वे लोग उसी के लिये करतारपुर आये थे, उधर जनाब अपना सामान उठा कर खडूर जा बैठे थे। बेशक गुरू महाराज की सेवा किसी भाग्यवान को ही नसीब होती है, लेकिन दिल के भी कुछ तकाज़े होते हैं। दुनियादारी भी कोई चीज़ होती है। बाकी सब लोग लौट आये थे और वह वहीं पालथी मारे बैठा था। शक्ति ने मन ही मन फ़ैसला कर लिया कि अगर अमन इनके आने की ख़बर सुनकर करतारपुर नहीं लौटता, तो वह हरग़िज़ हरग़िज़ खडूर नहीं जायेगी।

उधर सुंदरी की मां उठती बैठती खडूर जाने की तैयारियों में थी। विधवा औरत थी। उसकी हरकतों से शक्ति को ऐसा लगता था कि वह किसी भी तरह अमन को क़ाबू में लाकर अपनी बेटी सुंदरी को उसके साथ ब्याह देना चाहती थी। उसके भीतर की मां को पता था कि सुंदरी अमन से प्यार करती है और अब इससे पेशतर कि कोई और अमन पर झपटा मार ले, वह उसे अपना लेना चाहती थी।

दूर जाने की क्या ज़रूरत थी, उनके साथ आई शक्ति जब भी अमन का ज़िक्र आता था, लजा जाती थी। उसके चेहरे पर एक रौनक-सी आ जाती। उसकी तारीफ़ें करती वह थकती नहीं थी। यह दूसरी बात थी कि आम शहरी लड़कियों की तरह शक्ति में ओछापन नहीं था। आम नौजवान लड़कियों की तरह उसमें बेहूदा क़िस्म की चंचलता नहीं थी। एक ठहराव, एक गंभीरता थी। इस तरह की लड़कियां तो और भी ख़तरनाक होतीं हैं। जब उनके मन में कोई बात समा जाती है तो वे उसके पीछे ही पड़ जाती हैं। मज़ाल है कि अपने रास्ते से पीछे हट जायें।

सुंदरी की मां को एक बात पर भरोसा था। उसकी बेटी शक्ति से बीस गुना, सौ गुना कहीं सुंदर थी। बेशक शक्ति का बाप लाहौर शहर का माना हुआ रईस था, भाई मूला भी किसी से कम नहीं था; इतनी भारी जायदाद और लाखों का व्यापार छोड़ कर मरा था। सुंदरी की मां का अपने आप पर, और अपनी जाई पर भरोसा अहंकार की हद तक पहुंचा दिखाई देने लगा था, जैसे वह अपने आगे किसी को कुछ समझ ही न रही हो। ख़ास तौर पर जब से उसे इस बात का एहसास हुआ था कि शक्ति उसकी बेटी के रास्ते का रोड़ा बन सकती थी, वह शक्ति से खिंची खिंची रहने लगी।

शक्ति हैरान थी। यह औरत घर से यात्रा के लिये निकली थी। घर से यह कहकर चली थी कि वह बाबा जी के दर्शनों के लिये जा रही है। गुरू महाराज की चरणधूलि की खोज में। लेकिन करतारपुर पहुँचकर तो ऐसा लगता था कि उसके दिल में बस एक ही धुन थी। किसी तरह अमन उसके हाथ आ जाये तो वह अपनी बेटी की तरफ़ से निश्चिंत हो जाये। अमन की मां की दिन रात ख़ातिरें होतीं, ढेरों सौग़ातें वह पहले से ही उसे पेश कर चुकी थी। अब जब भी उसे मौक़ा मिलता, रोज़ नया तोहफ़ा उसे भेंट करती रहती। घर के सभी लोग देख देख कर अचंभित होते।

उस दिन परिवार के सभी लोग और मेहमान रावी के पार गुरू के खेतों में बने

बग़ीचे की सैर के लिये निकले वे घर से चले ही थे कि रिमझिम फुहार पड़ने लगी, लेकिन उन लोग़ों ने कोई परवाह नहीं की। बूंदें भी कभी तेज़ हो जाती कभी रूक जाती। मौसम बेहद सुहाना था। वातावरण में एक स्वाद स्वाद, एक ख़ुमार छाया था।

सारा दिन वे लोग बाग़ीचे में घूमते फिरते रहे। अपने साथ खाने पीने का सामान ले गये थे; खाते पीते रहे।

शाम के वक्त वे थके हारे, आमों के एक झुरमुट तले दरियां बिछाकर लेट गये। लेटे लेटे सबको नींद आ गई।

शक्ति की अभी आँख लगी ही थी कि किसी ने जैसे उसे झकझोर कर उठा दिया। आसपास सब लोग गहरी नींद में सोये हुए थे। अमन की मां, शैली की मां, उनके साथ आई नौकरानी, नौकर। लेकिन न कहीं सुंदरी दिखाई दे रही थी न शैली ही कहीं दिखाई दे रहा था। पहले तो क्षणभर के लिये शक्ति को डर सा लगा फिर वह मुस्करा पड़ी।

थोड़ी देर के बाद शक्ति फिर लेट गई। इस बार उसकी ऐसी आँख लगी कि जब उसकी नींद खुली तो दिन ढल चुका था।

बग़ीचा दरिया के किनारे से काफ़ी दूरी पर था। वापिसी पर घाट तक पहुंचते पहुँचते शाम गहरी हो गई। आगे जाकर देखा तो रावी ठाठें मार रही थी। नदी में बाढ़ आई हुई थी। लगता था पीछे पहाड़ों में भारी वर्षा हुई थी।

घाट पर जब कश्ती आई, उसमें पहले से ही कई मुसाफ़िर थे। घर के सारे नौकर चाकर बेड़ी में जा बैठे लेकिन जब शैली और सुंदरी की बारी आई तो मल्लाह ने उन्हें बैठाने से इन्कार कर दिया। कश्ती पहले से ही बोझ से झुकी जा रही थी। नौकरों ने कहा वे उतर जायेंगे, अगली बार में आ जायेंगे। शैली और सुंदरी ने कहा "किस लिये, हमीं रूक जाते हैं। अगले फेरे में आ जायेंगे" इसी तकरार के बीच मल्लाह ने बेड़ी ठेल दी। ऊपर से अंधेरा पड़ रहा था। उसे कम से कम दो और फेरे लगाने पड़ेंगे, ताकि अपने गुज़ारे के लिये दिन की कमाई पूरी कर सके।

शक्ति देख रही थी, अमन की मां देख रही थी, शैली की मां देख रही थी, नौकर चाकर देख रहे थे, बाक़ी मुसाफ़िर देख रहे थे, शैली और सुंदरी खिलखिला कर हंसते हुए किनारे पर खड़े थे। बेड़ी दरिया में दूर निकल आई थी। फिर एक दम छम छम वर्षा होने लगी। अब उन्हें देख सकना मुमकिन नहीं था। और फिर ऊपर से अंधेरा भी तो उतर रहा था।

ज्यों ज्यों कश्ती किनारे से दूर हो रही थी, त्यों त्यों वर्षा ज़ोर पकड़ती जा रही थी। अभी कश्ती ने आधा रास्ता पार किया था कि बारिश ने प्रचंड रूप धारण कर लिया, तूफ़ान फूत्कार रहा था। बादल गरजते थे, बिजली चमक रही थी। हर किसी को हाथ पैर पड़ गये। अब पीछे किनारे पर छूट गये शैली और सुंदरी के बारे में कोई नहीं सोच रहा था, बल्कि हरेक को अपनी अपनी पड़ी हुई थी। गुरू के सेवक "वाहे गुरू" "वाहे गुरू" कर

रहे थे, हिन्दू राम राम का जाप करने लगे थे, मुसलमान अल्लाह का विरद कर रहे थे ।

फिर एक घड़ी ऐसी आई जब क्षण भर के लिये ऐसा लगा कश्ती बेक़ाबू हो गई हो और किसी भी क्षण उलट जायेगी । पानी की लहरें उछाल उछाल कर कश्ती को पटक रही थी । ज्यों ज्यों बेड़ी डावांडोल होती, "धन्न बाबा नानक" "धन्न निरंकार" की पुकार ऊँची होती जा रही थी । इस सामूहिक पुकार में हिन्दू और मुसलमान दोनों शामिल हो गये थे । जैसे रावी के किनारे करतारपुर के पास बाबा ही सहायक हो सकता था ।

किनारे पर पहुंच कर मल्लाह सिजदे में गिर पड़े । इस तरह का तूफ़ान तो उन्होंने न कभी सुना था, न देखा था । "हज़रत नूह के वक्त का नज़ारा आज आंखों के सामने आया है । " मुसलमान मल्लाह बार बार कहता; बार बार कानों को हाथ लगाता, जैसे वह उन सवारियों का शुक्रिया अदा कर रहा हो जिन्होंने बाबा नानक को पुकारा था और सत्गुरू ने ख़ुद हाथ का सहारा देकर बेड़ी को पार कर दिया था ।

4

किनारे पर पहुंच कर लोग इतने भयभीत थे, ईश्वर के प्रति इतने कृतज्ञ थे कि किसी को शैली और सुंदरी की सुध ही नहीं रही थी ।

उधर वर्षा थमने का नाम नहीं ले रही थी । मूसलाधार वर्षा हो रही थी । थमने के बाद फिर बरसती थी । तूफ़ान लोगों को इधर उधर पटक रहा था । गहरी काली रात में एक हाथ को दूसरा हाथ टटोलना पड़ता था । इधर बादल अभी भी गर्ज रहे थे, बिजली अभी भी चमक रही थी ।

कश्ती से उतर कर सब सिर छिपाने के लिये किसी ओट की तलाश करने लगे । जहां कहीं कोई ओट दिखाई देती, लोग वहीं खड़े हो जाते । लेकिन वर्षा थी कि थमने का नाम नहीं ले रही थी ।

किनारे पर एक बंद दुकान की सुनसान परछत्ती में खड़ी भाई मूले की पत्नी पानी से निचुड़ रही थी । उसके सामने शैली की मां नसरीन पानी से भीगे अपने लहँगे को दोनों ओर से पकड़ कर निचोड़ रही थी ।

"मैं मर गई, लड़का लड़की परले किनारे पर ही भीगते रहेंगे ?" सुंदरी की मां परेशान हो रही थी ।

"क्यों?" शैली किसी मल्लाह के यहां जाकर टिक जायेगा" नसरीन पूरे हौसले में थी ।

यह सुनकर थोड़ी देर के लिये भाई मूले की बीवी को धीरज बंध गया । हालात ने कुछ खेल ही ऐसा खेला था कि कुछ भी नहीं हो सकता था ।

जवान जहान लड़की, जवान जहान लड़के के साथ काली बोली रात में एकदम अकेली । अगले ही क्षण यह सोच कर सुंदरी की मां सर से लेकर पैर तक कांप उठी । उसका दिल डूबने लगा । थोड़ी देर बाद जब वर्षा धीमी हुई तो उसे बड़ी मुश्किल से घर पहुंचाया गया । हर आदमी उसे समझा रहा था कि शैली को हर कोई जानता था, वह

लड़की को संभाल कर किसी परिचित घर में ले गया होगा। और जब पहली कश्ती दरिया में आयेगी वे लोग अपने घर पहुंच जायेंगे।

"शैली बड़ा ज़िम्मेदार लड़का है।" हर आदमी बार बार यही कह रहा था, सुंदरी की मां को अपनी बेटी का जोबन, उसकी छलकती हुई जवानी, उसकी तरसती आंखें, किसी के साथ की तलाश, याद आ जाती। उसकी इसी मांग को पूरा करने के लिये तो वह गुरू की नगरी आई थी। अमन की तलाश में। सुंदरी की मां पर तो अमन ने जैसे जादू कर दिया था। उसने तो कब से मन ही मन अमन को अपना जंवाई माना हुआ था।

इधर शैली और अमन जैसे सगे भाई हों। दो बुत, एक जान। सत्गुरू का आशीर्वाद प्राप्त किये हुए। उनकी मांए एक दूसरे पर जान देती थीं। एक ही जगह खाना पकता, एक साथ खातीं, एक ही छत तले बैठतीं। सगी बहनों से भी कहीं ज़्यादा क़रीब बाबा नानक का सहारा ढूंढती हुई आई थीं। उसी के परिवार की तरह गुरू की नगरी में रहती थीं। नित्तनेम का पालन करतीं, मेहनत करतीं, बांट के खाती। सुबह शाम कितना कितना समय धर्मशाला के सत्संग में बिताती। न किसी से वैर, न किसी का विरोध।

उस रात सोये सोये सुंदरी की मां बिलखने लगी, "मेरी बेटी कहाँ है ? मेरी सुंदरी ला दो। सुंदरी मेरी बेटी मुझे पुकार रही है। सुंदरी, मैं आई, मेरी लाडली बच्ची।"

अब वह बिस्तर से निकल कर बाहर जाने के लिये ज़िद कर रही थी। बाहर वर्षा ज्यों की त्यों थी, तुफ़ान ज्यों का त्यों था। बादल पहले की तरह ही घिर घिर कर आ रहे थे। बिजली ऐसे चमक रही थी जैसे नागिन उसे डस कर जा रही हो। बाहर गलियों में वर्षा के पानी से जलथल हो रहा था। सड़कों पर घुटने घुटने पानी बह रहा था।

"मेरी बेटी मुझे ला दो। सुंदरी बेटे मैं आ रही हूं।" भाई मूले की पत्नी अनायास बोलती जा रही थी, किसी के क़ाबू में नहीं आ रही थी। अपने बाल नोंचती, कपड़े फाड़ती, मुंह से झाग निकल रही थी। घर का हर आदमी उसे समझाने की कोशिश कर रहा था, लेकिन वह क़ाबू में नहीं आ रही थी।

अैसे वह इतना बावेला मचा रही थी कि ज़ोर से बादल गरजे। जैसे कान के पर्दे फाड़ कर रह जायेंगे। ऐसा लगा जैसे उनके पड़ौस में ही कहीं गाज गिरी हो। सब की आंखें चौंधिया कर रह गई। बादलों की गड़गड़ाहट सुनकर सुंदरी की मां एकदम सहम गई और भीगी बिल्ली की तरह ख़ुद-बाख़ुद सामने अपने पलंग पर जा बैठी। उसने आपना चेहरा दोनों हाथों से ढांप रखा था। थोड़ी देर इसी तरह बैठी रही, फिर बैठे बैठे उसकी आँख लग गई। थोड़ी देर बाद वह अपने पलंग पर ढेरी हो गई।

शक्ति मन ही मन शर्मिन्दा हो रही थी। तेजी और नसरीन को इस तरह असमंजस में पड़ा देखकर उसे अपनी मेज़मान औरतों पर तरस आ रहा था। बेचारी औरतें, और वे कर भी क्या सकतीं थी ? घर का एक मर्द खडूर जा बैठा था, गुरू बाबे की शरण में, दूसरा नदी के पार अपनी जवान जहान मेहमान लड़की के साथ अकेला रह गया था। लेकिन सवाल उठता था कि वे क्यों ऐसे पीछे रह गये थे दिनभर वे एक दूसरे से चिपके रहे थे।

एक दूसरे के कान में फुसफुसाते, फिर हंसने लगते। परिवार के लोग अगर दायीं तरफ़ चलते तो वे बायीं तरफ़ हो जाते। घर वाले आगे होते, तो वह पीछे रह जाते।

यह सोचती हुई शक्ति एक दम चौंक उठी। शायद उसके भीतर की जवान जहान लड़की को ईर्ष्या का दौरा पड़ रहा था। एक द्वेष था जो उसे इस तरह सोचने के लिये उकसा रहा था "शक्ति बीबी, तुझे जलन हो रही हैं।" उसने अपने आपसे कहा और उसके चेहरे पर एक मुस्कान ख़ेलने लगी। थोड़ी देर बाद वह भी अपने पलंग पर गहरी नींद में सो गई।

लेकिन तेजी और नसरीन को नींद नहीं आ रही थी।

"ज़िम्मेदारी तो है," नसरीन कह रही थी।

"बड़ी भारी ज़िम्मेदारी। जवान जहान लड़का लड़की इस तरह की काली बोली रात में एक दम अकेले। तौबा तौबा, मैं सोचती हूँ तो मुझे हौल पड़ने लगते हैं।" तेजी कह रही थी।

"गुरू बाबा मेहर करे।"

"अमन होता तो उसकी बात और थी।"

"हाँ, शैली, जरा ज़्यादा ही नटखट है।"

"आज की रात सही सलामत बीत जाये तो इन्हें खडूर भेज देंगे।"

"हाँ, सुंदरी की मां तो कभी की तैयारियां कर रही है।"

"लेकिन इस बात से इन्कार नहीं कि यह लड़की सुंदरी शक्ल सूरत की बहुत अच्छी है।" नसरीन से अपने दिल की बात छिपाई नहीं गई।

"तो फिर तुझे डर किस बात का खा रहा है?" तेजी ने चुटकी ली।

5

पड़ाव पर पहली नज़र में सुंदरी उसे जैसे खुलकर मिली थी, और फिर झेंप गई थी, शैली को निश्चय हो गया था कि जवान जहान लड़की को कोई ग़लतफ़हमी हो गई थी। शायद उसने उसे अमन समझ लिया था। लेकिन एकाध दिन बीतने के बाद सुंदरी की पलकों में जो प्यार महसूस होता, उसे देखकर शैली अपने दिल को टटोलने लग जाता, उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

लाहौर और स्यालकोट से लौट कर अमन ने शक्ति का ज़िक्र तो कई बार किया था, लेकिन सुंदरी के बारे में कोई ख़ास बात कभी नहीं की थी। शैली सोचता अमन निहायत बदज़ौक आदमी है। सुंदरी जैसी लड़की को देखकर तो उसकी कहानियाँ चल निकलती हैं। सुंदरी जैसी लड़की की चर्चा तो ख़ुद बाख़ुद ओंठों पर आ जाती है, उसकी हर नज़र दिल के पर्दे और रास्ते को तराशती जाती है। मुहब्बत की उदासियों के सांचे में ढाले सुनहरे बिम्ब टूकती जाती थी।

मेहमान लड़की के आदरवश शैली को बेहद संकोच होता, डर भी लगता, लेकिन सुंदरी जैसे एक सरिये की तरह उसके दिल में धसती जा रही थी। सुंदरी को उसके पास

बैठना अच्छा लगता था। जब सुंदरी उसकी तरफ देखती तो शैली के सीने में चांदी के घुंघरू बजने लगते। कई बार उसका दिल करता कि बस वह हो और सुंदरी हो, यह सोच कर वह ठिठुर जाता। सर से पैर तक काँप उठता। बार बार कानों को हाथ लगाता। मन ही मन माफ़ियां मांगता। वह अपने आप को मैला-मैला महसूस करने लगता।

और आज की शाम वे रावी के किनारे अकेले थे। यह कैसे हो गया था ? शैली की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। बाकी घर वालों की तरह सुंदरी क्यों नहीं बेड़ी में जा बैठी थी ? परिवार का अकेला मर्द होने के कारण शैली हर किसी को पहले बिठा रहा था, यह उसका फ़र्ज़ था, लेकिन सुंदरी को क्या आफ़त पड़ी थी ?

मुसीबत तो यह थी कि कश्ती के आंखों से ओझल होते ही वर्षा और तूफ़ान ने उन्हें आकर दबोच लिया। ऊपर से रात पड़ रही थी।

वर्षा की पहली बौछार में दौड़ कर शैली और सुंदरी सामने के एक बूढ़े पुराने बरगद के नीचे जा खड़े हुए। बरगद की जड़ के गिर्द किसी ने चूना पोत कर चबूतरा बना दिया था। कई लोग बरगद को पूजते थे, या फिर क्या पता कोई उसके नीचे बैठ कर तपस्या करता होगा। सुंदरी सोच रही थी कि ज़रूरत पड़ने पर कोई चबूतरे पर सो भी सकता है। साफ़ सुथरी जगह थी।

वर्षा थी कि एक ही सांस में बरसे जा रही थी। देखते ही देखते घटाटोप बादल छा गए थे। तूफ़ान किसी को सांस नहीं लेने दे रहा था। लोगों को पटक-पटक कर दूर फेंक रहा था। सुंदरी अपनी चुन्नी संभालती तो उसका लहंगा उड़ उड़ जाता। लहंगा समेटती तो चुन्नी काबू से बाहर हो जाती।

इस बार तूफ़ान का इतनी ज़ोर का फ़राटा आया कि सुंदरी झुक कर शैली के कंधे पर जा गिरी। उसे बहुत झेंप महसूस हुई और वह पसीने से तर हो गई। पसीना उसके टख़नों तक चू रहा था। उधर रात पैरों पैर उतरती चली आ रही थी।

अभी सुंदरी संभल भी नहीं पाई थी कि पाँच घुड़सवार दनदनाते हुए बरगद के नीचे आ उतरे। सिपाही मालूम होते थे। नदी किनारे बाढ़ का जायज़ा लेने के लिये तैनात थे। बरगद के नीचे पक्का चबूतरा उन्हीं लोगों ने बना रखा था। चौकीदारी करते हुए थोड़ी देर के लिये बरगद के नीचे सुस्ता लेते थे। अचानक वर्षा आने के कारण वे लोग सिर छिपाने के लिये अपने ठिकाने पर पहुँचे थे।

लेकिन वहाँ पहले से ही एक नौजवान जोड़ा पहुँचा हुआ था।

"कौन हो ?" घुड़सवारों के सरदार ने आते ही शैली से पूछा।

"बाबा नानक के सिक्ख" शैली ने जवाब दिया।

"इस तपे में वह तो हर कोई बना फिरता है। तेरे मां-बाप का क्या मज़हब है ?"

"गुरू बाबे के सिक्ख। शैली ने जवाब दिया।"

"ओये, मैं पूछता हूँ, तेरे बाप दादा क्या थे ? घुड़सवारों का सरदार जैसे झुँझला उठा था।"

"वे तो मुसलमान थे, अहले-सुन्नत।" शैली ने कहा। लगता था घुड़सवार की तसल्ली हो गई थी।

इतने में सहसा बिजली चमकी और घुड़सवारों के सरदार की नज़र सुंदरी पर जा पड़ी। ऐसा लगा जैसे उसे किसी नागिन ने डस लिया हो। सुंदरी के क़हर के जोबन को देख कर उसकी कैंची की तरह चलने वाली ज़बान एकदम रुक गई। बादलों की गड़गड़ाहट, वर्षा की शिद्दत, तूफ़ान का शोर, घुड़सवारों की टोली का हर आदमी अपने आपको बरगद के गिर्द बने चबूतरे पर कहीं सर छिपाने की कोशिश में था। आदमी घोड़ों की ओट ले रहे थे, घोड़े चबूतरे के साथ सट सट कर खड़े हो रहे थे।

घुड़सवारों के सरदार को अब न बिजली की चमक से डर लग रहा था, न वह गरजते बादलों से भयभीत हो रहा था, न ही बौछार ही उसे परेशान कर रही थी, उसकी रगों का ख़ून जैसे खौल उठा था। उसके अंग अंग में ऐंठन महसूस हो रही थी।

"सरदार, किन ख्यालों में डूब गये हो," उसके साथी ने शेरख़ान से सवाल किया।

शेरख़ान ने कोई जवाब न दिया। सुंदरी की एक झलक से जैसे उसे कोई नशा चढ़ना शुरू हो गया था। एक लोर सा महसूस हो रहा था।

इधर न जाने क्यों शैली को अचानक एक डर सा लगने लगा। उसे शेरख़ान में से एक दुर्गन्ध सी आई। सड़ती हुई मछलियों जैसी दुर्गन्ध। लगता था जैसे कोई शोला लपक कर उसे भस्म कर डालेगा।

शैली के लिये वहाँ और खड़े रहना नामुमकिन हो गया। वर्षा के परनाले बह निकले थे। तूफ़ान लोगों को पटक पटक कर फेंक रहा था। तब भी शैली सुंदरी को लेकर बरगद के नीचे से निकल कर बाहर आ गया।

"इस आँधी तूफ़ान में, इस काफ़िर को कौनसा सूल उठा है?" शेरख़ान बुड़बुड़ाया और फिर अगले क्षण उसके अन्दर का हुक्मरान अपनी आई पर आ गया।

"तू इस कोमल कली को कहाँ ले जा रहा है इस आँधी तूफ़ान में?"

शैली चुप। उसके पास इसका कोई जवाब नहीं था। बिजली पहले की तरह चमक रही थी। बादल गरज रहे थे। वर्षा लगातार हो रही थी।

"यह तेरी बीवी है?" शेरख़ान ने अपनी सरदारी के दबदबे में उन्हें रोक लिया।

"नहीं।" शैली ने कहा और बिजली जैसे उसके सर को छू कर निकल गई हो।

"यह तेरी बहन है? शेरख़ान ने फिर सवाल किया।"

"नहीं।" इस बार बादल इतनी ज़ोर से गरजे कि शेरख़ान की आवाज़ इस शोर में गुम हो गई।

"यह तेरी भाभी है?" शेरख़ान ने तीसरा सवाल किया वह इस ढंग से जैसे पत्थर मार रहा हो।

"नहीं," शैली के मुँह से निकला।

"तो फिर तेरी क्या लगी ?" इसे यहीं हमारे लिये रहने दे । आज की रात कितनी अँधेरी है ? वर्षा, तूफ़ान और सामने गरजता हुआ दरिया ! यह कहते हुए पाँचों सिपाही उन पर टूट पड़े और सुंदरी को शैली से छीन कर बरगद तले ले आये । शैली जान की बाज़ी लगा कर उनके साथ लड़ा, लेकिन पांच मुश्टँडों के सामने उसकी दाल नहीं गली ।

तब भी शैली अपनी जगह से हिलने के लिये तैयार नहीं था । सुंदरी को छोड़कर जाना उसे किसी क़ीमत पर मंजूर नहीं था । यह देखकर उन लोगों ने उसकी मुश्कें बांध दीं । सुंदरी का मुंह उन्होंने पहले से ही बांध दिया था ताकि न वह शोर मचा सके, न फ़रियाद कर सके ।

6

अगली सुबह आकाश ऐसा था जैसे बादल कभी बरसा ही न हो । साफ़ धुला वातावरण । इतने में कमरे की सफ़ाई कर रही नसरीन के हाथ कोई अमन का ख़त थमा गया ।

घर में चारों तरफ़ "अमन का ख़त" "अमन का ख़त" का शोर सुनाई देने लगा । जैसे उन्हें शैली और सुंदरी की कोई सुध ही न रही हो । वर्षा थम चुकी थी । उस पार से जो पहली कश्ती आयेगी, उसमें वे आ जायेंगे । हर कोई मन ही मन यही सोच रहा था ।

अमन का ख़त सबसे पहले उसकी मां तेजी ने पढ़ा, जिसके नाम वह ख़त भेजा गया था । इधर उधर के लोकाचार के बाद उसने लिखा था :

"…. खडूर के नज़दीक संधर के पास ही एक एकान्त स्थान पर गुरू बाबे की धर्मशाला और लंगरख़ाने का निर्माण शुरू हो गया है । संगतें उमड़ी चली आ रही हैं और दिन-रात कार सेवा होती है ।

गुरू अंगद जी पहर रात रहते, पौ फटते ही जाग जाते हैं । स्नान आदि से फ़ारिग हो कर समाधि में लीन हो जाते हैं । इसके बाद 'जपुजी' का पाठ । इतने में बलवंड रबाबी कीर्तन शुरू कर देता है । गुरू साहब कीर्तन सुनने के लिये संगत में आ विराजते हैं । संगतों को दर्शन देकर निहाल करते हैं ।

"जब कीर्तन का भोग पड़ता है तो गुरू अंगद बच्चों को इकट्ठा कर के उन्हें पढ़ाते हैं । उनके लिये महाराज ने ख़ासतौर पर गुरूमुखी लिपि का बाल बोध तैयार किया है । शिक्षाप्रद कहानियों की पुस्तकें लिखी जा रही हैं । पढ़ाई के साथ साथ बच्चों को अच्छी अच्छी खेलें भी सिखाते हैं । इसके बाद अपने हाथों से बान बटते हैं । जब उनके हाथ ख़ाली होते हैं तो वे बान बटने लगते हैं । इससे होनेवाली कमाई को वह अपने निजी खर्च् के लिये इस्तेमाल करते हैं ।"

"शाम के वक्त वे पहलवानों की कुश्तियाँ करवाते हैं । उनका कहना है कि सिक्खों के लिये सबसे ज़रूरी बात यह है कि उनकी सेहत अच्छी होनी चाहिये ।" अच्छी सेहत न हो तो बंदगी नहीं हो सकती । भक्ति में मन नहीं टिकता ।

गुरू का लंगर लगातार चलता है गुरू महाराज खुद लंगर में आकर विराजते हैं। जात और वर्ण के भेदभाव के बगैर सब मिलकर लंगर में खाते हैं।

पास के और दूर के लोगों पर जब भी कोई मुश्किल आ पड़ती है कोई दुःख होता है, रोगी गुरू महाराज के दर्शनों के लिये आते हैं और सतगुरू का आशीर्वाद लेकर तन्दरूस्त होकर लौटते हैं। दिन प्रतिदिन गुरू अँगद गुरू नानक का स्वरूप बनते जा रहे हैं। उनके चेहरे का तेज झेला नहीं जाता।

इधर गुरू महाराज ने एक अत्यंत रोचक खेल रचाई है जिसकी चारों तरफ़ बहुत चर्चा हो रही है। खडूर का एक सिक्ख हाथ से सेवा तो करता नहीं था, लेकिन हर वक्त डींगे मारता था। मैं तो गुरू वचनों का पालन करता हूँ। जो गुरू महाराज कहेंगे सोई करूँगा। बाकी सिक्ख जो करते वह उनके नुक्स निकालता रहता। हुज्जतबाज़ी उसका पेशा बन गया था। गुरू महाराज के पास कई बार उसकी शिकायत पहुँची। उन्होंने संगत में इशारे से उसे समझाने की कोशिश की, लेकिन उसकी समझ में कुछ न आया। गुरू महाराज कोरी डींगों को दिल से नापसन्द करते हैं। खडूर वासी हमेशा यही कहता, गुरू महाराज मुझे कुछ हुक्म तो दें, जो कुछ वे कहेंगे मैं वही करने के लिए तैयार हूँ। यह सुनकर गुरू महाराज के मुँह से निकला -

तुम अगन जलो इह सेवा आहि।

सत्गुरू के वचन सुन कर सब उस सिक्ख की ओर देखने लगे। खडूर का डींगमार उसी वक्त शहर से बाहर जँगल की ओर चल पड़ा ताकि सत्गुरू के वचनों का पालन कर सके। जँगल में उसे एक चिता जलती दिखाई दी। उसने सोचा वह चिता में कूद कर जल मरेगा। लेकिन चिता के नज़दीक पहुँच कर फजूल में अपनी जान गँवाने की उसकी हिम्मत न पड़ी। वह चिता के पास परेशानी और अनिर्णय की हालत में खड़ा था कि उधर से एक डकैत आ निकला। उसे पूछने लगा-क्यों भई, तू यहाँ क्यों खड़ा है ?

खडूर के सिक्ख ने बताया कि वह अपने गुरू के हुक्म के अनुसार चिता में जल कर जान देने की सोच रहा था। डकैत यह सुनकर उसके मुँह की ओर देखता रह गया। वह कैसा गुरू था जिसके आदेश पर उसके सिक्ख जान देने के लिए तैयार हो जाते है ? डकैत ने लूट का सारा माल खडूर के सिक्ख के हवाले किया और कहने लगा - ''इसके बदले मुझे तू अपने गुरू का वचन पालन करने की महानता बख़्श दे। मैंने सारी उम्र पाप कमाये हैं। क्या पता इसी तरह मेरा उद्धार हो जाये।'' खडूर के डींगमान ने यह सुना और झट लूट के धन के थैले के गिर्द अपनी बाँहें लपेट ली। उधर डकैत चिता में कूदने ही लगा था कि गुरू महाराज के भेजे हुए सिक्ख वहां पहुँच गये और उन्होने डकैत को इस तरह नाहक अपनी जान गँवाने से रोक लिया। डकैत को गुरू बाबे के सामने पेश किया गया और सत्गुरू के दर्शन करके उसके सारे पाप धुल गये।

''इधर खडूर का सिक्ख डकैत का दिया धन का थैला लेकर घर पहुँचा ही था कि कोतवाल के सिपाहियों ने उसके यहां छापा मार कर सारा धन छीन लिया। जिसके पास

से चोरी का माल बरामद हुआ था उसे सज़ा तो मिलनी ही थी ।''

जब शक्तिअमन का ख़त पढ़ रही थी तो भाई मूले की पत्नी ने उससे खत लेकर पढ़ना शुरू कर दिया । फिर जाकर कहीं शक्ति की बारी आई । शक्ति ने ख़त को एक बार पढ़ा, फिर एक और बार, फिर एक और बार ।

7

सुंदरी ने शेरखान को बस इतना ही कहते सुना था– ले जाओ, इस काफ़िर की बोटी बोटी करके दरिया में फेंक दो । फिर वह बेहोश हो गई । उसके हाथ पैर मुड़ गये । मुंह से झाग निकलने लगी ।

शेरखान ने देखा तो सिटपिटा कर रह गया इतने में बिजली इतनी ज़ोर से चमकी कि घुड़सवारों की आँखें चौंधिया कर रह गईं । साथ ही बादलों की भयानक गड़गड़ाहट जैसे बरगद के सर पर खड़ा होकर कोई किसी को फटकार रहा हो ।

शेरखान समेत सारे घुड़सवार थर थर काँपने लगे । शैली को जिस घुड़सवार के हवाले किया गया था वह भी पसीने से तर हो रहा था । ''यह नानक तपे की जागीर है, सरदार यहाँ से चलो नहीं तो यह बादल, यह बिजली हमें भस्म करके रख देंगे ।'' वह गिड़गिड़ा रहा था । इतने में बिजली फिर चमकी । ऐसा लगा जैसे वह घोड़ों और घुड़सवार के बीच में से होकर निकल रही हो ।

यह देखकर शेरख़ान और उसके साथी घोड़ों पर सवार होकर रफ़ू चक्कर हो गये ।

शैली ने अपनी मुश्कें खोलीं और तेजी से आगे बढ़ा । बरगद के नीचे चबूतरा ख़ाली था । शेरख़ान बेहोश सुंदरी को अपने साथ घोड़े पर लाद कर ले गया था ।

शैली का सारा ख़ून सूख गया । अँधेरा और गहरा हो गया था । बादल और ज़ोर से गरज रहे थे । बिजली और ज़्यादा भयानक होती जा रही थी ।

शैली के बदन से पानी चू रहा था । वह गहरी सोच में डूब गया था । अचानक उसके कँधों पर कितनी भारी जिम्मेदारी आ पड़ी थी । वह तो किसी को मुंह दिखाने के काबिल नहीं रहा था । यह नहीं कि मुग़ल और पठान सुन्दर जवान जहान लड़कियों को भगाकर नहीं ले जाते थे, ख़ास तौर पर हिन्दू लड़कियाँ इस अंधेरगर्दी का शिकार होती थीं, लेकिन आज रात जो हुआ था उसका सारा कसूर शैली के मत्थे मढ़ा जायेगा । वह जान पर खेल कर अपने घर आई मेहमान लड़की की इज्ज़त बचा लेता तो बात थी । उसने तो जैसे तश्तरी में रखकर लड़की गुँडों के हवाले कर दी थी । उसे सुंदरी का साथ नहीं छोड़ना चाहिये था । उसे सुंदरी की बाँह पकड़े रहनी चाहिये थी । ज़्यादा से ज़्यादा यही होता कि वे लोग उसे काट डालते । अब उसकी हालत कहीं बदतर थी । न ज़िन्दा, न मुर्दा ।

यह सोच कर शैली ने सर को झटका दिया और उठकर खड़ा हो गया । उसी तरह पानी से चूते हुए कपड़ों समेत उस दिशा की ओर भागा जिधर घुड़सवार गये थे ।

रात, अन्धेरा, बादल, राह सूझ नहीं रही थी । घुटने घुटने पानी, टखनों तक

कीचड़ । फुफकारती, शोर मचाती रावी के किनारे घुड़सवारों के रास्ते का अनुमान लगा कर शैली बेतहाशा भागता जा रहा था । तेज़, और तेज़ ।

जब वह एक गाँव में पहुँचा तो सुबह होने लगी थी । इतने में वर्षा भी थम गई थी । अभी थोड़ा थोड़ा अँधेरा था । थोड़े से ग्रामीण दिशा मैदान के लिये आ जा रहे थे। शैली की समझ में नहीं आ रहा था कि अपना दुखड़ा कैसे किसी को बताये । आखिर एक बुज़ुर्ग को उसने अपनी व्यथा सुनाई । यह तो पूरा गाँव गुरूनानक द्वारा दीक्षित था । हिन्दू मुसलमान सभी गुरू नानक के अनुयायी थे ।

दिन चढ़ने तक पूरे गाँव में शोर मच गया जो सितम शैली के साथ हुआ था उसकी चर्चा हर ज़बान पर थी ।

और फिर गाँव के कुछ नौजवान शैली के साथ मिलकर सुन्दरी की खोज के लिये तैयार हो गये । सब नेजों और भालों से लैस थे । इनमें हिन्दू, मुसलमान दोनों शामिल थे। गुरू नानक के शैदाई । सब लोग ग़ुस्से में थे । बाबा नानक की नगरी में यात्रा के लिये आई भाई मूले की बेटी के साथ अगर ऐसा सलूक हो सकता था, तो फिर और किस बहन बेटी की अस्मत सुरक्षित रह सकेगी ।

फैसला यह हुआ कि गाँव के पंचों में से एक करतारपुर जा कर इस वारदात के बारे में घर वालों को ख़बर दे । भाई मूले की पत्नी परेशान हो रही होगी । गाँव के नौजवानों का जत्था लड़की को बरामद करने के लिये उसी क्षण निकल पड़ा । पहले इलाके के थाने में ख़बर देनी होगी । थाना उनके गाँव से कोई तीस मील दूर था । पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई । रास्ते में शैली को उसके साथियों ने बताया कि शेरख़ान तो इलाके भर में बदनाम हाकिम था । शादियाँ रचाने का शौकीन । पाँचवी को घर बसाने से पहले, पहली चार बीवियों में से एक को तलाक़ दे देता था ।

थाने के बाहर पाँच घोड़े बँधे थे । हो न हो ये शेरख़ान की टुकड़ी के ही घोड़े हैं- शैली के दिल ने कहा । उसका अनुमान ग़लत नहीं था । थाने से पता चला कि पिछली रात पहरा देकर आये सिपाही और उनका सरदार छुट्टी कर गये हैं । अगला पूरा हफ़्ता शेरखान छुट्टी पर रहेगा । सुना है कि वह सोलहवाँ निकाह करने जा रहा है।

शेरख़ान का गाँव रावी के पार था । कोई कहता पच्चीस कोस दूर होगा, कोई तीस कोस दूर बताता "इसका मतलब यह है कि अभी उसने दरिया पार नहीं किया होगा । रावी में तो ज़ोर की बाढ़ आई हुई है ।" शैली अपने साथियों से कह रहा था, "तो फिर वह किनारे पर कश्ती की इन्तजार में होगा ।" उनमें से एक ने सलाह दी, "वहीं उसे घेरा जा सकता है ।"

यह सोच कर भूखे प्यासे वे उन्हीं कदमों से घाट की तरफ़ चल पड़े ।

"लड़की को जरूर ख़राब कर दिया होगा," यह सोचकर शैली का दिल बैठ जाता । उसके क़दम पल पल भारी होने लगते । उसके साथी बार बार उसके चेहरे की तरफ़ देखते । वह पीछे पीछे क्यों रह जाता था ।

शैली की आँखों के सामने एक अधखिली कली की तस्वीर आती, जिसे किसी ने रौंद कर फेंक दिया हो । शेरख़ान तो दैत्य था । ऊँचा लम्बा, जैसे पहाड़ से उतरा जिन्न हो । लोहे के ढले हुए पट्ठे । बिच्छुओं जैसी मूछों को अकड़ा कर रखता था । क्या पता उसने सोलहवाँ निकाह करवा ही लिया हो । लड़की को कलमा पढ़वाया होगा । फिर काजी ने झूठ सच "मंजूर" "मंजूर" करके कोमल कँवारी को एक भेड़िये के हवाले कर दिया होगा, और फिर, और फिर ----"

शैली को लगा जैसे लहू के छप्पड़ में एक चंबे की कली तैर रही हो । जेठ आषाढ़ के बवंडर में गुलाब की कोई पत्ती उड़ी जा रही हो । शरद पूर्णिमा की रात में किसी तारे की आँख में से आँसू फूट पड़ा हो ।

8

ख़ान फ़तह गाँव का चौधरी जब सुंदरी की बुरी ख़बर लेकर करतारपुर पहुँचा, तो वहाँ रोना पीटना मच गया, क्या भाई मूले की पत्नी, क्या तेजी, क्या नसरीन क्या शक्ति । बेचारी औरतों की समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या करें । अमन खडूर में था । शैली सुंदरी को लौटा लाने के लिए तुर्क सिपाही के पीछे चल पड़ा था।

भाई मूले की पत्नी बार बार अपना माथा पीटती, उसके साथ यह क्या हो रहा था ! एक के बाद एक त्रासदी उसकी किस्मत में लिखी थी । गुरू की नगरी में तो वह आई थी, ताकि बेटी के लिये अपनी पसंद का साथी ढूँढ कर वह सुर्ख़रू हो जाये, और इधर गुरू बाबे के खेतों में वह अपनी एकलौती बच्ची को गँवा बैठी थी । जब उसे अहसास हुआ कि अमन उसके हाथों से निकल गया है तो वह मन ही मन शैली के लिये भी तैयार हो गई थी । और इधर अब तो बेटी भी उसके हाथ से निकल गई थी ।

वह छल छल आँसू बहाती । आँसू थे कि थमते ही नहीं थे । उसे एक एक करके अपनी जान पहचान की लड़कियों की याद आ रही थी जिन्हें मुग़ल और पठान उठा कर ले गये थे और उनकी कहीं खोज ख़बर नहीं मिली थी । यह सोचकर बार बार उसका दिल डूब जाता था।

उसकी एक सहेली सुखदेवी थी । सभी उसे "सुक्खी" कह कर बुलाते थे । उसके जैसी दुखियारी भला कौन होगी । गाँव के बाहर जवान जहान लड़कियाँ पीपल के पेड़ तले झूला झूल रही थीं । तीजों के दिन थे । एक से एक सुन्दर, एक से एक सजी हुई, अल्हड़ मुटियारें हँस रही थीं, खेल रही थीं । उधर से तुर्क घुड़सवारों की एक टुकड़ी आ निकली । पाँच मुस्टंडे थे। देखते ही देखते उन्होंने सुक्खी को पकड़ कर घोड़े पर बैठा लिया। किसी ने चूँ तक नहीं की । "हाकिमों को जो लड़की पसंद आ जाये उसे अपनी खुशकिस्मती समझनी चाहिये ।" गाँव के चौधरी ने अपनी सनक में कहा था । इसके बाद सुक्खी की कोई खबर किसी को नहीं मिली ।

जूही की तो डोली को उन लोगों ने लूट लिया था। सजी सजाई दुल्हन के साथ वे हज़ारों रुपयों का दहेज भी ले गये जो उसके घर वालों ने दिया था । यही नहीं, जाते जाते

वे दूल्हे की दोनों टाँगें भी तोड़ गये, ताकि वह उनका पीछा न कर सके ।

जिस साल बाबर ने स्यालकोट पर हमला किया था, मूले की पत्नी तब सुँदरी की उम्र की थी । उसके घर वालों ने उसके चेहरे पर राख मल कर मवेशियों की कोठरी में उसे छिपा दिया था। कितने दिनों तक वह भेड़ बकरी की तरह भूसे के ढेर पर पड़ी रही, वहीं खाती थी, वहीं सोती थी। जब हमलावर वापिस लौटे तो पूरे शहर को सूना कर गये । एक भी जवान जहान लड़की कहीं दिखाई नहीं देती थी । शहर की सारी लड़कियों को गायों के झुँड की तरह हाँक कर ले गये थे । लड़कियाँ किस तरह मिन्नतें करती थीं, विलाप करतीं थीं । जिसका भी बाप या भाई उसे छुड़वाने के लिए आगे बढ़ता, उसका सर धड़ से अलग कर दिया जाता । कुछ समय बाद उनमें से कई लौट आई थीं । पीला ज़र्द रंग । फूले हुए पेट । बीमारियों से ग्रस्त । मैले चीकट, तार तार कपड़े । उनमें से बहुत सी तो पागलों की तरह गलियों में घूमती रहती, कोई उन्हें मुंह लगाने के लिये तैयार न होता । कुछ कोठों पर बैठ गई । हिन्दू धर्म की परंपरा हिन्दू धर्म की संस्कृति, हिन्दू धर्म की पवित्रता ! उनके माता पिता, बहन भाई उन्हें पहचानने से इन्कार करते । तौबा ! तौबा !! उन दिनों की याद से सुन्दरी की माँ का दिल बैठ जाता । भूसे की कोठरी में छिपाने से पहले उसके घरवालों ने उसे कहा था – अगर तेरी तलाश में कोई हमलावर उस कोठरी में आ घुसे, तू दम साध कर पड़ी रहना । किसी भी क़ीमत पर हिलना डुलना नहीं । अगर शक-शुबह में वे भूसेवाली कोठरी को आग लगा दें तो तुझे भीतर ही जल कर मर जाना होगा, तेरी आवाज़ नहीं निकलनी चाहिये । हिन्दू लड़की के लिये उसका सत्त उसकी जान से प्यारा होता है ।

इस तरह लौटी हुई लड़कियों में से लाजो नाम की उसकी हम उम्र लड़की ने सुंदरी की माँ को बताया था, सड़क पर जब उन्हें ले जाया जाता था, जब किसी मुग़ल का जी करता, जिसके साथ जी करता, उसे अलग कर के किसी पेड़ या झाड़ी की ओट में उसे ख़राब करके फिर रेवड़ में शामिल कर दिया जाता । कई तो लहू-लुहान हो जाती । फिर भी मुंह से एक भी बोल निकाले बग़ैर औरों के साथ कदम मिलाकर चलती जातीं । खाने के नाम पर उन्हें बेर और दूसरे जँगली फल फूल से गुज़ारा करना पड़ता था । पीने के लिये मवेशियों की तरह छप्पड़ों और गड्ढों का पानी । जिस हमलावर ने उसका सत्त भँग किया था, लाजो ने उसे कहा, तू मुझे मुसलमान बना ले, मेरे साथ निकाह पढ़वा ले । मैं तेरे बच्चों की बढ़िया माँ बनूँगी । शराब में बदमस्त उस आदमी ने एक चाँटा उसके दायें गाल पर मारा । लाजो के गाल सुलगने लगे, वह औंधे मुँह जा गिरी और मर्द जात ने उसके साथ मनमानी कर ली ।

एक और थी अँबों, बेचारी का दिमाग़ फिर गया था । पड़ोसिनें तन ढकने के लिए उसे कपड़े पहनाती । वह कपड़े को गले से फाड़ कर अपनी छातियों की नुमाइश करती रहती । कहती, वह बिना दूध की इन छातियों को चूसता रहता था और फिर एक अजगर की तरह फुँफकारता हुआ मुझ पर लश्कर की तरह चढ़ आता । हाय कितना मज़ा आता

था। और फिर जब इन छातियों में दूध आया, उसने मुझे ठोकरें मार कर निकाल दिया। बोला, अब तू मेरे किस काम की, अपने घर लौट जा। सैकड़ों कोस का सफ़र तय करके अंबों अपने शहर लौट आई थी। उसे याद कर कर के वह गली गली में गाती फिरती –

कोठे उपर कोठड़ा, कोठे सुकदा रवेस
असां गुँद गुदाईआँ मेढ़ियाँ, तूँ किसे बहाने वेख

....

कोठे उपर कोठड़ा , कोठे सुकदा घाह
मैं मछली दरिया दी, तूँ बगला बन के आ।

दूर जाने की ज़रूरत नहीं,उसकी अपनी नौकरानी बँती मुश्किल से ग्यारह बरस की थी कि उसे गर्भवती कर गये। हमलावर अभी अपने देश लौटे भी नहीं होंगे कि बँती का पेट सूज कर कुप्पा हो गया। ढोल का ढोल। मासूम लड़की से उठकर ठीक से खड़ा भी नहीं हुआ जाता था। एक कमसिन, फिर छोटे कद की, बँती, हाथ ज़मीन पर टेक कर भेड़ की तरह चलती, और फिर जब उसके दिन पूरे हुए, एक के बाद एक तीन हमलावर कुत्ते के पिल्लों की तरह चउँ चउँ करते हुए उसके पेट में से निकले। यह अलग बात है कि उनमें से एक भी जिन्दा नहीं रहा। लेकिन पूरे नौ महीने तक उन्होंने लड़की को सूली पर टाँगे रखा। तौबा! ताबा ! बँती की ओर देखा नहीं जाता था। हाथों पैरों के बल चलती तो उसका पेट सुअरिया की तरह धरती को छूता था।

यह सोच कर सुंदरी की माँ का दिल डूबता। लाख जतन करके उसे होश में लाया जाता। आसपास अपनी बेटी को न देख कर वह फिर बेहोश हो जाती।

9

अभी लोग यह फैसला भी नहीं कर पाये थे कि अमन को इस वारदात की इत्तिला कैसे दी जाये, कैसे उसे बुलवाया जाये कि अगले दिन उसका लिखा एक और ख़त उनके हाथ आ गया। कितने लंबे ख़त लिखता था ! भाई मूले की पत्नी को तो ख़त पढ़ने की होश नहीं थी, बस शक्ति उसे एक बार पढ़ कर अब फिर अकेली बैठी दोबारा पढ़ रही थी।

"............. पिछले हफ़्ते हमारे यहाँ मुग़ल बादशाह हुमायूँ आया था, बाबर का बेटा। शेरशाह से मार खा कर भागता हुआ लाहौर पहुँचा, जहाँ उसे किसी ने गुरू महाराज के बारे में बताया। गुरू अँगद ओटहीनों की ओट हैं, बेआसरों का आसरा हैं। नीचे से ऊँचा करने वाले हैं।

"यह सुनकर हुमायूँ एक दिन सुबह बिना ख़बर किये खडूर पहुँच गया। अमृतवेला, गुरू महाराज संगत में विराजमान हो कीर्तन का श्रवण कर रहे थे। सत्ता और बलवँड कीर्तन कर रहे थे। जैसे अमृत की वर्षा हो रही हो। गुरू महाराज समाधि में अन्तर्ध्यान थे। सारंगी की धुन पर ढाढी जत्था एक स्वर में गा रहा था :

* केशवि दास- बालों को अनेक छोटी चोटियों में कसकर गूंथा जाता है। (अनुवादक)

कर्ता तूँ सभना का सोई ॥
जे सकता सकते को मारे
ता मनि रोसु न होई

(आसा महला 1)

''हुमायूँ के इस तरह अकस्मात् संगत में अपने अहलकारों के साथ आने से बेशक हलचल हुई लेकिन सत्गुरू जी की समाधि ज्यों-की-त्यों लगी हुई थी । न उन्होंने पलकें खोली, न हुमायूँ का स्वागत किया । इतने में ढाढी जत्थे ने शब्द की अगली तुकों का गायन किया :

सकता सीहु मारे पै वगै खसमै सा पुरसाई
रतन विगाड़ि विगोये कुती मुइआ सार न काई
आपे जोड़ि विछोड़े आपे वेखु तेरी वडिआई ।

(आसा महला 1)

हुमायूँ को आये और हजूरी में खड़े काफ़ी वक्त बीत गया था । यह देखकर मुग़ल जलाल में आ गया । बेशक हार कर आया था पर था तो बादशाहज़ादा । क्रोध में लाल पीला होकर उसने अपनी तलवार म्यान में से निकालने के लिऐ हाथ बढ़ाया ही था कि घट घटके ज्ञाता सत्गुरू ने नेत्र खोल दिये और बादशाह की पेशानी की तरफ़ देखकर मुस्कराने लगे ।

'' गुरू महाराज को इस तरह निडर शांति स्वरूप,पूर्ववत् अडोल देख कर हुमायूँ तिलमिला कर रह गया । यह देख कर सत्गुरू ने उसकी प्रताड़ना की, '' जहाँ तुम्हें तलवार चलानी चाहिए थी, वहाँ से तो तुम जान बचा कर भाग आये और यहाँ एक निहत्थे फ़कीर को अपने जाहो जलाल से धमका रहे हो ''

यह सुनकर हुमायूँ महाराज के चरणों में गिर पड़ा ''आपने मेरे वालिद बुजुर्गवार को बख्शा था, मुझ पर भी मेहरबानी कीजिए'' वह कहने लगा । बार-बार हाथ जोड़ कर माफ़ी माँग रहा था ।

''आखिर सत्गुरू मेहर में आ गये उन्होंने हुमायूँ से कहा पहले वह अपने अहलकारों के साथ लँगर में भोजन करे, बाद में वह उसकी फ़रियाद सुनेंगे।

''बादशाह हुमायूँ ने पँगत में बैठकर सत्गुरू की चलाई परंपरा के अनुसार लंगर छक्का । ऊँच नीच का सारा भेद मिट गया । न कोई राजा, न कोई प्रजा ।

इसके बाद जब वह साध सँगत में हाज़िर हुआ तो सत्गुरू ने उसे बाबा नानक के फ़रमान की याद दिलाई :

''काइआ कप्पडु, टुकु टुकु होसी हिंदुस्तान समालसी बोला ॥
आवनि अठतरै जानि सत्तानवै होरु भी उठसी मरद का चेला ।
सच की बानी नानकु आखै सचु सुनाइसी सच की बेला ॥

(तिलंग महला 1)

"हुमायूँ को यकीन हो गया कि उसे गुरू नानक देव जी की भविष्यवाणी के मुताबिक गद्दी छोड़नी पड़ेगी और फिर कुछ बरसों बाद वह जब फिर हमलावर बन कर आयेगा तो उसकी जीत होगी और वह हिन्दुस्तान पर अपना राज कायम कर सकेगा।"

"और इस तरह हुमायूँ खुशी खुशी अपने देश वापिस लौट गया।"

"जिस दिन हुमायूँ चला उससे अगले दिन गुरू घर के रबाबी सत्ता और बलवँड सुबह के कीर्तन के बाद अपने घर के किसी काम के लिए पाँच सौ रुपये की फ़रमाइश करने लगे। उन्होंने सोचा क्या पता बादशाह कितना चढ़ावा चढ़ा कर गया होगा। सत्गुरू ने उन्हें बैसाखी तक रुक जाने के लिए कहा। बैसाखी पर आसपास और दूर की सँगतें दर्शनों के लिए आतीं है और गुरू घर का हाथ खुला होता है। लेकिन सत्ता और बलवँड तब तक रुकने के लिये तैयार नहीं थे। यही ज़िद कि उन्हें तो उसी वक्त रकम मिलनी चाहिये थी। सत्गुरू ने अपनी मजबूरी बताई। उनकी ख़ातिर कहीं सेंध तो नहीं मारी जा सकती थी। यह देख कर सत्ता ओर बलवँड कुढ़ने लगे। "हमारे कारण ही तो गुरू घर का यह सारा ठाठ बाठ है। हम कीर्तन न करें तो कौन इधर मुँह करेगा। हमारा कीर्तन सुनने के लिये ही तो संगते उमड़ी चली आती हैं। हमें ही चार पैसे ज़्यादा देने से इन्कार किया जा रहा है। अगर हमारी यही कद्र है तो हम कीर्तन करना बंद कर देंगे। इस तरह की बातें आये दिन सुनने में आती थीं। गुरू महाराज ऐसी बातों को अनसुना कर देते थे। फिर गुरू महाराज को सूचना मिली कि भाई बुड्ढा जी ने एक दिन सत्ता और बलवँड को शब्द गायन करने के लिये कहा, तो उन्होंने इन्कार कर दिया था। उन्होंने जवाब दिया था कि वह हर ऐसे ग़ैर के लिये नहीं गाते। फिर एक दिन इसी तरह सत्गुरू से तक़रार करते हुए सत्ता और बलवँड के मुँह से ये शब्द निकले, "अगर मरदाना रबाबी का साथ बाबा नानक को प्राप्त न होता तो उन्हें किसने पूछना था?" यह सुनकर गुरू महराज ख़ामोश हो गये। ख़ास तौर पर इसलिये क्योंकि बाबा नानक ने खुद बलवँड को गुरू अँगद देव जी के हवाले किया था। बहुत दिनों से रबाबियों की बेहूदा बकवास सुन रहे थे लेकिन गुरू नानक देव जी के बारे में कहे गये अपशब्द उनसे सुने न गये। उन्होंने सत्ता और बलवँड की जगह भाई रूमू, भाई दीपा, भाई उग्रसैन और भाई नायोरी जैसे सिक्खों को कीर्तन करने के लिऐ डल्ला गाँव से बुलवा भेजा। सत्ता और बलवँड अभी भी बाज़ नहीं आये। उन्होंने अपने घर में अलग से कीर्तन करना शुरू कर दिया। बेशक वे अच्छे कीर्तनिये थे फिर भी कोई उनके घर की तरफ़ नहीं रुख़ करता था। एक दिन, दो दिन, दस दिन, वे सर पटक कर थक गये,कोई भी गुर सिक्ख उनके यहाँ नहीं फटका। यह देखकर सत्ता और बलवँड सटपटा गये। गुरू महाराज से माफ़ी माँगने के लिये मिन्नतें करने लगे। गुरू जी का आदेश था कि जो कोई भी सत्ता और बलवँड की सिफ़ारिश लेकर आयेगा उसकी दाढ़ी-मुंछे मुँडवा कर मुँह काला किया जायेगा। फिर गधे पर चढ़ा कर सारे शहर में घुमाया जायेगा।

यह सुनकर सत्ता और बलवँड की मदद करने के लिये किसी की जुर्रत न होती।

उधर सत्ता और बलवँड भूखे मरने लगे । कहने लगा "रोटी, कपड़े की एवज़ ही कोई हमें रख ले ।" लेकिन गुरू महाराज उनका नाम तक सुनने के लिए तैयार नहीं थे ।

"आखिर हार कर वे लाहौर गये, वहाँ भाई लद्धा जी से जाकर .फरियाद की । भाई लद्धा जी गुरूघर के सेवक और अनन्य श्रद्धालु हैं । भाई लद्धा जी ने जब सत्ता और बलवँड की व्यथा सुनी तो उनके मन में दया आ गई । उन्होंने सोचा भलाई करने का यह अच्छा अवसर है, इसे हाथ से नहीं गँवाना चाहिये, भाई लद्धा जी ने अपने बाल मुँडवा दिये । चेहरे पर कालिख़ पोत ली और गधे की पूँछ की तरफ मुंह करके पूरे खडूर शहर की परिक्रमा करके गुरू महाराज के यहाँ हाज़िर हुऐ । सत्गुरू ने जब अपने एक श्रद्धालु सिक्ख की यह कुर्बानी देखी तो गद्‌गद् हो गये और उन्होंने सत्ता,बलवँड को क्षमा कर दिया ।

"आज कल वे फिर पहले की तरह कीर्तन करते हैं । पहले की तरह रौनक़ होती है ।

इस तरह का लंबा खत ।

10

न जाने क्यों शैली की माँ नसरीन निश्चिन्त थी, उसे अपने बेटे पर पूरा भरोसा था । वह कोई ऐसी हरक़त नहीं करने वाला था जिस पर उसकी माँ को शर्मिन्दा होना पड़े । सुंदरी जैसी लडकियों की ख़ातिर जवान जहान लड़के मुसीबतें झेलते ही रहे हैं और अगर उसे भी दो चार दिनों की आफ़त झेलनी पड़ी तो कोई बात नहीं ।

तेजी के भीतर की माँ को मन ही मन इस बात का आभास हो गया था कि अमन के दिल में शक्तिके लिये कमज़ोरी थी । लाहौर से स्यालकोट लौट कर उसने कई बार शक्ति का ज़िक्र किया था । ज़िक्र करते हुए उसके ओंठ जैसे मीठे शहद से जुड़ जुड़ जाते । और फिर यह बात निरर्थक नहीं थी कि उसने सुँदरी जैसी हसीन लड़की का कभी नाम तक नही लिया था । तेजी को भी शक्ति बहुत अच्छी लगी थी । उसमें एक ठहराव, एक सुघड़पन था अमन की तरह पढ़ने लिखने की शौक़ीन । इस वक्त तीसरी या चौथी बार एकान्त में बैठ कर उसका ख़त पढ़ रही थी ।

गुरू घर की श्रद्धालु, भाई मूले की पत्नी का दिल बार बार डूबता था, लेकिन बार बार कोई उसे पुकार पुकार कर कहता, गुरू की नगरी में आई भाई मूले की बेटी का बाल तक बाँका नहीं होगा ।

यह कैसे हो सकता था? उसकी जाई को तुर्क भगा कर ले गया था ।

सत्गुरू हर बिगड़ी को सँवारने वाला है ।

उसकी बेटी कूँज की तरह विलाप कर रही होगी ।

जिसका कोई ठिकाना नहीं, उसका ठिकाना सत्गुरू है । वे बेपत्तों के पत्त हैं । बेआसरों का आसरा है ।

यह तो करामात होगी । करामात भी तो होती है ।

इस तरह सोच रही सुंदरी की माँ अपनी बेटी की चिन्ता में सर मारने लगती ।

उसकी आँखों में से टप टप आँसू बहने लगते । वह सिसकने लगती । उसे इस तरह बेहाल देख कर घर के सभी लोग उदास हो जाते । न स्वाद का खाना पकता, न कोई स्वाद से खाता ।

तेजी और नसरीन सुंदरी की माँ को बार बार याद दिलाती थीं । अभी तो कल ही बादशाह हुमायूँ खडूर में सत्गुरू की दरगाह में हाज़िर हुआ था। जिस दर का उन्होंने दामन पकड़ा था, वह तो दो जहान के वली का द्वारा था ।

इन सब बातों को भाई मूले की पत्नी से अधिक कौन समझ सकता था । लेकिन असलियत यह थी कि कई दिनों से उसकी जाई तुर्क के क़ब्ज़े में थी । क्या पता उसकी क्या दुर्दशा हो रही थी ।

वह इस तरह बेहाल हो रही थी कि किसी पड़ौसिन ने उन्हें बताया कि राज तो बदल गया था । मुग़ल तो हार कर भाग गये थे । किसी मुग़ल अहलकार की अब क्या मज़ाल थी कि प्रजा के साथ कोई ज़्यादती कर जाये ।

डूबते को तिनके का सहारा । सुंदरी की माँ को क्षणभर के लिये हौसला हुआ लेकिन फिर वह सोचने लगी उसके माथे पर थोड़े ही लिखा था कि वह मुग़ल है, क्या पता अफगान ही हो । अफ़ग़ान ही तो होगा जो इस तरह सीनाज़ोरी कर रहा था ।

दरअसल शेरख़ान न मुग़ल था, न अफ़ग़ान । वह तो हिन्दू से मुसलमान बना हिन्दुस्तानी था जो हर हुक्मरान की नौकरी करने लगते थे ।

शेरख़ान को जब इस बात का इल्म हुआ कि सुंदरी भाई मूले की बेटी थी और अपनी माँ के साथ करतारपुर की यात्रा पर आई थी, तो उसके पसीने छूट गये । यह वह क्या कर बैठा था । वह तो खुद भी गुरू नानक का मुरीद था । बेशक बेहूदगियाँ करता था, लेकिन गुरू नानक को अपना पीर मानता था ।

जबसे उसे यह पता चला था उसी वक्त से शेरख़ान ने सुंदरी को जैसे आज़ाद छोड़ दिया था । उसकी तरफ़ ऐसे देखता जैसे कोई अमानत हो ।

लेकिन कमबख़्त सुंदर कितनी थी । अगले ही क्षण उसका मन विचलित हो उठता ।

रावी का पानी उतर गया था और अब कश्ती आर पार जाने लगी थी ।

वे कश्ती में बैठे दरिया पार कर रहे थे । किनारा थोड़ी ही दूर रह गया था कि अचानक सुंदरी के मन में एक तरंग सी आई और वह कश्ती में से कूद कर नदी में चली गई ।

यह देखकर आँख झपकते ही शेरख़ान ने उसके पीछे नदी में छलाँग लगा दी । कश्ती में शोर मच गया ।

रावी में बाढ़ का पानी बेशक उतर गया था, लेकिन फिर भी रावी तो रावी ही थी । कश्ती की बाकी सवारियाँ और मल्लाह बिट बिट देख रहे थे, शेरख़ान अपनी जान पर खेल कर सुंदरी को लहरों के साथ बहने से बचाने के लिये, डूबने से बचाने के लिये पूरा

ज़ोर लगा रहा था । जवान जहान लड़की उसके काबू में आती फिर छुट जाती । वह तो डूबने के लिये कूदी थी, उसने यह क़दम बचने के लिये थोड़े ही उठाया था ।

शेरख़ान ने एक एक करके अपने कपड़े उतार दिये, लेकिन ढँकी ढकाई सुन्दरी को उसने अपने कब्जे में कर लिया । इस पर हर कोई अश अश करता रह गया । शेरख़ान ने खुद बार बार गोते खाये, लेकिन सुंदरी को सही सलामत वह सामने घाट पर ले आया ।

किनारे पर खड़े लोग जिस ढँग से उसकी तारीफें कर रहे थे, सुनसुन कर सुँदरी हक्की बक्की हो रही थी ।

सुंदरी को विश्वास था कि शैली उसका पीछा करेगा । वह ज़रूर उसे ढूँढ लेगा । शायद अभी तक उसे इसका पता नहीं चला था । आज पहली बार कश्ती दरिया में पड़ी थी । क्या मालूम उसे इस हादसे की ख़बर मिली थी या नहीं मिली थी । सुंदरी भौचक्की सी आसपास किसी चेहरे की तलाश में थी । जबसे शेरख़ान ने सुना था कि सुंदरी भाई मूले की बेटी थी, क्या मज़ाल कोई उसकी आँखों से आँखें मिला जाये ।

फिर उसके मन में एक उबाल आता और वह सोचने लगता, ऐसी लड़की उसके बच्चों की लाजवाब माँ बन सकेगी। उसका अंग अंग ऐंठने लगता ।

''जान हथेली पर रख कर खान ने लड़की को बचाया है ।'' लोगों के ये शब्द बार बार सुंदरी के कानों में गुँज रहे थे ।

ऊपर से रात पड़ रही थी । लेकिन सुंदरी को इस बात से हैरानी हुई कि अब उसे डर नहीं लग रहा था । एक बार दरिया में कूद कर जैसे उसका सारा डर दूर हो गया हो । सबसे भयानक डर मौत का होता है ! जिनका यह डर दूर हो गया हो, उन्हें और कोई डर परेशान नहीं कर सकता ।

11

शैली और उसके साथियों की मुश्किल यह थी कि पहले तो रावी चढ़ी हुई थी और अब उनकी बारी नहीं आ रही थी । जो कश्ती उस घाट पर लगती वह ठसाठस भरी होती थी । लाख मिन्नतें और सिफ़ारिशों से एकाध सवारी उसमें बैठाई जाती थी । शेरख़ान तो पहली बार में ही निकल गया था । किसी की क्या मज़ाल थी कि उसे इन्कार कर देता ।

शैली और उसके साथी कई दिन तक घाट पर धक्के खाते रहे । आख़िर शैली मशक पर तैर कर जाने के लिए तैयार हो गया । किसी माशकी ने उन्हें माशकें लाकर दे दीं और वे मशकों के सहारे नदी में उतर पड़े । शैली के साथी तो कई बार इस तरह तैर चुके थे, लेकिन शैली के लिये जान पर खेलने वाली बात थी ।

दरिया में कहीं पानी का वेग तेज़ था, कहीं भँवर थे, कहीं पीछे से बहती आई शहतरियों से बचना होता था, कहीं कुछ कहीं कुछ । इसके बावजूद शैली और उसके साथी किनारे जा लगे ।

थक टूट गये थे । किनारे पहुँच कर सब निढ़ाल होकर लेट गये । इस तरह शाम हो गई । एक दिन और बर्बाद हो गया । शैली उतावला हो रहा था । बार बार अपने साथियों की

तरफ़ देख रहा था, लेकिन उनमें जैसे और सफ़र करने की हिम्मत नहीं थी ।

इतने में शैली ने मल्लाहों से पूछताछ करके शेरख़ान का सुराग़ लगा लिया था । इस घाट पर लगने वाली पहली बेड़ी पर शेरख़ान पहुँचा था । बेशक उसके साथ एक लड़की थी । लड़की ने नदी में छलाँग लगा दी थी । लेकिन शेरख़ाान उसे बचा लाया था । गरजती, फुफकारती नदी में कूद कर उसने अपने साथ लाई गई लड़की को डूबने से बचा लिया था । कुछ देर वे किनारे पर सुस्ताये थे। फिर न मालूम किधर निकल गये थे। लोगों ने इतना ज़रूर देखा था कि उन्हें लेने के लिये घोड़े आये थे ।

शेरख़ान इलाक़े का हाक़िम था । उसके लिये भला घोड़ों की क्या कमी थी ।

शैली के साथी कहते थे कि शेरख़ान लड़की को लेकर ज़रूर अपने गाँव गया होगा । सबसे पहले वह लड़की के साथ निकाह पढ़वायेगा । अपनी एक बीबी को तलाक़ देगा, ताकि चार बीवियों का उसका ईमान ज्यों का त्यों बना रहे । नई बीबी को घर लाने से पहले वह सबसे पुरानी बीबी की छुट्टी कर दिया करता था । चाहे कोई हो । इन हरकतों के लिये वह इलाक़े भर में बदनाम था ।

सिर्फ एक ही बुराई थी शेरख़ान में, बाक़ी सब बातें अच्छी थी, खुदापरस्त था । बाबा नानक का मुरीद था । जहाँ तक मुमकिन होता, ग़रीब गुर्बे की मदद करता । कई बार भगाई गई हिन्दू लड़कियों को बहाल करके उसने उन्हें उनके परिवारों के हवाले किया था । कई बार मस्कीन, खेतीहरों को उसने इन्साफ़ दिलवाया था । ग़रीब गुर्बों के लिये उसके दरवाज़े हमेशा खुले रहते थे । पाँचो वक्त नमाज़ पढ़ता था । बस ज़बान का कड़वा था । माँ बहन की गाली के बगैर बात नहीं करता था । और ख़ूबसूरत लड़की देखकर उसका अपने ऊपर बस नहीं रहता था । उसकी यही कोशिश होती थी कि किसी न किसी तरह वह उसके काबू में आ जाये । किसी न किसी तरह वह उसके आँगन की रौनक बन जाये। और फिर जिस चाव से डोलियाँ घर में लाता था उसी बेकद्री से वक्त आने पर उन दुल्हनों की छुट्टी भी कर देता था । जैसे जान पहचान ही न हो, जैसे कोई दूध में से मक्खी निकाल कर फेंक दे ।

रावी पार किनारे पहुँच कर सुंदरी भी हैरान हो रही थी । जिस क्षण से शेरख़ान को यह पता चला कि वह गुरूबाबे की अनुयाई है, वह उस लड़की को सौग़ात समझने लगा था, जैसे किसी को ईनाम में प्राप्त हुई हो । उसकी नज़रों में एक गर्मी थी एक स्नेह था, एक अपनत्व था ।

और फिर उसने जिस ढँग से सुंदरी को बचाया था । आख़िर उसका क्या रिश्ता था उसके साथ ? भगाई हुई एक हिन्दू लड़की ! अगर इस तरह डूब कर मरने पर वह तुली हुई थी, वह बह जाती । इस तरह की लड़की की भला कोई कब तक रखवाली कर सकता है? कभी कोई किसी को मरने से रोक सका है? सबसे आसान होता है मरना ।

और बाबा नानक का नाम कितने आदर से लेता था । गुरू नानक की बहुत-सी वाणी उसे याद थी ।

उसने सुन्दरी को एकान्त स्थान पर ले जाकर बैठाया था । घाट की किसी औरत को उसकी ख़िदमत के लिये तैनात किया था । उसकी ख़ातिर में कोई कसर नहीं छोड़ी थी । उसके लिये खास पकवान पेश किये गये । अच्छे से अच्छे फल हाजिर किये गये । उसकी इस तरह से ख़िदमत की जा रही थी जैसे कोई शाहज़ादी हो ।

मज़ाल है, कोई मुसाफ़िर या कोई और अहलकार सुंदरी की तरफ़ एक से दूसरी बार देख जाये । ऐसे घूरता जैसे वह अगले का खून पी जायेगा ।

सुंदरी गीले आटे की तरह थी, जो भी उसे देखता, जो भी उसकी सुन्दरता को निहारता, उसका जी करता किसी न किसी तरह झपट ले । शैली के साथ सुन्दरी को शेरख़ान के क़ब्ज़े से छुड़ाने के लिये, निकले नौजवान फ़ुरसत में हर तरह की वाहियात बातें करने लगते ।

''जो लड़की शेरख़ान जैसे मुस्टंडे के क़ब्ज़े में एक रात ही गुज़ार आई हो भाई, वह तुम्हारे किस काम की? तू मुझे बक्शदे । हमें तो कोई फ़र्क नहीं पड़ता, पुरानी घिसी जूती मुझे तो हमेशा माफ़िक आती है। जब भी मैंने नई जूती पहनी है, मेरे तलुओं में छाले पड़ जाते हैं ।'' ख़ाली बैठा उसका साथी शैली से कह रहा था मीरा ज़ात का मुसल्ली था ।

''औरत जात का कुछ पता नहीं होता । जिस खूँटे से कोई बाँध दे उसी की हो जाती है । हम लाख जतन करके उसकी तलाश करेंगे और चाहे वह हमारे मुंह पर थप्पड़ मार कर हमें खदेड़ दे ।'' सैदा ज़ात का सैय्यद था । जब भी बोलता था बड़े ठहराव से सोच समझकर बात करता था ।

''सवाल यह है कि औरत का गहना उसकी पवित्रता है । जिस लड़की का सत्त भँग हो गया, उसमें बाक़ी रह ही क्या जाता है? निरा फोक । वह किसी के किस काम की ? मैं तो ऐसी लड़की को कभी मुँह न लगाऊँ । हाँ, एकाध रात गुज़ारनी हो तो और बात है । इस काम के लिये घिसी पिटी लड़कियाँ बुरी नहीं होती ।'' मुजीब जाटों का लड़का था । देखने में सुंदर ।

''हम तो इस लिये उसकी तलाश में निकले हैं, क्योंकि वह गुरूसिक्ख है । और हमारा भाई कहता है कि लड़की देखने में सुंदर है । हमारे गाँव में किसी का आँगन बस जायेगा । सारा गाँव ही सुंदर लगने लगेगा । स्यालकोट की बनियाइनें बहुत बाँकी होती हैं । एक हमारे गाँव में पहले आई थी, लेकिन वह मुग़लों के हमले में कहीं आगे पीछे हो गयी ।'' लम्मा उम्र में सबसे बड़ा था, लेकिन वह तबीयत का बड़ा हँसोड़ था ।

शैली सुन सुनकर झुँझला उठता । वे चारों के चारों उसके हमदर्द थे । उसकी मदद के लिये हर कुर्बानी देने के लिये तैयार थे । लेकिन औरत ज़ात के बारे में उनके विचार कैसे थे । कभी कभी शैली का मन करता कि वह अपने कपड़े फाड़ कर निकल जाये ।

12

आठों पहर उनकी नज़रें घर की दहलीज़ पर लगी रहती । और भला कर भी क्या सकतीं थीं? औरत ज़ात इतनी बेबस तो वे कभी भी नहीं दिखाई दी थीं । शैली की कोई

ख़बर नहीं थी। न मालूम, किन हालात में वह लड़की का पीछा कर रहा था ? अमन को इस वारदात की खबर भेजी गई थी। अभी तक उसकी ओर से कोई जबाव नहीं मिला था। पता नहीं इन लोगों द्वारा भेजा गया पत्र उसे मिला भी था या नहीं। पत्र मिला होता तो वह इस तरह रूकने वाला नहीं था। नसरीन सोच रही थी कि अगर कोई और आदमी खडूर जा रहा हो तो वे उसे फिर अपनी दुर्दशा के बारे में लिखेगी। यही नहीं, उसने पत्र तैयार करके अपने पल्ले में बांध रखा था। किसी यात्री की तलाश में थी जो करतारपुर से सीधा खडूर जा रहा हो।

तेजी शर्मिन्दा थी कि उसका बेटा खडूर से हिलने का नाम नहीं ले रहा था। गुरू महाराज की सेवा अपनी जगह थी, लेकिन घर वालों पर जो मुसीबत आ पड़ी थी, उसका भी तो किसी ने इलाज करना था। बेचारा शैली अकेला न जाने कहाँ टक्करें मार रहा था, खज्जल ख़वार हो रहा था।

शक्ति ने चरख़ा, चक्की, चूल्हा और चट्ट संभाल लिया था। और किसी को जैसे होश ही नहीं थी। और फिर शक्ति को इस आँगन में विचरण करना अच्छा लगता था, जैसे यह उसका अपना घर हो। वह आँगन जिसमें खेल कर अमन बड़ा हुआ था। अपने घर में जो काम उसने कभी नहीं किये थे, यहाँ वह इस तरह करती थी जैसे मुद्दत से उसे उनमें निपुणता प्राप्त हो। वैसे भी तेजी ओर नसरीन का घर एक धर्मशाला जैसा था, उनकी रसोई तो जैसे गुरू का लँगर हो। लोगों का आना जाना अक्सर लगा रहता। गुरूसिक्खों की संगत में वे लोग खुश रहते थे। अब जबसे सुंदरी की वारदात हुई थी, सब फ़िक्रमंद थे। जो भी सुनता हमदर्दी दिखाने आता। लड़की को लौटा लाने के तरीके सुझाता, शक्ति हर किसी की ख़ाातिर में हाज़िर रहती। किसी को ठंडा, किसी को गर्म पेश करती रहती।

सबसे ज़्यादा परेशान सुंदरी की माँ थी, और सबसे अधिक आश्वस्त भी। उसे बाबा नानक में बेहद विश्वास था। उसका दिल कहता था कि सतगुरु की शरण में आई उसकी बेटी का बाल भी बाँका नहीं हो सकता था। ईश्वर बस उसकी परीक्षा ले रहा था। आठों पहर वह हाथ जोड़ती रहती थी- हे बाबा नानक ! घट घट के ज्ञाता, मुझे भाना मानने का बल दे। मुझे सुमति दे ताकि मैं तुम्हारी रज़ा में राज़ी रहूँ। सब देख देख कर हैरान होते रहते। वह रोती बिलखती भी थी, और फ़रियादें भी करती थी, फिर अपने आपको जैसे समझा लेती थी, उसका ईश्वर के न्याय में पूरा विश्वास था।

आज कल ज्यादातर वक्त वह धर्मशाला में बिताती थी। सुबह पौ फटते ही वह नहा धोकर घर से निकल जाती। भीतर बाहर से धर्मशाला को बुहारती। झाड़ू देते समय "धन्न निरंकार" "धन्न बाबा नानक," का जाप करती रहती। अनेक औरतें झाड़ू देने आती थी, लेकिन जिस श्रद्धा से भाई मूले की पत्नी गुरू घर की सेवा करती थी, वह केवल उसी का हिस्सा था। जब भी उसे अपनी जाई की याद आती, आँसुओं की एक चिनाब उसकी आँखों से बहने लगती। उसकी साथिनें उसे देख देख कर बेहाल होती रहती। जब साध संगत जुड़ती, सुँदरी की माँ, एक एक करके संगत के जोड़े झाड़ती, चरण धूलि माथे से

लगाती, अपनी ज़िन्दग़ी की भूलें बख़्शवाती रहती ।

लंबी लंबी अरदासें करती रहती । बहुत देर तक माथा रगड़ती रहती । पाठ करने लगती तो लगातार घंटों तक उसी में खो जाती । शब्द कीर्तन हो रहा होता तो वह आँखें मूंद कर अन्तर्लीन हो जाती । एक एक बोल जैसे उसके भीतर धँसता जा रहा हो । रस-विभोर होकर वह निश्चल बैठी रहती ।

सुबह शाम सँगत जुड़ने से बहुत देर पहले वह गुरूद्वारे पहुँचती, कीर्तन के बाद, पाठ के बाद, व्याख्या के बाद जब सब अपने घर लौट जाते, तब कहीं, वह दरियाँ समेट कर घर लौटती । शाम के वक्त फिर नियम से धर्मशाला पहुँच जाती ।

न खाने की सुध न पीने की सुध ।

आँगन में क़दम रखते ही, बस इतना पूछती-कोई ख़बर ? सब को खामोश पा कर "धन्न निरंकार" "सत्त निरंकार" "धन्न बाबा नानक" "धन्न गुरू नानक" का जाप करने लग जाती ।

घर में सब उसको देख देख कर अचँभित होते रहते । कभी कभी नसरीन और तेजी को महसूस होता कि शैली की ग़ैर हाज़िरी करके वे लोग सुँदरी की माँ से ज़्यादा परेशान थे जो अपनी परियों जैसी क्वाँरी लड़की को गँवा कर दुखी थी ।

एक दिन तेजी के मुंह से हमदर्दी के बोल निकले-"न जाने लड़की के साथ क्या बीत रही होगी", तेजी की आवाज़ भर्राई थी ।

"बाबा नानक की छत्रछाया में है । उसे क्या होना है ? उसका तो बाल भी बाँका नहीं हो सकता । भाई मूले की जाई है । उसका भला कोई क्या बिगाड़ेगा? ।" वह बड़े हौसले से बोल रही थी । "यह तो हम अभागे हैं, जो दिन रात कलप रहे हैं । अपने पूर्व करमों का फल । मैंने आपने आप को सत्गुरू नानक को समर्पित किया है । उसकी शरण में हूँ । और सारे आसरे छोड़कर उसका दामन पकड़ा है । मैंने तो कभी कोई दूसरा उपाय नहीं सोचा । क्या मेरे सत्गुरू से भी ज़्यादा किसी की पहुँच है? मेरे बाबा ओटहीनों की ओट है । बेआसरों का आसरा हैं । मैं तो ऐसे सत्गुरू का दर कभी न छोड़ूँ ।"

अगले दिन सुबह धर्मशाला से लौट कर तेजी बातों ही बातों में नसरीन को बता रही थी। "कल रात मैंने सपने में देखा कि सुंदरी और शैली हँसते खेलते हमारे आँगन में दाख़िल हुए हैं । जैसे कोई बग़ीचे की सैर करके लौटा हो । और फिर मेरी आँख खुल गई । सरघी वेला थी । मुर्ग़ा बाँग दे रहा था ।"

"मुर्ग़ा या मुल्ला?" नसरीन को मुसलमान मौलवियों के साथ जैसे खुदा वास्ते का बैर हो । अभी तक उन्हें मांफ़ नहीं कर पाई थी ।

"हमारे करतारपुर के मौलवी तो जैसे कोई फ़रिश्ता हों,"तेजी ने नसरीन को याद करवाया ।

"उसे बाबा नानक की लौ लगी है"नसरीन ने कहा और तेजी ख़ामोश हो गई । बेहद विश्वास था गुरू नानक में उसके भक्तों का । उसका नाम लेकर ये लोग राह पकड़ते थे ।

यही कारण था कि आज कितने दिन बीत गये थे सुंदरी को उनसे बिछुड़े, इतने दिन हो गये थे, शैली की कोई खोज ख़बर नहीं थी, सुंदरी की माँ पागल नहीं हुई थी, बाक़ी घर वालों के हौसले बने हुए थे ।

वैसे जिस तरह का वह ज़माना था, जिस तरह के शासक थे, प्रजा के साथ कुछ भी हो सकता था, हर जुल्म, हर क़हर को झेलना लोग सीख गये थे । हर अत्याचार को सहना उनकी आदत हो गई थी । बाबा नानक ने खुद फ़रमाया था :-

कलि काती राजे कासाई धरमु पँख करि उडरिआ ॥
कूड़ु अमावस सचु चन्द्रमा दीसै नाही कह चड़िया ॥
हऊ भालि विकुन्नी होई ॥
आधेरे राहु न कोई ॥
विच्वि हऊमै करि दुखु रोई ॥
कहु नानक किनि बिधि गति होई ॥

13

शेरख़ान औरत से शादी करता था, व्यभिचार नहीं । कई लोग यह भी मानते थे कि वह एक के बाद एक लड़कियों से शादी रचा लेता था, क्योंकि उसके कोई औलाद नहीं हुई थी । शायद इस बात में भी कोई सच्चाई हो । लेकिन हक़ीकत यह थी कि सुंदर लड़की को देखकर उसका दिल काबू में नहीं रहता था।

चूँकि सुंदरी के साथ वह शादी करने जा रहा था, उसने अभी तक उसे हाथ तक नहीं लगाया था । बेशक उसे भगा कर लाया था । ज़बरदस्ती उसे छीन कर अपने क़ब्ज़े में कर लिया था, लेकिन उसके सत्त, उसके धर्म को उसने ज्यों का त्यों क़ायम रहने दिया था। वह तो उसकी बेग़म बनने जा रही थी । उसके बच्चे की माँ बनेगी । इस तरह की औरत, जिसके साथ उसने अपनी ज़िन्दगी गुज़ारनी थी, उसकी नज़रों में वह अपनी छवि कैसे बिगाड़ता ?

हर रात सुंदरी अलग कमरे में सोती थी। आज की रात न जाने क्यों सोने से पहले उसने अपने कमरे की कुँडी लगा ली थी । इस तरह उसने पहले तो कभी नहीं किया था । इस तरह के हालात में अगर किसी के मन में मैल हो तो न कुंडी न ताले किसी को बचा सकते हैं ।

आज की रात मालूम नहीं, सुंदरी को क्यों भीतर ही भीतर डर महसूस हो रहा था ।

आखिर क्यो? आज तो दिन में शेरख़ान ने अपनी जान को जोखिम में डालकर उसे डूबने से बचाया था । किस तरह एक सूरमें की तरह वह ठाठें मारते पानी में कूद पड़ा था और सुंदरी को जैसे मौत के चँगुल से छीनकर ले आया था ।

जैसे किसी का नया जन्म हुआ हो । सुंदरी को ऐसा लग रहा था। उसे अपने आप पर एतबार न आता । भाई मूले की बेटी, उसके भीतर की पुरानी सुंदरी रावी में डूब कर मर गई थी । अब तो कोई और सुंदरी थी, जो इस तरह विचर रही थी, जैसे कभी कुछ हुआ ही न हो।

इन ख़्यालों में डूबी सुंदरी को बार बार शेरख़ान का रावी में डूबने से बचाना याद आने लगता। उस हृस्ट पुष्ट आदमी ने कैसे उसके पीछे पीछे छलाँग लगा दी थी और उसे क़हर के पानी से छीन कर, अपनी पीठ पर लिटा लिया। सुंदरी तो डूबने के लिए कूदी थी, न कि बचने के लिए,वह फिर खिसक कर लहरों के गले जा लगी थी, इस बार सुंदरी की चोटी उसके हाथ में आई लेकिन मज़ाल है उसने उसके साथ ज़्यादती होने दी हो, झट ही उसने सुंदरी के कँधे को सँभाल कर उसे अपने क़ाबू में कर लिया। अब सुंदरी बार बार ग़ोते खाने के कारण बेहाल हो गई थी, और फिर उसे नहीं पता चला कब उसे किनारे पर पहुँचा दिया गया।

"जैसे किसी फूल को हथेली पर रख कर कोई ले आया हो।" जब उसे होश आई, सुंदरी ने एक औरत को कहते सुना था।

इस तरह सोचते सोचते सुंदरी की आँखें लग गई। अभी उसे सोये ज़्यादा देर नहीं हुई कि वह सपने में उसी घटना का नाटक खेलने लगी जो उसके साथ हुई थी। फर्क सिर्फ़ इतना था कि रावी की उछलती, झाग फेंकती लहरों में उसे कोई बार बार अपनी बाँहों में भर रहा था, मालूम नहीं ये बाहें अमन की थी, शैली की थी, शेरख़ान की हरग़िज़ नहीं थी।

जैसे कोई उसके साथ खेल रहा हो। दो मछलियाँ एक दूसरे के गले से लिपट रही थी। एक दूसरे के शरीर से लिपट रहीं थीं। अंग से अंग टकरा रहे थे। ओठों से ओंठ छू रहे थे। एक स्वाद स्वाद था। एक नशा नशा।

कभी सुंदरी डुबकी लगा कर नदी के तले तक पहुँच जाती और कोई टटोलता हुआ आता। यह उसे चरका देकर कभी दायें हो जाती, कभी बाँये, कभी नीचे, कभी ऊपर। और उसके क़ाबू न आती।

और फिर वे सचमुच जैसे खेल रहे थे। एक दूसरे पर पानी के छींटे मारते। एक दूसरे को ग़ोते देते, एक दूसरे का पीछा करते, पछाड़ते, जीतते, हारते, तैर तैर कर न थकते, न उनका मन भरता।

कभी एक दूसरे की बाँह में बाँह डाले तैरते, जैसे दो मुर्गाबियाँ झील के पानी में फूलों की तरह झूल रही हों। कभी सुंदरी को कोई कँधे पर चढ़ा लेता और नीचे ही नीचे उतरता जाता, जैसे पाताल को छूने के लिए बेक़रार हो। घुप्प अंधेरा और कीचड़, पत्थर के गोल टुकड़े, टूटी हुई चूड़ियाँ, हड्डियों के टुकड़े।

उसके अँग से अँग सटाये सुंदरी जैसे मदहोश होकर गा रही हो :-

गोरी मींह विच भिजदी आवे
ते कुड़ती चों अग सिम्मदी।
....
आटा गुँनदी दा मुड़का चोइआ
तौण ते सँद्धूर डुलिहया
....

नाले मेरा माही लगदा
नाले चानण अखीआँ दा ।

फिर उसने अपने आपको लहरों के हवाले कर दिया । वह बहती जा रही थी । कहीं तेज़ तेज़ कहीं धीरे धीरे । कहीं सोई सोई, कहीं बवँडर, कहीं गड्डे, कहीं टीले, कहीं आबशार, कहीं लहरें, कहीं तरंगें । कहीं किनारों पर ऊँचे ऊँचे पहाड़, कहीं सदान हरे भरे पेड़, कहीं लहलहाते खेत, कहीं घाट, सोने के कलश, मंदिरों की घंटियाँ, साधना के स्वर, भक्तों के गान, श्रद्धालुओं की प्रार्थनायें । और फिर वह अथाह सागर में विलीन हो गई।

अब सुंदरी कहाँ थी?

कहीं भी नहीं ।

पसीने से तर सुंदरी पलंग से उतर कर खड़ी हो गई । पौ फट रही थी । उसने अपने कमरे की खिड़की से झाँक कर बाहर देखा। बाहर आँगन में शेरखान सिजदे में गिरा शायद फ़ज्र की नमाज़ पढ़ रहा था ।

यह आदमी कैसा है, सुंदरी सोचने लगी सरकारी अहलकार की वर्दी में घोड़े पर चढ़ा कैसा था? पराई लड़की को देखकर उस पर भूखे भेड़िये की तरह झपटने के वक्त कैसा था? और एक बार जब वह लड़की उसके क़ब्ज़े में आ गई थी, तब वह कैसा था? जैसे उसे सँभाल सँभाल कर रख रहा हो । जैसे हर क्षण उसकी रखवाली कर रहा हो । मज़ाल है कोई उसकी ओर आँख भी उठा कर देख जाये ।

एक तरफ़ इतना जालिम, इतना क़हर ढाने वाला,दूसरी तरफ़ सारी रात सिजदे में पड़ा रहने वाला खुदापरस्त इन्सान !

सुंदरी की समझ में कुछ न आता । काफ़ी देर तक खिड़की में खड़ी शेरख़ान को सिजदे में गिरा देखती रही ।

सुंदरी का मन कहता -नेक इन्सान है । अगर मैं इसे कहूँ तो शायद यह मुझे इसी तरह सही सलामत मेरी माँ के पास छोड़ आयेगा ।

14

शैली को पहली बार अहसास हुआ कि वह सुंदरी को प्यार करता था ।

सराय का चौकीदार उसे बता रहा था, शेरख़ान फलाँ कमरे में सोया था और जिस लड़की को वह अपने साथ लाया था उस कोने वाले कमरे में सोई थी, जिसकी खिड़की पीछे की तरफ़ खुलती थी । ''जैसे हाथ लगाने से मैली हो जायेगी, लड़की इस पलंग पर आकर सुस्ताने के लिए लेटी और उसकी आँख लग गई । चौकीदार शीशों से जड़े पलंग की ओर इशारा करते हुए बोल रहा था । शैली ने आगे बढ़कर पलँग को छुआ और उसके बदन में सर से लेकर पैरों तक एक लहर दौड़ गई । वह दिल मसोस कर रह गया। अपने कलेजे में उसे एक मीठा मीठा दर्द महसूस होने लगा ।

''सुंदरी जैसी लड़की पर हाथ डालना किसी के लिये आसान नहीं ।'' शैली के दिल ने कहा । अभी तक वह अलग कमरे में लेटती थी, यह जान कर शैली के दिल का

कँवल जैसे सहसा खिल उठा हो । बहुत देर तक वह उस कमरे में खड़ा रहा । सराय का चौकीदार देख देख कर हैरान हो रहा था । जैसे कोई सिरफिरा हो। दीवाना आदमी । शैली को उस कमरे में से ''सुंदरी'' की खुशबू आ रही थी । ऐसा लगता था जैसे अभी अभी कहीं निकल कर गई हो । उसके आँख मूंदते ही वह फिर कमरे में आ जायगी ।

शैली और उसके साथियों को भला घोड़े कौन देता? शेरख़ान के गाँव के लिये उन्होंने अगली सुबह जल्दी ही निकल जाना था । उस रात वे लोग उसी सराय में रुक गये । घाट थोड़ी ही दूर था ।

शैली ने ज़िद करके वही कमरा चुना जिस में सुंदरी रुकी थी । उसने उसी पलंग पर सोने का फ़ैसला किया, जिस पर सुंदरी सोई थी । पागल कहीं का । सारी रात करवटें बदलते हुए बीत गई । उसे एक पल भी नींद नहीं आई । बार बार सुंदरी के कानों में जैसे गोश करने लगता ।

''तुझे पता है, करतारपुर के बाहर खड़ा जब मैंने पहली बार तुझे देखा था, मेरा दिल उछल कर जैसे तेरी झोली में जा पड़ा था । अगले क्षण उस आंधी तूफ़ान में तूने मेरा हाथ पकड़ लिया था । मेरे भीतर सिहरन दौड़ गई थी ।

''गन्दुमी रंग, जैसे किसी ने दस बार पानी से धोकर चंदन की मूर्ति को सोने की थाली में सजाया हो । पान के पत्ते जैसा तेरा मुखड़ा । जब तू मुंह खोलती है तेरे गालों में गड्ढे पड़ जाते हैं । तेरे दहकते हुए चेहरे में से जैसे एक लौ फूट रही हो । तेरी ऊदी नीली आँखें, जैसे सोई हुई झीलें हों और फिर तेरे बाल, तेरी चोटी जैसे तुझसे संभालते न संभलती हो । अपने बालों को बार बार समेटते देखकर हमेशा मुझे तुझ पर लाड़ आ जाता है और मैं अपने दिल को पकड़ कर बैठ जाता हूँ ।

''तुझे अपनी एक चोरी की बात बताऊँ ? तुझे पहली बार देख कर मैं अगले दिन तड़के धर्मशाला में माथा टेकने गया और हाथ जोड़ कर बस यही अरदास बार बार मेरे ओठों पर आती–किस तरह मुझे तेरी मुहब्बत का वरदान मिल जाये । उस दिन सुबह खाने के समय तूने कितने सुंदर ढँग से मेरे लिये थाली परस कर मेरे सामने लाकर रखी थी । मेहमान तो तुम थी, दरअसल मुझे तुम्हारी ख़ातिर करनी चाहिये थी । लेकिन बाबे की दरगाह में अरदास की, उल्टा तू मेरी देखभाल कर रही थी । मक्खन से चूते तंदूर के पराँठे लाकर मेरी थाली में रख रही थी ।

''उस दिन बेड़ी में बैठते वक्त मैंने अपने दिल से कहा, सुंदरी मेरी होगी अगर रावी पार करते हुए वह मेरे नज़दीक आ बैठेगी और जब सब अपनी अपनी जगह पर टिक गये तो मैं यह देखकर गद्‌गद् हो गया कि तू मेरी बग़ल में पड़ी ख़ाली जगह पर आकर बैठ गई थी । और फिर जब कश्ती डगमगाती तो मुझे ऐसा महसूस होता कि अगली बार तू आकर मेरी बाँहों में गिर जायेगी । डर से मेरा चेहरा लाल हो रहा था । उधर तुझसे तेरी हँसी संभाले नहीं सँभल रही थी ।

''और फिर बाग़ीचे में टहलते हुए किसी न किसी तरह हमारा साथ हो जाता था ।

कभी मैं पीछे रह जाता कभी तेरी चाल मद्धम हो जाती, कभी मैं उस तरफ़ चल देता जिस तरफ़ तू लोगों से अलग होकर चल रही थी ।

और फिर जब दोपहर के वक्त सब सुस्ताने के लिए आम के पेड़ के नीचे दरी बिछा कर लेटे, तेरी क़सम मुझे प्यास लग रही थी, और मैंने क्या देखा तू सामने कुँए के रहट से पानी का कटोरा भर कर ला रही थी । तुझे किसने बताया था कि मैं प्यासा हूँ ।

"और फिर शाम को लौटते वक्त, मुझे तो तब पता चला कि तू भी पीछे रह गई थी, जब कश्ती किनारे से ठेली जा चुकी थी । मुझे कितनी शर्म आई थी । और तू एक कबूतरी की तरह गुटक रही थी ।

उस रात की वर्षा और तूफ़ान में तू किस तरह मुझसे चिपकी जा रही थी । जैसे बल खाती हुई कोई लता किसी पेड़ के तने के साथ सटककर ऊपर ही ऊपर चढ़ती जा रही हो।

"और फिर शेरख़ान एक नज़र तुझे देखकर ज्योंही तेरे ऊपर झपटा, तू चंबे की निचुक रही कली की तरह बरगद के चबूतरे पर मुरझाकर औंधी जा गिरी थी । और उसने हुक्म दिया था, कराड़ के टुकड़े टुकड़े करके रावी में फेंक दो । मैंने सोचा यह तो कुत्ते की मौत होगी । मैं तो तुर्क से तुझे छुड़ाते हुए मरना चाहता था । और फिर यह कौन सा खेल मेरे साथ खेला जा रहा था ?

"और अब मेरी जान, मैं जान दे दूँगा तेरी तलाश में, तुझे पाने के लिए । मेरे साथ चार और जाँबाज़ हैं बाबा नानक के श्रद्धालु । हम भाई मूले की बेटी को किसी पराये मर्द के क़ब्ज़े में नहीं रहने देंगे चाहे हमारी जान ही चली जाये । हम लोग सर धड़ की बाज़ी लगा देंगे ।

"तेरा सुराग़ पता चल गया है । एक पड़ाव और, हम तेरे पास होंगे । तुझे मेरी इन्तज़ार करनी पड़ेगी । यह न हो कि मैं पहुँचूँ और तू किसी से कौल-इक़रार कर बैठें । इस इलाक़े में शेरख़ान का जादू बड़ा मशहूर है ।

"हाय, तुम्हें कैसे बताऊँ, जिस जिसने तुझे देखा है, जहाँ जहाँ से तुम गुज़री हो, जहाँ जहाँ तुम उठी-बैठी हो, हर ज़बान पर तुम्हारे हुसन के किस्से हैं । सब हसरत भरें ओठों से शेरख़ान की खुश किस्मती की चर्चा कर रहे हैं ।

"सुंदरी, मैं आ रहा हूँ, तुम्हें मेरी इन्तज़ार करनी होगी, तेरी दहलीज़ पर से हिलूँगा नहीं । शेरख़ान को यह क़हर करने की जुर्रत नहीं होगी।"

15

सुंदरी का बिछोड़ा, शैली की कोई ख़बर न पा कर हर रोज रोना धोना मचा रहता था । कई कई दिन तक लोग बिना खाये पिये रहते । सब परेशान थे, सब बेबस थे । फिर बाबा नानक का आसरा,उसकी रज़ा में हर कोई राज़ी हो जाता । सत्गुरू मेहर करेगा, यह सोच कर सुंदरी की माँ अपने मन को समझा लेती । उसका हौसला बुलंद देखकर परिवार के लोग शांत हो जाते ।

अमन की हर रोज़ इन्तज़ार रहती, वह किसी वक्त भी आ सकता था। क्योंकि

उसकी इन्तज़ार थी इस लिये इनमें से कोई खडूर नहीं गया था । गुरू अँगद देव जी के चरणों में हाज़िर हो कर फ़रियाद की जा सकती थी, घट घट के ज्ञाता । अनाथों के नाथ । दुखनिवारक । राजाओं के राजा । शाहों के शाह । जहाँ हुमायूँ जैसा शहंशाह सतगुरू का आशीर्वाद लेने आया था ।

इधर ये लोग अमन की राह देख रहे थे, उधर उसका एक और ख़त आ गया । साफ़ ज़ाहिर था कि उसे इनके भेजे हुए ख़तों में से एक भी खत नहीं मिला था ।

इन हालात में, अमन के ख़त में शक्ति के अलावा घर में और किसी को कोई ख़ास दिलचस्पी नहीं थी । अमन की माँ तेजी ने भी अपने बेटे के ख़त को बस एक सरसरी निगाह से देखा । सिर्फ़ शक्ति ही अब शायद छठी बार बैठ कर उसका ख़त पढ़ रही थी।

''आज कल हमारे यहाँ कुछ सिद्ध आये हुए हैं । लोहारीप्पा,मछंदर, गोरख, भरथर, चटपट, ईशरनाथ और गोपीचन्द । कुछ खुद आये हैं, कुछ के चेले आये हैं । इन्हें यह जानणे की उत्सुकता है कि उस गुरू अँगद के दर्शन किये जायें, जिसे बाबा नानक जैसे पहुँचे हुए फ़कीर ने अपने दो बेटों की अवहेलना करके गुरू की गद्दी बख़्शी है । गद्दी ही नहीं, बख़्शी उसे साष्टाँग प्रणाम भी किया । लुहारीप्पा और मछंदर के साथ बाबा नानक की सुमेर पर्वत और फिर अचल बटाले में भेट हुई थी। मछंदर को संबोधित करते हुए बाबा नानक ने कहा था :

सुणि माछिंद्रा नानकु बोलै ॥
वसगति पँच करे नह डोलै ॥
जैसी जुगति जोग कउ पाले ॥
आपि तरै सगले कुल तारे ॥

(नानक कहे,सुन मछिंदर ऐसी जुगत से जोग करो जिससे खुद भी भवसागर पार करे और सारे कुलों को भी तारो)*

''गुरू महाराज के साथ हुई गोष्ठी में पहला सवाल उन्होंने किया–महाराज यह बताइये कि आप में वे कौन से गुण हैं कि नानक जैसे सतगुरू आप पर कृपालु हुए । उन्होंने न केवल आपको अपना उत्तराधिकारी बनाया,बल्कि आपके सामने झुककर सम्मान भी प्रदर्शित किया ।''

''गुरू अंगद देव जी ने सिद्धों को समझाया कि गुरू नानक एक महान आत्मा थे । वे पिता समान थे । पिता जब अपने बच्चे को झुककर अपनी बाँहों में लेता है तो वह झुकना नहीं होता, यह मेहरबानी होती है । यह उनकी उदारता थी कि उन्होंने मुझे धूलसने को उठाकर अपनी छाती से लगा लिया । यह कहते हुए गुरू अँगददेव जी महाराज की आँखों में से आँसू टपकने लगे और एक मूक कृतज्ञता में उन्होंने इस श्लोक का उच्चारण किया :

एह किनेही दाति आपस ते जो पाईऐ ॥
नानक सा करामाति साहिब तुठै जो मिलै ॥

---

* अनुवादक

''यह सुनकर सिद्धों की तसल्ली हो गई । वे बार बार एक दूसरे से कहते गुरू अंगद देव जी की नम्रता के कारण ही उन्हें यह पदवी प्राप्त हुई है।

''सिद्ध इतना लंबा सफ़र करके आये थे । अब उन्होंने फिर वही वाद-विवाद छेड़ा, जो अनेक बार बाबा नानक के साथ हुई अपनी गोष्ठियों में भी वे छेड़ चुके थे,उनकी तसल्ली तो हो जाती थी, लेकिन अपना परंपरागत मार्ग छोड़ना उनके लिये कठिन था। उनमें से एक सिद्ध ने अपनी चिन्ता प्रकट की, ''बिना अष्टांग योग के आत्मा निर्मल नहीं होती और सिद्धि भी प्राप्त नहीं होती ।*

गुरू महाराज ने सिद्धों को याद करवाया कि गुरू नानक देव जी ने इस तर्क के विषय में अपने विचार प्रकट किये थे । बाबा नानक का रास्ता सहज का रास्ता था । हठ का रास्ता नहीं । सँसार का त्याग सँसार से घृणा का सूचक है । जहाँ घृणा है , प्रतिकूलता है वहाँ प्यार नहीं होता । और बिना प्यार के प्यारे को पाया नहीं जा सकता । गुरू का सिक्ख क़ुदरत में कादिर को देखता है और इस प्रकार विस्माद में पहुँच जाता है । विस्माद में पहुँच कर वह परमात्मा को पा लेता है । वह ईश्वर की रज़ा में रहता है । इस तरह वह ऋिद्धियों,सिद्धियों और निधियों का भागी होता है । ज़रूरत इस बात की है कि प्राणी पर सत्गुरू की कृपा हो । नाम प्राप्त होता है । गृहस्थ में रहते हुए भी मनुष्य विषय विकारों से बचा रहता हैं । मन स्थिर रहता है । इसके लिये किसी वेष की ज़रूरत नहीं । न गुदड़ी की, न भस्म की, न भभूत की, न डंडे की, इसके लिये हठ की ज़रूरत नहीं, लंबी उम्र की जरूरत नहीं ।

''सिद्धों की तसल्ली नहीं हुई । वे ज़िद कर रहे थे कि दुनियाँ के त्याग के बग़ैर प्राणी मोह माया में ग्रस रहता है । जब तक जोगी द्वार द्वार घूम कर भिक्षा नहीं माँगता, उसका अहँकार नहीं मरता । योग साधना देह को रोगरहित बनाती है । तीर्थों का स्नान मन की मैल उतारता है । वग़ैरह, वग़ैरह ।

''यह सुनकर गुरू अँगद देव जी महाराज ने सिद्धों को याद दिलाया कि प्राणी मात्र का जीवन एक जंग के मैदान जैसा है, जिस जंग में सिपाही लड़ने जाता है, तलवार निकाल कर दुश्मन से जूझता है और उसे पछाड़ता है । कोई सिपाही जंग के मैदान में खाई खोद कर उसके भीतर घुसकर बैठ जाता है । ज़रूरत इस बात क़ी है कि प्राणी सँसार में रहे, गृहस्थ आश्रम में विचरण करे और कमल की तरह निर्लिप्त रह कर अपना जन्म सँवारे । अपने साथ औरों को भी पार लगाये ।''

''इसका प्रत्यक्ष प्रमाण गुरू अंगद जी का अपना जीवन है । अपने बेटों को उनकी हिदायत है कि घर का ख़र्च वे दुकानदारी करके चलायें । गुरू घर में जो भेंट किया जाता है उसकी तरफ़ नज़र उठाकर न देखें । यही हाल माता रवीवी जी का है । भाई बलवँड के शब्दों में :

''बलवँड रवीवी नेक जन
जिसु बहुती छाउ पत्ताली ॥

* महिमा प्रकाश

लँगरि दउलति वँडीऐ
रसु अँमृित रवीरि छिआली ॥
गुर सिक्खा के मुख उजले
मन सुख थीये पराली ॥''

''आख़िर गुरू महाराज ने बात ख़त्म करते हुए कहा कि प्राणी को ईश्वर की रज़ा में रहना चाहिये । यही सहज योग है ।''

जो किछु कहे भला करि मानउ
सहिज जोग निधि पावउ ॥

''यह सुनकर सिद्धों की मंडली ख़ामोश हो गई । लगता था जैसे उनकी सारी शँकायें निवृत्त हो गईं थीं ।

16

शेरखान के गाँव शेरगढ़ पहुँच कर सुंदरी चकित हो रही थी । सारे परिवार ने तो जैसे उसे सिर पर ही उठा लिया हो । शेरख़ान की चारों बीवियाँ-जन्नत, नसीम, गौहर और मोतिया, शेरख़ान की माँ फ़ातिमाँ बीबी, घर के नौकर चाकर,पड़ौसी, गाँव के पंच, चौधरी, और सभी शहरी ।

बात यह थी, शादी को इतने बरस बीत गये थे, इतनी शादियाँ की थीं, फिर भी शेरख़ान की कोई औलाद नहीं हुई थी । उसके आँगन में कोई बच्चा नहीं खेलता था । सारे गाँव को जैसे इसी बात की तमन्ना थी । शेरख़ान गाँव की नाक था । उसके पुरखों ने यह गाँव बसाया था । अगर शेरख़ान बिना औलाद के चला गया तो गाँव अनाथ रह जायेगा सरकारी दरबार में उसी परिवार का रसूख़ था । शेरख़ान के बाद उसका बेटा अगर वारिस नहीं बनता तो गाँव की हेठी होगी । इलाक़े भर में वे लोग किसी को मुँह दिखाने के क़ाबिल नहीं रहेंगे ।

एक दिन, दो दिन, चार दिन बीत गये सुंदरी अपने अकेले कमरे में रहती थी । हवेली के चौबारे में मज़ाल है चिड़िया का पँख भी उसके नज़दीक फटक जाये । बस नौकरानियाँ उसके इर्दगिर्द घूमती थी, या फिर शेरख़ान की कोई बीबी, कभी कभी पड़ौसिनें उसके हुस्न की कहानियाँ करने घड़ी भर के लिए आती थीं । फिर हसरत भरी नज़रों से उसकी तरफ़ देखती, उसकी बलैच्या लेती, और चली जाती । किसी को उसके गज़ गज़ लँबे रेशम के लच्छे जैसे बाल अच्छे लगते थे, किसी को उसका गेहुँआ रंग । किसी से उसके जोबन का हुलार नहीं झेला जाता था और किसी में उसके नैनों का खुमार सिहरन पैदा कर देता था । कोई उसके अँग अँग की कोमलता पर क़ुर्बान था, कोई उसके गालों में पड़ रहे गड्ढों की दीवानी थी ।

''ऐसा लगता है जैसे कोई परी आसमान से उतरी हो ।''

''हाथ लगाते ही मैली हो जायेगी ।''

''अछूता कँवारापन इसे कहते है ।''

"रब्ब फ़ुर्सत में बैठकर इसे बनाता रहा है ।"

"एक मीठी मीठी सुगन्ध आती है इसकी साँस में से ।"

"कोई राजकुमारी है ।"

"इसके जैसी तो हमारे यहाँ कोई नहीं ।"

"यह चाहे तो सात बेटे जनकर शेरख़ान का आँगन भर दे ।"

"सुघड़ लगती है । कितनी सुशील है ।"

"मुँह में जैसे ज़बान न हो ।"

"बड़े घर की मालूम होती है ।"

"भागों वाली है ।"

"राज करेगी ।

"मालूम नहीं कैसे यह सुच्चा मोती शेरख़ान के हाथ लग गया ।"

"जब फूलों वाली रात आती है कोई न कोई इन्तज़ाम हो जाता है ।"

जो भी आती इसी तरह की बातें करके सुंदरी को लाख लाख असीसें देती उस पर बलिहारी जाती ।

सुंदरी को हैरानी होती, शेरख़ान की बीवियों में उसकी ख़ातिरदारी करने की होड़ लगी हुई थी । एक दूसरी से बढ़ चढ़ कर वे लाड़ कर रही थीं । और सुंदरी ने सुना था कि अगर वह शेरख़ान से निकाह करेगी तो उनमें से किसी एक को जवाब मिल जायेगा । किसी एक की बादशाहत छिन जायेगी ।

इन सारी बातों के पीछे असलियत यह थी कि कुछ दिन पहले उनके गाँव में एक जोगी आया था। शेरख़ान को देख कर कहने लगा तेरे सारे क्लेश कट गये हैं । समझ लो तेरा आँगन बसने ही वाला है । तेरे यहाँ एक जीव आने वाला है । राह जाते सड़क पर मिल जायेगा । भाग खुलने वाले हैं ।

ठीक इसी तरह ही तो उसके साथ हुआ था । शेरख़ान कभी सोच भी नहीं सकता था कि उस तरह की भयानक रात में उसकी मुलाकात सुंदरी जैसी नाज़ुक परी से हो जायेगी ।

शेरख़ान की बीवियों में जैसे होड़ लगी हो । उनमें से हरेक सुंदरी के लिये जगह ख़ाली करने के लिए उतावली थी । मुसलमान बस निकाह में चार बीवियाँ रख सकता है । वैसे चाहे कोई उसके यहाँ पड़ी रहे । खाने पीने की उसके घर में कोई कमी नहीं थी ।

सचमुच शेरख़ान के घर की लहर बहर देखने के क़ाबिल थी । जैसे किसी रजवाड़े की अटारी हो। रजवाड़े तो वे थे ही । लाहौर के सुल्तानों द्वारा बनाये गये । राजा बदलते थे, पर ये लोग वैसे के वैसे जमे रहते । हर किसी के साथ इनकी बन आती थी । हर किसी की जागीरदारी इन्हें मिल जाती । लगान के साथ लगान, घोड़ों के साथ घोड़े, नौकरों के साथ नौकर इनका ख़ानदान लाहौर दरबार को पेश करता रहता । इलाक़े भर में इनकी

मान्यता थी ।

सुंदरी सोचती पिछले कुछ दिनों से शेरख़ान उसके साथ किस तरह पेश आया था । बेशक शुरू में उसका क़हर अत्यँत भयानक था लेकिन लगता था एक नजर उसे देखकर वह पसीज गया था । और फिर एक मर्द का अपने ऊपर ज़ब्त देखकर सुंदरी के मन में जैसे उसके लिये जगह बनती जा रही थी ।

और उसे हैरानी होती, आज कितने दिन बीत गये थे, उसे अमन एक बार भी याद नहीं आया था, जैसे वह उसे कभी याद किया करती थी । ख़ास तौर पर रावी में उसे डूबने से बचाने के दौरान उसे डूबने से बचाने के लिये शेरख़ान ने जो जवाँमर्दी दिखाई थी,अपनी जानपर खेल कर जिस तरह वह गर्जते,फुँकारते पानी में कूद पड़ा था, सुंदरी सोचती थी कोई ऐरा गैरा मर्द आदमी इस कर्त्तव्य को नहीं निभा सकता था ।

और फिर मर्द भी कैसा था ! ह्रस्ट पुष्ट । सुडौल, ऊँचा लंबा, गुस्से में कितना क़हर बरताने वाला और प्यार में कितना मीठा बोलने वाला ! फिर सुंदरी को आने जाने वालों से पता चला कि ये लोग बाबा नानक को अपना पीर मानते थे । गाँव की धर्मशाला में इनकी ओर से चढ़ाने के लिये शीरणी भेजी जाती थी । शेरख़ान के परिवार ने ही गाँव की धर्मशाला को बनवाया था । उसकी देख रेख बेशक श्रद्धालु करते थे, लेकिन शेरख़ान का परिवार अपने आप को गुरू नानक के अनुयाइयों में गिनता था । मजाल है धर्मशाला से आये किसी संदेश को अनसुना किया जाये या किसी फ़र्माइश को पूरा न किया जाये । या किसी मांग के प्रति लापरवाही दिखाई जाये ।

कुछ दिनों बाद जब सत्सँगियों को पता चला कि शेरख़ान की हवेली में नई लाई गई लड़की भाई मूले की बेटी थी तो बाबा नानक के श्रद्धालुओं की भीड़ सुंदरी को देखने के लिये उमड़ने लगी ।

फिर लोगों ने आपस में चिलमगोइयाँ करनी शुरू कर दीं । आख़िर शेरख़ान लड़की को भगाकर ही तो लाया था । वह खुद तो उसके साथ नहीं चली आई थी । इस तरह गुरू नानक के एक परम सिक्ख की बेटी के साथ ज़्यादती नहीं होनी चाहिये थी । अगर लड़की की मर्ज़ी न हो तो इस निकाह को रोकना होगा ।

लोगों ने इस तरह सोचना शुरू किया ही था कि शैली गाँव पहुँच गया । जिस गाँव में से वह गुज़रता था पहली बात यह पूछता था कि इस गाँव में क्या कोई धर्मशाला है ?

क्योंकि शेरगढ़ में धर्मशाला थी, शैली और उसके साथियों ने वहीं रुकने का फ़ैसला किया । कथा, कीर्तन का आनँद प्राप्त करने के साथ वे अपने उद्देश्य की पूर्ति के जतन करेंगे । गाँव में घुसते ही उन्हें टोह मिल गई थी कि सुंदरी शेरख़ान की हवेली में सही सलामत पहुँच गई थी ।

17

सुंदरी यह देख कर हैरान हो रही थी कि उसका यह ख्याल बिल्कुल गलत था कि जिस घर में एक से ज्यादा बीवियाँ होती हैं उस घर में हर वक्त क्लेश मचा रहता है ।

शेरख़ान की चारों बीवियाँ एक दूसरी से बढ़कर सुंदर और सुशील थी, वे आपस में घी-शक्कर की तरह मिलकर रहती थीं, लगता था वे किसी नग़में की स्वर-लहरी हों। हरेक की अलग अलग जगह थी घर में किसी को पहाड़िन कह कर पुकारा जाता। कोई पोठोहारिन थी। कोई मलवैन कहलाती। शेरखान की बीवियाँ में सबसे बड़ी "आपा" थी, विशेष आदर की हक़दार। हरेक के रहने के लिये हवेली में अलग कमरे थे, अलग आँगन थे। हरेक के अपने अलग नौकर थे, नौकरानियाँ थी। घर की देख-रेख का काम आपस में बाँट रखा था। कोई बैर विरोध नहीं। कोई बदमज़गी नहीं

शेरख़ान भी कोई सरकार का नौकर नहीं था, इलाक़े का मोतबर ज़िम्मेदार व्यक्ति होने के कारण, सरकार ने उसे कई अख़्तियार दिये हुए थे। ख़ास तौर पर रावी की जलधारा की ज़िम्मेदारी तो उसने कई बरस से अपने ज़िम्मे ले रखी थी। कुछ सरकारी अहलकार उसकी मदद के लिये ज़रूर थे। वर्षा के दिनों में वे बहुत व्यस्त रहते थे। नदी में बाढ़ आने की हालत में नुक्सान से बचाने के लिये वे बंदोबस्त करते थे। अपने इलाके में नदी किनारे घाटों की देखभाल उनकी ज़िम्मेदारी थी, नदी के इसपार उसपार आने जाने के साधन माकूल हों, मल्लाह वाजिब भाड़ा वसूल करे, निश्चित सवारियों से ज़्यादा सवारियाँ न बैठायें, वग़ैरह वग़ैरह।

शेरख़ान को गाने बजाने का बड़ा शौक था। घर में होता तो हर चौथे रोज़ कोई न कोई महफ़िल रचाये रखता, कभी क़व्वालियाँ, कभी लोकगीत, कभी नाच कभी कुछ, कभी कुछ।

उस रात उनके यहाँ मुजरा होने वाला था। शहर से कोई तवायफ़ मँगवाई गई थी। उसके साथ साज़िन्दे थें, तबलची, रबाबी, सांरगीनिवाज़। सुबह से तैयारियाँ हो रही थी। मुजरा हवेली से बाहर मैदान में होने वाला था। मैदान को सजाया जा रहा था। छोलदारियाँ, शामियाने, क़नातें, दरियाँ, रोशनी का इन्तज़ाम, सारे क़स्बे में गहमागहमी थी। हवेली की "बेग़में" ड्योढ़ी की छत पर, फ़सील की जाली के पीछे बैठ कर सामने जगमगाते शामियाने में हो रहे मुजरे को देखेंगी, डयोढ़ी की छत पर से परदानशीन औरतें हर किसी को देख सकतीं थीं, उन्हें कोई नहीं देख सकता था। तमाशबीन हवेली की तरफ़ पीठ करके बैठेंगे।

मुजरा देखने का सुंदरी का कोई इरादा नहीं था, लेकिन शेरख़ान के परिवार वालों के बार बार आग्रह करने पर वह तैयार हो गई। मुजरा देखने के लिये सुंदरी को ख़ास तौर पर सजाया गया। शेरख़ान की बीवियाँ खुद भी बढ़चढ़ कर सजी थी। उनके लिबास और जेवर मेठियों में गुथे बाल और चोटियाँ लाजवाब थीं।

शाम होते ही शामियाने के नीचे भीड़ इकट्ठी होनी शुरू हो गई। चारों तरफ़ दिये जलाये गये थे। साज़िन्दे अपने साज़ों के सुर ठीक कर रहे थे। फिर एक एक करके शेरख़ान के क़स्बे के बाक़ी प्रतिष्ठित लोग भी आने शुरू हो गये। सबसे आख़िर में गाने-नाचने वाली आई। हीराबाई नाम था।

उसे एक नज़र देखते ही सुंदरी की आँखें खुली की खुली रह गई। जैसे मुजरे में कोई महकती हुई कली आ गई हो। उसका रंग, उसका रूप, उसके गहने-कपड़े देखकर जैसे सभी लोगों की साँस रुक सी गई। उसका जोबन जैसे छलक-छलक रहा था।

आगे पीछे झुकझुक कर सलाम करती आई, क्षणभर के लिये पुराने परस्तारों से हँसी-मज़ाक किया, फिर कुछ देर के लिये आँखें मूँद लीं, जैसे दुआ माँग रही हो, फिर उसने धरती को अपने हाथ से छुआ और मिट्टी की चुटकी को माथे से लगाया।

इतने में साज बजने शुरू हो गये। हीराबाई ने कुछ देर तक साज़ों से सुर मिलाया और गाना शुरू कर दिया।

उसके मुँह से बोल अभी निकले ही थे कि हर कोई सरूर में झूमने लगा। इतनी प्यारी आवाज़, इतनी मनमोहिनी सूरत, गाती गाती हीराबाई नाचने लग पड़ी।

एक हिलोर में, एक नशे में वह नाच रही थी, आगे पीछे बैठे लोग जैसे उस पर क़ुर्बान हुए जा रहे थे। शेरख़ान और उसके साथी बढ़ चढ़ कर उस पर नकदी न्यौछावर कर रहे थे।

आधी रात हो गई, रात ढलने लगी। हीराबाई गा गा कर, नाच नाच कर न थक रही थी, न हार रही थी। शमियाने के नीचे तिल रखने की जगह नहीं थी। लोग इस तरह बैठे थे जैसे किसी ने टोना किया हो। मजाल है कोई अपनी जगह से हिल जाये।

पौ फटने को थी कि हीराबाई ने शेख़ फ़रीद के श्लोक गाने शुरू कर दिये :

उठु फ़रीदा उजु साजि, सुबह निवाज गुजारि ॥
जो सिर, साँई ना निवै, सो सिर कपि उतरि।
फ़रीदा वेनिवाजा कुत्तिआ, एह न भली रीति ॥
कबही चलि न आइआ पँजे वक़्त मसीति ॥
देख-फरीदा जू थीआ दाढ़ी होई भूर।
अगहु नेड़ा आइआ पिच्छा रहिआ दूर।
कत्तिक कूँजाँ चेति डउ, सावणि बिजलीआँ ॥
सीआले सोहँदीआँ पिर गलि बाहड़ीआ
अज न सुत्ती कँत सिऊ अगु मुड़े मुड़ जाइ ॥
जाइ पुच्छहु डोहागणी तुम किऊ रैणि विहाइ ॥

फ़रीद के श्लोकों के बाद महफिल बर्ख़ास्त हुई। जैसे माँ बच्चे को लोरी देकर सुला देती है, फ़रीद के श्लोक सुन कर लोग शान्त, सुस्थिर भाव से अपने ठिकानों पर चल पड़े।

अपने कमरे में लौट कर जब सुंदरी पलंग पर पड़ी तो उसकी आँखें नहीं लग रही थी। "जाइ पुच्छहु डोहागणी तुम किउ रैणि विहाइ" बाबा फ़रीद के बोल बार बार उसके कानों में गूंज रहे थे। और उसे कोई याद आ रहा था।

कौन था वह ?

अमन? इतने महीने उन्हें करतारपुर में आये हो गये थे । उससे तो इतना भी नहीं हो सका था कि एक बार अपने घर आकर इन लोगों को मिल ही जाता या इनकों बुला लेता । मर्द ज़ात की मुहब्बत छप्पड़ के पानी की तरह होती है । मैली, फीकी, बेमजा । वहाँ बैठा ख़त लिखता रहता था । गुरू महाराज की सेवा अपनी जगह थी, मुहब्बत का तकाजा अपनी जगह था । इन्सान को एक तरफा नहीं होना चाहिये । और फिर सुंदरी को स्यालकोट में उसका आना याद आया । उनकी मुलाकात और उसे अपना आप अच्छा लगने लगा । अमन तो प्यार, आस्ती और शराफ़त का पुतला था । कितना भोला, कितना मिलनसार, ईसार का मुजस्समा, जैसे किसी निर्मल, स्वच्छ झील का किनारा हो ।

और शैली? जैसे महकता हुआ फूल हो । अपने पूरे जोबन में खुशबूएँ लुटा रहा था । उसे देखकर तो मन में आता कि उसे तोड़ कर अपने बालों में टांग ले । अपने गले में सजा ले । कैसे अपने प्राणों की बाज़ी लगा कर वह शेरख़ान के साथियों पर झपटा था सुंदरी को बचाने के लिये ! लेकिन बेचारा अकेला था । उसका बस नहीं चला और फिर उन लोगों ने उसकी मुश्कें बांध दी थीं । शैली जैसा नौजवान रूकने वाला नहीं, ज़रूर पीछा कर रहा होगा । ज़रूर इस तरह भगाई गई अपनी मेहमान लड़की का सुराग़ ढूँढ निकालेगा। लेकिन इतने दिन बीत गये हैं, वह क्या कर रहा था? बेशक पहले रावी में बाढ़ आई हुई थी, लेकिन अब तो बाढ़ भी कभी की उतर चुकी थी । क्या पता उसे ग़लत रास्ते पर डाल दिया गया हो । क्या पता वह किसी ग़लत सुराग़ के पीछे चल पड़ा हो । लेकिन वह धुन का पक्का था । ज़रूर सुंदरी को खोज लेगा । अपनी मँज़िल पर पहुँच जायेगा ।

फिर सुंदरी के भीतर से कोई पुकार उठता । इतने दिन पराई छत के नीचे रही, अपने भाई बन्दों में अब भला कौन उसे मुंह लगायेगा? कौन एतबार करेगा कि वह अभी तक अक्षत क्ंवारी है । शेरख़ान की शराफ़त पर कौन विश्वास करेगा ? और कब तक शेरख़ान के घर वाले इसकी खातिरें करते रहेंगे ?और कितने दिन तक इसके मुंह की तरफ़ देखते रहेंगे ? आज महीने से ज्यादा होने लगा था ।

18

उधर शैली की मुसीबत यह थी कि धर्मशाला के गुरूभाई शुरू शुरू में तो उसकी हर मदद करने को तैयार हो गये थे, फिर न जाने क्या हुआ एक एक करके सब बिखरने लगे । पँखों पर पानी ही न पड़ने देते । टालते जा रहे थे, टालते जा रहे थे । एक, दो, तीन चार हफ़ते गुज़र गये थे ।

अब तो लोग कहने लगे थे कि लड़की उनके कस्बे में आई ही नहीं थी । शेरख़ान का बड़ा रसूख़ था, किसी की मजाल नहीं थी उसके ख़िलाफ़ जाने की । सब उसकी हाँ में हाँ मिलाते थे ।

फिर एक घड़ी ऐसी आई जब शैली को यक़ीन हो गया कि कोई भी उसका हाथ पकड़ने के लिये तैयार नहीं था। उसके साथ आये नदी के पार के साथी कबके अपने अपने घरों को लौट गये थे ।

शैली को इस बात का पूरा यक़ीन था कि सुंदरी शेरख़ान की हवेली में ही थी। लेकिन जो लड़की इतने दिनों से पराये घर में रह रही थी उसके भीतर अब क्या बचा होगा? यह सोचकर आख़िर हार कर उसने वापिस करतारपुर जाने का फ़ैसला कर लिया ।

लेकिन उस रात शेरख़ान ने वारें* गानेवाले ढाढियों को बुलाया था । गली गली में इसकी चर्चा थी । ढाढियों द्वारा पेश की गई वारें उन दिनों बड़े शौक से सुनी जाती थीं । शेरख़ान ने वारें गाने वाली अनेक टोलियों को बुला रखा था ।

शैली ने भी वारों की महफ़िल में शामिल होने का फ़ैसला कर लिया । सोचने लगा क्या पता वहाँ सुंदरी से ही मुलाक़ात हो जाये ।

वारों का गायन भी शेरख़ान की हवेली के सामने मैदान में हो रहा था । शामियाना, छोलदारियाँ और क़नातें लगाई गई थीं । वारें गाने वाले ढाढियों के तीन जत्थे थे । ऊँचे लम्बे ढाढी । एक मुसलमानों का था, दूसरा हिन्दुओं का और तीसरे का पता नहीं चलता था हिंदू है या मुसलमान । कानों पर हाथ रखकर जब आवाज़ निकालते, लोगों के दिल दहल जाते। हरेक जत्थे के साथ अपने अपने सारँगिये थे । ढाढियों के हाथों में डुगडुगियाँ थी, जब वे मिलकर उन्हें बजाते तो श्रोताओं का मन करता उठकर नाचने लगें ।

उस रात की महफ़िल भट्टों की टोली से शुरू हुई, जिन्होंने टुँडे इसराज की वार पेश की।

सारंग नाम के एक राजा का बेटा असराज था । राजा सारंग की अनेक रानियाँ थी । बड़ा होकर असराज बेहद सुंदर जवान निकला । रानियों में से एक सौतेली माँ असराज पर मोहित हो गई । सारँग इस अनर्थ के लिये कैसे राज़ी होता ? जब राजा को इस बात का पता चला तो उसने असराज को क़त्ल करने का हुक्म दे दिया । लेकिन जल्लाद एक मासूम नौजवान को बिन आई मौत मारने के लिये तैयार नहीं हुआ और उन्होंने असराज की सिर्फ़ एक बाँह काट कर उसे छोड़ दिया । वक्त पा कर असराज कहीं और का राजा बन गया । और जब उसके पिता पर किसी पड़ौसी राजा ने हमला किया, तो टुँडा असराज अपने पिता की मदद के लिये फ़ौज लेकर आया और जँग में अपनी शूरवीरता दिखाई । वार को ख़त्म करते हुए भट्टों ने यह बोल गाये :

भबकिओ शेर सरदूल राइ रण मारू बज्जे ।
खान सुलतान बड सूरमे विच रण दे गज्जे
खत लिखे टुँडे असराज नूँ पातसाही अज्जे
टिक्का सारँग बाप ने दित्ता भर लज्जे ।
फतहि पाइ असराइ जी शाही घर सज्जे ॥

भीड़ में बैठे शैली के अँग अँग में लहूँ दौड़ने लग पड़ा । आज इन्तज़ार करते हुए कितने दिन हो गये थे । अब तो लोगों ने यह भी कहना शुरू कर दिया था कि सुंदरी शेरख़ान के कब्जें में थी ही नहीं । शेरख़ान जैसे ख़ुदापरस्त इन्सान से भला इस तरह का अन्याय कैसे

* वीरों के प्रशस्ति गान (अनुवादक)

हो सकता था? शैली हैरान होता, लोग शेरख़ान का नाम लेकर रास्ता पकड़ते थे । वह न आगे जाने के काबिल था न पीछे जाने के क़ाबिल, उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था ।

इतने में एक और ढाढी जत्था मँच पर आया यह लोग सिकंदर इब्राहीम की वार पेश करने जा रहे थे ।

सिकंदर बादशाह एक ब्राहमण औरत पर फ़िदा हो गया । औरत बेहद सुन्दर थी । इससे पेशतर कि बादशाह पराई औरत की पत्त लूट सकता, सरदार इब्राहीम ने बादशाह के ख़िलाफ़ हथियार उठा लिये और अबला को छुड़ा कर उसके पति के हवाले कर दिया ।

ढाढी गा रहे थे :

सिकँदर कहे ब्राहण नूँ इक गल्ल है काई ।
तेरी साडी रन विच्च अज पई लड़ाई ।
तूँ नाहीं कि मैं नाहीं एह हुँदी आई।
लड़ीए आहमो-साहमने जो करे सो साईं ।

शैली को लगता जैसे कोई उसे व्यंग्यबाण मार रहा हो । और उधर सचमुच इस वार के बोल सुन कर ज़नानख़ाने की औरतों में बैठी सुंदरी को बार बार शैली की याद आ रही थी ।

कुछ देर बाद ढाढियों ने गाया :

फड़िआ खान ब्रहम ने कर वड्डु आउंबर
बच्धा सँगल पाइ के जन कीले बँदर
अपना हुकम मनाइ के छड्डिआ जग्ग अँदर ।

राजपूतों की बहादुरी का यह वर्णन सुनकर शैली जैसे तिलमिला उठा । उसकी भुजायें फड़क रही थी । उसके ओंठ काँप रहे थे । इधर सिकँदर इब्राहीम की वार ख़त्म हुई कि शैली कूद कर मँच पर चला गया और कहने लगा, ''मैं मूसे की वार पेश करूँगा बस मुझे साथ देने के लिये एक सारंगीनिवाज चाहिये ।'' मूसे की वार भला कौन न सुनता? सब तैयार हो गये । एक सारंगीवादक अपना साज़ थाम कर मँच पर अजनबी के साथ आ खड़ा हुआ ।

मूसे की मंगेतर की शादी किसी और के साथ कर दी जाती है । मूसा अपनी मँगेतर के पति के साथ जंग करके अपनी मँगेतर उससे छीन लाता है । लेकिन औरत तो किसी दूसरे की हो चुकी थी। उसके सत्त और धर्म का तकाज़ा था कि जिसके साथ ब्याही गई, उसी की हो कर रहे । यह जानकर मूसा उस औरत को वापिस उसके पति के पास पहुँचा देता है ।

शैली को मंच पर खड़ा देखकर सुंदरी का एक रँग आता, एक रँग जाता । अपने कानों पर हाथ रख कर शैली गा रहा था और सुंदरी का दिल उछल-उछल रहा था । उसका दिल चाहता था, कोई ऐसी सबील बने कि वह उड़ कर शैली से जा मिले । आख़िर शैली

ने दो बोल गाये :

"चढ़िआ मूसा बादशाह सुणिऔ सब जग्गे ।
दँद चिट्टे बड़ हाथीआँ कहु कित वरगे ।
रुत्त पछाती बगलियाँ घट काली अग्गे ।
एही कीती मूसिआ किहनँ करी न अग्गे ।

उधर ये बोल "ऐही कीती मूसिआ किहनँ करी न अग्गे" शैली के मुंह से निकले कि सुंदरी बदहवास होकर "शैली" "शैली" पुकार उठी । हवेली की छत पर एक सन्नाटा छा गया यह कौन था ?

कुछ देर बाद "शैली" "शैली" पुकारती सुंदरी मूर्छित हो गई ।

19

आज कई दिनों से सुंदरी ने चारपाई पकड़ ली थी । लाख इलाज हो रहे थे लेकिन दिनो दिन उसकी हालत बिगड़ती जा रही थी । किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

फिर घर की औरतें सोचने लगीं । शायद पकड़ हो । किसी की परछाँई पड़ गई है । परछाँई ही तो थी, सुंदरी दिल की गाँठ नहीं खोल रही थी, लेकिन भीतर ही भीतर घुलती जा रही थी, टोने किये गये, मन्तर मारे गये, झाड़ फ़ूक वाले आये, कोई फ़र्क नहीं पड़ा ।

कुछ दिन बाद कमज़ोरी की वजह से लड़की को गशें पड़नी शुरू हो गईं । दिन में कई कई बार दौरे पड़ते ।

एक मुल्ला आया, घंटों तक, कई दिनों तक सुंदरी के कमरे के बाहर बैठा कुछ पढ़ता रहता । लड़की की हालत वैसे ही थी ।

फिर एक मदारी आया, कहने लगा लड़की को पकड़ है । उसकी चारपाई के पायों पर मंत्र पढ़ कर वह तावीज़ रखेगा , बस एकाध दिन में लड़की चँगी भली हो जायेगी । हफ़ता बीत गया । सुंदरी ने चारपाई नहीं छोड़ी ।

ज़नानख़ाने में हर किसी ने कोशिश कर के देख ली । लड़कियाँ सुंदरी का मन बहलाने के लिए उसके कमरे में ढ़ोलक लेकर बैठ जाती, कभी कोई गीत, कभी कोई गीत गाने लगतीं ।

सदा ना फुल्लण तेरीआँ नफ़राँ सदा ना सावन होइ ।
सदा न जोबन थिर रहे, सदा न जीवे कोइ ।
सदा न राजियाँ हाकमी, सदा न राजियाँ देस ।
सदा न होवे घर आपणा नफ़रा, भट्ठ पिआ प्रदेस ।

उस दिन जब लड़कियों ने यह गीत ख़त्म किया, सुंदरी को दौरा पड़ गया । उसकी जीभ दाँतों के बीच आकर लहूलुहान हो गई । सारे परिवार वालों के हाथ पैर फूल गये । बड़ी मुश्किल से दाँतो की जकड़ ढ़ीली की गई ।

रात जब शेरख़ान घर पहुँचा तो उसने आत्मसमर्पण कर दिया । शराफ़त का यही

तकाज़ा था कि लड़की को उसके घर लौटा दिया जाये। शेरख़ान इसके लिये तैयार हो गया। परिवार के सभी लोग उसके चेहरे की तरफ़ ताक रहे थे। उन्होंने सुंदरी से लाखों आशायें लगा रखी थी। जोगीड़े की भविष्यवाणी के अनुसार तो सुंदरी ने शेरख़ान के आँगन में दूध पूत वाली होकर बसना था।

शेरख़ान की सबसे बड़ी बीबी राज़ी नहीं हुई। क़ाबू आई लड़की को वह हाथ से गँवाना नहीं चाहती थी। दो चार हफ़्ते बीतने पर खुद रास आ जायेगी। शेरख़ान की बाक़ी बीवियाँ उसके चेहरे की तरफ़ देखकर हैरान होतीं। सोचती सुंदरी को निकाह में लेने का मतलब था उनमें से किसी एक को तलाक दिया जायेगा और यह क़हर ''आपा'' पर ही गिरने वाला था। शुरू से ऐसा ही होता आ रहा था। सब से बड़ी बीवी नई दुल्हिन के लिये जगह ख़ाली करती थीं। अल्लाहताला ने मुसलमान को चार से ज़्यादा बीवियाँ निकाह में लेने की मनाही की थी।

अगले दिन शेरख़ान की बड़ी बीवी जन्नत जिसे उसकी बाक़ी बीवियाँ ''आपा'' कहकर पुकारती थीं, सुंदरी के कमरे में गई। उसके पलँग पर बैठ कर बहुत देर तक उसे समझाती रही।

''देख बीबी, मैं भी कभी तेरे जैसी थी। मेरे चेहरे की तरफ़ देख, तुझे मैं तुर्कनी लगती हूँ ? खत्रियों के घर में पैदा हुई, बाबा नानक का आशीर्वाद प्राप्त किये हुए परिवार में। कोई करे तो क्या? राज जो इनका हुआ। बाबे ने भी तो कहा है :

कलि काती राजे कासाई, धरमु पँख करि उडरिआ

''ग़ुलाम का कोई धर्म नहीं होता। आज सैंकड़ो बरस से ये लोग हमें आकर लूटते रहे हैं, हमारे मंदिरों और शिवालयों की बेहुरमती करते रहे हैं। हम इनके हमलों को रोक नहीं सके। फ़ौजी हमारी बेटियों, बहनों को अपने साथ भेड़ बकरियों की तरह हाँक कर ले जाती थी। मेरी माँ कहती थी तीन बार हमलावर उनके ''घर माणस बो'' ''माणस बो'' करते हुए आये। मुंह पर राख पोत कर उसने अपने सत्त-धर्म को बचाया। मुझ से यह नहीं हो सका और मैं आज यहाँ पड़ी हूँ।

''मैंने अपने मन को समझा लिया, जीतिये-हाँ सच मेरा नाम जीती है, जन्नत नाम तो इस घर में इन लोगों ने रखा-मैंने अपने मन को समझा लिया, तू रब्ब का शुक्र कर तुझे पराये देश में तो नहीं जाना पड़ रहा। तू अपने दुआबे में ही रह सकेगी। अपनी बोली बोल सकेगी। अपनी रावी का पानी पिया करेगी। अपने देश की ठंडी मीठी हवा। अपने देश के गीत। मुझे तो अपनी बोली की गालियाँ भी अच्छी लगती हैं।''जो बात हमारे ख़ान में मुझे सबसे अच्छी लगी है, वह उसकी गुरू बाबे के प्रति श्रद्धा है। सतगुरू की इस पर कृपा है। गुरू बाबे ने इसकी तक़दीर चमकाई है। ज़बान का कड़वा ज़रूर है, दिल का बुरा नहीं। खुदा का ख़ौफ है, इस आदमी में। पाँचो वक्त नमाज़ पढ़ता है। जो आदमी पाँच नमाज़ें पढ़ता हो, उससे अन्याय नहीं हो सकता। वह नहीं किसी का हक़ मारता। तभी तो आज इतने दिन बीत गये हैं, तुझे इस घर में हम लोगों ने फूल की तरह रखा हुआ है।

"और फिर हमारे भाईचारे में औरतज़ात की औक़ात ही क्या है ? किसी के घर की रोटियाँ पकाना। किसी के बच्चे पैदा करना। उसके साथ बँध कर रह जाना। फिर सारी उम्र उसकी औलाद को पालना, उसका गू-मूत समेटना।

"मैं तो चाहती हूँ, हमारे ख़ान की औलाद हो, ताकि इस जैसे धर्मी की संख्या बढ़े। किसी के भीतर ईश्वर का डर हो। हमारा ख़ान हर रब्बी और ख़रीफ़ की फ़सलों में से यहाँ की धर्मशाला को भारी दान देता है।"

"यहाँ धर्मशाला है? जन्नत को टोक कर सुंदरी ने झटपट उत्साहित हो कर पूछा। जैसे डूबते को तिनके का सहारा मिल गया हो। सुंदरी को निश्चय था कि अगर इस क़स्बे में धर्मशाला है तो शैली ज़रूर वहीं रूका होगा।

और फिर बातों बातों में सुंदरी ने जन्नत को मना लिया कि वह उसे धर्मशाला लेकर जायेगी।

यह सुनकर कि लड़की धर्मशाला जाने के लिये तैयार हो गई थी, शेरख़ान की हवेली में रौनक आ गई। बेशक धर्मशाला जाये, बाबा नानक की कृपा हो गई तो शायद लड़की का मन ही लग जाये, सब लोग यही सोच रहे थे।

दो चार दिन बाद, जब सुंदरी की हालत ज़रा सुधरी, लाख तैयारियाँ करके उसे डोली में डाल कर धर्मशाला ले जाया गया। ढेर से फूल और प्रसाद। उसके साथ जन्नत खुद गई। और कोई नहीं गया। जब वे पहुँची, गुरूसिक्ख मिल कर कथा वार्ता कर रहे थे।

धर्मशाला में जब क़दम रखते ही सुंदरी ने देखा, सामने शैली बैठा था, उदास फिक्रों में डूबा हुआ। उनकी नज़रें मिली तो एकदम उसका चेहरा खिल गया, इधर सुंदरी के चेहरे पर भी रौनक आ गई। हड़बड़ा कर शैली उठ खड़ा हुआ और सुंदरी की तरफ़ आया और अगले क्षण सुंदरी उसके कँधे पर ढ़ेरी हो गई थी।

जन्नत को गुरूसिक्खों ने सारी कहानी सुनाई। शैली कितने दिनों से धर्मशाला में धरना देकर बैठा हुआ था। लेकिन उनमें से किसी की हिम्मत नहीं पड़ रही थी कि ख़ान से उसकी बात करे।

जन्नत को जब सारी बात पता चली तो उसने मन ही मन फ़ैसला कर लिया कि वह सुंदरी के रास्ते में रूकावट नहीं बनेगी। अगले दिन उसने लड़की को शैली के हवाले करवा दिया और वह अपने मकसद मे सफल हो कर सुंदरी को साथ लेकर करतारपुर चल पड़ा।

20

सुंदरी को जैसे सात पानियों में धोकर शैली के हवाले कर दिया गया। उनके सफ़र के लिये शेरख़ान ने अपने अस्तबल में से दो घोड़ियाँ और एक साईस उनके साथ भेज दिया और हिदायत दी कि उनको उनके ठिकानों पर पहुँचा कर सावधनी से घोड़ियों को वापिस ले आये।

उस दिन शेरखान तड़के ही जाग गया उसने फ़ज़र की नमाज़ पढ़ी। फिर सिजदे में गिरकर विरद करने लगा। इस बीच उसकी बीवियों ने ढेरों सौगातों से दोनों थैले भर दिये। इनमें कपड़े भी थे, गहने भी थे, और कई प्रकार की थैलियाँ मेवा, शहद, निशास्ते की पिन्नियाँ शकरपारे इत्यादि।

जिस तरह इतने दिन सुंदरी को इस घर में रखा गया था, उसकी देखभाल की गई थी, उसे देखते हुए सुंदरी को इन सौग़ातों पर कोई हैरानी नहीं हुई थी। लेकिन शैली की आँखें हैरानी से फटी की फटी रह गई। यह कैसा ख़ान था। एक तरफ़ इतना क़हर ढाने वाला, दूसरी ओर इतना खुदापरस्त ! उसके कस्बे के लोग उस से थर थर काँपते थे। उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ जाने की किसी में हिम्मत नहीं थी। लेकिन रोज़े नमाज़ का पक्का।

चलने से पहले सुंदरी को नया जोड़ा पहनाया गया। बेहद शौक से जन्नत ने खुद उसके बाल बनाये। ताज़े मोतियों की कलियों के बने गजरे, वेणियों और गुलूबँद पहनाये।

जब सुंदरी की रुख़्सत का समय आया। शेरख़ान घर में नहीं था। मालुम नहीं कहाँ इधर उधर हो गया था। शेरख़ान की बीवियों और शेरख़ान की माँ की पलकों में आँसू थे, जब सुंदरी उनकी डयोढ़ी से बाहर निकली।

उसके कारण बेशक शैली को इतना कष्ट झेलना पड़ा था, लेकिन कुछ दूर पहुँच कर सुंदरी ने महसूस किया कि शैली उससे खिंचा खिंचा था। चुप-चुप अपने ख़्यालों में खोया हुआ। वह उत्साह, वह गरमी उसके आँखों में नहीं थी, मुलाकात के बाद इतने दिन तक जो गरमी सुंदरी को उसकी पलकों में उकेरी हुई दिखाई देती थी। जैसे जानबूझ कर वह उससे दूर दूर रह रहा था। सुंदरी को कितना अच्छा लगता था जब कभी वह उसके साथ सट सट कर चला करता था। कभी उनके कपड़े एक दूसरे को छूते, कभी उनके अँग आपस में टकराते, हर बार सुंदरी के तन बदन में एक लहर सी दौड़ जाया करती थी। उन दिनों की याद आते ही सुंदरी बार बार उसके मुंह की तरफ़ देखने लगती, ख्यालों में खोया शैली, टस से मस नहीं हो रहा था।

कुछ दूर आगे पहुँच कर वह अपनी घोड़ी से नीचे उतर पैदल चलने लगा। शायद काठी पर बैठे बैठे थक गया था। सुंदरी को मौक़ा मिला। उसने भी अपनी घोड़ी से नीचे उतर कर लगाम साईस को थमा दी और खुद शैली के क़दम के साथ क़दम मिला कर चलने लगी। लेकिन वह तो पहले की तरह अपने आप में डूबा हुआ था। अजनबी, अजनबी। जैसे जान पहचान न हो। कोई सरोकार नहीं।

बार बार सुंदरी कोई पुरानी बात छेड़ती, बार बार कोई सवाल पूछती, जवाब में वह "हाँ" या "न" कह देता बस। सुंदरी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

दिन में वे एक पेड़ के नीचे सुस्ताने के लिये रूके। किसी तालाब का किनारा था। ठंडी मीठी हवा बह रही थी। सामने शहतूत के पेड़ पर कबूतरों का जोड़ा किल्लोल

कर रहा था । एक दूसरे की चोंच में चोंच,पँखों के साथ पँख सटाये, गर्दनें एक दूसरे से लिपटी हुई, लेकिन नर जब भी पँख फड़फड़ाता हुआ आवेश में आ कर मादा पर सवार होने की कोशिश करता, मादा उससे छिटक कर दूर हट जाती। यह देखकर नाराज़ नर गुस्से में उड़ान भर कर दूर निकल जाता । कुछ देर बाद मादा फिर जैसे कातर स्वर में उसे पुकारने लगती । आवाज़ में मीठा मीठा दर्द । नर फिर लौट कर आता । फिर उनकी कल्लोल शुरू हो जाती । थोड़ी देर बाद फिर जैसे वे झगड़ने लगते, नर उड़ कर दूर किसी और पेड़ पर जा बैठता । मादा फिर उसे पुकारने लगती ।

सुंदरी ने एक स्वाद स्वाद में आ कर शैली के मुंह की तरफ़ देखा, वह पहले की तरह कोरा था । कबूतरों के खेल को टुकर-टुकर देख रहा था, लेकिन अनमने भाव से ।

पेड़ की छाया में बैठकर उन्होंने सुंदरी के साथ भेजी गई मिठाई और फलों का नाश्ता किया। बार बार वह शैली को कभी कोई चीज़, कभी कोई चीज़ खाने को कहती । शैली बेमन से खा रहा था । जैसे पेट में ईंधन झोंक रहा हो, उसे खाने में कोई दिलचस्पी नहीं थी ।

आख़िर हार कर सुंदरी ने फिर बात छेड़ी-''शैली, उन्होंने तेरी मुश्कें बाँध दी थीं । क़हर में आकर शेरख़ान ने न जाने क्या क्या बका था, लेकिन वह आदमी दिल का बुरा नहीं । भक्त है । गुरू बाबे का अनुयाई । इतने दिन उन्होंने मुझे फूल की तरह अपने घर में रखा है,मेरी इतनी ख़ातिर की है । मेरा अलग कमरा था, मेरी अलग नौकरानी थी । मैं अपनी पसन्द का खाना खाती थी । पसँद के कपड़े पहनती थी । दोनों वक्त मैं कँठस्थ की हुई गुरूबानी का पाठ करती थी । किसी की मजाल नहीं थी कि आँख उठाकर मेरी और देख जाये, किसी की मजाल नहीं कि आँख उठाकर मुझे कोई देखता, या मेरे शरीर के साथ किसी का शरीर छू जाता ।....

''बहती रावी में से तुझे निकालते वक्तभी किसी का शरीर तेरे शरीर से नहीं छुआ होगा !'' इतनी देर से उसकी कहानी सुन रहे शैली ने ज़हर उगला । सुंदरी को लगा जैसे तीरों का गुच्छा उसके सीने में आ लगा हो । चारो तरफ़ कूड़े के ढ़ेर की सड़ाँध फैल रही थी । उसका चेहरा लाल सुर्ख हो गया ।

शैली मर्द ज़ात था, उसे सुंदरी की किसी बात पर एतबार नहीं आ रहा था । जिस आदर से शेरख़ान के घर से उसे विदा किया गया था, वह सारा प्यार जो शेरख़ान के परिवार के लोगों ने उसे दिया था, जिस शराफ़त से शेरख़ान ने उसे फूलों की तरह संभाल कर रखा था, और बिना किसी उज्र के उसका लड़की को लौटाने के लिए तैयार हो जाना ! शैली ने यह सब अपनी आँखों से देखा था, फिर भी वह यह सब सोच सकता था । सुंदरी का चेहरा लाल सुर्ख हो गया, उसकी आँखों से आँसू छलकने लगे ।

सामने से साईस घोड़ियों को तैयार करके ला रहा था । सुंदरी और शैली अपनी अपनी घोड़ियों पर बैठे और उन्होंने अपना सफ़र फिर शुरू कर दिया ।

दोपहर ढ़ल गई, शाम हो गई, अँधेरा होने लगा था । लेकिन सुंदरी ने स्वाभिमान के

कारण शैली से कोई फ़ालतू बात नहीं की।

रात उन्हें एक गाँव की धर्मशाला में पड़ाव करना था। शेरख़ान ने इसकी सूचना पहले से भिजवा रखी थी। उनकी बहुत ख़ातिर हुई। लेकिन सोने के लिये एक ही कमरा था। शैली अपनी चारपाई उठा कर बाहर आँगन में चला गया। सुंदरी उसके मुंह की ओर ताकती रही।

सोने से पहले उसने अपने कमरे की कुंडी लगा ली।

21

सुंदरी और शैली को गुम हुए बहुत दिन बीत गये थे। जैसे पक्षियों का कोई जोड़ा मुँडेर पर बैठा उड़ान भर कर चला जाये। उनकी कोई खोज ख़बर नहीं की। सुंदरी की माँ सोचती उसकी बेटी उसे इस तरह छोड़कर जानेवाली नहीं। बेशक वह शैली के साथ मिल गई हो, जवान लड़की से ग़लती हो सकती थी, लेकिन उनका इस तरह ग़ायब हो जाना कदाचित् संभव नहीं था।

वे नदी में नहीं डूब सकते थे। किसी कश्ती के डूबने की कोई खबर नहीं आई थी। अगर नदी में डूबते तो किसी घाट से तो उनके शव मिलने की ख़बर मिलती एक भर जवान जोड़ा इस तरह ख़त्म कैसे हो सकता था!

और यह भी तो हो सकता था कि किसी तगड़े ज़ालिम ने शैली को इधर उधर हटाकर सुंदरी का अपहरण कर लिया हो। शैली जैसा स्वाभिमानी नौजवान जीते जी मेहमान लड़की पर आँच नहीं आने देगा।

हर तरह के अनुमान लगाने के बावजूद सुंदरी की माँ का दिल यही हामी भरता था कि लड़की लड़का दोनों ग़लती कर बैठे हैं और अब शर्म के मारे लौट नहीं रहे। कहीं दूर निकल गये होंगे। कुछ वक्त और बीत जाने पर खुद-बखुद लौट आयेंगे। भला ऐसे कोई घर भी छोड़ देता है? आज नहीं तो कल आ निकलेंगे। उनका इन्तज़ार करना पड़ेगा। ईश्वर पर भरोसा रखना पड़ेगा।

और वही बात हुई। अंधेरा होते ही दो घोड़ियाँ उनके घर के बाहर आकर रुकीं। उन पर शैली और सुंदरी सवार थे। सारा घर खुशी से हुमक उठा। लड़का लड़की मिल गये थे। फिर अचानक चारों तरफ़ ख़ामोशी छा गई-इतने दिन वे कहाँ रहे थे? शैली अपनी माँ के गले लग कर ढेरों आँसू बहा रहा था, सुंदरी अपनी माँ से चिपक कर रो रही थी।

सब यह जानने के इच्छुक थे कि उनके साथ क्या बीती थी। सब भीतर ही भीतर डर रहे थे कि कौन सा गोला फटने वाला था। कौन-सा कारण सुनने को मिलेगा? इतने दिनों तक नौजवान जोड़े की घर से गैर हाज़िरी!

और जो बात शैली ने उन्हें बताई और जिस आपबीती का सुंदरी वर्णन कर रही थी, उसे सुनकर जैसे किसी को विश्वास नहीं आ रहा था।

"तू हमें ख़बर तो करता।" "हर कोई शैली से यही कहता" पीछे हमारा बुरा हाल हो गया था। ख़बर तो बेचारे ने भेजी थी।

गली मुहल्ले वालों को उनकी किसी बात पर एतबार नहीं आया । हरेक की यही धारणा थी कि इतने दिन लड़का लड़की कहीं गू खाते रहे थे, झख मारते रहे थे, जब उनकी गर्मी कुछ शान्त हुई तो घर लौट आये थे । फिर मन ही मन उनको माफ़ कर देते, यह सोच कर कि जोड़ी कितनी सुंदर है, जैसे एक दूसरे के लिये बनाये गये हों ।

शुरू शुरू में परिवार के लोग भी यही सोचते थे, लेकिन ज्यों ज्यों दिन गुज़रते, शैली और सुंदरी में उन्हें इस तरह के रिश्ते का कोई लक्षण नहीं दिखाई दे रहा था । बल्कि तेजी और नसरीन को तो ऐसा लगता था कि शैली और सुंदरी पहले से भी ज़्यादा एक दूसरे से दूर चले गये थे ।

तेजी सोचती अगर यह कहानी सच थी कि सुंदरी का किसी तुरकड़े* ने अपहरण कर लिया था तो लड़की को ज़रूर ख़राब किया गया होगा । तभी तो शैली अब सुंदरी से दूर दूर रहने लगा था ।

सुंदरी की माँ को शेरख़ान वाले क़िस्से में कोई सच्चाई नहीं दिखाई देती थी । वह सोचती थी, उस शाम सुंदरी और शैली जानबूझ कर पीछे रह गये थे,फिर रात की वर्षा में बवँडर की तरह कहीं न कहीं पहुँच गये । इतने दिन शर्म के मारे घर नहीं लौटे । ''इधर उधर घूमते रहे होंगे । मालूम होता है आज कल इनमें कोई बदमज़गी पैदा हो गई है । नौजवान जोड़ों में अक्सर ऐसा हो जाता है । कुछ ही दिनों में इनका मान मनौव्वल हो जायेगा'' उसने अपने मन को समझा लिया ।

शक्ति मन ही मन खुश थी । जो कुछ भी हो अमन अब उसी को प्राप्त होगा । उसे न सुंदरी के इस बयान पर विश्वास होता था कि शैली और वह उतने ही अजनबी थे जैसे वे पहले कभी थे, न ही इस बात पर कि इतने दिन जागीरदार के घर में रह कर भी वह वहां से बेदाग़ निकल आई थी । सुंदरी जैसी लड़की को देख कर किसी का मन भ्रमित न हो यह मुमकिन नहीं था, उसका दिल कहता ।

ज्यों ज्यों दिन बीतते जाते थे, तेजी भी यही सोचने लगी थी, अड़ौसी पड़ौसी भी यही सोचने लगे थे। और तो और सुंदरी की माँ भी यही सोचने लगी थी ।

अब भाई मूले की बीवी केवल इसलिये करतारपुर में रूकी हुई थी कि लड़के और लड़की की आपसी नाराज़गी दूर हो और वह शैली की शादी करके उसे अपने साथ स्यालकोट ले जाये ।

फिर दिन और हफ्ते बीतने लगे । शैली पूर्ववत् सुंदरी के प्रति रूखा रूखा था, पराया पराया था । सुंदरी और शक्ति पक्की सहेलियाँ थी, वह आठों पहर एक दूसरे से फुसफुसाती रहती थी दिल की बातें एक दूसरे को बताती रहती थी ।

एक दिन सुंदरी की माँ ने अपने कानों से उन्हें बातें करते हुए सुना । शक्ति उसे समझा रही थी कि अगर सुंदरी के मन में शैली के लिए कोई कमज़ोरी है तो उसे लड़के के साथ बैठकर मामले को सुलझा लेना चाहिये ।

* तुर्क

"जिस आदमी को मेरी पवित्रता पर शक है, मैं उसे कभी मुँह नहीं लगाऊँगी" सुंदरी भड़क उठी।

"तो फिर तूँ उसे गँवाने के लिये तैयार है ?"

सुंदरी चुप।

"उस जैसे नौजवान को तो किसी वक्त भी कोई लड़की झपट लेगी," शक्ति ने सुंदरी को याद दिलवाया।

सुंदरी चुप।

"मैं कहती हूँ-हाथ से निकला वक्त फिर लौटकर नहीं आयेगा।"

इस बार सुंदरी की चीख़ निकल गई और वह बहुत देर तक शक्ति के कंधे पर गिरकर छाज छाज आँसू बहाती रही।

भाई मूले की बीवी से अपनी जाई का क्लेश नहीं देखा गया। उसने मन ही मन फ़ैसला किया कि वह शैली की माँ नसरीन से बात करेगी।

पहला मौक़ा, मिलते ही उसने नसरीन का मन टटोला। "जोड़ी तो बहुत सुंदर है।" नसरीन कहने लगी। "मैं भी यही सोचती हूँ। लेकिन जबसे वे बाहर से लौटे हैं, लगता है इनके मन में कोई मैल आ गई है। मैं लड़के से पूछकर देखती हूँ।"

सचमुच उस शाम जब नसरीन ने शैली से सुंदरी की चर्चा छेड़ी तो वह भड़क उठा, "क्यों, क्या मैं किसी दूसरे की चबाई हुई हड्डी के लिये ही रह गया हूँ ?

नसरीन सुनकर ख़ामोश रह गई। पिछले दिनों से सुंदरी के साथ क्या बीती थी, शैली से ज़्यादा उस बारे में कौन जान सकता था ? कौन जानता था?

अगली सुबह नसरीन ने भाई मूले की बीवी से कोई बात नहीं की, करने वाली बात भी भला कौन सी थी। उसकी ग़ैरत ने इस सब की इजाज़त नहीं दी।

22

भाई मूले की बीवी अजीब संशय की हालत में थी। उसका दम जैसे घुटा घुटा रहने लगा था। बस एक गुरू घर का आसरा था। फिर उसने खडूर जाने का फ़ैसला कर लिया।

लेकिन किसी ने कहा, अमन तो करतारपुर आ रहा है। लेकिन उसने यह बात सुनकर अनसुनी कर दी। वह अपनी बेटी को लेकर सतुगुरू के दर्शनों के लिये खडूर जायेगी। उसे अपना आप जैसे मैला मैला लग रहा था। वह सोचती थी, गुरू अँगद देव जी की चरण धूलि लेते ही उसके सारे दुःख दूर हो जायेंगे। सतुगुरू बेपत्तों की पत्त थे। निरासरों का आसरा। घट घट के ज्ञाता उनसे भला सुंदरी की माँ का क्लेश कौन सा छिपा था। खडूर की बात सोचते ही सुंदरी की माँ को घुप्प अँधेरी रात में एक रौशनी की किरण दिखाई देती।

इससे पहले कि अमन करतारपुर के लिये चल दे, वह खडूर पहुँच जाना चाहती थी। इतनी जल्दी में, इतनी उतावली ! यह देखकर तेजी के हाथ पैर फूलने लगे। वह

सोचती अमन तो इतना भोला था। लड़कियों जैसा लड़का और शैली नें नसरीन को बताया था अगर वह सच था तो कहीं उसका बेटा कोई ग़लत क़दम ही न उठा बैठे, कोई गलत इकरार ही न कर ले।

सुंदरी की माँ के खडूर जाने की बात सुनकर शक्ति भी तैयार हो पड़ी। उसने तो कई दिनों से मन ही मन फ़ैसला किया हुआ था कि अगर अमन करतारपुर नहीं आ रहा था तो वह एक बार खडूर जा कर उसका मन टटोल कर वापिस चली जायेगी। अब बेशक अमन ने लिखा था कि वह करतारपुर आ रहा है, लेकिन अगर सुंदरी और उसकी माँ खडूर जा रही है तो ज़ाहिर है कि अमन कुछ दिन और करतारपुर नहीं आ सकेगा।

सुंदरी की माँ और सुंदरी खडूर में होंगी और अकेला अमन ! यह सोच कर तेजी के मन में हौले उठते। नसरीन और वह उठते बैठते खुसर फुसर करती रहतीं।

सुंदरी की माँ और सुंदरी दोनों खडूर में और नितान्त अकेला अमन। शक्ति को लगता जैसे कोई झूठ बोलकर उससे उसका रानीहार झपट कर ले जायेगा।

उधर शैली हर वक्त चिढ़ा चिढ़ा रहता। जैसे उसके हाथ आया कोई स्वर्ग उससे छूट गया हो, सुंदरी के प्रति उसके दिल में अजीब मुहब्बत-नफ़रत का अहसास मँडराता रहता।

नसरीन कहती थी, अगर सुंदरी और सुंदरी की माँ खडूर जाती हैं तो तेजी को भी उसके साथ जाना चाहिए। न मालूम ये लोग अमन पर कौन सा टोना कर दें।

शक्ति सोचती थी, इससे पहले कि सुंदरी और सुंदरी की माँ अमन पर डोरे डालें, अमन को एक बार वह ज़रूर ललकारना चाहेगी। एक बार उसे अपनी मुहब्बत की याद दिलाना चाहेगी।

और सुंदरी की माँ की कोशिश थी कि वह अकेली ही अपनी बेटी को लेकर जाये। वह शक्ति तक को पीछे छोड़ जाना चाहती थी। और इधर तेजी भी खडूर जाने के लिये तैयार हो रही थी।

घर में एक तनाव था जो हर पल और भी गम्भीर होता जाता था।

अगर शक्ति और तेजी खडूर जाने के लिये तैयार हो गई थी, तो सुंदरी की माँ भला उन्हें कैसे रोक सकती थी। आख़िर उसने हथियार फेंक दिये।

अगले दिन उनका काफ़िला खडूर के लिये चल पड़ा। शैली ने जैसे शुक्र मनाया हो। इतने दिनों से वह दबा-दबा, घुटा घुटा महसूस कर रहा था। उन्हें विदा करने के लिये एक पड़ाव तक उनके साथ चलकर गया। लौटते वक्त वह अकेला था। न जाने क्यों अकस्मत अपने आप उसकी आँखें छलकने लगीं, वह अपने आपको लाख समझाता, लेकिन ऐसा लगता जैसे सुंदरी के लिये उसके दिल में एक अलग ही जगह बन गई थी। जबसे वह लौटा था, उसने शक्ति की तरफ़ पलट कर भी नहीं देखा था।

कभी-कभी उसका जी करता, सुंदरी उसके पास होती तो वह उसका गला घोंट कर उसे ख़त्म कर देता। वह जिंदा क्यों थी? वह बार बार अपने से पूछता। उसने रावी में

छलांग लगाई थी तो डूब क्यों नहीं गई ? वह सारी उम्र उसकी समाधि पर मुजावर बन कर बैठा रहता ।

शैली जब आँगन में दाख़िल हुआ तो उसे देख कर उसकी माँ नसरीन के हाथों के तोते उड़ गये । शैली की आँखें लाल सुर्ख़ थीं, पलकें भीगी भीगी ।

"यह तुझे क्या हो रहा है?" नसरीन ने आगे बढ़ कर अपने जवान जहान बेटे को गले से लगा लिया । अपनी माँ के स्पर्श से शैली बच्चों की तरह सिसकने लगा । अपनी अम्मड़ी के गले से लगा वह छल छल आँसू रो रहा था । नसरीन के भीतर की माँ अपने बेटे का क्लेश समझती थी । उसने शैली से कोई पूछ पड़ताल नहीं की, अपने जाये को शर्मिन्दा नहीं किया ।

सुंदरी को हाथ से गँवा कर शैली को लगता जैसे वह भीतर और बाहर से ख़ाली हो गया है । अपना घर, अपना आँगन, अड़ौस पड़ौस उसे सूना सूना लगता । सारा दिन वह भूखा प्यासा चारपाई पर पड़ा रहा । नसरीन की समझ में कुछ नहीं आ रहा था । तेजी भी नहीं थी कि उसकी सहायता करती । अकेले में उसे बहुत डर लगता, कहीं लड़का कुछ कर ही न बैठे ।

सुंदरी उसकी मुहब्बत के लिये तड़पती चली गई थी । सुंदरी की माँ ने अपनी बेटी के लिये मुँह फाड़ कर रिश्ता माँगा था । शैली के इस तरह इन्कार करने से नसरीन ने उसे निराश कर दिया था । और अब उसका वही बेटा उस लड़की के बग़ैर मछली की तरह तड़प रहा था । नसरीन की सारी रात आँखों में गुज़र गई । सामने चारपाई पर बेटा भट्टी में मकई के दाने की तरह भुन रहा हो तो भला माँ को नींद कैसे आये ?

सुबह हो गई । करतारपुर आने के बाद यह पहली बार हुआ था कि अमृतवेला में उठकर वह नियम के अनुसार धर्मशाला में हाज़िर नहीं हुई थी, साधसंगत में जुड़ कर कीर्तन, कथा वार्ता के आनन्द में डूब कर उसका मन शांत हो जाता था । लेकिन शाम से इस तरह कलप रहे अपने बेटे को देखकर उसके अँग जैसे शिथिल हो गये हों । उसमें बाहर निकलने की शक्ति नहीं रह गई थी ।

आख़िर हिम्मत करके नसरीन बिस्तर से निकली । मवेशियों की खोज खबर लेनी थी । घर के और दस झंझट थे, चूल्हे चोके की तो उसे ख़बर नहीं थी । न बेटे ने कुछ खाया था, न खुद गले से पानी का घूँट उतारा था ।

नसरीन जब मवेशियों को कोठरी की ओर उनके लिये सानी करने गई थी तो उनकी काली भैंस ने अपनी दुखी मालकिन की ओर इस तरह देखा जैसे उसके साथ उसे मूक हमदर्दी हो । उनकी सफ़ेद गाय नसरीन को चुप देख कर रँभाई । मालकिन न हमेशा की तरह खुश खुश लग रही थी जैसे वह अक्सर हुआ करती थी, न ही उसने गाय भैंसो से कोई बात ही की थी । नसरीन ने काली के बदन पर हाथ फेरा फिर बग्गी के कानों को सहलाने लगी ।

इतने में उसे एक चीख़ सुनाई दी । यह तो शैली था । नसरीन भागती हुई अपने कमरे

में गई । सामने फ़र्श पर शैली लहूलुहान हुआ बेहोश पड़ा था । उसके माथे से ख़ून की धारें बह रही थीं । उसके हाथ के नज़दीक क़ागज़ का एक टुकड़ा पड़ा था ।

ऐसा लगा कि जाने से पहले सुंदरी शैली के नाम ख़त लिखकर उसके सिरहाने के नीचे छोड़ गई थी । खत पढ़ कर शैली ने अपना सर ज़ोर से चारपाई के पाये से दे मारा और बेहोश होकर, फर्श पर औंधा जा गिरा था ।

बेटे की तीमारदारी करके नसरीन ने ख़त पढ़ा –

''शैली मेरी जान, मैं तेरे घर से जा रही हूँ । जिस घर में मैंने कभी सोचा था कि मेरी डोली आकर उतरेगी। कोई बात नहीं, अपने अपने भाग होते हैं । लेकिन तेरे आँगन से निकलने से पहले मैं बाबा नानक को हाज़िर नाज़ीर जान कर कहती हूँ, कि मैं उसी तरह अछूती कँवारी हूँ जैसे मैं पहले थी । लेकिन अबला, नारी, मैं अपनी मासूमियत का क्या सबूत दूँ ? कैसे सबूत दूँ? कीचड़ का हर छींटा जो उछलता है, एक औरत के जिस्म पर आकर चिपक जाता है । फिर वह कीचड़ नहीं उतरता । सीता के साथ भी ऐसा ही हुआ था, अलविदा मेरे मेहबूब !''

23

तीर कमान में से छूट चुका था । अब कुछ नहीं हो सकता था। अब सारी ज़िन्दगी पछताने के लिये थी, तरसने के लिये थी किसी की याद में तड़पने के लिये थी । लगता था, शैली कुछ इसी ढँग से सोच रहा था । वह हर वक्त रूआँसा रूआँसा रहने लगा था । नसरीन बहुत परेशान थी । धर्मशाला में हाज़िर होकर हाथ जोड़ती, अरदासें करती रहती, शैली के क्लेश का कोई इलाज नहीं था । वह सोचती वह कैसे अपने बेटे को पहले से चबाई हड्डी को चबाने की इजाज़त दे दे । यह लड़की जो इतने दिन पराये मर्द के पास रहकर आई थी, चाहे वह कुछ भी कहे, उसका सत्त कैसे क़ायम रह सकता था ? औरत ज़ात के इकहतर सौ चालीत्तर होते हैं । वक्त के साथ शैली अपने आप संभल जायेगा । नसरीन को तो अमन का डर खाये जाता था । भाई मूले की बीबी बड़ी पहुँची हुई औरत थी । इस तरह दाग़दार बेटी को जैसे तैसे किसी के पल्ले बाँध जायेगी ।

शैली सोचता था अगर यह सच भी था कि शेरखान ने लड़की को ख़राब कर दिया था तो भी सुंदरी का इसमें कोई क़सूर नहीं था । क़सूर तो खुद शैली का था, पहले तो एक जवान जहान लड़की को दरिया के किनारे अपनी ज़िम्मेदारी पर उसने रख लिया । हाँ उसका क़सूर था, अगर वह न चाहता तो मल्लाह की भला क्या मजाल थी कि वह एक कँवारी कन्या को इस तरह किसी पराये मर्द के साथ पीछे छोड़ जाता । वे तो बेड़ी में बैठी सवारियों को टुकर-टुकर देख रहे थे कि बेड़ी नदी में ठेल दी गई । वे बाँहें उठा उठा कर लोगों को विदाई दे रहे थे ।

और फिर जब शेरख़ान ने लड़की को उससे छीना, कोई और होता तो अपनी जान पर खेल जाता । ग़ैरत का यह तक़ाज़ा था कि वह डूब मरता । शैली तो कितने दिन शेरख़ान के कुस्बे की धर्मशाला में पड़ा रहा था । उसकी मजाल नहीं हुई कि वह ख़ान के पास

जाकर अपनी अमानत माँगता । यह तो खुद ब खुद ख़ान के मन में खुदा का ख़ौफ जागा था । फिर यह देख कर कि सुंदरी ने चारपाई पकड़ ली थी, उसने सुंदरी से जान छुड़ाने का फ़ैसला कर लिया था ।

कुछ देर बाद शैली कुछ और तरह सोचने लगता ।

यह तो अच्छा ही हुआ कि वे लोग करतारपुर से चले गये थे । सुंदरी का जादू बड़ा प्रबल था । पहली मुलाक़ात में ही उसने शैली पर टोना कर दिया था । और उस दिन रावी पार जब शाम के वक्त सब लोग बरगद के नीचे सो गये थे वह पानी पीने के बहाने शैली के साथ दूर रहट वाले कुँए तक चली गई थी ।

ऐसा सोचते वक्त शैली को अपने भीतर से बदबू आने लगती । उसका जी चाहता वह अपने दाँये बाँये दोनों गालों पर ज़ोर से चपेड़े मारे । सुंदरी के बारे में इस तरह सोचना गुनाह था । वह लड़की तो सुच्चा मोती थी । उसके साथ अन्याय हुआ था । मर्दों की यह दुनियाँ । एक मर्द औरत की इज्ज़त लूटता है दूसरा उस औरत को इसकी सज़ा देता है, उसकी इज्ज़त किसी ने क्यों लूटी? बेज़बान औरत उनके मुंह की ओर ताकती रह जाती है ।

उस रात नींद में शैली एक सपना देख रहा था ।

सुंदरी और शैली दोनों कश्ती में बैठे दरिया पार कर रहे हैं । ज़ोर की एक लहर आती है और कश्ती उलट जाती है । शैली को तो तैरना भी नहीं आता । सुंदरी तैरना जानती है । वह एक जलपरी की तरह शैली को कभी अपनी बाँहों के सहारे, कभी अपने कंधे पर चढ़ा कर किसी न किसी तरह किनारे पर पहुँचा देती है ।

उसे किनारे पर पहुँचाती है कि एक और लहर आती है जो सुंदरी को अपनी चपेट में लेकर डुबो देती है । इस बार आँखों से ओझल हुई सुंदरी कहीं भी दिखाई नहीं देती । नदी की लहरें उसे अपने साथ बहा कर ले गई हैं । और शैली नदी के किनारे खड़ा देखता रह गया और फिर वह घबरा कर अनायास "सुंदरी " "सुंदरी" पुकारने लगता है ।

रात गये इस तरह नींद में शैली का सुंदरी को पुकारना सुनकर नसरीन आँगन में से उठकर भीतर कमरे में गई, बेचारी माँ पसीने से तर हो रही थी इतने में शैली फिर गहरी नींद में सो गया ।

नसरीन बहुत देर तक बेबस भाव से अपने बेटे की ओर देखती रही ।

जो भी पड़ौसिन सुनाती,यही कहती, लड़के पर टोना किया गया है । पहली बात तो यह जो लड़की इतने दिनों तक पराई छत तले रहकर आई हो, उसके साथ जो भी हुआ हो वही कम है । फिर सुंदरी जैसी लड़की को देख कर तो उड़ते पंक्षी औंधे मुँह गिर पड़ते हैं, हाथ लगाने से ही जैसे मैली हो जायेगी, भला वह कैसे सही सलामत लौट सकती है?

नसरीन कहती, "बाबा नानक को तो टोने टोटकों में कोई विश्वास नहीं था । "

"बेशक उसकी एक पड़ौसन बीच में बोल उठी," बाबा जी कर्म काँड, टोने टोटके में विश्वास नहीं करते थे, लेकिन किसी दूसरे को टोना करने से तो नहीं कोई रोक

सकता ।"

दूसरी बोली, "बाबा जी का नाम सब से बड़ा टोना है । मैं तो "धन्न गुरू नानक," "धन्न गुरू नानक" का जाप करती हूँ और मेरे मन की मुराद पूरी हो जाती है ।"

"मैं कहती हूँ, तू धर्मशाला जाकर दोनों वक्त झाड़ू लगाया कर । एक महीना ऐसा कर ले, लड़का भला चँगा हो जायेगा," तीसरी की राय थी ।

चौथी का कहना था, "लड़का सुख से जवान हो गया है । इसलिये तू कोई रिश्ता ढुंढ कर इसे बाँध दे। इश्क मुश्क सब कुछ भूल जायेगा ।"

नसरीन की समझ में कुछ न आता ।

"मैं कहती हूँ तू आक का दूध लड़के के हाथों-पैरों के नाखूनों पर लगाकर उसे हरमल की धूनी दें ।"अगले दिन एक सहेली समझाने लगी ।

"वह किस तरह दी जाती है? नसरीन ने उससे पूछा, जैसे उसकी सलाह मान ली हो ।

"चपनी में दो चार सुलगते हुए कोयले रख के, उन पर सूखे हरमली के मुट्ठी भर भर दाने डाल कर पाँच बार लड़के के सर के इर्द गिर्द फेर देना । इसके बाद वह उस लड़की का नाम कभी नहीं लेगा ।"

जो कुछ कोई बताता, नसरीन वह सब करती । उसने दोनों वक्त धर्मशाला में झाड़ू देना भी शुरू कर दिया । वह बाबा नानक का विरद भी करती, टोने टोटके करके थक गई, लेकिन कोई फर्क नहीं पड़ा । शैली की नींद पहले की तरह बेआरामी रहती । सोये सोये वह चीख़ पड़ता । अपने आप को कोसता रहता ।

आख़िर हार कर नसरीन ने एक दिन शैली से कहा, "पुत्तर, इस तरह दिनरात घर में क्लेश डाले रखने का क्या फ़ायदा? अभी भी वक्त है । खडूर जाकर तू लड़की को वापस ले आ । जैसे तेरी मर्ज़ी हो कर ले । मुझ से तेरा दुख नहीं देखा जाता ।"

और जो जबाव शैली ने दिया, उसकी माँ की आँखें खुली की खुली रह गई । वह बिट बिट उसके मुंह की तरफ़ ताक रही थी । शैली तो सुंदरी से शादी करने के लिये तैयार नहीं था । किसी की जूठी की गई लड़की से वह हरग़िज़ हरग़िज़ शादी नहीं करेगा ।

तो फिर इस तरह कलप क्यों रहा था?

शादी बेशक नहीं करना चाहता था, लेकिन उसके प्यार में जैसे वह मारा गया था । शादी नहीं करना चाहता था लेकिन सुँदरी से वह प्यार करता था । जैसे किसी के हाथ में स्वर्ग आकर छूट जाये, शैली को ऐसा महसूस हो रहा था ।

इस बीमारी का इलाज किसी के पास नहीं था । नसरीन अपना कलेजा थाम कर रह गई । बस दोनों वक्त धर्मशाला जाती । अपने साथ शैली को भी चलने के लिये मजबूर करती । झाड़ू लगाती, संगत की सेवा करती, माथा रगड़ती, कथा कीर्तन सुनती, बाबा नानक का सिमरन करती रहती ।

शैली ने कामकाज करना छोड़ दिया था । आठों पहर चुपचाप सोच में डूबा रहता,

लेटा रहता। कोई कुछ पूछता तो हाँ या न में जवाब दे देता। अगर उसके सामने कोई खाने की चीज़ रखता तो खा लेता नहीं तो भूखा प्यासा पड़ा रहता। दिन बदिन कमज़ोर होता जा रहा था।

नसरीन की सहेलियाँ बार बार मशवरा देतीं कि वह कोई लड़की ढूँढ कर लड़के की शादी कर दे। शैली इस बात के लिये भी राज़ी नहीं हो रहा था। नसरीन ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं करना चाहती थी। वह अपने बेटे को अच्छी तरह समझती थी। किसी पराई लड़की की ज़िंदगी को वह ख़राब नहीं करना चाहती थी।

24

वही बात हुई। अगले दिन अमन करतारपुर आ गया। नसरीन के लिये जैसे चाँद चढ़ गया। सच तो यह था कि वह मन ही मन कई बार चाह चुकी थी कि काश भांई मूले की बीवी और दूसरे लोगों के खडूर पहुँचने के पहले अमन वहाँ से चल पड़े और रास्ते में उनकी मुलाक़ात न हो। बिल्कुल ऐसा ही हुआ था। "बाबा नानक घट घट के ज्ञाता हैं। नसरीन अपने आप से कहती और उसके हाथ कृतज्ञता में जुड़ जाते।

शैली भी जैसे खुशी से खिल उठा था। कितने अरसे के बाद अमन करतारपुर लौटा था। कितना बदल गया था। अमन से मिलकर शैली को लगा जैसे उसकी कोई ज़रूरत पूरी हो गई हो। उसके जीवन में जो सूनापन आ गया था अचानक वह दूर हो गया हो। अमन का साथ पा कर जैसे वह उस क्लेश को भूल गया था जो कुछ दिनों से उसने खुद पैदा किया था।

लेकिन यह चमत्कार हुआ कैसे ? पहली फ़ुर्सत में नसरीन अमन को लेकर बैठ गई। यह कैसे मुमकिन था कि रास्ते में उन लोगों से उसकी भेंट ही नहीं हुई? दरअसल अमन खडूर से कभी का चल पड़ा था। रास्ते में क़स्बे थे, कई गाँव थे,वह जगह जगह बाबा नानक के श्रद्धालुओं से मिलता आया था। खडूर में वे लोग पढ़ने-सुनने के लिये बाबे की बाणी एकत्रित कर रहे थे। सारी बाणी गुरूमुखी लिपि में लिखी जा रही थी। गुरू अँगद देव जी ने तो बच्चों के पढ़ने के लिये गुरूमुखी का बालबोध भी तैयार किया था।

अगले कुछ दिनों में अमन को उसके पीछे घटी घटनाओं की जानकारी दी गई। ख़तों में कई बातें नहीं कहीं जा सकती थी। कुछ बातें शैली ने उसे बताई कुछ उसकी मौसी नसरीन ने।

बार बार सुंदरी का ज़िक्र छिड़ जाता। अमन कुछ ज़्यादा ही गँभीर हो उठता। इधर शैली के कलेजे में तो जैसे छुरी फिर जाती।

नसरीन खुश थी, अमन के आने से शैली का दिल बहल गया था। अब पहले की तरह उसका दिल नहीं डूबता था। आज कल फिर घर में गहमा गहमी रहने लगी थी। लगता था खडूर में रह कर अमन कुछ ज़्यादा गुरूमुख हो गया था। हर रोज़ तड़के उठकर पहले कसरत करता, फिर नहा धोकर धर्मशाला की ओर चल पड़ता। अपने साथ शैली को भी लगाये रखता। नसरीन सोचती, गुरू बाबे ने उसकी सुन ली थी। मेहर की थी।

जब उस काफ़िले का ज़िक्र आता जो अमन के पीछे खडूर गया था तो वे सभी यही सोचते थे कि वे लोग अब करतारपुर नहीं लौटेंगे। वहीं से अपने-अपने घरों को लौट जायेंगे। अमन को डर था कि उसकी माँ को भाई मूले की बीवी या शक्तिअपने साथ न ले जाये। शक्ति से उसे ज़्यादा ख़तरा था। ''बहुत मुहब्बत करने वाली लड़की है। इतने ऊँचे ख़ानदान की, इतने बड़े बाप की बेटी, लेकिन मजाल है जो उसमें रईसों वाली कोई फूँ-फाँ हो। बेहद मीठा बोलने वाली लड़की और कितनी पढ़ी लिखी थी। अरबी, फ़ारसी, संस्कृत की विद्वान। और गुरू बाबे की भगत ..... अमन खुद बखुद बोलता जा रहा था कि शैली ने उसे टोका, ''और फिर कितनी गोरी, कितनी ऊँची लंबी, हँसती है तो जैसे चँबे की कलियाँ झड़ती हैं, बोलती है तो जैसे चाँदी के घुंघरू छनकते हैं, अघसोई पलकें, आँखों में एक खुमार, माथे पर आभा, ओठों पर मुस्कान, गालों पर नूर, जैसे आसमान से उतरी कोई परी हो.....।''

शैली बोलता जा रहा था, जिस तरह अमन की बात बीच में से ही काट कर उसने शक्ति के गुण गाने शुरू कर दिये थे। अमन उसके चेहरे की ओर ताकता रह गया। फिर अचानक दोनों हँसने लगे। हँसते रहे, हँसते रहे।

अमन सोचने लगा, शक्ति का जादू शैली पर भी चल गया था। लेकिन जब सुंदरी का ज़िक्र आता, शैली का एक रंग आता, एक रंग जाता, उसकी जबान में जैसे मिसरी घुल रही हो। शक्ति बेशक सुंदर थी, लेकिन सुँदरी का जवाब नहीं था।

दो सुंदर लड़कियाँ, दो सुंदर नौजवान, इस तरह आपस में गुँथे हुए थे कि किसी की समझ में नहीं आ रहा था, कौन किसके ज़्यादा नज़दीक था कौन किसको ज्यादा चाहता था। आख़िर उन्हें एक दिन इसका फ़ैसला करना था। लेकिन सुंदरी की बदक़िस्मती यह थी कि शेरख़ान की तोहमद उसकी चादर को लोगों की नज़रों में दाग़दार किये हुए थी।

अमन को करतारपुर आये कई दिन हो गये थे। खडूर साहब से कोई ख़बर नहीं थी कि भाई मूले की बीवी और तेजी,सुंदरी और शक्ति वहाँ पहुँची थी या नहीं। अगर पहुँचीं थी तो उनका अगला प्रोग्राम क्या था ?

उस दिन हवा में किस क़दर खुनकी थी। खेतों में काम करने जा रहे अमन ने शैली की फतुही पहन ली। शैली कुछ ढीला सा था। वह उसके साथ नहीं गया। उसने बाद में जाना था।

अमन का साथ पाकर शैली बेशक अपने को भला चँगा महसूस करने लग पड़ा था, फिर भी जब उसे सुंदरी की याद आती, उसके दिल को कुछ होने लगता, बिस्तर पर लेटता तो उसे नींद न आती, नींद आती तो हर क़िस्म के अजीब सपने उसे घेर लेते। उस रात भी कुछ ऐसा ही होता रहा था। आँख लगते ही कोई मनहूस सपना उसे परेशान करने लगता।

धूप चढ़ आई फिर भी वह पलँग पर लेटा सोने की कोशिश करता रहा।

उधर खेतों में काम करते हुए घड़ीभर के लिये जब अमन सुस्ताने के लिये बैठा तो

उसका हाथ शैली की फतुही की जेब में जा पड़ा। जेब में सुंदरी का रुक्का था जो वह शैली के लिये छोड़ गई थी –

"शैली मेरी जान, मैं तेरे घर से जा रही हूँ। जिस घर में मैंने कभी सोचा था कि मेरी डोली आकर उतरेगी। कोई बात नहीं, अपने अपने भाग होते हैं। लेकिन तेरे आँगन से निकलने से पहले मैं बाबा नानक को हाज़िर नाज़िर जानकर कहती हूँ कि मैं उसी तरह अछूती कँवारी हूँ जैसे मैं पहले थी। लेकिन अबला नारी, मैं अपनी मासूमियत का क्या सबूत दूँ। कीचड़ का हर छींटा जो उछलता है, एक औरत के जिस्म से आकर चिपक जाता है। फिर वह कीचड़ नहीं उतरता। सीता के साथ भी ऐसा ही हुआ था। अलविदा मेरे महबूब !"

शैली ने अमन से ढेरों बातें कीं थीं, लेकिन इस ख़त का ज़िक्र कभी नहीं किया था। ख़त पढ़ कर अमन का लहू जैसे खौलने लगा। जी में आया, वह किसी तरह उड़ कर खडूर साहब पहुँचे और सुंदरी के साथ हुए अन्याय का जैसे तैसे प्रतिकार करे।

अभी अमन मन ही मन पूछ रहा था कि शैली अँगोछे में उसका शाम का भत्ता* लेकर आया। शहतूत के पेड़ के नीचे बैठ कर उन्होंने नाश्ता किया और फिर इधर उधर की बातें करने लगे। कुछ देर बाद शैली भाई मूले की बीवी के गुण गाने लगा।

"गुरू बाबे में उसकी श्रद्धा है। इतनी आस्था ! ढेर सी गुरबाणी उसने याद कर रखी है। गुरू घर में इतना विश्वास है कि हर काम करने से पहले वह धर्मशाला जाकर अरदास करेगी। और कितना मीठा बोलती है ! हर किसी की मदद करेगी, हर किसी के काम आकर खुश होगी। उसे गुरू बाबे का आशीर्वाद प्राप्त है, उसके चेहरे से नूर बरसता है.......।"

"इतनी अच्छी औरत से तू रिश्ता क्यों नहीं गाँठ लेता? "अमन ने उसे टोक कर कहा।

"क्या मतलब?"

"तू उसकी बेटी से शादी करके उसे अपनी सास बना सकता है।"

"तेरा मतलब है कि मैं एक विधवा लड़की से शादी करवा लूँ, जो इतने दिन एक बलोच के यहाँ रह कर आई है ?"

"विधवा वह ज़रूर है, लेकिन उसका दूल्हा उसकी डोली घर पहुँचने से पहले ही लाम पर बुला लिया गया था, फिर वह लड़ाई में मारा गया, इस लिये एक मासूम कँवारी लड़की को क्या सज़ा दी जाये?"

"बेशक, लेकिन वह इतने दिन शेरख़ान के पास रहकर आई है सो?

इसमें उसका क्या कसूर है? उसका अपहरण किया गया था।

"तेरी मर्ज़ी है कि मैं ऐसी औरत से शादी कर लूं जिसका अपहरण किया गया था ?"

---

* खेत में पहुंचाया जाने वाला भोजन (अनुवादक)

"अपहरण ज़रूर किया गया था लेकिन वह ज्यों की त्यों अछूती है । क्वँारी है ।" यह कहते हुए अमन ने फतुही की जेब में से सुंदरी का खत निकाल कर शैली के सामने रख दिया ।

"वह झूठ बोलती है । इतने दिनों तक शेरख़ान उसके साथ मुंह काला करता रहा। शेरख़ान ने रावी में छलाँग लगा कर उसे बचाया । नदी में से अगर कोई मर्द किसी जवान जहान लड़की को निकालता है तो भला कहीं उस लड़की का सत्त धर्म क़ायम रह सकता है । वह झूठ बोलती है, हमें बेवकूफ़ बना रही है" शैली आवेश में बोला,उसकी आँखें डबडबा गई ।"

"ठीक है, तो फिर मैं उससे शादी करवा लूँगा ।" अमन ने पूरे इरादे से कहा और वह उठकर फावड़े से धरती खोदने लगा । सुबह से वह एक टिब्बे को हमवार कर रहा था ।

शैली जहाँ बैठा था वहीं बैठा रह गया और बहुत देर तक अमन की पीठ की तरफ़ देखता रहा । उसके गालों पर लुढ़के दो आँसू जैसे जम गये थे ।

25

शैली को लगता जैसे वह एक वीरान खंडहर हो,गिरती इमारतों से घिरा हुआ । भयँकर ठँडा तुफ़ान सीटी बजाता हुआ एक तरफ से घुसता और दूसरी तरफ से निकल जाता । आवारा कुत्ते जगह जगह सूँघते फिरते, जहाँ मन आता टाँगे उठा कर बदबू फैलाते रहते, सुबह शाम खँडहर की चोटी पर एक बाज़ आ बैठता है, अपने जोड़े के लिये व्यर्थ क्रन्दन करता हुआ ।

इधर अमन का आठों पहर, गुरू महिमा में एकसुर लीन । नसरीन हैरान थी, गुरू अँगद देव जी की सँगत में वह कितना आगे निकल गया था । उस दिन रात खाने के बाद उन्हें समझा रहा था :

"बाबा नानक ने कहा था, न कोई हिंदू न मुसलमान । सवाल उठता है, तो फिर मैं कौन हूँ ? शैली कौन है? इसका एक जबाव तो यह है कि हम सभी इन्सान हैं । एक ईश्वर की संतान । इसमें कोई शक नहीं, इस सृष्टि का रचने वाला परमात्मा है । उसे चाहे अल्लाह कह लो चाहे किसी और नाम से पुकार लो । फिर इन्सान होने के नाते शैली ने और मैंने गुरू नानक को अपना गुरू-पीर माना हैं, उनके बताये रास्ते पर हम लोग चलते हैं। गुरू नानक ने मुसलमानों से कहा तुम अच्छे मुसलमान बनो, हिन्दुओं से अच्छे हिन्दु बनने की ताक़ीज़ की । लेकिन हम जैसे, जिन्होंने बाबे नानक का दामन थामा है, जो जनेऊ नहीं पहनते, जो नमाज़ पढ़ने मस्जिद में कभी नहीं गये, जिन्हें न संस्कृत का ज्ञान है : जिन्होंने न अरबी सीखी है, जो सुबह शाम धर्मशाला में मिलकर ईश्वर के गुण गाते हैं, बाबा नानक को अपनी मातृभाषा में याद करते हैं, हमारे लिये एक नई सांझ गुरू अँगद देव जी ने बख़्शी है । यह है गुरूमुखी लिपि जिसे पंजाबी बोली के लिये, वह बोली जो पँजाब का साधारण आदमी बोलता है, उपयुक्त पाया है । इसमें जो थोड़ा बहुत परिवर्तन करना था, किया

है । खडूर के बच्चों को गुरू महाराज खुद यह लिपि सिखाते हैं । हर आने जाने वाले में इस लिपि का प्रचार करते हैं । गुरू नानक देव जी ने संस्कृत, अरबी, फ़ारसी को छोड़ कर जन साधारण की बोली में उपेदश दिया, वह बोली जिसे छोटे बड़े सब समझते हैं, गुरू अँगद देव जी ने इस बोली के लिये एक लिपि चुनी है और इस लिपि को नाम दिया है, "गुरूमुखी ।"

जब अमन बोल रहा था, शैली उठकर बाहर चला गया । बहुत देर तक गली में अकेला घूमता रहा । उसे लगा जैसे अमन उससे कहीं आगे निकल गया हो । किस तरह की सयानी बातें करता था । उसकी माँ कितने ध्यान से उसके मुंह से निकला एक एक शब्द सुन रही थी, कैसी उमंग भरी नज़रों से उसके चेहरे की ओर देख रही थी ।

अमन और नसरीन बातें करते हुए सोने की तैयारी कर रहे थे कि शैली घर लौट आया ।

"अम्माँ, मैंने फ़ैसला किया है कि इस बार जब अमन खडूर साहब जायेगा तो मैं भी इसके साथ गुरू महाराज के दर्शन करने जाऊँगा । शैली ने ऐलान किया ।

"तो फिर मैं यहाँ तुम्हारे पीछे कौओं को उड़ाने के लिये रहूँगी?" नसरीन बोली "हम सभी चलेंगे । दर्शन मेला करके लौट आयेगे ।"

"अमन को भी साथ ही लेकर आयेंगे, यह नहीं कि यह प्रसाद खाने के लिये वहीं रूक जाये ।"

"पहली बात तो यह है कि तुम दोनों को अब बाँधना है । दोनों जवान जहान लड़के हो । अब तुम अपनी अपनी बीवी ले आओ । मैं और तेजी अपनी ज़िम्मेदारी से छुट्टी पाना चाहती हैं ।"

शादी का ज़िक्र होते ही सुंदरी की याद फिर तीर की तरह शैली के कलेजे में आ चुभी । बहुत देर तक सुंदरी की अकथनीय सुंदरता उसकी आँखां के सामने तैरती रही । उसके ख़त के बोल अमन के कानों में गूँजते रहे, घायल अबाबील की तरह अपने पँखों को समेटती हुई वह चली गई थी ।

सोने के लिये अपने कमरे में, पलँग पर लेटते ही अमन खुर्राटे भरने लगा । शैली को नींद नहीं आ रही थी । उसे लग रहा था जैसे झूठ बोलकर अमन ने कोई नेमत उससे छीन ली हो । और अब कितनी बेफ़िक्री की नींद सो रहा है ।

शैली को नींद नहीं आ रही थी । वह आँखें फाड़ कर छत की शहतीरों को देख रहा था । "मैं बाबा नानक को हाज़िर नाज़िर जानकर कहती हूँ ।" सुंदरी के ये शब्द बार बार उसे कचोट रहे थे । जैसे उसे भखड़े के काँटे चुभ रहे हों । उसकी दोनों ओर की पसलियों में दर्द की टीसें उठ रही थीं । उसका अंग अंग दुख रहा था । उसने कई कोशिशें की, लेकिन नींद नहीं आ रही थी, करवटें बदल कर वह थक, हार गया था ।

उसे लगता, कोसों दूर बैठी परी जैसी कोई लड़की छल छल आँसू बहा रही थी, उसे दिलासा देने वाला कोई नहीं था । किसी द्रौपदी का चीर हरण हो रहा था, लेकिन कोई

उसकी सहायता के लिये पहुँच नहीं रहा था। कोई सीता किसी राक्षस के कब्ज़े में आ गई थी और उसकी पुकार कोई नहीं सुन रहा था।

शैली की रात इसी तरह कलपते, तड़पते बीत गई। पौ फटने पर अमन के उठने का भी समय हो गया। शैली अभी भी जाग रहा था। जैसे कोई तपती हुई भट्टी में उसे भुन रहा हो।

"लगता है, जैसे तुझे रातभर नींद नहीं आई," अमन ने शैली की ओर देखकर सहज स्वर में कहा और कसरत की तैयारी करने लगा। क्षणभर के लिये शैली की चीख़ निकल गई। उसकी आँखें आँसुओं से डबडबा गई थीं। अमन ने मुड़कर उसकी तरफ़ देखा "यह तुझे क्या हो रहा है ?" अमन उसके पलँग पर आकर बैठ गया।

"तू उसके साथ कैसे शादी कर सकता है ?" शैली ज़ोर ज़ोर से अमन की छाती पर मुक्के मार रहा था। मुक्के मारता हुआ छल छल आँसू रो रहा था।

"क्यों, तू उसके साथ शादी करवाना चाहता है? "अमन ने शैली से पूछा।

"नहीं, नहीं, नहीं " शैली पूरी सच्चाई से कह रहा था।

"तो फिर मेरा किसी अबला का हाथ पकड़ना तुझे क्यों बुरा लग रहा है? "अमन हैरान था।

"वह भगाई हुई लड़की है। '?

"इसमें लड़की का क्या क़सूर है।"

"उसे किसी पराये मर्द ने ख़राब किया या नहीं?"

"मैं उसे सात पानियों में धो लूँगा।" अमन अपनी बात पर क़ायम था।

"वह झूठ बोलती है कि उसका सत्त भँग नहीं हुआ। "

"इसका फ़ैसला करने वाले हम कौन होते हैं? "अमन को शैली पर तरस आ रहा था। "अगर तुम लोग उसका इस घर में रहना ठीक नहीं समझोगे तो मैं उसे खडूर ले जाउँगा। "

अमन ने तो जैसे पक्का इरादा कर लिया हो। वह सुंदरी से शादी करके रहेगा।

"मैं तुझे उसके साथ शादी नहीं करने दूँगा " शैली सिसक रहा था।

"लेकिन इसमें रोने की कौन सी बात है? "अमन की समझ में नहीं आ रहा था।

"मैं उसे अपनी भाभी नहीं बनाउँगा।

अमन हैरानी से उसकी तरफ़ देख रहा था। इसी वक्त बग़ल के कमरे में नसरीन जाग उठी थी। और फिर वे लोग चुप हो गये।

अमन अपनी कसरत में लग गया। कसरत के बाद नहा धोकर वह धर्मशाला चला गया। इतने में शैली की आँख लग गई।

26

पिछली रात जो शैली ने अमन के बारे में कहा था-"कहीं ऐसा न हो कि यह पीछे प्रसाद खाने के लिये रुक जाये।" लगता था यह बात अमन के दिल में चुभ कर रह गई

हो । अगले दिन काम काज से निपट कर जब वे इकट्ठे बैठे तो अमन ने गुरू अँगद देव जी की सुनाई एक साखी का ज़िक्र किया :

"एक बार गुरू नानक देव जी के जन्म दिन पर उनके श्रद्धालुओं ने भेंटों के अंबार लगा दिये । इनमें अन्न था, मेवे थे, मिठाइयाँ थीं, वस्त्र थे और अनेक और अनमोल सोग़ातें थीं । बाबा जी भी देख रहे थे कि भेंट लाने वाले अपने आप को दानी समझकर अहँकार से आ जा रहे थे । उनकी अकड़ देख कर भेंट इकट्ठी करने वाले गुरू सेवकों की आस्था में भी कमी प्रतीत होने लगी थी । गुरू महाराज को न दानियों का अहँकार अच्छा लगा न अपनों की हीनता का भाव और उन्होंने हुक्म दिया कि सारी भेंट की सामग्री को जला दिया जाये । सब यह सुनकर हैरान हो गये । भेटों के इतने बड़े बहुमूल्य भँडार को जलाने की हिम्मत किसी में नहीं हो रही थी । हर कोई सुनी अनसुनी कर रहा था । और फिर गुरू बाबे ने भाई लहणा जी की तरफ़ देखा । उन्होंने बाबे के आदेश के अनुसार सारी भेंट सामग्री को अग्नि के हवाले कर दिया ।

"आज कल गुरू अँगद देव जी खुद मूँज बाटते हैं" अमन बता रहा था "जब भी उन्हें फ़ुर्सत मिलती है वे अपने हाथों से मूँज बटते हैं । मुंह से नाम जपते रहते हैं । मूँज बटने से जो आमदनी होती है उसे लंगर के लिये भेज देते हैं । यही नहीं, अपने दोनों बेटों दासू और दातू को उन्होंने व्यापार में डाला हुआ है ताकि अपने गुज़र बसर के लिये कमा खा सकें । उन्हें गुरू-भेंट की लालसा न रहे । इसी तरह माता रवीवी जी को भी महाराज की आज्ञा है कि वे लंगर सँभालें। माता जी अमृतवेला में उठकर घर का कामकाज निपटा कर लँगर में हाज़िर हो जाती हैं । गुरू जी के पास शबद की दौलत है जो बाँटते हुए नहीं थकते और माता रवीवी जी के हाथ में करछुल है, जो भी श्रद्धालु आता है लंगर में प्रसाद खाता है और निहाल हो जाता है । लोग तो हैरान होते हैं कि इतनी रसद कहाँ से जमा होती है । गुरू महाराज के कीर्तानिये बलवँड ने माता रवीवी बारे में एक पौड़ी लिखी है, जिसे अक्सर सुनाया करते हैं :

"बलवँड रवीवी नेकजन
जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥
लँगरि दउलति वंडीअै,
रसु अँमृतु रवीरि धिआली
गुरू सिक्खाँ के मुख उजले
मनमुख थीऐ पराली ॥"

"और तो सब ठीक है लेकिन यह अखाड़े क़ायम करना और कुश्तियाँ करवाने वाली बात मेरी समझ में नहीं आई ।" एक दिन शैली अमन से पूछने लगा ।

"वास्तव में बात यह है कि गुरू अँगद देव जी जब करतारपुर से चले थे तो वे अपना चोग़ा भी, जो बाबा नानक जी ने उन्हें बख़्शा था, गुरू महाराज के बेटे बाबा श्रीचँद के लिये पीछे छोड़ गये थे । केवल एक पोथी लेकर यहाँ से निकले थे । और ब्यास के

नज़दीक खडूर जैसा चहल पहल वाला शहर जा बसाया । इधर बाबा श्री चन्द जी अविनाशी मुनि से प्रभावित होकर उदासी बन गये । इतना ही नहीं वे उदासी मत का प्रचार करने लगे हैं । आज कल काश्मीर के पँडित पुरूषोत्तम के पास संस्कृत पढ़ने के लिये गये हुए हैं । कई लोग तो उन्हें शँकर का अवतार मानने लगे हैं । ये सारी बातें गुरू नानक का मार्ग नहीं । वे तो मानते थे कि गृहस्थ में रहते हुए, खाते पीते, पहनते हुए गुरूसिक्ख मुक्ति प्राप्त कर सकता है । गुरू अँगद देव जी मानते हैं कि स्वस्थ शरीर ईश्वर भक्ति की पहली शर्त है । शरीर स्वस्थ रखने के लिये कसरत ज़रूरी है । दौड़ना, बैठकें निकालना, कुश्ती लड़ना । वे तो किसी को माँस खाने की भी मनाही नहीं करते ।''

गुरू महाराज की प्यारी प्यारी बातें सुनकर शैली मन ही मन सोचता, खडूर साहब जाकर अगर हो सका तो वे वहीं बस जायेंगे । वे लोग करतारपुर आये थे, बाबा नानक से बँधे हुए वे खडूर जायेंगे, गुरू अँगद देव जी की सेवा में ।

एक संशय और था जो शैली को अक्सर परेशान करता रहता था । एक दिन उससे रहा न गया और वह अमन से पूछने लगा–''गुरू नानक देव जी ने मुग़लों के हमले के दौरान वे सारे अत्याचार अपनी आँखों से देखे जो हमलावरों ने इस देश के लोगों पर किये, फिर भी बाबा जी ने उन्हें यहाँ की बादशाही बख़्शी थी, यह कहाँ का न्याय है ? क्या कोई यह भी चाहेगा कि देश के लोगों को ग़ुलाम बना लिया जाये?''

नसरीन भी शैली की इस बात से सहमत थी । बल्कि हुमायूँ जब शेरशाह से मार खा कर आया था, गुरू अँगद देव जी ने उसे फटकारा ज़रूर था, लेकिन गुरू बाबे का दावा याद करवाया, और मशविरा दिया कि वह हिंदुस्तान छोड़ कर चला जाये और तैयारी करके फिर हमला करे ।

''गुरू घर को किसी से बैर नहीं ।''अमन बोला ''निरभऊ, निरवैर'' और न ही हमारे गुरू महाराज क़ुदरत के नियम में कमी दख़ल देकर खुश होते हैं । वे तो जनसाधारण को सीधा सच्चा जीवन जीने के लिये उपदेश देते हैं । सच्चा जीवन है मेहनत करना और बाँट कर खाना । बाबर ने बेशक हमला किया और क़हर ढ़ाया,लेकिन जो कहर यहाँ की हकूमत आम जनता पर ढा रही थी, वह भी कोई कम नहीं था । किसे कितनी सज़ा देनी है या क्या इनाम देना है, यह फ़ैसला गुरू महाराज ईश्वर पर छोड़ देते थे । हमारा फ़र्ज़ है कि जो काम हमारे ज़िम्मे लगाया जाये हम उसे ईमानदारी से करें । मिसाल के लिये मुझे एक घटना याद आ रही है । मालू शाह नाम का एक फ़ौजी एक दिन गुरू अँगद देव जी के यहाँ हाज़िर हुआ। पता चला कि चूँकि मुग़लों की हार हो रही थी, इसलिये वह उनकी फ़ौज की नौकरी छोड़ कर आ गया था । गुरू महाराज ने उसकी ताड़ना की । उसे समझाया कि जिसका अन्न खाये उसके गुण गाने चाहिये और अगर मालिक पर मुसीबत आ पड़े तो मालिक का साथ देना नौकर का पहला फ़र्ज़ है । बेशक आज कल मुग़लों पर कठिन समय आया है, लेकिन उस समय उनसे बेवफ़ाई करना अत्यन्त दर्जे की कृतघ्नता होगी । मालू शाह ने सुना और वापिस अपनी फ़ौज में चला गया । इस तरह की बातें सुनसुन कर

शैली को और भी चाव चढ़ता, वह सोचता आँख मूंद कर खडूर पहुँच जाये ।

नसरीन की बात और थी । वह कहती थी, फसल तैयार है, पहले फ़सल संभालनी होगी, उसके बाद ही वे घर छोड़ सकेंगे, और फिर मवेशियों का भी इन्तज़ाम करना पड़ेगा । बसा बसाया घर भला कोई इस तरह छोड़कर जा सकता है ?

27

उधर तेजी और उसके साथियों का काफ़िला अभी तक खडूर नहीं पहुँचा था । रास्ते में उन्होंने एक जगह पता किया, औरतें वहीं टिक गई ।

करतारपुर से चलते वक्त शक्ति ने सोचा था, सुंदरी उसकी पुरानी सहेली है, उसके साथ जो बीता था उसकी सच्चाई वह रास्ते में ही मालूम कर लेगी । इतने दिनों तक उसने जानबूझ कर उसका मन नहीं कुरेदा था । वह नहीं चाहती थी कि किसी जवान लड़की के जख़्मों को कुरेद कर फिर से हरा किया जाये । और फिर उसके साथ जो बीता था आख़िर उसमें सुंदरी का क़सूर भी क्या था ? जो उसके साथ हुआ था वह शक्ति के साथ भी तो हो सकता था । किसी के साथ भी हो सकता था । आगे पीछे अक्सर होता रहता था ।

शक्ति तो सिर्फ़ एक बात से चिढ़ती थी । जब भी उन बुरे दिनों की बात छिड़ती, सुंदरी शेरख़ान की अच्छाईयों का बखान करने लगती । उसकी बुराई कभी न करती । कई बार वह ख़ामोश हो जाती जैसे कोई पुरानी याद में खो गई हो ।

उस दिन सुंदरी ऐसी ही ख़ामोशी में डूबी थी कि शक्ति से न रहा गया वह कह बैठी, "अरी सुन अगर उससे तेरा इतना ही स्वभाव मिल गया था तो तू वहीं टिक जाती ।"

सुंदरी चुप रही । जैसे उसने कुछ सुना ही न हो ।

"बेचारी औरत का क्या है । उसे तो घर ही बसाना होता है । घर हो, घरवाला हो तो फिर और क्या चाहिये ?

सुंदरी अभी भी चुप थी । जैसे यादों का झुरमुट उसके आगे पीछे खड़ा हो गया हो ।

"तूझे किसी की याद आ रही है? अरी दिल की घुँडी खोल डाल़ नहीं तो इसी तरह घुट घुट कर मर जायेगी "शक्ति ने जैसे फ़ैसला कर लिया था कि आज वह सुंदरी का भेद जान कर रहेगी ।

सुंदरी ने एक अकथ्य क्लेश में शक्ति की ओर देखा ।

"अच्छा, अगर तू मुझे सचसच अपनी सारी आप बीती बता देगी तो मैं भी तुझे एक भेद बताऊँगी । वह बात जो इतने दिनों तक मैंने तुझसे छिपा कर रखी हुई है ।"

यह सुनते ही सुंदरी को जैसे किसी ने झिंझोड़ कर सपने में से उठा दिया हो । उसने खिली खिली आँखों से शक्ति की ओर देखा ।

"पहले तू" सुंदरी ने कहा

"नहीं पहले तू" शक्ति ने ज़िद की ।

"तो फिर रहने दो ।" सुंदरी ने बात ख़त्म करते हुए कहा ।

शक्ति इस मौके को हाथ से नहीं गँवाना चाहती थी । वह तैयार हो गई । तेजी कथा सुनने के लिये धर्मशाला गई हुई थी । पीछे सराय में लडकियाँ अकेली थीं ।

क्षणभर के लिये शक्ति रूक गई । जैसे वह फ़ैसला न कर पा रही हो, इतने दिनों से सँभाल कर रखा हुआ भेद वह कहाँ तक सुंदरी को बता पायेगी । उसे यक़ीन था कि औरत ज़ात सुंदरी कभी उसे अपनी सिर बीती नहीं बतायेगी, जब तक शक्ति उसी तरह की हुई कोई वारदात उसे नहीं बतायेगी ।

और शक्ति ने सुंदरी को अमन से अपनी मुहब्बत की दास्तान कह सुनाई । कैसे वह अमन से नैन मिला रही थी कि उसकी माँ उधर आ निकली थी । फिर कैसे उसकी माँ ने चारपाई पकड़ ली थी और अपनी बेटी से एक बोल साँझा किये बग़ैर घुल घुलकर अपनी जान दे दी थी ।

सुंदरी ने सुना तो उसके पैरों तले से ज़मीन खिसक गई । वह तो उसके ज़िंदगी का एकमात्र सहारा था,वह सोचती थी खडूर पहुँच कर वह अमन को क़ाबू में कर लेगी, और अब वह भी उसके हाथ से निकल चुका था । उसे लगा जैसे वह फिर से विधवा हो गई हो । शक्ति के मुंह से अमन की मुहब्बत की कहानी सुन कर सुंदरी के होशहवास जैसे उड़े, जिस तरह उसका रंग पीला पड़ा, जिस तरह उसके पसीने छूंटे, उसका अपनी कहानी सुनाने का अब कोई सवाल ही नहीं था ।

शक्ति यह तो जानती थी कि सुंदरी की माँ अमन की दीवानी थी, इतने दिनों तक बेटी शेरख़ान की छत तले रह आई थी, शैली ने उसे ठुकरा दिया था । वह अभी भी अमन को अपनाने की सोच रही थी, इसका उसे अनुमान नहीं था ।

सुंदरी की अजीब हालत थी । उसके हाथ पैर ठंडे हो रहे थे,मुड़ रहे थे, थोड़ी देर बाद ही वह बेहोश होकर शक्ति की बाहों में गिर पड़ी ।

वैद्य जी आये । कितनी देर तक उसके साथ जूझते रहे फिर जाकर कहीं उसे होश आई । तेजी बार बार शक्ति से पूछती थी आख़िर क्या हुआ था जो लड़की इस तरह बेहोश हो गई थी । शक्ति उसे आख़िर क्या बताती? बस यही कहा, हमें खडूर पहुँचना चाहिये गुरू महाराज की शरण में सुंदरी भली चंगी हो जायेगी ।

अगले दिन और उससे अगले दिन शक्ति सुंदरी के मुंह की तरफ़ देखती रही कि वह अपने वादे के मुताबिक उसे अपनी आप बीती सुनायेगी । लेकिन लगता था जैसे ऐसा करने का सुंदरी का कोई इरादा नहीं था । इस दौरान उन्हें कई बार एकान्त मिला । शक्ति बार बार उसके मुंह की तरफ़ देखती थी, लेकिन ऐसा लगता था जैसे सुंदरी सब कुछ भूल चुकी थी । खिंची खिंची रहती । एकदम रूखी रूखी हो गई थी ।

स्वाभिमानी शक्ति ने सुंदरी से पूछ पड़ताल की कभी कोशिश नहीं की । उसे सिर्फ़ इतना अफ़सोस था कि क्यों उसने पागलों की तरह अपने एक पवित्र भेद को, जिसे वह इतने दिनों तक अपने भीतर सुरक्षित रखे आई थी, किसी के आगे खोल दिया था ।

कुछ दिन बाद सुंदरी को यह भी बुरा लगने लगा कि शक्ति अब उससे उसकी

आपबीती जानने के लिये तक़ाज़ा क्यों नहीं करती थी। यह सोच सोच वह शक्ति से और भी चिढ़ी चिढ़ी रहती।

फिर एक दिन अकेली बैठी सुंदरी को यह ख़्याल आया कि शक्ति कहीं यह न समझ बैठी हो कि मैं ख़राब हो चुकी हूँ और अपनी इस कमज़ोरी का ज़िक्र करने से मैं जान बूझ कर क़तरा रही हूँ। यह ख़्याल आते ही जैसे उसके तन बदन में आग लग गई और वह भड़क कर उठी और सीधी शक्ति के कमरे में पहुँची। गीली धोती में उसके गोरे बदन का एक एक अंग उकेरा हुआ दिखाई देता था।

यह कोई वक्त नहीं था इस तरह का किस्सा छेड़ने का, लेकिन ऐसा लगता था जैसे सुंदरी पर कोई भूत सवार था, वह शक्ति के गले ही पड़ गई।

"अरी तूने मुझ से तो पूछा होता मेरे साथ क्या बीती? अपना मार्का बताने के लिये तू बड़ी उतावली थी" सुंदरी के बोलों में एक व्यँग्य था, शक्ति को लगा जैसे उसे किसी नागिन ने डस लिया हो।

उसका रँग एकदम लाल सुर्ख़ हो गया। शक्ति की समझ में नहीं आ रहा था कि इस ताने का वह क्या जबाव दे।

इतने में सुंदरी फिर बोली, "जब मैंने तुझे इतना सब कुछ बताया था, तुने उस वक्त अपने इस कारनामे का ज़िक्र क्यों न किया? लाहौरनों का टँगार !

शक्ति टुकुर टुकुर उसके मुंह की तरफ़ देख रही थी।

"तू सोचती होगी, क्या मुंह लगाना उस "छुदृड़" को जो इतने दिन किसी बलोच के साथ रह कर आई है। मैं बाबा नानक को हाज़िर नाज़िर रखकर कहती हूँ कि मैं पहले की तरह ही अछूती कँवारी हूँ।"

"इससे अच्छी बात भला क्या हो सकती है ?" शक्ति के चहरे पर एक अनोखी मुस्कुराहट थी, जैसे एतबार न आ रहा हो।

यह देखकर सुंदरी के ग़ुस्से का पारा और भी चढ़ गया और वह जलभुन कर बोली, "मैं लाहौरन नहीं हूँ कि जो लड़का हाथ आया उसी को अपने पीछे लगा लिया।"

"मैं बहुत बुरी हूँ।"शक्ति ने अत्यंत विनम्र स्वर में कहा और अपनी आँखें नीचे झुका ली।

यह सुनकर, अपनी हरकत पर शर्मिंदा होने की बजाये वह खिलखिला कर हँस पड़ी जैसे किसी को पागलपन का दौरा पड़ा हो, जो मुंह में आता वही बकने लगी। "हद हो गई तूने पूजा की कोठरी में उसे पकड़ लिया न, भली बुरी जगह का ख़्याल किये बग़ैर। बेचारा भोला लड़का, अमन ने भी क्या सोचा होगा। तभी तो जब मैंने दोस्ती का हाथ उसकी तरफ़ बढ़ाया तो वह जैसे फूँक फूँक कर क़दम रख रहा था। मुझे क्या पता था कि उसे पहले ही बाँधा जा चुका है। और तू उसकी तलाश में स्यालकोट भी पहुँच गई। अरी कम्बख्त, तूने अपनी माँ का तो ख्याल किया होता जो इसी ग़म में कुढ़ती कुढ़ती मर गई। लेकिन लाहौरनें जो भी करें सो ही कम है। तौबा तौबा।"

शक्ति नहाकर निकलने के बाद कपड़े बदल चुकी थी। और अब उसने अपने कानों में उँगलियाँ दे दीं।

यह देखकर सुंदरी जिस तरह तेज़ी से आई थी, उसी तरह तेज़ी से लौट गई।

28

उनका क़ाफिला जब खडूर पहुँचा तो रात हो चुकी थी। तब भी लंगर में जैसे उनकी इन्तज़ार हो रही थी। उन्हें परसाद छकाया गया। सोने से पहले चप्पा चप्पा मलाई वाला गर्म दूध भी पीने के लिये दिया गया।

लेकिन अमन कहाँ था ?

अमन तो कभी का परवोकी के लिये चला गया था। किसी ने बताया। यह सुनकर क्या भाई मूले की पत्नी, क्या सुंदरी और क्या शक्ति ,सभी को ऐसा लगा जैसे वह ठगी गई हों।

अगली सुबह गुरू महाराज के दर्शनों की प्रतीक्षा में सब लोग अमृत वेला में शब्द कीर्तन सुनने के लिये दीवान में हाज़िर थे।

गुरू अँगद देव जी महाराज सामने मसनद पर विराजमान थे। उनका रूहानी मुखड़ा दैवीव्यमान था उनके आसपास एक आभा मंडल था। एक प्रकाश था उनके चेहरे के इर्द गिर्द। सर पर सफेद दूधिया दस्तार, सफ़ेद दूधिया वस्त्र, मूँदे नयन, अपने भीतर लीन, स्थिर, जैसे कोई दिव्य मूर्ति हो।

दाँई तरफ़ बैठे सत्ता और बलवँड कीर्तन कर रहे थे। सत्ता जोड़ी बजा रहा था। बलवँड के हाथ में रबाब थी।

भै के चरण कर भाव के
लोइण सुरति करेइ ॥
नानकु कहै सिआणीए
इव कँत मिलावा होइ ॥

कीर्तनिये इस शब्द का इतनी श्रद्धा से गायन कर रहे थे कि उनका एक एक बोल साध सँगत को मुग्ध कर रहा था। जिस क्षण से सुंदरी शक्ति से बदतमीज़ी से पेश आई थी, उसे अपना अंतःकरण मैला मैला लग रहा था। गुरू महाराज की हाज़िरी में सिर नवाये, हाथ जोड़े जैसे वह क्षमा-याचना कर रही थी।

उस दिन दीवान में भाई खानू और भाई माहीया जी पधारे थे। उनके साथ उनका एक मित्र गोबिन्द भँडारी भी था। भाई खानू और भाई माहीया बाप बेटे थे। उनकी फ़र्माइश थी कि गुरू महाराज कोई ऐसा गुण बतायें जिसमें सभी गुण मौजूद हों। गुरू महाराज ने फरमाया, ईश्वर की भक्ति सब गुणों से बड़ा गुण है। यह नौ प्रकार की होती है (1) श्रद्धापूर्वक वाणी का श्रवण करना (2)स्वयं कथा करनी या कीर्तन करना (3) श्वास श्वास सिमरन करना (4)साध सँगत की टहल सेवा करनी (5)दान देना, लेने की लालसा का त्याग करना, (6) धर्मशाला में हाज़िर होना, (7) अपने को वाहिगुरू का दास

समझना, (8)वाहिगुरू को अपना मीत समझना, (9)सब कुछ वाहिगुरू को सौंप देना।

इसमें से प्रेम भक्ति उपजती है। दमकता नूरोनूर चेहरा, जीवन में उमंग। एक एहसास कि ईश्वर मेहरबान है। नेमतें बख़्शने वाला है। जो मंगे सो देवे।

अगला पड़ाव परा भक्ति का है। ईश्वर अपने भक्त के अँग सँग रहता है। जैसे कबीर जी के भगवान ने सारे कारज सँवारे। नामदेव जी के लिये छपड़ी बनाई। धन्ना भगत की गायें चराईं।

एकान्त पाते ही सुंदरी ने शक्ति से हाथ जोड़कर माफियाँ माँगनी शुरू कर दीं, उससे बदतमीज़ी हुई थी। वह शर्मिन्दा थी। शक्ति की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। आख़िर उसने वचन दिया कि वह सारी घटना पर मिट्टी डाल देगी, तब जाकर कहीं सुंदरी ने उसका पीछा छोड़ा।

अमन कभी का खडूर से रवाना हो चुका था, यह बात तेजी को अच्छी लगी। वह सोचने लगी, भाई मूले की बीवी अब वापिस करतारपुर लौटने से तो रही। अब उसके बेटे को कोई भरमा नहीं सकेगा। लेकिन यह सोचने के बाद अगले क्षण ही उसे अफसोस होने लगा। उसका दिल कह रहा था कि सुँदरी जैसी लड़की उसके हाथ से जाती रही थी। यह लड़की तो सारे मुहल्ले की रौनक होती।

न जाने क्यों भाई मूले की बीवी सोच रही थी कि अमन जान बूझकर उनके वहाँ पहुचने से पहले ही करतारपुर के लिये चल पड़ा था, रास्ते में भी उनकी मुलाक़ात नहीं हुई थी, क्या पता वह जानबूझ कर सुंदरी से कतरा रहा हो। इतने दिनों तक वह सुंदरी के अपहरण की सूचना पाकर भी नहीं पहुँचा था।

यह विचार आते ही अपने आप उसके भीतर से आवाज़ निकलती–कौन इस तरह की लड़की को मुंह लगायेगा, जो इतने दिनों तक पराये मर्द के साथ रह आई हो। और फिर पराया आदमी जो बलोच था। तौबा ! तौबा ! ये लोग तो जो भी करें वही कम है। अमन अब उसके हाथ से निकल चुका था। भाई मूले की बीवी का मन खिन्न हो उठा था। अपनी बेटी उसे अब ज़हर लगती थी। उसकी कोई बात उसे नहीं सुहाती थी। उसकी सुन्दरता एक श्राप थी। हर वक्त वह बेटी से चिढ़ी चिढ़ी रहती।

सुंदरी सख़्त परेशान थी। किसी को इस बात का विश्वास नहीं होता कि वह अभी तक अछूती थी, कँवारी थी, उसका सत्त, धर्म ज्यों का त्यों कायम था। शेरख़ान ने जिस ईमानदारी और शराफ़त का सबूत दिया था, खुद सुंदरी को ऐतबार नहीं आ रहा था। बाबा नानक का आशीर्वाद प्राप्त करने वाले शेरख़ान के परिवार में हर कोई गुरू बाबे का श्रद्धालु था।

शेरख़ान चाहता तो क्या नहीं कर सकता था? सुंदरी सोच सोच कर अचभित होती रहती। सत्गुरू ने अपने हाथों से उसकी रक्षा की थी, अब भी गुरू महाराज उसका एकमात्र सहारा थे। वह दोनों वक्त साध संगत में बैठी रहती। कई बार ऐसा भी होता था कि उसकी माँ, तेजी, मौसी और शक्ति कीर्तन सुनकर प्रसाद लेकर अपने ठिकाने की ओर चली जाती,

पर सुंदरी अपने अन्दर लीन होकर आँखें मूंद धर्मशाला से न हिलती। इसी तरह लंगर खा कर बाकी घर वाले लौट जाते। वह बर्तन माँजने, झाड़ू लगाने, पानी भरने की सेवा में जुट जाती।

बेटी को गुरू महाराज की सेवा टहल में जुटा देख कर खुश होने की बजाय उसकी माँ उसकी नुक्ताचीनी करती रहती –"तू इतनी देर तक कहाँ थी? तू धर्मशाला से सीधी यहाँ आया कर। लंगर में सेवा करने के लिये और लोग भी तो होते हैं, तुझे क्यों इतनी देर हो जाती है?"

"तू बार बार क्यों चल देती है? एक ही बार फ़ारिग होकर क्यों नहीं आती? तू लहँगा नीचे क्यों बाँधती है? जहाँ से गुज़रती है, तेरे पीछे जैसे कोई झाड़ू लगा रहा हो। तेरी चोली ऊँची क्यों होती जा रही है? अगली बार जब दर्ज़ी के जाये तो मुझे भी साथ लेती जाना। जूड़ा बाँधने की कोई ज़रूरत नहीं। चोटी अच्छी भली लगती है। सीधी सादी चोटी तुझसे नहीं हो सकती? शक्ति बीबी की ओर देख, उसके बाल कैसे सँभले रहते हैं। तेरा यह झाड़ झँखाड़ सँभाले नहीं सँभलता।

"कितना ऊँचा बोलती है। कितना ऊँचा हँसती है ! इतनी कौन सी बात है जो तू हर किसी के साथ करने के लिये बैठ जाती है। यह तूने फिर कोई खुशबू लगा ली है? मैंने तुझे कहा है, कँवारी लड़कियों को इत्र लगाना शोभा नहीं देता।"

"बीबी मैंने कोई इत्र नहीं लगाया। मेरे पास भला इत्र कहाँ से आयेगा? सुंदरी की आँखें डबडबा गईं।

"क्यों झूठ बोलती है। यह ख़ुशबू कहाँ से आ रही है?"

"बीबी, मैं बाबा जी की सौगँध खाकर कहती हूँ मैंने कोई खुशबू नहीं लगाई।"

"बकवास बँद कर। तुझे बहुत चालितर आ गये हैं, कैसे कैंची की तरह इसकी ज़बान चलती है? मुंह लगाई और काम न आई।"

"बीबी मैंने नहीं कोई ख़ुशबू लगाई," सुंदरी ने विद्रोह के लहजे में कहा।

"फिर झूठ ! फिर झूठ ! फिर झूठ ! " सुंदरी की माँ ने अपनी जवान जहान बेटी पर हाथ उठा दिया। एक, दो, तीन, चपेड़े उसके दाँये-बाँये गालों पर दे मारी।

साथ ही कमरे में तेजी और शक्ति बातें सुन रही थी। तेजी ने माँ बेटी के झगड़े में दख़ल देना मुनासिब नहीं समझा, लेकिन शक्ति एकदम उठ कर आ गई उसने सुंदरी की माँ को पकड़ कर दूर धकेल दिया।

सुंदरी के गाल पके हुये सिंदूरी आम की तरह लाल हो गये थे। उसकी आँखों से झरझर आँसू टपक रहे थे। बिट बिट आँखों से कभी अपनी माँ की और कभी शक्ति की ओर देखती। उसके भीतर की सच्चाई खड़ी होकर जैसे दुनियाँ भर को चुनौती दे रही हो।

उसकी माँ कुढ़ती, बड़बड़ाती हुई साथ के कमरे में चली गई। कितनी देर तक तेजी से अपने दुखड़े रोती रही। इधर शक्ति देर रात तक सुंदरी के मन को सान्त्वना दे रही थी।

सुबह जब वे जागी, बाहर धूप निकल आई थी। सुंदरी की माँ और तेजी कभी की कीर्तन सुनने जा चुकी थीं। सुंदरी चुपचुप अपने ख़्यालों में खोई थी। शक्ति उसके पास आकर कहने लगी "मौसी ठीक ही कलपती है, अरी कम्बख़्त, तुझ में से यह ख़ुशबू कैसी आ रही है?"

29

खडूर से कोई चार कोस दूर नौरंगाबाद गाँव में भाई जीवा नाम का एक गुरू सिक्ख रहता था। गुरू घर का बड़ा श्रद्धालु। गुरू महाराज ने एक दिन भाई जीवा की लंगर के लिये लाई खिचड़ी चखी और उसकी तारीफ़ की। भाई जीवा हर रोज़ खिचड़ी बना कर गुरू महाराज को भेंट करने लगा। उसका यह निमय बन गया। अपने हाथों से ईंधन बटोरता, आग जलाता, अपने हाथों से दाल चावल बीनता, अपने हाथों से खिचड़ी तैयार करता। जितनी देर तक खिचड़ी उबलती रहती, जपुजी साहब का पाठ करता रहता। उसे ढेर सी बाणी कँठस्थ थी, उसका गायन करता रहता। फिर खिचड़ी का देगचा, सर पर उठा कर खडूर के लिये चल पड़ता। वर्षा हो या कोई और मौसम, वह अपने नियम का पालन करता, उसकी खिचड़ी की सब तारीफ़े करते थे, ख़ास तौर पर गुरू महाराज। भाई जीवे की खिचड़ी की सब जगह तारीफ़ होती थी। मज़ाल है कभी नागा कर जाये। गर्मी हो या सर्दी, भाई जीवे की खिचड़ी की गुरू के लँगर में प्रतीक्षा होती रहती थी।

ईश्वर की करनी,एक दिन ऐसा तूफ़ान आया, ऐसी आँधी आई कि भाई जीवे के चूल्हे की आग ही नहीं जलती थी। सारी रात वर्षा होती रही थी। उसका बटोरा हुआ ईंधन वर्षा में भीग गया था। और अब तूफ़ान था कि थमने का नाम ही नहीं लेता था। आँधी सब चीज़ों को उल्टा उल्टा कर पटक रही थी। भाई जीवा बार बार चूल्हे में आँच लगाने की कोशिश करता, लेकिन आँच लगने में नहीं आ रही थी। इधर आँधी और वर्षा इतनी तेज़ थी कि वह गाँव में किसी पड़ौसी से आँच की एक चिंगारी भी माँग कर नहीं ला सकता था, ताकि अपने नियम का पालन कर सके। भाई जीवा बड़ा परेशान था। भला यह कैसे हो सकता है कि गुरू महाराज के लिये भाई जीवे की खिचड़ी न पहुँचे? भाई जीवा बार बार आकाश की तरफ़ देखता, बाहर वर्षा और तूफ़ान हर चीज़ को पटक रही थी।

तंग आकर वह सतगुरू का स्मरण करने लगा। यह प्रार्थना करने लगा कि किसी तरह तूफ़ान और वर्षा थम जायें और उसके नियम का पालन हो सके। वह हाथ जोड़कर थक गया पूरे दिन आँधी, तूफ़ान उसी तरह जारी रहा, वर्षा उसी तरह जारी रही। आसपास जल-थल एक हो गया था।

आख़िरकार वही बात हुई, उसी दिन न भाई जीवे के चूल्हें में आग जली, न खिचड़ी तैयार हुई। न वह घर से बाहर निकल सका, न खडूर साहब गुरू महाराज के सामने हाज़िर हो सका। "इससे अच्छा तो है कि आदमी मर जाये" इससे अच्छा तो है कि आदमी मर जाये भाई जीवे के मुंह से बार बार निकलता।

अगले दिन आकाश साफ़ सुथरा था। तूफ़ान जैसे कभी आया ही न था। वर्षा जैसे

हुई ही न हो। भाई जीवे के चूल्हे की आग भी जल गई, उसकी खिचड़ी भी पक गई। और हमेशा की तरह पतीले को पोने में लपेट कर वह खडूर के लिये चल पड़ा।

खडूर पहुँच कर भाई जीवा महाराज के हजूर में दीवान में हाज़िर हुआ। शर्मिंदा-शर्मिंदा लग रहा था। छोटा छोटा हो रहा था। उससे एक दिन का नागा हो गया था।

जब कीर्तन का भोग पड़ चुका, अपने गले में पल्ला डाल कर भाई जीवा गुरू महाराज से कल के नागे के लिये क्षमा याचना करने लगा। गुरू महाराज अपने सिक्ख के क्लेश से परिचित थे। उसे देखकर मुस्कराने लगे। अब भाई जीवा सिसकने लगा। उसने सोचा उसी में ही कोई ख़राबी थी कि उसकी अरदास नहीं सुनी गई थी। सत्गुरू तो घट घट के ज्ञाता हैं। हर किसी की मनोकामना पूरी करते हैं। लोक परलोक के रक्षक, वह चाहते तो अँधेरी की क्या मजाल थी कि वह न थमती। वर्षा की क्या मजाल थी कि वह न थमती।

जीवे के मुंह से एक शब्द सुने बग़ैर ही वे उसे समझाने लगे कि गुरू के सिक्ख को रब्ब की रज़ा में राज़ी रहना चाहिये। रब्ब की रज़ा में ही दान होता है, रब्ब की रज़ा में ही व्रत रखे जाते हैं। प्राणी को उसका हुक्म मानना चाहिये। रब्ब के नियम को बदलने वाले हम कौन होते हैं? स्त्री वही भाग्यशालिनी होती है जो पति की आज्ञा में चले। बेटा वही अच्छा होता है जो पिता का कहना माने। वही गुरू सिक्ख गुरू को भाता है जो रब्ब की रज़ा में रहे।

अभी गुरू महाराज भाई जीवा को उपदेश दे ही रहे थे कि साध-सँगत में एक हलचल सी महसूस हुई। आसपास खुसर-फुसर होने लगी। फिर एक गुरूसिक्ख आगे बढ़ा और गुरू महाराज के कान में फुसफुसाने लगा।

दरअसल बात यह थी कि फ़तेहाबाद से गुज्जर नाम का एक गुरूसिक्ख कई दिन पहले गुरू महाराज के दर्शनों के लिये हाज़िर हुआ था और उसने गुरू दीक्षा के लिये प्रार्थना की थी। गूज्जर पेशे से लोहार था। कहने लगा, वह रास्ता बताइये जिससे मेरा लोक-परलोक सुधर जाये। गुरू महाराज ने उसे उपदेश देते हुए फ़रमाया कि उसे अमृत वेला में उठकर एकाग्रो चित्त से जपुजी साहब का पाठ करना चाहिये। सिर्फ पाठ करना ही काफ़ी नहीं, इसके साथ ग़रीब ग़ुर्बों की सेवा भी ज़रूरी है। हर प्राणी के काम आना। और तीसरी ज़रूरी बात है अपनी कमाई का दसवाँ हिस्सा ज़रूरतमंदों में बाँटना, उसे भले काम में लगाना।

भाई गुज्जर ने सत्गुरू की नसीहत पल्ले बांध ली। हर रोज़ सुबह पौ फटते ही जपुजी साहब का श्रद्धापूर्वक पाठ करता। एक एक तुक पर विचार करता। दिन में अल्ले मुहल्ले में जिस किसी का कोई काम होता भाई गुज्जर खिले माथे से करता। दसों नाखूनों की मेहनत, सच्चा, सुच्चा जीवन अपने पेशे से जो भी कमाई होती, उसका दसवाँ हिस्सा ग़रीब ग़ुर्बों में बाँटता।

उसका जीवन खुशी से बीत रहा था कि भाई गुज्जर के गाँव के कुछ बे-क़सूर

नौजवानों को उस समय की सरकार ने कैद कर लिया। उन पर झूठी तोहमत लगाई गई थी। गाँव वालों ने पूरा ज़ोर लगाया, सरकार-दरबार में अर्ज़ियां डाली, लेकिन कोई सुनवाई न हुई।

गाँव वालों ने जब और ज़्यादा विरोध किया तो इलाक़े के अहंकारी हुक्मरान ने क़ैदियों को बेड़ियाँ डाल दी। किसी ने मुख़बरी कर दी थी कि गाँव वाले गुरूसिक्खों को छुड़ाने का मँसूबा बना रहे थे।

यह ज़्यादती देख कर भाई गुज्जर ने मन में ठान ली थी कि वह इस ज़ुल्म को और नहीं जारी रहने देगा। गुरू महाराज का उपदेश था कि ग़रीब ग़ुर्बे की मदद करनी है। बेसहारों का सहारा बनना है। और फिर एक रात वह क़ैदख़ाने की कोठरी में पहुँचने में सफल हो गया। यह बड़े जोखिम का काम था लेकिन वह किसी न किसी तरह कामयाब हो गया। इस काम में गुरू के कई श्रद्धालुओं ने उसकी मदद की।

क़ैदियों की कोठरी में पहुँच कर उसने अपने औज़ारों से एक एक करके सब की बेड़ियाँ कार्टी और जिस रास्ते से वह भीतर घुसा था, उसी रास्ते से सारे गुरूसिक्खों को क़ैदख़ाने से निकाल कर भाई गुज्जर ने उन्हें दूर किसी पराये देश में भिजवा दिया जहाँ उस वक़्त के हुक्मरानों की पहुँच नहीं थी।

ये सारे काम पूरे कर के भाई गुज्जर सुबह गुरू साहब के हज़ूर में हाज़िर हुआ। सरकारी आदमी उसका पीछा कर रहे थे, इसलिये भाई गुज्जर भेस बदल कर आया था।

गुरू महाराज तक भाई गुज्जर की शूरवीरता की ख़बर पहले से पहुँच चुकी थी। भेस बदल कर वह जिस जगह बैठा था, गुरू जी ने उसकी तरफ़ मेहर भरी नज़रों से देखा और उसे निहाल कर दिया।

इस तरह भाई गुज्जर का लोक परलोक सुधर गया। अब भाई गुज्जर उसी तरह भेस बदल कर गुरू घर में लंगर की सेवा करने लगा।

सुंदरी ने जब से भाई गुज्जर के बारे में सुना, उसे जैसे चाव चढ़ गया। लंगर की सेवा के बहाने वह पीछे रूक जाती और भाई गुज्जर के काम में हाथ बटाती रहती। सिर्फ़ सुंदरी ही नहीं, गुरू घर में और सिक्ख भी भाई गुज्जर के दीवाने थे। भाई गुज्जर ने दाढ़ी रख ली थी, सर के बाल बढ़ा लिये थे, गुरूसिक्खों ने ऐसा ही करना शुरू कर दिया था। वे न हजामत करवाते न ही सर के बाल कटवाते।

30

ज़िन्दगी के स्रोतों में जब कटुआहट आ जाती है तो सारा वातावरण विषभरा लगने लगता है। इसी तरह का कुछ भाई मूले की बीवी के साथ हो रहा था।

एक दिन ऐसा आया जब वे लोग जिन्हें वह अपना समझती थी, जिनके साथ उसने मुहब्बत की एक से ज़्यादा गाँठें डाल रखी थीं, एक एक करके उसे छोड़ने लगे।

सबसे पहले तेजी गई। कई लोग करतारपुर जा रहे थे। उनके साथ वह भी तैयार हो चल पड़ी, उसने एक बार भी भाई मूले की बीवी को अपने साथ चलने के लिये नहीं

कहा। उसका बेटा करतारपुर जा चुका था। अगर उसने लौटना होता तो वहाँ अपनी माँ को न देखकर वह कभी का लौट आया होता। इतने दिन बीतने पर भी वह नहीं लौटा। वह और कितने दिनों तक राह देखती? सुंदरी की माँ ने इशारों ही इशारों से उसे रोकने की कोशिश की, लेकिन वह न मानी। तेजी सोचती थी कि अमन की अनुपस्थिति में उन लोगों का खडूर साहब चले जाने के बावजूद भी वह करतारपुर से नहीं चला तो इसका मतलब साफ़ था, अर्थात उसे शक्ति में कोई दिलचस्पी नहीं थी, जहाँ तक सुंदरी का सवाल था, शैली से उसकी कहानी सुनकर उसने यही मुनासिब समझा होगा कि जहाँ तक मुमकिन हो उसे इस लड़की से दूर ही रखा जाये। बड़ा समझदार लड़का था। और अब तो उसे गुरू महाराज की निकटता पर भी मान था, उनका आशीर्वाद प्राप्त था।

तेजी को गये कुछ ही दिन हुए थे कि दुनीचंद ने शक्ति को लाहौर वापिस ले आने के लिये अपने एक साले को भेजा। लड़की को घर से निकले बहुत दिन गुज़र गये थे। माधोमल पहले करतारपुर गया। वहाँ यह सुनकर कि शक्ति खडूर चली गई थी, वह खडूर आ पहुँचा था।

सनकी सी तबीयत का आदमी था। करतारपुर से वह सुंदरी के बारे में सब कुछ सुन आया था। उस दिन भाई मूले की बीवी को अकेला पा कर अपनी सहानुभूति जतलाने लगा।

"बड़ा जुल्म हुआ है बीबी तुम्हारी बेटी के साथ। मैं उस बेचारी की व्यथा करतारपुकर से सुन आया हूँ। इस तरह क्वाँरी कँजक को भगा कर ले जाना कितना अन्याय है। मुग़ल बुरे थे, यह सूरी आया तो हमने सोचा शायद चैन की साँस लेनी मिलेगी, ये तो उनसे भी गया गुज़रा है। ग़ुलामी बहुत बड़ी लानत है। कोई करे भी तो क्या। बाबा नानक ने खुद इन लोगों को वर दिया था। मुग़लों को निकाल कर सूरियों को हमारे सर पर बैठा गये हैं। ये जायेंगे तो मुग़ल फिर आ धमकेंगे। हमारी क़िस्मत में तो ग़ुलामी ही लिखी है। हमारी माँ-बहनों की इज्ज़त इसी तरह लुटती रहेगी।

"बीबी, यह सोच सोच कर मेरा दिल तो डूब जाता है कि जवान जहान शादी के क़ाबिल को ज़ालिमों ने ख़राब किया है। मैं तो कहता हूँ कि अगर ऐसे ख़राब करना था तो लड़की से शादी ही कर लेते। इतने दिन एक जवान लड़की को इस तरह इस्तेमाल करके वापिस लौटाना जैसे कोई दूध के ऊपर से मलाई उतार कर खा ले।

यह सब सुनकर सुंदरी का मन खो रहा था। उसका जी कर रहा था कि अपने बाल नोंच डाले, कपड़े फाड़ कर कहीं निकल जाये, कानों में उँगलियाँ डाल ले, कहने वाले का मुंह सिर नोंच ले। लेकिन शक्ति का मामा तो लगातार बोलता जा रहा था।

"मैं तो सोच सोच कर हैरान हो रहा हूँ। गुरू बाबे ने बड़ी मेहर की है; अगर, यह सब हमारी बेटी के साथ होता, हम लोग तो फिर कभी उसे मुंह न लगाते। घर से निकाल देते। जहाँ मर्ज़ी हो चले जाये। चाहे उसी के घर जाये जहाँ इतने दिन बिताकर आई थी। बेशक वहीं लौट जाये। इसी तरह जूठी की गई बहन बेटी का कोई क्या करेगा। फिर

एक बात और भी है, अगर लड़की की मर्ज़ी न हो तो कोई सब कुछ कर सकता है, लेकिन बलात्कार नहीं कर सकता। हमने तो इस तरह के कई मामले देखे सुने हैं। तफ़तीश करने पर हमेशा यह ही पता चला कि लड़की ने शुरू में तो बेशक ना-नुकुर की, फिर हथियार फेंक दिये। यह बात पक्की है कि लड़की की मर्ज़ी के बग़ैर कोई किसी के साथ व्यभिचार नहीं कर सकता।

मूले की बीवी का एक रँग आता एक रंग जाता। वह बार बार अपना दांत पीस रही थी। लेकिन लाहौर से आया शक्ति का मामा जैसे उसकी तरफ़ बिल्कुल ध्यान नहीं दे रहा था, बोलता जा रहा था, बोलता जा रहा था।

''मैं पूछता हूँ अगर किसी लड़की पर इस तरह की विपदा आ पड़े, मैं यह नहीं कहता कि इस तरह की वारदातें नहीं होती-अगर किसी बहन-बेटी पर इस तरह की मुसीबत आ जाये तो लड़की को जानपर खेल जाना चाहिये। हमारे इतिहास में इस तरह होता रहा है। हमारी लड़कियाँ अपनी जानें दे देती थीं, लेकिन अपना सत्त धर्म नहीं गँवाती थीं। हमारे समाज में इस तरह की लड़की की कोई जगह नहीं, इस तरह की लड़की हमारे चौके पर नहीं चढ़ सकती ......।''

सितम यह हुआ कि जिस वक्त माधोमल इस तरह जो मुँह में आया बोल रहा था, उस वक्त बाहर आँगन में खड़ी सुंदरी यह सब सुन रही थी। उस दिन उसकी तबियत ढ़ीली थी। वह लंगर की सेवा शक्ति के हवाले करके घर लौट आई थी। लाहौर से आया मेहमान एक ही साँस में बोलता जा रहा था।

हमारे शहर, हमारे अपने मुहल्ले की एक लड़की की एक तुरकड़े ने पत्त उतारी, वह कुएँ में छलाँग लगा कर मर गई। एक और लड़की के साथ ऐसा हुआ, उसने अपने शरीर पर तेल छिड़का और आग लगा ली। देखते ही देखते झुलस गई, भस्म हो गई। एक और थी, उस पर तो लोगों ने दूर से ही आवाज़ कसी थी, बेचारी लड़की ने ज़हर फाँक कर अपनी जान दे दी। एक हमारी पड़ौसिन थी।

''बस कर मामा बस कर सुंदरी गुस्से से झागोझाग हुई भीतर आई और माधोमल पर टूट पड़ी। सुंदरी पर जैसे कोई जिन्न सवार हो गया हो। देखते ही देखते उसने अपने नाखूनों से शक्ति के मामे का चेहरा लहू लुहान कर डाला। उसकी माँ ने उसे पकड़ कर दूर धकेला और सुंदरी ने अपने कपड़ों को फाड़ फाड़ कर चिथड़े करना शुरू कर दिया। अपने बाल नोंच रही थी, और मन मन भर की गन्दी गालियाँ बक रही थी, जो भी सामने आता उसे धक्का देकर पीछे गिरा देती। बर्त्तन तोड़ने लगी। कमरे के थम्बे को पकड़ कर खड़ी हो गई। और कहने लगी कि वह ख़म्ब को गिराकर खुद भी दब जायेगी, बाकी सबको भी ख़त्म कर देगी। आगे पीछे कई लोग जमा हो गये, किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। इतनी सुंदर, इतनी प्यारी, इतनी सुशील लड़की को क्या हो गया था। सुबह तो चँगी भली थी। कीर्तन में शामिल हुई थी। फिर उन लोगों ने उसे लंगर की सेवा करते देखा था।

और अब सामने अपने तार तार कपड़ों में खड़ी सुंदरी सबको ललकार रही थी, ऊँचा ऊँचा बोलती जा रही थी ।

"मैं गुरू बाबे को हाज़िर नाज़िर करके कहती हूँ कि मैं ज्यों की त्यों अछूती कँवारी हूँ । शेरख़ान की बीवियों ने फूल की तरह मुझे अपने घर में रखा । एक देवी समझ कर मेरी देख रेख की । शेरख़ान गुरूसिक्ख है, मुसलमान है तो क्या ! वह बाबा नानक को अपना पीर समझता है । वह तो हमारे कई लोगों से बेहतर गुरूसिक्ख है उसके जैसा भलामानुस तो मैंने न कोई देखा है न ही सुना है । अपनी जान पर खेल कर उसने मुझ डूबती हुई को बचाया ....।"

सुंदरी इस तरह बोल रही थी । आसपास खड़े लोगों में से हर कोई यही कहते हुये "भला कोई मुसलमान कैसे अच्छा हो सकता है !" सिर हिलाते हुए वहां से खिसकने लगा ।

"जिस तरह शेरख़ान ने मुझे ढ़क मूँद कर शैली के हवाले कर दिया, सुंदरी ने आवेश में आकर फिर बोलना शुरू ही किया था कि उसकी माँ ने आगे बढ़ कर एक ज़ोर का थप्पड़ उसके मुँह पर मारा और जैसे ज़हर उगला, "तो फिर मुणसपिट्टी, कुलहीणिये तू फिर उसी के पास क्यों नहीं चली जाती? मेरा पीछा क्यों नहीं छोड़ती, कुलच्छनी ! एक को खा चुकी है, दूसरे को छोड़ आई है ; तू मर क्यों नहीं गई ....?"

अपनी माँ के ऐसे कुबोल सुन कर सुंदरी हक्की-बक्की रह गई । तो वह बेदाग़ है, इस बात पर ऐतबार किसी को भी नहीं आ रहा था। उसकी अपनी माँ को भी नहीं । सुंदरी ने क्षणभर के लिये आँखें मूंदी, फिर उसी हालत में बाहर निकल गई ।

31

उसकी ग़ैर हाज़िरी में जो कुछ भी हुआ था उसकी ख़बर शक्ति को ठिकाने पर लौटने से पहले ही मिल चुकी थी । अब वह उस कीचड़ में ओर धँसने के लिये तैयार नहीं थी । सुंदरी की माँ सुंदरी को तलाश करने के लिये खज्जल ख्वार हो रही थी, इतने में शक्ति ने अपने मामा के साथ लाहौर जाने की तैयारी शुरू कर दी ।

सुंदरी का कोई सुराग़ नहीं मिला, न जाने कहाँ लुप्त हो गई थी । शक्ति ने एक दो दिन इन्तज़ार की, फिर वह अपने मामे के साथ चल पड़ी । भाई दुनीचन्द की तबीयत भी ढ़ीली रहने लगी थी । शक्ति का तुरँत लाहौर पहुँचना बहुत ज़रूरी था । किसी वक्त भी कुछ हो सकता था ।

और फिर सुंदरी चाहे लाख कहती फिरती थी कि वह अछूती कँवारी है उसका सत्त धर्म ज्यों का त्यों क़ायम है, लेकिन शक्ति का अन्तर्मन यह मानने के लिये बिल्कुल तैयार नहीं था । इस बात का ख़्याल आते ही "वह बकती है" कहकर इस दुखभरे कांड को भूलने की कोशिश करती । शक्ति तो एक तरफ़ रही, खुद सुंदरी की माँ को सुंदरी की बात पर ऐतबार नहीं आता था । बल्कि जब भी उस की बेटी अपनी पवित्रता का दावा करती, वह और भी चिढ़ जाती थी ।

शक्ति चली गई। भाई मूले की बीवी अपनी बेटी को आसपास के गाँवों में तलाश करती तंग (दुखी) होती रहती।

इधर शक्ति खडूर से रवाना हुई उधर अमन करतारपुर से आ गया। दो चार दिनों का फ़र्क था। ज़िन्दगी अजीब आँख मिचौली खेल रही थी। ये लोग करतारपुर से चले तो अमन करतारपुर पहुँच गया। अब तेजी और शक्ति जब खडूर साहब से रवाना हो चुकी थीं तो अमन खडूर साहब पहुँच गया था।

सुंदरी की माँ थकी हारी, बेहाल बैठी इस बात का फ़ैसला नहीं कर पा रही थी कि वह अपनी बेटी का दुखड़ा गुरू महाराज के आगे जाकर कैसे रोये। उसने सोचा, घट घट के ज्ञाता गुरू अँगद देव जी से कौन सी बात छिपी थी, अपने अपने कर्मों का फल होता है। उसे बाबा नानक ने श्राप दिया था। उसने गुरू बाबे के साथ ग़लतबयानी की थी। जब साँप डसने के बाद उसके पति की लाश को वे लोग गुरू नानक के पास इस लिये लेकर गये थे, कि बाबा उसकी भूल को माफ कर दें तो गुरू महाराज ने वादा किया था कि मैं दसवें जामें में इसका उद्धार करूँगा। लेख पार मेख मारने के लिये वे तैयार नहीं हुये थे। वे कभी क़ुदरत के क़ानून में दख़ल नहीं देते थे। सुंदरी की माँ सुबह शाम गुरू अंगद देव जी के दीवान में शामिल होती थी, हाथ जोड़ कर अरदासें करती थी। वह बार बार अपने मन को समझाती कि गुरू महाराज से कौन-सी बात छिपी है।

अमन भी इस बात से सहमत था। वह कहता था – लड़की ने कहाँ जाना है? यहीं कहीं होगी। आस पास ढूंढने से मिल जायेगी यह भी तो हो सकता है कि कही छिपी हो, जब ग़ुस्सा ठंडा होगा, लौट आयेगी।

यह सुनकर माँ को धीरज बंध जाता। हौसला तो उसका अमन को देखते ही बुलंद हो गया था। अमन बेटों की तरह सुंदरी की माँ की ख़िदमत में लगा रहता था। जब वह गुरू महाराज के यहाँ हाज़िर हुआ तो उसे गुरूबाणी की नकलें तैयार करने पर लगाया गया, गुरू महाराज गुरू नानक देव जी की बाणी को इकट्ठा करते रहते थे। ज्यों ज्यों बाणी उनके हाथ आती उसकी पड़ताल करके, गुरूमुखी में उसकी प्रतिलिपियाँ तैयार करवाते रहते। अमन को नागरी लिपि का भी ज्ञान था, फारसी लिपि का भी और करतारपुर में उसने गुरूमुखी लिपि तो सीख ही ली थी। अनेक यात्री ऐसे आते थे जिन्हें गुरूमुखी लिपि का ज्ञान नहीं होता था। अमन उनके लिए फारसी या नागरी लिपि में भी बाणी की प्रतिलिपि तैयार कर देता था। गुरू महाराज के दरबार में इस तरह के और भी लिखारी थे। लेकिन अमन की लिखावट सबसे बढ़िया थी। ऐसा लगता था जैसे मोती परो रहा हो।

अमन के अलावा एक और केशधारी लड़का था, जिसके अभी दाढ़ी मूँछ नहीं आई थी। अपना नाम केसर बताता था। इन दोनों में लिखावट देखकर लोग अचम्भा करते रहते थे।

भाई मूले की बीवी को भी स्यालकोट से लगातार संदेश आने लगे थे, लेकिन वह इस हालत में कैसे लौटती फिर खडूर में अमन था, जैसे उसकी कोख से जन्मा हो। उसका

कितना ध्यान रखता था ।

लेकिन पिछले कुछ दिनों से अमन एक और झँझट में फँसा था । किसी ने सूबेदार के पास जाकर मुख़बरी की थी कि फ़तेहाबाद का गुज्जर नाम का लोहार खडूर में छिपा हुआ है । क़ैदियों की बेड़ियाँ काट कर उन्हें फ़रार कर देना भला हकूमत कैसे नज़र अँदाज कर सकती थी । हकूमत के अहलकार तफ़तीश करने के लिये खडूर में छावनी डाल कर बैठ गये, शहरियों को परेशान करने लगे । हलकाये कुत्तों की तरह गली गली में घूमते रहते । घर घर की तलाशी लेते । कई नौजवानों को पकड़कर उन्होंने अपनी चौकी में बैठा लिया था । इनमें अमन भी शामिल था ।

अमन बार बार कहता कि उन दिनों तो वह करतारपुर में था, कुछ दिन पहले ही यहाँ आया था, लेकिन अहँकारी हाकिमों ने उसकी एक न सुनी यही कहते, तेरी रिहाई की एक ही शर्त है, गुज्जर लोहार को पेश कर या फिर उसकी ख़बर ला कर उसे दे ।

भाई मूले की बीबी के लिये एक और मुसीबत आ खड़ी हुई । शहर भर में घोर आतंक छाया था ।

एक दिन अमन का साथी कातिब केसर उससे मिलने आया, एकान्त पाकर उसने अमन के कान मे फुसफुसा कर कहा कि उसे गुज्जर मालूम है कि गुज्जर लोहार कहाँ है । यह सुनकर अमन ने उसे ख़ामोश कर दिया । वह नहीं चाहता था कि उसे इस राज़ का पता चले जिसे छुपाने के लिये उसे झूठ बोलना पड़े, गलत बयानी करनी पड़े ।

सूबेदार अहलकार और प्यादों में से किसी की इतनी हिम्मत नहीं थी कि जाकर बाबा नानक के जानशीन से पूछें, लेकिन सूरी हकूमत को यह गिला ज़रूर था कि गुरू नानक ने मुग़लों को वरदान दिया था कि हिन्दोस्तान में फिर उन्हीं की हकूमत होगी । वे इस बात को भुला चुके थे कि शेरशाह सूरी को ''मर्द का चेला'' भी तो नानक ने ही कहा था । और जब हुमायुँ उनकी हजूरी में आया था तो उन्होंने तल्कीन की थी कि वह और मुक़ाबला करने का ख़्याल छोड़ दे । इस बार वह हार कर भागा था, अब और ख़ज्जल ख़्वार न हो और कान लपेट कर इस देश से चला जाये ।

जो शिकायत मुग़लों को गुरू घर से थी, वही शिकायत सूरिओं को भी गुरू नानक गुरू अंगद से थी । बाबर के हमले के दौरान हुए अत्याचारों के ख़िलाफ़ बाबा नानक ने विद्रोह की आवाज़ उठाई थी । हमलावरों को गुरू बाबे ने ''कुत्ते '' तक कहा था ''रतन बिगाड़ि विगोए कुत्ती मुइआ सार न काई । ''जब जब भी सूरीयों का सिंहासन डोलता उन्हें गुरू नानक के उस वादे की याद आ जाती जो गुरू बाबे ने मुग़लों से किया था ।

शहर में कितने दिन तक आतंक छाया रहा । घरों की तलाशीयाँ ख़त्म होती तो सिपाही शहर से बाहर नाकेबंदी करके बैठ जाते । बहुत दिनों तक उन्होंने शहर के गिर्द घेरा डाले रखा । लेकिन गुज्जर लोहार की मुख़बरी करने की मजाल किसी में नहीं थी ।

गुरू अंगद देव सर्वज्ञ थे लेकिन वे सूरीयों को मुंह नहीं लगाना चाहते थे । उन्हें अभी ढेर सा और काम करना था । वे बाबा नानक की बाणी को संभालने के लिये दौरे पर

जाने की तैयारी में थे। और फिर कई जगहों से संगतों के तकाज़े आ रहे थे कि गुरू महाराज उनके शहर, उनके क़स्बों, उनके गाँवों में चरण डाल कर उन्हें निहाल करें।

32

अमन को गुरू महाराज के साथ दौरे पर निकले कई दिन बीत चुके थे। जहाँ कहीं कोई बताता भाई मूले की बीवी अपनी बेटी की तलाश में जाती। ख़ज्जल ख़्वार हो रही थी। अकेली औरत रातभर छाज छाज आँसू बहाती रहती। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आख़िर उसे किस गुनाह की सज़ा मिल रही थी।

आस पास के हर गाँव में जाकर जब वह थक हार गई, तो उसे इस बात का निश्चय हो गया कि सुंदरी ने किसी कुएँ में छलाँग लगा कर या फिर ब्यासा नदी में डूब कर जान दे दी थी। और उसने मन ही मन फ़ैसला कर लिया कि अमन के खडूर वापिस लौटते ही वह उसे अपने साथ लेकर स्यालकोट लौट जायेगी।

अमन को मन ही मन अपना दामाद मान चुकी थी। क्या हुआ अगर उसकी बेटी नहीं रही थी। वह अमन को बेटों की तरह अपने साथ रखेगी। अपना सारा काम काज उसके सुपुर्द कर देगी। लेकिन सवाल यह था-क्या अमन राज़ी होगा? गुरू महाराज की सेवा छोड़ कर वह इतनी दूर उसके साथ चलने के लिये तैयार भी होगा?

कभी भी नहीं। उसे तो ईश्वर की लौ लगी हुई थी। भला वह क्यों खडूर जैसे स्वर्ग को छोड़ कर उसके साथ कारोबार के झमेलों में पड़ने लगा और फिर पीछे उसकी माँ थी जिसका वह एकलौता बेटा था। कभी ऐसा भी हुआ है कि बेटी के बग़ैर कोई किसी को घर जमाई बना ले।

उसकी समझ में कुछ न आता। भाई मूले की पत्नी सारी रात रोती रहती। हाय दुहाई मचाती रहती। जब सुबह शाम-सँगत में आती तो उसकी आँखें सूजी रहतीं। दिनों दिन कमज़ोर पड़ती जा रही थी। बुरे हाल और बाँके दिहाड़े। कभी बाल सँवरे होते, कभी यूँ ही बिखरे रहते। साध सँगत में एक कोने में दुबके हुए केसर को उसपर बेहद तरस आता।

कई बार रात को वह चुपके से टहलता टहलता उधर आ निकलता और भाई मूले की बीवी को इस तरह बिलखते और विलाप करते सुनकर उसे बड़ा दुख होता। उसके जी में आता कि वह साफ़ा उतार कर फेंक दे और माँ की लाडली बेटी आकर उस के क्लेश को समाप्त कर दे। लेकिन अगले क्षण अपने पर लगी तोहमत के ख़्याल से वह अपना मन बदल देता - सुंदरी सोचती जब तक क़ुदरत उसे उस कलंक से छुटकारा नहीं दिलाती, उसका कल्याण संभव नहीं था। दो चार दिनों में ही हर किसी को उसमें से बदबू आने लगी। दो चार दिनों बाद उसकी माँ उसे फिर गुनाहगार कहना शुरू कर देगी। दो चार दिनों में लोग उस पर "थू-थू" करने लगेंगे।

उस रात उसकी माँ की हालत बहुत ख़राब थी। रो रो कर थक गई थी। विलाप कर करके बेहाल हो रही थी। उस रात सुंदरी से न रहा गया और गली वाले झरोखे में से वह

धीमे स्वर में फुसफुसाई–''माता जी, मैं अछूती कँवारी हूँ। एक बार, दो बार तीन बार, भाई मूले की पत्नी को अपने कानों पर ऐतबार नहीं आ रहा था। कमरे में घुप्प अँधेरे में उसने आगे पीछे आँखें फाड़ फाड़ कर देखा। कोई भी तो नहीं था। वह सोचने लगी यह सिर्फ़ छलावा था। उसके कान बोल रहे थे।

''नहीं, नहीं वह कँवारी नहीं हो सकती।''अब सुंदरी की माँ ने अपने आप से कहना शुरू कर दिया, ''वह कँवारी कैसे रह सकती है? इतने दिन बलोच के घर रह कर आई, वह अछूती कँवारी कैसे हो सकती है ? झूठ बकती है। बलोच तो कामवासना में पनपता है, वहशत में प्रफुल्लित होता है। वह कँवारी नहीं हो सकती।''

केसर ने सुना तो वह उन्हीं क़दमों से अपने ठिकानें पर लौट गया। सचमुच सिवाय गुरू महाराज की मेहर के उसे इस कीचड़ में से कोई जो उसके चेहरे को लथपथ कर रहा था छुटकारा नहीं दिला सकता था।

एक बेटी के प्यार की ललक, हर दूसरे-चौथे दिन केसर रात के अँधेरे में भाई मूले की पत्नी की खोज ख़बर लेने आता, उसे बिलख़ता देख कर परेशान होता रहता, लेकिन जब तक माँ को बेटी की पवित्रता पर विश्वास नहीं हो जाता, सुंदरी सोचती वही क्लेश फिर शुरू हो जायेगा जो उसके बीच टकराव पैदा करता था। तब भी जब उसे मौक़ा मिलता वह गली वाले झरोखे में से धीमे स्वर में फुसफुसाती–''मैं अछूती कँवारी हूँ।''''मैं अछूती कँवारी हूँ '' मैं अछूती कँवारी हूँ। इससे पहले कि ये बोल माँ के दिल में घर करते और वह संभलती, केसर चुपचाप वहाँ से खिसक जाता।

कई बार ऐसा हो चुका था। कई बार उसने ये बोल रात के अँधेरे में सुने थे। भाई मूले की पत्नी अब सोचने लगी थी–मेरी बेटी ने ज़रूर आत्महत्या कर ली है। यह उसकी आत्मा है जो बार बार आकर अपनी सच्चाई पेश करती है। फिर वह सोचने लगती रूहें तो कभी झूठ नहीं बोलती क्या पता वह खुद ही ग़लत हो। उसने बेकार ही अपनी जाई को गँवा दिया था।

एक दिन ऐसा हुआ सुबह अमृत वेला में शुरू हुआ कीर्तन समाप्त हो चुका था, अरदास प्रार्थना भी समाप्त हो गई थी, सब उठकर अपने घरों को चल दिये थे। भाई मूले की बीवी जहाँ बैठी थी, वहीं बैठी रही। जैसे कोई मँत्र मुग्ध हो गया हो। धर्मशाला के एक कोने में उसे अचल बैठा देख कर किसी गुरूसिक्ख की नज़र उस पर जा पड़ी। उसने नज़दीक जाकर आवाज़ दी, जब कोई जबाव न मिला तो उसने कंधा झकझोर कर कहा– ''माई जी, कीर्तन का भोग पड़ चुका है।'' वह कह रहा था, लेकिन भाई मूले की पत्नी तो गठरी की तरह अचल बर्फ़ की तरह ठंडी पड़ी थी।

यह देख कर शोर मच गया। कई लोग इकट्ठे हो गये। कोई कुछ कह रहा था, कोई कुछ कह रहा था। उसके हाथों, पैरों को सहलाया जा रहा था, उसके मुंह पर छींटे मारे जा रहे थे। सब ''सत्तनाम श्री वाहिगुरू '' ''सत्तनाम श्री वाहिगुरू'' का जाप कर रहे थे। गुरू सिक्खों को हाथ पैर पड़ गये थे अफरा तफरी मची हुई थी। कुछ लोग वैद्यजी को,

कुछ हकीम को बुलाने चले गये थे। इतने में केसर को इस हादसे की ख़बर मिली। वह तेज़ी से आया और चौफाल पड़ी हुई भगतनी को उसने अभी हाथ ही लगाया था कि भाई मूले की पत्नी ने अपनी आँखें खोल दीं। आसपास इकट्ठे हुए लोगों की जान में जान आई। भीड़ में से केसर दबे पाँव खिसक गया। धर्मशाला से बाहर निकलते वक्त उसकी आँखें डबडबा रही थी।

अमन की ख़ैरीयत की कोई ख़बर नहीं थी। गुरू महाराज के दौरे के बारे में सूचना खडूर में पहुँचती रहती थी।

खडूर साहब से गुरू अँगद सुलतानपुर पहुँचे। वैरोवाल नाम के घाट पर उन्होंने ब्यास नदी पार की। सुल्तानपुर से वे मक्खू पहुँचे। मक्खू से ज़ीरा फिर हरीके ! इसके बाद शेख़ तथा अन्य स्थानों से होते हुए उन्होंने हर पत्तन के रास्ते से खडूर लौटना था।

इस तरह कई हफ़्ते और गुज़रने वाले थे। इधर सुंदरी की माँ की हालत दिनों दिन बद से बदतर होती जा रही थी।

उस दिन साध-सँगत में बैठी कीर्तन सुनती हुई एकाग्र चित्त से गुरू महाराज के चरणों से जुड़ी वह एक अकथ्य रस का अनुभव कर रही थी कि जैसे खुशबू का एक झोंका आया, उसे लगा सुंदरी उसके पास आ खड़ी हो गई थी। यह तो उसकी जाई की सुगंध थी। वही खुशबू भीनी भीनी एक अछूती कंजक की। लाडों में पली। आँखों में एक खुमार, नग़में से मुरतरन्नुम लब। जैसे गेहूँ की पक्की बाली। खुशबुओं से लदे, खुले बाल, जैसे आलिंगन में समा रहे हों।

और अचानक वह "सुंदरी" "सुंदरी" पुकार उठी। जहाँ बैठी थी वहीं आसपास अपनी बेटी को ढूंढने लगी। आँखें फाड़ फाड़ कर देख रही थी।

क्षण भर के लिये कीर्तन में विघ्न पड़ गया। लेकिन जब गुरू सिक्खों ने देखा कि यह तो वही औरत थी जो उस दिन बैठी बैठी ठँडी हो गई थी, तो उन्होंने पूर्ववत् अपना भजन पाठ शुरू कर दिया।

अपने एकान्त कोने में बैठे केसर को यह देखकर बड़ा तरस आया।

33

सूर ख़ानदान के हुक्मरान यह बात नहीं भूले कि गुज्जर लोहार गुरू अंगद देव जी का अनुयाई था और उनकी शिक्षा के कारण क़ैदियों की बेड़ियाँ काट कर उन्हें बँदीखाने से छुड़ा कर ले गया था। कोई न कोई हाकिम खडूर में आया ही रहता था। इधर उधर, उँगलियों से इशारे करता रहता, जगह जगह सूँघता फिरता। गुरूसिक्ख मन ही मन बाबा नानक को याद करके एक दूसरे के कान में फुसफुसाते :

रतन विगाड़ि विगोए कुत्ती
मोइआ सार न काई।

उन दिनों इसी तरह का कोई हाकिम खडूर साहब में आया हुआ था। उसके साथ उसका परिवार भी था। बेग़म और एक जवान जहान बेटी। माँ बेटी एक दिन सुबह

धर्मशाला में कीर्तन करने आईं। चूँकि गुरू महाराज अभी अपने दौरे से नहीं लौटे थे, इसलिये हाकिम खुद नहीं आया था।

बेगम भी कोई कम सुंदर नहीं थी लेकिन उसकी बेटी तो जैसे आसमान से उतरी परी थी, दमकता हुआ चेहरा मोटी मोटी काली आँखें, आँखों में मचल रहे लाखों जादू, घने काले बालों की बिखरी हुई लटें संभाले नहीं सँभल रही थीं। सुच्चे रेशमी कपड़ों में लगता था कि वह आँख झपकते ही उड़ने लगेगी। उड़कर किसी सितारे पर जा बैठेगी। खिली हुई चंबे की कलियाँ बरसाती हुई। माँ बेटी जब साध-संगत में आई तो ऐसा लगा जैसे फूलों से लदे किसी बग़ीचे के दरीचे खोल दिये हों एक खुशबू सी चारों तरफ फैल गई।

हर वृत्ति खुल गई। हर पलक जैसे खुल गई। चूँकि वे दिन चढ़े आई थीं, उन्हें आख़िरी पँगत में कहीं बैठने की जगह मिली, उस कोने में जहाँ आँखें मूँद कर केसर छिपकर समाधि में बैठा करता था।

कुछ देर बाद केसर को ऐसा महसूस हुआ जैसे जाड़े की धूप की गुनगुनी किरणें उसकी पलकों के साथ कल्लोलें कर रही हों। कोई खुशबू सी उसके नथुनों को सहला रही थी। कोई उसके कान में गोशे कर रहा था। केसर ने आँखें खोलकर देखा, सामने एक मूरत जैसे एकटक उसकी ओर देखे जा रही थी। एक ही नज़र में उसने पलकें मूँद ली। मूँद तो ली, लेकिन उसे महसूस हुआ जैसे उसके अंगअंग में कोई अलौकिक नगमा लहरा रहा हो। एक झँकार थी, चारों तरफ़। ऊँची और ऊँची हो रही थी। उसे गुरबाणी के गाये जा रहे बोल सुनाई नहीं दे रहे थे। चौकी भर रहे जोटीवालों के छैने, ढोलकी की आवाज़ नहीं सुनाई दे रही थी। फिर खिला खिला लाख नाज़ों में पला, एक हिलोर में, एक एक माधुकता से छलकता हुआ किसी का जोबन उसकी आँखों के सामने तैरने लगा। केसर की पलकें खुलने के लिये आतुर थीं; उन्हें और मूँद कर नहीं रखा जा सकता था। तभी उसे ऐसे लगा जैसे किसी ने चँबे की कलियों से भरी पिटारी उसके सर पर उलट दी हो। केसर ने आँखें खोली, मँद मँद मुस्करा रहा वह चेहरा जैसे एकदम खिल उठा।

उसके देखते ही देखते उस परीवश चेहरे में अपने ओठों को इस तरह समेटा जैसे कोई प्यार करने के लिए तिलमिला रहा हो। बेचैन हो उठा हो। केसर अपने को मैला मैला महसूस करने लगा। यह हो क्या रहा था? धर्मशाला के पवित्र वातावरण में यह क्या नाटक खेला जा रहा था? इस बार उसने पलकों को कसकर ऐसा मूंदा कि फिर नहीं खोला।

भोग पड़ा। शब्द चौकी की अरदास हुई। साध-संगत अपने अपने ठिकानों पर लौट गई। केसर अभी तक ज्यों का त्यों समाधि में लीन बैठा था। जब उसने आँखे खोली तो धर्मशाला ख़ाली थी।

केसर सारा दिन उस हसीन चेहरे को भुलाने की कोशिश करता रहा। कभी उस पर तरस आता कभी मुस्कान फूट निकलती। उस रात उसे अजीब अजीब सपने आते रहे। अगले दिन पौ फटने पर नहा धोकर वह धर्मशाला में अपनी रोज़ की जगह पर आकर बैठ गया।

कीर्तन अभी थोड़ी देर पहले ही शुरू हुआ था कि उसे फिर उसी खुशबू की लपट आई। उसी तरह उसे अपने पपोटों पर वही सेक सा महसूस हुआ। वैसे ही कोई बार बार उसके कानों में सरग़ोशियाँ कर रहा था। किसी गीत की धुन, दूर क्षितिज के पास से किसी की पुकार। ऊँची आवाज़ में। अब उसकी पलकें और अधिक मूंदी नहीं रह सकती थी। इधर उसके नैन खुले, सामने उसी तरह मुस्काने बिखेरती हुई, एक टक उसी की तरफ़ देखती हुई हसीना थी। कानों में थर्र थर्र काँप रहे झुमके, नाक में मोती जड़ी पाकीज़गी की नथ, ओंठ जैसे बिलख रहे हो 'मुझसे और इन्तज़ार नहीं की जाती।' लगता था वह पुकार पुकार कर कह रही थी।

केसर को अपने आप पर जैसे शर्म आ गई। उसने फिर आँखें मूंद लीं। लेकिन उस चेहरे का हुस्न बार बार आ कर उसे झँझोड़ रहा था। सारी सुबह इसी कशमकश में बीत गई।

अगले दिन फिर यही हुआ। माँ–बेटी केसर के पहुँचने से पहले ही वहाँ विराजमान थीं। केसर दूर किसी और कोने में जा बैठा लेकिन कीर्तन के दौरान पूरा वक्त उसे ऐसा लग रहा था जैसे कोई नाज़ुक पलकें उसकी पलकों को बार बार आकर खींच रही हों।

शहर में माँ–बेटी की कहानियाँ चल निकली थीं। इतने हसीन चेहरे उनके शहर में आये हुए थे। हर कोई उन के बारे में पूछताछ कर रहा था। और पता चला कि माँ जन्म से हिंदुवाणी थी। उसका अपहरण करके निकाह में लिया गया था। इस लिये तो गुरू महाराज की श्रद्धालु थी। सुबह उठने की, साघ सँगत में हाज़िर होने की उसे पुरानी आदत थी।

वे गुरू महाराज के आने की बाट ताक रहीं थी। उस शाम सत्गुरू अपने दौरे से लौट रहे थे। उनके साथ अमन था।

इतने दिनों में गुरू अंगद देव जी की संगत में और नज़दीकी पा कर अमन तो कुछ का कुछ हो गया था। लाल सुर्ख़ चेहरा, एक इलाही जोत से उसका चेहरा दमक रहा था। एक सुंदरी ने एक नज़र उसे देखा तो उसे लगा जैसे उसका कद और भी उँचा हो गया हो। उसके गालों में से, माथे में से एक लौ लपलपा रही थी।

सुंदरी के होश हवास ग़ायब हो गये, अगली सुबह धर्मशाला में भोग पड़ने के बाद माँ–बेटी गुरू महाराज की चरण वँदना कर के जब लौट रही थीं तो सामने खड़े अमन के साथ बातें करने लगीं। और फिर अमन उनके साथ चल पड़ा।

दिन में जब केसर से अमन की मुलाक़ात हुई, तो उसने बताया कि सूबेदार का फ़र्मान था, चाहे सारे शहर की तलाशी लेनी पड़े गुज्जर लोहार को बरामद करना पड़ेगा। हकूमत को किसी ने मुख़बिरी की थी कि गुज्जर क़ैदियों को कहीं दूर खदेड़ कर आर्शीवाद लेकर खडूर में ही बस गया था।

"लेकिन माँ–बेटी सुंदर कितनी हैं।" केसर ने जान बूझ कर अमन का मन टटोला।

"माँ बेटी से ज़्यादा, बेटी मां से ज़्यादा," अमन ने बिना ध्यान दिये कहा और पोथी

की नकल उतारने लगा ।

इसके बाद बात आगे बढ़ाने की केसर में हिम्मत ही नहीं थी । कुछ भी हो सकता था । और वह कोई खतरा मोल लेने के लिये हरग़िज़ तैयार नहीं था ।

अगले दिन अपने एकान्त कोने में बैठे केसर का ऊपर का साँस ऊपर और नीचे का साँस नीचे रह गया । जब उसने देखा कि वे माँ बेटी-अमन से चार क़दमों की दूरी पर विराजमान थीं और बेटी उसी तरह आँखें फाड़ फाड़ कर अमन को अपलक निहार रही थी जैसे दो दिन पहले वह केसर की ओर हसरत भरी निगाहों से देखा करती थी ।

यही नहीं, कीर्तन के बाद बहुत देर तक माँ-बेटी अमन के साथ उनके लिये गुरूबाणी की विशेष प्रतिलिपी तैयार करने के बारे में बातें करतीं रही । माँ देवनागरी लिपि के लिये कह रही थी बेटी, फ़ारसी लिपि के लिए ।

उस दिन जब उनकी मुलाकात हुई तो अमन ने केसर को बताया-"माँ का नाम गँगा है ।"

"और बेटी का?" केसर ने पूछा । उसे ज़्यादा ख़तरा बेटी से था ।

"बेटी का नाम तो मैंने नहीं पूछा ही नहीं," अमन ने कहा और केसर के कलेजे को जैसे ठँडक मिली ।

34

गुरू अंगद देव जी महाराज उस दिन अपने मालवा आदि के दौरे के दौरान इकट्ठी की गुरबाणी की प्रतिलिपियाँ बनाने के लिये सेवकों में बाँट रहे थे । इतने में उनकी पुत्री अमर अपने ससुराल से आई और पिता के दर्शनों के लिये भीतर आ गई । अभी उसी दिन ही तो वह मायके से गई थी । इतनी जल्दी लौटने का कारण वह बताने ही लगी थी कि गुरू महाराज ने मुस्करा कर कहा,-"कोई बात नहीं । जिसके साथ आप आई हैं, उन्हें अपने साथ भीतर क्यों नहीं ले आई? यह कहते गुरू अँगद देव जी गद्दी से नीचे उतरे और बाहर इन्तज़ार कर रहे मेहमान से मिलने के लिये चल पड़े ।

ये बाबा अमर दास जी थे । उनके छोटे भाई मानक चंद के सुपुत्र बाबा जस्सू जी के साथ गुरू अंगद देव जी की बेटी बीबी अमर ब्याही हुई थी ।

बाबा अमर दास जी बचपन से ही धार्मिक रुचियों के धारनी थे । बेहद सेवाभाव था । ग़रीब-गुर्बे, भूखे-नंगे को खिला कर, वस्त्र पहना कर खुश होते । भजन-पाठ में उसका मन आठों पहर जुड़ा रहता । कार्तिक की पूर्णमासी और बैसाख-हर छः महीने पर वे तीर्थ यात्रा के लिये ज़रूर निकलते। एक बार तीर्थ यात्रा से लौट रहे थे कि राह में एक ब्रह्मचारी का साथ हो गया । ब्रह्मचारी ने अमर दास जी के स्वभाव से प्रभावित होकर पूछा, "आपका गुरू कौन है? "गुरू तो उनका कोई नहीं था । यह सुन कर ब्रह्मचारी भड़क उठा। "निगुरे का साथ ।," "निगुरे का साथ ।," पुकारता हुआ फिर गँगा स्नान के लिये लौट गया । बाबा अमर दास उसके पीछे गये, लेकिन वह नहीं लौटा ।

उसकी बात से अमर दास जी के मन को बेहद धक्का लगा । अपने घर पहुँच कर

भी उन्हें नींद नहीं आ रही थी। सारी रात तारें गिनते हुए बीत गई। अमृतवेला में उनके साथवाले भाई मानकचंद के घर में से गुरूबाणी की ध्वनि सुनाई दी। यह धुन कई बार पहले भी वे सुन चुके थे। लेकिन उस दिन अमृतवेला में उच्चारी जा रही बाणी ने उन्हें मंत्रमुग्ध कर दिया। बीबी अमर जी पाठ कर रहीं थी :

काइआ आरुणु, मनु विचि लोहा
पँच अगनि तितु, लागि रही ॥
कोइले पाप पड़े तिसु ऊपरि,
मनु जलिआसँनी चिँत्त भई ॥
भइआ मनूर, कँचनु फिरि होवै
जे गुरू मिले तिनेहा ॥
एक नामु अमितृ उह देवै ॥
तउ नानक त्रिसटसि देहा ॥

(मारू महला पहला)

यह सुनकर बाबा अमर दास जी से रहा न गया। बेक़रार हो कर अपने भाई के घर जा पहुँचे। उनका हृदय बीबी अमर के मधुर कंठ से सुनी बाणी से बिंधा हुआ था।

यह जान कर कि वह बाणी गुरू नानक देव जी की है, जिनकी गद्दी पर बीबी अमर के अपने पिता गुरू अंगद विराजमान थे, उन्होंने बीबी अमर को इस बात के लिये राज़ी कर लिया कि वे उन्हें गुरू महाराज के दर्शन के लिये खडूर ले चलेंगी।

बाबा अमर दास जी तो गुरू महाराज के समधी थे, गुरू अंगद उनके स्वागत के लिये खुद बाहर आए। उन्हें गले लगाने लगे कि बाबा अमर दास जी ने उनके चरण पकड़ लिये।

लंगर का समय हो रहा था। गुरू महाराज मेहमान को लंगर के लिये अपने साथ ले गये। पंगत में बैठे गुरू अँगद देव जी ने प्रसाद परसने वाले सेवक को हिदायत दी कि मेहमान के लिये केवल दाल सब्ज़ी ही लाये, मांस नहीं, क्योंकि वे शाकाहारी थे। यह सुनकर बाबा अमर दास जी ने फिर गुरू जी के चरण पकड़ लिये। यह भेदभाव क्यों ? वे तो उन्हें अपना इष्ट बना चुके थे। अपने इष्ट के साथ एक होने के लिये आये थे, बाबा अमर दास जी ने 62 साल की उम्र में पहली बार गुरू महाराज की संगत में माँस का सेवन किया।

जैसे कोई नशे में मदहोश हो, कुछ दिन भाई अमर दास एकांत में अकेले बैठे रहते ; अमृत वेला में उठकर स्नान करते, फिर साध संगत में शामिल होते। बाक़ी दिन शाँत, स्थिर भाव से अपने अपने काम में लगे हर आदमी को निहारते रहते।

फिर उन्होंने भाई जोध सिंह से विनती की कि उन्हें जल की सेवा करने दी जाये। भाई जोध सिंह ने उन्हें समझाया कि उनकी उम्र ज़्यादा है। जल की सेवा बड़ी कठिन है। लेकिन भाई अमरदास जी ने हाथ जोड़कर उन्हें मना लिया।

रात बीतने से पहले ही वे उठकर ब्यास नदी से जल की गागर भर कर लाते। गुरू महाराज को स्नान करवाते। फिर उनके कपड़े धोते। इससे फ़ारिग़ होकर कीर्तन में शामिल होते। इसके बाद लंगर के लिये लकड़ियाँ इकट्ठी करने के लिये जंगल-बेले में निकल जाते। लौटते तो लंगर खाकर आराम कर रहे यात्रियों पर पँखे की हवा करने लगते। पैर दबाकर चाँपी करके उनकी सेवा करते। लोग उनकी श्रद्धा, उनकी सेवा करते और उनकी निष्ठा को देख देख कर हैरान होते रहते।

भाई मूले की पत्नी अक्सर बर्तन मांजने में भाई अमर दास जी का हाथ बँटाती थी। लेकिन पिछले कुछ दिनों से कहीं दिखाई नहीं दे रही थी। केसर परेशान था। जब भी उसका ज़िक्र अमन से आता वह तरस भरे लहजे में कहता, "यहीं कहीं खज्जल ख़्वार हो रही होगी। बेचारी अबला औरत, जिसकी जवान जहान बेटी इस तरह गुम हो जाये, उसे कहाँ चैन ? पता नहीं किस किये अनकिये पाप की उसे यह सज़ा मिल रही है। और बेटी भी ऐसी, जिसे देखकर भूख नहीं मिटती। ऐसी सुंदर लड़की हमारे यहाँ कोई नहीं हुई।"

"वह तो नहीं जो पिछले कुछ दिनों से अपनी मां के साथ दर्शनों के लिये यहां आई है ?" केसर जानबूझ कर अमन को छेड़ रहा था। इसमें रत्तीभर शक नहीं था कि वह हसीना केसर से मायूस होकर अमन पर फ़िदा हो गई थी।

"उसकी बात और है।"अमन ने यूँ ही जबाव दिया और क़लम पकड़ कर गुरबाणी की प्रतिलिपि तैयार करने में व्यस्त हो गया।

सुंदरी की छाती में जैसे किसी ने छुरी झोंक दी हो। उसका चेहरा लाल सुर्ख़ हो गया। उसके हाथों पैरों से पसीने छुटने लगे। सुंदरी को लगा जैसे वह भट्टी में भुना जा रहा मकई का दाना हो। वह टूट कर रह जायेगी, और फिर जैसे किसी ने आत्महत्या का फ़ैसला कर लिया हो, उसने अमन से कहा, "तू उसके साथ शादी क्यों नहीं कर लेता और कब तक तू इस तरह कँवारा रहेगा ,"

"यही तो वह कल कह रही थी।

मुझे ढूंढ़ती हुई शाम को मेरे कमरे में आ गई थी। अमन ने केसर को अपना राज़ बताया।"

"यार, तूने तो मुझे बताया ही नहीं अकेले अकेले सब कुछ हड़प लिया।"

"मैंने तो उसे तेरी सिफ़ारिश की थी। वह कहने लगी तेरा दोस्त तो बस देखने के ही लायक है।"

यह सुनकर केसर की उत्सुकता और भी बढ़ गई "तो फिर तूने उसे क्या जवाब दिया ?"

इतने में उसकी माँ उसे तलाश करती हुई उधर आ निकली और बात आई गई हो गई।

इसका मतलब यह हुआ कि अमन ने उससे इक़रार नहीं किया। उस रात यह सोच

सोच कर सुंदरी कलपती रही । अपने बिस्तर में उसे गर्मी की लपट आती महसूस होती और वह बार बार उठकर टहलने लगती ।

इतनी सुंदर लड़की और फिर उस वक्त की हकूमत के एक अहलकार की बेटी, उससे कौन नहीं शादी कराना चाहेगा ? और फिर एक हिंदू माँ की बेटी, इस तरह की लड़की को इन्कार करना बड़ा मुश्किल होता है । फिर अचानक जैसे एक विस्फोट हुआ, सुंदरी को ख़्याल आया, जो लड़की एक बार उसके कमरे में उसे मिलने आ सकती थी, क्या पता वह दोबारा भी गई होगी ।

वह नंगे पैर ज्यों की त्यों अमन के चौबारे की तरफ़ चल पड़ी । आधी रात का वक्त था । उन दिनों अमन शहर से बाहर एक एकान्त हवेली में क़याम था । काली सुनसान रात, शहर में नींद का सन्नाटा छाया था और जवान जहान लड़की सुंदरी सरपट, निडर अमन की हवेली की ओर जा रही थी । रास्ते में खेत पड़ते थे । एक रहट वाला कुँआ था, साँप थे, बिच्छू थे । जंगली जानवर आवाज़ें कर रहे थे । बीच बीच में आसमान में बिजली भी बार बार कौंध रही थी ।

35

"लेकिन तू इतनी रात बीते आई कैसे ?" अमन उसे पूछ रहा था ।

"तेरी मुहब्बत मुझे लाई है ।"

"तूझे डर नहीं लगा ? "

"इश्क में डर नहीं लगता । तूने कभी इश्क किया है?"

अमन चुप ।

"मैं पूछती हूँ किसी की याद में कोई रात रो रो कर तूने गुज़ारी है । "

अमन चुप ।

"इस तरह कठिन रास्ते पार करके तूने कभी किसी का दरवाज़ा खटखटाया है ? "

"बाहर गली में कोई है । मुझे किसी की आहट सुनाई दी है । " अमन ने तनिक परेशान होकर कहा ।

"मेरी माँ ने मेरा नाम ज़ाहिरा रखा है । मैंने कभी कोई बात नहीं छिपाई । बेशक कोई आ जाये ।"

लगता था सुंदरी भी उसके पीछे पीछे आ रही थी । इधर ज़ाहिरा पहुँची, उसके पीछे सुंदरी पहुँच गई । बेशक यह अचँभे की बात थी ।

"मेरी राय फिर यही है कि अगर तूने यहीं अपने लिये कोई साथी ढूंढना है तो तू केसर के साथ सुर मिला ले । "

"तेरा दोस्त केसर नामर्द है । मुझे तो वह शक्ल से ही हिजड़ा मालूम होता है । उसे तो औरत होना चाहिये था । नाज़ुक-अँदाम औरत । " ज़ाहिरा भड़क उठी ।

"ऐसे लोग बहुत बढ़िया साथी होते हैं ।"

"मैं मर्द होती तो ऐसी सुंदर शक्ल की किसी लड़की को कभी इन्कार न करती ।

"हर आदमी की कोई मजबूरी होती है।"

"मुझे भी तो पता चले कि तेरी क्या मजबूरी है ? मां का एकलौता बेटा। ख़ूबसूरत गबरू, जवान और भला तुझे किसका इन्तज़ार है ?"

"कुछ बातें करने वाली होती हैं, कुछ नहीं होती।

"मैंने तेरे आगे अपने दिल का भेद खोल दिया है और तू अपने भीतर के राज़ को ज्यों का त्यों छिपाये बैठा है ?"

"मेरी मजबूरी है।"

" ले मैं तेरे सामने हाथ जोड़ती हूँ। अगर तू नहीं माना तो मुझे किसी दूसरे के मत्थे मढ़ दिया जायेगा। जिसकी एक से ज़्यादा बीवियाँ पहले से ही हैं। दौरे पर निकला मेरा अब्बा क्या पता क़ौल क़रार कर भी आया हो।"

"तुझे इन्तज़ार करनी पड़ेगी।"

"मैं और इन्तज़ार नहीं कर सकती। यहाँ से निकलते ही मुझे माइयाँ बिठा दिया जायेगा। उसने तो रक़ाब में पैर ही डालना है और वह हमारे यहाँ आ उतरेगा।"

"तू गुरू महाराज की मदद माँग सकती है।"

" वह गुरू बाबे का शैदाई है। सारा इलाका इस बात को जानता है। बाबा नानक का नाम लेने वाला, मजाल है कोई सिक्ख उसके ख़िलाफ़ जा सके।

"तो फिर मैं ही यह पाप क्यों करूँ ?

"तुझे कितनी बातें बनानी आती हैं ? मैं पूछती हूँ तुझे मेरी टप टप आँसू बहाती आँखों पर तरस नहीं आता ? एक कनीज़ तेरे दर पर खड़ी भीख माँग रही है।"

" कनीज़ क्यों एक साहिरा। तेरे जैसी हसीना शायद ही कोई मेरी ज़िन्दगी में आई हो। तुझे इन्क़ार करते हुए मैं अपने आपको बदनसीब गिनता हूँ।"

"तो फिर ....." यह कहते हुए ज़ाहिरा आगे बढ़ी, उसने अमन को अपने आलिंगन में लिया और एक साँस में ही उससे प्यार करने लगी। साथ ही साथ रो रो कर फरियाद कर रही थी, "आख़िर ज़लैख़ा ने भी तो यूसफ़ का यही हाल किया था।"

यह देख कर अमन खिलखिला कर हँस पड़ा। ऐसे हालात में और कर भी क्या सकता था ? अमन को हँसता देख कर वह बिट बिट उसके मुँह की तरफ़ ताकने लगी।

"बीबी, ज़ुलैख़ा ने तो यूसफ़ का कुर्ते का गला फाड़ा था" अमन जैसे उसे छेड़ रहा था।

" मैं अपने कपड़े फाड़ सकती हूँ। अपने महबूब के साथ, अपने इष्ट के साथ ऐसा नहीं कर सकती।"

" लगता है, तू बहुत आगे निकल चुकी है।"

"मुहब्बत के पड़ाव कभी चल कर कोई पार नहीं करता। इस रास्ते पर तो उड़ान भरनी पड़ती है।"

"और तू, टीले पर जा बैठी है।" लगता था अमन की यह कोशिश थी कि बात

को संजीदा न होने दिया जाये। बातों ही बातों में मामले को टाल दिया जाये। ऐसा लगा कि ज़ाहिरा इस हर्बे को समझ गई। उसने अपने पैर और ज़्यादा पक्के जमा लिये।

"आज की रात मैं फ़ैसला करके ही यहाँ से हिलूँगी, नहीं तो ......।"

"नहीं तो क्या ?" अमन अभी भी मामले को बातों बातों में रफ़ा-दफ़ा करना चाह रहा था।

"नहीं तो मैं यहीं आज की रात मर जाऊंगी, ज़ाहिरा ने सामने आले में पड़ी एक छुरी को उठा लिया। अब अमन के हाथ पैर फूल गये। उसका चेहरा पीला ज़र्द हो गया।

"देख बीबी, अपनी माँ का मैं एकलौता बेटा हूँ। उससे तो मैंने पूछना है। हो सकता है वह किसी से इक़रार कर बैठी हो। और फिर मेरी अपनी भी तो कोई मजबूरी हो सकती है।" अमन अब जैसे मिन्नत कर रहा था।

"तेरी अपनी मजबूरी ? क्यों क्या तूने किसी से वादा किया है ?"

"वादा तो नहीं लेकिन ....।"

"तू बात खोलकर क्यों नहीं करता ?"

" कुछ वक्त तुझे और देना पड़ेगा।"

" तब तक क्या पता किस राजे की परजा होगी।"

"उतावले के आगे गड्ढे होते हैं।"

"तेरे दिये की लौ मद्धम पड़ रही है।"

"तेल ख़त्म हो गया होगा।"

"कभी किसी ने रातें जागकर गुज़ारी हों तो दिये साथ देते हैं।"

इतने में दगड़ दगड़ करते दो घुड़सवार अमन के घर के बाहर आकर रूके। केसर किसी ओट में छिप गया।

"हज़ूर, इसी घर में बीबी को घुसते मैंने देखा था।" एक सवार ने कहा, " सरकार के हुक्म के मुताबिक मैंने उनका पीछा किया था।"

दूसरा सवार ज़ाहिरा के अब्बा थे। वह गर्जता, फुँकारता घर में जा घुसा।

एक बार केसर का दिल किया कि वह वहाँ से भाग जाये। पराई आग में वह अपने पपोटे क्यों झुलसाये, लेकिन फिर उसने इरादा बदल लिया। हो सकता है अमन को उसकी ज़रूरत ही पड़ जाये। एक दरखत की आड़ में साँस रोककर वह खड़ा रहा।

ज़ाहिरा के बाप ने भीतर घुसते ही अमन को एक धौल जमाया।

"अब्बा सरकार।" ज़ाहिरा चीख़ उठी।

अब उसके बाप ने उसे भी एक धौल मारा और बाँह से पकड़ कर उसे बाहर ले आया। अगले क्षण उसे अपनी घोड़ी पर बैठा कर अपने ठिकाने की तरफ़ चल पड़ा।

उसके पीछे पीछे वह अहलकार जिसने मुख़बिरी की थी, अपने घोड़े पर बैठ कर चला गया।

36

कुछ ही दिनों बाद करतारपुर से एक दुखदाई ख़बर आई । कई लोग करतारपुर के लिये चल पड़े । उनमें अमन भी था ।

बात यूँ हुई–गुरू नानक देव जी के बड़े साहबज़ादे श्रीचंद जी ने चाहे खुद संन्यास ले लिया था, लेकिन उन्होंने अपने छोटे भाई लख़मी चंद को यह कह कर शादी करने के लिए मना लिया कि नानक का वंश अवश्य चलता रहना चाहिये । कुछ अरसे के बाद उसका एक बेटा जन्मा जिसका नाम धर्म चंद रखा गया ।

लखमी चंद जी बड़े खुशमिजाज, प्रसन्न चित्त थे । सुंदर व्यक्तित्व, अच्छे रहन सहन के शौक़ीन । इन दिनों बाबा श्रीचंद अधिकतर शहर से बाहर जँगल किनारे, एक कुटिया में रहकर अपने दिन बिता रहे थे, करतारपुर का घर लख़मी चंद जी के सपुर्द था।

लखमी चंद जी अपने संगी साथियों के साथ अक्सर जंगल में शिकार करने जाते थे और ढेरों शिकार मार कर लाते थे । इसमें हिरण भी होते, ख़रगोश भी होते, मुर्ग़ाबियाँ भी होती थीं । बाबा सिरी चँद को जब इस बात की ख़बर मिली तो उन्होंने लख़मी चंद जी को समझाया शिकार करने में कोई ख़राबी नहीं, लेकिन शिकार जंगल के ख़ूंख़ार जानवरों का करना चाहिये जो नुक़्सान पहुँचाते है, मासूम पक्षी और बेलौस जानवर, जो प्रकृति की रौनक़ है, उनकी व्यर्थ में जान लेना ठीक नहीं ।

''लेकिन गुरू पिता जी ने माँस खाने से किसी को मना नहीं किया था,'' लख़मी चंद जी ने बहस करने की कोशिश की ।

''माँस खाना और बात है, लेकिन खेल ही खेल में बेज़बान पंछियों, निर्दोष जानवरों की हत्या बिल्कुल और बात है ।'' बाबा श्रीचंद ने अपनी राय दी ।

लख़मी चन्द जी ने अपने बड़े भाई की बात सुन तो ली लेकिन उनकी तसल्ली नहीं हुई । वे शहर के अपने दोस्तों मित्रों के साथ पहले की तरह शिकार खेलते रहे । उन्होंने बहुत से शिकारी कुत्ते पाल रखे थे । घोड़ो पर सवार होकर जाते और शाम को शिकार से लदे हुए घर लौटते ।

बाबा श्रीचंद ने फिर उन्हें अपनी कुटिया में बुला कर मनाही की कि इस तरह अकारण पंछियों–पखेरूओं, निर्दोष जानवारों की हत्या पाप है । ख़ूँख़ार कुत्तों और तेज़ घोड़ो की मदद से आदमी द्वारा तीर कमानों और बंदूकों से निहत्थे जीवों पर हमला करना अन्याय है ।

लख़मी चंद ने उनकी बात सुनी अनसुनी कर दी और पहले की तरह शिकार पर चढ़े रहते । भाई कमालिया जो बाबा सिरी चंद जी की सेवा टहल करता था, अक्सर बाबा जी को इस विषय में शिकायतें करता रहता था ।

ईश्वर की मर्ज़ी, एक शाम जब बाबा सिरी चन्द अपनी कुटिया के बाहर धूनी रमाये बैठे थे, उधर से लख़मीचंद जी का लश्कर आ निकला । घुड़ सवार और भाँति भाँति के शिकारी कुत्ते उनके पीछे नौकर चाकर थे जिन्होंने शिकार संभाला हुआ था । इसमें तीतर

थे, तिलियर थे, कबूतर थे, बटेरे थे, भाँति भाँति के ख़रगोश थे, न कोई बाघ था, न कोई चीता। यह देख कर बाबा सिरी चन्द जी का बेहद दिल दुखा और उन्होंने लख़मी चंद जी को रोक कर कहा-

अैसा जीव जो पाये अनाबा, देना पड़ है ताहि हसाबा ॥
जाब गुरधाम मध तुम जावहि, सतिगुर लेखा तुमहि पुछावहि ।

(सिरी चँद प्रकाश)

लख़मी चंद जी अभी भी मामले की नज़ाकत को नहीं समझे, कहने लगे - "मैं बाबा नानक का बेटा हूँ, क्यों मुझे भी लेखा देना होगा ?

इस पर बाबा सिरी चन्द जी ने उन्हें गुरू नानकदेव जी के शबद का स्मरण करवाया- "करमी आपो अपनी के नेड़े के दूर।"

यह सुन कर लख़मी चंद जी अपने घर लौट गये। रास्ते भर सोच में डूबे रहे। बार बार अपने से कह रहे थे। लेखा तो देना होगा।"

घर पहुँच कर उन्होंने सारी बात अपनी पत्नी को सुनाई। "लेखा तो देना ही होगा" कहते हुए उन्होंने अपनी पत्नी को घोड़े पर बैठाया उसकी गोद में उनका बच्चा था। खुद भी घोड़े पर बैठे और बाबा सिरी चन्द की कुटिया के सामने हाज़िर होकर उन्होंने कहा, "आपकी आज्ञा के अनुसार मैं अपने परिवार समेत लेखा चुकाने जा रहा हूँ।" बाबा श्रीचन्द जी लख़मी चंद के चेहरे से उनका इरादा पहचान गये थे। स्वभाव के बड़े हठीले थे। उन्होंने फ़ौरन आगे बढ़कर धर्मचंद को उसकी माँ की गोद से छीन लिया, घोडा ग़ायब हो गया।

जो कोई भी सुनता रो रो कर बेहाल हो जाता। दूर और पास के अनेक गुरू सिक्ख करतारपुर के लिये चल पड़े।

इतना भारी जनसमूह लख़मी चंद की याद में करतारपुर इकट्ठा हुआ था। इनमें हिन्दू भी थे, मुसलमान भी थे और अमन को अपनी आँखों पर ऐतबार नहीं आ रहा था, तीन और औरतों के पास ज़ाहिरा भी एक सूती हुई मूछों वाले बलोच के साथ-साथ संगत में बैठी थी, नई नवेली दुल्हिन सोने से लदी हुई। कमख़ाब और ज़रबफत के कपड़े। उसने सर पर जो जामावार का शॉल ओढ़ रखा था, उसका तो कहना ही क्या। बिल्कुल शाहज़ादी दिखाई देती थी। हर किसी की नज़र उचक उचक कर उसकी तरफ़ जाती।

"बिच्छू की तरह ऐंठी हुई मूंछों वाला यह बलोच कौन है ? " पहला मौक़ा मिलते ही अमन ने शैली से पूछा। शैली ऐसी नज़रों से उसकी तरफ़ देख रहा था जैसे उनकी जान- पहचान हो। एकाध बार उससे सलाम दुआ करने की भी कोशिश की लेकिन उनकी नज़रें मिली नहीं थी। भीड़ भी तो कितनी ज़्यादा थी।

अमन ने ज़ाहिरा के बारे में शैली को नहीं बताया। न ही खुद उससे मिलने की कोशिश की। फिर उसने दो और दो जोड़ कर सारी बात समझ ली। यही गुरूनानक का अनुयायी होगा जिसका ज़िक्र ज़ाहिरा ने उस दिन किया था, जिसके साथ उसका अब्बा

उसकी शादी करना चाहता था । यही होगा जिसकी ढेर सी और बीवियाँ भी थीं ।

अमन सोच रहा था, यह लड़की जो उस दिन रो रोकर फ़रियादें कर रही थी, हाथ जोड़ कर मिन्नतें कर रही थी, कितनी खुश लग रही थी अपने मरद के साथ । जैसे उसे पूरा जहान मिल गया हो । गहनों से लदी हुई । हीरे मोतियों से झमझमाती हुई । खुशकिस्मत थी । अमन जैसे कंगाल से शादी करके तो उसने भूखे ही मरना था ।

अमन के मन में बार बार आता वह ज़ाहिरा से मिल कर उसे एक बार पूछ तो ले, वह ख़ुश है या नहीं । लेकिन उसने यही ठीक समझा कि गड़े मुर्दों को उखाड़ना ठीक नहीं । यही नहीं, जितने दिन यात्री करतारपुर रूके, अमन भरसक घर से बाहर नहीं निकलता था ।

शैली ज़रूर हर समागम में शामिल होता, सारा सारा दिन बाहर घूमता रहता था । उसके मन के भीतर एक आशा लगी थी कि सुन्दरी अगर कहीं ज़िंदा हो तो इस अवसर पर वह करतारपुर ज़रूर आयेगी । लेकिन सुंदरी तो कहीं भी नहीं थी ।

37

भाई मूले की पत्नी न जाने कहाँ कहाँ टक्करें मार कर, खज्जल ख्वाार हो कर खडूर लौट आई थी। बस हड्डियों का ढाँचा रह गई थी। उसका रंग काला पड़ गया था? गालों पर छाइयाँ, रो रो कर आँखों की लौ मद्धम पड़ गई थी । उसकी दाईं बाँह खुद ब खुद काँपने लगती, फिर काँपना बंद हो जाता ।

उसे देख कर केसर को बेहद तरस आया । उसकी हर प्रकार से मदद करता, दूसरे गुरसिक्खों से भी करवाता, लेकिन इस से अधिक कुछ नहीं कर रहा था । उसे इस बात का निश्चय था कि उसके भीतर की माँ के क्लेश का कोई इलाज नहीं था । जिस बेटी के लिये वह तड़प रही थी, जिसे याद करके वह बेहाल हो रही थी, जिस दिन-भी वह उसे मिल जायेगी, उस के भीतर की औरत अपनी जाई को फिर से नफ़रत करना शुरू कर देगी । उसमें उसे कोढ़ नज़र आने लगेगा । उसकी समझ में नहीं आयेगी कि वह उसे अपनाये या दुत्कारे ।

और उसे कोई उपाय नहीं दीख रहा था, जिससे वह उसकी माँ को उसकी बेटी की सच्चाई और पवित्रता के बारे में विश्वास दिला सके ।

आजकल उसे बेहोशी के दौरे पड़ने लगे थे । दिन में अनेक बार बैठे बैठे उसका रंग पीला पड़ने लगता, उसके हाथ पैर मुड़ने लगते और वह ढेरी हो जाती । कितनी कितनी देर तक बिना हिले डुले पड़ी रहती । कई बार उसके दांत मिंच जाते । ऐसा भी होता था कि अकेले में बैठे बैठे उसे दौरा पड़ जाता था और कितनी कितनी देर तक वह औंधी पड़ी रहती थी ।

दिन रात सुंदरी को याद करती थी । विलाप करती रहती थी । हर किसी को उस पर तरस आता था, लेकिन कोई उसकी मदद नहीं कर सकता था । हकीम और वैद्य सर खपा कर थक गये । अड़ौसी पड़ौसी टोटके करते थे । उसके लिये हाथ जोड़ते, अरदासें करते ।

स्यालकोट से उसके रिश्तेदार आ-आकर लौट जाते थे । वह किसी की बात नहीं सुन रही थी । बस यही कहती, गुरू महाराज की शरण में मेरी बेटी गुमी थी, यहीं से वह मिलेगी । इस दर से मैं नहीं हिलूँगी, जब तक कोई मेरी जाई को ला कर मुझे नहीं लौटा देता । अंधेर साईं का, देखते ही देखते जवान-जहान लड़की ग़ायब हो गई ।

सब भाई मूले की पत्नी को समझाते, इतने दिनों तक जिस लड़की की खोज ख़बर नहीं मिली या तो उसने आत्महत्या करली होगी, या फिर वह किसी के यहाँ बैठ गई होगी, उसकी और प्रतीक्षा करना बेकार है । इतने अरसे के बाद लड़की का मिलना बस एक करामात होगी ।

"करामात भी तो होती है ।" वह फ़रियाद करती ।

लेकिन गुरू-घर में करामात वर्जित थी । गुरू नानक ने करामात को अकाल-पुरूख़ के नियमों में दखलन्दाजी बताया था । गुरू अँगददेव जी करामात में विश्वास नहीं करते थे । अगर कोई भी इस तरह की आकाँक्षा लेकर आता तो वह उसे ईश्वर का भाणा मानने की शिक्षा देते थे ।

"मेरी जाई इस शहर में गुमी है, मैं तो उसे इसी मट्टी में से ढूंढ कर रहूँगी ।" भाई भूले की पत्नी को विश्वास बेमिसाल था ।

उस रात उसकी हालत ज़्यादा ही ख़राब थी । रो रो कर, विलाप करके बेहाल हो रही थी । न उसने कुछ खाया था, न पिया था । काली बोली रात, आकाश पर कोई बिरला तारा झिलमिला रहा था। अधसोई, अधजागी नींद में वह पड़ी थी कि धीरे से उसका किवाड़ खोल कर सुंदरी भीतर दाख़िल हुई । भाई मूले की पत्नी ने एक नज़र अपनी जाई को देखा, उसके चेहरे पर रौशनी आई और फिर वह धड़ाम से औंधीं जा पड़ी । बेहोश हो गई ।

सुंदरी बहुत देर तक उसे सहलाती रही "माता जी, माता जी"कहती उसे पुकारती रही, उसके पैरों के तलवों को सहला कर उसकी हथेलियों को रगड़ने लगती, उसके अंग अंग को दबा रही थी । "माता जी मैं आ गई ।"बार बार उसके कानों में कहती न जाने कितनी देर जूझने के बाद जाकर कहीं उसकी माँ को होश आई । होश आते ही वह सुंदरी को लाड़ करने लगी । उसे प्यार करती करती दीवानी हो रही थी । एक ही साँस में उसे चूमे जा रही थी ।उसके माथे को, उसकी आँखों को, उसके गालों को, उसके ओठों को, उसकी ठुड्डी को, उसके हाथों को, उसके पोटे पोटे को चूम रही थी । न जाने इतनी ताक़त उसमें कहाँ से आ गई थी । एक शेरनी की तरह अपनी जाई को चूम रही थी, चाट रही थी । सारी रात इसी तरह बीत गई ।

पौ फट रही थी । अभी अँधेरा छाया था । धर्मशाला में शँख बजाया जा रहा था। उधर से शँख की आवाज़ आई, उधर भाई मूले की पत्नी ने आँखें फाड़ फाड़ कर सुंदरी के चेहरे की तरफ़ देखना शुरू कर दिया, कितनी ही देर तकदेखती रही ।

फिर अचानक ही अपने साथ चारपाई पर बैठी सुंदरी को उसने धक्का देकर फ़र्श

पर गिरा दिया "तू सुंदरी नहीं ! मेरे साथ छल कर रही है । तू मेरी बेटी नहीं तू भाई मूले की औलाद नहीं । मुझे तेरे भीतर से बदबू आ रही है । किसी तुरकड़े की सेज सिंगार कर आई है । तू मेरी जाई कैसे हो सकती है ? मेरी जाई तो निर्छल थी, सात बार पानी में धोया मक्खन का पेड़ा ।"

यह कहते हुए उसकी आँखों से छल छल आँसू बह रहे थे । फिर वह फ़रियाद कर उठी, "नहीं नहीं, मुझे कोई फ़रेब नहीं दे सकता, मुझे नहीं कोई धोखा दे सकता मेरी जाई को तुरकड़े ने ख़राब किया है । यह दाग़ कभी नहीं धुल सकेगा ।"

इस तरह प्रलाप करती हुई वह फिर बेहोश हो गई । उसे इस तरह बेहोशी की हालत में देख कर सुंदरी दबे पाँव कमरे से बाहर निकल आई। उसके स्नान का समय हो गया था और फिर उसने धर्मशाला पहुँचना था ।

अपनी कोठरी में पहुँच कर केसर ने स्नान किया । कीर्तन हो रहा था, उसने देखा लाठी के सहारे पहले की तरह हाल मूले की पत्नी सतुगुरू की शरण में आ रही थी, केसर ने नज़रें नीचे झुका लीं ।

अब उसे बस अमन का इन्तज़ार था। चलने से पहले वह वादा करके गया था कि वह जल्दी से जल्दी लौट आयेगा । उसका इरादा खडूर में बसने का था । मुमकिन हुआ तो वह अपनी अम्मी को भी साथ लेता आयेगा । और गुरबाणी की पोथियाँ तैयार करने में उसकी अच्छी ख़ासी आमदनी भी हो जाती थी । ऐसा नहीं कि उगराही यात्रियों से और खाना पीना लंगर से । ऐसे उसके दिन बीत रहे थे ।

अगले दिन भाई मूले की पत्नी हर किसी से कहती फिरती थी कि कल रात उसकी बेटी उसके यहाँ आई थी । लोग सोचते बेचारी माँ का सर फिर गया है, कोई उसकी ओर ध्यान नहीं दे रहा था । लेकिन वह धुन की पक्की थी, गली गली सुंदरी को ढूँढने लग पड़ी ।

38

"करामात तो करनी होगी ।" हरेक की ज़बान पर यही शब्द थे। क्या खडूवासी, क्या आस पास के गाँवों के खेतीहर, हज़ारों की गिनती में किसान और जमींदार इकट्ठे होकर उस दिन धर्मशाला में आ जुटे थे । धर्मशाला के भीतर और अंदर चारों तरफ़, जहाँ तक नज़र जाती थी, टिड्डी दल की तरह लोगों की भीड़ दिखाई दे रही थी । इनमें गुरसिक्ख भी थे, गुरू नानक के अनुयाई और दूसरे धर्मों के मानने वाले भी थे । बस एक ही रट लगाये थे, "करामात तो करनी होगी ।"

और इधर गुरू अँगद देव जी टस से मस नहीं हो रहे थे । अन्तर्लीन होकर ईश्वर के चरणों से जुड़े हुए । उन्हें तो जैसे कुछ सुनाई भी नहीं दे रहा था । धर्मशाला के बाहर यह कैसा शोर था । ये नारे कैसे लगाये जा रहे थे ? ये लाठियाँ क्यों नीचे झुकाई जा रही थीं ?

पूरे इलाक़े में कई महीनों से वर्षा नहीं हुई थी । आकाश की आँख में से एक बूँद

तक नहीं निकली थी । लोग इन्तज़ार कर करके थक चुके थे। सावन भी बीत गया था। भादों भी गुज़र गया । असौज चढ़ गया था ।

चारों तरफ़ सूखा था । धरती जगह जगह से फट गई थी, जैसे उसकी तहें उतर रही हों । चारों तरफ़ धूल उड़ती थी । नदियों सिकुड़ गई थीं । सरोवर सूख गये थे । कुओं का पानी उतरता उतरता हर जगह एक गोल टिकिया सा रह गया था, पानी भरने की पहुँच से बहार । कई गाँवों में तो पानी भरने के लिए कई कई कोस दूर जाना पड़ता । खेत सूखे थे । घास का एक तिनका तक कहीं नज़र नहीं आ रहा था । जानवर मर रहे थे । जगह जगह लाशें जल रही होती । इस तरह तो कोई महामारी फैल सकती थी। लोग हाथ जोड़ जोड़ कर, अरदासें कर करके, टोने टोटके आज़मा आज़मा कर थक चुके थे ।

सूखे का यह लगातार दूसरा साल था । किसान अपना रखा हुआ अनाज खा चुके थे । सब भयंकर भुखमरी से सहमें हुए थे । कुद्रत के सामने किसी की पेश नहीं जा रही थी ।

दिन में आसमान सपाट होता, रूखा रूखा । कहीं किसी बदरिया का टुकड़ा दिखाई नहीं देता था । भयंकर गर्मी पड़ती । सारा दिन लू झुलसाती रहती । शाम के वक्त मिट्टी और रेत की आँधियाँ चलतीं । कितनी कितनी देर तक घटा टोप सा छाया रहता । फिर रात रात भर रेत और मट्टी, उधड़ी हुई धरती पर कण कण बरसती रहती । सुबह लोग सोकर उठते तो आसपास चप्पा चप्पा धूल ओर मट्टी जमी होती ।

थक हार कर लोग गुरू महाराज की शरण में आये । वे कई दरवाज़े खटखटा चुके थे । कहीं सुनवाई नहीं हुई थी । हर तरफ़ उन्हें हार का मुँह देखना पड़ा था । लोग सख्त परेशान थे । ख़ास तौर पर इसलिये क्योंकि खडूर में शिव नाथ नाम का एक तपा* हर किसी को कहता फिरता था-यह भगवान का क्रोध है, क्योंकि तुम लोगों ने एक गृहस्थी को अपना गुरू बनाकर पूजना शुरू कर दिया है । अब उसी से कहो कि वर्षा करवाये । गुरू नानक की गद्दी पर बैठा है, क्या वह अपने श्रद्धालुओं के लिए मेंह नहीं बरसा सकता ?

और इधर गुरू महाराज सुनकर अनसुनी कर देते । जो कोई हाथ जोड़ता, फरियाद करता, उसे रब्ब का भाणा मानने के लिए कहते । धर्मशाला में पूर्ववत कीर्तन होता, कथा वार्ता होती, प्रसाद बाँटा जाता ।

शहर से बाहर सारा इलाक़ा जैसे भूना जा रहा था । लोग पानी की एक एक बूंद के लिए लड़ते झगड़ते थे । ब्यास नदी, जिसके नख़रों का कोई ठिकाना ही नहीं होता था, आज कल एक भीगी बिल्ली की तरह सिकुड़ती, सिमटती अनमनी-अनमनी धार बन कर रह गई थी ।

घर घर में घड़े खाली पड़े थे । गागरें पड़ी थीं । लोग बग़ैर नहाये तो रह सकते थे,

* तपस्वी-साधु (अनुवादक)

शायद कपड़े धोये बग़ैर भी गुज़ारा कर सकते थे लेकिन पानी पिये बग़ैर, खाना पकाये बग़ैर कैसे काम चले। पानी के बग़ैर औरतों के लिए घर का झमेला समेटना दूभर हो गया था।

उधर तपा टके सा जवाब देता था। इधर गुरू महाराज करामात का नाम तक नहीं लेने देते थे। लोग विनती कर कर के, हाथ जोड़ जोड़ कर थक चुके थे।

और अब खडूर में एकत्रित जन समूह उतावला होने लगा था। लोगों के सब्र का प्याला भर चुका था। हर ज़बान पर विद्रोह था। सामने मौत को खड़ा देखकर लोग कुछ भी करने के लिए तैयार थे। खडूर साहब से अमन और शाँति जैसे उड़ गये थे। गली गली में लोग बेचैन हो रहे थे। नाराज़गी का प्रदर्शन कर रहे थे। ज़हर उगल रहे थे।

गुरू महाराज के निकटवर्ती सिक्ख भी बिगड़े बिगड़े दिखाई देते थे। नाराज़ नाराज़ रहने लगे थे। गुरू महाराज ने कई दिनों से भाई अमरदास जी को उनके गाँव बासरके में भेजा हुआ था।

और उधर तपा गली गली में ऐलान करता फिरता था, मैं वर्षा ला सकता हूँ, तुम लोग पहले गुरू अंगद को खडूर से बाहर निकालो। जिस दिन गुरू शहर छोड़कर जायेंगे, मैं जल थल एक कर दूँगा।

ऐसा कैसे हो सकता था। गुरू महाराज बेशक वर्षा नहीं ला रहे थे, लेकिन उनसे गाँव छोड़कर चले जाने के लिये कौन कह सकता था? किसमें इतनी मजाल थी।

आख़िर इस बात की भनक गुरू महाराज तक भी पहुँच गई। उन्होंने क्षणभर में खडूर साहब छोड़ने का फ़ैसला कर लिया। और खडूर से कई कोस दूर ख़ान रायज़ादा के मैदान में जाकर डेरा लगा लिया।

अब जब गुरू महाराज भी गाँव छोड़कर चले गये, तो लोग तपे के पीछे पड़ गये कि वह अपने वादे के अनुसार वर्षा लाये। एक दिन, दो दिन, तीन दिन, तपस्वी टालता रहा कोई न कोई बहाना बनाता रहा। वर्षा आने का नाम नहीं ले रही थी। आख़िर तपा कोशिश करने लगा। कभी कोई टोना करता कभी कोई टोटका आ जमाता। मंत्रपाठ और न जाने कितने पाखंड कर चुका, वर्षा न आनी थी, न आई।

आख़िर खडूर में एकत्रित जन समूह के सब्र का प्याला मुँह तक भर गया और लोग गुस्से में आकर गाँव के तपे पर टूट पड़े। एक तो उसने गुरू महाराज को गाँव के लोगों से नाराज़ किया था, दूसरे अपने किये गये वादे के अनुसार वह आकाश से पानी की एक बूंद तक नहीं बरसा सका था।

गुस्से में लाल पीले होकर लोग तपे पर टूट पड़े। उसकी मक्कारी को वे पहचान गये थे। इससे पहले कि तपा सारा चढ़ावा लेकर इधर उधर चम्पत होता, गाँव वालों ने उसे पकड़ कर उसकी मुश्कें बाँध दीं और उसके गले में रस्सी बाँध कर गली गली में उसे घसीटने लगे।

इतने में कुदरत का खेल भाई अमर दास जी बासरके से लौट आये। उन्होंने गाँव के निवासियों को समझाया कि उन्होंने कितना भारी पाप किया था। उन्होंने दो जहान के वली

का अपमान किया था। क्या गाँव वाले, क्या बाहर से आये लोग, यह सुनकर सभी सख़्त शर्मिंदा हुए।

फिर भाई अमर दास जी की अगुवाई तले वे ख़ान रायज़ादा के मैदान में पहुँच कर गुरू अंगद देव जी के चरणों में जा गिरे। अपनी भूल बक्शवाई। भाई अमर दास जी की सिफारिश, गुरू महाराज इन्कार नहीं कर सके।

गुरू महाराज ने मैदान में एकत्रित लोगों को फिर समझाया कि वे करामात में बिल्कुल विश्वास नहीं करते। वे करामात को मदारी का खेल समझते हैं। करामात भगवान की रची सृष्टि और उसके बँधे नियमों में दख़लअंदाज़ी के बराबर है। इन्सान को ईश्वर का भाणा मानना चाहिये। उसकी रज़ा में राज़ी रहना चाहिये। रेख में कोई मेख नहीं मार सका। जन प्राणी का कर्तव्य केवल अरदास, विनती करना है । फ़ैसला ईश्वर पर छोड़ देना चाहिये।

जब गुरू महाराज मैदान में एकत्रित लोगों से इस तरह वार्तालाप कर रहे थे, उसी वक्त अकस्मात् चारों तरफ़ से काली घटा चढ़ आई और देखते ही देखते पानी बरसने लगा। इससे पहले कि लोग सँभलते, अपना अपना ठिकाना तलाश करते, चारों तरफ़ जलथल हो गया।

वर्षा में भीगते लोग गुरू अंगददेव जी की जय और गुरू नानक देव जी की जय के नारे लगाते हुए, गुरू महाराज को पालकी में बैठा कर खडूर की तरफ़ चल पड़े। ज्यों जयों वह ''जय'' के नारे लगाते, गुरू नानक की बड़ाई करते, त्यों त्यों वर्षा और भी तेज़ होती जाती थी। उस दिन वर्षा ऐसी हुई जैसी कभी नहीं हुई थी। दीवानों की तरह बरस रही थी, जैसे आज ही बरसना था। इस तरह गुरू के प्यारे निचुड़ते हुए खडूर आ पहुँचे।

39

केसर को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं आ रहा था, उस दिन करतारपुर से एक सामान से लदी एक बैलगाड़ी आई, जिसके पीछे एक भैंस थी, एक गाय थी, कुछ बकरियाँ थीं। साथ में तेजी, नसरीन, शक्ति, अमन और शैली खडूर पहुँच गये थे।

यह देखकर केसर के भीतर की सुंदरी के हाथ पैर ढीले पड़ गये। यह कैसे हो सकता था ? शक्ति और शैली एक दूसरे से घुटघुट कर बातें कर रहे थे, हँस रहे थे और सुंदरी कहीं भी नहीं थी। यह कैसे हो सकता था। सुंदरी को लगा वह लुट भी गई थी, बर्बाद भी हो गई थी। अपनी खोदी खाई में वह खुद ही जा गिरी थी। केसर तो उनके साथ घुलमिल भी नहीं सकता था। बेशक अमन से उसकी जान पहचान थी, उसके साथ कातिब का काम करता था। इससे ज़्यादा उनका कोई रिश्ता नहीं था।

अमन ने बस उसे इतना ही बताया कि वे लोग पहले करतारपुर जा बसे थे, बाबा नानक जी के प्रति अपनी श्रद्धा से बँधे हुए। बाबा जी के बाद उनके परिवार में से पहले माता सुलक्खनी जी गये, फिर लख़मी चंद जी और उनके बाद बाबा श्रीचँद जी काश्मीर की तरफ निकल गये थे । अब करतारपुर में जैसे उनका मन ही नहीं लगता था। वैसे भी

उन्होंने कभी का सन्यास ले रखा था ।

चूँकि अमन की रोज़ी का वसीला खडूर में बन गया था, अपने साथ वह बाकी लोगों को भी बाँध कर ले आया था ।

लख़मी चंद जी की ख़बर सुन कर शक्ति भी करतारपुर आई थी, चाहे कुछ दिन बाद ही पहुँची थी । उसके पिता भाई दुनीचँद का देहान्त हो गया था । केसर उसे दूर दूर से ही देखता रहता । उससे अफसोस तक नहीं कर सका था । एक पराया आदमी, फिर जवान जहान, सुंदर शक्ल का लड़का, बिन बुलाये भला किसी से कैसे घुल मिल सकता था ?

पहले कुछ दिन तो मकान तलाश करने में, ज़मीन वग़ैरह हासिल करने में बीत गये, फिर सारा परिवार पूर्ववत खुशियाँ मनाता हुआ खडूर में बस गया । ठीक करतारपुर वाला उनका नियम यहाँ भी शुरू हो गया । गुरू महाराज के दर्शन, सवेरे कीर्तन सुनना, दिन में मेहनत करनी, शाम को फिर धर्मशाला में हाज़िर होना और इस तरह अपने इष्ट के चरणों में जन्म सफल करने की चेष्टा करना ।

उस दिन ऐसा हुआ कि नसरीन ने जैसा रेशमी जोड़ा पहना था, उसी ही कपड़े का बिल्कुल वैसा ही जोड़ा शक्ति ने भी पहन रखा था । यह देखकर केसर का दिल बैठने सा लगा।

जब वे धर्मशाला में कीर्तन सुनने आईं, अमन ने उन्हें देखकर पास बैठे केसर के कान में कहा, किनती सुंदर लगती है । जैसे मां बेटी हों । औरत कभी बूढ़ी नहीं होती । खूबसूरत औरत हमेशा जवान रहती है ।

यह सुनकर केसर के जैसे प्राण सूख गये । उसका दिल डूबने लगा ।

लेकिन अगले ही क्षण अमन के मुंह से सुंदरी का ज़िक्र सुनकर केसर का दिल खिल उठा । अक्सर वह सुंदरी को याद करके परेशान हो जाता था । जब भी सुंदरी की माँ को देखता, उसकी बेटी का ज़िक्र छेड़ देता-हमेशा यही कहता-बदक़िस्मत लड़की है, उसका कोई क़सूर नहीं ।

जब से वे लोग करतारपुर से आये थे, भाई मूले की पत्नी की अच्छी देख भाल होने लगी थी । घर में सबकी हमदर्दी उसके साथ रहती । उसे अच्छा खाने के लिये मिलता । शक्ति सबके लिये ढेरों कपड़े लाहौर से लाई थी ।

भाई मूले की पत्नी कभी उस दिन का ज़िक्र लेकर बैठ जाती, जब सुंदरी ने उसके कमरे में उसके साथ पूरी रात गुज़ारी थी । लेकिन किसी को उसकी बात पर विश्वास नहीं आता था । शक्ति हमेशा यह कहकर उसका मुंह बँद कर देती थी, ''लेकिन मौसी, अपने घर आई बेटी को घर से जाने क्यों दिया ?''

इसका उसके पास कोई जवाब नहीं था । उस रात की स्मृति भी धुंधली सी थी । एक याद, भूली बिसरी सी, वह सोचती थी, शायद वह भी कोई छलावा हो ।

केसर कई दिनों से परेशान था । वह सोचने लगा था, इस तरह छिपकर उसने अपना बिंब और भी खराब कर लिया था । इतने दिनों तक जो लड़की ग़ायब थी, अपनी माँ से विमुख थी, उससे भला कौन शादी करना चाहेगा ? कौन उससे प्यार करेगा? कौन उसे

अपने बच्चों की माँ बनायेगा ?

और अब जब शक्ति कोई बहाना बना कर लौट आई थी, वह तो किसी वक्त भी दूध से मलाई उतार लेगी। अमन और शैली में से जिसे चाहेगी, उससे शादी करके लाहौर लौट जायेगी। इतने अमीर बाप की बेटी, उसके साथ फेरे लेने के लिये भला कौन तैयार नहीं होगा ?

केसर को न खाना अच्छा लगता, न पहनना अच्छा लगता। सारी सारी रात जागते निकल जाती। दिन प्रतिदिन दुबला होता जा रहा था। बस एक ही इच्छा होती, किसी न किसी तरह अमन की दिमागी हालत का कभी जायज़ा ले सके। शैली तो एक बार उसका तिरस्कार कर चुका था। वह अपना मन दोबारा क्यों बदलेगा ? अगर वह बदल भी ले तो भी क्या। सुंदरी का स्वाभिमान उसे इस तरह के आदमी के साथ समझौता करने की इजाज़त देगा ?

केसर सिर्फ़ एक ही बात के सहारे ज़िन्दा था, वह भी अमन की सुंदरी के बारे में चिन्ता। उठते-बैठते सुंदरी का ज़िक्र छेड़ देता। उसे पक्का यकीन था कि वह लड़की कहीं छिपकर जा बैठी और उस घड़ी की प्रतीक्षा कर रही थी, जब उसे सामने प्रकट होना चाहिये। इस तरह की लड़कियाँ कभी आत्महत्या नहीं किया करती। जब भी उसे मौक़ा मिलता था वह दूर और नज़दीक से आये यात्रियों से सुंदरी का ज़िक्र छेड़ देता। इस उम्मीद में कि सुंदरी की कोई टोह मिल जाये। और जिस तरह वह सुंदरी का ज़िक्र करता था- "परियों जैसी सुंदर लड़की" सुनते ही केसर पर नशा सा छा जाता। कोई दिल तो ऐसा था जिसमें उसके लिये अभी भी क़द्र थी।

फिर एक दिन केसर के मन में न जाने क्या आई, वह अमन के आगे सुंदरी का क़िस्सा ले बैठा। दरअसल वह फ़ैसले की प्रतीक्षा करते करते थक चुका था। वह अमन के दिल को टटोल कर देखना चाहता था कि वह कितने पानी में हैं, उसके मन में सुंदरी के लिये क्या स्थान है। फ़ुर्सत में बैठे वे इधर उधर की बातें कर रहे थे कि शक्ति और शैली दोनों खेतों की ओर सैर करते जाते हुए दिखाई दिये।

"लगता है ये दोनों कहीं से कहीं पहुँच गये हैं।"केसर की आवाज़ में व्यंग्य था, लेकिन अपने लहजे को, इतने दिनों से अपनाई हुई नाटकीयता के आधार पर बड़ी आश्चर्यजनक ख़ूबी से सधाया हुआ था।

"क्या मतलब?" अमन ने चौंक कर केसर से पूछा।

"मेरा मतलब है, शैली और शक्ति-" केसर कहते कहते रूक गया।

"शैली और शक्ति। कितना संगीतमय जोड़ है।"

"मैं तेरी जगह होता तो ईर्ष्या से जलभुन चुका होता, ऐसी अमीर लड़की और कोई और उसे मार कर ले जाये।"

"कमबख़्त, तूने सुंदरी को देखा ही नहीं। बेशक वह शक्ति जैसी गोरी नहीं, लेकिन उसका गदुमी रंग, जिस पर लाखों गोरी चमड़ी वाली लड़कियों को कुर्बान किया जा

सकता है । उसके नैनों का जादू, उसके मोतियों जैसे दाँत । उसके घने काले, रेशम जैसे मुलायम लंबे बाल, पान जैसा मुखड़ा, ऊँचा लँबा कद, वह तो जादूगरनी है ।''

''सच? फिर तो यार उसे तलाश करना चाहिये ।'' केसर ने अमन को छेड़ा ।

''शैली बदकिस्मत है, जिसने उस जैसी हसीना को ठुकराया है ।''

''वह कैसे?''

''बेचारी लड़की को कोई तुरकड़ा उठा कर ले गया था''

''और फिर ?''

''मैं पूछता हूँ इसमें लड़की का क्या कसूर है ? यह हादसा हर औरत के साथ हो सकता है ।''

''बेशक ?'' एक नशे में आकर केसर के मुंह से निकला ।

''यही नहीं ।'' अमन आवेश में बोलता जा रहा था, उस बेचारी अबला ने इसे ख़त लिख कर भरोसा दिलवाया था–मैं बाबा नानक को हाज़िर नाज़िर जानकर कहती हूँ कि मैं पहले की तरह अछूती क्वँवारी हूँ ।''

''तब भी इस पर असर नहीं हुआ?''

''असर? यह मुझे कहने लगा, वह झूठ बोलती है । शेरख़ान उसके साथ मुंह काला करता रहा है ।''

''तौबा तौबा !!''

''मैंने सुना और उससे कहा, ठीक है, फिर मैं उसके साथ शादी करवा लूँगा । कमबख़्त हमारे आने से पहले ही कहीं गायब हो गई है, नहीं तो-''

अमन ने देखा, केसर के हाथ में पकड़ी कलम नीचे गिर गई थी । हक्का बक्का होकर वह उसे बिट बिट देख रहा था ।

40

''पगली है ।'' भाई मूले की पत्नी को जो भी देखता, यही कहता । आज कल उसकी मानसिक हालत फिर बिगड़ रही थी । दरअसल, शैली और शक्ति को दिन बदिन नज़दीक आते देख कर जैसे उसके तन बदन में आग लग जाती थी । वह अपने को ठगी ठगी महसूस करती। उसके मन में आता कि वह अपने बाल नोंच कर कहीं निकल जाये । इसी वहशत में उसकी कोई मदद नहीं कर सकता था। सुंदरी भी नहीं । एक बार वह आज़माकर देख चुकी थी। जब तक उसे अपनी बेटी की बात पर विश्वास नहीं होगा, वह इसी तरह तड़पती रहेगी, इस बिमारी से सिर्फ़ गुरू महाराज उसे छुटकारा दिलवा सकते थे ।

एक पगली और आज कल गली गली में घूमती देखी जाती थी । वह शहर के जुलाहे की बीवी थी । बात यूँ हुई कि भाई अमर दास जी ने गुरू अँगद देव जी के स्नान आदि की सेवा अपने ज़िम्मे ले रखी थी । इस लिए वे गर्मी सर्दी में गागर भर कर स्वच्छ पानी लाते थे । तड़के ही जाग कर वे पानी की गागर लाकर अमृत वेला में सत्गुरू को अपने हाथों से स्नान करवाते फिर उनके वस्त्र धोते । यह उनका प्रतिदिन का नियम था।

उस रात बेहद वर्षा हुई थी। गलियों में कीचड़ ही कीचड़ था। तीसरे पहर जब भाई अमर दास जी पानी की गागर उठाये ब्यास नदी से आ रहे थे कि ज़ोर का तूफ़ान आने लगा। एक तरफ़ सर्दी, दूसरी तरफ़ तेज़ हवा, फिर घुप्प काली रात। शहर में दाख़िल होते ही उनका पैर जुलाहे की खूंटी में टकराया। इस चिन्ता से कि गागर नीचे न गिरे, गागर की बेअदबी न हो, वे खड्डी के लिये खुद गड्डे में जा गिरे। उनके इस तरह गिरने से खड़ाक की आवाज़ आई और भीतर सोया जुलाहा जाग उठा। "कौन है ? कौन है ?"पुकारने लगा। उसने सोचा, क्या पता कोई चोर है। इतने में उसकी बीवी जागकर कहने लगी, कोई नहीं, वही होगा अमरू निथावाँ जो हर रोज़ इसी वक्त पानी की गागर भर कर यहाँ से गुज़रता है" और उसने अपने घर वाले को फिर सुला दिया।

"पगली है !" जुलाहिन को इस तरह बोलते हुए सुन कर भाई अमर दास जी के मुंह से निकला। न मालुम क्या बेक़ार की बातें बके जा रही थी- "इसे शर्म भी नहीं आती। समधियों के यहाँ आकर बैठ गया है। ऐसा निर्लज्ज भी कभी देखा है। भई इस बुढ़ापे में तुझे यहाँ से क्या लेना है.......?"

"पगली है," भाई अमर दास जी के मुंह से निकला और जुलाहिन का सिर फिर गया। उसका घरवाला तो दोबारा सो गया लेकिन वह खुद बाकी की सारी रात जो मुंह में आया, वही बकती रही। दिन चढ़े जब जुलाहे की आँख खुली, उसकी बीवी अपने कपड़े फाड़ कर पागलों की तरह अपने बाल नोंच रही थी। आसपास उसके बालों के गुच्छों का ढेर लगा था।

जुलाहे ने उसे संभालने की कोशिश की लेकिन वह बेक़ाबू हो कर उसके हाथ से निकल गई। और अब गली गली पागलों की तरह घूमने लगी। रोती पीटती रहती।

आखिर हार कर जुलाहा उसे गुरू महाराज के चरणों में ले आया। जानी जान गुरू अँगद जुलाहिन का रोग पहचानते थे। उन्होंने भाई अमरदास जी को बुला भेजा और जुलाहिन को समझाया -"यह अमरू निथावाँ" नहीं, यह तो बेघरों का घरघाट है, अपमानितों का मान है। बेसहारों का सहारा है। हीनों की ओट है। निराश्रयों का आश्रय है। निराधारों का आधार है। यह पीरों का पीर है......।"

गुरू महाराज बोल रहे थे और जुलाहिन की आँखों से एक एक कर के अँधेरे की पर्तें उतरनी शुरू हो गई। वह भली चँगी हो गई।

उधर इसी तरह भाई मूले की पत्नी के सर से जैसे मैल की पर्तें उतर रही थीं। बात यूँ हुई कि पिछले कुछ दिनों से शेरख़ान अपनी नई बीवी ज़ाहिरा और अपनी बूढ़ी अम्मा के साथ गुरू महाराज को इस बात से वाकिफ़ कराना चाहता था कि गुरू घर के प्रति सूरी ख़ान के इरादे कुछ नेक नहीं थे। गुरू महाराज के अनुयायियों की प्रतिदिन बढ़ती हुई तादाद उस समय की हकूमत को एक ख़तरा प्रतीत होती थी। गुज्जर लोहार जैसे गुरसिक्खों से सूरी हुक्मरान ख़ासतौर पर परेशान थे। हकूमत की इस सोच का पता उसे ज़ाहिरा के अब्बा से चला था।

इलाके भर में गुरूघर के श्रद्धालु के रूप में शेरख़ान की ख़ासी प्रतिष्ठा थी। शहर के प्रतिष्ठित व्यक्ति उसकी लाख ख़ातिरें करते थे। शैली के साथ तो उसकी जान पहचान पहले से ही थी, अमन के साथ भी उसका परिचय हो गया। इसका बड़ा कारण ज़ाहिरा थी, जिसके मन में आज भी कहीं अमन के लिए प्यार छिपा पड़ा था।

शेरख़ान गुरूधर को भेंट करने के लिये अपने साथ ढेरों सौग़ातें लाया था। हीरे, मोती और सोने के हार, दरियाँ और क़ालीन, ज़रबफ़्त और किमख़ाब के कपड़े, चाँदी के बर्तन। सबसे प्यारी चीज़ सँदल की एक सँदूकची थी, जिस पर हाथी दाँत का महीन काम किया गया था। पास और दूर के गुरूसिक्ख सभी शेरख़ान का बेहद आदर करते थे। उसके परिवार को बाबा नानक का आशीर्वाद प्राप्त था जिन्हें वे अपना पीर मानकर आदर देते थे।

इस तरह का आदमी किसी पराई कँवारी लड़की के साथ अन्याय नहीं कर सकता। अमन का दिल इस बात की गवाही भरता था। और जब अमन ने उससे यह बात छेड़ी तो शेरख़ान लाख लाख कसमें खाने लगा। उसी वक्त भाई मूले की पत्नी को मिलने के लिए तैयार हो गया। अपने साथ उसने अपनी बजुर्ग माँ को भी साथ ले लिया।

शेरख़ान की माँ, भाई मूले की पत्नी को गले से लगा कर बहुत देर तक प्यार करती रही। बोली–"तेरी बेटी जैसी सुशील लड़की मैंने अपनी ज़िंदगी में नहीं देखी। जितनी सुंदर उतनी सुधड़। इतने दिन वह हमारे यहाँ रही मैंने तो उसे अपने कलेजे से लगा कर रखा। किसी की मजाल नहीं थी कि कोई आँख उठाकर उसे देख सकता। हमारे लिए वह घी–घियानी थी–बीबी, मुझे तो एक पोते की लालसा थी। हमारे भागों में नहीं थी तेरी बेटी, हमने इसे ढँक लपेट कर अपने साईस के साथ, घोड़ी पर बैठा कर वापिस भेज दिया।

"कितने सुंदर ढँग से सुबह अमृत वेला में उठकर नहाती धोती थी, पाठ करती थी। हमारे घर में तो हर कोई तड़के उठ जाता है। नमाज़ पढ़ने वाले नमाज़ पढ़ते हैं, पाठ करने वाले पाठ करते हैं। हमारे घर में किसी ने हिन्दू मुसलमान में फ़र्क नहीं किया। हम लोग बाबा नानक के बताये रास्ते पर चलते हैं–'न कोई हिन्दू न कोई मुसलमान' सभी इन्सान हैं। जो रास्ता जिसको अच्छा लगे, वही चुन ले। पहुँचना तो एक ही स्थान पर होता है।

"तेरी बेटी सुंदरी सिर्फ़ सुंदर ही नहीं, वह तो सुच्चा मोती है। भागों वाले माता पिता होते हैं जिनकी ऐसी औलाद होती है। मेरी बहू–बेटियाँ अपनी जगह, हमारे तो नौकर चाकर अभी तक इस लड़की को याद करते हैं। ऐसी चाल, ऐसा रँग–रूप .....।"

वह अभी बोल ही रही थी कि सामने दरवाज़े में से सुंदरी अपनी पूरी छवि के साथ कमरे में दाख़िल हुई। शेरख़ान की माँ का मुंह दरवाज़े की तरफ़ था। बाक़ी सब लोगों की पीठ दरवाज़े की तरफ़ थी। रक्ख साईं की, जीती रह बेटी, मैंने तो सोचा था, इस ज़िंदगी में फिर हमारी मुलाक़ात नहीं होगी।" शेरख़ान की माँ ने सुंदरी को देखते ही आगे बढ़ कर उसे अपनी बाँहों में ले लिया। उसे प्यार करने लगी। उसकी बलइयाँ ले रही थी।

घर के बाक़ी लोग सुंदरी को गले लगाने के लिए व्याकुल हो रहे थे। भाई मूले की पत्नी जहाँ बैठी थी वहीं जैसे पत्थर की सिल बन गई हो। बिट बिट आँखों से अपनी बेटी को देख रही थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि यह सपना था या सच्चाई थी।

तीसरा खंड

1

"हाये.......ये........ये.......ये !" किसी जवान जहान लड़की की हृदय-विदारक आवाज़ जैसे आसपास के वातावरण को झुलसाती हुई निकल गई । फिर चारों तरफ़ चुप्पी छा गई ।

अमन और सुंदरी की आँख खुल गई, यह उनका सुहाग सप्ताह था ।

जाड़े के दिन । भोर की बेला । भूरी काली रात । जमा देने वाली सर्दी । आकाश में कोई विरला विरला तारा, वह भी जैसे खिसक रहा हो ।

अमन और सुंदरी दोनों सहमें हुए चौबारे की खिड़की के सामने खड़े हो गये । सामने गली की कोठरी में से आवाज़ आई थी । फिर एक छलभरी साज़िशी ख़ामोशी । अभी वे कुछ फ़ैसला ही नहीं कर पाये थे कि "हाय शेरा ! हाय शेरा!!" "एक बुढ़िया के छाती पीटने की आवाज़ आने लगी । क्षणभर के बाद ही जैसे एक अँधड़ उमड़ पड़ा हो । कई आवाज़ें, बूढ़ी, जवान, बच्चों की, चीख रहीं, चिल्ला रही आवाज़ें सुनाई देने लगीं । ढाहें मार रहे मर्द, पीट-पीट कर अपने टुकड़े कर रही औरतें । अड़ौसी, पड़ौसी, मुहल्ले वाले छल छल रोते, वैण डालते, विलाप करते हुए इकट्ठे होने लगे ।

सामने के घर में सज्जन नाम का शीशम के पेड़ जैसा जवान गुज़र गया था। अभी तो पिछले साल ही उसकी शादी हुई थी । दुआबे की लड़की कल्याणी, पश्चिम के चाँद जैसी विधवा हो गई थी ।

कल ठीक ठाक था । सुबह उसे ताप चढ़ा, दोपहर को ताप बढ़ा, शाम को ताप सर पर चढ़ गया । वह प्रलाप करने लगा । हकीम आये, वैद आये, ज़ोर लगा थके । कोई उपाय काम न आया । कोई दवा कारगर न हुई । देखते देखते शेर सा जवान ढेरी हो गया ।

कान पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती थी । रो रो कर, छातियाँ पीट पीट कर सियापा कर रही औरतें बेहाल हो रही थीं । मर्द एक दूसरे के गले लग लग कर, विलाप करते, खून के आँसू बहा रहे थे ।

पौ फटने लगी, सुबह होने लगी ।

इतने में किसी पड़ौसी बुढ़िया को ख़्याल आया । वह कल्याणी को बाँहों से पकड़कर बाहर आँगन में ले आई और सिल पर बारी बारी से उसकी दाईं और बाईं बाँह रखकर सिलबट्टे से उसकी हाथी दाँत की चूड़ियाँ और काँच की चूड़ियाँ तोड़ने लगी, "ना ताई ! ना ताई !!" कल्याणी फ़रियाद कर रही थी । अभी तो उस रोज़ उसने बनजारिन से झम-झम करती लाल, पीली चूड़ियाँ पहनी थीं । फ़रियादें करती, अपने बाल नोचती हुई-लगता था कल्याणी आँगन में ग़श खाकर गिर पड़ी थी । वैसे की वैसे पड़ी थी। उसे सँभालने के लिये कोई बाहर नहीं आया ।

खिड़की में खड़े अमन और सुँदरी यह सब देख रहे थे, सब कुछ सुन रहे थे। सुंदरी ने अपनी कलाइयों से मोतिया के गजरे उतारे , अपने जूड़े से जूही की नन्ही कलियों से गुँधी हुई वेणी उतारी, फिर चंबे का हार गले में से उतारा और एक एक करके खिड़की के पास आले में उन्हें फेंकती गई।

कितनी सुंदर रात थी जब वे सोये थे। जैसे उनके कँठों में शादियाने गूँज रहे हों। चारों तरफ़ शहनाईयों की आवाज़ गूँज रही हो। और कैसी भयानक सुबह में उनकी आँख खुली थी।

अमन और सुंदरी अब एक दूसरे के मुंह की तरफ़ देख रहे थे। चाहे उन लोगों से उनकी ख़ास जान पहचान नहीं थी। कुछ दिन ही तो हुए थे उन्हें इस चौबारे में आये। नवविवाहित जोड़े के लिये अलग कमरा। अमन की नज़रें कह रही थीं कि उसे पड़ौसियों के यहाँ जाना पड़ेगा। बेशक उनकी ज़्यादा जान पहचान नहीं थी, लेकिन पड़ौस का तकाज़ा, उसे उनके यहाँ जाना पड़ेगा।

सुंदरी नहीं गई। उसे डर था कि उसके हाथों की मेंहदी छिपाये नहीं छिपाई जा सकेगी। इस चौबारे में उसके पास तो सादे कपड़े भी नहीं थे। भड़कीले रंगों के रेशमी जोड़े ही वह अपने साथ लाई थी। बाक़ी सब उनके साँझे घर में था, जहाँ तेजी और नसरीन, उसकी माँ-भाई मूले की बीवी टिके हुए थे।

घर शहर से बाहर था, साथ में कितने ही बीघे ज़मीन थी। लेकिन अभी उन्होंने ब्याना ही दिया था, उसे बाक़ायदा ख़रीदा नहीं था। घर बेशक बड़ा था, लेकिन नवविवाहित जोड़े के लिए भाई मूले की पत्नी ने अलग प्रबंध कर दिया था। असल में उसकी मर्ज़ी थी कि कुछ दिन बाद वह अमन और अपनी बेटी को लेकर स्यालकोट लौट जायेगी।

अमन कुछ देर के लिये सामने वाले घर में गया। उसके पीछे अपने चौबारे में अकेली सुंदरी वैण और विलाप सुनती हुई ख़्यालों में डूब गई थी। अचानक उसकी नज़र सामने आँगन में जा पड़ी। कल्याणी बर्फ़ की तरह ठँडी ज़मीन पर चारों ख़ाने चित्त पड़ी थी। बाहर आँगन में वह लड़की, जिसका सुहाग उजड़ गया था, बेहाल एड़ियां रगड़ रही थी। और भीतर कमरे में किसी को उसकी खोज ख़बर लेने की फ़ुर्सत नहीं थी। सुंदरी तेजी से भागती हुई दरवाज़ा खोल कर चौबारे से निकली, दगड़ दगड़ सीढ़िया उतर कर सामने आँगन में बेहोश पड़ी लड़की के साथ जूझने लगी।

इतनी क़हरों की मौत, सुंदरी और अमन की शोगवार घर से वापिस लौटने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। कल्याणी के सास ससुर, देवर, जेठ, और कई रिश्तेदार इकट्ठे हो रहे थे। ज्यों ज्यों और रिश्तेदार आते जाते, कल्याणी को बार बार बेहोशी के दौरे पड़ जाते। उसके मुंह से झाग निकलने लगती। घर वालों को जैसे उसकी परवाह ही न हो। एक बार उसकी देखभाल शुरू करने के बाद सुंदरी का मन उसको इस हालत में छोड़कर जाने का नहीं हो रहा था। कभी कोई उपाया करती, कभी कोई उपाय करती। हथेलियाँ मलने के बाद पैरों के तलुवों पर मालिश करने लगती। कभी कल्याणी के मुँह पर पानी के

छींटे मारती कभी उसके भिंचे हुए दाँत खोलने की कोशिश करती । कोई भी उसकी मदद नहीं कर रहा था । जैसे तैसे किसी पड़ौसिन की मदद से उसने कल्याणी को कमरे के भीतर लाकर लिटाया था । तभी से वह उसी हालत में पड़ी थी । साथ के कमरे में उसके पति सज्जन की लाश चटाई पर पड़ी थी, इधर उसकी बीवी अपने पलँग पर पत्थर हुई पड़ी थी, जैसे दम तोड़ रही हो ।

और फिर वही पड़ौसिन आई जिसने पहले कल्याणी को उठाकर भीतर लाने में सुंदरी का हाथ बँटाया था । ''माँ जी किसी वैद्य को बुला देखिये, यह लड़की तो हाथ से जा रही है,'' सुंदरी ने जैसे मिन्नत की । उसके गले से आवाज़ नहीं निकल रही थी । ''किस लिये बेटी ? इसने तो अब जाना ही है, चाहे अभी जाये, चाहे दो घड़ियाँ बाद जाये, जब उसके मर्द की चिता में आग दी जायेगी । यह तो सती है ।''

सुंदरी ने सुना तो उसके प्राण सूख गये । एकदम उसे याद आया कि कल्याणी का मर्द मर गया था और कुलीन जाति की सारस्वत ब्राह्मण लड़की को उसके साथ ही जला दिया जायेगा ।

''नहीं, नहीं, यह कैसे हो सकता है ?'' सुंदरी के भीतर से बार बार आवाज़ आ रही थी । उसका खून खौल रहा था । लेकिन यह सच्चाई थी । ''यह तो सती है ।'' उसके कानों में पड़ौसिन बुढ़िया के बोल गूँजने लगते । और फिर सुंदरी और भी मुस्तैदी से कल्याणी को होश में लाने के लिये हाथ पैर मारने लगी ।

आखिरकार वह अपनी इस कोशिश में कामयाब हो गई । कल्याणी ने आँखें खोल दीं । वह बिट बिट आसपास देख रही थी ।

एक वर्णातीत ऐसा हुस्न जो बयान से बाहर था । उसकी आँखों में एक जादू था । जैसे उसकी पलकों में सपने पिरोये हों । उसकी भीगी भीगी पलकें उन चुमणों को खोज रही थीं, जो उसकी सारी उदासी को चूस रहे हों । उसके चेहरे पर बिखरे बिना सँवारे बाल जैसे उसे डँक मार रहे हों, उसकी सुंदरता को घूँट-घूँट कर चूस रहे हों । उसका दमकता हुआ गोरा रंग पीला पड़ गया था। ओठों पर जैसे पापड़ी जम गई थी । वह लड़की थी या परी थी, जो किसी शाह बहराम के वियोग में निढ़ाल हो गई थी ।

इतने में फफाकुट्टनी की शक्ल वाली वही मरियल बुढ़िया आई जो कुछ देर पहले कल्याणी को पकड़ कर उसका चूड़ा और चूड़ियाँ फोड़ने के लिये बाहर आँगन में ले गई थी । उसके पीछे पीछे गाँव की अचारजन थी ''तुझे बस यहीं बैठना हैं, इसी कमरे में । वक्त आने पर इसे नहलाना होगा । बाल धोने होंगे । फिर इसे सुहाग का जोड़ा पहनाना होगा ।'' उसे समझाती हुई बुढ़िया सुंदरी की तरफ़ इस तरह देखने लगी जैसे कह रही हो-यह कौन सी अजनबी लड़की हमारे यहाँ आ घुसी है ? कहीं कोई ऐसी वैसी तो नहीं ? सती सुहागिन तो देवी होती है । उसके पलँग पर हर कोई नहीं बैठ सकता ।

न जाने क्यों सुंदरी को इस औरत से बेहद डर लगने लगा । उसे ऐसा महसूस हुआ जैसे आग की एक लपट उसकी छाती से निकल कर सुंदरी के कपड़ों से आकर चिपक गई हो । उसके पसीने छूटने लगे ।

2

सुंदरी को चैन नहीं आ रही थी । जिस तरह कल्याणी को अलग कमरें में एक चारजन की निगरानी में रखा जा रहा था । सुंदरी को शक हो गया कि घरवालों के हाथों से उस दिन कोई अनर्थ होने वाला था । उधर कल्याणी बार बार अपनी सूनी कलाइयों को देख रही थी । उसकी कलाइयाँ, बाँहें लहू लुहान हो गई थीं ! सुँदरी ने खिड़की में से अपनी आँखों से देखा था, किस बेरहमी से उस फ़फ़ाकुटनी ने कल्याणी का कलाइयों तक का लाल चूड़ा मसल मसल कर उतारा था, झमझमाती रंगबिरंगी चूड़ियों को फोड़ा था । सुंदरी कसमसा कर रह गई थी । इतनी जल्दी भी क्या थी? बेशक उसका मर्द मर गया था । बेशक वह विधवा हो गई थी, अब चूड़ा उसके किस काम का ? अब उसने उन चूड़ियों की खनखन किसके लिये करनी थी ? चूड़ा आराम से भी तो उतारा जा सकता था । चूड़ियाँ खिसका कर कलाइयों में से उतारी जा सकती थीं । उसी दिन तो मनिआरिन ने कितने सुँदर ढँग से कल्याणी को पहनाई थीं ।

सुंदरी बड़ी बेदिली से उनके घर से लौट कर अमन के साथ नहा धो कर नित्य नेम के लिये धर्मशाला गई, लेकिन पूरा वक्त उसका ध्यान कल्याणी में ही लगा रहा । जिस हसरत से वह बार बार अपनी सूनी कलाइयों की तरफ़ देख रही थी, सुँदरी भुलाये नहीं भूल पा रही थी। जिस क्षण से उसे होश आई थी वह हक्की बक्की, आँखें फाड़ फाड़ कर, नाख़ूनों से नोंची गई अपनी कलाइयों को देख रही थी। उसके नाक और कान तो पहले से नंगे थे जब वह औरत उसे बाँह से पकड़ कर बाहर आँगन में लाई थी ।

धर्मशाला में बैठे रबाबी कबीर का एक शब्द प्रस्तुत कर रहे थे- ''बिन सत्त सती होइ कैसे नारि ।''

''हो न हो, कल्याणी को सती किया जा रहा है !'' कीर्तन सुनती हुई सुंदरी के भीतर से जैसे किसी ने उसे झँझोड़ कर हिलाया । और वह बिना अमन को बताये उठ कर कल्याणी के घर की तरफ़ चल पड़ी ।

उसकी आशंका ग़लत नहीं थी । कल्याणी के घर के एक कमरे में उसके पति की मृतक देह को दाह संस्कार के लिये नहलाया धुलाया जा रहा था । दूसरे कमरे में कल्याणी के इर्द गिर्द बैठी औरतों में से कोई कुछ कह रही थी, कोई कुछ कह रही थी । और कल्याणी पहले की तरह हक्की बक्की, बिट बिट आँखों से देख रही थी, जैसे उसे कुछ सुनाई न दे रहा हो, कुछ सूझ न रहा हो ।

''सतीआ सडत टोभड़ी टोए'' एक बुढ़िया बार बार पुकारे जा रही थी ।

एक और औरत पाराशार स्मृति के चौथे अध्याय में से रटे हुए श्लोक पढ़कर उनकी व्याख्या करने लगी-जो स्त्री अपने पति के साथ सती होती है, उसका स्थान उतने ही बरस स्वर्ग में रहता है, जितने उसके पति के रोम हों, सती होना भारी पुन्न माना जाता है ।

जो भी औरत कल्याणी के कमरे में आती उसे इस तरह प्रणाम करती, उसे देखकर इस तरह हाथ जोड़ती जैसे वह साक्षात देवी हो, कोई महान आत्मा । उसका दर्शन करने

वाले निहाल हो रहे थे ।

कुछ देर बाद चारजन फ़ालतू औरतों को बाहर निकालने लगी, ताकि वह कल्याणी को तैयार कर सके । पानी की बल्टोहियाँ उसके कमरे के एक कोने में रखी जा चुकीं थी । इतने में कल्याणी की सास आई । उसके हाथ में रेशमी,तिल्ले से जड़ा दुपट्टा और ज़रबफ़्त का एक जोड़ा था । कल्याणी ने देखा तो उसकी ऊपर की साँस ऊपर, नीचे की साँस नीचे रह गई । यह तो वही जोड़ा था जिसे पहन कर उसने फेरे लिये थे ।

"नहीं, नहीं, नही !" वह शेरनी की तरह गर्जती हुई उठकर अपने पलँग पर बैठ गई । उसकी आँखों से छलछल आँसू टपकने लगे । उसने अपने सुनहरी बाल नोंचने शुरू किये । "नहीं, नहीं, नहीं" बार बार पुकारे जा रही थी ।

अब चारजन एक स्मृति में से श्लोक का उच्चारण करने लगी । न उसे खुद इन श्लोकों की समझ आ रही थी, न ही सुनने वालों को । ऊँचे स्वर में बोलती जा रही थी । उधर कल्याणी "नहीं नहीं, नहीं" चिल्लाती हुई अपने बाल नोच रही थी । कानों पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं दे रही थी ।

क्षणभर में कल्याणी शेरनी की तरह उछल कर पलँग से उठ खड़ी हुई । ऐसा लगता था कि वह सबको पछाड़ कर बाहर निकल जायेगी । यह देख कर तगड़े शरीरवाली चारजन ने उसे अपनी बाँहों में लेकर पलँग पर पटक दिया । पलँग पर गिरते ही कल्याणी का सर पाये से टकराया, उसे लगा वह चक्कर खाकर किसी कुएँ में जा गिरी हो । वह फिर बेहोश हो गई थी ।

अब घर वालों की मदद से चारजन ने सभी को कल्याणी के कमरे से बाहर निकल कर भीतर से कुँडी लगा ली ।

बाहर भीड़ में खड़ी सुँदरी तिलमिला रही थी ।

थोड़ी देर बाद ही कल्याणी के कमरे में से चारजन के स्वर "सतीआ सउत टोभड़ी टोए" पुकारने की आवाज़ आने लगी । आवाज़ हर क्षण और ऊँची होती जा रही थी । एक ही साँस में वह बोलती जा रही थी-"सतीआ सउत टोभड़ी टोए"-"सतीआ सत टोभड़ी टोए"

थोड़ी देर बाद कल्याणी के कमरे में से अगरबत्ती की सुगँध आनी शुरू हो गई । ऐसा लगता था, जैसे कोई सर हिला हिला कर गा रहा हो, कभी हाथों से कभी पैरों से ताल दे रहा हो ।

सुंदरी उनके घर से नहीं हिली । अपरिचित थी तो क्या हुआ ?

अमन उसे ढूँढता हुआ आया । सुंदरी ने उसे भी वहीं रोक लिया । क़हरों की मौत वाला घर । कई लोग आ रहे थे, जा रहे थे । और फिर वे तो पड़ौसी थे । बेशक उस मुहल्ले में आये उन्हें ज़्यादा दिन नहीं हुए थे । लेकिन पड़ौसी तो माँ जायों जैसे होते हैं ।

उधर शमशान भूमि में दाह संस्कार की तैयारियाँ हो रही थी। लोग आ-जा रहे थे। हर तरह की सामग्री घर से भेजी जा रही थी । हर बार जब कोई नया संबंधी-रिश्तेदार आता

तो रोने–धोने का स्वर ऊँचा हो जाता । वैण ख़त्म होने में ही नहीं आ रहे थे । मौत भी तो साधरण नहीं थी, माँ बाप का सबसे बड़ा बेटा शिखर जवानी में देखते ही देखते चला गया था । कटे वृक्ष के तने की तरह बेजान पड़ा था । सुंदरी जितनी बार उसकी तरफ़ देखती उसका कलेजा जैसे उछल कर बाहर आ पड़ता था । सुंदरी उनके यहाँ से हिल नहीं रही थी । लेकिन इस बार अमन जब निराश होकर वहां से जाने लगा, तो वह भी उसके साथ चलने को तैयार हो गई । कहने लगी कुछ देर अपने चौबारे में सुस्ता लेती हूँ पर आज मुझसे कुछ खाया पिया नहीं जायेगा ।

अभी अर्थी निकलने में देर थी । घरवालों को लड़के के ननिहालवालों का इन्तज़ार था ।

''कल्याणी के मायके वालों की तो कोई बात ही नहीं करता,'' सुंदरी अमन से कह रही थी ।

अमन ख़ामोश था । उसने जवाब देना मुनासिब नहीं समझा ।

''इसका मायका दूर किसी शहर में है।'' कुछ देर बाद सुंदरी फिर बोली ।

अमन बस सुन रहा था ।

''पता नहीं उन्हें किसी ने ख़बर दी है या नहीं ।''

''ख़बर तो दी होगी, ख़बर कैसे न देते ?''

''कब कोई वहाँ पहुँचेगा, कब वहाँ से कोई आयेगा।''

''तब तक कहानी ख़त्म हो चुकी होगी ।''

सुंदरी कुछ कुछ देर बाद अपने आप बोलती जा रही थी । अमन ख़ामोशी से सुन रहा था ।

''मर्द जात, तुम लोग मर कर भी औरत की जान की क़ुर्बानी माँगते हो ।'' सुंदरी के भीतर की दुल्हिन ने कुछ देर बाद अपने महबूब को देख कर हसरत से कहा ।

अब अमन अचानक बोल उठा । ''मैं इस तरह की क़ुर्बानी शायद कभी नहीं माँगूगा ।''

''बेशक ! लेकिन मेरी जान, मैं तेरे बग़ैर एक क्षण भी नहीं जीना चाहूँगी ।'' सुँदरी अपने भीतर के समूचे प्यार में पुकार उठी ।

3

अपने चौबारे में कुछ देर के लिये लेटी हुई सुंदरी की आँख लग गई । थोड़ी देर बाद उसके कानों में जैसे कोई कालका पुराण की यह कथा फुसफुसा रहा हो ; सती से अपने पति का निरादर नहीं देखा गया । उसके पिता के यज्ञ में उसके सर के साईं का निरादर हो, सती के तन मन में जैसे आग लग गई हो । उसने यज्ञ के कुंड में कूद कर अपने प्राण त्याग दिये । शिव ने यह देखा तो सती के पिता के यज्ञ का नाश कर दिया और सती के मोह से बँधा उसकी लाश को कुंड में से निकाल कर कंधों पर उठा लिया । दिन रात वह उसी तरह लाश उठाये दीवानों की तरह घूमता रहता । विष्णु को जब इसकी सूचना मिली तो

उन्होंने अपने सुदर्शन चक्र से सती की लाश के टुकड़े टुकड़े कर दिये और फिर जिस जिस स्थान पर सती के अलग अलग अंग गिरे, वे स्थान पवित्र माने जाने लगे। सती की जीभ उस स्थान पर गिरी जहाँ आज कल ज्वालामुखी तीर्थ है। जहाँ उसके नेत्र गिरे वहाँ नैनादेवी का मंदिर है। सती के अंगों के टुकड़े इक्यावन स्थानों पर गिरे और वे सारे स्थान "देवी पीठ" के नाम से जाने जाते हैं।

यह कथा ख़त्म हुई तो सुंदरी की आँख खुल गई। वह पसीने से तर हो गई। सामने अमन भी सो गया था। उसे बिना जगाये, बिना बताये, वह तेज़ क़दमों से सामने कल्याणी के घर की ओर चल पड़ी।

दोपहर ढल रही थी। ज्यों ज्यों अर्थी निकलने का समय नज़दीक आ रहा था, घर में तैयारियाँ ज़ोर पकड़ रही थी। रोना-धोना जैसे मन्द पड़ गया था। और आगे बढ़ी तो सुंदरी को पता चला कि मृतक को नहलाया जा चुका था। अर्थी के बाँस तैयार हो कर आ गये थे। बाहर आँगन में एक कोने में रखे थे।

कल्याणी को उसके कमरे में दुल्हिन की तरह सजाया जा चुका था। रेशमी वस्त्र, पैरों के तलुओं पर अलका, बाल मेढ़ियों में गुँधे हुए, आँखों में लपलपाता हुआ काजल, गालों पर सुर्ख़ी का पोच। वह बिट बिट आँखों से देख रही थी, जैसे मुँह में ज़बान न हो। पूरा कमरा अगरबत्तियों के धूँए से भरा हुआ था। एक ऐसी खुशबू थी जो मदहोश सा कर रही थी। पलकें भारी भारी होने लगतीं।

इतने में एक औरत भीतर से आई। उसके एक हाथ में गंगाजली थी, दूसरे हाथ में एक कटोरी। "ले बीबी गंगाजल पी ले।" उसने गंगाजली में से कटोरी में शर्बत की तरह की कोई चीज़ डालकर कल्याणी को पिलाई। एक बार, दूसरी बार। और फिर कटोरी से गंगाजली को ढँक कर एक तरफ़ आले में रख दिया।

क्षणभर में कल्याणी की आँखें, जो पहले से ही ऐंठी हुई थीं, जैसे मन मन भारी होने लगीं। कुछ देर बाद उसकी गर्दन झूलने लगी। कल्याणी का कमरा औरतों से खचाखच भरा था। अड़ौस पड़ौस की और औरतें आ रही थीं। जो भी आती उसकी ओर मुंह कर के सर झुकाती। जाते वक्त औरतें उसके पैरों को छूती, पैर छू कर अपने हाथों को आँखों से लगाती, जैसे धन्य-धन्य होकर जा रही हो।

अचारजन कल्याणी के सिरहाने बैठी पूर्ववत् मंत्रों का उच्चारण कर रही थी। न थक रही थी, न हार रही थी। एक ही साँस में गुनगुनाये जा रही थी। इतने में चारजन जैसी तीन और औरतें ढोलकी उठाये, हाथों में खरतालें लिये वहाँ आई और कमरे में घुसते ही उन्होंने भजन कीर्तन शुरू कर दिया।

पलँग के नज़दीक बैठी औरतें सती सुहागिन के गुण गा रही थीं। एक तो उस पेय का नशा था जो गँगाजली में से कल्याणी को पिलाया गया था, दूसरे चारजनों के समूहगान की धुन ऐसी थी कि कल्याणी ने एक नशे की खुमारी में अपनी हथेलियों से ढोलक के ताल से मिलाकर ताल देना शुरू कर दिया। यह देखकर कमरे में जैसे हर किसी का चेहरा

खिल गया हो । सती सुहागिन से देवी उतर रही थी । सबसे पहले आई चारजन की जैसे बाँछें खिल उठीं । चुपके-चुपके हर किसी को इशारे से कल्याणी की मुँद रही आँखें, उसके चेहरे की दीप्ति, उसके सर का झूमना, उसके अँगों का ऐंठना दिखा रही थीं ।

समय बीतने के साथ चारजनों के भजन का ताल तेज़ होता जा रहा था । उनकी आवाज़ ऊँची हो रही थी । कमरे में बैठी अड़ौसिनों-पड़ौसिनों के सुर उनके साथ मिल रहे थे । अब सब हाथों से, पैरों से, सर हिलाकर झूमझूम कर ताल से ताल मिला रही थीं । एक अजीब समाँ बँध गया था ।

औरतों का ताँता बँधा था । दो जातीं, चार आतीं, जो भी आतीं कल्याणी के पैरों को छूती, उसके गले में फूलों का हार पहनाती, कुछ भेंट देती । कल्याणी के पलँग पर फूलों का ढेर लग गया था । मेवा, छुहारे, किशमिश, रूमाल, दुपट्टे, पराँदे, अज़ारबन्द भाँति भाँति की सौगातें उसे भेंट चढ़ाई जा रही थीं ।

गाने वाली अचारजनों का ताल और तेज़ हो रहा था, सुर और ऊँचा हो रहा था। फिर उनमें से एक उठ कर नाचने लगी । थोड़ी देर में एक और, फिर एक ओर नाच में शामिल हो गई, देखते ही देखते कमरे में हर औरत नाच रही थी, हर औरत गा रही थी ।

कल्याणी जैसे नशे की हालत में, उसी तरह बेजान गाव तकिये पर सर रखे, आँखें मूँद कर पड़ी थी ।

उधर चौबारे में अमन की आँख खुली, आसपास सुंदरी को न देख कर वह उसे ढूँढता हुआ आया और उसने इशारे से सुंदरी को बाहर बुला लिया। अमन को लगा कि सुंदरी के भीतर की पति-व्रता स्त्री ने भी जैसे किसी का अपने पति के साथ चिता में जलना स्वीकार कर लिया हो । गुरूसिक्ख होकर वह भी कल्याणी को सती सुहागिन मानने लग पड़ी थी । वह भी आम औरतों की तरह यह सोचने लग पड़ी कि कल्याणी में देवी अवतरित हो गई हैं ।

"यह सब झूठ है । यह सब दंभ है ।" अमन सुंदरी को बाँह से पकड़ कर बाहर गली में ले आया । हमारे गुरू साहिब ने कहा है :

सतीआ एहि न आखीआन जे मड़ीया लगि जलँनि ।
नानक सतीआ जाअनि जि बिरहे चोट मरँनि ।
फिर उन्होंने फरमाया है :
भी सो सतीआ जाणीअनि सील सँतोखि रहँनि ॥

(वार सूही महला ३)

सुंदरी चुप-चुप उसके चेहरे की तरफ़ ताक रही थी और अमन उसे अपने साथ लेकर चौबारे में ले आया ।

चौबारे में तो आ गई लेकिन सुंदरी खिड़की से हटने का नाम नहीं ले रही थी ।

सामने कल्याणी के कमरे में से भजन गाने की, ढोलकी कूटने की, खड़ताले और छैने बजाने की आवाज़ पूर्ववत् आ रही थी ।

फिर कल्याणी के पति की मृत देह को उठा कर बाहर आँगन में रखी अर्थी पर लाकर रखा गया। उसे घर से निकलता देखकर फिर रोना पीटना शुरू हो गया। रो-रो कर छाती पीट पीट कर लोगों ने अपने शरीर को जख़्मी कर लिया। बाहर से आये सभी एकत्रित लोगों के आँसू फूट निकले। लोग एक दूसरे के कँधे पर गिर कर फफक फफक कर रो रहे थे।

उधर कल्याणी के कमरे में पूर्ववत भजन कीर्तन जारी था। अब सती सुहागिन की आरती उतारी जा रही थी।

इधर से अर्थी आँगन से निकली उधर कल्याणी के लिये फूलों के हारों से सजी पालकी आ गई। पालकी को हट्टे कट्टे मुस्टंडे कहारों ने उठाना था। जैसे जमदूत हों। नशे में धुत उनकी आँखों की पुतलियाँ फटी जा रही थीं।

और फिर सामने बरामदे में से कल्याणी निकली। उसे दोनों तरफ़ से चारजनों ने पकड़ा हुआ था। ऐसा लगता था जैसे कोई जख़्मी अबाबील किसी कुंज में आ गिरी हो। इस तरह से झमझम करती हुई फूलों से, कलियों से महक रही पालकी में ढ़ेर हो गई।

4

"मैं तो तेरे विरहे की चोट से मरूँगी।" सुंदरी ने अमन की ओर देख कर लाड़ से कहा और उसे आलिंगन में ले लिया।

"धिृगु जीवणु सँसारि, ताकै पाछै जीवणा" सुंदरी का रोम रोम पुकार रहा था।

उधर सारे खडूर शहर में चर्चा थी कि कल्याणी नाम की एक औरत सती हो रही थी। लोग काम काज छोड़ कर नदी के किनारे शमशान भूमि की तरफ़ उमड़ रहे थे। बाज़ार बंद हो गया था, खेतों खलिहानों में काम कर रहे किसान उतावली से काम ख़त्म कर सती सुहागिन के दर्शनों के लिये चल पड़े थे।

कुछ देर बाद शैली तेज़ी से सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ अमन अैर सुंदरी का दरवाजा खटखटा रहा था। नीचे परिवार के सभी लोग इन्तज़ार कर रहे थे। उनका इरादा शमशान भूमि जाने का था। अमन की क़तई मर्ज़ी नहीं थी लेकिन चूँकि परिवार के सभी लोग आये थे, सुंदरी और अमन भी उनके साथ चल पड़े।

हर तरह के लोग थे। कुछ श्रद्धालु भी थे, जो सचमुच मानते थे कि सती सुहागिन के दर्शन दुर्लभ होते हैं। उसमें देवी प्रकाशमान होती है। किसी का इस तरह अपनी मर्ज़ी से आग की लपटों में बैठ जाना, जल कर अपनी जान दे देना कोई मामूली बात नहीं।

"हाय, यह लड़की अपने मर्द को कितना प्यार करती होगी !" तेजी बार बार नसरीन से कहती, और नसरीन जवाब में कुछ न बोलती।

"यह अनर्थ है।" भाई मूले की पत्नी की राय थी, "गुरू की नगरी में यह उपद्रव नहीं होना चाहिये।"

"गुरू अंगद देव जी आज यहाँ होते तो ऐसा कभी न होने देते। और गुरू अमरदास जी गोइँदवाल में हैं। उन तक यह ख़बर नहीं पहुँची होगी।

मैं नहीं मानता कि कोई ऐसे जान दे सकता है।'' शैली कह रहा था। शैली की तरह कई ओर तमाशबीन यह जानने की उत्सुकता में थे कि कोई किस तरह अपने-आपको इस तरह क़ुर्बान कर सकता है।

और सुंदरी जैसे कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्हें उस बेचारी लड़की पर बेहद तरस आ रहा था। वे चाहते थे कि उस जवान-जहान लड़की के प्राण बचाने के लिए कोई उपाय ढूँढा जाये।

नसरीन मन ही मन सोच रही थी कि ऐसी की कुरीतियाँ हिन्दू धर्म को लेकर बैठ गई हैं। तभी तो जो भी हमलावर आता है, उन्हें लूट पाट कर चला जाता है।

शमशान भूमि में सारी कारवाई पूरी हो चुकी थी। लकडियों को जोड़कर चिता तैयार कर दी गई थी। इस पर मृतक की लाश रखी जानी थी। फिर सती सुहागिन ने आकर सिरहाने पर विराजमान होना था। पति का सर उठाकर अपनी गोद में रखना था। फिर चिता को आग दी जानी थी।

चिता के एक तरफ़ मृतक के लिये मंत्र उच्चारे जा रहे थें। दूसरी तरफ़ रो-रो कर, छातियाँ पीट-पीट कर सगे-संबंधी उससे विदा ले रहे थे। उधर एक कोने में सती सुहागिन का गुणगान हो रहा था। लोग उसे फूलों के हारों से लाद रहे थे। उसके सामने हाथ जोड़ कर प्रणाम कर रहे थे, उसके पैर छू कर अपना जन्म सफल हो रहा समझ रहे थे।

अमन के परिवार के लोगों ने शमशान भूमि पहुँचते ही देखा कि मृतक की देह को अर्थी पर से उठा कर लकड़ियों से जोड़ कर बनाई गई चिता पर टिका दिया गया। अब सती सुहागिन की बारी थी। मंत्रोंच्चारण और भजनों की गूँज में उसे चिता पर आकर बैठना था। 'सती सुहागिन की जै।' के नारे लगने शुरू हो गये थे। नारे और और ऊँचे हो रहे थे कि अपने गले में लदे हारों को एक तरफ़ फेंक कर 'ना ना' करती हुई कल्याणी पालकी से बाहर निकल आई। यह देखकर सबके हाथ पैर फूल गये। अभी तक पालकी के पास खड़ी मंत्रों उच्चारण करने वाली चारजिनें आगे बढ़ी और उन्होंने कल्याणी को फिर पालकी के भीतर धकेल दिया। जैसे रूई की गठरी हो, वह औंधी जा गिरी। नारे और ऊँचे हो रहे थे।

अमन, शैली और कुछ और नौजवान बड़बड़ाने लगे-''अगर लड़की की मर्ज़ी नहीं तो ये लोग उसके साथ ज़बरदस्ती क्यों कर रहे हैं?'' सबकी ज़बान पर यही शब्द थे। इतने में मुश्टंडे कहार, जो पालकी उठा कर लाये थे, सामने खड़े हो गये। किसी को पालकी के नज़दीक फटकने नहीं दे रहे थे। उनके हाथों में बाँसों की लँबी लाठियाँ थीं।

सामने पालकी में कल्याणी ''नहीं''! ''नहीं!'' चिल्लाती हुई आसमान सर पर उठा रही थी। ''मैं सती नहीं होऊँगी। मैं जीना चाहती हूँ। कोई मुझे बचा ले!'' यह देखकर चारजनों ने कल्याणी का मुंह दबोच लिया और उसे फिर क़ाबू में लाकर पालकी में गिरा दिया। कल्याणी में भी न जाने कैसे अपार शक्ति आ गई, और वह एक एक करके सभी चारजनों को पछाड़ती हुई फिर पालकी से बाहर आ गई ''मैं सती नहीं होऊँगी।

बेशक मैंने इसके साथ फेरे लिये थे । लेकिन मैं मरना नहीं चाहती'' वह ऊँचीँ आवाज़ में पुकार रही थी । यह सुनकर अमन, शैली और कुछ और नौजवान आगे बढ़े, लेकिन भीड़ ने उन्हें पालकी की और नहीं जाने दिया । सती सुहागिन की पालकी को घेर लिया गया ।

एक कोहराम मच गया । हर तरह की आवाज़ें उठ रही थी । कुछ लोग कहते, ''यह ज़ुल्म हैं । अगर लड़की की मर्जी नहीं तो उसे इस तरह जलाना पाप है ।'' कुछ कहते, ''यह कैसे हो सकता है ! सती होने आई लड़की इस तरह इन्कार कैसे कर सकती है ? इस तरह तो हिन्दू धर्म का मज़ाक बन जायेगा ।''

लोग आपस में बहस कर रहे थे । एक दूसरे पर दाँत किटकिटा कर लपक रहे थे । धक्का मुक्की होने लगी । हाथोपाई होने लगी । कुछ लोग बाढ़ की तरह आगे बढ़ कर कल्याणी को रिहा करने की ज़िद पर अड़े थे । कुछ यह सोच कर उनकी राह रोके हुए थे कि विधवा को जीने का कोई हक़ नहीं । उसके पति के साथ सती होने से समाज का कल्याण होता है । सती औरत अपने साथ सारे शहर को तार लेगी ।

शोरशराबा मचा हुआ था । एक तरफ़ औरतें रो रही थीं । तू तू मैं-मैं करते मर्द हाथोपाई पर उतर आये थे । उधर ''सती सुहागिन की जै'' के नारे लग रहे थे । मंत्रोच्चारण हो रहा था । इस ऊधम के बीच चिता को आग दे दी गई ।

कल्याणी, जिसे ज़बरदस्ती उठाकर चिता पर फेंका गया था, एक शेरनी की तरह लड़ रही थी, हर किसी को सौ-सौ गालियाँ दे रही थीं । बार बार वह हिम्मत करके बाहर कूद आती, उसे फिर चिता में फेंक दिया जाता । काले धूत कहार जमदूतों की तरह लाठियाँ ले कर चिता के चारों तरफ खड़े हो गये थे ।

कल्याणी के दुपट्टे को आग लग गई थी, उसने दुपट्टे को उतार कर फेंक दिया और फिर कूदकर चिता से बाहर आ गई । इस बार एक कहार ने इतनी ज़ोर से उस के सिर पर लाठी मारी कि वह लहू लुहान हो कर चिता पर औंधी जा गिरी । फिर भी कल्याणी किसी न किसी तरह बाहर निकलने की कोशिश में थी । यह देख कर चारों तरफ़ से कहारों ने अपनी लंबी लंबी लाठियों के बाँसों से कल्याणी को जैसे बेंध लिया । अब उसके लिये चिता से हिलना मुमकिन नहीं था । मृतक के पैरों की तरफ़ से दी गई आग अब चारों तरफ़ फैल गई थी ।

चारजनों ने और ऊँची आवाज़ में मंत्र उच्चारने शुरू कर दिये थे । कहारों ने अपनी लाठियों से कल्याणी को पूर्ववत बींध कर रखा हुआ था और फिर आग की लपटें सिर तक ऊँची उठने लगीं ।

श्रद्धालु नारे लगा रहे थे, पुजारी मंत्र पढ़ रहे थे, बाक़ी लोग सहमे हुए देख रहे थे कि जवान-जहान परी जैसी लड़की जल कर राख हो कर रह गई थी ।

''आज अगर गुरू महाराज यहाँ होते,'' अमन के मुंह से निकला ।''

''हमें अब इस शहर में नहीं रहना,'' शैली बोला ।

5

सचमुच वे करतारपुर से लदलदा कर यहाँ आ गये थे । यहाँ खडूर में अभी उनके पैर नहीं जमे थे । मकान का भी अभी उन्होंने बयाना ही दिया था । गुरू अमरदास जी गोइँदवाल जा टिके थे । उनके लिये अब यहाँ क्या रह गया था ?

गुरू अंगद देव जी के ज्योति जोत समान के बाद दसवें दिन खडूर में सँगत जुड़ी । रबाबियों ने कीर्तन किया । गुरू अमर दास जी ने अपने वचन विलास में फ़र्माया कि इस दुनिया में शरीरों का साथ कभी चिरस्थाई नहीं होता । सारे दुखों की जड़ मोह का तँतु है । केवल गुरूवाणी से ही इसका विच्छेद हो सकता है । गुरू अँगद देव जी महाराज की सबसे बड़ी देन सिक्ख भाई चारे को जत्थेबंद करना था । अब हमारा यह फ़र्ज बनता है कि इस जत्थेबँदी को और पक्का करें ।

यह उपदेश दे कर वे गोइँदवाल चले गये । उन्होंने मुड़ कर खडूर की तरफ़ देखा तक नही । खडूर में दासू जी गुरू बन बैठे थे । उस खडूर में इस तरह का अनर्थ हुआ था । अगर गुरू अंगद देव जी होते तो जिस तरह से ज़ोर ज़बरदस्ती से कल्याणी को सती किया गया था, वे ऐसा कदाचित न होने देते, न ही गुरू अमर दास जी के होते खडूर वासियों की मज़ाल होती कि वे इस तरह की कोई हरकत करते । दासू जी को तो ज़्यादा फ़िक्र अपनी गद्दी की रहती थी, उस चढ़ावे की रहती थी जो भूले भटके सिक्ख आकर उन्हें चढ़ाते थे । और फिर उनकी हरकतें देखकर सच्चे पातशाह के दर्शनों के लिये-गोइँदवाल की ओर चल पड़ते थे ।

उधर गोइँदवाल, जिसके निर्माण के लिये गुरू अँगद देव जी ने गुरू अमरदास जी को तैनात किया था, अब सत्गुरू की कृपा से दिन दुगुनी रात चौगुनी तरक्की करता-करता अच्छा-भला शहर बन गया था । ब्यास नदी के किनारे होने के कारण ज्यों ज्यों सँगतों को ख़बर पहुँचती, श्रद्धालु हुमहमा कर दर्शनों के लिये आते ।

कुछ दिनों बाद दासू की जो ज़बरदस्ती गुरूगद्दी पर कब्ज़ा जमाये बैठा था, सेहत ढीली रहने लगी । उसकी गर्दन में दर्द उठा । फिर उसे चक्कर आने शुरू हो गये । कुछ दिन बाद उसने ऊल जलूल बोलना शुरू कर दिया । माता रवीवी जो परेशान थीं । बार बार दासू को समझाती कि गुरूगद्दी बड़ी भारी ज़िम्मेदारी है । इसका बोझ वही उठा सकता है जिस पर गुरू की मेहर हो। उसकी गर्दन में जो दर्द होता था, उसका कारण वह बोझ था, जो उसने अपनी सामर्थ्य से अधिक उठा रखा था । लेकिन भेंट के लालच के कारण दासू को कुछ नहीं सूझता था ।

जब दासू का रोग अधिक बढ़ गया तो माता रवीवी जी उसे लेकर गोइँदवाल पहुँची । कहते हैं जब गुरू अमर दास जी को माता जी के आने की सूचना मिली, वे झटपट चौबारे से उतर कर नीचे आये, और पूरे सत्कार के साथ उन्होंने माता जी का स्वागत किया। जब सतगुरू को दासू की बीमारी के बारे में बताया गया तो उन्हें बड़ी दया आई । उन्होंने उसके सर पर हाथ रखा । गुरू महाराज के एक ही स्पर्श से दासू भला चँगा हो गया । यह

देखकर दासू की समझ मे आया कि गुरूआई उसी को शोभा देती है, जिसे ईश्वर ने यह दात बख़्शी हो। उसने अपने कानों पर हाथ लगाया। इसके बाद फिर कभी गुरूआई का नाम नहीं लिया।

लेकिन गुरू अंगद देव जी के दूसरे बेटे दातू की हेकड़ी पूर्ववत क़ायम थी। उसकी समझ में अभी तक कुछ नहीं आया था। इस बीच वह किसी ताँत्रिक की सँगत में सिद्धि प्राप्त करने की कोशिश में लगा था। इसमें उसे कुछ सफलता भी प्राप्त हुई थी।

अब दातू ने खडूर की गद्दी संभाल ली और नाटकीय अँदाज़ में अपनी सिक्खी सेवकी कमाने लगा। कुछ दिन बीतने पर उसे लगा जैसे उसकी दुकान चल निकली हो।

लेकिन दिन प्रति दिन उसे नई नई ख़बरें मिलती थीं। गुरूसिक्ख दल बाँध कर गोइंदवाल जाते थे। गोइंदवाल शहर की रौनक बढ़ती बढ़ती कहीं की कहीं पहुँच गई थी। और फिर लोग जैसे खडूर साहिब को भूल रहे थे।

यह देख कर दातू के क्रोध का पारा चढ़ने लगा। आठों पहर क्रोध में उबलता रहता। खौलती हुई हड्डियाँ की तरह। गुरू अमर दास जी को बुरा-भला कहता। ऐसा नहीं कि इस तरह की ख़बरें गुरू अमर दास जी तक न पहुँचती हो। लेकिन उन्होंने कभी इनकी तरफ़ ध्यान नहीं दिया था।

शुरू शुरू में बेशक लोग उसके सिद्धि द्वारा किये गये चमत्कारों से प्रभावित हुए थे, लेकिन यह जादू ज़्यादा दिन नहीं टिक सका। धीरे-धीरे गुरूसिक्खों को असलीयत का ज्ञान होने लगा और संगतें कम होने लगीं। जैसे पहले दासू की सिक्खी सेवकी के साथ हुआ था।

उधर गोइंदवाल से जो भी लौटता दूसरी क़िस्म की कहानियाँ लेकर आता। गुरू अमर दास जी खुशियों का, मेहरों का सरचश्मा थे। लोग निहाल हो हो कर आते। अब तो खडूर के गुरूसिक्खों ने भी गोइंदवाल की यात्रा करनी शुरू कर दी थी। कई मुसलमान फ़कीर गुरू महाराज के दर्शनों के लिये गोइंदवाल हाज़िर होते। इनमें ख़्वाजा बिहारी मुहम्मद मुकीम शाह, शाह बिलावल और शेख मुहम्मद ताहरी जैसे प्रमुख पीर भी थे।

सारा दिन श्रद्धालुओं के लिये अटूट लँगर चलता था।

एक दिन एक गुरूसिक्ख गोइंदवाल से लौटा था। बताने लगा कि गुरू अमर दास जी रात को कोई चीज़ घर में बचाकर नहीं रखते थे। दिन में जो भेंट आती उसे सँगतों में बाँट दिया जाता था। घड़ों का पानी तक फेंक दिया जाता था। गुरू महाराज का कहना था कि पंछी कभी कुछ जमा करके नहीं रखते। अटूट लँगर चलता था। हर भेंट को रोज़ के रोज़ दर्शनों के लिए आई सँगतों में बाँट दिया जाता था।

जो भी गोइंदवाल से आता, नई से नई कहानियाँ सुनाता। किस तरह नई नई हवेलियाँ खड़ी हो रही थीं। किस तरह बड़े बड़े व्यापारी आकर शहर में बस रहे थे। शहर फैलता फैलता इतना बढ़ गया था कि आसपास लकड़ी का अकाल पड़ गया। यह देख कर

गुरू महाराज ने अपने भतीजे सावनमल को रूमाला देकर हरीपुर के पहाड़ी राज्य की तरफ़ भेजा ताकि वहाँ से जँगलों की लकड़ी कटवा कर ब्यासा नदी में बहाई जाये और शहर का भरपूर निर्माण हो सके ।

दातू ने यह सुना तो उसके तन मन में आग लग गई । ''इस तरह तो खडूर को कोई पूछेगा ही नहीं ।'' वह मन ही मन ज़हर घोलने लगा ।

6

दरिया के किनारे घूमते हुए गुरू अमर दास जी उस दिन कुछ पुरानी यादों में खो गये थे ।

करणी कागदु मनु मसवाणी बुरा भला दुइ लेख पए ॥
जिउ जिउ किरतु चलाये तिउ चलीऔ
तउ गुण नाही अँतु हरे ॥१॥
चित चेतसि की नही बावरिआ ॥
हरि बिसरत तेरे गुण गालिया ॥१॥ रहाउ ॥
जाली रैनि जालु दिनु हूआ जेती घड़ी फाही तेती ॥
रसि रसि चोग चुगहि नित फासहि छूटसि मूड़े कवन गुणी ॥२॥
कइआ अरणु मनु विचि लोहा, पँच अगनि तितु लागि रही ॥
कोइले पाप पड़े तिसु ऊपरि, मनु जलिआ सँनी चित्तँ भई ॥३॥
भइआ मनूरु कंचन, फिरि होवै जे गुरू मिलै तिनेहा ॥
एकु नामु अँमृत उहु दवै, तउ नानक त्रिसटसि देहा ॥४॥३॥

(मारू महला १ घर १)

बीबी अमरो मायके से लौट आई थी । पौ फटने पर दूध बिलोती हुई अपने सुरीले कंठ से इस शब्द का गायन कर रही थी । साथ वाले घर से आ रही शबद की धुन सुनकर बाबा जी का मन बेचैन हो उठा था ।

उनके बड़े भाई मानक चँद की पुत्र वधू अमरो किस श्रद्धा से गुरूबाणी का उच्चारण कर रही थी । आज के शब्द की एक पँक्ति जैसे उन्हीं के लिये कही गई हो । अमृतवेला में गुरूबाणी सुनते हुए वे बार बार उठ कर पड़ौस में अपने भाई के घर जाने लगते, फिर वे अदब से गोठ मोठ मार कर बैठ जाते, ठँडी मीठी समीर की तरह गुरबाणी की झरती हुई मधुर ध्वनि उन्हें मँत्र मुग्ध कर रही थी ।

अभी झुटपुटा था । उनका मन चाहता था । साथ वाले घर की दीवार पर और नज़दीक कान लगा कर शबद के रस का आनँद उठायें । लेकिन पहले ही लोग कितनी बातें करते थे । यह अमर दास अपने भाई के घर समय असमय ताँक झाँक करता रहता है । बहूरानी जब सुबह भजन पाठ करती है तो यह पागलों की तरह गली में टहलने लगता है।

कितनी बदनामी की बात थी ! वे ससुर के स्थान पर थे । बहू बाबा जी से घूँघट निकालती थी । सारी ख़राबी इस घूँघट में थी, गुरू महाराज सोचने लगे । यह पर्दा हमारे

भाईचारे ने तुर्कों से सीखा है । अगर बीबी अमरो घूँघट न निकालती होती तो ये कभी के उनके यहाँ जाकर गुरबाणी के रस का आनँद उठा सकते थे । उनके बड़े भाई की बहू थी, कोई पराई तो थी नहीं ।

अड़ौस पड़ौस के लोग । जितने मुंह उतनी बातें । कोई कुछ कहता, कोई कुछ कहता । कोई कुछ कहता । यह नहीं सोचते थे, आख़िर मानक चँद उनका बड़ा भाई था । बेशक अपने पिता तेजभान के मरने के बाद भाई अलग हो गये थे । उन्होंने अलग मकानों में रहना शुरू कर दिया था । अलग चूल्हे चौके थे । लेकिन खेती बाड़ी तो अभी भी साँझी थी । और फिर कहावत है भ्रा भ्रावाँ दे, ढोढर काँवाँ दे ।*

और फिर गाँव के लोगों को यह नहीं पता था कि भाई अमरदास जी को कितनी करारी चोट लगी थी । एक भटकन उन्हें दिन रात खाये जाती थी । उन्हें गुरू की तलाश थी ।

बात यूँ हुई । बीसवीं बार गँगा स्नान करके लौटते समय उनके साथ एक ब्रहमचारी था । भलामानस था । सारे रास्ते में अगम-निगम की बातें होती रहीं । सफ़र अच्छी तरह कट गया । जब उनके रास्ते अलग होने लगे तो अमरदास जी, श्रद्धा और प्यार की साक्षात मूर्ति, ब्रहमचारी को भी अपने घर लेते आये । इनके घर एकाध दिन टिकने के बाद वह सहज भाव से पूछने लगा, "यह बता अमरदास, तेरा गुरू कौन हैं ?" तब तक भाई अमरदास ने गुरू तो कोई धारण ही नहीं किया था । यह सुनते ही ब्रह्मचारी को तो जैसे आग लग गई हो । "निगुरे का सँग, जन्म गया तेरा, किस का सँग किया रे मूर्ख ? " यह कहते, हुए वह उनके आँगन में से निकल गया । और उसने पीछे मुड़ कर भी नहीं देखा ।

ठीक उन्हीं दिनों में जब भाई अमर दास जी के मन को यह चोट लगी थी उनके कानों में अपने बड़े भाई मानक चंद के घर से उनकी बहू बीबी अमरो की शबद-ध्वनि सुनाई दी । चूल्हे चौके का काम करती हुई वह गुरबाणी का पाठ करती रहती थी । उसका कंठ कितना सुरीला था । गुरू अँगददेव जी की साहबज़ादी । उसे ढेर सी गुरबाणी कंठस्थ थी ।

और फिर बाबा अमर दास जी का बेबस होकर उस दिन अमृत वेला में पड़ौस में अपने भाई के घर जा घुसना । उस वक्त जब अमरो बीबी "करणी कागदु मनु मसवाणी" नाम के शबद का उच्चारण कर रही थी ।

भाई अमरदास जी की भाभी ने उनकी श्रद्धा और गुरूभक्ति देखकर अपनी बहू को मना लिया कि वह उन्हें पिता गुरू अंगददेव जी के दर्शनों के लिये खडूर ले जाये ।

गुरू महाराज के दर्शन करते ही वे उनके हो गये । और फिर पूरे बारह बरस की टहल और सेवा । इस सेवा के फल स्वरूप महाराज ने ख़ुश होकर उन्हें गुरुआई बख़्शी थी । पहले उन्हें गोइंदवाल की स्थापना के लिये तैनान किया । फिर अपने दोनों बेटों की आकांक्षा को अनदेखा करके उन्हें गुरूगद्दी सौंपी ।

* भाई आख़िर भाइयों के ही होते हैं ।

गुरू अमरदास पुरानी यादों में खोये हुए थे कि सेवादार ने आकर उन्हें याद करवाया कि लंगर का समय हो गया है ।

उस दिन लंगर के लिये हरीपुर का राजा और उसका परिवार भी आ रहा था । हरीपुर के राजे ने ही तो भाई सावनमल के हाथ भेजा हुआ गुरू महाराज का संदेश पा कर गोइंदवाल के लिये लकड़ी भिजवाई थी । लकड़ी के शहतीर दरिया में फिंकवाये, साथ में रक्षक भेजे ताकि सारी लकड़ी सही ढँग से गोइंदवाल पहुँच सके ।

गुरू महाराज का आदेश था कि उनकी सँगत में न कोई स्त्री पर्दा करेगी, न कोई भड़कीले चटकीले वस्त्र पहन कर आयेगी ।

राजा ने अपनी रानियों को गुरू घर की मर्यादा से भली भांति परिचित करवा दिया था । तब भी छोटी रानी ने इसे सुना अनसुना करते हुए उस दिन विशेष रूप से भड़कीले कपड़े पहने और जब महाराज के दर्शनों के लिये हाज़िर हुई तो उसने बहुत लँबा घूँघट निकाला हुआ था ।

"यह पगली इतने लँबे घूँघट में से दर्शन क्या करेगी और प्रसाद कैसे खायेगी ?" रानी को देखते हुए गुरू महाराज के मुंह से निकला ।

ये शब्द अभी सतगुरू के मुखारविंद से निकले ही थे कि हरीपुर के राजा की सबसे छोटी रानी का सर फिर गया । उसने पगलियों जैसी हरकतें करनी शुरू कर दी । सब परेशान हो रहे थे । किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था । उल जलूल बके जा रही थी । बोलती-बोलती वह जंगल की तरफ़ निकल गई और ग़ायब हो गई ।

सभी लोग बार बार यही कह रहे थे कि उसे गुरू महाराज के हज़ूर में यह नहीं करना चाहिये था । वे हमेशा श्रद्धालुओं को पर्दे की मनाही करते थे । एक तरफ़ तो रानी ने इतने भड़कीले कपड़े पहन रखे थे, दूसरी तरफ़ घूंघट निकाल रखा था । पागलपन तो यह था ही ।

छोटी रानी जैसे खत्म हो गई हो । राजा के अहलकार सारा जँगल छानकर थक गये । रानी कहीं भी नहीं थी ।

गुरू घर का एक सेवादार भाई सच-निसच जँगल में लँगर के लिये लकड़ियाँ इकट्ठी कर रहा था । बेचारा पगली के काबू में आ गया । पगली ने उसका बुरा हाल किया । बड़ी मुश्किल से सच-निशच छुटकारा पा कर गुरू महाराज के समक्ष आकर फ़रियाद करने लगा। गुरू महाराज अमर दास कहने लगे, "यह वही पगली रानी है । " उन्होंने सच-निसच को अपनी खड़ाएँ दी "अगर फिर कभी पगली तुझे परेशान करे तो इस खडाएँ से तुम उसका मुकाबला करना " गुरू महाराज ने कहा ।

कुछ दिन बाद फिर पगली शेरनी की तरह सच-निसच पर आ झपटी । नँग-मुनंगी थी, खुले बाल, उस्तरों जैसे दाँत । जब पगली ने सच-निसच पर हमला किया, तो उसने गुरू महाराज द्वारा बख़्शी खड़ा से अपना बचाव किया । खड़ाव ने पगली के शरीर को छुआ ही था कि वह भली चँगी हो गई । अब पगली नग्नता को ढाँकने लगी । यह देख कर भाई

सच-निसच ने अपना कंबल उसकी तरफ़ फेंका । पगली अपना शरीर कँबल में लपेट कर गुरू महाराज के चरणों में आ गिरी । गुरू अमरदास ने उसकी शादी भाई सच-निसच से ही करवा दी ।

7

भाई मूले की पत्नी हार कर स्यालकोट के लिये चल पड़ी । बहुत दिनों से अपना घर बार छोड़ कर निकली हुई थी । बीच बीच में माँ बेटी साल, छः महीने बाद एक दूसरे से मिल आतीं थीं । सुंदरी की माँ की एक ही इच्छा थी । अपनी बेटी के लिये सुयोग्य वर ढूँढ कर उसे घर-जँवाई बना ले ताकि उसे अपने पति के व्यापार की सरदर्दी से छुटकारा मिल सके । बेशक उसके कारिंन्दे पुराने थे , वफ़ादार थे । उनमें से कोई भी हक़ हलाल की कमाई के अलावा फूटी कौड़ी की लालसा नहीं रखता था । फिर भी पराये लोगों पर सारा कामकाज कब तक छोड़ा जा सकता था ।

अमन टस से मस नहीं हो रहा था । शादी उसने बेशक करवा ली थी । आजकल वह बार बार गोइंदवाल के चक्कर काटता रहता था ताकि वे लोग किसी तरह खडूर से निकल सकें । जब भी बोलता यही कहता, बस अब इस शहर में मेरा दम घुटने लगा है । जिस शहर में कभी दास, कभी दातू जैसे लोग गुरू बन बैठे हों, बस उस शहर का रब्ब ही रखवाला है । फिर जिस तरह कल्याणी को घेरघार कर उसके पति की चिता में झोंक दिया था, और खडूर के लोग बेबस हो कर देखते रह गये थे, उसे यकीन हो गया था कि उनके भाईचारे को गुरूघर की अगवाई, गुरू महाराज की शिक्षा की हर कदम पर ज़रूरत थी ।

उस दिन जाने की तैयारी करती हुई भाई मूले की पत्नी सुंदरी को सुना कर कह रही थी, "बेटे की इच्छा लेकर आई थी, बेटी भी गँवा कर जा रही हूँ "

अमन घर में नहीं था । सुंदरी सुनकर तरसभरी आँखों से माँ की तरफ़ देखने लगी । लेकिन माँ की बात पर उसने कोई "हूँ " "हाँ" नहीं की ।

कुछ देर बाद भाई मूले की पत्नी फिर बुड़बुडाई "इससे तो शैली...." बोलती बोलती वह एकदम रूक गई ।

माँ की बात सुनती सुँदरी जानती थी कि वह क्या कहने जा रही थी । अमन उसे स्यालकोट पहुँचाने के लिये टाल मटोल कर रहा था, और कल जब उसने साफ़ इन्कार कर दिया तो शैली जाने के लिये तैयार हो गया था । कहने लगा, "मैं आपको लाहौर तक पहुँचा आऊँगा, आगे आप किसी यात्री जत्थे के साथ हो लेना ।" सुंदरी की माँ सुनकर गद्गद् हो गई थी । कितनी देर तक उसे आर्शीवाद देती रही । और अब जो बोल उसके गले में अटक कर रह गया था, उसे सुँदरी ने मन ही मन पूरा कर लिया" इससे तो शैली अच्छा है ।" फिर एक क़दम वह और आगे बढ़ी-"इससे तो अच्छा था कि शैली को दिल दिया होता ।" और फिर एक क़दम और आगे- "इससे बेहतर तो था कि शैली को अंगीकार किया होता ।"

यह सोचती हुई सुन्दरी खिलखिला कर हँस पड़ी । सचमुच उसे ख़ुद भी अमन के

अतिशय धार्मिक झुकाव से घबराहट हो रही थी। यह भी कोई बात हुई। हर वक्त ईश्वर का डर, हर वक्त गुरू घर का ज़िक्र। ठीक है धर्म अपनी जगह होता है, लेकिन दुनियादारी भी तो कोई चीज है, ख़ास तौर पर जब सुँदरी की उससे शादी हुई थी, सुंदरी की चाहतें और की और हो गई थीं। अपने दूल्हे से उसकी मांगें और की और हो गई थीं। उसकी सहेलियों ने उसे जो बातें बताई थीं वह उसके कानों में गूँजती रहती। अमन ने सुंदरी के लिये आसमान के तारे तोड़ने का कभी ज़िक्र नहीं किया था। उसकी सेज को कभी फूलों से नहीं सजाया था। उसके हुस्न के गीत कभी नहीं गाये थे। सुहागरात के मौक़े पर वह अप्सरा की तरह सजी थी। लंबी प्रतीक्षा के बाद जब वह चौबारे में उनके कमरे में आया तो आते ही कपड़े बदलने लगा। कपड़े बदलता हुआ " कीर्त्तन सोहिले" का पाठ करता रहा। सुंदरी का एक रंग आता, एक रंग जाता। उसके अंग अंग को कुछ हो रहा था। सहसा उसकी आँखों से गर्म गर्म आँसू टपकने लगे। उसने जान बूझ कर फूँक मार कर बत्ती बुझा दी थी। अमन को राह टटोल कर उसकी तरफ़ आना पड़ेगा।

इतने में उसकी माँ ने पूछा "अभी अभी तू ठहाका मारकर हँसी क्यों थी ?"

"कुछ नहीं, कुछ नहीं माँ, आजकल यूँ ही ख़ुद ब ख़ुद मेरी हँसी फूट पड़ती है।" सुंदरी ने माँ को टाल दिया।

लेकिन सुँदरी अपने मन को नहीं झुठला सकी। उसे उस क्षण की याद आने लगी जब करतारपुर के पड़ाव पर क्षण भर के लिये धूल मिट्टी के अँधेरे में उसने शैली को अमन समझ कर उसका हाथ पकड़ लिया था। अपनी गलती का एहसास होने पर उसे कितनी शर्म आई थी, वह पसीने से तर हो गई थी।

शैली को भी तो कुछ हुआ होगा, सुंदरी एक हसीन रौ में बहने लगी –हाँ शैली के तन में भी तो कोई लहर उठी होगी ! उठी क्यों नहीं थी ! बीयार बीयार नज़रों से किस तरह उसकी तरफ़ देख रहा था। अगले दिन उनीदीं पलकें। सुंदरी के हर काम में आने के लिये उतावला। इसके मुंह से बात बाद में निकलती पहले उसे पूरा करने के लिये तैयार हो जाता। फिर आते जाते, कुछ लेते देते इसके दुपट्टे से उसका चोला छू जाता, उसके पोटों से उसके पोटे छू जो थे, तो सुंदरी को ऐसा लगता जैसे उसके अँग अँग में बिजली कौंध रही हो। और फिर उस दिन रावी के पार ! हाय वह कैसा दिन था। वातावरण में एक नशा सा छाया था। उसका कलेजा जैसे उछल–उछल रहा था। कभी इसका दिल चाहता कि हँसने लगे तो हँसती जाये, कभी इसका मन करता कि इसकी आँखों से टप टप आँसू बहने लगें, रिमझिम फुहार की तरह। मीठी मीठी पुरवैया झूल रही थी। इसका दुपट्टा गिर गिर जाता। ऐसा तो पहले कभी नहीं हुआ था। कभी उसे उधर धक्का लगता कभी उधर ठुड्डा सा लगता। ऐसा लगता जैसे आगे पीछे फिसलन हो, किसी वक्त भी उसका पैर फिसल जायेगा, चाहे दायाँ फिसले या बायाँ। शाम के वक्त थक कर जब आमों के झुरमुट तले सबकी आँख लग गई थी, शैली और सुंदरी दोनों दीवानों की तरह घूम रहे थे, कितनी दूर निकल गये थे। मज़ाल है जो उनको तनिक भी सुस्ती महसूस हो रही हो। फिर शैली सिर

झुका कर अकेला रहँट चलाने लगा, तो पानी से खेलती हुई सुंदरी उसे यह कहना भी भूल गई कि अब वह पानी बंद कर दे। बेचारा कितनी देर तक रहँट चलाता रहा था, पसीने से तर होता रहा था। और जब इसे मनाही करने की याद आई तो शर्मिंदा होने की बजाये, उससे माफ़ी माँगने की बजाये वह शरारत भरी हँसी हँस रही थी। लाल सुर्ख़ चेहरा, पसीने से निचुड़ता बदन, शैली हक्का बक्का इसकी तरफ़ देखे जा रहा था। जैसे कोई किसी दिल फरेब तस्वीर को देख रहा हो, जैसे कोई हसीन सपना देख रहा हो और उसे झिंझोड़ कर उठा दिया जाये। और फिर जब रावी के किनारे मल्लाह उन्हें पीछे छोड़ कर चला गया, तब इसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह ग़ुस्सा करे या ख़ुश हो। फिर अचानक आँधी चलने लगी। बादल एकदम घिर आये। बिजली चमकने लगी। देखते ही देखते चारों तरफ़ घटाटोप छा गई थी। हवा के एक तेज़ झोंके से इस बार सुंदरी औंधी हो कर शैली की बाँहों में जा गिरी। बेचारा भोला भाला, सहम ही तो गया था। सहमना तो उसे था ही। किसी की बाहों में महकती हुई फूलों की पिटारी आ गिरे तो वह सहमेगा ही। और जब शेरख़ान के साथियों ने उसे धक्का देकर गिराया था, किस तरह उठ कर वह सुंदरी को बचाने के लिये आगे बढ़ा था जैसे कोई जान पर खेल जाने के लिये तैयार हो। बेचारा शैली अकेला था और उससे निपटने के लिए पाँच मुस्टँडे। उन्होंने उसकी मुश्कें बांध दीं। अधमरा करके उसे फेंक गये थे। तो भी उसने उन लोगों का पीछा किया। शेरख़ान का सुराग़ खोज निकाला, फिर उसके गाँव पहुँच गया। कैसी कैसी तक़लीफ़ें उसने नहीं झेली होंगी, उन दिनों सुंदरी भी तो शैली को पुकारती रही थी, उसे याद किया करती थी। फिर छुटकारा पा कर घर लौटते वक्त जब उसने सुंदरी को शेरख़ान का ताना मारा था तो उसका सीना छलनी हो गया था। जैसे किसी ने उसके कलेजे में छुरी झोंक दी हो। उसका मन लहू लुहान हो गया था। और इसने फ़ैसला किया था कि वह कभी उसके मुंह नहीं लगेगी। पहला मौक़ा मिलते ही सुंदरी ने अमन के साथ क़ौल करार कर लिये।

8

लेकिन यह शैली लाहौर तक ही सुंदरी की माँ के साथ क्यों जा रहा था? वह अभी तक अपने विचार प्रवाह में बह रही थी, अगर जाना ही है तो स्यालकोट तक पहुँचा कर आये!

क्योंकि लाहौर में शक्ति थी।

इस ख़्याल से ही सुंदरी के तन मन में आग लग गई। वही शैली जिसने यह कह कर सुंदरी को दुत्कार दिया था, "और रावी में से तुझे बाहर निकालते वक्त भी किसी का शरीर तेरे शरीर से नहीं छुआ होगा!" अब शक्ति के जूते चाटने जा रहा था! क्योंकि वह लाहौर रहती थी। क्योंकि वह ऊँची-पगड़ी वाले बाप की बेटी थी। क्योंकि वह फ़ारसी, अरबी पढ़ी हुई थी। क्योंकि वह गोरी चिट्टी थी। जनाब को यह नहीं पता कि हर गोरी चमड़ी वाली में पराया ख़ून हरकत करता है। किसी हमलावर का ख़ून!

शैली ख़ुद भी तो गोरा चिट्टा था ऊँचा, लँबा, छरहरा बदन, खिली खिली आँखें,

बात करते वक्त गालों में गड्डे पँढ़ जाते । सिंदूरी आम जैसे केसरी गाल । घने घुँघराले बाल जो सँभाले नहीं सँभलते थे । बार बार उसके बालों की लटें उसके माथे पर आ गिरती थीं ।

हो न हो शुरू से ही उसकी निगाह शक्ति पर थी । एक ही नज़र में वह शक्ति का दीवाना हो गया था । कैसे घुट कर उनके साथ बातें करता था । मीठा बोलने वाला । जैसे कोई शहद में शक्कर घोल रहा हो । शहद-सा मीठा । शहद जैसा चिपचिपा ।

सवाल यह है कि सुंदरी को शैली का शक्ति से मेलजोल क्यों अखर रहा था । सुंदरी अपने मन को टटोलने लगी । उसे रब्ब का शुक्र गुज़ार होना चाहिये था कि जिससे उसने नेह लगाया था, उसे पा लिया था । सच तो यह है, कि उसने अमन को शक्ति से छीना था । सुँदरी से लाख छिपाये, लेकिन शक्ति अमन पर फ़िदा थी । उस जैसे लड़के को भला कौन दिल नहीं देगा । उसका ज़िक्र करते हुए उसके मुंह माथे से लगता था कि शक्ति उसकी दीवानी थी । चढ़ता हुआ चाँद और लगा हुआ नेह कभी छिप सकता है ? उसे जब पता चला कि अमन इसकी भी कमज़ोरी है और भाई मूले की बेटी इस रास्ते पर बहुत आगे निकल चुकी थी, तो शक्ति ने हथियार फेंक दिये थे ।

मन ही मन सुंदरी अपने आप से कह री थी कि उसे तो ख़ुश होना चाहिये था, जिस तरह की तोहमत उसके ऊपर लगी थी, इतने दिन वह पराये घर रह कर आई थी, हो सकता है उसे कोई मुँह ही न लगाता । यह तो अमन ही था, भोला बादशाह, गुरू महाराज की अनुग्रह का पात्र, जिसने खिले हुए माथे से उसे स्वीकार किया था । दूसरा आदमी कभी न करता । शैली बदल गया था । और का और हो गया था । उसकी नज़रें कैसें बदल गई थीं । इसकी बात पर विश्वास नहीं किया था, उसे ऐसे लात मार गया जैसे जान-पहचान न हो । जैसे कोई दूध में से मक्खी निकाल कर फेंक देता है । उसने सुंदरी को फटकार दिया था । इसकी तो जैसे ईश्वर ने सुन ली थी । जिससे नेह लगाया, जिसकी तलाश में करतारपुर आई थी, उसे इसने पा लिया था ।

यह एक सच्चाई थी । सुंदरी की बहुत बड़ी जीत थी । शक्ति की यह उतनी ही बड़ी हार थी । इन सब बातों पर सुंदरी को ख़ुश होना चाहिए था । शक्ति पहले की तरह क्वाँरी थी । जैसे प्यासी नदी हो, बँजर धरती हो, सड़क के किनारे पड़ी सिल हो, आये गये को निहारती हुई । और इधर सुंदरी अपनी मँज़िल पर पहुँच भी चुकी थी । कोई बाँहें थीं, जिनमें वह लिपट सकती थी । जिनके घेरे में वह दुबक सकती थी ।

लेकिन क्या ऐसा हो रहा था ? सुंदरी के मुंह का स्वाद एकदम कसैला कसैला हो गया । जैसे किसी ने इसके मुंह पर थप्पड़ दे मारा हो ।

सुंदरी ने अपने भीतर झाँककर देखा, उसे लगा जैसे वह ख़ाली खँडहर हो । बढ़-चढ़ कर डींगे मारने वाली सुंदरी को लगा जैसे वह अपने आपकों फ़रेब दे रही हो । कई दिनों से सुंदरी उखड़ी उखड़ी रहती थी । बात बात पर ख़फा होती थी, बात बात में उतावली दिखाती थी । कल शाम अपनी सास तेजी से उलझ पड़ी थी । यह तो तेजी का

बड़प्पन था कि वह चुप रही थी, कोई और होती तो बात बढ़ सकती थी। बहुओं और सासों के झगड़े तो होते ही रहते हैं लेकिन सुंदरी जिस ढँग से सास के सामने बोल रही थी, सारे वातावरण में ज़हर फैल गया था। यह तो ईश्वर का शुक्र था कि उस वक्त घर के बाक़ी लोग बाहर गये हुए थे। फिर सुँदरी को अपने आप पर बेहद ग्लानि हुई जब उसने देखा, कोठरी के अँधेरे में तेजी अपने पल्लू से आँखों में छलक आये आँसू पोंछ रही थी।

लेकिन अगले ही क्षण सुँदरी और की और हो गई। जैसे कोई बौखला उठे। अपनी देवी स्वरूपा सास से माफ़ी मांगने की बजाये सुँदरी को लगा कि जैसे उसके साथ अन्याय हुआ हो, वह छली गई हो।

वह शैली ही था जिसे वह अपने तन मन से चाहती थी। बेशक किसी समय वह अमन पर मोहित हो गई थी। स्यालकोट में जब उनकी मुलाक़ात हुई थी तो वह बेशक उस पर फिदा हो गई थी, लेकिन शैली की मुहब्बत का मज़ा कुछ और ही था। अमन उसे हमेशा शरीफ़ शरीफ़, उजला उजला लगता था। जैसे ठंडा ठंडा चुप-चुप बुझा बुझा हो। हर समय गुरू भक्ति हर समय गुरू का डर। शैली की मुहब्बत का और ही मज़ा था। जैसे दहकता हुआ अँगारा हो। कोई हाथ लगाये तो छाला पड़ जाये। हाय इस तरह के महबूब के अंग लग कर जलने में कितना मज़ा है। यह सोचती हुई, एक मज़े मज़े में मखमूर आँखें मूँदे कितनी देर तक औंधी पड़ी रही।

''मैं शैली को किसी का नहीं होने दूँगी।'' जब सुंदरी दोबारा होश में आई तो वह एक वहशत में पुकार उठी।

अमन को गोइंदवाल गये कई दिन हो गये थे। जैसे उसकी आदत थी, जहाँ जाता था, वहीं का ही हो जाता था। सुंदरी एक से ज़्यादा बार उसे संदेशे भेज चुकी थी। एक से ज़्यादा बार वह जल्दी लौटने का वादा कर चुका था। लेकिन हर बार लोटने की तारीख आगे बढ़ा देता था। सुँदरी को बेहद गुस्सा आता।

''शैली होता तो कभी ऐसा न करता।''सुंदरी के भीतर से जैसे कोई पुकार पुकार कर कह रहा था। रावी पार की उस शाम के कई दृश्य सुंदरी की आखों के सामने घूमने लगते। बार बार वह जैसे हाथ से अपनी आँखों के सामने से हटाने की कोशिश करती, बार बार वे आकर उसे घेर लेते। जैसे झुरमुट डाल रहे हों। एक हसीन नाच नाच रहे हों। कभी इसकी कोशिश होती उसके शरीर से उसका शरीर छू जाये। कभी बहाने से उसके कँधे से कँधा रगड़ जाता। छिप छिप कर कनखियों से एक-दूसरे को देखना। इशारों इशारों में बातें करना। सारी सारी रात जागना, करवटें बदलते रहना। और अगली सुबह एक दूसरे को देख कर इस सब कुछ को झुठलाने के बहाने निकालना।

सुंदरी सोचती, अमन को वह काफ़ी समय से जानती थी। कितनी नज़दीक आकर उसने अमन को देखा था, लेकिन शैली तो एक ही नज़र में उसे उड़ा कर ले गया हो, हर वक्त इसे एक नशा सा चढ़ा रहता। जैसे कोई आकाश में तैर रहा हो।

शैली की मुहब्बत आग की लपट जैसी थी। एक ऐसा अलाव जिस में जलकर

किसी को मज़ा आता है ।

"मैं तो इस आग में जलूँगी ।" सुंदरी के भीतर से आवाज़ आई । जैसे कोई मरण वेला के क्षण को दबोचने के लिये बेक़रार हो ।

एक दिन, दो दिन, तीन दिन, सुंदरी इस भयानक विचार प्रवाह से निकल नहीं पा रही थी । खट्टा-मीठा स्वाद । जैसे किसी को आग से खेलने का मज़ा आ रहा हो ।

अमन बाहर गया हुआ था । शैली एक बाँह की दूरी पर था । सुंदरी और अमन की शादी जितनी दूर हो गई थी, उतना ही शैली पहले से ज़्यादा नज़दीक मालूम हो रहा था । सुँदरी को उसमें से एक खुशबू सी आने लगी थी । वही सुगंध थी जो किसी शाम उसमें से आई थी, वह शाम जो क़हर की रात में बदल गई थी ।

खाना खाते वक्त उस दिन सुंदरी के मन में न जाने क्या आई, शैली को संबोधन करके कहने लगी, "तू क्यों नहीं गोइंदवाल जाकर उसे अपने साथ ले आता । " शैली जवाब में शरारत भरी हँसी हँसने लगा, "बीबी, वह अब नहीं लौटेगा । मैं अमन को पहचानता हूँ । वह खडूर नहीं आयेगा । हम लोगों को ही गोइंदवाल जाना पड़ेगा । पहले वह करतारपुर से निकला था और खडूर आकर जम गया था । हम लोगों को ही हार माननी पड़ी । अब भी ऐसा ही होगा । वह तो गुरू की शरण में बैठा अपना जन्म सँवार रहा है । और पीछे हम पापी जीव उसकी इन्तज़ार में उसकी राह में आँखें बिछाये बैठे रहते हैं ।

"नहीं आता तो मैं माँ के साथ स्यालकोट चली जाती हूँ ।" सुंदरी के मुंह से निकला । और परोसी हुई थाली वैसे ही छोड़ कर वह गुस्से में उठकर चली गई ।

सारा परिवार सकते में आ गया । सब एक दूसरे के मुंह की तरफ़ ताक रहे थे । सुंदरी सच्ची भी थी । सच्ची नहीं भी थी ।

9

अब एक नई मुसीबत खड़ी हो गई । अगले दिन अमन का ख़त आया कि उसका लौटना निकट भविष्य में सँभव नहीं होगा ।

और फिर जैसे उसका लौटना, न लौटना कोई अर्थ न रखता हो, वह अपनी आदत के मुताबिक ख़त में गुरू अमर दास जी महाराज की प्रशंसा करने लगा, गोइंदवाल में हुई एक दिलचस्प घटना का ज़िक्र ले बैठा था ।

गोइंदवाल तो अब पहचाना तक नहीं जाता । बहुत बड़ा शहर बन गया है । कम से कम 22 ज़ातों के लोग यहाँ आ बसे हैं । व्यापार का इतना बड़ा केंद्र बन गया है ! दर्शनों के लिये आये यात्री कई कई दिन यहाँ टिक जाते हैं । अटूट लंगर चलता है । यह भी सुनने में आया है कि जल्द ही इस शहर को छावनी बना दिया जायेगा ।

सबसे अहम प्रथा जो गुरू अमर दास जी ने शहर में डाली है, वह है यहाँ का लंगर, जिसमें छोटे बड़े, हर ज़ात के लोग, एक साथ बैठ कर भोजन करते हैं । गुरू महाराज के दर्शनों से पहले लंगर का प्रसाद ज़रूरी गिना जाता है । अगर कोई प्रसाद खाने से इन्कार करे तो वह गुरू महाराज के दर्शनों से वंचित रहता है । इस तरह भाई चारे में एक निकटता पैदा

हो रही है । बड़े छोटे, ऊँची ज़ात, छोटी ज़ात का कोई ख़्याल नहीं । हर किसी को एक ही जगह बैठ कर प्रसाद खाने के लिये कहते हैं ।

इस सिलसिले में यहाँ एक बड़ी विचित्र घटना पिछले दिनों में हुई है । इस शहर में एक मरवाहा खत्री रहता है । नाम हरिराम है । शहर के लोग उसे तपा कहकर पुकारते हैं । वह अपनी ज़ात के खत्रियों का नेता बना बैठा है । गुरू महाराज की महिमा देख कर हमेशा जलता कुढ़ता रहता है और आने जाने वालों को सुनाकर कहता फिरता है कि गुरू अमर दास ने हिंदू धर्म, हिंदू मर्यादा का सत्यानाश कर दिया है । बड़े छोटे, ऊँची ज़ात नीची जात का कोई ख़्याल नहीं रखते । हर किसी को एक ही जगह बैठ कर प्रसाद खाने के लिये कहते हैं ।

गुरू महाराज को जब तपे की हरकतों की ख़बर मिली तो उन्होंने हुक्म दिया कि जो लोग पंगत में बैठ कर प्रसाद खाते हैं उन्हें धर्मशाला की ओर से कुछ धन भी दिया जाये । यह सुन कर तपे के कई अनुयाई उसके हुक्म की अवज्ञा करके पंगत में आ बैठे । लेकिन तपा खुद नहीं आया ।

''गुरू महाराज अन्तर्यामी हैं । इन्होंने कुछ दिनों बाद ऐलान किया कि जो भी ऊँच नीच का विचार छोड़कर लंगर की पंगत में बैठकर भोजन करेगा, उसे पहले से दुगनी रक़म पेश की जायेगी । एक तो प्रसाद, ऊपर से दक्षिणा । जो खत्री अभी तक लंगर में नहीं आये थे, लँगर पर टूट पड़े । लेकिन तपा अभी भी न आया ।''

''यह देखकर गुरू महाराज ने आदेश दिया कि आगे से जो भी पहली बार पंगत में बैठ कर भोजन करेगा, और इस तरह छूतछात, ऊँच नीच के भेदभाव को मिटायेगा, उसे गुरू घर की ओर से बतौर सिरोपा* एक मोहर दी जायेगी ।''

''अब अपने फैसले पर क़ायम रहना तपे के लिये मुश्किल हो गया । उसके कुटुंब में तो बहुत से प्राणी थे । अगर वे सारे पँगत में आये तो उसके यहा तो लहर बहर हो जायेगी । लेकिन शर्म के मारे तपे ने पहले अपने बेटे को भेजा । वह भी पिछले दरवाज़े से ताकि उसकी बदनामी न हो ।''

''तपे के बेटे की बदकिस्मती वह पिछवाड़े से लँगर में जाने के लिये दीवार कूद कर जाने लगा तो उसकी टाँग टूट गई । यह सुनकर तपे को होश आई तो वह अपने परिवार समेत गुरू महाराज की शरण में आ गिरा । गुरू जी नें तपे को उपदेश दिया और बाद में अपने एक शबद में उसकी हरकत का इस तरह ज़िक्र किया :

जित्थै थोड़ा घनु वेखै तित्थै तपा भिट्टे नाही,
धनि बहुतै डिट्ठे तपै धरमु हारिआ ॥

(थोड़े धन के कारण तपा भ्रष्ट नहीं होने को तैयार हुआ, बहुत धन देखकर तपे ने धर्म गँवा दिया ।)

---

* सम्मान सूचक (अनुवादक)

सुंदरी ने एक बार ख़त पढ़ा और आले में फेंक दिया। फिर कभी पलट कर उसकी तरफ़ नहीं देखा।

घर में सब लोग कई कई बार ख़त पड़ चुके थे, लेकिन सुँदरी ने दोबारा उसे हाथ नहीं लगाया।

दिन प्रतिदिन सुंदरी को लगने लगा कि उसे अमन की गुरूभक्ति से चिढ़ होती जा रही थी। अमन की कोई बात उसे नहीं भाती थी। वह तो चाहती थी कि अमन सुँदरी के अँदर की जवान-जहान लड़की की नाज़ बरदारियाँ करे। उसे सैर सपाटों के लिये बाहर ले जाये। उसके लिये नये नये कपड़े बनवाए। गहनों से उसे लाद दे। वह तो उसे कभी अपने साथ टहलाने के लिए भी नहीं ले गया था, जैसे कभी शैली रावी पार बाबा जी के खेतों की सैर के लिये उसे लेकर गया था। किस तरह का आदमी था ! अभी शादी हुए चार दिन भी नहीं हुए थे कि बाहर चला गया, और अब लौटने का नाम ही नहीं ले रहा था। इतना नहीं हुआ कि नई ब्याही दुल्हन को साथ ही ले जाता। उसने तो एक बार भी सँकोच नहीं भुलाया था।

और फिर सुंदरी ने मन ही मन फैसला किया कि अगर उसकी माँ के रवाना होने से पहले अमन नहीं लौटता तो वह भी स्यालकोट चली जायेगी। रिवाज के अनुसार मायके में उसे एक फेरा लगाना ही था। उसने सोचा था यह फेरा अमन के साथ ही डालेगी, लेकिन अगर उसकी किस्मत में यह नहीं था तो वह अकेली ही चली जायेगी।

और ऐसा ही हुआ, उसकी माँ दो बार अपनी यात्रा स्थगित करने के बाद आख़िर चल ही पड़ी। अमन अभी तक नहीं लौटा था। लारे-लप्पे लगा रहा था।

सुंदरी भी अपनी माँ के साथ जाने के लिए तैयार हो गई। उसे अपने आप से बड़ा डर लग रहा था। उसका दिल कह रहा था, उसे अमन की ग़ैर हाज़िरी में इस तरह नहीं जाना चाहिये। लाहौर तक शैली का साथ उसे हरगिज़ नहीं करना चाहिये। बेशक उसकी माँ साथ में होगी, लेकिन अगर कोई पुरानी बात याद आ गई तो फिर वह अपने आप को काबू नहीं कर सकेगी।

और फिर शादी करवा कर वह और भी सुंदर और नाज़ुक, और भी दिलकश निकल आई थी। उसे लगा जैसे उसका शरीर तराशा गया हो। उसके चेहरे पर निखार आ गया था। नित नये सिंगार करना बतौर दुल्हन के उसका अधिकार बन गया था। अब जब वह अपने बालों में फूलों की वेणी गुँधवाती, तो उसे कितनी फ़बती थी। उसकी चाल बदल गई थी। उठते बैठते आजकल उसके ओठों पर नग़में गूँजते रहते थे। कुँवारेपन की सहेलियों से वह कितनी दूर निकल आई थी। अब तो दस भेद उसे अपने भीतर छिपाने की तरकीब आ गई थी। उसका मन नये नये सपने देखने लगा था। अब तो ज़्यादा वक्त उसका मेंहिदी घोलने, उबटन मलने में गुज़रता था। इस तरह सज कर जब वह बैठती थी, तो उसे लगता था कि हवा के एक झोंके के साथ ही वह उड़ने लगेगी। उड़ती उड़ती नीले आकाश में तैरने लगेगी। आजकल उसकी पलकों में और के और सपने पिरोये रहते थे। और के

और रंग-तमाशे उसके नैनों के सामने खेलते रहते थे । उसकी आवाज़ भारी हो गई थी । चार फेरे लेने के बाद वह जैसे और की और हो गई थी ।

अगले दिन सुबह ही उन्हें लाहौर के लिये रवाना होना था । लाहौर से वह अपनी माँ के साथ फेरे के लिये स्यालकोट चली जायेगी । उस शाम शैली के पास खड़ी सुंदरी को उसमें से एक खुशबु आई, वही जो पहले कभी आया करती थी, उसका जी करता था कोई ऐसी बाहें हों जिनमें वह औंधी जा गिरे ।

सारी रात उसके भीतर से जैसे कोई पुकार पुकार कर उसे कह रहा था "तुझे नहीं जाना चाहिये," "तुझे नहीं जाना चाहीऐ !"

अगली सुबह वह अपनी माँ के साथ स्यालकोट जाने की बजाय गोइंदवाल जाने वाले जत्थे के साथ चल पड़ी । तैयारी तो उसने कर ही रखी थी ।

न उसकी सास तेजी को, न नसरीन को उसकी इस हरकत की समझ आई । सब उसके मुंह की तरफ़ ताक रहे थे । सब लोग उसके मुँह की तरफ़ ताकते रहे और वह गोइंदवाल जाने वाले मुसाफ़िरों के साथ चल पड़ी । इस तरह अपना फ़ैसला बदलने के बारे में उसने शैली से भी कोई बात नहीं की । शैली से तो उसे जैसे कोई डर लग रहा था ।

10

जब सुंदरी गोइंदवाल पहुँची तो शहर में अफरा-तफरी मची थी । एक भयानक किस्म का आतंक था । चारों तरफ से फ़ौज ने शहर के गिर्द घेरा डाल रखा था । गली गली में सिपाही घूम रहे थे । हर घर की तलाशी ली जा रही थी । बेक़सूर लोगों को परेशान किया जा रहा था । इनमें हिंदू भी थे, मुसलमान भी थे, गुरूसिक्ख भी थे । मज़लूम शहरी गुरू महाराज के यहाँ जा कर फ़रियाद करते, जवाब में बस सत्गुरू यही कहते, अकाल पुरख का भाना मानना पड़ता है । ईश्वर की दरगाह में हमेशा इन्साफ़ होता है ।

यह पुराना मर्ज़ था ।

गोईंदवाल को बढ़ता, फैलता देख कर आसपास के बेशुमार मुसलमान घर भी नये शहर में आ बसे थे । इनमें खोजा जाति के लोगों की बहुगिनती थी । खोजे सखी सरवर के उपासक थे, इस लिए वे सरवरिये भी कहलाते थे । ये लोग अधिकतर तरन तारन से कुछ कोस दूर रहते थे ।

खोजा नौजवानों का उत्पात तो कई दिनों से बेहद बढ़ गया था । मुसलमानी राज होने के कारण उनकी चढ़त मची रहती । मनमानियाँ करते । उन्हें गोइंदवाल के निवासियों से ज़्यादा बैर इस लिये था कि वे गुरू अमर दास जी को अपना गुरू बनाये बैठे थे । उनकी शरण में अपना कल्याण समझते थे ।

गली-मुहल्ले में आते जाते गुरूसिक्खों के साथ वे लोग ठट्टा मखौल करते । जहाँ तक मुमकिन होता, लोग उन्हें मुंह न लगाते । ज्यों ज्यों गुरूसिक्ख उनसे बिगाड़ने से कतराते, खोजों का व्यौहार और भी ख़राब होता जाता ।

फिर उन्होंने पानी भरने जाती औरतों के घड़ों को निशाना बनाना शुरू कर दिया ।

लड़कियाँ पानी भर के ला रही होती, खोजों के उत्पाती लड़के उनके सर पर उठाये घड़ों को अपनी गुलेलों का निशाना बना कर फोड़ देते । हर रोज़ उनका यही नियम बन गया । लोग बेहद तंग आ गये । गुरू महाराज के पास जाते तो वे हमेशा धीरज रखने का उपदेश देते । यही कहते, सँतोष से बड़ा कोई सुख नहीं । क्षमा के बराबर कोई शस्त्र नहीं । जो जैसा बोता है, वैसा ही काटता है ।

शहर में लोग बहुत परेशान थे । उन्होंने घड़ों की बजाये मश्कों से पानी लाना शुरू कर दिया । यह देख कर खोजों के बिगड़े हुए लड़के तीर कमान चलाने लग पड़े । बड़े ख़तरे की बात थी । तीर माश्कियों को भी बेंध सकते थे । उन्हें लाख समझाया गया, लेकिन वे बाज़ न आये ।

उधर गुरू महाराज हमेशा यही सलाह देते कि शांति जैसा, भाई चारे जैसा, आसती जैसा कोई गुण नहीं ।

हर रोज मशकों में छेक कर दिये जाते । हर रोज भरी हुई मशकों का पानी गलियों में बह जाता । देखकर उत्पाति लड़के खिल खिला कर हँसते । छतों पर चढ़े लड़के ममटियों के पीछे छिप जाते । पेड़ों पर चढ़े हुए झाड़ों में छिप जाते यह देखकर शहर वालों ने गागरों का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया । पानी तो भरना ही था । पानी बग़ैर ज़िंदगी कैसे चलती । उन्हें विश्वास था कि खोजों को हार माननी पड़ेगी । अब वे अपना सलूक बदल लेंगे ।

लेकिन नहीं, खोजों ने कंकर-पत्थर बरसाने शुरू कर दिये । गागरें पिचक जातीं । सबसे बड़ी ख़तरे वाली बात यह थी कि इस तरह का पत्थर अगर किसी को लग जाये तो वह जख़्मी हो सकता था ।

और फिर वही बात हुई । संन्यासियों की एक टोली गोइंदवाल आई हुई थी । खोजों ने उन्हें भी माफ़ नहीं किया । वे लोग नदी से अपने आश्रम के लिये पानी ला रहे थे । शरारतियों ने उनके करमंडलों पर भी पत्थर बरसाये । उसी बीच एक पत्थर जोगियों के नेता की आँख पर जा लगा । संन्यासियों ने क्रोध में आ कर खोंजों की खूब पिटाई की । शहर के सभी खोजों की धुलाई की ।

कुछ दिन के लिये शांति छाई रही । लेकिन कुछ दिनों बाद जब सन्यासी गोइंदवाल छोड़ कर आगे निकल गये तो खोजों ने फिर पुरानी बेहूदगियों शुरू कर दीं । लोग बहुत तंग आ गये थे ।

ईश्वर की महिमा, उन्हीं दिनों खच्चरों पर लदा सरकारी ख़जाना गोइंदवाल में से गुज़रा । नदी के किनारे बसे अत्यँत सुंदर शहर को देख कर ख़ज़ाने की हिफ़ाज़त करने वाली फ़ौजी टुकड़ी ने रात वहीं आराम करने का फैसला किया । खच्चरों की खुरजियो मोहरों से भरी थीं । जब खोजों के बिगड़ैल लड़कों को इस बात की भनक मिली, तो उन्होंने एक खच्चर को बरगला कर अपने कमरे में छिपा लिया । अगली सुबह चलने से पहले जब सरकारी अमले ने खच्चरों की गिनती की तो एक खच्चर कम था । वह कहाँ

ग़ायब हो गया था ? और फिर खच्चर पर लदी खुरजी में हज़ारों मोहरें थी । सारे शहर में ढ़िढोरा पीटा गया लेकिन खोजों की मुख़बरी करने की मज़ाल किसी में नहीं थी ।

जब सुंदरी गोइंदवाल पहुँची तो सरकारी अमला बारी बारी से हर घर की तलाशी ले रहा था । तलाशी लेते हुए जब वे एकान्त स्थान में बनी हवेली के नज़दीक आये तो भीतर से खच्चर हिनहिनाने लगी । चोरी पकड़ी गई थी । यह सारी कारिस्तानी खोजों की थी ।

यह देख कर फ़ौजियों ने खोजों की मुरम्मत शुरू की । उनके चौधरी को सूली पर चढ़ाया गया । उसके बेटे को भी फाँसी की सज़ा दी गई । यह सुनकर खोजे गुरू महाराज की शरण में आ गये और उनकी सिफ़ारिश से खोजों की बंद खलासी हुई ।

इस घटना के बाद गुरू सिक्ख पहले से भी ज़्यादा गुरू महाराज के उपदेशों का पालन करने लगे । और खोजों का यह गुमान कि सखी सरवर के अनुयाई होने के कारण उनसे कोई पूछताछ नहीं कर सकता, यह घमँड जाता रहा ।

शहर की तलाशी लेते हुए सरकारी अहलकार जब अमन के ठिकाने पर पहुँचे तो उसे अकेला देख कर उन्होंने उसकी जमकर पिटाई की, न जाने क्यों उन्हें उस पर शक हो गया । इतने बड़े घर में वह अकेला था । उसे जख़्मी लहु लुहान हालत में सपाहरे बगैर किसी को ख़बर किये निकल गये । पूरा एक दिन और रात उसे तलाश करते करते आख़िर सुंदरी को अमन के ठिकाने की ख़बर मिली । दो चार दिन पहले ही तो अमन ने यह घर किराये पर लिया था, ताकि परिवार के बाक़ी लोगों को भी यहाँ लाया जा सके ।

इससे पहले कि सुंदरी कोई निहोरे करती, अमन को देखते ही वह उसके उपचार में लग गई । मरहम-पट्टी, दवा-दारू । दो दिन का भूखा प्यासा बेहाल पड़ा था । फ़रिश्ता-सीरत इन्सान, सुंदरी को उस पर बेहद लाड़ आने लगा । अमन के इलाज में, उसकी सेवा में सुँदरी ने दिन रात एक कर दिया ।

एक पैर गुरू महाराज के यहाँ, दूसरा अपने घर में, सुंदरी अपने गृहस्थ जीवन में इतनी व्यस्त हो गई कि अपने सारे शिकवे शिकायतें को भूल गई । तीमरदारी करते हुए उसे अपना घरवाला पहले से भी ज़्यादा अच्छा लगने लगा । इतना प्यारा तो शायद वह उसे कभी भी नहीं लगा था ।

कुछ दिन बाद जब सुंदरी उसके पलँग पर बैठी उसके शरीर को सहला रही थी तो अमन ने उससे कहा, "तुझे बाबा नानक ने गोइंदवाल भेजा है । अगर तू न आती तो क्या पता मैं इसी हवेली में भूखा प्यासा ख़त्म हो चुका होता । किसी को पता भी न चलता कि मैं यहाँ पड़ा तड़प रहा हूँ ।"

यह सुनकर सुंदरी की पलकों में से ख़ुशी के, शुक्राने के आँसू बहने लगे । वह जिन हालात में गोइंदवाल आई थी, उसके बारे में उसे ख़ुद अचम्भा होता रहा था ।

उस दिन जब वह सुबह का कीर्तन सुन कर धर्मशाला से लौट रही थी तो उसकी मुलाक़ात भाई गुज्जर लोहार से हो गई । यहाँ भी लंगर की सेवा उसके हवाले थी । सुंदरी गोइंदवाल आकर भी भाई गुज्ज़र के साथ लंगर की सेवा में लग गई । घर में पति की सेवा, धर्मशाला में लँगर की सेवा, सुंदरी का अन्तःकरण धुला धुला, उजला उजला रहता । सारी

मैल जैसे घुली घुली जा रही हो ।

11

जिस शाम शैली और भाई मूले की पत्नी लाहौर पहुँचे, भाई दुनीचंद की हवेली में बेहद गहमा-गहमी थी । अनेक स्वागत द्वार बनाये गये थे । हवेली की डयोढ़ी को फूलों-पत्तों से सजाया गया था । जगह जगह फानूस और शमादान लटक रहे थे । ढोलक की थाप दूर से ही सुनाई देनी शुरू हो गई थी । साथ में लड़कियों-बालियों के गीतों की मधुर स्वर लहरी आस-पड़ौस के वातावरण में फैल रही थी ।

''यह तो कोई शादी वाला घर मालूम होता है ।'' शैली ने सुंदरी की माँ से कहा और अगले ही क्षण उन्हें पता चला कि शक्ति की शादी हो रही थी ।

शैली ने सुना तो जैसे उसके दिल की कोई धड़कन थिड़क कर रह गई हो । क्षणभर के लिये जैसे किसी का कलेजा डूब जाता है, लेकिन अगले ही क्षण वातावरण के उल्लास ने उसे अपने साथ उड़ा लिया । उन लोगों को देख कर शक्ति ख़ुशी से खिल उठी । बार बार भाई मूले की पत्नी के गले से लगती जा रही थी । झट मंगनी और पट ब्याह ; उसे इतना बुरा लग रहा था कि वह खडूर वालों को ख़बर तक नहीं दे पाई थी । लेकिन गुरू बाबे ने उस परिवार में से दो प्राणियों को तो भेज दिया था ।'' अब मैं डोली में ख़ुशी से बैठ सकूंगी ।'' शक्ति बार बार चहकने लगती । शक्ति की बड़ी बहनें और दूसरे रिश्ते-नाते दार शादी के लिये आये हुए थे । भाई दुनीचन्द बहुत वृद्ध हो गये थे । वे ख़ुश थे । इतने दिनों से वे हाथ जोड़ते रहे थे, लेकिन शक्ति थी कि शादी का नाम नहीं लेने देती थी । यह तो चमत्कार हुआ था । कुछ दिन पहले शहर के एक व्यापारी के घर से पैगाम आया था, और बेटी ने बिना किसी पूछ पड़ताल के रज़ामन्दी दे दी ।

कुछ देर बाद, इधर उधर टटोल कर शैली को विश्वास हो गया कि शादी कराने का फैसला शक्ति ने अमन और सुंदरी की शादी की ख़बर सुनने के बाद ही किया था ।

''मैं सुंदरी की शादी में जरूर आती लेकिन पिता जी की सेहत आजकल ठीक नहीं रहती । बड़ी बहनें अपने घरों में हैं और दोनों भाईयों का काम काज देखने के कारण बाहर आना जाना लगा रहता है । जब से मैं खडूर साहब से लौटी हूँ, हवेली की देख रेख की पूरी ज़िम्मेदारी मेरे सर पर है । शक्ति सुंदरी की माँ को बता रही थी । अपनी सहेली की शादी में वह पहुँच नहीं सकी थी, इसका उसे बेहद अफसोस था । इतने में शाम होने लगी । चारों तरफ़ शमादानों में, फ़ानूसों में बत्तियाँ जला दी गई । हवेली की मुँडेरों पर दिये जगमगाने लगे । गली मुहल्ले में मशालें जल रही थी ; ज्यों ज्यों अँधेरा बढ़ता जाता, ढ़ोलक की थाप और ऊँची होती जाती । नटनियों के सुर और शोख़ होते जाते ।

खाना खा कर अल्ले-मुहल्ले की लाहौरनें, क्या हिंदू और क्या मुसलमान, इकट्ठी हो गईं । शादी के लिये बैठाये गये गीतों की वह आख़िरी रात थी, अगले दिन तो बारात आने वाली थी । आज रात नाच-गाने का विशेष प्रबन्ध किया गया था । शैली को जब पता चला कि वह बैठक केवल औरतों के लिये थी । और उसमें शामिल नहीं हो सकेगा, तो

उसका सारा चाव ख़त्म हो गया । क्षणभर के लिये उसका चेहरा उतर गया । यह देख कर शक्ति ने उसे एकान्त में ले जाकर कहा , तू ऊपरवाली मंज़िल के झरोखें में पर्दे के पीछे बैठ जाना, जहाँ से तू गाना भी सुन सकेगा, नाच भी देख सकेगा ।

चूँकि शक्ति की मुसलमान सहेलियाँ, रात की महफ़िल में शामिल हो रही थीं, इसलिये मर्दों का उस महफ़िल में शामिल होना मुमकिन नहीं था । शक्ति ने शैली की ख़ातिर जो इन्तज़ाम किया था, उसकी घर में और किसी को भनक तक नहीं लगने दी गई थी । न ही भाई मूले की पत्नी को ही बताया गया था। शक्ति और शैली के बीच यह एक राज़ था । शक्ति ने कहा था, अगर किसी ओर को पता चल गया तो आफ़त आ जायेगी । उसकी मुसलमान सहेलियाँ सख़्त पर्दा करती थी ।

''हमारे गुरू महाराज तो पर्दे की सख्त मनाही करते हैं ।'' शैली ने शक्ति को याद करवाया ।

''हाँ, हाँ, लेकिन लाहौर में गुरू महाराज का राज नहीं ।'' शक्ति ने एक लाहौरिन के अँदाज़ में कहा लगता था वह और की और हो गई थी । लाहौरिनों का पहरावा, लाहौरिनों का रहन-सहन । उस शक्ति और आज की शक्ति में ज़मीन आसमान का अंतर था । एक सरमायेदार लाहौरन !

शैली को एकदम ख़्याल आया ! इस लाहौरन ने तो एक बार भी अमन के बारे में बात नहीं की थी । न अमन के बारे में, न सुँदरी के बारे में, बस यही कहा था कि मैं चाहते हुए भी उनकी शादी में शामिल नहीं हो सकी ।

बारात से एक दिन पहले दुल्हन को तो माइयों पर बैठना चाहिये था, शक्ति थी कि हँसती सहेलियों के साथ हँस रही थी, गानेवाली सहेलियों के साथ गा रही थी, नाचने वाली सहेलियों के साथ नाच रही थी । और लाहौरनों के पहरावे, उनके वेश, उनके बाल बनाने के ढँग, झरोखे में बैठे शैली को देख रेख कर नशा चढ़ रहा था । यह तो कोई और ही दुनियाँ थी । इतनी खूबसूरत, इतनी सजी हुई लड़कियो ! कुछ तो जैसे गहनों से लदी हों । ज़रबफ़त ओर किमख़ाब झम झम कर रहे थे ।

शक्ति ने कहा था, जिस झरोखे में बैठ कर जालीदार पर्दे के पीछे से वह यह सब कुछ देख सकेगा, सुन सकेगा, उसे नीचे गाती, नाचती लड़कियों में से कोई नहीं देख सकेगा ।

कितनी देर तक लड़कियां बारी बारी से दो दो चार चार की संगत में ढोलक के गीत गाती रहीं । एक से बढ़ कर एक नया गीत । एक से बढ़ कर एक चँचल, शोख़ गीत । कुछ गीत नाटकीय ढंग से पेश किये गये । फिर लड़कियां नाचने लगीं । गाती जातीं और नाचती जातीं । उन्हें हार वार नहीं आ रही थी । ढोलक वाली के तो जैसे पसीने छूट रहे हों । अब लड़कियों ने आपस में दो टोलियाँ बना कर क़व्वालियाँ गानी शुरू कर दीं । कानों पर हाथ रखकर एक से बढ़कर एक उँची सुर निकालती और फिर ताली बजाती हुई वे लोट पोट हो रही थीं । वज्द में आ रही थीं । जैसे परियों की डारें हों । शैली एक स्वाद में डूबा झूम झूम

रहा था कि उसे ऐसा महसूस हुआ, कि कोई एक चेहरा था जो बार बार उसके झरोखे की तरफ़ देखने लगता था। काफ़ी देर से यह सब हो रहा था।

शुरू में तो शैली ने कोई ध्यान नहीं दिया, लेकिन कुछ देर से उसे निश्चय होता जा रहा था कि कोई नज़रें उसे तलाश कर रही थीं। नीचे रोशनी थी, जिस कमरे में शक्ति उसे बैठा गई थी, वहाँ जानबूझ कर रोशनी नहीं की गई थी, बस उतनी ही रौशनी थी जो शरद पूर्णिमा की रात के चाँदनी झरोखों में से छन कर आ रही थी।

ठुड्डी की एक तरफ़ गाल पर तिल वाली एक हसीना सचमुच जैसे झरोखे की गली की तरफ़ एकटक देखे जा रही थी। हसरतभरी आँखें, जैसे कोई संदेसे भेज रही हों। न गा रही थी न नाच रही थी। एक तरफ़ बैठी किसी ख़्याल में डूबी, बीमार बीमार नज़रों से झरोखें की तरफ़ देखने लगती। एक बार उधर नज़रें करती तो उसे सब कुछ भूल जाता। वह कहाँ बैठी थी, उसके आसपास क्या हो रहा था ? बार बार ऐसा लगता कि वह उछल पड़ेगी और एक ही झपाटे में झरोखे के छेद में से भीतर आ जायेगी।

और अब जैसे शैली के भीतर भी कुछ होने लगा था। यह कौन थी ? कानों के गिर्द सवालिया निशान बना रही जुल्फ़ें , मोटी भारी दो चोटियाँ, उठती गिरती उसकी गोद में ढेरी हो रही थी। उसका रेशमी दुपट्टा बार बार उसके सर से सरक जाता था। नींद भरी आँखें, एक खुमार से अलसाये अँग, बार बार गहरी साँसे ले रही थी।

कुछ देर बाद वह अचानक उठी और शक्ति के कानों में कुछ फुसफुसाई क़व्वाली गा रही लड़कियों ने अपनी लय तेज़ कर दी थी। ताने लेने वालियों की आवाज़ जैसे आकाश को चीरती जा रही हो। ऐसा लगा जैसे उसकी बात सुन कर शक्ति अवाक रह गई हो। लेकिन वह लड़की अपनी ज़िद पर क़ायम थी। शक्ति जैसे उसे रोक रही थी। लेकिन वह अपने आप को और नहीं रोक पा रही थी। और फिर शक्ति उसके दुपट्टे को पकड़ती ही रही और वह कन्नी बचा कर महफ़िल में से ग़ायब हो गई कहाँ गई थी ?

और अगले क्षण शैली की ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की साँस नीचे रह गई, वह हसीना उसके कमरे में थी, जैसे ख़ुशबू की पिटारी हो।

"मैंने शाम को अपने घर के झरोखे में से आपको इधर आते देखा था" यह कहते हुए उसने अपने आपको शैली की बाँहों में ढ़ेरी कर दिया।

12

"मेरा नाम नसीम है। मेरे वालिद नवाब नईम अली है।" शैली की पारिस्तार 'पालणहार' अब बोल रही थी। नीचे आँगन में नाच-गाना ज्यों का त्यों जारी था। हमारी हवेली उस चौक में है जहाँ से आप भाई दुनीचंद के घर के लिये मुड़ते हैं। मेरी आदत है दोपहर को जब घर के बाक़ी लोग सुस्ताते हैं, आराम करते हैं, में अपने झरोखें में बैठी पर्दे के पीछे सड़क पर आँखें बिछाए किसी की इन्तज़ार करती रहती हूँ। और आज जब मैंने आपको आते देखा, तो मेरे मन ने कहा-यही तो वह है जिसका तुझे इन्तज़ार था। मेरा दिल उछल कर मेरी हथेली पर आ गया। फिर जब मैंने देखा आप तो शक्ति की हवेली की तरफ़

आ रहे थे, मेरे दिल के भीतर से किसी ने गवाही दी–अब इन्तज़ार की घड़ियाँ ख़त्म हो गई है। और मैं ग़लत नहीं थी।

"इस्लाम में पर्दे का रिवाज है, लेकिन हमारे ख़ानदान में इस पर कुछ ज़्यादा ही जोर दिया जाता है। औरत ज़ात को जैसे डिबिया में बंद करके रखा जाता है। मैं बड़ी मुश्किल से 11 बरस की थी कि मुझे बुर्का पहना दिया गया। आज पंद्रह बरस बीत गये हैं, किसी पराये मर्द ने मेरा चेहरा नहीं देखा। हमारी हवेली में दीवारों के पीछे दीवारें हैं, पर्दों के पीछे पर्दे हैं। दम घुट कर रह जाता है। वह हुस्न किस काम का जिसे कोई देख न सके, जिसे देख कर कोई उसके बनाने वाले की तारीफ़ न करनी शुरू कर दे। जंगल में खिले फूल से भी सुबह की हवा अठखेलियाँ करती हैं, शबनम उसका चेहरा धुलवाती है, सूरज की किरणें उसकी पत्ती पत्ती को सहलाती हैं, चाँद की चाँदनी उस पर चुंबन बरसाती है। और एक मैं हूँ, पर्दानशीन, आज पहली बार पराये मर्द के शरीर से मेरा शरीर छुआ है। जैसे कोई कली दूर कर किसी की झोली में आ पड़े।

"मुझे यह जानकर और भी अच्छा लगा कि आपको बाबा शाह फ़कीर वली-ए-हिन्द बाबा नानक की दुआएँ हासिल हैं। और आपकी अम्मी मुसलमान हैं। हम लोग तो एक ही मंज़िल के मुसाफ़िर है। आप बड़े भाग्यशाली हो जिन्होंने उस वली-अल्लाह के दर्शन किये। जब बाबा जी दुनीचँद के यहाँ आये थे, तब मैं पैदा भी नहीं हुई थी। लेकिन एक बार उनकी बाणी सुनी, एक बार उनका दामन थामा, एक बार उनकी मेहर हुई, उसके बाद मैंने यह दामन कभी नहीं छोड़ा।"

"मैं भी सोच रही थी मुझे यह क्या हो गया है, एक नज़र आपको देख कर मुझे लगा जैसे युगों युगों से हमारी पहचान हो, युगों युगों का साथ। यह कहना कि बाबा नानक हिंदू थे या मुसलमान, उस वली-अल्लाह का निरादर करना है। उन्होंने हिंदू मां-बाप के यहां जन्म लिया, मैं भी तो मुसलमान माँ-बाप के घर पैदा हुई, लेकिन मै कौन सी मुसलमान हूँ? उन्होंने कहा था मुसलमान अच्छे मुसलमान बनें, हिन्दू अच्छे हिंदू, मैंने तो बाबा नानक का दामन थामा है, न मैं मुसलमान हूँ न मैं हिन्दू हूँ। आप भी तो नानक पंथी हैं।"

शैली ने सर हिलाया।

"शक्ति की जिस रजवाड़े से शादी होने वाली है, उनकी मुलाक़ात भी हमारे यहाँ ही हुई थी। जो मैंने शक्ति के साथ किया, आज उसने वही मेरे लिये करके भाजी उतार दी है। अमन नाम का कोई है, आपकी तरफ़ का। यह लड़की तो उस पर बिकी हुई थी। एक नज़र उसे देख कर उस पर फ़िदा हो गई। उस मर्द ज़ात ने किसी और के साथ शादी करवा ली है। जिस दिन इसे यह ख़बर मिली, हमारे घर आकर यह छाज छाज आँसू रोई।"

"आपको शायद यह पता नहीं होगा, इसकी माँ को अमन के लिये इसकी कमज़ोरी का पता था। उसने अपनी आँखों से इन्हें प्यार करते हुए देख लिया था। और इसी ग़म में वह देवी जैसी औरत चली गई। यह सब जानते हुए भी कि इस लड़की ने उसके लिये

कितनी क़ुर्बानी दी थी, अमन ने इसका साथ नहीं दिया।"

शैली को यह राज़ पहली बार मालूम हुआ था। पहली बार उसे इस अनर्थ का पता चला था जिसके लिये एक तरह से वह ख़ुद ही ज़िम्मेदार था। वह मन ही मन पानी पानी हो रहा था। कितना भारी क़हर हुआ था। सुंदरी से शादी करके अमन ने कितनी भारी क़ुर्बानी दी थी। शैली सोच रहा था, इस सितम की पूरी पूरी ज़िम्मेदारी उसके अपने सर पर थी। यह सोच कर उसका चेहरा पीला-ज़र्द होने लगा।

"आप को यह क्या हो रहा है ?"नसीम के हाथ पैर फूल गये।

"कुछ नहीं, कुछ नहीं, " शैली ने कहा। उसके पसीने छूट रहे थे।

"क्या आप इस कम्बख़्त अमन को जानते हैं ? नसीम ने शैली की गोद में से सर उठा कर उसके साथ सटकर बैठते हुए, उसके दोनों हाथों को अपने हाथों से पकड़ लिया।

शैली से कोई जवाब नहीं बन पा रहा था।

" मैं मरी , अमन जैसे बेहूदा लोगों से आपका साथ रहता है ?" नसीम ने शैली के हाथों को छोड़ते हुए कहा।

"वह तो, वह तो,....... " शैली की ज़बान हकला रही थी।

"क्या मतलब ? आप सच सच क्यों नहीं बताते ? मुझे लगता है, आप कुछ छिपा रहे हैं ?" नसीम परेशान हो रही थी।

"अमन तो एक तरह से मेरा भाई है," शैली ने कहा।

"तो फिर आप भी, आप भी मेरा यही हाल करेंगे ? " नसीम की आँखों में आँसू छलक आये। वह शैली से कुछ दूर हट कर बैठ गई।

नीचे लड़कियों ने फिर नाचना शुरू कर दिया था। गा गा कर चुप होती तो नाचने लग जाती। नाच नाच कर थकती तो गाने लग जाती।

"अजु न सुत्ती कंत सिऊ अंग मुड़े मुड़ि जाइ।"

फ़रीद के इस श्लोक की धारणा और सामूहिक नाच द्वारा लाहौरनें जैसे जादू कर रही हों। क्षण भर के लिये नसीम और शैली दोनों झरोखे में से नीचे पेश किये जा रहे नाच का आनन्द लेने लगे।

"सामने ये जो दो बहनें नाच रही हैं, इनकी माँ को बाबर के हमले में उसके सिपाही ने ख़राब किया था। ये जुड़वा पैदा हुई थीं।" नसीम जैसे बदमज़गी भूलने के लिए शैली को बता रही थी। "कितनी सुँदर हैं, गोरी चिट्टी, महीन नक्श, साफ़ दिख रहा है, जैसे उस तरफ का ठप्पा हो, बाबर के शहर फ़रग़ाना का।

यूँ बोलते हुए नसीम अचानक रुक गई। क्षणभर के लिये शैली के चेहरे पर पैनी नज़र डाल कर कहने लगी, जैसे आपकी "दादे पोत्तियाँ"* हो। फिर वह शैली को बांहों

* दादा के भाई की बेटियाँ

में ले लेकर प्यार करने लगी । उसके मुँह, माथे, गले, गर्दन को पागलों की तरह चूम रही थी । थोड़ी देर में ही नसीम ने जैसे शैली को फिर अपने साथ उड़ा लिया ।

आधी से भी ज़्यादा रात बीत चुकी थी । और प्यार कर कर के नसीम का मन नहीं भर रहा था । जैसे कोई आदिकाल से भूखा हो । उसकी माँ की माँ की माँ की भूख !

इस बार जब उसका उबाल कुछ मद्धम पड़ा तो नसीम फिर अमन का क़िस्सा ले बैठी ।

''क्या आपको मालूम है कि शक्ति की माँ ने उसे और अमन को एक कमरे में अकेले देखा था । पहली बार लड़की से ग़लती हुई, पहली बार ही वह पकड़ी गई । लेकिन अमन को आप कैसे जानते हैं ? ख़ूबसूरत तो वह होगा । आपके जैसा है ? शक्ति यूँ तो किसी पर फ़िदा होने वाली नहीं । लेकिन होगा बेहूदा मर्द । किसी से क़ौल क़रार करके भूल जाने वाला । आप उसे कैसे जानते हैं? क्या आपके शहर का है ? आपने यह क्यों कहा था कि एक तरह से वह आपका भाई है?'' नसीम एक परेशानी में बोले जा रही थी, बोले जा रही थी ।

''हम लोग एक ही घर में रहते हैं । हमारी माएँ मुँह बोली बहने हैं । शैली ने ज़बान खोली और नसीम फिर उससे दूर हट गई । अनमनी, अनमनी, परेशान, परेशान, उसकी तरफ़ देखने लगी ।

'' यह नहीं हो सकता । यह कैसे हो सकता है?'' अब वह फूट फूट कर रो रही थी । ''आप इस तरह के किसी आदमी के साथी कैसे हो सकते हैं ? मैं नहीं मानती, मैं कभी नहीं मान सकती ।''

''बद अच्छा, बदनाम बुरा ।'' शैली ने धीरे से कहा । जैसे उसे अपने आपसे नफ़रत हो रही हो ।

''नहीं, नहीं, नहीं'' यह सुन कर नसीम अचानक पुकार उठी । वह अपनी आवाज़ को रोक रही थी । अपने आँसुओं को थामने की व्यर्थ प्रयास कर रही थी । और इसी बीच शैली से दूर हट रही थी । पहले से भी अधिक ग़ौर से और ज़्यादा घूर कर उसके चेहरे की तरफ़ देख रही थी, जैसे उसके चेहरे पर लिखी किसी इबारत को पढ़ रही हो ।

13

शादी वाला घर, और फिर इतनी बड़ी हवेली, उस पर बारात का शोर शराबा । शैली और नसीम वक्त बेवक्त मिल लेते थे । बारात पूरे सात दिनों तक जश्न मनाने वाली थी । शक्ति की डोली जाने से पहले अल्हड़ जवानी का हठीला प्यार, नसीम और शैली जी भर भर कर अपनी तमन्नाएँ पूरी कर रहे थे ।

एकाध दिन लाहौर टिकने के बाद भाई मूले की पत्नी स्यालकोट चली गई । उसे भाई मनसुख के बेटे का साथ मिल गया था । वह भी गुरू नानक का अनुयाई था । उसका स्यालकोट जल्दी पहुँचना ज़रूरी था, वहाँ उसकी प्रतीक्षा हो रही थी, शक्ति ने भाई मूले की पत्नी को रोकना मुनासिब नहीं समझा । फिर उसे नसीम और शैली की मुहब्बत का भी ख़्याल था ।

भाई मूले की पत्नी के जाने के बाद शैली को एकान्त में अकेला कमरा मिल गया। जब भी नसीम को मौका लगता वह बुरका ओढ़ कर अपनी किसी बाँदी को साथ लेकर शक्ति के यहाँ आ जाती। शैली पहले से उसके रास्ते में आँखे बिछाये बैठा होता।

शैली को यह सोच कर हैरानी होती कि अमन और वह दोनों करतारपुर में खेल कर बड़े हुए थे। गुरू घर के प्रति उनकी अपार श्रद्धा थी। करतारपुर से वे गुरू महाराज के प्रेम से बंधे खडूर पहुँचे थे। वहाँ से उन्होंने गोइंदवाल जाने का फ़ैसला कर लिया था, लेकिन गुरू घर के बारे में जो जानकारी नसीम को थी, उसके मुक़ाबले में शैली तो जैसे कोई अनपढ़ गँवार था। क्या नसीम, क्या शक्ति लाहौरि ये तड़क भड़क में ही आगे नहीं थे, अक्ल में, इल्म में भी औरों से कहीं आगे थे।

उस दिन शाम के वक्त नसीम शैली के पास बैठी बातों ही बातों में उसे बताने लग पड़ी–''जिस पाधें के पास मुझे पढ़ने के लिए भेजा गया था, उसका नाम भी गोपाल था।''

शैली ने ख़ाली ख़ाली नजरों से उसकी तरफ़ देखते हुए पूछा–''यह गोपाल कौन है?'' जवाब में नसीम हैरान हो कर पूछने लगी ''आप गोपाल के नाम से भी वाक़िफ़ नहीं, जिसके पास तलवंडी में बाबा नानक पढ़ने के लिये भेजे गये थे ?''

शैली ने सचमुच यह नाम पहली बार सुना था।

''अच्छा यह बताइये उस पंडित का क्या नाम है जिसके पास बाबा नानक संस्कृत पढ़ने के लिये गये थे ?''

शैली ने सर हिलाया। उसे इस नाम का बिल्कुल पता नहीं था।

''पंडित बृज नाथ शर्मा'' नसीम ने उसे बताया और वे फिर बाबा नानक की कहानियाँ ले बैठे। जो बात शैली की समझ से हमेशा बाहर रही थी, वह थी बाबर के हमले के दौरान ढ़ाये गये जुल्मों को देखकर बाबा का एक तरफ़ हमलावरों को ''कुत्ते'' तक कहना और दूसरी तरफ़ बाबर की सात पुश्तों को हिन्दोस्तान पर शासन करने का वरदान बख़्शना। और फिर जो नसीम के भीतर की लाहौरिन ने उसे बताया उसे सुन कर शैली की आँखें खुली की खुली रह गईं।

'' बेशक बाबर के हमले के दौरान बड़े जुल्म हुए। हर लड़ाई में होते हैं।''नसीम बड़े धीरज से शैली को समझा रही थी। लेकिन बाबर दिल का बुरा नहीं था।''

''क्यों, उसने चंदेरी के मन्दिरों को मलियामेंट किया।'' और तो और अयोध्या में रामजन्म के पवित्र स्थान पर उसने मस्जिद बनवाई और फिर ग्वालियर के साँभल में हिंदू मंदिरो के बेहुर्मती की, उन्हें ढा कर उन्हीं पत्थरों से मस्जिदों के हुजरे खड़े किये। यह बर्बरता नहीं तो और क्या है ?''

''बेशक, बेशक '' नसीम मुस्कुराती हुई शैली की उँगलियों से खेलती हुई उसे बताने लगी ''वैसे तो बाबर के भीतर का कट्टर सुन्नी शिया तक हो गया था, ताकि फ़ारस के शाह को ख़ुश कर सके। हुक्मरानों को इस तरह की हरकतें करनी पड़ती हैं। हमें यह नहीं भूलना होगा कि बाबर ने हमारे देश में जब हकूमत संभाली तो हिन्दू ओहदेदारों को

बरतरफ़ नहीं किया । हमारे लाहौर का रंगलिदास सफेद करे स्याह करे, उसे कोई पूछने वाला नहीं था । बादशाह को उस पर अंधा विश्वास था ।''

''और राणा सांगा से बाबर की जंग?'' शैली ने नसीम को याद करवाया ।

''यह जंग हिंदुओं और मुसलमानों के बीच हरगिज़ नहीं थी । हसन ख़ान मेवाती और इब्राहीम लोदी का भाई मुहम्मद लोधी राणा सांगा की तरफ़ से बाबर का मुक़ाबला कर रहे थे । जान पर खेल कर वे राणा के लिये लड़े ।

''हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि बाबर ने इब्राहीम लोधी से हकूमत छीनी थी । इब्राहीम लोधी बेशक एक निर्दयी हाकिम था । तास्सुबी और तंगदिल । बाबर उसे जंग के मैदान में तो हरा सकता था, लेकिन उसकी हकूमत के कारकुनों को रातोरात बर्ख़ास्त तो नहीं कर सकता था । बाबर के नाम पर जो सितम हिन्दुओं पर ढ़ाये जाते रहे, दरअसल वे उन कारकुनों की करतूत थी ।

''आपको मालूम है, मरने से पहले बाबर ने अपने बेट हुमायूँ को क्या हिदायत की थी ?

1) मज़हबी जनून में तुम कभी भी हकूमत के फ़ैसले मत करना । बेलाग न्याय करना है । जहाँ तक संभव हो, पराये धर्म का लिहाज़ करना होगा ।

2) गाय की हत्या से परहेज़, तुम्हें आम लोगों की हमदर्दी जीतने में मदद करेगा । और इसी तरह की दूसरी नसीहतें ।''

लगता था, शैली क़ायल हो गया हो । यह देख कर नसीम उससे पूछने लगी, क्या वह मुहल्ला सिरिया वाला में जवाहरमल के यहाँ हो आया था?

''नहीं तो । शैली ने जवाहरमल का नाम पहली बार सुना था ।''

''बाबा नानक ताया दुनीचंद के यहाँ बेशक आये थे, लेकिन लाहौर शहर में पूरा एक हफ़्ता जवाहरमल के यहाँ टिके थे । वहीं उनकी वली सैय्यद अहमद के साथ मुलाक़ता हुई थी । वली सैय्यद अहमद सिकंदर लोधी का पीर मुरशिद था ।'' शैली नसीम के मुंह से बाबा नानक के बारे में ढेर सी जानकारी सुनसुन कर अचंभित हो रहा था । उनका यह समझना कि ख़ासतौर पर उन्हें बाबा नानक का वरदान प्राप्त हुआ था, उसे निर्मूल लगने लगा, उसे अपने भीतर ख़ाली ख़ाली प्रतीत होने लगा ।

पैनी नज़रवाली लाहौरिन नसीम शैली को यूँ छोटा छोटा होते देख कर मुस्कराने लगी, फिर से उसके भीतर की चँचल लड़की से रहा न गया । उसने शैली से पूछा, ''आप भाई मूले की बीवी के साथ यहाँ तक आये है, भला यह बताइये पहली बार जब भाई मूले की बाबा नानक से मुलाक़ात हुई थी तो भाई मूला किस शहर तक बाबा जी के साथ गया था ।''

शैली को यह नहीं मालूम था । वह ख़ाली नज़रों से नसीम की तरफ़ देख रहा था । यह लड़की थी या इल्म की, अक्ल की गठरी थी ।

कुछ देर रुक कर नसीम ने उसके हाथों को चूमते हुए कहा, ''करतारपुर के वासी

जी ! भाई मूला बाबा नानक के साथ तलुंभा शहर तक गया । उसे लौटने में कई दिन लग गये । तभी तो अगली बार जब गुरू नानक उनके यहाँ आये तो उनकी पत्नी ने झूठ बोला था–'भाई मूला शहर से बाहर गया हुआ है ।' और भूसे की कोठरी में छिपे हुए को साँप ने डंक मारा था ।''

शैली को तो यह भी मालूम नहीं था ।

''कई लोग शिवालय के नज़दीक रहते हैं, पर भगवान से दूर होते हैं, नसीम खिल खिला कर हँसती हुई शैली को दुलारने लगी । यह लड़की किस तरह उसे प्यार करती थी । शैली जैसे गोते खा रहा हो । हक्का बक्का उसके चाँद जैसे मुखड़े की तरफ़ देखता रहता । उसके अंग अंग की ख़ुशबू में मस्त हो कर उसकी पलकें मुँद मुँद जाती ।

14

शाम पड़ रही थी । अचानक नसीम शैली के कमरे में आ निकली । कहने लगी बस मैं खड़ी खड़ी चली जाऊँगी । एक नज़र तुम्हारे दीदार का मन कर आया । बस एक क्षण के लिये ।

और आगे बढ़ कर उसने शैली को अपनी बाँहों में ले लिया । जैसे जन्म जन्मांतरों की कोई भूख हो, वह शैली को प्यार करने लगी । ओठों पर ओंठ, जैसे वह घूंट घूंट कर उसे पी रही हो । एक न ख़त्म होने वाली प्यास । ऐसा लग रहा था कि क्षणभर बाद ही वह उसे समूचा अपने भीतर उँडेल लेगी । लबालब भर जायेगी ।

एक दूसरे की बांहों में लिपटे हुए उन्माद की हालत में पास रखे दीवार पर औंधे जा गिरे । उसी तरह ओंठों से ओंठ, अंग से अँग सटाये नसीम एक रस्सी की तरह बल खाती हुई शैली से लिपटी जा रही थी, इकमिक हो रही थी ।

वे मदहोशी की हालत में पड़े थे कि शाम गहरी हो गई । रात पड़ गई ''हाय मैं मरी ।'' होश में आते ही नसीम घबरा कर उठ खड़ी हुई । शैली दीवार पर पहले की तरह निढ़ाल पड़ा था । भूखी भूखी नज़रों से नसीम के सरू जैसे शरीर की तरफ़ निहार रहा था । उसके जोबन ने जैसे शैली पर कोई टोना कर दिया हो । उसके बालों की फूलचिड़ियों के पेचोख़म में शैली की नज़रें उलझी हुई थीं । अपने ओठों पर हल्की सी जीभ फेरता हुआ वह नसीम की तरफ़ ऐसे देख रहा था, जैसे उसकी प्यास अभी भी नहीं बुझी थी ।

''मेरी जान, मैं तो सिर्फ एक घड़ी के लिये यहाँ आई थी । मुझे तो पहले से ही इतनी देर हो गई है ।'' नसीम ने लाड से शैली को याद करवाया ।

शैली अभी भी पहले की तरह लेटा था । बाहर आँगन में से आती रोशनी उसकी अधमूँदी आँखों में झलक रही थी । कमरे में उन्होंने अभी कोई कंदील नहीं जलाई थी ।

''क्या मतलब है, तेरा जी अभी तक नहीं भरा ? मेरी जान, जी तो मेरा भी नहीं भरा । लेकिन अगर मैं एक क्षण भी और यहाँ रूक गई तो मुझे सूली पर लटकना पड़ेगा । हाय, तू किस तरह मेरी तरफ़ देख रहा है !'' यह कहते हुए नसीम से जैसे रहा न गया और आगे बढ़ कर वह अपने महबूब की बाहों में फिर डूब गई ।

क्षणभर के बाद शैली सुबकने लगा । नसीम ने उसकी तरफ़ देखा तो वह फूट फूट

कर रोने लगा। फिर उसके आँसू धारा बन गये।

"तुझे यह क्या हो गया है ?" नसीम ने परेशान हो कर शैली से पूछा।

कोई जवाब दिये बग़ैर उसने फिर नसीम को अपनी बांहों में जकड़ लिया, और उसे प्यार करने लगा।

"इस तरह तो किसी ने किसी को मुहब्बत नहीं की होगी।" नसीम बार बार कह रही थी और उसे चूम चूम कर, लाड़ कर करके बेहाल हो रही थी।

"अब मुझे जाना चाहिये। ये लोग मुझे ढूंढ रहे होंगे। अल्लापाक की क़सम मैं किसी को बता कर नहीं आई। बस बरकते को साथ लेकर चुपचाप निकल आई हूँ। मुझे अब जाना चाहिये।" नसीम मिन्नतें कर रही थी।

लेकिन शैली को तो जैसे बुख़ार चढ़ा हो। उसका हाथ बार बार नसीम के गले की तरफ ज़ा रहा था।

"क्या मतलब है? नसीम ने लाड़ से उसकी तरफ़ देखा।

शैली की उँगलियाँ उसके कुर्ते के बटनों की तरफ़ बढ़ रही थी।

"हाय मेरी जान, तू क्या चाहता है ?" नसीम ने साँस खींच कर कहा।

शैली पहले की तरह बटनों को अपनी उँगलियों से पकड़े, अपनी पलकों में एक अंतहीन भूख लिये उसकी तरफ़ देख रहा था।

शैली का अंग अंग जैसे टूट रहा था, उसकी नज़रों में क़हर की चाह थी।

"नहीं, नही, नहीं।" नसीम ने उसकी आँखें अपनी मेंहदी रंगी हथेलियों से ढाँप दीं।

शैली अपनी ज़िद पर क़ायम था। उसने नसीम के गले का एक बटन काज में से निकाल लिया।

अब नसीम मुस्कराने लगी। "ना मेरी जान। अच्छे बच्चे ऐसा नहीं करते।"

शैली जैसे बेबस था। उसके पोटे चलायमान हो रहे थे, उसने अगला बटन भी खोल दिया था।

"ना मेरे लाडले, मैं शहनाइयों की धुन में, फूलों की लपटों में गूँध कर, भाईचारे की सहमति की तश्तरी में रख कर अपने आपको तेरे सामने पेश करूँगी।"

शैली मुँह से कुछ नहीं बोल रहा था। उसकी उँगलियाँ अब अगले बटन की तरफ़ बढ़ रही थीं। एक और बटन और तारे टूट जायेंगे। नसीम ने उसके ओंठों पर ओंठ रख दिये। उसे फिर प्यार करने लगी। दाँतों से दाँत सटे थे। उसकी जीभ शैली की जीभ पर तैरती तैरती तैरती कभी कहीं, कभी कहीं पहुँच गई थी।

इस बीच उसने एक हाथ से अपने गले के बटन फिर काजों में डाल लिये, बंद कर लिये। शैली के बीच का मर्द भयंकर आवेश में था। नसीम बहुत देर तक उससे लाड़ करती रही, प्यार करती रही। और फिर चुपचाप उठ कर चल पड़ी।

शैली के भीतर जैसे एक तूफ़ान उमड़ रहा हो। उसने आगे बढ़ कर नसीम को कंधे से पकड़ लिया। नसीम जान बूझकर कुछ देर से उसकी तरफ़ नहीं देख रही थी। अभी भी

उसका मुँह दरवाज़े की ओर था। वह शैली की आँखों में देखना नहीं चाहती थी। शैली अपनी ज़िद पर ज्यों का त्यों क़ायम था। वह पीछे से नसीम को बाहों में जकड़े खड़ा था।

"शैली, मेरी जान, हर बात का अपना वक्त होता है।"

"लेकिन तू मेरी तरफ़ एक नज़र देखती क्यों नहीं ?" आख़िर शैली तड़प कर बोला।

"इसलिए कि मैं कोई फ़रिश्ता नहीं हूँ। मैं भी हाड़माँस की बनी एक औरत हूँ।"

"तुझे एक बार मेरी तरफ़ देखना पड़ेगा, शैली ने मिन्नत की।

" इस वक्त अगर मैंने एक नज़र तेरी तरफ़ देखा तो बेड़ा ग़र्क हो जायेगा। नसीम पूरे इरादे से बोल रही थी।"मैं चाहती हूँ हम दुनियाँ की आँख से आँख मिला सकें। मैं चाहती हूँ कि मैं बेझिझक होकर अपने अब्बा के चेहरे की तरफ देख सकूँ। मैं चाहती हूं, जब तू अपने शहर पहुँचे तो अपनी अम्मी से मेरा ज़िक्र करते हुए तेरे मुखड़े पर रौशनी हो, तेरे बोल में मिठास हो। शहद सी मीठी शीरनी को गँवा कर मैं बदले में बकबके बेरों का स्वाद हासिल नहीं करना चाहती। मैं एक महल बनाना चाहती हूँ, मक़बरा नहीं।"

"मैं उस महल की नींव अभी रखना चाहता हूँ, इसी घड़ी।

"मैं बाबा नानक को साक्षी रख कर ऐसा करूँगी।"

"बाबा नानक को गये आज कितने बरस हो गये।"

"क्यों, वे गुरू अँगददेव जी में जिंदा थे, और अब गुरू अमरदास जी में हाजिर नाज़िर हैं।"

शैली की आँखों में जैसे पट्टी बँधी हो, उसे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। एक वहशत में उसके कानों की सुनने की शक्ति जाती रही थी। जैसे किसी पर कोई भूत सवार हो। उसने आगे बढ़ कर नसीम को अपनी बाँहों में भर लिया। जवान जहान लड़की नसीम ने बेबसी में अपने आपको होनहार के हवाले कर दिया।

15

अगले दिन नसीम का क़ोई अता पता नहीं था। शैली पूरा दिन अपने कमरे में क़ैद रहा, जैसे प्रतीक्षा का साक्षात रूप हो। शाम को शक्ति से मुलाक़ात हुई, उसे भी नसीम की ख़ैरियत का कोई संदेश नहीं आया था। जैसे दिन में किसी न किसी बहाने वह उनके यहाँ ज़रूर झाँक जाती थी। ख़ासतौर पर जबसे शैली आया था, उसने कभी नागा नहीं डाला था।

तीसरा पहर हुआ, साँझ हुई। रात हो गई। नसीम का कुछ अता पता नहीं था। शैली परेशान हो उठा। सारी रात उसने आँखों में गुज़ार दी।

अगला दिन, उससे अगला दिन, फिर शक्ति की डोली जाने वाली थी। जब शक्ति ही उस घर में नहीं होगी तो शैली का उस घर में टिके रहने का क्या मतलब था ? और फिर नसीम उनके यहाँ किस बहाने से आ सकेगी ? शैली को लगता जैसे अपनी रौ में चलते

चलते वह किसी बंद गली में आ निकला हो ।

अभी काफ़ी अँधेरा था, शैली अभी बिस्तर में से निकल कर बिना हाथ मुँह धोये, बिना बाल सँवारे, हवेली में से निकल कर बाहर गली में घूमने लगा । बार बार चौक तक जाता, सामने आसमान से बातें करती हुई नसीम की ऊँची अटारी थी, लेकिन उसकी महबूबा का कुछ अता पता नहीं था । वह बार बार चक्कर काट रहा था । कोई खिड़की नहीं खुल रही थी । कोई चिक नहीं हिल रही थी । कोई पर्दा नहीं सरक रहा था ।

शक्ति की मजबूरी थी, अगले दिन उसकी डोली जाने वाली थी, वह भला कैसे नसीम के घर जाती ? और कोई हमराज़ नहीं था जो उसकी ख़बर ला सकता । एक ही आस बाकी थी कि डोली चलने से पहले गली मुहल्ले के लोग ज़रूर इकट्ठे होंगे । नसीम तो उसकी खास सहेली थी, शक्ति से मिलने जरूर आयेगी । लेकिन अगर न आई तो शैली का क्या होगा ? बेसहारा, बे–सरो–सामान, उसे खाली हाथ वापिस लौटना पड़ेगा ।

फिर ख़बर मिली, नसीम अपनी ख़ाला के घर चली गई थी । उसकी बाँदी बरकते ने वहाँ आकर शक्ति को ख़बर दी थी । उसकी ख़ाला का घर लाहौर में ही था, लेकिन बरकते ने न शक्ति को यह बताया कि घर किस मुहल्ले में है, न शक्ति ने यह पूछना मुनासिब समझा ।

नसीम इस तरह शक्ति से मिले बग़ैर जिस तरह ख़ाला के घर चली गई थी, शक्ति को पूरा विश्वास था कि इसके पीछे ज़रूर कोई कारण था । उसने और पूछताछ न करने में ही अक्लमंदी समझी । पिछले तीन दिन नसीम जिस तरह वक्त बेवक्त शैली से मिलने आती रही थी, उन मुलाक़ातों का कोई भी नतीजा निकल सकता था ।

जब शैली को यह मालूम हुआ तो उसे यक़ीन हो गया कि नसीम के घर ज़रूर कोई बदमज़गी हुई होगी । पर्देवाली बिरादरी में मामले को और कुरेदा भी नहीं जा सकता था । और फिर नसीम के अब्बा ऊँची पगड़ी वाले मुकद्धम थे । उसके ख़िलाफ़ जाने की, उसकी अटारी की ओर नज़र उठा कर देखने की भला किसमें मजाल थी ।

एक दिन, दो दिन, शैली लाहौर की गलियों में पागलों की तरह घूमता रहा । एक एक कोना छानमारा, हर दरवाज़े को वह हसरत भरी निगाहों से देखता, हर पर्देवाले झरोखे में वह बार बार निहारता । भूखा, प्यासा, बेहाल वह टक्करें मार रहा था । एक बार, दो बार, तीन बार, दो दिनों में उसने सारा शहर छान मारा था ।

इस तरह बेलग़ाम घूमता हुआ शैली हुस्न के बाज़ार में जा निकला । वह उसी हालत में आँखें फाड़ फाड़ कर हर कोठे, हर झरोखे की तरफ़ झाँक रहा था कि एक गली के मोड़ पर उसे नसीम की धुँधली सी झलक दिखाई दी । उसी की तरह ऊँची लँबी, उस जैसी गोरी–चिट्टी, उसी जैसे चमकीले बाल फूलचिड़ियों में गुँधे हुए, उसी जैसी शोख़ हँसू हँसू करतीं आँखें । शैली ने देखा तो उसके क़दम वहीं रूक गये । उसके पैर मनमन के भारी हो गये ।

रक्ख साईं की सोहनियों ! सामने सीढ़ियाँ हैं, आप बेखटके चढ़ आओ । अगले क्षण कोठे पर से आवाज़ आई ।

यह तो नसीम की आवाज़ नहीं थी और शैली हड़बड़ा कर वहाँ से भाग खड़ा हुआ। दौड़ता जा रहा था जैसे कोई उसका पीछा कर रहा हो।

एक गली, दूसरी गली और वह बड़ी सड़क पर जा निकला। जैसे का वैसे ही बदहवासी की हालत में दौड़ता हुआ वह रावी के किनारे पहुँच गया। उसकी साँसे फूल रही थीं।

नदी के किनारे रेत पर लोग टहल रहे थे। सुस्ता रहे थे। छाबड़ी-खोमचे वाले गला फाड़ फाड़ कर लोगों को आवाज़ें दे रहे थे। बच्चे खेल रहे थे। खा रहे थे। सामने नदी में कई लोग नहा रहे थे। इनमें साधुसंतों की एक टोली भी थी।

शैली घुघनियाँ बेचने वाले एक नौजवान के पास जा बैठा। गोरा रंग, लाहौरिया लड़का देखने में सुंदर था। शैली उसके पास जा कर बैठा ही था कि उसने घुघनियों का एक करारा दोना बना कर शैली को थमा दिया। शैली हैरानी से उसके ख़ूबसूरत चेहरे की तरफ देख रहा था। मुहब्बत का पुतला, उसकी आँखों से प्यार छलक रहा था।

''आप लाहौर के नहीं लगते। मेहमान मालूम होते हैं।'' घुघनियाँ बेचने वाला नौजवान शैली से पूछ रहा था।

शैली के कोई जवाब देने से पहले सामने नदी में नहा रहे साधुओं की टोली तेज़ तेज़ कदम भरती हुई घुघनी बेचने वाले के पास आ रूकी। घुघनियाँ खा कर ही इस वक्त गुज़ारा कर लेते हैं।'' उनके मुखिया ने अपने साथियों से कहा। ''हाँ, स्नान करके भूख बहुत चमक उठी है। '' साधुओं की टोली आपस में यह वार्तालाप कर ही रही थी कि घुघनी बेचने वाले नौजवान ने दोने भर भर कर संत महात्माओं को थमाने शुरू कर दिये। ना साधुओं ने उससे भाव पूछा, ना उसने कोई सौदा किया। शैली के देखते देखते उसका सारा पतीला खाली हो गया। भगत जन घुघनियाँ खाये जा रहे थे और ख़ोंमचे वाला दोने भर भर कर उन्हें खिलाये जा रहा था।

जब साधु भरपेट खा चुके तो उनके मुखिया ने ख़ोमचे वाले से पूछा, ''क्यों भाई, तुम्हारा नाम क्या है ?'' मेरा नाम रामदास है।'' ख़ोमचें वाले ने जवाब दिया। लेकिन घरवाले मुझे जेठा कह कर पुकारते हैं'' हँसमुख मुखड़ेवाला जेठा उनके साथ इस तरह बातें करने लगा जैसे न जाने कितनी पुरानी पहचान हो।

''आप कहाँ रहते हैं'' साधु महाराज पूछ रहे थे।

''हम चूनामंडी में रहते हैं।''

''क्या ज़ात है ? खत्री मालूम होता है।''

''हाँ, सोढ़ी ज़ात है हमारी''

''लाहौर के सोढ़ियों में ठाकर दास नाम का एक सोढ़ी हुआ करता था। बड़ा प्यारा आदमी था, सँतों फ़कीरों की सेवा करता था।''

''उसी का मैं पोता हूँ। मेरे पिता हरिदास हैं।''

''लो, हरिदास की शादी तो हमारे गाँव में हुई है। अनूप कौर नाम है, उसकी बीवी का।''

"अब मेरी माता जी को लोग दया कौर नाम से पुकारते हैं ।"

"लो, फिर तो तू हमारा दोहता हुआ ।"

फिर वे घुट घुट कर इधर उधर की बातें करने लग पड़े । बहुत देर तक बातें करते रहे । जेठे का पतीला खाली हो गया । उसे कोई जल्दी नहीं थी । शैली देख देख कर हैरान हो रहा था, न जेठे ने साधुओं से घुघनियों के पैसे मांगे थे, न उन्होंने उसे कुछ दिया था ।

बातों बातों में साधुओं ने जेठे को बताया कि वे लोग गुरू अमरदास जी के दर्शनों के लिए गोइंदवाल जा रहे हैं । जेठे ने सुना तो वह खिल उठा । वह भी उसके साथ जाने के लिए तैयार हो गया ।

"तू अपने माँ-बाप से तो पूछ ले ।" एक साधु ने जेठे से कहा ।

"उन्हें मालूम है । मैंने तो कभी से गुरू महाराज के बारे में सुन रखा है । उनके पास जाने की मन में बड़ी अभिलाषा है ।

"फिर भी तू जाकर घर वालों से कह तो आ ।"

"मेरी तो वहाँ इन्तज़ार हो रही है मैंने तो पहले ही कितनी देर कर दी है । मेरे लिये ढेर से काम रुके पड़े हैं ।" यह कहते हुए जेठा अपना पतीला वहीं छोड़ कर साधुओं के साथ चल पड़ा ।

शैली हैरानी से उसके मुँह की तरफ़ देख रहा था । दूर सड़क पर जहाँ तक नज़र जा सकती थी, वे लोग आगे बढ़ते जा रहे थे । उनके साथ सुंदर चेहरे वाला जेठा भी था । अभी अभी घुघनियाँ बेच रहा था और अब गुरू महाराज की प्रीत में जैसे बँधा हुआ जा रहा था । अपने माता पिता को छोड़ कर । लाहौर शहर को छोड़ कर । जिस शहर में नसीम जैसी परियाँ रहती थीं ।

इससे पहले कि गाती बजाती साधुओं की टोली उसकी आँखों से ओझल हो, शैली भी एक वहशत में आकर उनके पीछे हो लिया । थोड़ी देर में वह उनके साथ जा मिला ।

16

साधुओं की टोली, जिसमें जेठा और शैली शामिल हो गये थे, जब गोइंदवाल पहुँची, गुरू महाराज शहर में नहीं थे, कई दिन पहले वे घोड़ी पर चढ़ कर कहीं निकल गये थे, घोड़ी वापिस अपने ठिकाने पर आ गई थी । लेकिन गुरू अमरदास जी की कोई ख़बर नहीं थी । सारे शहर में एक शोक सा व्याप्त था । हर गुरसिक्ख के चेहरे पर एक तशवीश थी । गुरू महाराज आँखों से ओझल हो गये थे । उन्होंने किसी से शहर छोड़ने की चर्चा नहीं की थी । न घरवालों से, न किसी गुरसिक्ख से ।

बेशक दातू ने बदतमीज़ी की थी । गुरू महाराज का ऐसा अनादर पहले न किसी ने देखा था, न सुना था । इसके विपरीत सतगुरू की नम्रता देख कर सब अपने इष्ट पर बलिहार जाने लगे थे । सारे शहर में इस घटना की चर्चा हो रही थी । सब दातू की बेहूदगी की निंदा करते हुए लोगों के मुँह नहीं थक रहे थे । अभी ये कहानियाँ लोगों के ओंठों पर ही थीं कि अगली सुबह ख़बर मिली कि उसी दिन पौ फूटते ही गुरू महाराज कहीं निकल गये थे ।

एक दिन, दो दिन, चार दिन, संगतें इन्तज़ार करती रहीं, लेकिन वे नहीं लौटे । न ही कोई उनका संदेशा आया । गुरू महाराज की घोड़ी बेशक लौट आई थी । लेकिन वह बेज़ुबान अपने खूँटे पर आकर खड़ी हो गई थी ।

लोग बार बार घोड़ी के पास आकर पूछते–"तू गुरू महाराज को कहाँ छोड़कर आई है ?" कई श्रद्धालु उसे सौगातें लाकर खिलाते उसके बदन पर हाथ फेरते, उसे पुचकारते, लेकिन वह बेज़ुबान बिट बिट उनकी तरफ़ देख लेती, बस ।

क्या भाई पारो जी, क्या भाई बल्लू जी किसी की समझ में नहीं आ रहा था । सबसे अधिक निराश तो वे संगतें होती जो कई कोस का रास्ता तैय करके गुरू महाराज के दर्शनों के लिये रोज़ाना हाज़िर होती और महाराज को वहाँ न पाती ।

और अब लाहौर से साधुओं की यह टोली आई थी, जिसमें भाई जेठा और शैली थे । शैली को अमन ने सारी वारदात सुनाई, सुनकर उसका खून खौलने लगा । अमन ख़ुद उस दिन साध–संगत में हाज़िर था ।

"हम लोगों ने सोचा कि दातू सत्गुरू के सिंहासन की परिक्रमा कर रहा है ।"अमन शैली को बता रहा था, इस बात का विचार तक किसी के मन में नहीं आया कि वह इस तरह से कोई बेअदबी करेगा । लोमड़ी की तरह वह पिछली तरफ़ से आया और कूद कर सिंहासन पर चढ़ गया । उसने सत्गुरू पर लात दे मारी । गुरू महाराज कीर्तन सुन रहे थे । अकस्मात् इस आक्रमण से वे औंधे जा गिरे । यह तो अकाल पुरूख की कृपा हुई कि वे सिंहासन से नीचे नहीं जा गिरे ।

"यह देखकर साध–सँगत उत्तेजित हो उठी । अगली पंक्ति में बैठे लोग दातू की मरम्मत करने के लिए आगे बढ़े, लेकिन उन्होंने क्या देखा कि गुरू अमरदास जी ने अत्यंत नम्रतापूर्वक बेहूदगी करने वाले का पैर पकड़ लिया । यही नहीं, वे उससे पूछ रहे थे, "सत्गुरू के अंश, आपके कोमल चरण को चोट तो नहीं लगी ? मेरी बूढ़ी हड्डियाँ सेवा में भुरभुरी हो गई हैं ।

"यह सुनकर बजाये इसके कि उसे शर्म आती, बदतमीज़ दातू ने जवाब दिया, "इस सेवा के बदले ही तो आपने गुरुआई हथिया ली है । अब मैं अपने बाहुबल से आपसे यह गुरूआई छीन लूँगा ।"

"गुरू महाराज बिट बिट उसके मुँह की तरफ़ देखने लगे । इस तरह का सलूक गुरू महाराज के साथ, जो निओटों की ओट है, मुझे तो सारी रात नींद नहीं आई । मैंने कुछ न खाया । मन में बार बार यही उबाल उठते थे–मुझसे यह सब देखा कैसे गया ? साध–सँगत में मैं ज्यों का त्यों बैठा कैसे रहा ? उठकर मैंने दातू का मुंह क्यों नही तोड़ दिया ।

"एक के बाद दूसरी मुसीबत तब आई जब पता चला कि दातु ने वहीं बस नहीं की । साध संगत से निकल कर वह गुरू महाराज के महल में गया और उसने घर लूट कर सारा धन और कीमती सामान इकट्ठा करके अपने साथ बाँध लिया और खडूर की तरफ़ चल पड़ा । संगतें सुन कर कूद कूद पड़तीं, लेकिन शांति की मूर्ति सत्गुरू जी कहाँ थे ? न

तो साध-संगत में विराजमान थे, न अपने महल में थे । यह जानकर सब के होश उड़ गये । फिर पता चला कि घोड़ी भी अस्तबल में नहीं थी । बिना किसी को बताये, बिना किसी से कुछ कहे महाराज गोइंदवाल से निकल गये थे ।''

''अमन, तू हिजड़ा है । मैं होता तो दातू की टाँगें तोड़ देता,'' इतनी देर से ख़ामोश सुन रहा शैली दाँत पीस कर बोला ।'' टाँग तो उसकी तोड़ दी गई थी । अभी लोग परेशानी में फ़ैसला नहीं कर पा रहे थे कि क्या किया जाये, क्या न किया जाये, गुरू महाराज को कहाँ से ढूँढ कर लाया जाये, इतने में ख़बर आई कि खडूर जा रहे दातू पर डाकुओं ने रास्तें में हमला करके उसका सारा लूट का माल छीन लिया था । इसके अलावा दातू के पास जो कुछ था, उसके कानों में सोने के बाले, हीरे मोती से जड़ी उसकी अंगूठियाँ और न जाने कितना कुछ सब छीन लिया । इतना ही नहीं, जाते जाते डाकू उसकी टाँग भी तोड़ गये थे । वही टाँग जिससे उसने गुरू महाराज पर प्रहार किया था । अब कई दिनों से वह चारपाई पर लेटा इलाज करवा रहा है । ''

''तुम सब लोग देखते रहे और बाहर से आया दातू इस तरह की बदतमीज़ी कर गया ! लाख लानते हैं तुम लोगों पर !'' शैली अभी भी तिलमिला रहा था । ''तुम लोगों को चुल्लू भर पानी में डूबकर मर जाना चाहिये ।''

''ऐसी बात नहीं शैली, ''अब अमन उसे अपने मन की हालत बता रहा था, यह बात नहीं । जब मैं इस सारी घटना के बारे में सोचता हूँ तो मुझे लगता है कि वह डाकू मैं ही था । मैं ही दातू के रास्तें में जा बैठा था, और उसे उसकी बदतमीज़ी की सज़ा दी थी ।''

''मैंने नहीं कहा था, तू हिजड़ा है ?'' शैली हँसने लगा । ''इस तरह तेरे जैसे कमज़ोर लोग सोचते हैं । अगर हजूर उस डाकू में शांति के पुंज आप थे, तो ज़रा मुझे यह बताओं कि लूट का वह सारा माल कहाँ है जो आपने दातू से छीना था ?''

यह सुनकर अमन बगले झांकने लगा ।

''साईं का इतना अँधेरा ! कि कोई गुंडा आ कर हमारे इष्ट की बेअदबी कर जाये । यही नहीं, उनके घर को लूट कर झाड़ू दे जाये और गुरू महाराज के श्रद्धालु ज्यों के त्यों बुत बने देखते रहें । मैं तो खडूर जाकर दातू की दूसरी टाँग भी तोड़कर आऊँगा ।''

''बेशक, बेशक'' अमन कह रहा था, ''और फिर खडूर से बाकी परिवार को भी तो साथ लाना है । तुम ज़रूर जाना, लेकिन पहले गुरू महाराज को ढूंढने का तो कोई उपाय करें।''

''गुरू महाराज को तो भाई बुड्ढा जी ही तलाश कर सकते हैं ।'' शैली कहने लगा, ''और उनके लिये पत्तोंकी जाना होगा । भाई बुड्ढा जी को गुरू बाबे ने स्वयं आशीर्वाद दिया है । गुरू घर में उनसे कोई दुई नहीं कर सकता ।''

17

और फिर वही बात हुई । अगली सुबह साध-संगत के आदेश पर भाई पारों जी को

भेजा गया ताकि वे भाई बुड्ढा जी को सारी वारदात कह सुनाये और उन्हें अपने साथ लेते आयें, उसके बाद गुरू महाराज की तलाश शुरू की जाये। गुरू महाराज के इस तरह अज्ञातवास में चले जाने से गुरसिक्ख अत्यन्त परेशान थे।

भाई पारो जी का कहा कौन टाल सकता था ? भाई बुड्ढा जी तो वैसे भी गुरू घर के पुराने सेवक थे। सुनते ही गले में दुपट्टा डालकर उनके साथ चल पड़े। "घट घट की जानने वाले हैं, अरदास ही की जा सकती है," बार बार नम्रता से यही कहते।

भाई बुड्ढा जी को देख कर गोइंदवाल वासियों की जान में जान आई। गली गली में गुरसिक्ख चहक उठे। "अब गुरू महाराज को ढूँढ़ लिया जायेगा। भाई बुड्ढा जी से कोई कुछ छिपा नहीं सकता। उन्हें गुरू नानक जी का आशीर्वाद प्राप्त है-कभी तुझसे ओझल नहीं होऊँगा।" हर कोई एक दूसरे को समझा रहा था, समझाने में जैसे उनका कलेजा ठँडा पड़ रहा हो।

गोइंदवाल पहुँच कर भाई बुड्ढा जी के सामने सवाल यह था कि सतगुरू को ढूँढने के लिये वे किस दिशा में निकलें। किधर जायें ? इतनी बड़ी दुनिया में आज कितने दिनों से सत्गुरू कहीं निकल गये थे, उनकी खोज ख़बर कहाँ से ली जाये ?

भाई बुड्ढा जी कुछ देर के लिये अन्तर्ध्यान हो कर बैठ गये। सँगत उतावली हो रही थी। इससे पहले कि लोगों के सब्र का प्याला छलक उठता, भाई बुड्ढा जी झटके से उठ खड़े हुए जैसे उन्हें प्रकाश की किरण दिखाई दे गई हो। कुछ दिखाई दे गया हो।

"गुरू महाराज की घोड़ी कहाँ है ? " भाई बुड्ढा जी पूछने लगे, "घोड़ी को लाओ वही हमें अपने मालिक के पास ले जायेगी, जहाँ उन्हें पहुँचा कर आई है।"

गुरू महाराज के श्रद्धालुओं में अक्सर लोगों को एतबार नहीं आ रहा था कि बेज़बान जानवर किस तरह सत्गुरू को ढूँढने में सहायक हो सकेगा। फिर भी डूबते को तिनके का सहारा, लोग घोड़ी के पीछे-पीछे चल पड़े। सब से आगे भाई बुड्ढा जी ही थे, भाई पारो जी थे, भाई बल्लू जी थे, उनके पीछे विहवल हो रहे गुरसिक्ख, जिनमें शैली भी था।

और गोइंदवाल लौट कर जो कहानी शैली ने सुनाई, उसे सुनकर अमन, परिवार के सभी लोगों को अचंभा हुआ। यह तो करामात थी, और कुछ नहीं।

"गुरू महाराज की घोड़ी को जैसे यह जानकारी थी कि पीछे पीछे आ रहे श्रद्धालुओं को कहाँ ले जाना है," शैली बता रहा था। मज़ाल है कहीं भी रुकी हो, कहीं भटकी हो। जैसे नाक की सीध पर चली जा रही थी। उसके पीछे चलती संगतें ढोलकियाँ, छैने, खड़तालें बजाती हुई गुरू महाराज की स्तुति कर रही थी। चलती चलती घोड़ी बासरके जा पहुँची।

"यह देखकर सभी को निराशा होने लगी। अगर गुरू महाराज वहाँ होते तो बासरके की सँगत इसका ढिंढोरा पीट चुकी होती, बासरके में भला महाराज कैसे छिप सकते थे।

"लेकिन यह देख कर हमारी जान में जान आई जब घोड़ी अपने आप चलती रही। बासरके में नहीं रुकी, गाँव का बाज़ार पार करके बाहर चली आई और फिर और

कितना फ़ासला उसी चाल में चलती रही। शाम हो रही थी, जब गुरू महाराज की घोड़ी एक एकान्त स्थान में बने कच्चे घर के सामने जाकर खड़ी हो गई। एक तरफ रहँट वाला कुँआ था, जिसकी रस्सी में कई जगह गाँठें लगी थीं। कुएँ के आस पास जामुन और शहतूत के पेड़ थे।

"इधर घोड़ी रुकी, उधर भाई बुड्ढा भी तेज़ क़दमों से उस मकान के सामने जा खड़े हुए। क्या देखा, घर के दरवाज़े पर एक तख़्ती टँगी थी, जिस पर गुरू महाराज ने अपने कर कमलों से लिखा था, "जो इस दरवाज़े से अंदर आने की कोशिश करेगा, न वह मेरा सिक्ख है, न हम उसके गुरू हैं।"

"जो भी इस इबारत को पढ़ता, अपना सर थाम कर बैठ जाता। कौन गुरू महाराज के हुक्म के ख़िलाफ जा सकता था? किसी की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। हम सब लोग उदास मुँह लटका कर कुएँ के पास लगे पेड़ों के नीचे जा बैठे, लेकिन हमें देख कर हैरानी हो रही थी कि भाई बुड्ढा जी ने अभी भी हिम्मत नहीं हारी थी। आखिरकार उन्होंने नौजवानों को बुलाया, इनमें मैं भी शामिल था। कहने लगे–कमरे की पिछली दीवार में एक सेंध खोदनी है। हम लोगों ने सुना तो भाई बुड्ढा जी के मुँह की तरफ़ ताकते रह गये।

"कच्ची कोठरी थी। हमें जो कहा गया उसे करने में ज़्यादा समय नहीं लगा। जिस चिमटे को मैं सारे रास्ते बजाता आ रहा था, उसी से पहले तो एक छेद खोद लिया, फिर आसपास के पत्थरों को सरकाना शुरू कर दिया। जब छेद इतना बड़ा हो गया कि भाई बुड्ढा जी भीतर घुस सकें तो उन्होंने हम लोगों को पीछे हटा दिया और खुद भीतर घुस गये। पहले सर फिर बाक़ी शरीर।

"भाई बुड्ढा जी के साथ कोठरी के भीतर क्या बीती यह हमें बाद में पता चला। गुरू महाराज की समाधि जब खुली, तो भाई बुड्ढा जी को सामने विराजमान देख कर वे पूछने लगे, "आपने बाहर तख़्ती पर मेरा आदेश पढ़ कर इस तरह की हुक्मअदूली कैसे की?" भाई बुड्ढा जी मुस्कराने लगे। "हजूर, आपका किवाड़ ज्यों का त्यों बंद है। ज्यों का त्यों उस पर ताला लगा है।" यह सुनकर गुरू महाराज ने भाई बुड्ढा जी को गले से लगा लिया। भाई साहब तो गुरूनानक देव जी का आर्शीवाद पाये हुए थे। उनकी किसी बात पर किन्तु परन्तु करना आसान नहीं था।

"किस्सा कौताह, गुरू महाराज को मना लिया गया। किसी एक व्यक्ति की बेहूदगी के लिये पूरी साध-सँगत को दंड देना वाजिब नहीं था।" और फिर हम ढोलकियों-छैनों की गुँजार में, जय जय कार गुँजाते हुए अपने गुरू महाराज को अपने साथ लेकर गोइँदवाल के लिये चल पड़े, भाई बुड्ढा जी का कहा टालना आसान नहीं होता, चाहे वे स्वयं गुरू महाराज ही क्यों न हों।

"गुरू महाराज को जब वापिस लौटने के लिए कहा गया तो उन्होंने फ़रमाया कि वे फिर से किसी की ईर्ष्या या बैर का कारण नहीं बनना चाहते थे। दातू सिक्ख भाईचारे की अगुवाई करने की महत्वाकांक्षा रखता था। उसके रास्ते में वे रुकावट नहीं बनना चाहते थे।

"गुरू महाराज को बताया गया कि कुदरत ने दातू की क्या दुर्दशा की थी। सारा सामान और धन जो वह गोइंदवाल से लूटकर ले गया था, उसे डाकुओं ने छीन लिया था, साथ ही जाते जाते वे उस बेचारे की टाँग भी तोड़ गये थे। अब खाट पर लेटा हुआ वह अपनी करतूत का फल भोग रहा था। बल्कि माता रवीवी तो इस बात की प्रतीक्षा कर रही थीं कि जब गुरू महाराज गोइंदवाल लौटेंगे तो वे उनके चरणों की धूलि लेकर दातू की टाँग पर मलेंगी ताकि उसका क्लेश किसी तरह कट सके। गुरू महाराज ने सुना तो अपने इष्टकी अंश का दुख निवारण करने के लिये तत्पर हो गये। अब उन्होंने लौटने में कोई एतराज़ नहीं किया, न ही कोई देरी की। भाई बुड्ढा जी की मर्ज़ी के मुताबिक, उनके साथ चल पड़े।

18

जब से गुरू महाराज घर से निकले थे, बिना किसी को बताये, बिना किसी से कोई बात किये, उनकी छोटी बेटी भानी हर वक्त उदास रहती, चुप चुप। उसे खाना पहनना कुछ अच्छा नहीं लगता था। भानी को गुरू महाराज से लगाव भी तो बेहद था। झूला झूलने जाना होता तो भी अपने गुरू पिता से आज्ञा लेकर जाती। उसकी बड़ी बहन दानी उसकी तरफ़ देख देख कर हँसा करती थी।

इन दिनों जब परिवार के सभी लोग गुरू अमरदास जी के अज्ञातवास से परेशान थे, दानी एक कटोरे में दूध डाल कर, चाँदनी रातों में तारों भरे आकाश के नीचे बैठ जाती और एकटक कटोरे में देखने लगती। घंटों तक लगातार बिना हिले डुले बैठी रहती। कहती मुझे कटोरे में पिताजी के दर्शन होते हैं, लेकिन यह नहीं पता चल रहा कि वे छिपकर कहाँ जा बैठे है। मुझे उस शहर, उस घर की तलाश है, दूध के कटोरे में वह तस्वीर भी उभर आयेगी।

रात होते ही दानी ऊपर वाली छत पर जा बैठती। दूंधिया सफ़ेद चादर बिछाती और उसपर दूध का भरा कटोरा रख कर लगातार दूध के कटोरे में झाँकती रहती। आधी रात हो जाती। अभी तक दानी को कोई ख़बर नहीं मिली थी।

कभी कभी भानी भी उसके पास आ बैठती थी। उसके जुनून को देख कर अचंभा करती रहती।

"तू पिताजी के दर्शन तो कर ले" दानी उसे सलाह देती।

"इस तरह के टोने-टोटके पिताजी को नहीं भाते," भानी कहती, "वे तो मेरे भीतर बसते हैं।" भानी अपने दुपट्टे के भीतर इशारा करती।"

"तो फिर तू उनके दर्शनों के लिए दिन रात कलपती क्यों है ?" दानी ने उसे ताना दिया "भीगी भीगी पलकें, हर वक्त गुम सुम, खोई खोई।"

"नानक घर ही बैठियाँ, सहु मिलै जे नीअति रासि करे।" भानी ने गुरू महाराज के उच्चारे एक श्लोक की तुक का उच्चारण किया और फिर ख़ामोश हो गई।

"तो फिर तेरी नीयत रास नहीं।" दानी ने उससे मज़ाक किया। तभी तो तू पिताजी के हमें छोड़ जाने के बाद इस तरह बिलख रही है।

दोनों बहनें थीं। एक ही माता पिता की औलाद। एक ही आंगन में जन्मी, पली,

लेकिन उनके स्वभाव में जमीन-आसमान का अंतर था। दानी ओझी तबीयत की थी, भानी स्थिर बुद्धि, सुहृद, शील-संयम की जैसे साक्षात् मूर्ति हो।

इसके विपरीत, गुरू पत्नी बीबी मनसा देवी जैसे गुरू महाराज के कौतुक से परिचित थी। भाना मानने वाली स्त्री, गुरू महाराज की रज़ा में राज़ी थीं। आठों पहर गुरू भक्ति में मगन रहतीं। लूणा-मिस्सा जैसे भी बन पड़ता पका कर घर का गुज़ारा चला रही थी। घर में जो कुछ बचा बचाया रखा था उसे दातू लूट कर ले गया था। गुरू महाराज के अज्ञातवास के बाद अपने अपने ठिकानों पर दर्शनों के लिए व्याकुल हो रही थीं। सारे शहर में शोक का वातावरण छाया था। हर कोई शशोपंज में पड़ा था। बस एक बीबी मनसा देवी थी, जो शांत, स्थिर थी न किसी की निंदा, न किसी की आलोचना। जो भी कोई कुछ कहता, सुन लेती, मुँह से कुछ न कहती।

अपने गुरू पिता के आदेश के अनुसार गुरू साहब के दोनों साहिबज़ादे मोहन और मोहरी अपने कामकाज में व्यस्त रहते थे। दस नाखूनों से मेहनत करके खाते। उन्हें गुरूघर से मतलब ही नहीं था। कामकाज के सिलसिले में उनका अक्सर बाहर आना जाना लगा रहता था। इतने दिनों से गुरू पिता बाहर थे, उनके नियम में कोई विशेष फ़र्क नहीं पड़ा था।

बस सिर्फ़ भानी थी, जिसे एक पल का चैन नहीं था। ज्यों ज्यों दिन गुज़र रहे थे, वह पहले से भी ज़्यादा परेशान रहने लगी थी। दर्शनों के लिये विह्वल रहती थी, आठों पहर गुरू चरणों में उसका मन जुड़ा रहता था। उधर दानी थी, जैसे कोई खिलौना उसके हाथ में आ गया हो। हर रात चौबारे की छत पर जा बैठती और दूध के कटोरे में आँखें गड़ा कर चाँद की परछाई को देखने लगती। गुरू की मूरत उभरती हुई दिखाई देती थी। बस इतना और कुछ नहीं। लाख जतन करने के बाद भी इससे ज्यादा उसके हाथ में कुछ नहीं आता था।

लेकिन हर रोज़ वह यह कहानी लेकर बैठ जाती थी। भानी सुनती तो जैसे उसके मुँह में पानी आ जाता। उसे दानी का कद ऊँचा ऊँचा लगता। बेशक उसकी बड़ी बहन थी, भानी को वह और और पहुँच वाली, और और सयानी लगती।

"पिता जी के दर्शन तो होते हैं। समाधि में लीन, मुँदी आँखें, आसन जमाये, ध्यान ईश्वर से जुड़ा हुआ। दूधिया सफ़ेद दाढ़ी, गर्दन के गिर्द रेशमी दुपट्टा, रेशमी कुर्ता, वही सीप के बटनों वाला जिसकी कटाई मैंने अपने हाथों से की थी, सिलाई अपने हाथों से की थी, लेकिन यह पता नहीं चलता कि वे किस स्थान पर विराजमान हैं, कौन से. गाँव में, कौन से शहर में।"दानी कितनी देर तक यूँ बैठी अपनी बहन भानी के सामने शेख़ी मारती रही। बोलते बोलते उसकी आँख लग गई।

बेशक भानी मानती थी कि गुरू पिता उसके भीतर हैं, उसके अँग-सँग हैं, दानी की बातें सुन सुन कर उसके मन में भी गुरू पिता के दर्शन करने का चाव उठा। इधर दानी की आँख लगी, उधर भानी उसकी छत से लाई चादर उठाकर छत की ओर चल पड़ी। रसोई में से उसने दूध का कटोरा भर लिया।

चाँदनी रात में छत पर बैठ कर वह वही कुछ करने लगी जो हर रात दानी करती

थी। पहले तो उसे दूध में बस दूध ही दिखाई देता था, और कुछ नहीं। उसका दिल बार बार कहता था, वह बेकार ही दानी की बातों में आ गई थी। लेकिन नहीं, गुरू दर्शन की इच्छा इतनी प्रबल थी कि वह छत से हिली नहीं। हठ कर के बैठी रही, एकटक नज़र से दूध के कटोरे में झिलमिलाती चाँदनी को देखती रही।

रात ढलने लगी थी। भानी की आँखों से आँसू बहने लगे थे। वह सोच रही थी कि दानी की सोच की ऊँचाई तक वह नहीं पहुँच पाई थी। उसे अपने ऊपर दया आने लगी। उसकी आँखों से छल छल आँसू बहने लगे। जैसे कोई धारा हो। बहुत देर तक वह इसी तरह कलपती रही। उसका सारा गुमान जाता रहा।

वह हताश होकर बैठी थी कि अचानक उसके भीतर ख़ुशी की लहर दौड़ गई। दूध से भरे कटोरे में उसे गुरू पिता जी की गहर-गँभीर सूरत दिखाई देने लग गई। ये तो वही थे। सफ़ेद दूधिया दाढ़ी। घोड़ी पर विराजमान। गले में रेशमी दुपट्टा। सचमुच दानी को उनके दर्शन हो रहे थे। बदन पर सीप के बटनों वाला वही कुर्ता जिसकी सिलाई दानी ने अपने हाथों से की थी।

लेकिन दानी को गुरू पिता समाधि में लीन दिखाई देते थे, जो सूरत भानी देख रही थी, वह तो कुछ और ही थी। घोड़ी पर विराजमान, घोड़ी ठुमक ठुमक कदम चाल चल रही थी। उनके पीछे संगतें थीं। भाई बुड्ढा जी थे, भाई पारो भी थे और कितने श्रद्धालु थे। बीबी भानी के जाने पहचाने लोग।

और भानी एकटक दूध के कटोरे में देखती रही, देखती रही। पौ फटने लगी। नीचे घर में लोग जाग कर अपने नित्य कर्म में लग गये थे।

और फिर भानी को ढोलक और छैंना की आवाज़ सुनाई दी। यह तो वही झंकार थी जो उसे दूध के कटोरे में सारी रात दिखाई देती रही थी।

भानी ख़ुशी ख़ुशी नीचे आई। वह सामने गली की तरफ़ गई, क्या देखती है कि गुरू महाराज की घोड़ी गली का मोड़ मुड़ रही थी। घोड़ी पर गुरू पिता विराजमान थे। उनके पीछे सँगत थी। गोइंदवाल के भी कई लोग शामिल हो गये थे।

इतने में उसकी माता जी और बहन दानी, दोनों भाई मोहन जी और मोहरी भी दहलीज़ पर आ खड़े हुए। सँगतें गुरू महाराज पर श्रद्धा के फूल बरसा रही थीं। हर कोई उनकी राह में आँखें बिछा रहा था। भानी गदगद भाव से देख रही थी। उसे लग रहा था, जैसे वह कोई सुहाना सपना देख रही हो।

अगले क्षण वह गुरू पिता की गलवकड़ी (आलिंगनबद्ध) में थी। सब सोच रहे थे, भानी गुरू महाराज की लाडली भी तो थी। मोहिनी से भानी बनी थी।

19

यह कौन था ?

सुबह साध-संगत में जोड़ों* की सेवा में जुड़ा हुआ, शाम को यात्रियों के विश्रामगृह

---

* जूतों की संभाल

के लिए ब्यासा नदी का पानी ढ़ो रहा, लंगर में जूठी पत्तलें समेटता, बर्तन मांजता, लंगर में भोजन कर रहे श्रद्धालुओं पर पंखा झलता। कहीं किसी बजुर्ग के हाथ-पैर दबाता, कहीं किसी बजुर्ग माता को सहारा देकर उसके ठिकाने पर पहुँचाता। जहाँ कहीं सेवादार की ज़रूरत होती, किसी की कोई मदद दरकार होती, वहाँ वह हाज़िर रहता, जैसे धरती में से उग आया हो। न जाने कैसे उसे टोह मिल जाती थी।

लोग उसे 'जेठा,' 'जेठा' कह कर पुकारते थे। भला जेठा भी कोई नाम हुआ !

यही कोई 16-17 बरस की उम्र। अभी उसकी मूछें फूट रही थीं। ठुड्डी पर बालों की रूई, गन्दुमी रंग, गालों पर चढ़ती जवानी की गुलाबी आभा। गठा हुआ शरीर। काम कर करके पके हुए पट्ठे। ऊँचा लम्बा जैसे कोई पौधा हो और कितना मीठा बोलता था। किसी को 'माताजी' किसी को 'पिताजी' किसी को 'वीर' किसी को 'बहन' कह कर बुलाता, सबके काम आकर खुश होता। हँसता चेहरा जैसे मुस्कानें लुटा रहा हो, खुशियाँ बिखेर रहा हो और फिर उसने कितनी गुरबाणी कँठस्थ कर रखी थी। बात बात पर गुरबानी में से मिसाल देता। इतना बाँका, लेकिन जैसे हलीमी का नम्रता का पुतला हो।

यह कौन था ?

इसका जवाब किसी के पास नहीं था। कुछ समय पहले साधु महात्माओं की टोली के साथ वह लाहौर में आया था। इससे ज़्यादा किसी को कुछ मालूम नहीं था। आते ही सेवा में जुट गया था। तन मन से सेवा करता था। लंगर की रूखी मिस्सी खाकर आने जाने वाले की टहल में लगा रहता। जहाँ नींद आती वहीं सो जाता। न कोई घर, न घाट।

उस दिन दानी और भानी दोनों बहनें उसका ज़िक्र कर रही थीं।

''यह कौन है ? '' भानी पूछ रही थीं।

''हज़ारों श्रद्धालु आते हैं। किसी को क्या मालूम कौन कहाँ से आया है, ''हाँ इतना ज़रूर है कि जिधर देखो यह मौजूद रहता है। ऐसा लगता है कि घरवालों से लड़कर आया है।''

''तू ऐसा कैसे कह सकती है ?''

''इसलिए कह सकती हूँ कि इस उम्र में जो नौजवान सेवा में इस तरह समय नष्ट कर सकता है, लगता है उसे और किसी दुनियावारी ज़िम्मेदारी का एहसास नहीं है।''

''क्या तेरा कहने का मतलब है कि आने जाने वाले यात्रियों की टहल सेवा कोई ज़िम्मेदारी नहीं हैं ?''

''बेशक है, पर इससे पेट तो नहीं भरता। घर का गुज़ारा तो नहीं चलता। कब तक कोई लंगर की रोटियाँ खा सकता है ? साध संगत के दर पर बैठ सकता है ?''

''ईश्वर की भक्ति क्या तेरी नज़र में कोई काम नहीं ?'' इससे किसी का घर तो नहीं बस जाता। बच्चों के मुँह में रोटी का टुकड़ा तो नहीं पड़ जाता।''

"बस गुरू महाराज की कृपादृष्टि चाहिये ।"

"तू तो पगली है । जो समय तू भजन–पाठ में लगाती है, उतना समय अगर पढ़ने–लिखने में, कोई हुनर सीखने में लगाती तो आज कहीं की कहीं पहुँच गई होती । तेरा अपना घर होता, अपना आँगन, आँगन में खेल रहे फूलों जैसे तेरे बच्चे ।"

"जैसे यह सब तुझे मिल गया हो । मुझसे तू चार घर बड़ी है, तू भी तो वैसी की वैसी है, कबूतरी की कबूतरी, न कोई नथ, न किसी के हाथ ।"

"और दो चार दिन रूक जा फिर देखना मैं तेरे जैसी रहती हूँ या नहीं । यह कहते हुए दानी अर्थपूर्ण हँसी हँसने लगती है ।

"मैं मरी ! यह चाँद कबसे चढ़ाया है । तू चोरी चोरी लड्डू भोरती रही है ।

"चोरी चोरी क्यों, मैंने तो माता जी को पिता जी के साथ मशवरा करते सुना है । दीवार के पीछे खड़ी मैं कान लगाकर सुन रही थी और वे आपस में घुसर मुसर कर रहे थे ।"

"और हमारी कोई पूछ भी नहीं ?"

"तेरी भी बारी आ जायेगी । तू मुझसे छोटी भी तो है ।"

"माता जी तो कहते हैं मैं दोनों बेटियों को एक साथ ही निपटा दूँगी । दोनों जवान हैं । ईश्वर की दया से । कोठे का कोठा ।"

"यह कोठे का कोठा क्या होता है ?"

"तुझे पता होगा । तू मुझसे बड़ी है ।" यह कहते हुए भानी उठ खड़ी हुई और सामने रसोई में राँधने पकाने में जुट गई ।

सचमुच दानी की बात ग़लत नहीं थी । गुरू महाराज और उनकी घरवाली दानी और भानी के हाथ पीले करने की फ़िक्र में थे । दानी के बारे में तो शायद उन्होंने मन बना भी लिया था । माता मनसा देवी जी अब भानी के लिये योग्य वर की तलाश में थी । एक दिन पति पत्नी बैठे बातें कर रहे थे । ऐसा लग रहा था कि गुरू महाराज को कई दिनों के बाद फ़ुर्सत मिली थी । जब से वे अज्ञातवास से लौटे थे, चारों दिशाओं से संगतें गोल बाँध कर आ रही थीं । निराश्रयों के आश्रय और बेघरों के घर के दर्शन करके निहाल होती रहती थीं ।

माता मनसा देवी के भीतर की माँ, गुरू महाराज को याद करवा रही थी, कि भानी अब बड़ी हो गई थी । उसके लिये योग्य वर तलाश करने की उन्हें फ़िक्र करनी पड़ेगी । गुरू महाराज अपनी पत्नी से सहमत थे । लेकिन सवाल यह था कि लड़का कैसा हो, ताकि उनकी छोटी बेटी खुशियों से अपना जीवन व्यतीत कर सके । वह पिता जी की बेहद लाडली भी तो थी ।

ईश्वर की इच्छा, जब गुरू महाराज यह पूछ रहे थे, उनके सामने जेठा जी गुजरे, हाथ में पँखा लिये, जल्दी जल्दी बरगद के नीचे बैठी संगत को पँखा झलने जा रहे थे । गर्मी भी तो बेहद पड़ रही थी । जेठ का महीना, उमस में संगतें बेहाल हो रही थीं । हालांकि दोपहर कभी की ढल चुकी थी, गर्मी बेहद पड़ रही थी ।

माता मनसा देवी पहले से ही जेठा जी के सेवाभाव से अत्यन्त प्रभावित थीं । गुरू

महाराज के मुख से ये शब्द सुनकर कि लड़का कैसा होना चाहिये उनके मुँह से निकला, "उस जैसा होना चाहिये," माता जी सामने जा रहे जेठा जी की ओर इशारा कर रही थी ।

"उस जैसा तो वही है," गुरू महाराज ने सहज भाव से फ़र्माया और अर्थपूर्ण नज़रों से भानी की माता की तरफ़ देखा ।

मुँह से और कोई भी शब्द बोले बग़ैर यह फ़ैसला हो गया कि भानी की शादी जेठा जी के साथ होगी । गुरू महाराज भी जेठा जी पर अत्यन्त प्रसन्न थे। सब लोग इस नौजवान की अनथक सेवा से ख़ुश थे । अमृतवेला से लेकर वे आधी रात तक संगतों की सेवा में हाज़िर रहते । जो सेवा कोई और न कर सकता वह सेवा जेठा जी अपने सर पर ले लेते । चाहे वह देर रात गये लंगर के बर्तनों को माँजने की ज़िम्मेदारी होती, चाहे ब्यासा नदी से पानी की गागरें भर भर कर ढोने का काम होता । रात को कई बार जब संगतें खुले आसमान के नीचे सो रही होतीं, गर्मी के मौसम में उन्हें ठँडी मीठी हवा के झोंके आने लगते । इस सुखद स्थिति में जब किसी यात्री की आँख खुलती तो वह देख कर हैरान होने लगता, वह नौजवान जो उनके नहाने के लिये सुबह ताज़ा जल लाता था, लंगर में जिसे वह जूठे बर्तन मांजते देखा करते थे, अब वह आधी रात को बाहर से आई संगतों पर पँखा झुला कर उनकी नींद को सुखद बना रहा था ।

इस बात में रत्ती भर संदेह नहीं था कि जेठा जी सेवा की मूर्ति थे । साध संगत की सेवा के फलस्वरूप उन्हें गुरू महाराज का दामाद होने की पदवी प्राप्त हुई । ख़ासतौर पर बीबी भानी का हाथ उन्हें सौंपा गया । वह जितनी सुघड़ थी उतनी ही सुशील थी । जितनी सुँदर थी, उतनी ही समझदार थी । जैसे शराफत का पुतला हो ।

जब अमन को इस फैसले का पता चला तो वह शैली को समझाने लगा,"जब ईश्वर देता है तो छत फाड़कर देता है ।"

"हमारे तो हाथ आये बटेर भी उड़ जाते हैं ।" शैली को लाहौर की याद सताने लगी । वह कई बार सोचता आख़िर उसने भगवान का क्या बिगाड़ा था कि उसकी तरफ़ कभी कृपादृष्टि ही नहीं हुई ।

20

शैली गोइंदवाल जाने वाले साधुओं की एक मंडली के साथ हो लिया था । इसी मँडली में जेठा भी शामिल था जो रावी के किनारे घुघनीआँ बेचता हुआ अपना सारा माल साधुओं को खिला कर उनके साथ चल पड़ा था । इतना भी नहीं किया कि घर जाकर अपने माता पिता को भी खबर देकर लाहौर से चलता । एक ही तड़प कि गुरू महाराज के दर्शन करने हैं । उसे साधुजन समझाते रहे, शैली ने कई बार रोका लेकिन उसने किसी की न सुनी । आगे ही आगे चलता, मज़ाल है किसी की सलाह पर कान धर जाये ।

शैली सोचता, शायद यह भानी ही थी, जो उसे आवाज़ें दे रही थी । इस तरह घर बार छोड़कर बिना किसी तैयारी के चल पड़ना, इसमें कोई भेद था, जो शैली की समझ में नहीं आ रहा था ।

उधर नसीम थी, कैसे उसकी ज़िन्दगी में बिन बुलाये आई थी और बिना बताये चली गई थी। कौन कौन से इक़रार थे जो उसने नहीं किए थे। कौन कौन से सपने थे जो उन दोनों ने मिलकर नहीं देखे थे। जैसे मुहब्बत का मुजस्समा हो। एक बवंडर की तरह आई और इसे साथ उड़ाकर ले गई। न मज़हब की पाबंदियाँ, न भाईचारे की बंदिशें, न धार्मिक मर्यादाओं का अलगाव, लाहौरन लड़की, सीमायें पार करती, जैसे शैली को अपने साथ उड़ाकर ले गई हो। और अब शैली अकेला-अकेला था, जैसे ख़ाली खंडहर हो, उसे अपने आस पास का वातावरण अजनबी सा लगता। न इधर का, न उधर का। अमन ख़ुशी ख़ुशी से अपनी गृहस्थी चला रहा था। शैली सोच रहा था, कुछ दिनों के बाद उनके बच्चा हो जायेगा, एक बच्चा, एक और बच्चा, फिर उनका आँगन भर जाएगा, ढुलू ढुलू करने लगेगा। सुंदरी की सास उसकी लाख ख़ातिरें करती, जैसे उसके पैरों तले, हथेलियाँ बिछा रही हो।

यह सब देखकर शैली के मन से उमस सी उठने लगती। उसे अपना आसपास का वातावरण अजीब अजीब सा लगता। आँख झपकते ही वह उड़कर लाहौर पहुँच जाता। नसीम की बाहों में ढेरी होने लगता। उसके रोज़ नये नग़मे उसके कानों में गूँजने लगते। जैसे सुगन्धियों की पिटारी हो। नसीम इसके पास हो कर जाती तो सारी सारी शाम सारी सारी रात इसकी परछती महकती रहती। वातावरण में एक नशा सा छा जाता।

और वह नशा अब टूट रहा था। जैसे पूरी रात कोई महफ़िल में गुज़ारे, रातभर साकी की मेहरबानियों से नवाजा गया हो और सुबह की वीरानगी किसी को नोंच नोंच कर खाने लगे। निढ़ाल करके फेंक दे।

खाली बैठकर, पुरानी यादों से खेलते हुए शैली को जेठा जी की श्रद्धा, सेवाभाव और लगन याद आती तो वह पानी पानी हो जाता। "मेरे माता पिता ने मेरा नाम रामदास रखा, मैं उन्हें बार बार कहता था मेरा नाम तो गुरदास होना चाहिये। मैं तो गुरू के चरणों का सेवक हूँ।" जेठा के ये बोल बार बार शैली को याद आ रहे थे। तभी तो शायद वह मन की मुराद पा गया था। शैली को यह देखकर हैरानी हुई कि कैसे कुछ ही दिनों में जेठा ने हर किसी को अपना प्रशंसक बना लिया था और इधर यह था कि न इधर के क़ाबिल न उधर के क़ाबिल।

इससे तो अमन मज़े में रहा था। उसने अपना घर बसा लिया था। बेशक शैली ने सुंदरी को लात मारी थी, लेकिन अमन ने जैसे मट्टी में बर्बाद हो रही कली को धो कर अपने सीने से लगा लिया था।

यह उन दिनों की बात है जब शैली की कुछ ऐसी मनोदशा थी कि लाहौर से शक्ति का ख़त आया। वहाँ से आने वाले यात्रियों के हाथ उसने रूक्का भेजा था। कितनी ख़ुश ख़ुश लग रही थी, जैसे सारा जोबन ही उमड़ कर उसकी झोली में आ पड़ा हो। अपने घरवाले के गुण गाती न थकती थी, न हारती थी। कोई जागीरदार था। बेहद पैसे वाला। नौकर चाकर, सरकारी दरबार में पहुँच। ऐसा लगता था कि शक्ति भी माँ बनने वाली थी। इस तरह के अनेक

इशारे उसके ख़त में थे। "मेरा मन गुरू महाराज के दर्शनों के लिये बहुत उत्सुक है, लेकिन इतना लंबा सफ़र करना आजकल मुझे मना है," उसने लिखा था।

ख़त के आख़िरी हिस्से में जैसे उसने शैली के लिये पटाख़ा छिपा कर रखा था, "और फिर इधर नसीम नाम की मेरी एक सहेली की शादी रचाई जा रही है। इस कारण भी मुझे काफ़ी भागदौड़ करनी पड़ेगी, जो हमारे शहर के हकीम साहब के मुताबिक मुझे नहीं करनी चाहिए। लेकिन नसीम की शादी में शामिल होने से मैं कैसे बच सकती हूँ ? शैली को तो हमारे सहलापे का कुछ कुछ अँदाज़ होगा"

इस तरह शक्ति का खत खत्म हुआ था।

हाँ शैली को उस सहलापे का अँदाज़ था। लेकिन इस ख़बर को सुनते ही कि नसीम की शादी रचाई जा रही थी, शैली का दिल डूबने लगा। उससे न कुछ खाया जाता, न पिया जाता। आठों पहर फ़िक्रों में डूबा हुआ, वह उदासी में कुढ़ता रहता। किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। अच्छे भले ख़ुश रहने वाले इस लड़के ने कौन सा रोग लगा लिया था। शैली दिन प्रतिदिन घुलता जा रहा था। पीला ज़र्द चेहरा। कुछ ही दिनों में वह हड्डियों का ढाँचा रह गया था।

उधर अमन गुरबाणी के नुस्खे इकट्ठे करता रहता था। गुरू महाराज को एक नज़र दिखा कर उन नुस्खों की नकलें तैयार करता रहता। गुरू अमरदास जी ने 22 मंजीआँ* स्थापित कर दीं थीं। जहाँ से गुरबाणी के नुस्ख़े बाक़ायदा आने लग पड़े थे। इसके अलावा गुरू महाराज ने 146 प्रचारक तैयार किये जिनमें 52 महिलायें भी थीं। ये लोग भी गुरबाणी इकट्ठी करके गुरू महाराज तक पहुँचाते रहते थे। इस सारी सामग्री की हस्तलिखित नकलें तैयार करनी होती थीं। अमन ख़ुश था। दिन रात अपने काम में व्यस्त रहता था। न किसी की निंदा, न चुगली। अपने काम से सरोकार। उसने घर के धंधों से धीरे धीरे पल्ला छुड़ाना शुरू कर दिया। या साध संगत या पाठ-पूजा, या फिर गुरबाणी की प्रतिलिपियाँ तैयार करनी। गुटकों के गुटके तैयार करता रहता था। आजकल सिर्फ़ गुरबाणी की नक़ल ही नहीं उतारता था, गुटकों के हाशियों पर बैलों के चित्र बनाता, उनमें रंग भरता। लिखावट इतनी सुन्दर थी कि उसकी हस्तलिपियों को देख कर लोग गद्‌गद् होते रहते थे।

सुँदरी को जैसे वह भूल ही गया हो। शादी क्या करवा ली थी। बेचारी आठों पहर घर के घँधों की परेशानियों में सर दिये रहती थी।

उसकी सास तेजी बहूरानी की लाख ख़ातिरें करती, लेकिन पिछले कुछ दिनों से सुंदरी को जैसे अमन की माँ की ये हिफाज़तें ज़हर लगने लगी थीं। बेटे को उससे बात करने की फ़ुर्सत नहीं थी और बहूरानी की तारीफ़ें करते हुए माँ का मुँह नहीं थकता था। यह भी भला कोई बात हुई। सुंदरी मन ही मन कुढ़ती रहती थी।

उस शाम परिवार के सभी लोग आँगन में बैठे इधर उधर की बातें कर रहे थे –

---

* केन्द्र (अनुवादक)

नसरीन, तेजी, सुंदरी और शैली। बस अमन वहाँ नहीं था, रोज़ की तरह ऊपर चौबारे में बैठा नये आये नुस्ख़ों की नकल करने में डूबा हुआ था।

फुर्सत में जिस तरह की बातें होती हैं, तेजी कहने लगी, "मैं सोचती हूँ अब शैली को भी किसी से बाँध देना चाहिए।"

"क्योंकि भानी की शादी हो रही है ?" सुंदरी ने शैली से छेड़ख़ानी की।

"नहीं, यह बात नहीं, यह लड़का आजकल हर वक्त खोया खोया रहता है। मैं सोचती हूँ कोई इसका दिल लगाये रखेगी।"

"और हमारे आँगन की रौनक भी बढ़ेगी।" सुंदरी बोली।

"रौनक तो चार दिनों में बढ़ सकती है। सुंदरी अगर तू एक मुन्ना ....।"

"हाँ, तुम लोग किस बात की इन्तज़ार कर रहे हो ? जाड़ों में हमने सोचा गर्मी में चाँद चढ़ेगा, गर्मी में हम इन्तज़ार करते रहे, जाड़े में मुँह मीठा करेंगे। जाड़ा भी बीत गया, गर्मी भी निकल गई।" नसरीन अपने अँदाज़ में सुँदरी को याद करवा रही थी।

सुंदरी ने नज़र बचाकर शैली की तरफ़ देखा। वह शरारतभरे ढँग से मुस्करा रहा था।

21

गोइंदवाल एक चहलपहल वाला शहर बन गया था। चारों तरफ गहमा गहमी। व्यापारी व्यापार के लिए आ जुड़े थे। गुरसिक्ख गुरू चरणों में अपना जन्म सफल करने की आशा लिये, घर बार छोड़ कर वहाँ आ बसे थे। नदी के किनारे, शाह राह के नज़दीक नया बसा शहर, मज़दूरों के लिये मज़दूरी के राह खुले थे, कारीगरों के लिए धंधे की संभावनाओं का कोई अंत नहीं था। ठेकेदारों को ठेकों से फ़ुर्सत नहीं मिलती थी।

एक दिन बैठे बैठे गुरू महाराज को ख़्याल आया, गोइंदवाल में सभी आकर्षण थे, बस स्नान करने का कोई स्थान नहीं था, जहाँ श्रद्धालु तन की मैल धो सकें, मन को उजला कर सकें। यही कारण था कि कई श्रद्धालु जमना और गंगा के किनारे बसे तीर्थ स्थानों की यात्रा पर जाते थे। यह बात अलग थी कि कई लोग मथुरा ऋषीकेश, काशी, होकर आते और फिर गोइंदवाल में बस जाते थे। और तो और कई साधुसंत, मुसलमान फ़कीर गोइंदवाल आ पहुँचे थे।

और सत्गुरू ने फ़ैसला किया कि गोइंदवाल में एक बावली बनवाई जाये जिसकी 84 सीढ़ियाँ हो, हर सीढ़ी पर अन्तर्ध्यान होकर जपुजी का पाठ करने वाले का 84 लाख जूनों का चक्कर कट जायेगा।

जब यह योजना साध-संगत के सामने रखी गई तो गुरसिक्ख श्रद्धा में आकर खुदाई की ज़िम्मेदारी अपने सर पर लेने के लिए तैयार हो गये। कोई ठेकेदार नहीं, कोई मिस्त्री नहीं, कोई भाड़े पर भर्ती किया गया मज़दूर नहीं।

फ़ैसला यह हुआ कि उस साल गुरू नानक जी के ज्योति जोत समाने के दिन भाई बुड्ढा जी से टक लगवाया जाये, जिसके बाद संगतें कारसेवा का काम शुरू कर दें इस

मनोरथ के लिये संदेशवाहक चारों तरफ़ भेज दिये गये। ज्यों ज्यों संगतों तक यह सूचना पहुँचती वे हुमहुमाकर गोइंदवाल की तरफ़ चल पड़तीं। ज्यों ज्यों बाउली की कारसेवा के श्रीगणेश का दिन नज़दीक आ रहा था, गोइंदवाल शहर जैसे श्रद्धालुओं से नाकोंनाक भर गया। कहीं तिल धरने की जगह न बची।

श्रद्धालु अपनी कुदालें, बेलचे, टोकरियाँ साथ लाते और दिन रात अटूट कार सेवा का काम जारी रहता। आज और कल और देखने वालों को विश्वास न होता, बाउली की खुदाई इस तरह हो रही थी, जैसे हरे चारे के खेतों की कटाई हो रही हो। बस "सत करतार" की ध्वनि सुनाई देती और फावड़े, कुदाले चलने की आवाजें या फिर "सतिनाम श्री वाहिगुरू" "सतिनाम श्री वहिगुरू" कहते हुए गुरसिक्ख मट्टी की टोकरियाँ भर कर दूर एक किनारे फेंकने जा रहे होते। क़तारों की क़तारें। कुछ दिनों में ही वहाँ मट्टी का अच्छा खासा टीला बन गया।

अक्सर लोग आते जाते रहते लेकिन जिन स्थानीय लोगों की देख रेख में सारी योजना को पूरा किया जा रहा था। उनमें भाई पारो, भाई सचनिसच, जेठा जी और भाई साधारण कुछ प्रमुख नाम थे।

काबुल से आई माई सेवाँ नाम की एक श्रद्धालु भी थी, जिसकी चर्चा अक्सर होती थी। कुछ दिनों के लिये आई थी, अब वापिस जाने का नाम नहीं ले रही थी। न थकती थी, न हारती थी। दिन रात सेवा में व्यस्त रहती थी। अक्सर देखने में आया था कि बीच बीच में माई सेवाँ, सुस्ताने के लिए बैठ जाती थी और फिर एक बाँह आगे कर जैसे किसी चीज़ को धकेलने लगती। ऐसा करते हुए वह मुस्कराने लगती। माई सेवाँ की इस हरक़त को देखकर लोग अचंभा करते रहते।

कुछ दिनों बाद लोगों से रहा न गया और उन्होंने माई सेवाँ से उसकी हरक़त के बारे में पूछ ही लिया। उसने सुना और हँसने लगी। "बात यह है," आख़िर उसने अपने दिल की घुंडी खोली, "मैं बस गुरू महाराज के दर्शनों के लिए आई थी। यहाँ पहुँच कर बाउली की कारसेवा में ऐसा मन रम गया कि मैं इतने दिन यहीं टिक गई। छोटा सा एक बच्चा पीछे एक नौकरानी के हवाले करके आई हूँ। मेरा घर वाला दिन में अपने कामकाज के लिये बाहर चला जाता है। बच्चे को पालने में लिटा कर जब नौकरानी रसोई में खाना पका रही होती है, तो मैं यहाँ बैठी एक हाथ से झूला हिलाती रहती हूँ। जब झूला रुकता है तो मैं बाँह बढ़ाकर उसे धकेल देती हूँ, तो झूला हिलने लगता है बच्चा ख़ामोश हो जाता है। कुछ देर बाद वह गहरी नींद में सो जाता है और मैं फिर सेवा में जुट जाती हूँ, अपना जन्म सँवार रही हूँ।"

जिसने भी माई सेवां की बात सुनी गद्‌गद् हो उठा। उसकी यह कहानी चलते चलते गुरू महाराज तक भी जा पहुँची। वे सुन कर मुस्करा उठे, जैसे उन्हें माई सेवाँ की इस हरकत का पहले से ही ज्ञान हो।

हर व्यक्ति तन मन से बाउली की सेवा कर रहा था। संगतें जिस उल्लास से ख़ुदाई

और ढुलाई का सिलसिला जारी रख रहीं थीं उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। लेकिन इस सेवा में सबसे अधिक व्यस्त थे भाई जेठा जी। संगतें चकित होती, अब तो वे गुरू महाराज के दामाद थे। तब भी यहाँ सारा दिन वे मट्टी के साथ मट्टी होते रहते थे। कहीं कुदाल चला रहे हैं, कहीं गैंती मार रहे हैं कहीं बेलचे के साथ मट्टी चला रहे हैं, कहीं टोकरी में मट्टी भर कर दूर बन रहे टीले तक पहुँचा रहे हैं। सारा सारा दिन उनका मुँह माथा धूलमाट्टी से लथपथ रहता। न खाने की सुध न पानी पीने की होश।

संयोगवश, उन्हीं दिनों भाई जेठा जी का चचेरा भाई सिहारी मल लाहौर के एक जत्थे के साथ गुरू महाराज के दर्शनों के लिए आ निकला। जेठा जी को देख कर उसके भीतर के समधी को बहुत क्रोध आया। यह भी कोई बात हुई ! घर के दामाद से इस तरह मजदूरी करवाना ! बुरे हाल और बाँके दिहाड़े ! भाई जेठा जी का लाहौरिया भाई गुस्से से उछलता, खीजता, गुरू महाराज से शिकायत करने लगा। ऐसा लगता हैं कि हमारा भाई इस घर का दामाद न होकर कोई मज़दूर हो। उसने गुरू महाराज से कह दिया।

भाई सिहारी कितनी देर तक अपने दिल की भड़ास निकालता रहा। इतने में गुरू महाराज ने जेठा जी को बाउली से बुलवा भेजा। इस हिदायत के साथ कि वे जहाँ भी सेवा कर रहे हों उसी हालत में आ जायें।

धूल -माटी में लथपथ सामने जेठा जी आ रहे थे। भाई सिहारी जी ने उनकी तरफ़ देखा, क्षणभर के लिये उन्हें लगा कि भाई जेठा जी पर तो केसर की वर्षा हो रही थी, उनके उनके मुखड़े पर नूर ही नूर छाया था। ऐसा लग रहा था जैसे कोई मुग़ल शाहज़ादा अपने पूरे जाहो-जलाल के साथ आ रहा हो। भाई सिहारी जी ने देखा तो गुरू महाराज के चरण पकड़ लिये।

22

शैली अनायास बोल रहा था-"यह जीवन अनमोल है। यह चोला बार बार हाथ नहीं आता। आदमी को अशरफुलमखलूकात कहा गया है। फिर बंदा बेकार क्यों क्लेश मचाये ? किस लिए दिन रात, खज्जल ख़्वार होता रहे ? आदमी को उतना ही काम करना चाहिये जिससे गुज़ारा चल सके ....।"

"गुज़ारा ही क्यों?" सामने रसोई में बैठी सुंदरी कहने लगी। शैली और सुंदरी घर में अकेले थे।

"मेरा मतलब है कि आदमी आराम से रह सके।" शैली ने अपनी बात को दुरूस्त किया।

"सिर्फ़ आराम से ही नहीं, बाबा नानक ने कहा था, मेहनत करो और बाँट के खाओ।"

"इतना भी नहीं, कि तेरे पिता की तरह कमा कमा कर ढेर लगा दो। आदमी का पता भी न चले कि वह पैसे का क्या करे।"

"हमारे व्यापार में मेरी माँ के कारिन्दों की हिस्सेदारी थी, ,तभी तो मेरी माँ. कई कई

महीने घर से बाहर रह जाती है । गुरू बाबे ने मेरे पिता को यह रास्ता बताया था ।''

''लेकिन तेरा मियाँ किसलिये सुबह से शाम तक अपनी जान मारता है ? न खाने की सुध, न पीने की होश । कई बार तो दो दो चार चार दिन गुज़र जाते हैं । हमारी आपस में बातचीत तक नहीं होती क्या कोई मान सकेगा कि हम एक ही घर में रहते हैं, एक ही आँगन में उठते-बैठते हैं ?''

''यह तू मुझे बता रहा है ? मैं उसकी बीबी हूँ और ....''सुंदरी अचानक रुक गई। भला वह कैसी पागलपन की बात कहने जा रही थी ? सुँदरी पसीने से तर हो रही थी ।

बात इससे आगे नहीं बढ़ी । सुंदरी की जीभ पर जैसे ताला लग गया हो । उसकी पलकों में गरम गरम दो आँसू छलक रहे थे । शैली जैसे सकते में आ गया हो ।

इतने में तेजी बग़ल में पानी की गागर उठाए आ गई ।

अभी वह आँगन में घुसी ही थी कि शैली बोल उठा, ''मासी जी आप गागर को ऐसे उठाती हैं जैसे कोई दादी अपने पोते को उठाये फिरती हो ।''

यह सुनकर तेजी खिलखिला कर हँसने लगी ।

कुछ देर बाद वह कहने लगी ''बीबा तू बेशक ताने मार ले । तेरा वक्त है । लेकिन यह बता तूम ख़ुद क्यों दडँगे मारता फिरत है? मेरी बहन की मुराद भी तो कभी पूरी हो ।''

''यह बात न इससे कहिये ।'' सुंदरी ने मिर्च मसाला लगाया ।

''हाँ, हमारी बहू रानी को भी साथ मिल जायेगा,'' तेजी गागर को घड़वंजी में टिका कर बोली ।

शैली सोच में डूब गया । पिछले कुछ दिनों से किस तरह की चर्चा इस घर में छिड़ी हुई थी ।

इतने में नसरीन सत्संग से लौट आई । आते ही पूछने लगी ।''शैली बेटा, तूने अपना दूध का कटोरा पी लिया है ?''

''नहीं तो,'' सुंदरी बीच में बोल उठी, ''मासी जी मैं इसे कई बार पूछ चुकी हूँ, यह टस से मस नहीं होता'' सुंदरी जानबूझकर शैली से छेड़ख़ानी कर रही थी ।

''लेकिन आज सत्सँग से लौटते ही अम्मी जी को मेरे लिये दूध की बात कैसे याद आ गई ?''

''पिछले कई दिनों से तू कमज़ोर भी तो कितना होता जा रहा है ।''

''जैसे किसी को भूखा मारा जा रहा हो,'' सुंदरी की छेड़छाड़ जारी थी ।

''आज सत्सँग में गुरू महाराज इन्सानी चोले की महानता के बारे में बता रहे थे ।'' नसरीन ने बात शुरू की ।

''कल भी तो उन्होंने इस तरह के एक मामले में हम लोगों की ताड़ना की थी । ''शैली बीच में बोल उठा, ''बात यूँ हुई कल सुबह से ही वर्षा हे रही थी । वर्षा रूकते ही गुरू महाराज ब्यास नदी के किनारे टहलने के लिये चल पड़े । मौसम भी तो बड़ा खुशगवार

था। हम लोग भी कुछ श्रद्धालु उनके साथ चल पड़े। आगे आगे सत्गुरू जी, पीछे पीछे हम। शहर में से गुज़रते हुए हम एक गली में से गुज़रे जिसके एक घर की दीवार गिरने ही वाली थी। गुरू महाराज जब वहाँ से गुज़रने लगे तो उनके क़दम तेज़ हो गये। यहीं नहीं, उन्होंने हमें भी आदेश दिया अरे बच कर तेज़ क़दमों से निकल आओ। गली पार करने के बाद हममें से एक सज्जन आगे बढ़े और जानीजान गुरू जी से पूछने लगे, "हज़ूर आप गुरू नानक की ज्योति हैं। आपके हुक्म के बग़ैर पत्ता तक नहीं हिल सकता और इस जर्जर दीवार की क्या मजाल है कि आपको खरोंच तक लगा सके ?"

"दूसरा बीच में ही बोल उठा, आपने हम लोगों को भी चेतावनी दी, अगर हमारी मौत इस तरह ही लिखी है तो उसे कौन रोक सकता है?"

किसी और के बोलने से पहले गुरू महाराज हाथ से इशारा करके ख़ुद भी रूक गये, हम लोगों को भी रोक लिया, और कुछ इस तरह फ़रमाने लगे–"बेशक मौत का क्षण निश्चित है, इसे कोई टाल नहीं सकता, लेकिन जब तक इन्सान ज़िंदा है, उसे अपने आप को सुरक्षित रखने का हर उपाय करना चाहिये। मानव जीवन अनमोल है। इस जन्म के लिये देवी देवता भी तरसते हैं। सौभाग्य से ही यह चोला मिलता है। फिर गुरू महाराज ने सूही राग में इस शब्द का उच्चारण किया :

काइआ अँदरि रतन पदारथ भगति भरे भँडारा॥
इसु काइआ अँदरि नउ खंड प्रिथमी हाट पटण बाजारा॥
इसु काइआ अँदरि नामु नउ निधि पाईऐ गुर कै सबदि वीचारा॥

"इसी ही शब्द का तो आज सत्सँग में भट्ट गायन कर रहे थे।" नसरीन बोल उठी, और फिर जब कीर्तन ख़त्म हुआ, सच्चे पातशाह ने इसकी व्याख्या की। कह रहे थे, जिस वृक्ष की परवरिश अच्छी तरह की जाये, उस पर बढ़िया फल लगते हैं, उसके पत्ते हरे भरे होते हैं, लहलहाते हुए, फूलों में एक महक होती है, तरह तरह के रँग।"

"गुरू महाराज तो चलते चलते हमें यह भी कह रहे थे कि पहाड़ों की कंदराओं में जाकर तप करने से, जगलों में मांदे बना कर बैठने से, शरीर को कष्ट देने से, उपवास रखने से, जगराते काटने से–इन सब बातों से गृहस्थ जीवन कहीं बेहतर है, कहीं ऊँचा है," शैली बता रहा था।

"तो फिर गुरू महाराज कल बासरके के नज़दीक कोठरी में जाकर क्यों छिप बैठे थे ?"सुंदरी ने अपने मन के संशय को प्रकटाया।

"बेटी इस लिए ताकि दातू जैसे लोगों की ताड़ना हो सके।"अब तेजी बोल रही थी। "गुरू महाराज को किसी चीज़ का लालच नहीं, किसी चीज़ की भूख नहीं। वे तो सिर्फ़ ईश्वर के दीदार की खोज में रहते हैं।"

यह सुनकर सुंदरी ने आँखें भर कर शैली की तरफ़ देखा। शैली भी उसी तरह से सुंदरी की तरफ़ देख रहा था। उनकी नज़रें टकराई। जैसे दोनों तरफ़ एक ही भूख हो। क्षणभर के बाद दोनों की पलकें नीचे झुक गई।

"यह अमन कहाँ है ?" नसरीन पूछने लगी। "आज तो सत्संग में भी नहीं दिखाई दिया।"

"कहीं स्याही घोल रहा होगा या कागज़ की तह बिछा रहा होगा। उसने जो कागज़ सूखने के लिये डाले थे, कल की वर्षा ने उन कागज़ों की कई तहें नष्ट कर दी थी।"

"रात को देर तक हम उन कागज़ों को सँभालते, पोंछतें रहे," सुँदरी बता रही थी।

"मैं तो सोचती हूँ, सुंदरी बेटी, अमन के काम में तू भी हाथ बटाना शुरू कर दे। बेचारे से लोगों की फ़र्मायशें पूरी ही नहीं होती।" तेजी ने राय दी।

सुंदरी खामोश रही आगे से नहीं बोली। कुछ देर बाद जब परिवार के लोग इधर उधर हुए, चौके से उठते हुए शैली स्वत: कहने लगा "जैसे दिन रात क़लम घिसाये जाने के सिवा और कोई काम ही नहीं, यह भी कोई बात हुई। न बाबा मुझसे तो यह सब कभी न हो सके।

उस शाम जब वे एकान्त में मिले तो शैली ने सुंदरी से छेड़ख़ानी की, "सुंदरी ब़ेटी, अमन के काम में तू भी हाथ बटाना शुरू कर दे।"

"नोज" सुंदरी ने नकचढ़े ढँग से कहा और उठकर अपने कमरे में चली गई।

23

सुंदरी ऐसी थी जैसे चमेली की बेल हो, गहर-गँभीर, शाँत-स्थिर, सोच में डूबी हुई, चिन्ताओं में डूबी हुई। सोई सोई एक महक। लगता था हाथ लगाते ही कोई नग़मा फूट निकलेगा। एक हवा का झटका और ओस के मोती टपक पड़ेंगे। जैसे प्यार से छलछलाती अँजलि हो, किसी हसीन सपने में लिपटी हुई। एक स्वाद, एक सरूर सरूर, एक नशे की हालत !

सुंदरी बोलती तो ऐसा लगता जैसे दूर आम की किसी बगीची में से कोई सदा आ रही हो। जैसे कोई विहवल कोयल पुकार रही हो। उसकी नज़रें जैसे किसी छलावे से सहमी हों, एक नज़र देखती तो मीठे मीठे दर्द के पगचिह्न उकेरता हुआ जैसे कोई निकल जाता। देखने वाले को तो कमसे कम ऐसा ही महसूस होता था।

जो कपड़ा पहनती वही उस पर फब जाता। कभी कोई पोशाक पहनती कभी कोई। कभी हिंदुआनी, कभी पठानी, कभी मुग़लानी। उसका पहरावा जितना सादा होता उतना ही दिलकश। अक्सर बालों में कँघी फेर कर वह उन्हें बिना चोटी बनाये खुला ही छोड़ देती। जैसे कोई उड़ रहा हो, उसे एक थकान का एहसास होता। सड़क के किनारे खड़ा कोई मुसाफ़िर जैसे किसी की इन्तज़ार कर रहा हो।

तेजी सँदूक में से हर रोज़ नये जोड़े निकाल कर उसके लिये रखती। बार बार उसे याद दिलाती कि अगर वह अपने गहने टूमां सुहाग के चिन्ह उन दिनों में नहीं पहनेगी तो फिर ये चीज़ें कब काम आयेंगी ? सुंदरी टस से मस न होती। देश में आज कल शान्ति थी। सूरियाँ ने मुग़लों को पछाड़ा। फिर मुग़ल आये और उन्होंने सूरियों से राजपाट छीन

लिया। सब लोग अब यही हाथ जोड़ते थे कि मुग़ल टिके रहें। लोग कहते थे कि हकूमत तो हाकिमों ने ही करनी होती है। प्रजा के लिये तो वही हाकिम अच्छा है जो उसे अमन-चैन से रहने दे। लोग दस नाखूनों से मेहनत कर सकें, सरकार-दरबार के कर अदा करें और अपने अपने धर्म का पालन करें। इस राज परिवार को बाबा नानक का आशीर्वाद प्राप्त था। अब उन्हें सत्गुरू अमरदास जी के चरणों में स्थान प्राप्त था। और किसी को चाहिए भी क्या था ? जन्म सफल, लोक परलोक दोनों सँवरे हुए समझो।

सुंदरी को इन बातों से कोफ़्त होती थी। इस तरह की कहानियाँ जब कोई उसके सामने सुनाता तो उसके मन में आता, वह कपड़े फाड़ कर कहीं निकल जाये। उसे अमन-चैन नहीं चाहिए था। उसे तो ख़ून ख़राबे की इन्तज़ार रहने लगी थी। अराजकता के सपने आते थे। उसका मन करता था कि सब उलट पलट जाये। उस तरह के हालत पैदा हों जो बाबर के हमले के वक्त सुने जाते थे। या फिर से हालता जब शेरशाह सूरी ने हुमायूँ को हरा दिया था और फिर उसे देश छोड़कर भागना पड़ा था। और फिर हुमायूँ जब फिर तैयारी करके आया तो उसने सूरियों के दाँत खट्टे कर दिये।

तेजी उसे बताती थी कि बाबा नानक ने मुग़लों को वरदान दिया था।

"अब तो सुनते हैं कि अकबर महाबली का राज है। वह सुलहकुल बादशाह है। उसकी नज़र में हिन्दू और मुसलमान बराबर हैं। उसके तराज़ू में कोई पासँग नहीं। उसकी पटरानी हिन्दू है। जिसके लिए मुग़ल बादशाह ने महलों में मंदिर बनवाया हुआ है। अकबर बादशाह तो अब किसी ऐसे धर्म की शुरुआत कर रहा है जिसमें सब धर्मों के गुण होंगे। इसे उसने दीने इलाही का नाम दिया है।" कुछ देर से शैली इस तरह की बातें सुंदरी को बता रहा था।

"मुझे नहीं इस तरह की कोई बात भाती," सुंदरी के मुँह से अकस्मात् निकला। फिर वह पसीने से तर हो कर आगे पीछे देखने लगी। यह वह क्या बक रही थी।

सब सुंदरी के मुँह की तरफ़ देखने लगे। धरती फट नहीं रही थी जिसमें वह समा जाती।

तेजी के भीतर की माँ को पता था, सुंदरी क्यों इस तरह गुमसुम रहने लगी थी। क्यों इस तरह जो भी उसके मुँह में आता था, बिना सोचे उगल देती थी। लेकिन इस बीमारी का इलाज किसी के पास नहीं था। वह तो सिर्फ़ हाथ ही जोड़ सकती थी।

अमन की माँ अपने बेटे को अक्सर समझाती रहती थी कि वह अपनी बीवी के साथ ज़्यादा वक्त गुजारा करे। उसे कभी घुमाने के लिए बाहर ले जाया करे। अकेली लड़की इस तरह ऊब जाती थी, परेशान हो उठती थी, घर का काम भी कोई ख़ास ज़्यादा नहीं था, जिसमें वह अपना मन लगाए रखती। और फिर घर के काम के लिये खुद तेजी थी। नसरीन थी।

अभी सुंदरी सँभलने भी नहीं पाई थी, तेजी और शैली सुंदरी के मुँह की ओर ताक रहे थे, इसी वक्त सत्संग से लौट कर नसरीन फिर ड्योढ़ी में ही हँसने लगी थी।

"क्यों, अम्मी को आज क्या मिल गया है ?" शैली माँ से पूछ रहा था ।

नसरीन आँगन में बिछी चारपाई पर आकर बैठी तो बावलियों की तरह लगातार हँसती गई ।

आख़िर बात क्या थी ?

हँसने वाली ही तो बात थी । गुरू महाराज के एक श्रद्धालु के घर औलाद नहीं हुई थी । पक्की उम्र की औरत के साथ उसने शादी करवा ली थी । औलाद की इन्तज़ार में अब उसके अपने बाल भी सफ़ेद हो गये थे । पचास बरस की उम्र । उसकी बीवी के बाल दूध की तरह सफेद थे । पचपन से तो ज़रूर ऊपर ही होगी । लेकिन मियाँ बीवी को आठों पहर बस एक ही धुन सवार रहती, किसी तरह उनके घर में औलाद आ जाये । ज़ात का सुनार, गुरू महाराज के श्रद्धालु के पास बेहद पैसा था । ज्यों ज्यों उसकी उमर बढ़ती जा रही थी, उसे यही ग़म खा रहा था, उसका सारा पैसा , सारा सोना-चाँदी ,सारी जायदाद उसके आँख मूंदते ही पराये लोग संभाल लेगे । दोनो वक्त गुरू महाराज की शरण में आता । हाथ जोड़कर कितनी कितनी देर तक अरदास करता रहता । पहले उसने शहर में एक कुआँ खुदवाया । अब एक धर्मशाला बनवाई थी । आख़िर एक दिन उसकी श्रद्धा देखकर सत्गुरू कृपालु हो उठे । पूछने लगे पुरखा तेरी क्या याचना है ?

"आप जानी जान हैं ।" मियाँ बीवी दोनों हाथ जोड़ के सामने खड़े थे । उन्हें यह शिकायत थी कि उनके रिश्तेदार जिन्होंने सदा उनके साथ बैर कमाया था, उनके बाद उनकी सारी जायदाद, सारे जमा किये पैसे पर क़ब्जा कर लेंगे ।

"और अगर कहीं मैंने पहले आँखें मूँद लीं तो इस बेचारी मेरी पत्नी को तो वे लोग मोहरा दे कर ख़त्म कर देंगे" सुनार गिड़गिड़ा कर विनती कर रहा था ।

गुरू महाराज मेहर में आ गये । फ़रमाने लगे, "जा भाई तेरी फ़रियाद दरगाह में परवान हो गई, तू एक बच्चे के लिए विनती कर रहा है, तेरे घर दो बच्चे होंगे ।"

"इस उम्र में ?" आसपास खड़े लोग मन ही मन हैरान होने लगे । मै ख़ुद उनमें शामिल थी ।" नसरीन बता रही थी ।

"और मैं भी, " तेजी को भी यह घटना याद आ गई ।

"और आज सत्संग में सुनार और उसकी बीवी एक एक बच्चा गोद में लिये गुरू महाराज को प्रसाद चढ़ाने आये थे । उनके यहाँ दो बच्चे एक साथ पैदा हुए थे । यह कहते हुए नसरीन फिर हँसने लगी ।

"यह तो माई पोते हुए," शैली कहने लगा ।

"गुरू की मेहर हो तो अनहोनी भीं हो ही जाती है," तेजी ने कहा और फिर सुंदरी को संबोधित करते हुए बोली, "बेटी तूने तो सत्संग में जाना ही छोड़ दिया है । भला यह भी कोई बात हुई ।"

"इसकी कसर इसका घरवाला जो पूरी कर देता है," शैली कहने लगा, "अभी तक नहीं लौटा, सब के लिये सत्संग समाप्त हो चूका है । यह साहबज़ादे अभी भी हर आये

गये के साथ वार्तालाप कर रहे होंगे ।

''कुछ समय तक आदमी को घरवाली घर की तरफ़ खींचती है,'' नसरीन कह रही थी, ''जब यह खींच ख़त्म हो जाती है तो आँगन में खेलता घरवाली का बच्चा घरवाले को घर की याद दिलाता है ।''

नसरीन मौसी के बोल सुंदरी को तीरों का गुच्छा बन कर सीने में आ लगे । आये दिन ये लोग क्या किस्सा लेकर बैठ जाते थे ? कभी कोई इशारा कभी कोई । कभी मुँह चढ़ कर उसे उसके फ़र्ज की याद दिलाने लगते लेकिन इसमें उसका क्या क़सूर था ? अपने बेटे को क्यों नहीं समझाते थे ये लोग ? सुंदरी का लहू खौलने लगा ।

और वह आँगन में से उठकर कोठरी में चली गई । वहाँ क़दम रखते ही उसकी आँखों में छलछल आँसू टपकने लगे ।

सुंदरी के आँगन से जाते ही नसरीन कहने लगी, ''तेजी बहन, मेरी माने तो लड़की को गुरू महाराज की शरण में ले चल । यह बिल्कुल भली चँगी हो जायेगी ।''

शैली को औरतों की यह बात समझ में नहीं आ रही थी । वह उठकर बाहर खेतों की ओर निकल गया । एक बार निकल जाता तो फिर शाम को ही लौटता था ।

24

अमन अभी भी नहीं आया था । दोपहर हो गई, दोपहर ढल गई, शाम होने लगी, दिन की परछाईयाँ खिसकने लगीं, अब धीरे धीरे अँधेरा होने लगा था । सुंदरी का दिल उतावला हो रहा था । शैली भी सुबह का खेतों की ओर निकल गया था । उसकी बात ओर थी । खेतों में आजकल फ़सलों की कटाई हो रही थी । ख़ेतो में मज़दूर लगे हुए थे । इन दिनों तो वह अक्सर रात को खेतों में ही सो जाता था । मज़दूरों के साथ मिलकर खाते-पीते, हँसते-खेलते, ज़्यादा रात हो जाती तो वह घर लौटने का इरादा छोड़ देता ।

अमन सुबह सत्संग में शामिल हुआ था । उसके बाद किसी ने उसे ख़बर दी थी कि पत्तोंकी से आये किसी श्रद्धालु के पास उस पोथी की नकल थी, जिसे बाबा नानक ने अपने कर कमलों से तैयार किया था । अमन उसकी तलाश में भटक रहा था । कभी किसी मुहल्ले में जाता कभी किसी गली में टक्करें मारता । जिसे भी मिलता वह उसे अगले घर का रास्ता बता देता । उसके सर पर एक जनून सवार था । तेजी उससे सर खपा कर लौट आई थी । न खाने की सुध, न पीने की होश । अमन अपनी धुन में जगह जगह भटक रहा था । इसी बीच रात पड़ गई ।

काफी रात बीत चुकी थी । घर के लोग सो चुके थे । न शैली लौटा था, न अमन आया था । नसरीन और तेजी अपनी अपनी कोठरियों में सो रही थीं । कुछ दिनों से सुदरी ने बाहर परछत्ती के नीचे सोना शुरू कर दिया था । सर्दी जा रही थी, गर्मी अभी आई नहीं थी । इन दिनों बरामदे में सोना सुंदरी को बहुत अच्छा लगता था । जैसे जा रही सर्दी के पल्लू का छोर पकड़ कर कोई उसे रूक जाने के लिए कह रहा हो ।

ज्यों ज्यों रात गहरी हो रही थी, खुनकी बढ़ रही थी । ठंडी मीठी हवा चलने लगी

थी । दूर तारों भरे आकाश में चाँद जैसे मुस्कानें बिखेर रहा हो । सुंदरी काफ़ी रात तक चाँद की तरफ़ देखती रही, जैसे कोई मूक संदेश ग्रहण कर रही हो । और फिर पता नहीं कब उसकी आँख लग गई ।

बाहर गली में कोई ड्योढ़ी का दरवाज़ा खटखटा रहा था । एक बार, दो बार, तीन बार । एक मधुर ठक, ठक, ठक ! यह कौन था ? कोई होगा । सुंदरी तो नींद में निढ़ाल पड़ी थी । अभी अभी तो उसकी पलकें जुड़ी थीं । चाँद-चाँदनी से अठखेलियाँ करती हुई वह थक गई थी, बाहर किवाड़ पर ठक ठक की आवाज़ बढ़ती जा रही थी । होती रहे । घर का कोई और आदमी जाग कर दरवाज़ा खोल देगा । सुंदरी को तो बेहद नींद आ रही थी । कहीं शैली न हो । चौंक कर सुंदरी की आंखें झटपट खुल गईं । अमन भी हो सकता है । अमन नहीं होगा । कदापि नहीं । जो सारा दिन नहीं आया था । न कोई खोज न ख़बर । वह नहीं हो सकता था । बाहर ड्योढ़ी के दरवाज़े पर बहुत ज़ोर की खटखट हो रही थी । अगर शैली था तो फिर कोई उठ कर किवाड़ क्यों नहीं खोलता था ? बेचारा सुबह से खेतों से खज्जल ख़्वार हो कर लौटा था । थका हारा होगा । क्या पता भूखा प्यासा भी हो ।

और सुंदरी हड़बड़ा कर उठकर ड्योढ़ी की तरफ़ चल पड़ी । खुले आँगन, अँधेरी ड्योढ़ी । पहले वह एक चारपाई से टकराई । न जाने किसने रास्ते में चारपाई बिछाई थी और फिर उसे उठाना भूल गया था । फिर वह एक चर्ख़े से जा टकराई । यह तो रब्ब का शुक्र था कि तकला उसके टखने में नहीं घँस गया था। यह काम नसरीन मौसी का था । हमेशा चर्ख़ा बिछाकर दो चार बार हाथ घुमाती , फिर चर्ख़े को ज्यों का त्यों छोड़ कर बाक़ी के काम करने लग जाती । बुरी आदत थी । हमेशा उसका चर्ख़ा सुंदरी संभाला करती थी । बहुत बुरी आदत थी । लेकिन नसरीन मौसी खुद कितनी प्यारी औरत थी । आसपास उस जैसी माँ कोई नहीं थी । शैली में तो जैसे उसके प्राण बसते थे । उसकी बलैरयां लेती न थकती थी, ना हारती थी ।

और शैली बेटा भी कितना आज्ञाकारी था । सुंदर, सजीला और शराफ़त , मुहब्बत की साक्षात तस्वीर । आजकल उस पर खेतीबाड़ी का जुनून सवार था । जो भी काम करता उसमें ख़ूबसूरती पैदा कर लेता । हर काम लगन के साथ करता । अमन की तरह नहीं, जिस तरफ़ रूख़ किया, वहीं का होकर रह गया । न खाने की सुधि, न पीने का होश ।

यह वह क्या सोचे जा रही थी ? अजीव बहाव में बह रही थी । आगे बढ़ कर किवाड़ क्यों नहीं खोलती थी ? चौथी बार कोई दरवाज़ा खटखटा रहा था । सुंदरी को लगा, जैसे उसके हाथ पैर सुन्न हो गये हों । उसके कदम आगे क्यों नहीं बढ़ रहे थे ? कोई बाहर खड़ा था । सुनसान गली में । आधी रात का वक्त । इससे पहले कि वह आदमी लौट जाये, उसे आगे बढ़कर किवाड़ खोलना पड़ेगा । लेकिन सुंदरी के पैर मन मन के भारी हो रहे थे ।

और फिर सुंदरी जहाँ थी, वहीं बैठ गई । पँजों के भार ज़मीन पर बैठी हुई थी ।

सुंदरी, सुंदरी, तू यह क्या पागलपन कर रही है ? जैसे कोई उसके कानों में सरग़ोशियाँ कर रहा हो कोई बाहर आया खड़ा है । तेरे द्वार पर । सेहरा बाँधे, घोड़े पर

सवार । तूतनियाँ और शहनाइयाँ बज रहीं हैं । फूलों की वर्षा हो रही है । बस तूने दरवाज़ा खोलना है, कोई तुझे बाँहों में भर कर अपनी घोड़ी पर बैठा लेगा और फिर तू दूर, बहुत दूर निकल जायेगी । आकश में तैरती हुई । बदलों के आँचल में आँख मिचौनी खेलती हुई । तेरा निवास तारों के देश में होगा । ......

"बेटा, तू कैसे पँजों के बल बैठी है? देख ऊपर से दिन निकल आया है । सुंदरी की सास ने उसे झकझोर कर जगाया । "अभी तू कितना और सोयेगी, गली मुहल्ले वाले कभी के सत्सँग जा चुकें है । तेरी मौसी भी चली गई है......।"

सुंदरी आँखें खोल कर इधर उधर देखने लगी । सचमुच घूप किनल आई थी । सूरज की किरणें सामने मुँडेर तक पहुँच चुकीं थीं । थोड़ी देर बाद वे उतर कर आँगन में आ जायेंगी ।

यह सपना था । अचानक सुंदरी को ध्यान आया और वह मुस्करा पड़ी । अपनी चारपाई पर वह किस तरह पँजों के भार बैठी थी । न जाने कब से इस तरह बैठी हुई थी।

यह सोच कर सुंदरी एकदम स्तब्ध रह गई । उसे एक लोक कथा याद आई । एक शाहज़ादी थी । बेहद सुंदर । उसकी शादी की तैयारियाँ हो रही थी । एक रात नींद में उसे प्यास सी लगी । उसकी आत्मा चौंके में रखे घड़े में से पानी पीने चली गई । जब वह पानी पी रही थी, घर में किसी और प्यासे ने जाग कर घड़े में से कटोरा भर कर पानी पिया और फिर घड़े को छूणी से ढँक दिया । शहज़ादी की आत्मा घड़ें में बंद हो कर रह गई । सुबह जब घर वाले सोकर उठे तो उन्होंने देखा शाहज़ादी तख़्ते का तख़्ता चारपाई पर बेज़ार पड़ी थीं । एक कोहराम मच गया ।

पसीने से तर सुंदरी चारपाई से उठी । अपने कामकाज में जुट गई ।

25

उस दिन सुंदरी को ऐसा महसूस हुआ जैसे वह ठगी गई हो । पहली फ़ुर्सत में वह कमरे के भीतर पलँग पर जा कर लेट गई ।

सचमुच उसका मन उसे कोस रहा था-तूने किवाड़ क्यों नहीं खोला ? और फिर ख़ुद बख़ुद कोई भीतर से बोल उठा-लेकिन बाहर कोई था भी? यह तो सपना था । और उसके मुँह का स्वाद कसैला कसैला हो जाता । जैसे वह सोच रही हो-कोई बाहर क्यों नहीं था ? किसी को बाहर होना चाहिए था । उसने अपने कानों से दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ सुनी थी ।

हाँ, लेकिन सपने में जैसे कोई उसे याद कर रहा हो । वह अपने को छोटा-छोटा महसूस करने लगती । उसके चेहरे की रँगत उड़ जाती । लापरवाही में डूबी सुंदरी पलँग पर लेटी सोच रही थी -वह अमन होगा ।

अमन कैसे हो सकता था ? यह तो सपना था । वह न अमन था, न शैली था । फिर जैसे कोई इन सब बातों को पोंछ कर फेंक दे, एक अमोड़ बहाव में बह रही सुंदरी फिर सोच रही थी-वह ज़रूर अमन ही होगा । पोथियों की गठरी बगल में दबाये, एक हाथ से

गठरी संभाले, दूसरे हाथ में क़लम पकड़े। उँगलियों के पोटों पर स्याही के दाग़। कई बार तो स्याही के छींटे उसके कुर्ते और लुंगी पर भी पड़े होते थे। मालूम नहीं वह बच्चों की तरह अपने कपड़ों पर कई जगह दाग़ लगा लेता था। दरअसल जब वह लिखने बैठता था तो उसे सुधबुध नहीं रहती थी। न खाने की फ़ुर्सत, न पीने का होश। और फिर इस सारी मेहनत-मशक्कत में कुछ निकलता भी नहीं था। लोग उसे मेहनताना देते थे, बस वह उसमें से अपना ख़र्च निकाल कर बाक़ी रकम लौटा देता था। यह भी भला कोई बात हुई। भई, तेरे घर में तेरी बीवी बैठी है, कल तेरे आँगन में ------

पता नहीं वह कल कब आयेगा सुंदरी सोचती, काश अगर वह एक बच्चे की माँ होती तो उसे यह अकेलापन महसूस न होता जो आजकल महसूस होता था। फिर वह चाहे कहीं झख मारता फिरे सुंदरी को उसकी रत्तीभर परवाह नहीं हुआ करेगी। घर में बच्चा होता तो वह इस तरह दिन भर बाहर भी न रहता। बच्चे का आकर्षण उसे ज़रूर घर की याद दिलाता रहता। आजकल तो जैसे घरवालों के साथ उसका कोई सरोकार ही न हो। हर वक्त अपने काम से काम। कभी कहता गुरू नानक की लिखावट ठाकरी जैसी थी। लिखावट तो गुरू अँगद देव जी की थी, जैसे मोती पिरोये हुए हों। गुरमुखी लिपि को उन्होंने इतना सुंदर बना दिया था। देख देख कर आँखें नहीं तृप्त होती थीं। फिर कहता लिखावट तो हमारे गुरू अमरदास जी की है मंझी हुई सुंदर लिखित। हमारे गुरू महाराज तो गुरमुखी में छड़ँगे भी मार लेते हैं। कितनी तेज़ कलम चलाते हैं, जैसे कोई अरबी फारसी लिख रहा हो।

सुंदरी लेटी लेटी अलसा रही थी कि नसरीन धर्मशाला से अपना नितनेम खत्म करके घर भी लौट आई थी। आँगन में घुसते ही तेजी को बताने लगी, सत्सँग में उसकी मुलाकात अमन के साथ हुई थी। बेचारा रात को आया था। बेशक उसे देर हो गई थी। पर वह आया ज़रूर था। दो बार उसने किवाड़ खटखटाया था। लेकिन किसी ने उस बेचारे के लिये किवाड़ नहीं खोला। कैसी गहरी नींद में हम लोग सो रहे थे। वह निराश होकर फिर धर्मशाला में जाकर पड़ गया था ।

भीतर पलँग पर लेटी सुंदरी सुन रही थी। अफ़सोस होने की बजाये उसका ख़ून खौलने लगा। इस तरह के आदमी का यही इलाज होता है, वह अपने आपको समझाने लगी। न घर का न घाट का। इस तरह के लोगों की रातें सरायों में ही कटती हैं। भई बँदे ख़ुदा तू वक्त पर घर लौट। न कोई खाने का वक्त, न सोने का वक्त ।

अभी सुंदरी मन में ज़हर घोल रही थी कि शैली आँगन में आ घुसा।

"वाह भाई लोगों, आपका भी जवाब नहीं, कैसे घोड़े बेचकर सोते हो। रात मैं आया, किवाड़ खटखटाता रहा एक बार, दो बार। किसी ने दरवाज़ा नहीं खोला तो मैं लौट कर खेतों में जाकर मजदूरों के साथ सो गया।" वह ऊँची आवाज़ में शिकायत कर रहा था।

सुंदरी ने सुना तो वह आँखें मलती, मुस्कुराती हुई आंगन में आ गई। सचमुच उसने बाहर किवाड़ की खटखटाहट सुनी थी। एक बार, दो बार, तीन बार, चार बार। थोड़ी थोड़ी देर बाद किवाड़ खटखटाने की आवाज़ें आती रहीं थीं। अल्हड़ जवानी की नींद में

वह पड़ी रही थी, जागती, फिर सो जाती। बाहर दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ आती, वह उठने की सोचती, फिर नींद आकर उसे दबोच लेती।

और फिर कोई सपना जैसे उसपर हावी हो गया हो। सारी रात यूँ ही बीत गई।

सुंदरी ने एक नज़र शैली के सुंदर चेहरे की तरफ़ देखा और उसके शरीर में से एक कँपकपी तैरती हुई निकल गई।

यह तो किसी ने जैसे हाथ बढ़ाकर उसे रोक लिया हो। आधीरात। सुनसान ड्योढ़ी। और वह दीवानापन जो आजकल सुंदरी पर सवार रहता था, कल रात जिसका प्रकोप विशेष रूप से उसपर हावी था-जैसे चारों तरफ़ फिसलन हो-कोई भी ठोकर खाकर वह मुँह के बल जा गिरती। इस तरह लोक परलोक दोनों उसके हाथ मे छूट जाते।

सुंदरी सोच रही थी जैसे खडूर साहब में वे कुछ हफ़्तों के लिये अलग किराये के कमरे में रहने लगे थे, अभी भी वे वैसा ही करेंगे। बेशक अमन ने जानबूझ कर इतनी बड़ी हवेली ख़रीदी थी ताकि दोनों परिवार मिलकर रहेंगे, एक साथ खाना पका करेगा, एक साथ खाया जायेगा। लेकिन सुंदरी को आजकल अपने से ख़ौफ आने लगा था।

अगर वे अलग कमरा डलवा कर रहने लगें, और अमन का यही तौर तरीका रहा जैसा आजकल था, तो उसके दिन तो सूनी दहलीजों को ताकते हुए बीता करेंगे। सचमुच वह थक गई थी, अमन के इस जज़बे से जो उसके भीतर गुर सिक्ख के लिए था, सेवाभाव के लिये अपना लोक-परलोक सँवारने के लिए था।

यह सोचते सोचते सुंदरी के पसीने छूटने लगे। उसका दिल धकधक करने लगा ऐसा लगता जैसे धरती उसके पैरों तले से खिसकती जा रही हो। उसके भीतर भाइ मूले की बेटी थी जो ऐसा सोच रही थी, गुरू घर की श्रद्धा में नपी-तुली हुई। इतनी कुछ, इससे आगे नहीं।

एक सहमी हुई मुर्ग़ी की तरह सुंदरी कमरे में जाकर पलंग पर ढ़ेर हो गई हाथ पैरों में ताकत नहीं थी, जकड़े हुए थे। न जाने कितनी देर तक वह इसी हालत में पड़ी रहती अगर थोड़ी देर बाद अमन न वहाँ आ जाता। कह रहा था कि महाबली अकबर, शाहनशोहे हिन्दोस्ताँ, गुरू महाराज के दर्शनों के लिये गोइंदवाल आ रहा था। शहर में सफ़ाइयाँ हो रही थीं। गलियाँ मुहल्ले बुहारे सँवारे जा रहे थे। बाज़ारों में स्वागत द्वार बनाये जा रहे थे। गुरू महाराज ने बादशाह के आगमन की तैयारियों के सिलसिले में अपने सिक्खों को कुछ ज़िम्मेदारियाँ सौंपी थी अमन ने उनमें शैली का नाम भी लिखवा दिया था।

"ब्राह्मण ख़ुद तो मरा, जजमान को भी साथ ले गया।"

सुंदरी सुनकर भड़क उठी। अगले क्षण् उसे अपने आप में से जैसे बदबू आने लगी।

26

सारा परिवार कार सेवा के लिये जाता था। बस एक शैली था जिसने उधर मुंह नहीं दिया था। नसरीन जब उसे याद करवाती तो उसका जवाब होता यही सब तो मैं खेतों में

सारा दिन करता हूँ। हल चलाता हूँ। ज़मीन को हमवार करता हूँ, गुड़ाई करता हूँ, बिजाई करता हूँ कुएँ के रहट को चालू रखना, हर मेंड पर जाकर पानी लगाना, फिर खेतों की रखवाली, पक्षियों को उड़ाना, मवेशियों को त्राहना, फिर सबसे मुश्किल काम कटाई, अनाज के पूले इकट्ठे करना, दानों को सँभालना, मँडी में ले जाकर उसके बेचने का इन्तज़ाम करना। लाख खज्जल ख़्वारियाँ थीं। शैली को तो फ़ुर्सत ही नहीं मिलती थी।

ज्यों ज्यों शैली खेती बाड़ी में व्यस्त रहने लगा, उसने नित्तनेम से धर्मशाला जाना भी छोड़ दिया था। सत्संग में जैसे उसका मन ही लगता हो। दिन रात खेतों में या घर के मवेशियों के साथ उलझा रहता। कभी कोई काम कभी कोई काम।

नसरीन उसे याद करवाती–"अरे जातक, एक बार तो तू बाउली में जाकर अपने हाथ सुच्चे कर ले।" लेकिन शैली टस से मस नहीं होता था।

सुंदरी भी दो चार बार वहाँ गई थी लेकिन आजकल उसकी तबीयत ढ़ीली रहती थी, वह घर की चारदीवारी से कम ही बाहर निकलती थी।

सबसे ज़्यादा सेवा का भूत अगर किसी पर सवार था तो वह अमन था। जब भी उसे फ़ुर्सत मिलती, वह कार सेवा कर रही सँगतों का हाथ बटाने के लिये चल पड़ता। एक बार जाता तो लौटने का नाम न लेता।

उस शाम कार सेवा से लौटा तो अमन का चेहरा उतरा हुआ था। पूछने पर पता चला कि बाउली के नीचे सिल आ गई थी। श्रद्धालु गैंतियाँ चला चला कर थक गये थे, किसी की पेश नहीं गई थी।

सामने बैठा शैली क़हकहा मार कर हँस पड़ा। उसकी इस प्रतिक्रिया से सब लोग हक्के बक्के होकर उसके मुँह की तरफ ताकने लगे।

"तेरे इस क़हकहे का हमें कोई मतलब समझ में नहीं आया," अमन ने हैरानी से शैली से पूछा।

"मतलब साफ़ है। मुफ़्तखोरों के काम ऐसे ही होते हैं," शैली बोला। अगर कोई कुँआ या बाउली खोदने वाला माहिर इस काम की देखरेख कर रहा होता तो पहले वह सोच समझ कर जगह चुनता। फिर अगर नीचे पत्थर आ ही गया है तो उसे बारूद से फोड़ने का तरीका भी उसे मालूम होता। हमारे गुरू महाराज के सिक्खों के पास श्रद्धा बेशक है, लेकिन इससे ज़्यादा तो और कुछ नहीं है।

"मैं शैली से सहमत हूँ," सुंदरी तत्काल बोल उठी।

"हाय लुट गये, इतने महीनों की मेहनत मट्टी में मिलकर रह जायेगी," तेजी हाथ मल रही थी।

"वैसे घबराने की कोई ज़रूरत नहीं, नसरीन बोली," गुरू महाराज से बड़ा माहिर कौन है? हमें उनकी अगुवाई प्राप्त है। उनका हाथ हमारे सर पर है। मेरा तो दिल कहता है कि सब ठीक हो जायेगा।"

"शैली ने ख़ुद तो उधर एक बार भी रुख़ नहीं किया। बातें बनानी आसान है, तेजी

उसे ताना दे रही थी ।

''ज़रा खेतों में चलकर देखो, मैंने कायाकल्प कर दी है । इस बार हमारी फसल दुगुनी चौगुनी होगी ।'' शैली शैख़ी मार रहा था ।

'' अपनी अपनी समझ है,'' सुंदरी बोली ।

''गुरू महाराज ने फ़रमाया है कि किसी एक आदमी को बाउली में नीचे जा कर पलीता लगाना होगा । ख़तरा बस इतना है कि सिल के फटने से पानी उछल कर बाहर आ जायेगा और अगर पलीता लगाने वाले को फ़ौरन बाहन न निकाला गया तो वह पानी में डूब सकता है । ''

''लो अब यह ख़तरा मोल लेने के लिये कौन तैयार होगा ? शैली के बोल में कड़वाहट थी ।

''यह काम तुझे करना चाहिए,''नसरीन ने अपने बेटे को चुनौती दी, ''सुन्दर सजीला जवान यह काम तुम्हें अपने ज़िम्मे लेना चाहिए ।''

''इस तरह की बाउलियाँ और कुएँ ख़ून माँगते है अम्मी'' शैली ने अपनी माँ को याद दिलवाया ।

''फिर क्या हुआ? मैं तो गुरू महाराज के फ़रमान पर लाख बार अपनी जान क़ुर्बान कर दूँ'' नसरीन बोली ।

''मेरी माँ सारी उम्र भावुक रही है, ''शैली नाक चढ़ा रहा था ।

''अब जान क़ुर्बान करने के लिए कौन तैयार होगा?''सुंदरी जैसे अपने आप से पूछ रही थी ।

''मैं तैयार था । मैंने अपने आप को पेश किया था ।'' अमन की बात सुनकर सबके कान खड़े हो गये '' लेकिन मेरी बदकिस्मती जब पर्चियाँ निकाली गईं तो मानकचन्द के नाम की पर्ची निकली । ''

''इसका मतलब है कि बली का बकरा मिल भी चुका है ।'' शैली ने कहा । वह अभी तक अपने रवेये पर क़ायम था ।

''मैं तो सोचती हूँ कि किसी को इस तरह के ख़तरे में डालना बड़ी ज़्यादती है,''सुंदरी बुड़बुड़ाई ।

''तू बकती है ।'' अमन को एकदम ग़ुस्सा आ गया । उसकी आँखों में आँसू भर आये ।

''कुड़ीए, गुरू महाराज के लिये कोई अपनी जान क़ुर्बान कर सके, इससे बढ़ कर सौभाग्य किसी के लिये क्या हो सकता है ।'' तेजी सुंदरी को समझा रही थी ।

''मैं तो ख़ुद बारूद का पलीता लगाने के लिये तैयार हूँ, लेकिन मुझ औरत ज़ात की बात कोई मानेगा थोड़े ही ।'' नसरीन कह रही थी ।

अमन की अचानक डाँट खाकर सुंदरी का मन भर आया, वह उठ कर भीतर कमरे में चली गई ।

फिर सब अमन को समझाने लगे, उसे इस तरह सुंदरी पर ख़फ़ा नहीं होना चाहिए था। हरेक को अपनी राय देने का हक होना चाहिये।

अमन शर्म से घबराया हुआ था, धरती फट नहीं रही थी, कि वह उसमें समा जाता।

कुछ देर तक आँगन में ख़ामोशी छाई रही।

फिर अचानक अमन आकाश की ओर देख कर पुकार उठा, "लेकिन पर्ची मेरे नाम की क्यों नहीं निकली ?" उसकी आँखों से छल छल आँसू बह रहे थे। जैसे कोई फरियाद कर रहा हो।

"पर्ची मेरे नाम की क्यों नहीं निकली ?" एक बार, दो बार, तीन बार अमन पुकार उठा, जैसे कोई किवाड़ खटखटा रहा हो। फिर उसका शरीर बर्फ़ की तरह ठँडा हो गया। घर में सब के हाथ पैर फूल गये। कोई उसके माथे की मालिश कर रहा था, कोई उसकी टाँगे दबा रहा था। नसरीन उसके चेहरे पर पानी के छींटे मार रही थी। हड़बड़ी में कमरे से बाहर आई, बेबस खड़ी सुंदरी अपने पति के क्लेश को देख रही थी।

27

मुग़ल सम्राट अकबर गोइंदवाल गुरू महाराज के दर्शनों के लिये आ रहा था, यह अपने में एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना थी। इससे पहले बाबा नानक की मुलाक़ात मुगल बादशाह बाबर से हुई थी, जब बाबर ने बाबा नानक से वरदान पाया था। बाबर के बाद हुमायूँ खडूर साहब जाकर गुरू अँगद देव जी के दरबार में हाज़िर हुआ था। गुरू महाराज ने उसे उपदेश दिया, उसकी तसल्ली हुई। और अब महाबली अकबर तीसरी पादशाही गुरू अमरदास जी को अपनी श्रद्धा के फूल भेंट करने आ रहा था। उसका स्वागत होना चाहिये था। गुरू महाराज ने इसके लिये अपने विश्वासपात्रों की समिति स्थापित कर दी थी। लेकिन कुछ सिक्ख ऐसे भी थे, जिनकी राय में शहनशाह अकबर विशेष रूप से महाराज के दर्शनों के लिये नहीं आ रहा था, वह तो लाहौर से लौटते वक्त रास्ते में ब्यास नदी को पार करते हुए , यह जानकर कि तीसरे गुरू का आवास निकट ही है, थोड़ा चक्कर और लगा कर सत्गुरू जी को भी मिलता जायेगा। जिन लोगों की यह धारणा थी, उनमें शैली प्रमुख था।

अमन ओर ढँग से सोचता था। उसका कहना था कि अकबर सचमुच एक ख़ुदापरस्त, अमन पसंद बादशाह था। वह दिल से चाहता था कि हिन्दोस्तान में हिन्दू ओर मुसलमान सुलह-शाँति से रहें। वह तो एक ऐसे धर्म की तलाश में था जिसे पूरे देश में लागू किया जा सके। अब जब मुगलों ने यह फ़ैसला किया था कि वे हिन्दोस्तान में टिककर राज करेंगे, वह चाहता था कि दोनों कौमें एक दूसरे में एक रूप हो जायें। उसने तो हिन्दू-राजपूत रानियों से शादी करके उन्हें अपने महलों में योग्य स्थान दिया था।

शैली सुनता तो अनमने भाव से सर हिलाने लगता, पिछले कुछ दिनों से उनके सोचने के ढँग और व्यवहार में अँतर आ गया था। सुंदरी अजीब शशोपंज में थी-किसके साथ

सहानुभूति दिखाये ? किसका साथ दे ? यही हाल नसरीन और तेजी का था। हर बात पर मतभेद हो जाते, हर पड़ाव पर बहस होने लगती। वाद-विवाद। सुंदरी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। वह कभी अमन के मुँह की तरफ़ देखती, कभी शैली के मुँह की तरफ़।

आख़िर शाहनशाह अकबर आ रहा था। उसके साथ उसका लाव लश्कर न सही, कुछ दरबारी होंगे, टोडरमल ज़रूर होगा, सौ पचास और अहलकार होंगे। क्या पता कोई रानी भी हो। घोड़े, हाथी पालकियाँ। गुरू महाराज का हुक्म, गुरूसिक्खों ने गोइंदवाल को एक दुल्हन की तरह सजा दिया, बादशाह के स्वागत के सारे इंतज़ाम मुकम्मल थे। गलियाँ और बाज़ार शीशे की तरह झमझम कर रहे थे।

बस लंगर में कोई विशेष परिवर्तन नहीं किया गया था। जिस तरह का लंगर रोज तैयार होता था, उसी तरह की रसद उस दिन भी आने वाली थी। गुरू के लंगर का यह नियम था कि जो कुछ भी गुरूसिक्ख भेट में लाते, उसी को पका कर श्रद्धालुओं में बाँट दिया जाता। रात को लंगर के बर्तनों को खाली करके माँज दिया जाता। अगली सुबह फिर चूल्हे में आग जलाई जाती। घड़ो में, गागरों में फिर पानी भरा जाता। पिछली रात तहाकर सँभाले टाट फिर बिछाये जाते, रोज नये सेवादार हाज़िर हो जाते, झाड़ू लगाने वाले, लकडियाँ इकट्ठी करने वाले, खाना पकाने वाले, पानी देनेवाले, लंगर बाँटने वाले, लंगर खाने वाले यात्रियों पर पंखें की हवा करने वाले।

हर आदमी अपनी ज़िम्मेदारी को अत्यंत मुस्तैदी से निभा रहा था। इनमें शैली भी शामिल था। बेशक घर में बैठकर हर तरह के एतराज़ करता रहता था लेकिन उसकी मजाल नहीं थीं कि अपने ज़िम्मे लगे काम में कोई कोताही आने दे। गुरू महाराज अपने नित्तनेम से आम दिनों की तरह आ जा रहे थे।,

फिर जब शहनशाह का अहलकार अकबर का प्रोग्राम लेकर आया तो पता चला कि सम्राट केवल महाराज के दर्शनों के लिए ही आ रहे थे। उनके चरणों में अपनी श्रद्धा के फूल भेंट करना चाहते थे। उसके बाद वे वापिस लौट जायेंगे। शहनशाह के अहलकार और दरबारी बग़ैरह ब्याह नदी के किनारे सुस्ता रहे थे।

ईश्वर की रज़ा से राज़ी गुरू महाराज ने सुना ओर अपनी रजामँदी दे दी। कुछ श्रद्धालू जिन्होंने शहनशाह के दस्ते की तैयारी में इतनी मेहनत की थी बेशक कुछ निराश हुए, लेकिन गुरू जी ने इस तरफ़ विशेष ध्यान नहीं दिया।

शहनशाह का प्रोग्राम देखते वक्त गुरू अमरदास जी ने केवल एक तरमीम की। उन्होंने फ़रमाया कि गुरू महाराज के नियम के अनुसार उनके दर्शनों के लिये आये हर यात्री के लिये पहले पंगत में बैठकर लंगर खाना ज़रूरी होता था, साधारण श्रद्धालुओं की तरह शहनशाह अकबर पर भी यह नियम लागू होगा। सत्गुरू का यह आदेश ज्यों का त्यों मुग़ल सम्राट को पहुँचा दिया गया।

सब लोग यह जान कर अचम्भित हो रहे थे कि अकबर बादशाह ने बड़ी नम्रता से, बड़ी ख़ुशी से इसे क़बूल कर लिया। लोगों की हैरानी की हद हो गई थी। जब उन्होंने

देखा, अकबर ने गोइंदवाल में नंगे पैर प्रवेश किया । जहाँ जहाँ शहरियों ने उसके स्वागत के लिये क़ालीन और दरियाँ बिछाई थीं, उन्हें उठवा दिया गया ।

फिर जैसा तय हुआ था, महाबली अकबर सीधे लंगर की ओर पधारे । उनके स्वागत में बाहर शहनाइयाँ और तूतनियाँ, ढ़ोल और ढ़मक्के बज रहे थे । महाबली की जय के नारे लग रहे थे । लोग गा रहे थे । नाच रहे थे । बादशाह ने आम श्रद्धालुओं की तरह अनेक और यात्रियों के साथ पंगत में बैठ कर प्रसाद ग्रहण किया । इससे फ़ारिग़ होकर वह गुरू अमरदास जी के दरबार में हाज़िर हुए । गुरू नानक के गद्दीनशीन, तीसरे गुरू साहिब के दर्शन । फिर गुरू महाराज के साथ वार्तालाप । शहनशाह गदगद् हो उठा । एक पहर के लिये आया था, तीन पहर गुज़र गये ।

चलते वक्त बादशाह गुरू महाराज को अपने साथ लाये हीरे, मोती और अनेक उपहार पेश करने लगा । गुरू महाराज इसके लिये राज़ी नहीं थे । बादशाह ने कहा, आपके लंगर में हर रोज़ सैकड़ो लोग भोजन करते हैं । इस ख़र्च के लिये तो आपकी मदद हो जायेगी । गुरू जी ने बादशाह से बताया कि लंगर में जो परसा जाता था, उसकी रसद उसी दिन भेंट में आती थी । पिछले दिन का बचा हुआ भोजन परसा नहीं जाता था । अगले दिन के लिये कुछ भी बचाया नहीं जाता था । शहनशाह अकबर सुन सुन कर हैरान हो रहा था । इतने में टोडरमल गुरू महाराज की नवविवाहित बेटी भानी की तरफ़ इशारा करके कहने लगा–ठीक है, जैसे आपकी मर्ज़ी लेकिन इस दुल्हन को तो शाहनशाह इसकी हाल ही में हुई शादी पर तोहफ़ा दे सकते हैं । यह तो जैसी आपकी बेटी है वैसे ही मुल्क के शहनशाह की बेटी है । यह सुनकर गुरू महाराज के लिये इन्कार करना असंभव हो गया और महाबली अकबर लौटने से पहले 22 गाँव जागीर के तौर पर भानी को भेंट कर गया ।

उस वक्त अकबर की उम्र 24 बरस की थी । उसके चेहरे पर एक जलाल था, लेकिन गुरू महाराज के चेहरे का नूर देखकर जैसे वह मन्द पड़ गया हो ।

28

शैली के खेतों के पास गाँव में प्रेमा नाम का एक सिक्ख रहता था । उसकी दाईं टाँग बचपन से टेढ़ी थी, ठूंठ की तरह, बस कमर से साँप की केंचुली की तरह लटकी रहती । चलने के लिये बाईं टाँग से वह बैसाखी का सहारा लेकर चलता था । अपाहिज होने के बावजूद मजाल है कभी गुरू महाराज के दर्शनों का नागा कर जाये । गोइंदवाल के लिये चलने से पहले अपनी पँच कल्याण भैंस का दूध का एक लोटा भर कर लँगर के लिये ज़रूर उठा लेता था । गर्मी, सर्दी में, आँधी तूफ़ान में अपने नियम से कभी न भटकता । गुरू घर में पंच कल्याण भैंस के ताज़े दूध की प्रतीक्षा होती रहती थी ।

उस दिन बर्षा, अभी ख़त्म ही हुई थी, रात भर पानी बरसता रहा था । सड़क पर कीचड़ ही कीचड़ था । जगह जगह गड्ढों में पानी भरा था । सुबह शैली खेतों की हालत देखने के लिये गया । उसने देखा प्रेमा हमेशा की तरह लोटा बग़ल में दबाये बैसाखी के

सहारे लंगड़ाता हुआ अपनी बेढबी चाल से शहर की तरफ़ जा रहा था, जैसा उसका नित्तनेम था।

प्रेमा ने शैली को एक नज़र देखा फिर पता नहीं आँख झपकते ही क्या हुआ, उसका पैर फिसला, दूध का लोटा एक तरफ़, बैसाखी दूसरी तरफ़ जा गिरी। प्रेमा कीचड़ में लथपथ पड़ा था। शैली को उस पर बहुत तरस आया। उसने प्रेमा का लोटा सँभाला, बैसाखी उठाई और कीचड़ में लथपथ प्रेमा को उठाकर सीधा खड़ा कर दिया। अब यह देखकर शैली की हैरानी की हद न रही, प्रेमा उन्हीं क़दमों से पीछे लौट गया यह कह कर कि गुरू महाराज के लिये ताज़े दूध का लोटा लेता आऊँ। पहला दूध तो सारा गिर गया था।

"साँईं लोग, अगर सत्गुरू की सेवा से तुझे इतना ही प्रेम है तो उनसे विनती करके अपनी टाँग क्यों नहीं सीधी करवा लेता ? सत्गुरू तो टूटी हुई को फिर से साबुत कर देते है," शैली ने प्रेमा की श्रद्धा देखकर उसे सलाह दी।

यही बात तो प्रेमा के गाँव के कई लोग उसे कह चुके थे। उस दिन बुरी हालत में जब वह दोबारा दूध का लोटा लेने गया तो सभी लोग उसके कीचड़ में लथपथ कपड़ों को देखकर हँसने लगे और ताने देने लगे, "प्रेमा, तेरा सत्गुरू कैसा है जो तेरी टाँग भी सीधी नहीं कर सकता ? आज कई महीनों से तू नित्तनेम से सुबह उनके यहाँ दूध पहुँचा रहा है !"

इस तरह के ठट्ठे-मख़ौल को प्रेमा सदा सुना अनसुना कर दिया करता था।

लेकिन उस रोज़ जब वह गुरू महाराज के दरबार में हाज़िर हुआ तो घट घट के ज्ञाता गुर अमरदास जी ने प्रेमा को अपने पास बुला कर गाँव वालों के तानों की याद दिलवाई। प्रेमा अपने को छोटा छोटा सा महसूस करने लगा-बोला, "वे लोग नासमझ है, आप मेहरों के दाता हो, उन्हें माफ़ कर दीजिये।"

"लेकिन तुम्हारी टाँग भी तो सीधी होनी चाहिये।" गुरू महाराज कहने लगे। "तुझे इतनी दूर से चलकर आना पड़ता है।"

"ढ़ेर सी उमर गुज़र गई, अब थोड़ी बहुत जो रह गई है, वह भी किसी न किसी तरह निकल जायेगी।" प्रेमा दिल मसोसे सत्गुरू महाराज के आगे हाथ जोड़ रहा था।

"फिर भी तू हमारी बात मान और दरिया के किनारे शाह हुसैन नाम का एक पीर रहता है, गाँव लौटने से पहले वहाँ चला जा, वह तेरी टाँग सीधी कर देगा," सतगुरू ने फ़रमाया।"

गुरू महाराज के हुक्म की कौन अवहेलना करे, आज्ञा में बँधा प्रेमा दरिया की तरफ़ चल पड़ा। लंगड़दीन प्रेमा पीर जी की दरगाह में लगड़ाता हुआ हाज़िर हुआ। कहने लगा "गुरू महाराज ने मुझे भेजा है, आप मेरी टाँग सीधी कर दीजिये।"

पीर जी ने सुना और क्रोध में लाल पीले होकर उन्होंने पास रखा डंडा उठा लिया। "ठहर तेरी गुरू के चेले की।" पीर जी डंडा उठाकर मारने के लिये प्रेमा की तरफ़ बढ़े कि प्रेमा फ़ौरन बैसाखी पीछे भूल कर वहां से भाग गया। आगे आगे प्रेमा और पीछे

पीछे पीर जी, यही कहते जा रहे थे "तेरे गुरू ने ख़ुद क्यों नहीं तेरी टांग सीधी की, इस तरह के काम करने के लिये बस क्या मैं ही रह जाता हूं ?" उसका पीछा करते हुए पीर जी उसे अपनी दरगाह के अहाते से दूर खदेड़ आये ।

हांफता हुआ, थका हुआ जब प्रेमा रूका, तो उसने देखा उसकी टेढ़ी टांग सचमुच सीधी हो गई थी । बैसाखी तो वह पीर जी के तकिये पर ही छोड़ आया था । प्रेमा को अपनी आंखों पर एतबार नहीं आ रहा था ।

ख़ुशी से भरा, उन्हीं क़दमों से वह गुरू महाराज के यहाँ हाज़िर हुआ । इस करामात को देखकर सबने प्रेमा को बधाइयां दी । इनमें अमन भी शामिल था ।

उस शाम जब अमन घर पहुँचा तो शैली आंगन में बैठा आज सुबह सड़क पर जो प्रेमा की दुगती हुई थी उसका ज़िक्र कर रहा था । -बेचारा कीक्ड़ में सन गया था । लोटे का दूध गिर गया था- बैसाखी एक तरफ़ जा कर गिर गई थी । मैंने उसे कहा- "भई लंगड़दीन- तू गुरू महाराज से कहकर अपनी टांग क्यों नहीं सीधी करवाता ?"

यह कहते हुए शैली के बोलों में तीखा व्यंरग था जैसे वह प्रेमा की आस्था की हंसी उड़ा रहा हो । अंधविश्वास !

कुछ देर पहले आंगन में आया अमन शैली के बयान किये क़िस्से को चुपचाप सुन रहा था ।

"मुझे सिर्फ़ यही कहना है कि जिस आदमी की एक टांग टेढ़ी है, जो बैसाखी के सहारे चलता है, उसे क्या मुसीबत पड़ी है कि दूध का लोटा उठाकर कोस भर सफ़र करके दूध का लोटा उठा कर फिर आंगन में दूध पहुंचाने चल पड़े ।"

कुछ देर की ख़ामोशी के बाद शैली फिर बोला, "दूध पहुँचाना भी मेरी समझ में आता है, जिसके पास पंच कल्याण भैंस हो वह बेशक गुरू जी के यहां दूध पहुँचाये, लेकिन एक दिन का भी नागा न करना, वर्षा वाले दिन भी दूध का लोटा उठाकर चल पड़ना, इस बात की मुझे समझ नहीं आती ।"

"और मैंने उसे कहा, तू गुरू महाराज से कह कर अपनी टांग क्यों नहीं सीधी करवा लेता," शैली ने फिर इस फ़िकरे को इस अंदाज़ से दोहराया जैसे वह प्रेमा की श्रद्धा का मज़ाक उड़ा रहा हो ।

"तेरा मतलब क्या है ?" कुछ देर से उसकी बात सुन रहा अमन अब बोला । "मेरा मतलब साफ़ है," शैली पहले की तरह शेखी बघार रहा था ।

"तेरा मतलब है कि टेढ़ी टांग सीधी नहीं हो सकती ?" अमन तैश में आ गया था । उसकी आंखें अंगारों की तरह दहक रही थीं । चेहरा लाल सुर्ख़ था । उसका शरीर आवेश से कांप रहा था ।

शैली ख़ामोश था ।

"तेरा मतलब है कि ढेढ़ी टांग सीधी नहीं हो सकती ? अमन फिर पूछ रहा था । उसके चेहरे से जैसे आग बरस रही थी ।"

शैली चुप। सुंदरी चुप। एक अनमनी अनमनी सी ख़ामोशी बाक़ी घर वालों के चेहरों पर छाई हुई थी।

एक क्षण, दो क्षण, तीन क्षण की ख़ामोशी के बाद अमन बोला, ''हजूर को यह सुनकर हैरानी होगी कि प्रेमा की टांग सीधी हो गई है।''

अमन के मुंह से यह बोल सुनकर सारे परिवार की आँखें जैसे फैली रह गईं। सब एक दूसरे की ओर ताक रहे थे।

शैली को लगा जैसे किसी ने उसके चेहरे पर थप्पड़ दे मारा हो। वह अपने गालों को सहलाने लगा।

29

कोई श्रद्धालु स्यालकोट से सुंदरी की मां की सिफ़ारिश लेकर आया, साथ ही उसने ढेर सी सौग़ातें भेजी थी। परिवार के हर प्राणी के लिये अलग अलग जोड़े, मिठाइयां और कितनी सारी चीज़ें। सुंदरी के पास पहले से ही ढेरों गहने कपड़े थे जो संभाले नहीं जाते थे। उसकी मां ने और भेज दिये थे। पूरा बोझ।

सुंदरी का स्वभाव आजकल चिड़चिड़ा हो रहा था। ख़ुश होने, कृतज्ञ होने की बजाये इस सारे तकल्लुफ़ पर वह नाक चढ़ाने लग पड़ी। जैसे किसी के सर मे दर्द हो रहा हो और उसके सामने ढेर से पकवान रख दिये जायें। सुंदरी का दिल घबराने लगा। उसे आस पास का वातावरण जैसे काटने को दौड़ रहा था। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। दीवारें और छतें जैसे उसे खाने को दौड़ रही थीं। उसका मन करता कहीं निकल जाये। अमन के साथ तो जैसे उसका ख़ुदा वास्ते का बैर हो गया था। उसकी कोई हरकत भी तो सुंदरी को नहीं भाती थी। अक्सर उनमें बहस होने लगती थी। उसे यह देखकर ख़ास तौर पर हैरानी हो रही थी कि जब भी अमन और शैली में कोई वाद विवाद छिड़ता था, सुंदरी अपने आपको शैली के साथ सहमत पाती। उसे अपने आपसे डर लगने लगता।

उस दिन भी कुछ इसी तरह की बातें हों रही थी। स्यालकोट से आया श्रद्धालु अमन की मदद लेकर गुरू महाराज के यहाँ हाज़िर हुआ। परमार्थ के रास्तें की तलाश में था। एक ही अभिलाषा थी कि परलोक सँवर जाये। आवागमन के चक्र से छुटकारा मिले।

गुरू महाराज उसकी विनती सुनते रहे। फिर उन्होंने उसे मशविरा दिया–''भाई तू ऐसे कर इसी शहर में दुकान खोल ले। व्यापार कर। व्यपार में अपना हाथ सुच्चा रख़ना। तेरा यह जन्म भी सफल हो जायेगा, अगला जन्म भी सफल हो जायेगा, मेहनत करना और बाँट कर खाना, यही परमार्थ है। इससे बेहतर परमार्थ का मार्ग दूसरा कोई नहीं है। सत्गुरू नानक ने भी यही रास्ता दिखाया था।'' जब अमन आँगन में बैठा यह किस्सा सबको सुना रहा था, शैली भी सुन रहा था। इससे पहले कि कोई दूसरा बोलता, वह बोल उठा :

''मेरी तो हमेशा से यही धारणा रही है। मेहनत और मशक्कत की कमाई ही सबसे

बड़ा पुन्न है । मुझे तो खेतों में हल चलाते हुए घास काटते हुए जो आनंद आता है, वैसा आनंद कभी नहीं आया । न पाठ में, न पूजा में । न अर्चना में, न बँधनों में । कई बार हल चलाते हुए हल की नोक जब कँवारी धरती में लँबी लकीर खेंचती है तो मुझे लगता है जैसे में जन्नत में अपना रास्ता उलीक रहा होऊँ । खेतों के लिये रहट वाले कुँए को पानी उलीचता देख कर मुझे गोते आने लगते हैं । जैसे कोई मेरे मुंह पर पिचकारियाँ मार रहा हो। भरपूर खेतों को पके हुए सिट्टे बाले, गढ़ी हुई दानों से भरी गेहूँ की बालियों देखकर मुझे उच्छू आ जाते हैं । कटाई कर रहे खेत मज़दूरों की गहमा गहमी, बालियोँ रौंदते हुए बैलों के घुंघरुओं की झनकार सुनकर मुझे लगता है जैसे किसी ने शादी रचाई हो । अगली फसल की इन्तज़ार में ख़ाली पड़ी धरती मुझे ऐसी मालूम होती है, जैसे कोई गोरी टाँग, बाँहें सुस्ती में फैलाये लेटी नींद में सपने देख रही हो ।

शैली इस तरह बोलता जा रहा था और उसे अपलक देखती हुई सुंदरी एक नशे में मख़मूर होती जा रही थी । उसके चेहरे पर एक ललक, एक उदासी छाई थी जैसे उसकी मानसिक दशा का चीरहरण हो रहा हो । यह सुंदरी कल कैसी थी, आज कैसी लग रही थी ।

गुरू महाराज के उस आदेश के बाद शैली की जैसे तड़ मच गई हो । उसने साध-संगत में शामिल होना बिल्कुछ ही छोड़ दिया । कई कई दिन बीत जाते, नसरीन उसे याद करवाती रहती, वह सुनी अनसुनी कर जाता ।

इधर अमन था । ज्यों ज्यों शैली खेतों की ओर ज़्यादा ध्यान देने लगा था, अमन ने खेतों की खोज ख़बर लेनी भी छोड़ दी थी । शैली अगर कहीं गया होता और खेतों में कोई ज़रूरत आ पड़ती तो अमन कन्नी कतरा जाता । उसकी ज़िम्मेदारी सुंदरी या परिवार का कोई दूसरा आदमी निभा लेता । एक बार खेतों का चक्कर लगाकर जब सुंदरी लौटती तो बहुत देर तक वहाँ की बातें करती रहती । खेतिहरों, हलवाहकों के साथ दोस्ती, सहलाया जोड़ आती । जाते वक्त अपने साथ उनके बच्चों को लिए कोई न कोई सौग़ात ज़रूर ले जाती । पूरी पूरी दोपहर उनके बच्चों के साथ खेलती रहती । कभी कभी किसी को अपने साथ भी ले आती । उसकी कोई न कोई ख़ातिर करती रहती ।

ज्यों ज्यों शैली खेती बाड़ी के काम में ज़्यादा ध्यान देने लगा था, घर में ज़्यादा ख़ुशहाली दिखाई देने लगी थी । नसरीन और तेजी गुरू के लंगर के लिये कोई न कोई भेंट ढ़ोती रहतीं । मजाल है कभी ख़ाली हाथ जाये । लंगर में भी शैली के खेतों के अनाज की, सब्जियों की चर्चा होने लगी । हर मौसम हर बहार की भाँति भाँति की तरकारियाँ शैली के खेतों में से उतरतीं । धीरे धीरे शैली के खेतों की उपज की चर्चा सारे इलाक़े में होने लगी । उसके खेतों के बीजों की माँग बढ़ने लगी । पहले उसके दो रहट थे, अब उसने दो और कुएँ खुदवा लिये थे, पहले भी उसके पास काफ़ी ज़मीन थी । अब उसने आसपास की और ज़मीन ख़रीद कर अपनी जायदाद के साथ मिला ली थी ।

उस दिन शैली ने नई ख़रीदी ज़मीन से किसी टुकड़े की रक़म अदा करनी थी । घर

में पूरी रकम न होने के कारण वह किसी साहूकार से उधार लेने की बात सोच रहा था। यह सुनकर सुंदरी अपने कमरे में गई और अपने कुछ गहने निकालकर उसने शैली के हाथ में रख दिये। परिवार में सभी की राय थी कि शैली को अपना काम चला लेना चाहिये। लेकिन वह राज़ी न हुआ। वह बार बार यही कहता था "मैं यह पाप नहीं करूँगा" क्या पहले हमने अपने गहने नहीं बेचे? तेजी ने उसे याद करवाया। "जेवर होते किसलिए हैं? फिर सुंदरी जैसी लड़की को गहनों की क्या ज़रूरत है ? उसके चेहरे की तरफ़ तो वैसे भी नहीं देखा जाता। इसके जैसी जवानी अपने-आप में एक गहना होती है।"

सामने बैठ कर सुन रही सुंदरी अपने दुपट्टे से सर ढँकने लगी। दुपट्टे को उसने और कसके ओठ लिया। ऐसे में वह ओर भी सुंदर लगने लगी। जैसे सितम ढ़ा रही हो।

अपने काम से काम, अमन ने घर के मामलों में कभी दख़ल नहीं दिया था। अब तो अपने साथ ख़ुशखत-नवीसी के लिये उसने कई और लड़के भर्ती कर लिये थे। जैसे उसके शार्गिद हों सभी उसे "उस्तादजी" "उस्तादजी" कह कह पुकारते थे।

लाख कोशिशों के बावजूद सुंदरी उसके पेशे में शामिल नहीं हुई। बहुत हुआ तो उसके लिए स्याही पका देती थी। कलमें घड़ कर तैयार कर देती थी। इससे ज़्यादा उसके पेशे से सुंदरी ने कोई रिश्ता नहीं पाला था।

30

कुछ दिनों बाद गढ़शंकर से गंगू नाम का निवासी गुरू महाराज के दर्शनों के लिए गोइंदवाल हाज़िर हुआ। गंगू का अच्छा भला साहूकारा था। लेकिन क़िस्मत ने उसका साथ देना छोड़ दिया था। घाटे पर घाटे पड़ने लगे। एक के बाद एक आसामी टूटती गई। नौबत यहाँ तक पहुँच गई कि बेचारे गंगू को घर बार छोड़कर चाकरी की तलाश में बाहर जाना पड़ा। वह भटक रहा था कि किसी ने उसे गोइंदवाल जाने का सुझाव दिया। गुरू महाराज के दर्शनों के लिये आया था, उसके पास भेंट देने के लिये गुड़ की एक भेली थी। जब उसने देखा, दरबार में बड़े बड़े धनी लोग आये हुए थे। भारी रक़में भेंट की जा रही थीं। कीमती दुशाले और सौग़ातें हाज़िर की जा रही थीं, बेचारा गंगू अपनी छोटी, तुच्छ भेंट के लिये उदास एक कोने में बैठा रहा। जानीजान गुरू महाराज कुछ देर प्रतीक्षा करते रहे, जब भीड़ कम हुई तो उन्होंने ख़ुद इशारे से गंगू को बुलाया। गंगू सतगुरू के चरणों में गिर पड़ा। अपनी तुच्छ सी भेंट पेश की। गुरू जी गुड़ की भेली को पाकर अत्यंत प्रसन्न हुए। उसमें से एक टुकड़ा तोड़ कर ख़ुद रख कर बाक़ी भेली को संगत में बाँटने का आदेश दिया।

गंगू ने जब अपनी दशा गुरू महाराज को बताई तो मेहर में आये सतगुरू ने फ़र्माया- आप दिल्ली चले जाइये। वहां आपका व्यापार पहले की तरह चल पड़ेगा।

गंगू ने ऐसा ही किया। थोड़े ही दिनों में उसके वारे न्यारे होने लग पड़े। लहर बहर हो गई।

यहाँ तक कि एक बार दिल्ली के नवाब को लाहौर के लिये एक लाख मोहरों की

हुंडी दरकार थी। कोई साहूकार इतनी हैसियत का नहीं था। गंगू ने सुना तो हुँडी पेश कर दी। यह देख कर चारों तरफ़ उसकी चर्चा होने लगी। सरकारी दरबार में भी उसकी साख बढ़ गई।

इन्हीं दिनों दिल्ली में गुरू महाराज के एक श्रद्धालु की बेटी की शादी थी। गुरू महाराज उसकी मदद के लिये कुछ रकम भेजना चाहते थे। उन्हें गंगू का ध्यान आया और उन्होंने मामूली सी रक़म की हुँडी गंगू को भिजवाई।

गंगू ने जब हुँडी देखी तो धन के खुमार में अँधा होकर उसके भीतर के व्यापारी ने यह कह कर हुँडी लौटा दी कि गुरू महाराज के ख़ाते में तो उसके पास कोई रक़म नहीं थी।

गुरू महाराज को जब यह पता चला तो उन्होंने किसी और वसीले से अपने श्रद्धालु का काम चलाया, लेकिन उसी दिन से गंगू का हाथ तँग होने लगा। जिस काम में पैर डालता उसे ठोकर लगती और वह औंधा जा गिरता। एक घाटा, दूसरा घाटा, उसकी रक़मों की अदायगी बंद हो गई, गुमाश्ते जवाब दे गये और कुछ दिनों बाद ही सब कुछ फिर ठप हो गया। गंगू फिर दो जून की रोटी के लिये लाचार हो गया। फिर भूख छा गई।

गंगू को चारों तरफ़ अँधेरा दिखाई देने लगा। कोई दोस्त नहीं, कोई मददगार नहीं। बस रौशनी की एक किरण गोइंदवाल से आ रही थी। लेकिन गोइंदवाल किस मुँह से जाता? आख़िर कार जब उसे कहीं भी सहारा नहीं मिला, किसी ने भी गंगू का हाथ नहीं थामा तो वह डूबे दिल से नंगे पैर गुरू महाराज की नगरी की ओर चल पड़ा।

गोइंदवाल पहुँच कर उसी सत्गुरू के सामने हाज़िर होने की हिम्मत नहीं हो रही थी। साध–संगत में सर छिपाये, नजरे नीची करके बैठा रहता। दिन रात लंगर की सेवा करता, धर्मशाला में झाडू लगाता, पँखा डुलाता, यहां तक कि एक जगह निर्माण का काम हो रहा देख कर वह सर पर ईंटें ढ़ोने लगा। ईंटें ढ़ोता, पानी भरता, आठों पहर सेवा में व्यस्त रहता।

इसी तरह कई महीने बीत गये। आख़िर गुरू महाराज की कृपादृष्टि गँगू पर पड़ी। उन्होंने उसे बुलवा भेजा। गंगू सत्गुरू के चरणों में गिर पड़ा। गिड़गिड़ा कर रो रहा था। उसे धन दौलत नें अँधा कर दिया था। अब हाथ जोड़कर माफियाँ माँग रहा था।

गुरू महाराज ने उसे हौसला दिया। उसके सर पर हाथ रखा और इस बार उसे मशवरा दिया कि सिरमौर की रियासतों की मँजी वह सँभाल ले और उस इलाक़े में सिक्खी का प्रचार करे।

अब इस क़िस्से की जब घर में चर्चा हुई तो अमन की टाँग जैसे ऊँची हो गई हो। "दुनियाँ की सारी प्राप्तियाँ यही की यहीं धरी रह जाती है," वह बार बार कह रहा था। असली धन ईश्वर का नाम है। यह ऐसी सामग्री है जो आदमी के साथ जाती है, बाक़ी सब कुछ मिथ्या है।"

"ऐसी बात नहीं," तेंजी बीच में बोल पड़ी," न वह पूरा सच है जो उठते बैठते

शैली कहता है, न ही यह पूरा सच है, जो अमन सोच रहा प्रतीत होता है। सच इन दोनों जुगतों के बीच में हैं।

और तेजी ने मौंडियाले के हिंदाल का किस्सा सुनाया। वे लंगर की सेवा करते थे। पहले आटे को छानते फिर गुंथने की ज़िम्मेदारी उन्होंने अपने सर पर ले रखी थी। ईश्वर का संयोग, एक दिन जब भाई हिंदाल आटा छान रहे थे तो गुरू अमरदास लंगर की तरफ़ आ निकले। सब लोग काम छोड़ कर गुरू जी को आदर देने लगे। लोग उनके आगे माथा टेकते, चरणधूलि ग्रहण करते और इस तरह अपना लोक परलोक सँवारते।

सब गुरू महाराज का चरण स्पर्श कर रहे थे, लेकिन भाई हिंदाल की मजबूरी, उनके हाथ आटे में सने थे, वे सत्गुरू के चरणों में गिरे तो कैसे ? आख़िर सोच सोच कर वे आगे बढ़े और अपने दोनों आटे से सने हाथों को अपनी पीठ के पीदे छिपाते हुए, अपना शीश महाराज के सामने निवा दिया।

गुरू जी भाई हिंदाल के सेवा भाव और गुरू भक्ति को देख कर अत्यन्त प्रसन्न हुए और भाई हिन्दाल को सीने से लगा लिया। यही नहीं अपना परना भी उन्होंने हिंदाल को बख़्शा।

कुछ दिनों बाद भाई हिंदाल को जंडियाला की मँजी बक्शी गई। शायद तेजी का इशारा अधिक सूक्ष्म था। शायद वह अपने जीवन के ढाँचे में बहुत आगे निकल चुका था, शैली पर तेजी की वार्ता का कोई असर नहीं हुआ, वह वैसे का वैसा अनभीगा रहा। पहले की तरह खेतों की सरदर्दी में उलझा रहता, उसका वही रवैय्या जारी रहा। मवेशियों के साथ मवेशी बना रहता, कोई न कोई समस्या उसे परेशान रखती। सत्संग तो उससे बिल्कुल ही छूट गया।

31

उन दिनों गोइंदवाल में किसी न किसी कवि दरबार या संगीत दरबार का आयोजन होता रहता। शहर में बेहद गहमा गहमी रहती थी। गुरू महाराज के निमंत्रण पर कवि और संगीतकार आते, कितने कितने दिन ठहर जाते। कवि अपनी कविता की सुधाई करते संगीतकार संगति की शिक्षा प्राप्त करते, शास्त्रीय सँगीत की जितनी समझ गुरू अमरदास जी को थी, उतनी आसपास के इलाके में किसी को नहीं थी। कवियों में भाई गुरदास जी बेशक सबसे शिरोमणि थे। संगीताचार्यों में कल्ल, सहार, जालप, भिखा जी, और सल्ल के नाम हर किसी की ज़ुबान पर थे।

उस शाम के दरबार मे कई प्रमुख भट्ट शामिल हो रहे थे। धर्मशाला के आँगन में, पंडाल के नीचे बेहद रौनक थी। गुरू महाराज की उपस्थिति में ''कल्ल जी ने यह रचना पेश की :

सोई पुरखु सिवरि साचा जाका इकु नामु अछलु सँसारे ॥
जिनि भगत भवजल तारे सिमरहु सोई नामु परधानु ॥
तितु नामि रसकि नानकु लृहणा थपिउ जेन सर्ब सिद्धी ॥

कवि जन कल्ल सबुद्धी कीरति जन अमरदास बिस्नारीया ॥

× × × × ×

कीरति रवि किरणि प्रगटि सँसारह साख तरोवण मवलसरा ॥
उतरि दखिणहि पुबि अरु पश्चिमी जै जैकार जपँथि जरा ॥
हरि नामु रसनि गुरमुखि बरदायउ उलटि गँग पश्चिमी धरीआ ॥
सोई नामु अछलु भगतह भव तारणु अमरदास गुर कउ फरिया ॥

अपनी रचना में कल्ल जी ने गुरू नानक देव जी से लेकर गुरू अमरदास जी तक हर पातशाही को अपनी श्रद्धा भेंट की ।

कितनी देर तक उनकी वाह वाह होती रही । संगत उनकी पंक्तियों को बार बार सुनती और आनंद मानती ।

"कल्ल" जी जब अपनी रचना सुना कर मंच से उतरे तो "सल्ल" जी की ओर इशारा किया गया । सल्ल जी ने गुरू अमरदास जी की स्तुति में यह रचना पेश की :

पहिरि समाधि सनाहु गिआनि है आसनि चढ़िअउ ॥
धर्म्म धनखु कर गहिउ भगत सीलह सरि लडिअउ ॥
भै निरभउ हरि अटलु मनि सबदि गुर नेजा गडिउ ॥
काम क्रोध लोभ मोह अपतु पँचदूत बिखँडिओ ॥
भलउ भूहाल तेजो तना निृपति नाथ नानक बरि ॥
गुरू अमरदास सचु सलृ भणितै दल, जितउ इव जुद्ध करि ॥

अमन गुरू महाराज की स्तुति सुनकर विभोर हो रहा था । सुंदरी को 'कल्ल' और "सल्ल" की भाषा की पंडिताई से अलखत हो रही थी, लेकिन अमन एक एक पँक्ति का जी भर भर कर आनन्द उठा रहा था क्योंकि उसे हर रोज़ इस तरह की भाषा से वास्ता पड़ता था ।

दरबार की ख़बर सुन कर शैली भी उनके साथ आकर शामिल हो गया । ऐसा लगता था जैसे शैली सुंदरी के साथ सहमत हो । कहने लगा, गुरू महाराज की स्तुति बेशक है, लेकिन जो सादगी गुरू अमरदास जी की वाणी में है, इन लोगों की भाषा में नहीं ।

"कल्ल", "सल्ल" के बाद "भल्ल" की बारी थी । उन्होंने अपनी यह रचना सुनाई :

घनहर बूँद बसुअ रोमावलि कुसम बसँत गनँत न आवै ॥
रवि ससि किरणि उदरु सागर को गँग तरँग अँतु को पावै ॥
रूद्र धिआन गिआन सतिगुर के कबि जन भल्लृ उनह जो गावै ॥
भले अमरदास गुण तेरे तेरी उपमा तोहि बनि आवै ॥

अमन की आदत हो गई थी कि वह शैली की बातों को अक्सर सुना अनसुना कर देता था । "भल्ल" की रचना सुनकर वह "भले अमरदास गुण तेरे तेरी उपमा तोहि बनि आवै ।" की पंक्ति को बार बार गुनगुना रहा था । एक स्वाद स्वाद में, एक नशे नशे में विभोर हो कर ।"

यह देखकर शैली कहने लगा, "बस यही मैं कहता हूँ। कविता में यह गुण होना चाहिये कि उसकी पंक्तियाँ सुनने वाले की ज़बान पर चढ़ जायें। जैसे यह पंक्ति है। "भले अमरदास गुण तेरे तेरी उपमा तोहि बनि आवै।" मुझे यकीन है कि सैंकड़ों बरस बाद भी यह तुक लोगों की ज़बान पर हुआ करेगी।"

शैली इस तरह बोल ही रहा था कि "जालप" जी मँच पर आये और अपनी रचना पेश करने लगे :

तिनर दुख नह भुख तिनर निधन नहु कहीअहि ॥
तिनर सोकु नहु हुअै तिनर से अँतु न लहीअहि ॥
तिनर सेव नह करहि तिनर सय सहस समपाहि।
तिनर दुलीचै बरहि तिनर उथपि विथपहि ॥
सुख लहहि तिनर सँसार महि अभै पदु रिपमधि तिह ॥
सकयब तिनर जलपु भणै गुर अमरदास सु प्रसँनु जिह ॥

उधर "जालप" जी अपनी रचना पेश करके हटे इधर शैली ने उसपर अपनी टिप्पणी शुरू कर दी। वह कह रहा था जो रवानगी, जो प्यार गुरबाणी में है, इस कविता में वह मुझे महसूस नहीं होता।"

"तुझे महसूस नहीं होता," नसरीन ने खफ़ा होकर शैली को डांटा, "क्योंकि तुझमें श्रद्धा की कमी है। इस तरह की रचना का आनन्द तभी माना जाता है जब सुनने वाला उसमें अपने आपको समो दे।

"हम तो मट्टी के साथ मट्टी होने वाले खेतीहर हैं।" शैली ने अपनी माँ की बात को ठट्ठे में समेटा। इतने में "भिखा" जी मंच पर आकर अपना कलाम पेश कर रहे थे :

गुर, गिआन, अरु धिआन, तत सिउ ततु मिलावै ॥
सचि सचु, जाणीअै एक चितहि लिव लावै ॥
काम क्रोध वसि देसि हुकम बूझि बीचार पावै ॥
कलि माहि रूप करता पुरखु सो जाणै जिनि किछु कीअउा ॥
गुरू मिलिउ सोइ भिखा कहै सहज रँगि दरसनु दीअउ ॥

"भिखा" जी ने अपनी रचना समाप्त की तो सब वाह वाह कर रहे थे, लेकिन लगता था जैसे शैली को तसल्ली न हुई हो। वह सर मार रहा था। और सर मारते मारते वह उठ कर चल पड़ा। सब उसके चेहरे की ओर देखते रह गये।

नसरीन सोचने लगी कहीं उसका बेटा गुरू घर से विमुख तो नहीं हो रहा था। यह सोच कर उसका दिल बैठ जाता था। यह कभी नहीं हो सकता था। उसकी इतने बरसों की तरबीयत और फिर उसे तो गुरू महाराज का आशीर्वाद प्राप्त था। वह गुरू घर से कभी विमुख नहीं हो सकता था। उसे अपनी आस्था पर पूरा भरोसा था। उन संस्कारों पर विश्वास था जो उसने अपने जाये में कूट कूट कर भरे थे।

शैली जब इस तरह की बातें करता सुंदरी को भी उससे बड़ा डर लगता था। वह तो

उसकी प्रशंसक थी और वह कैसी बातें करने लगता था। उसका मन करता, शैली कुछ इस तरह की बातें करे कि वह उसे और अच्छा लगने लगे।

उस शाम आँगन में बैठी सुंदरी को कुछ ऐसा ही महसूस हो रहा था, जब अमन गुरू अमरदास की बाणी का ज़िक्र करता हुआ बार बार इस बात पर ज़ोर दे रहा था कि गुरू महाराज की बाणी का मुहावरा बड़ा आम फ़हम होता है। ऐसा लगता हैं जैसे कहावतें और आख्यान उसमें घड़े हुए हो। उनकी वाणी हर किसी की ज़बान पर चढ़ जाती है। सरल और साधारण, जैसे उसमें कोई मँत्र फूँका हो। और फिर अमन इसके उदाहरण देने लगा, 'भगता ते सैसारिआ जोड़ कदे ना आइआ,' 'गुरमुखि बुड्डे कदे नाहीं,' 'जिना अँतरि सुरत गिआन,' जिस ही की सिरकार है, तिस ही का सभु कोय, मनि मैले सभु किछु मैला, पराई अमाण किऊर रवीयै, 'दिती ही सुख होई,' जो दिल साधे सोई हाजी, विण चाखे साद किसै न आइआ, 'परथाइ साखी महापुरख बोलदे, साझी सगल जहानै, 'लोभी का वेसाहु न कीजै' मन तू जोति सरूप है, 'अपना मूल पछाण, मिठा सो जो भावदा,' सजण सो जिण रास, अैसा कम्म मूले ना कीचै जित, अँति पछोताईअै, 'सच्च पुराणा न थीअै, नाम न मैला होइ,' हउमै नावे नालि विरोध है, 'माइआ होई नागनी जगति रही लपटाइ,' सभना का मा-पिउ आप है, 'गुरबाणी इस जग महि चाणनि।'

यह सुनकर शैली गुरू महाराज की विद्वता का ज़िक्र करने लगा। वह तो अमन को भी मात कर रहा था। सुंदरी को इस बात का ज्ञात तो था कि राग विद्या से शैली को लगाव था। कभी कभी ख़ुद गाता भी था लेकिन उसे यह मालूम नहीं था कि गुरू महाराज के संगीत के इस का वह इस कदर जानकार था। शैली अनायास ही कुछ इस तरह बोलता जा हरा था :

"बेशक गुरू महाराज एक महान कवि हैं। लेकिन गुरू नानक की जो शास्त्रीय संगीत की परंपरा थी, गुरू अमरदास जी ने उसे बखूबी संभालकर रखा हुआ है। इसके संकेत उनकी वाणी में कदम कदम पर मिलते हैं।" और फिर वह उदाहरण देने लगा।

"बिलावल के बारे में उन्होंने फरमाया है, "बिलावल तब ही कीजीअै जब मुखि होवै नामु ; उनकी दृष्टि में श्री राग सबसे उत्तम राग है विशेष कर उन लोगों के लिये जिन्होंने सच का आसरा लिया है-"रागों विचि स्रि रागु है राग है जे सचि धरे पिआरु ऐसे ही गौड़ी राम अपने स्वभाव के कारण मीठा और गंभीर राग है-"गउड़ी राग सुलखणी जे खसमै चिति करै। इसके द्वारा ईश्वर की स्तुति की जाती है। गुजरी राग श्रृंगार रस का राग है, ईश्वर के लिए जीवात्मा की तड़प की इसमें व्याख्या की जा सकती है-"गूजरी जाति गवारि जासहु पाऐ आपणा।" मल्हार शीतल राग है, वगैरह वगैरह।

अमन की गुरबाणी के बारे में वाकफ़ीयत देखकर सुंदरी के मन पर जो प्रभाव पड़ा था, शैली ने जैसे एक झटके से उसे मलियामेट कर दिया। जैसे किसी बच्चे ने स्लेट पर मुहारनी उकेरी हो और फिर वह उस पर पोचा फेर दे। कुछ इसी तरह फटी फटी आँखों से भाई मूले की बेटी कभी अमन की ओर देखती, कभी शैली की ओर।

जब वह इस संशय की हालत में थी, शैली को न जाने क्या सूझी वह कहने लगा, "मुझे तो लगता है अब अगली मँजी गुरू महाराज अपने अनिन सेवक भाई अमन को प्रदान करेंगे।"

"वह क्यों ?" सुंदरी के मुंह से अनायास निकल गया।

"प्रसाद कोई पूछ कर दिया जाता है ?" जब मेहर होती है, दात झोली में आ गिरती है। शैली जैसे अमन की टांग घसीट रहा था।

"अगर इस तरह की महानता हमें बख्शी जाये तो हम कितने शुक्रगुजार हों" तेजी बोली

"नहीं " यह सुनकर सुंदरी की जैसे चीख निकल गई।

अगले ही क्षण उसे अपने आप पर शर्म आने लगी। गुरू महाराज ने फैसला किया था कि बाईस उत्तम प्रचारक चुनकर देश विदेश में मंजिआं स्थापित की जायें। इन बाईस महान शख्सीयतों में अगर अमन शुमार हो जाये तो इससे बड़ा सौभाग्य और क्या हो सकता है ?

32

वह गोइंदवाल नहीं छोड़ना चाहती थी, क्योंकि वहाँ शैली था। सुंदरी ने अपने मन को टटोला। सुंदरी को यह सच्चाई एक सैल पत्थर की तरह सर उठाये दिखाई दी। वह सर से पैर तक काँप गई। उसे अपने आप से डर लगने लगा।

इस तरह का ख़ौफ जब उसके ऊपर हावी होता तो वह सोचती बेशक बेशक अमन को मंजी मिल जाये। गुरू महाराज द्वारा सौंपी जा रही मंजियों का आजकल इतना चर्चा था। कई श्रद्धालुओं पर अनुग्रह किया जा रहा था। कई आस लगाये बैठे थे। कुछेक की मनोकामना पूरी हो गई थी, कुछ निराश बैठे थे। जो मंजियां स्थापित हो गईं थीं उनकी कारगुज़ारी की ख़बरें भी आने लगी थीं, जैसा गुरू महाराज ने सोचा था, सारी सिक्ख संगत सँगठित हो रही थी। जगह जगह पर श्रद्धालुओं की ज़रूरतें स्थानीय तौर पर पूरी की जा रही थीं। उनके द्वारा भेंट किया गया समान और चढ़ावा गोइंदवाल पहुँच रहा था।

ज्यों ज्यों मंजियाँ क़ायम करने की योजना सफल हो रही थी, गुरू महाराज इस तरफ़ अधिक ध्यान दे रहे थे। इस संगठन को और अधिक नियमबद्ध कर रहे थे।

शैली की राय थी कि गुरू महाराज ने बाईस मंजियां स्थापित करने की योजना इसलिये बनाई थी क्योंकि मुग़ल सम्राट अकबर ने सरकारी राज्यप्रबंध के लिये देश को बाईस सूबों में बाँटा था।

"और क्या? अमन ने चिढ़कर कहा "सत्गुरू अकबर से क्या कम महान हैं ?"

"मैंने यह तो नहीं कहा, "शैली से सफ़ाई पेश की। मैंने तो सिर्फ़ इतना ही कहा है कि देश में बाईस सूबे होंगे और बाईस मंजियां होंगी। "

फिर थोड़ी देर की ख़ामोशी के बाद शैली ने धीमे से यह जोड़ा," और इनमें से एक हमारे भाई अमन को बख़शी जा रही है।" इसमें कोई सच्चाई नहीं थी। अमन का नाम

किसी के दिल दिमाग में भी नहीं था । न ही गुरू महाराज के, न किसी और के । शैली जान बूझकर यह शीशा छोड़ रहा था । उसे जब भी मौक़ा मिलता वह यह शोशा छोड़ देता । उसे यह भी मालूम था कि अमन को यह सुनना अच्छा लगता था । अमन को यह प्रसंग जितना भाता था, सुंदरी को इससे उतनी ही घबराहट होती थी । जब भी सुनती, उसको हाथ पाँव की पड़ जाती ।

और इस बात का एहसास कि यह तजवीज़ अमन को मंजूर थी, सुंदरी उससे दूर होती जा रही थी ।

मंजियों की ज़िम्मेदारी पीढ़ी दर – पीढ़ी नहीं चलती थी । जिस व्यक्ति को मंजी सौंपी जाती थी, जब वह नहीं रहता था, तो गुरू महाराज ख़ुद बीच में पड़ कर उस मंजी की ज़िम्मेदारी किसी और को सौंप देते थे । जब भाई पारो जुल्का नहीं रहा तो उसकी मँजी उसके बेटे को न देकर भाई लालो को सौंपी गई । भाई पारों की मंजी का क्षेत्र दोआबा था ।

इसी तरह दूर दूर इलाक़ों में जैसे सिंध और बंगाल तक मँजियां क़ायम की गई ।

बैठे बैठे शैली सुंदरी को छेड़ता–"बीबी, कुछ दिनों बाद तो तुझे ढ़ाका बंगाल जाना पड़ेगा । नहीं तो शायद सिंध के रेगिस्तान में जाकर मंजी संभालनी पड़ेगी ।

सुनकर सुंदरी का ख़ून खौलने लगता । उसका जी चाहता कि वह कपड़े फाड़ कर कहीं निकल जाये ।

अजीब सँशय था । वह यह भी नहीं कह सकती थी कि वह मंजी जैसी नेमत लेने से इनकारी थी और वह यह भी नहीं चाहती थी कि इस तरह की कोई ज़िम्मेदारी उन्हें सौंपी जाये ।

इस सच्चाई से अनजान कि यह सारा क़िस्सा बेबुनियाद था, सुंदरी लीरोलीर हो रही थी, जैसे किसी की बोटी बोटी, नोची जा रही हो । न हाँ करने के क़ाबिल, न ना करने के क़ाबिल । हालांकि जो समस्या उसके सामने खड़ी की गई थी, वह एकदम बेबुनियाद थी ।

उस शाम खाने के वक्त अमन फिर नहीं पहुँचा था । तंदूर से रोटियाँ उतार कर सुंदरी टोकरी में उन्हें ढँक कर बैठी थी । इन्तज़ार कर रही थी । लेकिन अमन की कोई ख़बर नहीं थी ।

"मंजी यूँ तो नहीं मिल जाती," उसे इस तरह इन्तज़ार करते देखकर शैली ने शरारत से कहा ।

सुंदरी का जी किया, वह तरकारी की देगची उठा कर उसके मुंह पर दे मारे और ख़ुद कहीं बाहर निकल जाये ।

वही बात हुई, थोड़ी देर बाद संदेसा आया, अमन ने सुबह से बाऊली साहब की 84 सीढ़ियों पर जपुजी साहब का पाठ शुरू कर दिया था । जब तक बारी बारी 84 सीढ़ियों पर वह 84 पाठ ख़त्म नहीं कर लेगा, वह घर नहीं लौटेगा ।

"इस तरह चौरासी लाख जूनों के चक्कर से उसे छुटकारा मिल जायेगा ।" शैली सुनकर कहने लगा । "सुंदरी बीबी, तू तो बस हमारे जैसे साधारण लोगों की तरह एक के बाद दूसरी जून में आवागमन के चक्कर में पड़ी रहेगी, तेरा घरवाला तो उड़ान भर कर कहीं का कहीं जा पहुंचा है ।"

सुंदरी को शैली की बात कांटों को भांति काट रही थी । शैली के चेहरे की तरफ़ देखती हुई वह कसमसा कर रह गई । उधर तेजी और नसरीन ने सुना तो वह जल्दी जल्दी खाना खा कर बाऊली साहब की ओर चल पड़ीं । एक चाव सा छलक छलक रहा था । उनका कहना था, वे भी अमन के साथ सीढ़ियों पर बैठ कर उसके मुँह से गुरबाणी का पाठ सुनेंगी ।

"ताकि उसकी पूंछ पकड़ कर आप भी पार हो सके ।" चौके चुलहे को संभाल कर मां और मौसी को इस तरह जाते देख कर आंगन में खड़े शैली ने अपने तरकश में से एक तीर छोड़ा ।

तेजी और नसरीन उसकी बात को अनसुना करके आंगन से निकल गई । शाम हो रही थी, अंधेरा हो रहा था । दिया बत्ती जलाने का समय हो गया था ।

"भीतर से ड्योढ़ी की कुंडी लगा लेना," तेजी जाते जाते कह रही थी । "हमारा कुछ पता नहीं, क्या पता सारी रात बाऊली साहब में ही काटनी पड़े । 84 सीढ़ियों पर 84 पाठ कोई ख़ाला जी का वाड़ा थोड़े ही है ?"

मासी तेजी और अम्मी नसरीन दोनों गली का सामने वाला मोड़ मुड़ गईं थीं ।

शैली ड्योढ़ी के किवाड़ को कुंडी लगा कर जब लौटा, तो सुंदरी ने बत्ती जला दी थी । आंगन में मंद मंद रौशनी पैर पैर बढ़ते अंधेरे से जैसे लड़ रही थी ।

शैली और सुंदरी, सुंदरी और शैली । उन्हें अचानक ख़्याल आया कि वे घर में अकेले हैं । इस तरह का एहसास उन्हें पहले कभी नहीं हुआ था ।

33

इस बात में कोई सच्चाई नहीं थी कि अमन का नाम किसी मंजी के लिये सोचा जा रहा था, लेकिन उसे यह सोच कर अच्छा लगता था कि कोई इस बात का ज़िक्र करता था । बेशक झूठ ही सही । इस झूठ में अपने आप को फ़रेब देने में कितना स्वाद था !

उधर यह सोच सोच कर सुंदरी जैसे अपने जिगर का लहु पी रही थी ।

चंचलता के किसी क्षण में सिर्फ़ अमन की खिंचाई करने के लिये शैली ने यह शोशा छोड़ा था और अब बार बार इसका ज़िक्र करने में उसे मज़ा आता था । ख़ास तौर पर इस लिये क्योंकि सुंदरी इस बात से चिढ़ती थी । या फिर जब भी इस बारे में कोई बात होती थी तो अमन के कान खड़े हो जाते थे । उसके चेहरे पर एक रौनक आ जाती थी । वह इस तरह कहने वाले के चेहरे की तरफ़ देखने लगता जैसे वह इस इन्तज़ार में हो कि इस बारे में उसे कोई और सूचना भी मिले ।

उस शाम ड्योढ़ी की कुंडी लगा कर जब वह लौटा तो सुंदरी ने उससे पहला सवाल

पूछा, "शैली क्या कोई ऐसा तरीका नहीं जिससे इस मंजी वाले किस्से से किसी तरह छुटकारा मिल सके ?"

"क्या मतलब ?"

"मेरा मतलब यह है कि हम गोइंदवाल छोड़कर नहीं जाना चाहते ।"

"हम से तुम्हारा क्या मतलब है ? अमन ने तो कभी नहीं कहा कि उसकी इस संभावना में कोई दिलचस्पी नहीं ।"

"वह कौन होता है इस बारे से आख़िरी फ़ैसला करने वाला ? आख़िर यह सोचने का मेरा भी तो हक़ है कि मैं कहां जीना चाहती हूं, कहां मरना चाहती हूँ ।" यह कहती हुई सुंदरी अचानक भावुक हो गई ।

यह मामला तो गंभीर शक्ल आख्तियार कर गया था । ख़ास तौर पर उन हालात में, जब वे घर में अकेले थे । और उधर पूरी रात गुज़ारने के लिये पड़ी थी ।

"लेकिन बीबी, तेजी मौसी भी तो उठते बैठते हाथ जोड़ती रहती है कि गुरू महाराज की इस तरह की कोई मेहर हो जाये । तेजी मौसी जैसी श्रद्धालू की मनोकामना तो अवश्य पूरी हो कर रहेगी ।"

"अगर मां-बेटा की यही मर्ज़ी है तो वह बेशक चले जायें, जहां उन्हें मंजी मिलती है, मैं नहीं उनके साथ बंधी रहूंगी," सुंदरी जैसे सावन की बदली की तरह फट पड़ी और छल छल आँसू बहाती हुई फरियाद कर रही थी ।

बात ज्यादा बिगड़ गई थी । सामने एक नौजवान हसीना कूँज की तरह विलाप कर रही थी और शैली जैसा हष्टपुष्ट नटखट नौजवान बिट बिट उसकी तरफ़ देखे जा रहा था ।

सुंदरी रोये जा रही थी, रोये जा रही थी ।

अब शैली के भीतर के सुशील मर्द को एक अबला औरत पर एकदम रहम आ गया और वह खिलखिलाकर हंसने लगा ।

सुंदरी फटी फटी नज़रों से सर उठाकर उसकी तरफ़ देखने लगी ।

"खूब उल्लू बन रही है तू भी और तेरा घरबाला भी !" अब शैली हाथ पर हाथ मार कर और उंचा हंस रहा था, "बाबा, इस बात में कोई सच्चाई नहीं कि अमन को मंजी मिलने वाली है, क्या पिद्धी और कया पिद्धी का शोरबा ! मंजी मिलती है, मानकचंद 'जीवड़े' जैसे को जो अपनी जान पर खेलकर गैंती पकड़ कर, बाउली के नीचे जमें पत्थर को उसने तोड़ दिया था । मंजी मिलती है भाई पारो जैसे को, जिसे "परमहंस" की उपाधि मिली थी । अंधेरी हो, अंधड़ हो, वर्षा हो, बूंदाबांदी हो, गुरू महाराज के दर्शन के वग़ैर जो मुंह जूठा नहीं करता था । मंजी मिलती है सावन मल को, जो गुरू महाराज का भतीजा है, बेचारा अमन किस खेत की मूली है ? वह तो मैं वैसे ही उसकी टांग खींन रहा था ।"

"नहीं नहीं नहीं !" सुंदरी अब क्रोध से सुलगती आँखों से उसकी तरफ़ देख रही थी । "तू झूठ बोल रहा है । तू जान बूझ कर मुझे तसल्ली देने के लिये यह कह रहा है ।"

"मैं झूठ नहीं बोल रहा, मैं झूठ नहीं बोल रहा, मेरी समझ में नहीं आता कि किस तरह मैं तुझे विश्वास दिलाऊं कि इसमें कोई सच्चाई नहीं कि अमन को मंजी मिल रही है या इस बारे में सोचा भी जा रहा है।"

"तूने पहले भी मुझे फ़रेब दिया था, तू अब फिर मुझे धोखा दे रहा है। न जाने कबका कोई बैर है जो तूने मेरे लिये अपने भीतर पाल रखा है।"

"सुंदरी !" शैली इस इल्ज़ाम के लिये तैयार नहीं था।

"मैं सतुगुरू महाराज की सौगंध खा कर रहता हू कि मैं ग़लतबयानी कर रहा था। अमन को वैसे ही उल्लू बना रहा था।" शैली ने गंभीर होकर कहा।

"जो एक बार झूठ बोल सकता है वह दूसरी बार भी झूठ बक सकता है।"

"मैंने सतुगुरू महाराज की सौगंध खाई है तब भी तुझे मुझ पर ऐतबार नहीं आया ?"

"तुझे सतुगुरू महाराज की कौन सी परवाह है ?"

यह वह क्या कह रही थी ? शैली के रौंगटे खड़े हो गये।

"तुझे सतुगुरू महाराज की कौन सी परवाह है ?" सुंदरी ने फिर अपने बोल दुहराये, "आज कितने दिन बीत गये हैं, तूने साध संगत की तरफ़ मुंह नहीं किया।"

"मैं खेतों में मट्टी के साथ मट्टी होता रहता हूँ। जब तू और तेरा मियां आंख मूंद कर शब्द कीर्तन सुन रहे होते हो। उस वक्त मैं एक पेड़ से दूसरी पेड़ तक घूमता हुआ प्यासे पौधों को पानी पिला रहा होता हूँ। बैलों के पीछे हल पकड़ कर पसीनों पसीना हो रहा होता हूं। जब आप लोग हाथ जोड़ कर अरदासें कर रहे होते हो तब मैं हाथ जोड़ जोड़ कर अरदासें करता हूँ कि पानी समय पर बरसे। मैं अरदासें करता हूँ कि तब तक वर्षा और बूंदा बांदी न हो जब तक मेरी फसल संभाली नहीं जाती।"

"इसका यह मतलब हरग़िज नहीं कि कोई गुरू महाराज से विमुख हो जाये।"

"जब गुरू महाराज की मुझ पर मेहर हुई तो वे मुझे बुलावा भेजेंगे। मेरे भीतर नित्य दर्शन के लिये चाहत पैदा करेंगे।"

शैली की दलील सुनकर सुंदरी की हंसी छूट गई, "भैड़ी बूथी !* जैसे गुरू महाराज को और कोई फ़िक्र ही न हो, बस उनके पास सिर्फ़ यही तो काम रह गया है कि शैली जैसे श्रद्धालुओं को आवाज़े मार मार कर बुलावा भेजते रहें !"

अजीब औरत थी ! सुंदरी अब एक महबूब अंदाज़ में शैली की तरफ़ खुली नज़रों से देख रही थी। पहले कभी जब वह इस अंदाज़ से देखती थी तो जैसे शैली का अंग अंग तोड़ मरोड़ डालती थी। उसके कानों में नग़में गूंजने लगते थे।

यह लड़की कितनी सुंदर है ! कितनी भावुक है ! कैसे महबूब अंदाज़ हैं इसके ! बिट बिट आंखों से उसकी तरफ़ देखते हुए शैली को लगा जैसे उसका अंग अंग चूरा होता

---

* बुरी शक्ल वाला (अनुवादक)

जा रहा था। एक क़दम और,तारे टूट कर गिर पड़ेंगे। बस बाहें ऊपर उठाने की देर है, कोई उसकी बांहों में ढेरी हो जायेगा।

शैली इस तरह का महसूस कर रहा था कि बाहर किसी के ड्योढ़ी खटखटाने की आवाज़ आई। घर के बाक़ी लोग बाउली साहब से लौट आये थे।

34

बात यहीं ख़त्म नहीं हुई। तेजी, नसरीन और अमन घर पहुंचे तो बातों ही बातों में पता चला कि अमन ने जपुजी के 84 पाठ यह मन्नत मांग कर शुरू किये थे कि उसकी मंजी पाने की कामना पूरी हो जाये।

सुंदरी ने सुना तो उसके तन बदन में आग लग गई। उसके ओंठ फड़कने लगे। उसके कान लाल सुर्ख़ हो गये। उसके वधुने फूल से गये। रात ढेर सी गुज़र चुकी थी। सब अपनी चारपाइयों पर लेटते ही सो गये, लेकिन उसे नींद नहीं आ रही थी। सुंदरी रात भर करवटें बदलती रही, जैसे वह बिस्तर की बजाये रेत की कढ़ाई में गीले मकई के दानों की तरह भूनी जा रही हो।

ज़िन्दग़ी उसके साथ अजब खिलवाड़ कर रही थी।

रात भर कलपती रही सुंदरी को ऐसा महसूस हो रहा था, जैसे वे एक दूसरे से कोसों दूर चले गये हों; कोई वास्ता नहीं, कोई सरोकार नहीं। मियां-बीवी वाला झूठ सच का नाटक रचाये रखते, लेकिन भीतर ही भीतर उनके बीच की खाई मुंह फाड़े बढ़ती जा रही थी।

अगली सुबह सुंदरी अपने पलंग पर पड़ी ज़हर घोल रही थी कि घर में पिछली रात बाउली साहब पर सुनी प्रेमा खत्री की घटना हर किसी की ज़बान पर थी।

प्रेमा खत्री लाहौर के नज़दीक खाई गांव का एक साहूकार था। घर में लहर बहर थी। कुछ दिनों बाद उसके माता पिता कालग्रस्त हो गये। प्रेमा खत्री के सर पर कोई अंकुश न होने के कारण वह बुरी संगत में पड़ गया। कई बुरी इल्लतों ने उसे घेर लिया और फिर वही बात हुई, धन दौलत, रिश्तेदारों, दोस्तों ने साथ छोड़ दिया, यही नहीं, प्रेमा खत्री को कोढ़ हो गया, कोई उसके नज़दीक नहीं फटकता था।

आख़िर किसी ने तरस खा कर उसके गले में सुतली से एक डिब्बा लटका दिया। डिब्बे को खड़काता हुआ वह गली गली में रेंगता, धक्के खाता रहता। उसके नज़दीक गुज़रने वाले उसके डिब्बे में भिक्षा डाल देते, जिससे प्रेमा खत्री का गुज़ारा चलने लगा।

बुरा हाल, बांके दिहाड़े। वह इस तरह मारा मारा फिर रहा था कि किसी ने प्रेमा खत्री को गोइंदवाल के बारे में बताया। गुरू महाराज की महिमा से उसे परिचित करवाया। सुन कर प्रेमा खत्री के मन में श्रद्धा पैदा हुई। लुढ़कता, ठोकरें खाता, वह गोइंदवाल पहुंचा। कई महीने इस सफ़र में लग गये लेकिन उसने हौसला नहीं हारा। मन में उपजी श्रद्धा का दामन नहीं छोड़ा।

गोइंदवाल पहुंच कर भी उसकी गुरू महाराज तक रसाई नहीं हो रही थी। बस गली

गली भटकता रहता । साध संगत की तरफ़ आता तो बाहर जोड़ों* में भटकता रहता । घट घट के ज्ञाता, गुरू महाराज इन सब बातों से परिचित थे । प्रेमा खत्री की आस्था की जैसे परीक्षा हो रही हो, गोइंदवाल पहुंच कर भी कई दिन बीत गये थे । इतना ज़रूर था कि यहां लंगर में दोनों समय भोजन मिल जाता था, लेकिन उसका कोढ़ ज्यों का त्यों मौजूद था । उसकी दरिद्रता की तरफ़ बेओटों की ओट की कृपा-दृष्टि अभी नहीं पड़ी थी ।

और फिर उस दिन जब अमन बउली की सीढ़ियों पर अपने 84 पाठ कर रहा था, गुरू महाराज स्नान करने आये । उनके साथ प्रेमा खत्री भी था । सत्गुरू ने उसे विशेष रूप से बुलवा भेजा था ।

और फिर एकत्रित यात्रियों को देखकर आश्चर्य हुआ; गुरू महाराज ने कोढ़ी प्रेमा के कपड़े उतरवाये और उसे बाउली में स्नान करवाया । स्नान करते ही प्रेमा जैसे नया, निरोग हो गया । उसके चेहरे पर पहले जैसी रौनक आ गई । गुरू महाराज ने पहनने के लिये उसे नया जोड़ा दिया । वह प्रेमा जो गली गली में रेंगता फिरता था, सीधा खड़ा हो गया । गुरू महाराज के चरणों में गिर कर लाख लाख शुक्र मना रहा था । सत्गुरू पर न्योछावर हुआ जा रहा था ।

बाउली से बाहर आये तो एकत्रित श्रद्धालुओं को संबोधित करके गुरू महाराज कहने लगे - इसका नाम मैंने मुरारी रखा है, अब यह पुराना प्रेमा खत्री नहीं रहा । इसे सब 'मुरारी' कह कर पुकारा करेंगे । और फिर हम इसकी शादी करवाना चाहेंगे । कोई है जो अपनी बेटी की मेरे इस बेटे से शादी करना चाहेगा ? गरू महाराज के मुंह से ये बोल अभी निकले ही थे कि शीहां उप्पल नाम का पास खड़ा गुरसिक्ख तैयार हो गया । लेकिन उसकी बीवी जो उस वक्त लंगर की सेवा कर रही थी, यह सुन कर तेज़ी से गुरू महाराज की शरण में आई । वह इस रिश्ते के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थी । अपने पति को काटने दौड़ती । उसने अपनी एकलौती बेटी की इस तरह एक अनजाने, बिना पहचान के आदमी के साथ शादी करने की हामी कैसे भर ली थी ? गुरू महाराज ने शीहां उप्पल की घरवाली की शिकायत सुनी और दोबारा यह ऐलान किया -"प्रेमा अब पुराना प्रेमा खत्री नहीं रहा । इसका नाम मुरारी है और यह मेरा बेटा है ।"

गुरू महाराज के मुख से यह सुनकर शीहां उप्पल की पत्नी ख़ामोश हो गई । गुरू महाराज की रज़ा में राज़ी हो गई ।

अगली सुबह सत्सँग के बाद उनका आनंद कारज होना था, जिसके लिये सभी आमंत्रित थे ।

शैली इस सारी घटना का वृतान्त आँगन में एक तरफ़ खड़ा होकर सुन रहा था । कहने लगा "काश, कोई हमारा कोढ़ भी दूर करे !"

"क्या मतलब ?" उसकी माँ नसरीन जैसे तड़प उठी हो ।

---

* जुतों (अनुवादक)

आँखें मलती, बाहर आँगन में आ रही सुंदरी सारा किस्सा सुन चुकी थी । कहने लगी, "आजकल शैली के मुंह में जो आता है, वही बक देता है । इसे पता नहीं चलता है कि वह क्या कह रहा है ।" उसने आँखें भर कर शैली की तरफ़ देखा ।

शैली को लगा जैसे समूची सुंदरी उसके भीतर उतर गई हो । इस औरत में इतना जादू था जिसका बयान नहीं किया जा सकता ।

"लेकिन कहानी यहीं ख़त्म नहीं होती ।" तेजी कहने लगी, "सतगुरू ने साथ में यह भी फ़रमाया है कि शादी के बाद मुरारी और उसकी पत्नी को एक मंजी सौंपी जायेगी ।"

"वह किस लिये ?" सुंदरी पूछने लगी ।

"बस जिस पर उसकी मेहर हो जाये ।" तेजी ने कहा ।

"नोज ! मैं तो बाबा" और फिर सुंदरी की ज़बान अपने आप रूक गई । यह क्या वह वाही तबाही बकते जा रही थी ।

शैली ने सुना तो उसके चेहरे पर मुस्कराहट आ गई ।

इसके उलट अमन कहने लगा, "बड़े भागों वाले हैं । अभी तक जो मांजियां बाँटी गईं हैं, यही एक मात्र मंजी है जो एक दंपत्ति को बख़्शी जा रही है ।" जैसे वह कह रहा हो कि काश मेरी बीवी भी इस आकांक्षा में मेरा साथ देती ।

सुंदरी अमन के चेहरे से उसकी अनकही भावना को भाँप रही थी । और फिर वह अपने आप अपने ओठों में बुड़बुड़ाने लगी, "यह कभी नहीं होगा ।"

एक विलक्षण परिस्थिति थी । अमन एक बेबुनियाद किले का निर्माण कर रहा था । हर रोज़ उसमें नये नये रंग भर रहा था । उसे और सजीला बना रहा था । और सुंदरी इस धुन में थी कि उसका निराकार यह काल्पनिक किला ढेरी हो जाये । इस भटकन में वह व्याकुल होने लगती थी ।

इस मानसिक दशा में सुंदरी जैसी अल्हड़ जवानी कोई भी हरकत कर सकती थी ।

35

और फिर वही बात हुई ।

अमन गुरूसेवा में और अधिक लीन होता जा रहा था । सुंदरी शैली की ओर ज़्यादा परस्तार बनती जा रही थी । शैली ने गेहूं और धान की खेती कम करके मौसम की साब्ज़ीयों और फलों की ओर ज़्यादा ध्यान देना शुरू कर दिया था । घर में सिर्फ़ सुंदरी ही उसकी खेती के इस परिवर्तन से सहमत थी । यही नहीं सुबह अमृत वेला में परिवार के दूसरे लोग जब नहा धोकर सत्संग के लिये धर्मशाला जाते तो सुंदरी तैयार होकर शैली का हाथ बटाने के लिये उसके साथ खेतों की तरफ़ चल देती । सुबह सुबह लुस लुस करती ताज़ी सब्ज़ी तोड़ कर ताज़ा टोकरियाँ भरना, उन्हें शहर में आढ़ती के यहाँ पहुँचाना , कितना मज़ा था । और फिर हर रोज़ टकों से भरी जेबें, सुंदरी स्वाद स्वाद हो जाती । गेहूं

और धान की खेती की उपज की हिलोर तो साल छः महीनो में आती थी। सब्ज़ी की खेती की ओर बात थी। शैली इसे नक़दी की फ़सल कहता था। हर रोज़ की बिक्री से जेबें भर जाती।

उधर अमन एक अद्वितीय नशे में मस्त रहने लगा था। गुरू महाराज ने आनंद साहब की बाणी को संपूर्ण कर लिया था। और आनंद साहब की 40 पौड़ियां जो भी पढ़ता, जो भी सुनता, लोटपोट हो जाता। इतनी सुंदर बाणी का उच्चारण करके गुरू अमरदास जी ने सभी लोगों को चमकृत कर दिया था। गुणवान हलकों में यही कहा जाता था कि 'जपुजी', 'सोदर' और 'सोपुरख' जैसी बाणियों के बाद गुरू अमरदास ने एक ऐसी बाणी रची है जिसका आध्यात्मिक सहित्य में कोई सानी नहीं। आनंद साहब में सहज की अवस्था से आत्मिक आनंद की पूर्ति की वार्ता है।

और फिर एक विचित्र घटना घटी।

एक श्रद्धदालु लाख सिफ़ारिशें ले कर कहीं दूर से आया, वहाँ की मंजी के गुरू सेवक ने ख़ास तौर पर उसके बारे में ख़त डाला था। यह श्रद्धालु गुरू महाराज से शिक्षा दीक्षा लेना चाहता था। उन्हीं दिनों आनंद साहब की बाणी संपूर्ण हुई थी। गुरू अमरदास मेहर में आये और इतनी दूर से दर्शनों के लिये पधारे गुरसिक्ख को आनंद साहब की बाणी अपने मुख से उच्चारण करके कंठस्थ करवाने लगे। पहले दिन आनंद साहब की पहली तुक- "अनंद भइआ मेरी माऐ, सतिगुरू मै पाइआ" का उच्चारण बार बार करने की हिदायत की ताकि उसे कण्ठस्थ हो जाये।

पहली तुक- "आनंद भइआ मेरी माऐ, सतिगुरू मैं पाइया" सुनकर ढाके से आया गुरसिक्ख फिर कभी दिखाई नहीं दिया। गुरू महाराज दो दिन, चार दिन प्रतीक्षा करते रहे। आख़िर उन्हें चिंता हुई। बहुत भारी सिफ़ारिश लेकर आया था और एक दो दिन के बाद गुरू महाराज ने जब पुछवाया तो पता चला कि ढाका, बंगाल से आया गुरसिक्ख बस उस एक तुक- "आनंद भइआ मेरी माऐ सतिगुरू मैं पाईया" को पल्ले से बांध कर एकान्त स्थान पर शांत चित्त होकर बैठ गया था। पूछने पर कहने लगा- जिस मनोरथ के लिये मैं आया था, वह तो पहले दिन पूरा हो गया सत्गुरू भी मैंने पा लिया और मेरा चित्त भी आनंद प्रसन्न हो गया- ओर मुझे कोई अभिलाषा नहीं।"

ज्यों ज्यों लोग आनंद साहब का पाठ सुनते, सब इस बाणी की पोथी को अपनाने के लिये उत्सुक रहते। अमन दिन रात ख़ुद इस बाणी की पूर्चियां तैयार करता, अपने साथ के साथियों से तैयार करवाता, लेकिन उनको आराम करने की फ़ुर्सत नहीं मिलती थी। इस बाणी का संगीत, इस बाणी की सरलता, इस बाणी की पहुंच, जो भी सुनता, सबसे पहले इसे कंठस्थ करने की कोशिश करता- जहां जहां साध संगत अमृत वेला में जुड़ती, वहीं नित्तनेम से आनंद साहब का पाठ होने लगा। जहां सारी पौड़ियों का उच्चारण संभव न होता, वहां केवल पहली पांच पौड़ियां और आख़िरी पौड़ी पढ़ ली जाती, आनंद साहब जैसे नित्तनेम का हिस्सा बन गया हो। प्रसाद बाँटने से पहले आनंद साहब का पाठ ज़रूरी

समझा जाने लगा। किसी बाणी के लिये इस तरह का उत्साह देख कर गोइंदवाल निवासी फूले नहीं समा रहे थे।

गोइंदवाल में उन दिनों दिन दुगनी रात चौगुनी रौनक बढ़ रही थी। आगे पीछे से हज़ारों परिवार इस शहर में आकर बस गये थे।

बात यूँ हुई, एक दिन गुरू महाराज समाधि में अन्तर्ध्यान थे कि उन्हें किसी औरत के विलाप की हृदयबेधक आवाज़ सुनाई दी। गुरू जी की समाधि टूट गई। पूछने पर पता चला कि एक माँ का जवान बेटा मर गया था और बेचारी अबला औरत रो रो कर बेहाल हो रही थी। गुरू महाराज ने करुणा में आ कर कहा- "हमारे इस शहर में किसी माँ के जीते जी उसका बेटा अब कभी नहीं मरेगा।"

और फिर क्या था, बेटों वाली माँऐं अपने परिवार की ख़ातिर गुरू के बनाये शहर में आकर बसने लगे। गोइंदवाल पहले भी कोई मामूली शहर नहीं था, अब तो जैसे सीमायें तोड़ कर उसकी आबादी फैलती जा रही हो। कहा जाता है, गुरू अमरदास जी 22 बरस गोइंदवाल में विराजमान रहे, लेकिन जिस दिन उनके मुंह से यह वाक्य निकला- माँ के जीते जी उसका बेटा कभी नहीं मरेगा, उस घड़ी के बाद गोइंदवाल में किसी माँ के बेटे का देहान्त नहीं हुआ।

एक तरफ़ अमन गुरबाणी की पोथियाँ तैयार करता था, भाई बूला नाम का एक और गुरसिक्ख था, जिसकी क़लम की ख़ूबसूरती मशहूर थी। भाई बूला भी अपने शागिर्दों समेत दिन रात गुरबाणी की नकलें तैयार करता-करवाता था और संगतों में बांटता रहता था। अमन और भाई बूले में फ़र्क इतना था कि भाई बूला अपनी जेब से काग़ज़ ख़रीदता, अपने शागिर्दों को दिहाड़ी देता, स्याही जिल्द आदि का सारा ख़र्च ख़ुद उठाता, लेकिन गुरबाणी के गुटके जब तैयार होते तो उन्हें संगतों में बिना क़ीमत वसूले बांटता रहता। यही कारण था कि अमन से कहीं ज़्यादा उसकी प्रसिद्धि हो गई थी। हर किसी की ज़बान पर भाई बूले का नाम था। हर शहर में भाई बूले की पोथियों की चर्चा होती थी।

यह देख कर अमन का जी भी करता कि वह भी भाई बूले की तरह गुरबाणी को बिना कोई चढ़ावा लिये गुरूसिक्खों में बाँटना शुरू कर दे। और ऐसा करने की उसकी हैसियत भी थी। उसके खेतों की ढेर आमदन थी। इधर सुंदरी के पास अपनी माँ की दी बेशुमार दौलत थी। अमन ने कई बार यह बात छेड़ी लेकिन सुंदरी इस बात का नाम तक नहीं लेने देना चाहती थी। अमन जब भी इस तजवीज़ का ज़िक्र करता, सुंदरी जवाब में उसे काटने को दौड़ती, हमेशा उनमें बदमज़गी हो जाती।

यह एक और कारण था कि पति पत्नी के बीच का अंतर बढ़ता जा रहा था, दूरी पैरों-पैर बढ़ती जा रही थी।

परमात्मा का बस इतना शुक्र था कि उनके जज़बाती जीवन में आई इस दरार का आभास परिवार के किसी व्यक्ति को नहीं हुआ था। शैली की बात और थी, उसे कई बार ऐसा लगता जैसे वह किसी गहरी खाई के किनारे पर जा खड़ा हुआ हो। लेकिन हर बार

किसी न किसी तरह वह अपने पैरों को संभाल लेता, और फिसलने से बच जाता। इसमें ज़्यादा हिस्सा उस लगन का था, जिस लगन और तनदेही से वह अपने खेती के काम में व्यस्त रहता था। काम के नशे में डूबा हुआ।

36

उस दिन घर में जैसे धमाका हुआ हो। वैसे ही बैठे बैठे तेजी के मुंह से निकला, ''शैली बेटा, तू शादी क्यों नहीं करवाता ? तेरे चेहरे की तरफ़ देखते कई बरस बीत गये हैं।''

''मौसी, शादी करवाने की उम्र तो कभी की बीत गई।'' शैली बोला, ''चालीस बरस की उमर से उपर भी कोई शादी करवाता है ?''

''क्या मतलब ? यह आँगन ज्यूं का त्यों सूना रहेगा ?'' उसकी माँ नसरीन तड़प उठी।

''अमन ने शादी करवा कर आँगन की कौन-सी रौनक बढ़ाई है ?'' शैली के मुंह से निकला।

सामने पीढ़े पर बैठी अटेरन से सूत अटेर रही सुंदरी के चेहरे पर जैसे किसी ने थप्पड़ दे मारा हो। उसके गाल लाल सुर्ख़ हो गये। सचमुच अभी तक उसके बच्चा नहीं हुआ था।

क्या वह बांझ थी ? सुंदरी को लगा कि चारों तरफ़ से उस पर इस सवाल की बौछार की जा रही थी। उसकी आँखों के सामने अंधेरे की एक दीवार खड़ी हो गई। उसका सर चकराया और वह चुपके से उठ कर अपने कमरे में चली गई। वह हमेशा ऐसा किया करती थी।

कमरे के भीतर अमन, पोथी की नक़ल करने में व्यस्त था। अपने काम से काम, वह घर के झमेलों में ज़्यादा दख़ल नहीं देता था। आज कितने बरस हो गये थे। जबसे उसने पोथियां तैयार करने का काम शुरू किया था, अपने धंधे में पूरी तरह डूबा रहता; न खाने की सुध, न पीने की होश।

थोड़ी देर बाद पहले कमरे के किवाड़ बंद करने की, फिर साँकल लगाने की आवाज़ आई। इस तरह भरे पूरे आँगन में दरवाज़ा ढोना तो समझा जा सकता था, लेकिन साँकल लगाना सबको अजीब सा लगा। अभी लोग हैरान ही हो रहे थे कि कमरे के भीतर से सुंदरी के बोलने की ऊंची आवाज़ें आई। अमन पर नाराज़ हो रही थी। ऐसा तो उसने पहले कभी नहीं किया था। और जब अमन भी जवाब में उससे भी ऊँची आवाज़ में बक रहा था। मियाँ-बीवी का कोई झगड़ा होगा, परिवार वालों ने इस तरफ़ ज़्यादा ध्यान देना मुनासिब नहीं समझा। ख़ास तौर पर इस लिये क्योंकि दोनों ने दरवाज़ा भीतर से बंद कर रखा था।

लेकिन यह बहस, यह तू-तू मैं-मैं बढ़ती जा रही थी। और और ऊँची हो रही थी। बात गाली गलौच तक जा पहुंची थी। यह हो क्या रहा था ? अब सब लोग परेशान

होने लगे। फिर ऐसा लगा जैसे अमन ने सुंदरी को थप्पड़ मार दिया हो। सुंदरी कौन सी कम थी। उसने भी आगे से हाथ उठा लिया और फिर क्रोध में आकर अमन ने डंडा उठा लिया। कैसे वहशियों की तरह अपनी बीवी की धुनाई कर रहा था। सुंदरी चिल्ला रही थी। उसके सामने जो भी चीज़ आती उसे अमन की तरफ़ फेंक रही थी, पुराने जूते, स्याही के डब्बे, साबुन की टिक्कियां। नसरीन और तेजी बाहर से किवाड़ खोलने के लिये चिल्ला रही थीं, लेकिन भीतर से अमन और सुंदरी में से कोई भी उनकी चिल्लाहट पर ध्यान नहीं दे रहा था। शैली हक्का बक्का एक तरफ़ खड़ा था। शर्मिन्दा जैसे सारे झगड़े का कारण वही हो। उसी के यह कहने ने कि अमन ने शादी करवा कर आँगन की कौनसी रौनक बढ़ाई है, यह सारा उपद्रव खड़ा किया था।

बाहर तेजी और नसरीन चिल्ला रहीं थीं, भीतर अमन और सुंदरी अब जैसे गुत्थमगुत्था हो रहे थे। लगता था जैसे अमन ने सुंदरी को नीचे गिरा लिया था और बेतहाशा लातें चला रहा था। सुंदरी ज़ख़्मी भेड़ की तरह डकार रही थी। हाल दुहाई मचा रही थी। लेकिन भीतर से साँकल तो उसने ख़ुद चढ़ाई थी। और अब उसकी पिटाई कर रहा अमन सांकल नहीं खोल रहा था।

"ऐसे तो यह लड़की को मार डालेगा।" नसरीन कह रही थी।

"इस पर तो जैसे कोई भूत सवार है।" तेजी परेशान हो रही थी।

बेचारी औरतें बेबसी से शैली की तरफ़ देख रही थीं। और वह शर्मिन्दा, हैरान, एक तरफ़ खड़ा था।

कमरे के भीतर सुंदरी को पीट रहा अमन न थक रहा था, न हार रहा था। चिल्ला चिल्ला कर सुंदरी का गला बैठ गया था। या वह बेहोश हो गई थी। अमन था कि अभी तक उसकी पिटाई कर रहा था।

यह देख कर शैली, नसरीन और तेजी ने बाहर से ज़ोर लगा कर दरवाज़े को चूलों से अलग कर दिया और दरवाज़ा निकल कर एक तरफ़ जा गिरा।

कमरे के भीतर हर चीज़ बिखरी पड़ी थी। सुंदरी का बुरा हाल था। अमन पर एक अजीब वहशत सवार थी। ऐसा तो ज़िंदगी भर उसने कभी नहीं किया था। कितना सुशील, कितना ख़ामोश और आज न मालूम कौनसा भूत उस पर सवार हो गया था। लगता था सुंदरी ने उसे कोई सख़्त बेहूदा बात कही थी। बेहूदा जैसी बेहूदा बात, सुंदरी ने उसे नामर्द होने का ताना मारा था। शादी को इतने बरस बीत गये, वह अभी तक कोई औलाद पैदा नहीं कर सका था। हर वक़्त कलम पकड़े काग़ज़ काले करता रहता था। सब उसे इशारों से समझा चुके थे। सुंदरी खुद मन्नतें मांगती रहती थी, व्रत रखती थी, चोरी छिपे मढ़ीओं, शमशानों के चक्कर काटती रहती थी, उसकी कोख अभी तक हरी नहीं हुई थी। और इस तरह कई बरस बीत गये थे।

बड़ी मुश्किल से घरवालों ने अमन को संभाला। वह तो जैसे सुंदरी को जान से मारने पर तुला हुआ था।

नसरीन और तेजी ने सुंदरी को संभालकर पलंग पर लिटाया। गुस्से से अमन के मुंह से झाग निकल रही थी। शैली उसे पकड़ कर सामने अपने कमरे में ले गया। अमन अभी भी बोले जा रहा था, ''हरामज़ादी है। मैं बहुत दिनों से इसके लच्छन देख रहा हूँ। जो मुंह में आया वही बक देती है। कहने लगी, 'तू हिजड़ा है।' मैंने सोचा इसे मर्द बन कर दिखाना होगा। अब नौ महीने अपनी पसलियां सहलाती रहेगी। कुतिया कहीं की।''

शैली की समझ में नहीं आता, घर के बाकी लोगों की समझ में नहीं आता, किस तरह इस सारी बदमज़गी पर मट्टी डाली जाये, कैसे मियां-बीवी में सुलह करवाई जाये।

लेकिन इसमें कोई शक नहीं था कि जिस बेरहमी से अमन ने सुंदरी को पीटा था, उसका जिस्म नीला पड़ गया था, उसे देखकर सबकी हमदर्दी सुंदरी के साथ ही थी। ख़ास तौर पर शैली बार बार सोचने लगता। यह सारा सत्संग, यह सारी गुरू सेवा, गुरूवाणी की पोथियां तैयार करवाना, किस काम का अगर कोई इस तरह अपनी घरवाली की धुनाई कर सकता है ? और फिर भाई मूले की बेटी के साथ यह सलूक ! उसे जैसे अपनी आंखों पर विश्वास न आ रहा हो।

उस दिन से सुंदरी उसे और भी अच्छी लगने लगी। और भी सुंदरी लगने लगी। उठते-बैठते उसे सुंदरी के सपने आते रहते। खेतों में काम करते वक्त उसे सुंदरी की याद आ जाती और उससे काम छूट जाता। मन ही मन वह कभी सुंदरी के साथ हंसने लगता, कभी बातें करने लगता, कभी कुछ, कभी कुछ।

कहते हैं, मियां बीवी के झगड़े में कभी दख़ल नहीं देना चाहिये। अभी चार दिन भी नहीं बीते थे कि अमन और सुंदरी फिर घी खिचड़ी हो गये। अकेले बैठे कानांफूसी करते रहते। जैसे एक दूसरे पर जान दे रहे हों। सुंदरी अमन की हर छोटी बड़ी ज़रूरत का ध्यान रखती। सुंदरी सुंदरी कहते, जैसे अमन की भी ज़बान नहीं थकती थी।

37

अमन और सुंदरी के दिन ख़ुशी से बीत रहे थे। घर में सब हैरान थे। ऐसा लगता था जैसे उनके बीच कोई बदमज़गी हुई ही न हो। यह देखकर शैली को ख़ास तौर पर अचंभा हो रहा था।

चाहे सुंदरी आज कल अक्सर उसका हाथ बटाने के लिये खेतों में आती थी, शैली ने इस आश्चर्यजनक परिवर्तन के बारे में कभी बात नहीं की। मियां-बीवी के रिश्ते का अलग ही शिष्टाचार होता है।

ऐसा लगता था बस सुंदरी को भीतर ही भीतर यह डर खाये जा रहा था कि कहीं अमन को मंजी न मिल जाये। जब किसी मंजी का ज़िक्र होता, सुंदरी का चेहरा उतर जाता, सफ़ेद पड़ जाता। और इधर अमन था जिसे इस तरह के सपने के साथ खेलने में मज़ा आता था। अक्सर शाम को घर लौटते वक्त इस तरह की कोई न कोई ख़बर लाता।

''भाई मोहेशा धीर को मालवे की मंजी मिली है।

भाई माई दास को माझे की मंजी की ज़िम्मेदारी सौंपी गई है।

भाई पिृथामल को फ़िरोज़पुर के इलाक़े की मंजी सौंप दी गई है ।

भाई सचनिसच को अंबाले की मंजी संभालने के लिये कहा गया है ।''

आख़िर सुंदरी से न रहा गया । एक दिन वह फूट पड़ी- ''हर चौथे दिन तू किसी न किसी मंजी का किस्सा क्यों ले बैठता है अमन ?'' मैंने तुझे कह दिया है कि मुझे किसी मंजी में कोई दिलचस्पी नहीं ।''

सुंदरी के मुंह से यह बात निकलते ही घर का हरेक प्राणी जैसे उसे काटने दौड़ा । वह ऐसा क्यों सोचती थी ? भाग्यशाली हैं वे लोग जिनके हिस्से में इस तरह की इज्ज़त आती है । ''हम तो शुक्र मनायें अगर हमें कोई मंजी सौंपी जाये ।'' तेजी कह रही थी । ''यह जन्म भी सफल हो जाये, अगला जन्म भी सफल हो जाये ।''

''मंजी की दात बड़े भागों से मिलती है, कुड़िये'' अब नसरीन बोल रही थी । ''किसी को मंजी मिल जाये तो और क्या चाहिये ?''

''लोगों का चढ़ावा-दान खाने को मिलता है । महंत बन कर बड़े मज़े आते हैं, जैसे कोई सूबेदारी हो ।'' शैली ने अपने विशेष अंदाज़ से अमन को छेड़ा । वह अभी तक ख़ामोश सुन रहा था ।

''मैं तो हाथ जोड़ता रहता हूँ । अरदासें करता रहता हूँ ।'' अब अमन बोल रहा था, ''कल से मैंने फिर बाउली साहब की पौड़ियों के 84 पाठ शुरू कर दिये हैं ।''

सुंदरी ने सुना तो वह जैसे अमन पर टूट पड़ी, ''तभी तो कल आधीरात के बाद आप घर लौटे थे। पहले 84 पाठों से हमें क्या हासिल हुआ ? यूँ ही सीढ़ियों पर नंग धड़ंग ठिठुरते रहना । आजकल जाड़ों के दिन हैं, चाहे छाती में ठंड बैठ जाये । फिर खों-खों करना शुरू कर देगा ।'' सुंदरी जैसे अमन का मुंह सिर नोच रही हो । बहुत देर तक उसे कोसती रही । घर के सब लोग उसके चेहरे की तरफ़ ताक रहे थे । इस लड़की को आजकल आख़िर होता क्या जा रहा था ? जैसे काटने को दौड़ रही हो । कैसे दांत किटकिटाती थी ! ख़ास तौर पर अमन को तो जैसे कुछ समझती ही न हो । बेचारा छोटा-सा मुंह लेकर उसकी तरफ़ ताकने लगता । पता नहीं उस दिन उसने कैसे सुंदरी पर हाथ उठा लिया था । वह तो जैसे गऊ हो ।

यह देख कर शैली को अमन पर बहुत तरस आया । वह फिर अपना गुनाह क़बूल करने लगा । -''अरे यारो ! इस किस्से पर आप मट्टी क्यों नहीं डालते ? अल्लाह पाक की क़सम, इसमें कोई सच्चाई नहीं कि अमन का नाम किसी मंजी के लिये लिया जा रहा है । मैंने झूठ बोला है । कुफ़्र बोला है । मैं तो यूं ही अमन की टांग खेंच रहा था । मज़ाक कर रहा था । मैंने कभी किसी को यह कहते हुए नहीं सुना कि अमन को कोई मंजी सौंपी जाये.......... ।''

''यह मुंह और मसूर की दाल !'' सुंदरी नाक चढ़ाकर बीच में बोल पड़ी ।

सुंदरी के मुंह से यह बात निकली ही थी कि अमन के तन मन में आग लग गई । पास ही तो बैठा था । उसने आव देखा न ताव ज़ोर का एक थप्पड़ सुंदरी को दे मारा । पांचों

उंगलियां के निशान उसकी गाल पर पड़ गये ।

सुंदरी भी एक तैतय्ये की तरह अमन पर टूट पड़ी । उसने अपने बढ़े हुए नाखूनों से उसका चेहरा लहूलुहान कर दिया । ईश्वर का शुक्र था कि उसकी उँगलियों अमन की आंखों में नहीं पड़ी वरना वह तो अमन की पुतलियां ही नोंच कर बाहर निकाल डालती ।

घरवाले हक्के बक्के होकर उसकी तरफ़ देख रहे थे, कि सुंदरी अपनी इस हरकत पर शर्मिन्दा होकर रोती धोती-सामने कमरे में चली गई और उसने भीतर से साँकल चढ़ा ली ।

तेजी बेचारी हाथ मल रही थी, "शायद इसे चड़े-पड़े की शिकायत हो जाती है ।"

"आज तो क़सूर अमन का था ।" शैली बोला, "पहल अमन ने की थी । औरत जात पर हाथ उठाना मेरे ख्याल में बेहूदगी है ।"

"तू बड़ा नादूशाह बनता है । देखेंगे जब तू डोला लेकर आयेगा तो क्या करेगा," अमन ने चिढ़कर कहा ।

"तुम भाई आपस में क्यों झगड़ते हो ?" नसरीन उन्हें समझाने लगी । "मियां-बीवी का झगड़ा है, अपने आप निपटा लेंगे । क्या इससे पहले नहीं वे आपस में उलझे ?"

और फिर वही बात हुई, मुश्किल से चार दिन नहीं बीते थे कि सुंदरी अमन की हिफ़ाज़तें करने लगी । अमन सुंदरी पर जैसे जान छिड़क रहा हो । आसमान के ऊपर ईश्वर और नीचे सुंदरी । सुंदरी भी जैसे अमन के तलुओं के नीचे अपनी हथोलियां बिछा रही हो ।

बहुत दिन पहले अमन बाउली साहब की महिमा में एक आँखों देखी घटना का जिक्र कर रहा था ।

गुरू महाराज के दर्शनों के लिये एक साधु आया, कितने ही दिन गुरू अमरदास जी की संगत में बिताकर जब चलने लगा तो गुरू महाराज उससे पूछ बैठे कि अब उसका कहाँ जाने का इरादा है । साधु कहने लगा, हम अब गंगा स्नान के लिये जायेंगे । उसके बाद ईश्वर की मर्ज़ी ।

यह सुन कर गुरू महाराज ने अपने साधु मित्र को मशवरा दिया कि गंगा जाने की कोई ख़ास ज़रूरत नहीं, उसे बाउली साहब में ही स्नान कर लेना चाहिये । बाउली साहब के स्नान का माहात्म्य गंगा स्नान के बराबर है ।

साधु महाराज की तसल्ली नहीं हुई और वह सुनी अनसुनी करके अपने रास्ते पर चला गया ।

कई दिन बाद अपने डेरे लौटते वक्त रास्ते में वह फिर गुरू महाराज के दर्शनों के लिये आया, गंगा स्नान की कहानियां बताते हुए कहने लगा-और तो सब ठीक था, एक सुबह गंगा मैय्या में स्नान करते हुए मेरा लोटा छिटक कर पानी में डूब गया ।' गुरू साहब ने इस बात की तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया ।

उस दिन जब गंगा स्नान करके लौटा, साधु गोइंदवाल में बाउली साहब के स्नान के

लिये गया । वह अभी पानी में उतरा ही था कि उसके पैर किसी चीज़ से टकराये । साधु ने हाथ बढ़ा कर देखा तो वह एक लोटा था । जब स्नान करके बाहर आया तो साधु की हैरानी की हद न रही, वह तो उसीका अपना लोटा था । वही लोटा जिस पर उसके गुरू का नाम उकेरा हुआ था ।''

साधु ने जब गुरू महाराज को आ कर लोटे के बारे में बताया तो वे मुस्कराने लगे । ''मैंने तुझे नहीं कहा था कि बाउली साहब में गंगा मैय्या ख़ुद आ जाती है,'' जैसे उनकी नज़रें कह रही हों ।

इस घटना के बारे में सुनकर सुंदरी की आँखें खुली की खुली रह गई ।

38

अमन गुरू महाराज के साथ तीर्थ यात्रा पर गया हुआ था । आज काफ़ी दिन हो गये थे । कई लोग यात्रा के लिये उनके साथ चल पड़े थे । भाई जेठा जी थे । बीबी भानी थी । गोइंदवाल के जिस जिस वासी ने सुना वह सतगुरू के पीछे पीछे चल दिया । रास्ते में सतगुरू जहां भी पड़ाव करते, नई नई संगतें उनके साथ जुड़ती जाती ।

पहले शैली भी तैयार हो गया था । उसके भीतर एक बार लाहौर जाने की तमन्ना अभी भी कहीं छिपी पड़ी थी । फिर जाने से क्षण भर पहले ही उसने अपना इरादा बदल लिया था । इसकी एक वजह सुंदरी थी ।

खेतों में काम करते वक्त सुंदरी ने बैंगनों से भरे अपने झोले को एक तरफ़ रखते हुए कहा, ''तुझे यह तीर्थ यात्रा का चाव कब से चढ़ गया है ?''

''क्या मतलब ?'' शैली ने हैरानी से पूछा ।

''मेरा मतलब है कि तू तो अच्छा भला, सयाना समझदार किसान है । यह तीर्थ यात्रा तो अमन जैसे ज्ञानियों को शोभा देती है ।''

''मुझे तेरी बात की समझ नहीं आई ।'' शैली पेड़ पर सुंदरी के नज़दीक बैठ गया था ।

''मेरा मतलब यह है कि अगर अमन का यह कहना ठीक है कि गंगा जी का स्नान करके लौटे साधु का गंगा में डूबा लौटा बाउली साहब पहुंच गया था तो फिर गंगा जी या और किसी तीर्थ स्थान पर स्नान के लिये भटकना किस लिये ?''

शैली ने सुना तो वह सोच में डूब गया । सुंदरी के तर्क में बड़ा वज़न था । सुंदरी सुंदर औरत थी, इस तरह बहस करती हुई और भी सुंदर लगने लगती थी ।

''अमन तो सिर्फ़ इस लिये व्याकुल है कि किसी तरह उसे किसी मंजी की बख़्शीश हो जाये ।'' सुंदरी शैली की तरफ़ इस तरह देख रही थी जैसे ज़िंदगी के ऐसे पहलू भी थे जिनमें अपने पति अमन की बजाये वह शैली के कहीं नज़दीक हो ।

''यह मंजी वाली बीमारी तो अमन को मैंने लगाई है । '' शैली अपने भीतर की दोषी अंतरात्मा को फिर प्रकट कर रहा था ।

''तू फिर अमन को जानता ही नहीं ।'' सुंदरी ने ऐसे कहा जैसे उसके भीतर की

कोई दुखती रग बोल रही हो ।

लेकिन यह सुंदरी कैसे सरक कर उसके साथ सट गई थी । एक पराई औरत कैसे उसकी तरफ़ देख रही थी । शैली एक दम ठिठक गया ।

और फिर वह एक झटके से उठा और मंडी के लिये सब्ज़ी इकट्ठी करने लगा ।

सारा दिन शैली को अपने आप से डर लगता रहा था । वह बार बार कांप उठता था । बार बार सोचता था, उसे अमन के साथ यात्रा पर जाना था । फिर न जाने क्या हुआ कि जब चलने का वक्त हुआ, उसने अपना विचार बदल लिया । उसकी बंधी बंधाई पोटली ज्यों की त्यों धरी रह गई । दो चार दिन बाद शैली को लगने लगा कि उसे सुंदरी में से वही ख़ुशबू आने लगी है जो कई बरस पहले आया करती थी । और उसकी पलकें मुंद मुंद जातीं थीं । एक दूसरे के पास से गुज़रते हुए, एक दूसरे के पास बैठे हुए, उनके अंग, उनके कपड़े न जाने कैसे एक दूसरे से रगड़ खा जाते थे । जब उनकी नज़रें एक दूसरे से मिलती तो जैसे उनके कलेजे में कुछ कुछ होने लगता । फिर शैली को महसूस होता कि उसे आठों पहर एक हल्का सा बुख़ार रहने लगा हो । सुंदरी का जी करता, कोई बहाना निकले तो वह छल छल आँसू रो ले ।

उस दिन चौंके में बैठकर खाना खाते वक्त शैली ने देखा, उसकी रोटी पर जैसे मक्खन का पेड़ा रखा हो । सुंदरी उसके सामने थाली रख कर गई और वह उसके मुंह की तरफ़ देखता रह गया । बड़ी मुश्किल से किसी तरह उसने मक्खन को संभाला । गर्म फुलके के दांयें बायें वह जाता था । दूसरा फुलका जब तवे से उतार कर लाई तो सुंदरी ने फिर उस पर ढेर सा मक्खन उडेला हुआ था । सामने चारपाई पर बैठी तेजी और नसरीन बारी बारी एक दूसरे के बालों को गूथ रही थी । शैली की समझ में नहीं आ रहा था कि सुंदरी को केसे कहे, इतना मक्खन खाकर उसका पेट अफर जायेगा । तीसरी बार सुंदरी ने फिर वही हरकत की थी और उसकी थाली में फुलका रख कर मुस्कराई थी, शैली को यक़ीन हो गया कि वह जानबूझ कर यह सब कर रही थी ।

वही बात उस रात सोने के वक्त हुई । सोने से पहले शैली दिन भर के कढ़े हुए दूध का कटोरा पीने का आदी था । उस रात जो दूध सूंदरी उसके लिये लाई उसमें दूध कम था और मलाई ज़्यादा । मलाई की एक परत ख़त्म करता तो नीचे से एक और परत निकल आती । उसके बाद एक और, बड़ी मुश्किल से उसने किसी तरह अपना नेम पूरा किया ।

कहीं न कहीं कोई गड़बड़ ज़रूर थी ।

उस रात नींद में शैली ने एक के बाद एक कई भयानक सपने देखे । कहीं अमन उसे काट रहा था और सुंदरी बिट बिट ताक रही थी । कहीं अमन उसके टुकड़े टुकड़े कर रहा था । और सुंदरी उसे मना नहीं कर रही थी । कहीं अमन उसका कलेजा भून कर खा रहा था और एकाध निवाला सुंदरी के मुंह में भी डाल देता था । सुंदरी चटख़ारे मार रही थी ।

सारी रात इसी तरह बीत गई । शैली अक्सर पौ फटने पर उठ जाता था । जब घर के बाक़ी लोग माथा टेकने, कीर्तन सुनने धर्मशाला जाते थे, शैली नहा धोकर अपने खेतों की

ओर चल देता था। लेकिन आज पीली पीली धूप निकल आई थी और वह अभी भी पलंग पर ज्यों का त्यों सो रहा था। और कोई सपना देख रहा था। घर के बाक़ी लोग साध संगत से बैठे कीर्तन सुन रहे थे और शैली बाहर जोड़ों में हाथ बांधें सर नवाये खड़ा था। और अब भीतर से जो भी आता उसके मुंह पर थूक जाता, कोई उसके सर पर जूते लगाता। शैली का ऊपर का साँस ऊपर और नीचे का नीचे रह गया, इन लोगों में तेजी मौसी भी शामिल थी, अमन भी था। बस उसकी अम्मी नहीं थी। उसकी अम्मी कहां थी ? और फिर शैली ने देखा नसरीन तख़्ते का तख़्ता जोड़ों में एक तरफ़ पड़ी थी। भीतर से आने वाला हर आदमी उसे लताड़ता जा रहा था। कोई उसकी सफ़ेद चोटी को मसल रहा था, कोई उसके पवित्र अंगों को रौंद रहा था। वह मिट्टी के साथ मिट्टी हो रही थी।

घर वाले कभी के गुरद्वारे जा चुके थे और शैली अभी भी सोकर नहीं उठा था। आख़िर एक के बाद दूसरी आवाज़ देकर सुंदरी ने उसे उठाया। शैली पसीने से तर हुआ जागा और उसी तरह खेतों की ओर चल पड़ा। देर भी तो कितनी हो गई थी- बोला, मैं वहीं रहट वाले कुंए पर नहा लूंगा।

वह तेज़ी से चल पड़ा। सुंदरी उसे देखती रह गई। उस कम्बख़्त ने आज उसे साथ चलने तक के लिए भी नहीं बुलाया था।

उस शाम शैली घर नहीं लौटा। उसने संदेशा भेजा कि वह रात खेतों में ही टिक जायेगा। शैली पहले भी कई बार ऐसा कर चुका था।

39

आजकल शैली अक्सर खेतों में बनी कोठरी में रुक जाता था। दिन में तभी घर फेरा मारता, जब उसे शहर में कोई काम होता, नहीं तो कई बार दो-दो चार चार दिन बीत जाते, वह खेतों में ही व्यस्त रहता, मट्टी के साथ मट्टी हुआ रहता। दोनों वक्त उसका खाना घर से आता था। सुंदरी, तेजी और नसरीन ने बारी बांध रखी थी। ऐसा भी होता कि कई बार कोई मुज़ारा शैली का खाना ले जाता, शाम को ख़ाली बर्तन पहुँचा आता।

ज्यों ज्यों शैली ने खेतों में ज़्यादा समय बिताना शुरू कर दिया था, सुंदरी भी सत्संग में ज़्यादा जाने लगी थी। न जाने क्यों आज कल उसका सत्संग में मन भी कुछ ज़्यादा लगता था। जिस तरह मैल से भरे शरीर को साबुन से मल मल कर धोने में राहत महसूस होती है। प्यासे को ठंडा पानी पीकर सरूर आता है। घुप्प अंधेरी रात में एक अकेले तारे की लौ सांत्वना देती है।

साध संगत में बैठी कीर्तन का आनंद उठाती हुई सुंदरी कभी कभी हाथ जोड़ती, अब अमन को लौट आना चाहिए। लेकिन इधर गुरू महाराज की यात्रा की कुछ और ही ख़बरे आ रही थीं।

बियासा नदी पार करके पहला पड़ाव उन्होंने सुल्तानपुर में किया था। यहाँ से भाई पारों उन्हें अपने क़स्बे "डल्ला" में ले गये। उन दिनों डल्ला गुरसिक्खों का गढ़ था।

डल्ला से चल कर अगला पड़ाव गुरू महाराज ने नूरमहल में किया। सतलुज

दरिया में नाव पड़ती थी। गुरू महाराज सतलुज पार करके मालवे के इलाक़े को निहाल करते हुए अंबाला रुके। अंबाले से पहेवे। फिर सनेहत। उसके बाद कुरूक्षेत्र।

इतने में सैकड़ों श्रद्धालु गुरू महाराज की संगत में शामिल होते जा रहे थे। कथा-कीर्तन वार्तालाप हो तो कई मुद्दों पर बहस होती। जो कोई भी आता, निहाल होकर जाता। कुरूक्षेत्र में लोग देख देख कर हैरान हो रहे थे कि श्रद्धालुओं से भेंट स्वीकार करने की बजाये, गुरू महाराज ज़रूरतमंदों में धन, वस्त्र और दूसरी सामग्री बाँट रहे थे।

कुरूक्षेत्र के निवास के बाद गुरू महाराज पिपली, करनाल, पानीपत और शामली होते हुए जमुना किनारे पहुंचे। यहां बेड़ियों के पुल पर चुंगी वसूल करने वाले बैठे थे। गुरू महाराज के साथ जो "सतनाम सिरी वाहिगुरू" का जाप कर रहा होता उसका महसूल माफ़ कर दिया जाता। श्रद्धालुओं की इतनी भारी भीड़े थीं कि महसूल अधिकारी मुश्किल से अपनी गोलकें संभाल सके। ये लोग तो बाढ़ की तरह चले आ रहे थे जिसके सामने खड़े होने की मजाल किसी चुंगी वाले में नहीं थी। मुग़ल शहनशाह का फ़रमान था या नहीं, इस तरह के लावे के सामने किसी का भी टिक पाना असंभव था।

जब सुंदरी को यह ख़बर मिली कि गुरू महाराज जमुना पार करके हरिद्वार की तरफ़ निकल गये हैं, तो उसे जैसे हाथ पैर पड़ने लगे। वह सोचने लगी, उसे अमन के साथ गुरू महाराज के काफ़िले में शामिल हो जाना चाहिये था।

सुंदरी का अवसाद और भी गहरा हो गया। जब उसने सुना कि तीर्थयात्रा के दौरान गुरू महाराज ने भाई जेठा जी को हुक्म दिया कि तुंग गांव वाली ज़मीन पर "अमरसर" नाम का एक सरोवर बनाया जाये जो वक्त पड़ने पर गुरसिक्खों का केन्द्रीय तीर्थ बन सके। कहने वाले कह रहे थे, अमन ने इस सेवा के लिये अपने आप को जेठा जी के हवाले कर दिया था।

आज कितने दिनों से सुंदरी ने खेतों की ओर चक्कर नहीं लगाया था। पहले कभी कभार हो आती थी। तब उसे खेती के काम में आनंद आता था, हरे भरे खेतों में घूमकर उसका दिल खिल उठता था। सब्ज़ियों से लदी बेलें देखकर उसे जैसे नशा सा चढ़ जाता था। फलों, फूलों को झकझोरते हुए उसे अपना मन भरा भरा लगता।

लेकिन आजकल सुंदरी घर को झाड़ती, लुहारती रहती। उसका आँगन जैसे चमचमाता रहता। उसका कमरा शीशे की तरह साफ़ रहता। देखने वाला अपना मुंह उसमें देख सकता था।

उस दिन शाम के वक्त नसरीन और तेजी कथा सुनने के लिये धर्मशाला गई हुई थी। सुंदरी घर में अकेली थी। आज तीन दिन हो गये थे, शैली ने घर में चक्कर नहीं लगाया था। वर्षा-बूंदाबांदी के दिन थे, वह खेतों में धान की रोपाई में व्यस्त थ। एकाध बार तेजी और नसरीन बारी बारी से उसकी ख़बर ले आई थी।

न जाने क्यों सुंदरी को आज कल एक अजीब तरह का डर खाने लगता था। रात के अंधेरे में तो समझ आ सकती थी लेकिन उसे दिन दिहाड़े एकान्त में दीवारें जैसे काटने को

दौड़ती थीं। अक्सर जब घर में कोई न होता तो वह बाहर ड्योढ़ी का दरवाज़ा बंद करके रखती। साँकल लगा कर। केवल बंद किवाड़ से उसकी तसल्ली नहीं होती थी।

क़रीब तीसरे पहर उस दिन सुंदरी को बाहर ड्योढ़ी का दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ आई। उसने सुनी अनसुनी कर दी। उस वक्त कोई नहीं आ सकता था। तेजी और नसरीन तो कथा के भोग के बाद रहिरास साहब का पाठ सुनकर लौटती थीं। सुंदरी अपने पलंग पर ऐसे लेटी थी, जैसे किसी बच्चे को दूध पिला रही हो, तकिये पर सर, दांई पसली के भार बांई तरफ़ छाती को ढलकाये हुए। एक हसीन सपना। अमन का यह बेटा कितना नटखट था। कैसे उसकी छातियों में मुक्के मारता था। दो चुस्कियां लेकर फिर खेलने लग जाता था। सुंदरी के स्तनों से दूध छलक रहा था। और यह अमन की औलाद थी जिसे खेलने से ही फ़ुर्सत नहीं मिल रही थी।

बाहर डयोढ़ी के दरवाज़े पर फिर ठकठक हुई। सचमुच कोई था। सुंदरी ने फिर सुनी अनसुनी कर दी। वह अपनी खेल में खोई हुई थी। इस वक्त तो वह किसी के लिये दरवाज़ा नहीं खोलेगी। किसी के लिये भी नहीं। जब बच्चा एक ही सांस में दूध पी रहा है। पहले एक स्तन, फिर दूसरा स्तन, हाय कैसे एक ही साँस में उसका सारा दूध खींच रहा है। जैसे सुंदरी की जान भी उसकी चुसर चुसर के साथ निकलती जा रही हो।

और अब उसे नींद आ रही थी। हाँ, उसे सो जाना चाहिए। दूध पी चुका है। पेट भर कर दूध पी चुका है, अब उसे सो जाना चाहिए। और सुंदरी लोरी के बोल गुनगुनाना चाह रही थी। यह क्या ? वह अच्छी माँ है, उसे किसी लोरी के बोल तक याद नहीं हैं ? वैसे ही ऊं ऊं कर रही है, वैसे ही 'सो जा' पुकार रही है। न उसके बाप के गुण गा रही है, न बच्चे को उसकी आने वाली बहन का ज़िक्र करके बहला रही है।

तौबा तौबा, बाहर कोई कितने ज़ोर से खट खट कर रहा था। हाँ, कोई बाहर था। कब से दरवाज़ा खटखटा रहा था।

और सुंदरी हड़बड़ा कर उठी। आंखें मलती हुई, सोई सोई आँखें, बिखरे बाल, माथे और चेहरे को ढंकते हुए, दुपट्टा कंधे से सरक कर उसके पीछे घिसटता हुआ, उसने जाकर डयोढ़ी का दरवाज़ा खोल दिया।

यह तो शैली था। कब से दरवाज़े को कुटता हुआ थक-टूट रहा था। आकाश पर घने बादल छाये थे। काली घटा बरसने को तैयार थी। इधर सुंदरी ने किवाड़ की साँकल खोली, उधर से जैसे गाज गिरी, बादल गरजे और फिर चारों तरफ़ अधेरा छा गया, घुप्प अंधेरा। जैसे घटा दबेपांव नीचे उतर आई और उसने सुंदरी और शैली को अपने आलिंगन में ले लिया।

चारों तरफ़ जल थल एक हो गया। ऐसा तो कभी नहीं बरसा होगा। ऐसी काली घटा तो कभी नहीं उमड़ी होगी।

वे दोनों अभी ड्योढ़ी में खड़े ही थे कि उन्होंने देखा, सामने से तेजी और नसरीन भीग कर तेज़ क़दमों से चली आ रही थीं।

"हमने वर्षा का मौसम देख कर सोचा कि बिना भीगे घर पहुंच जाये," नसरीन कर रही थी ।

40

वर्षा नहीं थमी । लगातार पानी बरस रहा था । शाम हो गई । रात हो गई । चारों तरफ़ जल थल एक हो रहा था । रात गहरी हो गई । बादल पहले की तरह घिर घिर कर आ रहे थे । पहले की तरह जैसे आकाश के अँजुलियां भर भर कर ख़ाली कर रहे हो ।

और अब झंझावात शुरू हो गया था । जैसे काली-बहरी रात में फुफकारता, चिंघाड़ता, सीटियाँ बजाता हुआ हर चीज़ को बर्बाद करने पर तुला हो ।

सुंदरी को नींद नहीं आ रही थी । ज्यों ज्यों बिजली चमकती, ज्यों ज्यों बादल गरजते, ज्यों ज्यों बौछारों के छींटे सामने कमरे के किवाड़ को झिझोड़ते, उसकी छाती काँप कांप जाती। सुंदरी को लगता जैसे कोई उनका दरवाज़ा तोड़ रहा हो । वह और उसकी सास, अबला औरतें अकेली थीं । सुंदरी को बेहद डर लगने लगा था । जैसा पहले कभी नहीं हुआ था ।

आज की रात तो शैली भी घर था । सामने आँगन के उस पार अपने कमरे में सो रहा था । थोड़ी देर के लिये शाम को घर चक्कर लगाने आया था । वर्षा ने जैसे उसे घेर लिया हो । यह तो अच्छा ही हुआ नहीं तो तीन औरतें घर में अकेली थीं, इस तरह की तूफ़ानी रात में कुछ भी हो सकता था ।

बिजली कैसी लपलपा रही थी ? जैसे खिड़कियों, झरोखों के छेदों में से हाथापाई कर रही हो । बादल इस तरह गरज रहे थे, जैसे सोये लोगों को झिंझोड़ झिंझोड़ कर तबाह कर रहे हों ।

अचानक एक ख़ौफ़ ने आकर सुंदरी को दबोच लिया । उसे लगा कि इस अंधड़, इस तूफान, इस काली बहरी रात में उनके कमरे की छत किसी वक्त भी उस पर आ गिरेगी । इस तरह की रात में तो कुछ भी हो सकता था ।

और फिर उसके अंतःकरण का अंधेरा, उनके कमरे के अंधेरे को और भयानक बना रहा था । सुंदरी पसीने पसीने होने लगी । उसे बेहद डर लगने लगा था । अपने आप से जैसे ख़ौफ़ आ रहा हो । पट पट खुली आंखें, वह आसपास अंधेरे में झाँक रही थी । बाहर वर्षा ज्यों की त्यों हो रही थी । झंझा ज्यों का त्यों चल रहा था । बिजली ज्यों की त्यों लपक रही थी, बादल ज्यों के त्यों गरज रहे थे । सुंदरी को लगता अंधेरे में कोई बढ़ रहे हाथ उसकी गर्दन को मरोड़ने के लिये उतावले हो रहे थे । लंबे लंबे नाखूनों वाले ये पंजे आगे बढ़ने के लिये उतावले हो रहे थे । अब तो किसी वक्तभी उसे दबोच सकते थे । फिर अचानक ही सुंदरी की चीख़ निकल गई, सामने अपने पलंग पर गहरी नींद सोई तेजी की आंख खुल गई ।

"क्यों बेटा, क्या हुआ है ?" वह ख़ौफ़ से सहमी हुई पलंग की तरफ़ आई । सुंदरी के गले में से डर के मारे आवाज़ नहीं निकल रही थी । वह तो पसीने से जैसे निचुड़ रही

थी ।

तेजी सुंदरी के पलंग पर उसके साथ लेट गई । "लगता है लड़की को कोई बुरा सपना आया है," उसने सोचा और एक दूसरे की छाती से लगी सास-बहू गहरी नींद में सो गईं ।

अगली सुबह चारों तरफ़ इस तरह ख़ामोशी थी, वातावरण इतना स्वच्छ था जैसे कभी वर्षा हुई ही न हो । तेजी और नसरीन धर्मशाला जाने के लिये नहा-धो रही थीं कि सुंदरी भी उनके साथ जाने के लिये तैयार हो गई । आजकल वह अक्सर उनका साथ दिया करती थी ।

शैली सामने वाले कमरे में अभी भी गहरी नींद सो रहा था । जैसे किसी ने रात भर पहरा दिया हो "इस तरह की तूफ़ानी रात में किसी को नींद थोड़े ही आती है ।" नसरीन कह रही थी, "जब जब उसे कोई आहट सुनाई देती, शैली मुझे करवटें बदलता सुनाई देता था, सारी रात ही तो ऐसा होता रहा ।" और फिर तीनों की तीनों जैसे शैली पर तरस खा कर उसे ज्यों का त्यों सोता छोड़ कर सत्संग के लिये चल पड़ीं । जाते हुए बाहर ड्योढ़ी का दरवाज़ा फेर गई ।

पीली पीली धूप चढ़ आई थी कि सुनसान आँगन में अचानक अमन आ गया । और अमन के साथ यह कौन थी ? इतनी सुंदर औरत, जैसे आसमान से उतरी परी हो । मेहमान औरत की उंगली थामें एक बच्चा भी था । एक दम जैसे शैली की शक्ल हो । आंगन में घुसते ही उसने इधर-उधर देखा और माँ से कहने लगा, "अब्बू कहाँ हैं, अम्मी ?"

अमन ने अपने साथ आई औरत की तरफ़ देखा, उसने अमन की तरफ़ देखा और दोनों की मुस्कराहट फूट पड़ी । बैठक का दरवाज़ा खोल कर उसने माँ-बेटे को बैठाया, अमन की जान में जान आई, शैली अपने कमरे में सो रहा था । घर में और कोई भी नहीं था । बस शैली और सुनसान आँगन । इससे बेहतर हालात तो अमन सोच भी नहीं सकता था ।

मेहमान औरत नसीम थी जिसके साथ शैली की मुलाक़ात लाहौर में दुनी चंद की हवेली में हुई थी । जो ख़बर शैली को दी गई थी कि नसीम ने किसी अमीरज़ादे के साथ शादी करवा ली थी, वह सरासर ग़लत थी । दरअसल नसीम को जिस दिन एहसास हुआ कि वह माँ बनने वाली थी, वह अपनी हमराज मुग़लानी के साथ घर से निकल गई थी । चारों तरफ़ खोजने के बाद जब घरवालों को कोई कामयाबी न मिली तो उन्होंने यह कहना शुरू कर दिया कि वह किसी व्यापारी से निकाह करवा कर परदेस चली गई थी । और फिर जितने मुंह उतनी बातें ।

अपनी हमराज़ मुग़लानी के गाँव में इतने बरस रह कर शैली की निशानी को छाती से लगाये जैसे वह अपने पाप बख्शवाती रही । अब जब बच्चा सयाना हो रहा था, वह आठों पहर यही रट लगाये रखता, "मैं अपने अब्बा के पास जाऊंगा । मुझे मेरे अब्बा से मिला दो ।"

आख़िर बच्चे की ज़िद के सामने हार कर नसीम शैली को ढूंढने के लिये निकल पड़ी थी। पहले खडूर साहब गई। वहाँ माँ बेटा खज्जल ख़्वार होते रहे। फिर किसी ने उन्हें गोइंदवाल साहब का पता बताया। गोइंदवाल के रास्ते में उनकी मुलाक़ात अमन से हुई।

ईश्वर का संयोग, उसी दिन गुरू महाराज भी गोइंदवाल लौट रहे थे। उनके साथ अमन समेत श्रद्धालुओं और सेवकों की काफ़ी संगत थी।

नसीम ने अपनी सारी आप बीती अमन को बताई और वह ख़ुशी ख़ुशी माँ-बेटे को घर ले आया। अब शैली को जगाकर उसने बैठक में भेज दिया था और ख़ुद तेज़ क़दमों से धर्मशाला की और चला गया। तेजी, नसरीन और सुंदरी को घर बुलाने के लिये। उसे डर था कि अगर वह नहीं गया तो वे शायद सारा दिन नहीं लौटेंगी। इतने दिनों के बाद गुरू महाराज शहर लौटे थे, इस ख़ुशी में दीवान सजा होगा, कीर्तनिए आये होंगे, ढड्ड-सारंगी वाले आये होंगे और फिर अटूट लंगर चलेगा। नसरीन और तेजी लंगर की बोरियां लपेट कर घर लौटने वाली औरते थीं। बर्तन माँजकर, बर्तन संभालकर, झाड़ू देकर ही वे कहीं फ़ारिग़ होती।

कुछ देर बाद ही अमन अपनी मां, मौसी और सुंदरी को लेकर घर लौट आया। रास्ते में सारी बात उसने उनके साथ कर ली थी।

आंगन में घुसीं तो उन्हें बैठक में से बच्चे की किलकारी भर के हंसने की आवाज़ आई और फिर इसमें शैली और बच्चे की माँ की हंसी भी शामिल हो गई थी।

नसरीन ने आगे बढ़ कर नसीम को छाती से लगा लिया, नसरीन के बाद तेजी ने, तेजी के बाद सुंदरी ने।

''हाय अल्ला, मैंने जो सुन रखा था, यह परिवार तो उससे भी ज्यादा प्यारा है !'' आसपास देखकर नसीम जैसे अपने आप से कह रही थी। और फिर जैसे वह ख़ुशी के सागर में डूब गई।

चौथा खंड

1

एक तरफ़ सुलतानपुर गांव, दूसरी तरफ़ गिलवाली गाँव, नीचे तुंग गाँव इन से घिरा एक नगर बसाया जाना था जो मुक्ति का द्वार भी होगा और भक्ति का घर भी। यह आदेश था गुरू अमरदास जी का (गुरू) रामदास जी को। जिन श्रद्धालुओं को उन्होंने अपना साथ देने के लिये चुना, उनमें अमन भी था।

उधर गुरु महाराज के साथ दौरे से लौटा, इधर नई तैयारियां करने लगा। यह किस तरह का आदमी था ! सुंदरी उसके चेहरे की तरफ़ देख देख कर अचंभा करती रहती।

और एक शैली था, जिस दिन से नसीम आई, उसका बेटा आया, वह और का और हो गया था। बीवी के सिवा और कुछ नहीं, बेटे सुमन के सिवा और कुछ भी नहीं। घर में हर वक्त गहमा गहमी रहती। आँगन भरा भरा लगता। नसीम के साथ आई मुग़लानी इतनी मुहब्बत करने वाली औरत थी कि उसने तो जैसे हर किसी को अपना दीवाना बना लिया था। किसी को बेटी कहती, किसी को पुत्तर कहती, घर की सारी ज़िम्मेदारियाँ उसने अपने ऊपर ले लीं थीं। अमृतवेला में जाग कर चूल्हे चौंके का काम शुरू करती और देर रात तक किसी न किसी काम में जुटी रहती।

मुग़लानी बेहद दिलकश शख़्सीयत की मालकिन थी। जवानी ढल रही थी, बाल खिचड़ी हो रहे थे, लेकिन चेहरा दमदमाता था। पाक दामन, पाँचों वक्त नमाज़ पढ़ती, मजाल है कभी अपने नेम से चूक जाये। रमज़ान के महीने में वह तड़के ही उठकर अपने लिये सहरी तैयार करती। और फिर तस्बीह लेकर एकान्त में विरद करने बैठ जाती। शुरू शुरू में उसका साथ देने के लिये नसीम ने भी एकाध रोज़ा रखा, फिर टाल गई। मुग़लानी ख़ुद रोज़े की पूरी पाबंदी करती, लेकिन परिवार के बाक़ी लोगों के लिये सारा दिन चूल्हे चौंके में बैठी रांधती पकाती रहती। घर में सबको अजीब अजीब लगता लेकिन मुग़लानी थी कि न अपने धर्म-कर्म से हटती, न अपने फ़र्ज से कोताही होने देती।

एक तो धर्म कर्म की पाबंद थी, दूसरे सफ़ाई का बेहद ख़्याल रखती, जैसे उस पर कोई जुनून सवार हो। घर को शीशे की तरह चमका कर रखती। झाड़ू देने लगती तो आँगन, ड्योढ़ी, गली तक को बुहार आती। जहाँ जहाँ फ़र्श था, रोज़ उसे धोती। ख़ुद नहाने बैठती तो बलटोहियाँ, पानी बहा देती। सब उसे पानी की बैरिन कहते थे। जबसे वह आई थी झीवर उनका पानी ढो ढो कर थक-हार जाता था। कपड़े धोने बैठतीं तो परिवार भर के मैले कपड़े धो डालती। ढेर कपड़े धोती, फिर बाहर आंगन में या छत पर जाकर पसारने लगती।

सुमन में तो जैसे उसकी जान हो। पैदा उसे नसीम ने किया था, लेकिन उसके

पालन पोषण की ज़िम्मेदारी मुग़लानी ने अपने ऊपर ले रखी थी। दिन रात उसके चाव पूरे करती रहती। उसके मुंह से बात बाद में निकलती, पहले पूरी कर दी जाती।

मुग़लानी का अतीत समय धार्मिक मर्यादा के संकोच की धुंध के पीछे छिपा था। नसीम से कुछ बरस बड़ी थी। बस इतना ही उम्र का फ़र्क था कि वह उसकी अम्मा भी बन जाती थी और ज़रूरत पड़ने पर उसकी जिगरी सहेली की तरह उसके साथ हँस खेल लेती थी, उसकी हमराज़ तो वह थी ही।

सब उसे देखकर यही सवाल पूछते–इस तरह की सुंदर, मिलनसार स्वभाव वाली औरत क्वांरी कैसे रह गई ? मुग़लानी का एक ही जवाब होता, मेरी शादी तो नसीम बीबी के साथ हो गई है। शायद यही ठीक था।

सचमुच मुग़लानी नसीम में अपना जीवन जी रही थी। अपनी हर तमन्ना, हर सपना नसीम के रूप में पूरा कर लेती।

मुग़लानी जब उनके यहाँ आई थी तो नसीम 13 बरस की थी। मुग़लानी को अपने गाँव से निकले अभी 4–6 हफ़्ते नहीं बीते थे, उसे लगता जैसे वह नसीम की तरह छोटी लड़की बन गई हो। कितने सुंदर ढंग से उसके हाथों की उंगलियों में उंगलियां डाल कर किकली खेलने लग जाती थी। उनके दुपट्टे उड़ उड़ जाते, उनकी चोटियां गिर गिर जातीं, उनके चेहरे लाल सुर्ख़ हो जाते, पसीने छूट छूट पड़ते, लेकिन क्या मजाल है कि वे थक जायें या हार मान लें। नसीम जैसे आग का शोला हो और मुग़लानी एक सिमटा हुआ शोला, वे कुछ ऐसो ही मालूम होतीं थीं।

नसीम सजती तो मुग़लानी को लगता जैसे वह खुद सज रही हो। नसीम नये कपड़े पहनती तो मुग़लानी अपने को सुंदर महसूस करने लगती। और फिर जब नसीम का शैली के साथ इश्क हुआ तो मुग़लानी जैसे एक नशे में मदहोश पड़ी रहती। लाख बहानों, लाख कोशिशों से नसीम के राज़ को छिपा कर, ढक कर, सीने से लगाये रखती।

मुग़लानी के माँ बाप ने बेटी का नाम बरकते रखा था लेकिन वह कभो किसी को उसे इस नाम से पुकारने की इजाज़त नहीं देती थी। उसकी आँखें कहती – मैं और बरकत ? यह कुफ्र है। इस तरह की ख़ुशमिज़ाज प्यारी शख़्सीयत के चेहरे पर क्षण भर के लिये किसी अप्रिय याद की परछाईं पड़ जाती, जैसे लट लट जलती कोई मताबी क्षण भर के लिये मद्धम पड़ जाये।

यह ना–ख़ुशगवार याद क्या थी ? इसका किसी को कुछ पता नहीं था। नसीम को भी नहीं। वह हर कोशिश कर चुकी थी। मुग़लानी टस से मस नहीं होती थी। लेकिन नसीम को यह मालूम था कि उसकी उलझन जज़बाती थी। लगता था कि उसे कोई गहरी चोट लगी थी।

बात यूं हुई, उस पसित्ते गाँव में, जहाँ वे आकर बसीं थीं, जब नसीम का बच्चा हुआ, तो नसीम की तबियत ढीली रहने लगी। इस वजह से उसका दूध बिल्कुल सूख गया। दूध के लिये बिलखता बच्चा मुग़लानी की छाती से लगा रोता रहता। एक दिन दो

दिन बीते कि मुग़लानी का दूध उतर आया । और फिर सुमन मुग़लानी के दूध पर पलने लगा ।

नसीम सोचती, किसी क्वारी लड़की का इस तरह दूध नहीं उतर सकता। उसकी मुग़लानी के साथ ज़रूर कोई हादसा हुआ होगा । मुग़लानी थी कि पैरों पर पानी नहीं पड़ने देती थी । दूध तो क्या, नसीम के जाये के लिये अगर उसे जान भी देनी पड़ती तो उसे अफ़सोस न होता । लालों जैसा बच्चा जिस तरह रोता था, उसका बिलखना सुन कर मुग़लानी की छाती में अगर दूध उतर आया, तो यह कोई चामत्कारिक घटना नहीं थी । कुछ इस तरह सोच कर मुग़लानी अपने मन को समझा लेती थी, और दूसरे लोगों को झुठलाती रहती थी । रब्ब का शुक्र था कि वे दोनों किसी अजनबी गाँव में जा बसी थीं । अपना गांव होता तो मुग़लानी की लाख बदनामी होती । लोग सौ सौ तोहमत लगाते ।

गोइंदवाल वाले घर में और सब कुछ ठीक था, सिर्फ़ एक बात कभी कभी मुग़लानी को खटकती थी । नसीम का बेटा सुमन जब से यहाँ आया था, हर वक्त सुंदरी के साथ चिपका रहता था । सुंदरी उसे प्यार भी तो बेहद करती थी । बच्चे के बग़ैर जैसे उसके गले के नीचे खाने का कौर नहीं उतरता था । कोई भी बहाना मिलता उसे उँगली से पकड़ कर अपने कमरे में जा घुसती । शाम को बाहर सैर के लिये जाती, तो सुमन उसके साथ होता । बाज़ार से ढेर सी चीजें ख़रीद कर उसे देती रहती । सुमन भी सुंदरी को लाड़ से 'अई' 'अई' करके बुलाता, जैसे उस पर फ़िदा हो । अब तो कुछ दिनों से सुमन ने सोना भी सुंदरी के साथ शुरू कर दिया था । इतने बरसों से वह मुग़लानी के साथ सोया करता था ।

मुग़लानी ने कई बार दबी ज़बान से शिकायत की थी कि सुमन के बग़ैर उसे नींद नहीं आती थी, लेकिन न बच्चे ने न किसी और ने इस बात की ओर ध्यान दिया ।

उधर सुमन सुंदरी से इतना घुलमिल गया था । जैसे उसकी कोख में से पैदा हुआ हो । रात को उसकी छाती से सट कर ऐसे सोता जैसे जन्म जन्मांतरों का बिछड़ा कोई किसी को मिलता है । नहायेगा तो सुंदरी के हाथों से । सुंदरी अपने हाथ से एक एक कौर उसके मुंह में डालती तब जा कर वह खाना खाता । कभी बिगड़ जाता हठ करता, किसी के क़ाबू में न आता । सुंदरी के एक बोल से ही वह निरस्त्र होकर सर झुका लेता ।

कुछ दिन बीतने पर घर में खुशी की लहर दौड़ गई । सुंदरी माँ बनने वाली थी । सब लक्षण ठीक थे । उसके पैर भारी हो रहे थे । घर में आठों पहर उल्लास छया रहता , चारों तरफ़ जैसे ख़ुशियाँ लुटाई जा रही हों । अमन के चेहरे पर भी एक अकथनीय आभा थी । सुंदरी की सास तेजी, बहूरानी के तलुवों के नीचे हथेली रख रख कर न थकती ।

सुंदरी आजकल अमन के चेहरे की ओर ताकती रहती । नया नगर बसाने के सिलसिले में (गुरू) रामदास जी की तैयारियाँ ज़ोरों पर थीं । देखें अब अमन उनके साथ जाता है या नहीं ।

2

सुंदरी माँ बनने वाली थी, उनके आंगन में जैसे ख़ुशियों का राज हो । क्या शैली,

क्या नसरीन, क्या तेजी, क्या अमन, सब एक चाव में खिले-खिले लगते। कितनी इन्तज़ार करवाई थी इस लड़की ने ! सच्ची बात तो यह थी कि जैसे ही अमन ने सतगुरु की शरण पकड़ ली थी, तभी से तेजी सोचने लगी थी शायद उसकी किस्मत में पोते-पोती से खेलना लिखा ही नहीं था।

और अब जब इस बात का निश्चय हो गया था कि सुंदरी की कोख हरी हो गई थी, हर व्यक्ति सोचता था कि ईश्वर ने उसकी मनोकामना पूरी की है। तेजी सोचती, वह तो दोनों वक्त हाथ जोड़ती थी। बेशक गुरूबाणी कहती थी कि सतगुरू जानी जान हैं, हर किसी के मन की बात बूझ लेते हैं, तब भी वह जब गुरू महाराज के दर्शन करती, तो तेजी का रोम रोम जैसे बिलख उठता था, फ़रियाद कर उठता था। पहले वह सोचा करती थी, शैली से तो अमन अच्छा था, शैली ने तो अभी शादी भी नहीं की थी। लेकिन जबसे नसीम आई थी, उसके साथ सुमन आया था, तेजी अपने को छोटा छोटा महसूस करने लगी थी। वह सोचती पता नहीं उसे किस पाप की सज़ा मिल रही थी। क्यों उसकी अरजोई की सुनवाई नहीं हो रही थी ? और वह आठों पहर हाथ जोड़ती रहती। लंबी लंबी अरदासें करती रहती। जगह जगह जा कर मन्तें मांगती रहती। आख़िर गुरू महाराज ने उसकी सुन ली थी।

अमन को निश्चय था कि गुरू महाराज उनकी परीक्षा ले रहे थे और वह तराजू पर पूरा उतरा था। इतनी लंबी प्रतीक्षा, इतनी कठिन परीक्षा, लेकिन उसकी श्रद्धा ज्यों की त्यों बनी रही थी। अपने धर्म कर्म में उसने रत्ती भर फ़र्क नहीं आने दिया था। उसने तो मुंह खोल कर कुछ मांगा भी नहीं था। वह गुरू महाराज के श्रद्धालुओं में से था। चाहता तो किसी समय भी उनसे वर मांग सकता था, लेकिन वह रब्ब की रज़ा में राज़ी रहा। घरवाले, अड़ौसी-पड़ौसी दोस्त-रिश्तेदार उसे ताने देते रहते थे। कई लोग यह भी सोचते थे कि उसमें कोई कमी थी। और तो और उसकी बीवी सुंदरी को उसकी मर्दानगी पर भी शक होने लगा था। लेकिन उसने कभी किसी की कोई परवाह नहीं की थी। बस एक आस्था थी उसकी अपने इष्ट पर और उसके इस विश्वास ने आज उसे निहाल कर दिया था।

नसरीन का गुरू घर में ऐसा विश्वास था कि उसको इस बात पर कभी संदेह ही नहीं हुआ था कि अमन या सुंदरी के घर औलाद नहीं होंगी। इन मामलों में देर सवेर हो जाती है, वह सोचती थी। 'जब होना होगा हो जायेगा,' वह यह सोच कर अपने मन को समझा लेती थी। और बिल्कुल ऐसा ही हुआ था। एक सुबह उसके इष्ट ने उसके आंगन में परी जैसे बहू रानी भेज दी। यही नहीं, उसके साथ उसका पोता भी था, जैसे सुच्चा मोती हो। यह तो करिश्मा था। और करामात किसे कहते हैं ? उसने तो कभी किसी चीज़ के लिये हाथ नहीं जोड़े थे। कभी कोई मनोकामना नहीं की थी। हमेशा यही कहतें, "क्या अल्ला नहीं जानता कि उसके बंदे की क्या ज़रूरतें हैं ?" पत्थर के भीतर कीड़े को भी तो वही रोज़ी पहुंचाता है। सारस सैकड़ों मील उड़ कर आ जाते हैं। पीछे उनके बच्चों की पालना कौन करता है ? कौन उनकी रखवाली करता है ?

मुग़लानी हर किसी की बात सुनती रहती, हर किसी के चेहरे की ओर देखती रहती, अनमने भाव से । फिर एक दिन उससे रहा न गया और भरे परिवार में बैठी कहने लगी, "आप सब लोग जो कहते हैं, शायद ठीक ही होगा, लेकिन मैंने जब इस आँगन में पैर डाला तो यह जान कर कि सुंदरी बेटी की कोख इतने बरस से हरी नहीं हुई, मेरे दिल ने कहा, अब नसीम की संगत में, सुमन को देख देख कर सुंदरी भी माँ बन जायेगी । और बिल्कुल ऐसा ही हुआ है । जैसे सुमन हर रात सुंदरी से लिपट कर सोता था, उसे देखकर मुझे मन ही मन पक्का निश्चय हो गया था कि हमारे आँगन में अब रौनक बढ़ने वाली है, चाहे चार हफ़्ते लगें, चाहे छः हफ़्ते लगें । आख़िरकार यही बात हुई है । क़ुदरत का क़ानून है । ख़रबूज़ा, ख़रबूज़े को देखकर रंग पकड़ता है ।"

जिस विश्वास के साथ मुग़लानी यह सब कुछ कह रही थी, किसी की मजाल नहीं थी कि उसे झुठला सके । और फिर बात आई गई हो गई ।

उस शाम नसीम और शैली अपने खेतों में घूम रहे थे । दूर रहट रीं रीं, ठक-ठक एक सुर में चल रहा था । हरे भरे लहलहा रहे खेत, ठंडी मीठी हवा, फूलों से लदे पौधे, सब्ज़ियों से लदीं लतायें, एक ख़ुशबू ख़ुशबू, एक नशा नशा, वातावरण में फैला था । नसीम ने शैली के मेहनत से कमाये कद बुत की तरफ़ देखा, उसके दमकते हुए चेहरे की लाली, उसकी भौंवों पर मेहनतकश खेतीहर का पसीना, देखकर जैसे नसीम का दिल आंदोलित हो उठा । सर जितनी ऊंची ज्वार-बाजरा के डंठलों की ओट में क्षण भर के लिये खड़े होकर उसने जैसे शैली के नैनों में कोई नग़मा चित्रित हुआ पढ़ लिया और फिर खड़ी खड़ी वह अपने महबूब की बांहों में ढेरी हो गई ।

अंधेरा हो चुका था । जब उस दिन वह खेतों में से निकले । उधर दिन छिपा, इधर चाँद हँसता हँसता आकाश पर चांदनी लुटाने लगा ।

अपनी घोड़ी की रकाब में पैर डालकर घर लौटती नसीम ने शैली को याद करवाया, जिस गांव में उसका बेटा पैदा हुआ था और इतने दिन जहाँ उसकी पालना हुई थी, वहां ये लोग मज़दूर थे, बस घोड़ी की लगाम पकड़ सकते थे, साईसी कर सकते थे, इससे ज़्यादा और कुछ नहीं ।

"यही तो फ़र्क है ।" शैली उसे समझा रहा था, "यही तो फ़र्क है ; गोइंदवाल, गुरू की नगरी है, गुरू अमरदास जी की । जैसे खडूर गुरू अंगददेव जी का शहर था और उससे पहले करतारपुर गुरू नानक देव जी का । यहाँ किसी सड़े सूरी या मुग़ल की मजाल नहीं हुई कि दख़ल दे सके । यहाँ राज सच्चे पातशाह का है ।"

"तभी फिर अब एक और नये शहर के निमार्ण की तैयारियाँ हो रही हैं । (गुरू) रामदास जी को उसकी ज़िम्मेदारी सौंपी गई है ।"

"इसका भला क्या मतलब हुआ ?" शैली ने नसीम से पूछा ।

नसीम की समझ में बात नहीं आई ।

"इसका मतलब यह है कि गरुआई रामदास जी को बख़्शी जायेगी ?"

"और गुरू महाराज की अपनी औलाद ?" नसीम एक सवालिया निशान बनी शैली के मुंह की ओर देखने लगी।

3

वही बात हुई। उस दिन अमन बड़ी ख़ुशी ख़ुशी आया और सारे परिवार को तैयार होने के लिये कहने लगा।

गुरु महाराज अपने दामाद जेठा जी को गुरु गद्धी सौंप रहे थे।

"यह कैसे मुमकिन है ?" नसीम अनमनी सी अमन से पूछ रही थी। "ख़ुशकिस्मती से गुरू महाराज के अपने दो बेटे हैं– मोहन जी और मोहरी जी। उनका क्या बनेगा ?"

"क्या गुरू अंगददेव जी गुरू नानक देव जी की संतान थे ? या फिर गुरू अमरदास जी ख़ुद गुरू अंगददेव जी के जाये हैं ? गुरुआई उसका हिस्सा होती है जो उसका हक़दार हो।" अमन अपने अंदाज़ में नसीम को समझा रहा था।

"और यह बात कि गुरुगद्दी गुरू महाराज की अपनी संतान को नहीं सौंपी जा रही, इस तरफ़ गुरू महाराज ने पहले भी एक बार इशारा किया था" शैली बीच में बोल उठा।

"हां" अमन कहने लगा, "गुरू महाराज ने भाई पारों परमहंस को गुरुगद्दी देने की बात सोची थी, लेकिन भाई पारो जी नहीं माने थे, वे गुरसिक्ख रहने में ही ख़ुश थे।"

"तो भी मैं सोचती हूं" नसीम की अभी भी तसल्ली नहीं हुई थी। कितनी देर बहस होती रही, फिर वे लोग उस स्थान पर पहुंच गये जहाँ यह समागम होने वाला था।

बड़ी संख्या में संगत इकट्ठी हुई थी। श्रद्धालु टोलियाँ बनाकर पहुंच रहे थे। खडूर से दातू जी और दासु जी आये हुए थे। कीर्तनिये कीर्तन कर रहे थे। चारों तरफ़ एक गहमाग़हमी थी। कानपड़ी आवाज़ सुनाई नहीं दे रही थी। हर किसी के मन में एक चाव था, एक उल्लास था।

"जेठा" जी इतने हरमन प्यारे हैं, यह तो मैंने पहले कभी सोचा ही नहीं था। शैली बोला।

"यह सब उस सेवा के कारण हुआ है जो गुरू रामदास जी महाराज ने की है।" अमन कहने लगा।

"अभी तो उन्हें गुरुआई मिली भी नहीं और तूने उन्हें पहले से गुरू बना दिया है।" सुंदरी ने अमन को छेड़ा।

ये शब्द अभी उसके मुंह में ही थे कि सामने सतगुरू अमरदास जी की दूध जैसी सफ़ेद दाढ़ी दिखाई दी। वे इधर ही आ रहे थे। उनके पीछे भाई रामदास जी थे, भाई बुड्ढा जी थे और नज़दीकी रिश्तेदार। संगत ने खड़े होकर उनका स्वागत किया, "गुरू महाराज जी की जय !" के जैकारे गूंजने लगे। बीच बीच में श्रद्धालु (गुरू) रामदास जी की जय के नारे भी लगा रहे थे।

अपना अपना स्थान ग्रहण करके गुरु अमरदास जी ने साध-संगत को संबोधित किया। अपने भाषण में उन्होंने बताया कि उनकी विदाई का समय आ गया था। और ईश्वर

की ओर से यह फ़रमान हुआ है कि गुरु गद्दी की ज़िम्मेदारी रामदास जी को बख़्शी जाये । यह सुनते ही गुरू रामदास जी की जय जयकार और भी ऊंचे स्वर में होने लगी । आकाश गूँज उठा ।

फिर गुरू महाराज ने इशारे से संगत को शाँत होने के लिये कहा । आप जिस सिंहासन पर विराजमान थे, उठकर नीचे आ गये और रामदास जी को वह स्थान ग्रहण करने के लिये कहा । फिर पाँच पैसे और नारियल भेंट करके उनकी प्रदक्षिणा की । बाबा बुड्ढा जी ने रामदास जी को तिलक लगाया । इसके बाद गुरु महाराज ने दोनों हाथ जोड़ कर गुरु रामदास जी को माथा टेका । और सत्गुरू अमरदास जी की जोत गुरु रामदास जी में परिवर्तित हो गई ।

अब उन्होंने अपने बेटे मोहन से कहा कि वह भी गुरू रामदास जी के सामने सर निवा कर उनके प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करें । लेकिन वे नहीं माने । भरी संगत में उन्होंने इन्कार ही नहीं किया बल्कि बुरी तरह से बड़बड़ाने लगे-"मैं इनके आगे कभी सिर नहीं निवाऊँगा । आपने मेरा हक़ छीनकर इन्हें दे दिया है । गुरुगद्दी मेरा विरसा है, या मोहरी का । हमारा हक़ हमसे कोई नहीं छीन सकता ।"

इस तरह बोलते बोलते मोहन साध-संगत में से उठ कर बाहर निकल गये । दिन रात बस दीवानों की तरह एक ही रट लगाये रखते- 'हमारा हक़ हमसे कोई नहीं छीन सकता ।'

मोहन के जाने के बाद पिता जी ने अपने दूसरे साहबज़ादे मोहरी को इशारा किया । पिता जी की आज्ञा पाते ही मोहरी जी अपने स्थान से उठ कर मंच पर आये और उन्होंने गुरू रामदास जी को हाथ जोड़ कर बड़ी नम्रता से माथा टेका । यह देखकर सभी प्रसन्न हुए । अब बारी बारी से पहले रिश्तेदारों ने, फिर गुर सिक्खों ने गुरू रामदास जी को माथा टेका और श्रद्धानुसार तिल-फूल की भेंट चढ़ाई ।

इस तरह शाम हो गई । उस रात सारे गोइंदवाल में दीपमाला की गई । फिर रात तक दीवान सजा रहा । फिर कई दिन और । जैसे जैसे यह सूचना चारों तरफ़ पहुँचती गई, सिक्ख संगतें गुरू रामदास जी के दर्शनों के लिये हुम-हुमा कर आतीं और निहाल होती रहतीं ।

सब प्रसन्नचित्त थे । गुरू रामदास जी ने इतना समय गुरू घर की सेवा में गुज़ारा था कि हर किसी को अपना मुरीद बना लिया था ।

और उधर दातू की तरह मोहन हर वक्त कुढ़ता रहता । जो मुंह में आता, बके जाता । जो चीज़ उसके हाथ में आती, उसे समेटता रहता, अपने क़ब्जे में करता रहता । इस तरह गुरबाणी की कुछ पोथियाँ भी उसने अपने क़ब्ज़े में कर लीं थीं । अमन को इससे चिंता होने लगी क्योंकि उनमें से कुछ पोथियों की नक़ल अभी बाक़ी थी, विशेषकर गुरू अमरदास जी की बाणी की एक निजी पोथी उसने किसी तरह हथिया ली थी । रब्ब का यही शुक्र था कि दातू की तरह उसने अपने आप को गुरू के रूप में स्थापित नहीं किया था ।

ईर्ष्या में आकर उसके मुँह में जो भी आता वह गली मुहल्ले में सबको रोक कर बके जा रहा था । एक बात जो वह हर ऐरे ग़ैरे को बताता घूम रहा था वह यह थी कि कैसे उसकी बहन भानी ने अपने घरवाले के लिये गुरुआई हथिया ली थी ।

भानी हर रोज़ गुरू महाराज को स्नान करवाती थी । उस दिन अमृत वेला में जब गुरु महाराज चौकी पर बैठने लगे तो भानी ने देखा लकड़ी की चौकी पर एक तरफ़ से झुकी हुई थी । लगता था जैसे उस तरफ़ का पाया निकल गया था । भानी ने फ़ौरन अपना पैर चौकी के नीचे टिका दिया । गुरू जी तो गिरने से बच गये, लेकिन चौकी में जड़ी कील से भानी के पैर का पंजा लहूलुहान हो गया । जब गुरू महाराज स्नान करके उठे तो देखा गुसलख़ाने में लहू की एक धार बह कर कहीं की कहीं पहुंच चुकी थी । यह जान कर कि उनकी बेटी ने अपने पिता को गिरने से बचाने के लिये अपने पैर को लहूलुहान कर लिया था, गुरु महाराज को भानी पर बड़ा लाड़ आया । मेहर में आकर उसे कहा, कुड़ीये, इस क़ुर्बानी के बदले तू कोई वर मांग ले । मोहन के कहने के मुताबिक, भानी तो जैसे इसी तरह के मौक़े की तलाश में थी, झट कहने लगी, "अगर आप कृपालु हुए तो गुरुआई मेरे घरवाले को मिले और उसके बाद हमारे ख़ानदान में रहे ।" "कभी ऐसा भी हुआ है ?" गुरु महाराज हक्के बक्के होकर उसका मुंह ताकने लगे । उन्होंने बार बार भानी को समझाया, "इस तरह तो बड़े झमेले खड़े हो जायेंगे । गुरुआई एक प्रवाह है इसमें इस तरह रुकावट नहीं पैदा करनी चाहिये ।" लेकिन भानी टस से मस नहीं हो रही थी । गुरू महाराज की दिक़्क़त यह थी कि वे वचन दे बैठे थे । उससे मुकर नहीं सकते थे ।

मोहन कभी किसी से कहता, "जेठा जी ने अकबर बादशाह से अपने लिये सिफ़ारिश करवाई है । जब गुरु महाराज के कहने पर वह अकबर बादशाह के दरबार में गया था तो वहाँ शहनशाह की चापलूसी करता रहा और दावतें उड़ाता रहा, चलते वक्त उसने मुग़ल बादशाह से गुरू जी के नाम ख़त लिखवाया- "आपका दामाद लाजवाब महापुरुष और ज्ञानी है, मैं इससे अत्यंत प्रभावित हुआ हूँ । अब मेरा इरादा है कि पहली फ़ुर्सत में मैं आपके दर्शनों के लिये आऊँ।"

इसके विपरीत जेठा जी जब लाहौर गये तो वे वहां चूना मंडी वाले अपने घर में रहे । अकबर बादशाह ने अपना अहलकार भेज कर उन्हें बुलाया । जब वे दरबार में पहुँचे तो बड़े आदर से उनका स्वागत किया गया । यह देखकर शिकायत करने आये ब्राह्मणों का जत्था जलभुन कर ख़ाक हो गया । उन्होंने हर तरह के इल्ज़ाम लगाये- सिक्ख गुरुओं ने और उनके अनुयाइयों ने ब्राह्मणमत के विरुद्ध प्रचार करके लोगों को कुमार्ग पर डाल दिया है । ये लोग कर्मकांड को नहीं मानते । गंगा गायत्री के ख़िलाफ बोलते हैं । गोइंदवाल में इन्होंने बाउली बना ली है । अब ये गंगा-यमुना की तीर्थ यात्रा पर नहीं जाते । मूर्ति पूजा का मज़ाक उड़ाते हैं । संस्कृत जैसी महान भाषा को छोड़ कर गँवई-गँवार बोली में पूजा पाठ करते हैं । हमारे समूचे समाज की हेठी हो रही है । हमारे सब देवी-देवताओं का निरादर किया जा रहा है । सम्राट अकबर जैसे अमन पसंद सम्राट के राज्य में इस अत्याचार को

समाप्त करना होगा ।

जेठा जी इन सारी बातों को बड़े धीरज से सुन रहे थे । जब ब्राह्मण जी भर कर अपना ज़हर उगल चुके तो उन्होंने एक एक दलील को ध्वस्त करना शुरू किया-

"पहली बात तो यह कि ईश्वर एक है । उन्होंने उसे पहले तीन हिस्सों में फिर कई सौ देवी-देवताओं में बाँट दिया है । गुरू महाराज और उनके सिक्ख अल्लाह की वहदत में विश्वास करते हैं ।"

यह कहते हुए जेठा जी ने ओंकार की ध्वनि का ऐसा उच्चारण किया कि दरबार में चारों तरफ़ सन्नाटा छा गया । रस में विभोर जैसे हर व्यक्ति सक़ते में आ गया हो । क्या शाहँशाह, क्या दरबारी सभी जेठा जी की ओर बिट बिट देख रहे थे कि उन्होंने ब्राह्मणों के जत्थे पर अपना वार जारी रखा ।

"इसमें कोई शक नहीं कि संस्कृत एक महान भाषा है, लेकिन इस भाषा से आम जनता को वंचित रखा गया है । और तो और संस्कृत में उच्चरित की गई देववाणी कई मानस जातियों के कान में भी नहीं पड़ सकती । सिक्ख गुरू साहिबान का संदेश आम जनता के लिये है, उन्हीं की भाषा में इस संदेश को उन तक पहुँचाया जा सकता है । बाकी रही इनकी शिकायत कि गंगा जमुना के स्नान और तीर्थयात्रा के महत्व से गुरू महाराज के अनुयाई इन्कार करते हैं, यह बात ग़लत है । केवल किसी नदी के जल में नहाने से कोई पवित्र नहीं हुआ, न ही किसी के पाप धुले हैं, चाहे वह गंगा हो या जमुना । तीर्थ स्थानों की यात्रा लाभदायक होती है, बशर्ते इसके द्वारा महापुरुषों की संगत प्राप्त हो, वह ईश्वर भक्ति का साधन बने ।"

ब्राह्मण मत का ज़ात-पात पर ज़ोर देना गुरू महाराज के सिक्खों को क़बूल नहीं । हमारे गुरू सर्व-सांझी वालता* में विश्वास करते हैं । गुरू अमरदास जी का तो दर्शन तक वे लोग ही कर सकते हैं जो पहले लंगर की पंगत में बैठ कर बिना ज़ात पात के भेदभाव के भोजन करके आयें । बाबा नानक ने कहा था 'न कोई हिंदू न कोई मुसलमान ।' सब इन्सान हैं । कोई ऊँची ज़ात का नहीं, कोई नीची ज़ात का नहीं ।

"गुरसिक्ख मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं रखते । ईश्वर हर जगह मौजूद है ....।"

इस तरह जेठा जी बोलते गये, बोलते गये, बोलते गये और शिकायत करने आये ब्राह्मणों के जत्थे से कोई जवाब नहीं बन पा रहा था ।

4

"वो कौन से गुण हैं कि किसी को गुरुआई की पदवी मिल जाती है और कोई होर मुँह फाड़े देखते रह जाते हैं ।" शैली पूछ रहा था ।

"गुरू रामदास इसकी रौशन मिसाल हैं ।" अमन ने जवाब में कहा । यह सुनकर कि गुरू रामदास जी को गुरुआई प्राप्त हुई है और गुरू अमरदास जी ने अपने जाये मोहन

* सब चीज़े सांझी हों (अनुवादक)

और मोहरी की अवहेला की है, गुरू नानक देव जी के साहिबज़ादे, श्रीचन्द्र जी कुछ दिन हुए गुरू महाराज से मिलने आये थे। इतने दिन वे गुरू घर से ख़फ़ा-ख़फ़ा थे। गुरू अंगद देव जी के बारे में तो वे हमेशा कुवचन बोलते थे। जब उनका ज़िक्र आता, वे कहते- वह तो हमारे घर का चाकर था। बेशक गुरू अंगद गुरू नानक देव जी की सेवा टहल करते थे। इससे अच्छे भाग किसी के क्या हो सकते हैं ? किसी को गुरू घर की सेवा प्राप्त हो जाये, इससे ऊँची पदवी भला कौन सी हो सकती है ? ऐसा लगता था कि बाबा सिरी चंद अभी तक इस सच्चाई से अनजान थे। उनके भीतर अभी तक इस बात का ज़हर घुल रहा था कि उन्हें गुरुआई न देकर उनके पिता गुरू नानक देव जी ने उनका हक़ छीन लिया था।

गुरू महाराज के दरबार में जब हाज़िर हुए तो गुरू रामदास जी की लंबी दाढ़ी को देखकर उन्होंने व्यंग्य भरे लहज़े में कहा- यह इतनी लम्बी दाढ़ी आपने किस लिये बढ़ा कर रखी है ?

सिरी चन्द की इस गुस्ताख़ी पर बुरा मनाने की बजाये गुरू रामदास जी ने बड़ी नम्रता से कहा- "यह दाढ़ी इतनी लंबी इसलिये बढ़ाई है ताकि मैं आप जैसे महापुरषों के चरण झाड़ सकूँ। आप इतना लम्बा सफ़र करके आये हैं !"

बाबा सिरी चन्द ने यह उत्तर सुना तो जैसे आविष्कार हुआ हो, उनके ज्ञान चक्षु खुल गये। इतने दिनों से गुरूघर के ख़िलाफ़ जो द्वैत की भावना वे मन के भीतर पाल रहे थे वह नाराज़गी उनकी तब भी नहीं हटी थी जब गुरू अंगद देव जी ने अपने बेटों को दर किनार करके गुरूगद्दी अपने समधी गुरू अमरदास जी को बख़्शी थी और अब तीसरे गुरू महाराज ने अपने दोनों बेटों को भूल कर अपने दामाद को नवाज़ा था।

लेकिन उस दिन गुरू रामदास जी के मुँह से ये शब्द सुनकर कि इतनी लंबी दाढ़ी इसलिये बढ़ाई है ताकि मैं आपके जैसे महापुरषों के चरण झाड़ सकूँ,- उन्हें ज्ञान हुआ कि यह वरदान तो उन्हें मिलता हैं जिनमें इस तरह की नम्रता हो, जो गुरू रामदास जी में थी। इसी नम्रता कारण बाहर से आये लोग नवाज़े जाते रहे, घरवाले वंचित रहते रहे।

"नम्रता और सेवा।" शैली की राय थी।

"सेवा में तो गुरू रामदास से बढ़कर किसी की प्राप्ति नहीं।" अमन शैली के साथ सहमत था। "क्या बाउली के निर्माण के वक्त और क्या हर रोज़ लंगर की टहल सेवा में वे न थकते थे, न हारते थे। कभी बर्तन माँज रहे हैं, कभी पंखा झल रहे है। गुरू महाराज के दर्शनों के लिये आये यात्रियों को तो सर पर उठा लेते थे।"

"बीबी भानी से शादी होने से पहले तो इस तरह की सेवा समझ में आ सकती है, लेकिन किसी का जवाई होकर इस तरह अनथक सेवा में लगे रहना, मैं तो देख कर, सुन सुन कर हैरान होता रहता हूँ।"

उधर बीबी भानी कौन सी कम थी। गुरू महाराज की सेवा वह एक बेटी के रूप में नहीं, एक सिक्ख के रूप में करती थी। गुरू अमरदास जी ने बेशक गुरू अंगद देव जी की

अनथक सेवा की थी, लेकिन बीबी भानी जी और जेठाजी ने उन्हें भी मात कर दिया था।

"एक गुरू की बेटी, एक गुरू की बीबी, अगर बीवी भानी एक गुरू की जाई होने का मान भी प्राप्त कर ले तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।"

"इसके लिये तो प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। लेकिन यह प्रतीक्षा लंबी नहीं हो सकती।"

दरअसल जो बात अमन बताना चाहता था वह यह थी : गुरू अमरदास जी ने जिस दिन अचानक चौथे गुरू महाराज को गुरुआई बख़्शने का फ़ैसला किया, उनके घर में एक विचित्र घटना घटी। अपने चौबारे में, जहां उनकी रिहायश थी, नित्तनेम से निवृत्त होकर जब वे नीचे आये तो क्या देखा कि आँगन में बीबी भानी अपनी भाभी, मोहरी जी की पत्नी आत्मा देवी के साथ बैठी बातें कर रही थीं। गुरू महाराज ने भानी को संबोधित करते हुए कहा- बेटी अगर तेरा पति रामदास न रहे तो फिर क्या करेगी ? यह सुनते ही बीबी भानी हक्की बक्की रह गई। काटो तो जैसे लहू की बूंद नहीं। अकाल पुरख की रज़ा में राज़ी, उसने अपने सुहाग की निशानी नथ, उतार कर सत्गुरू के चरणों में रख दी।

बीबी भानी का यह विश्वास देखकर सत्गुरू कृपालु हो उठे और उन्होंने फ़ैसला किया कि वे अपनी उम्र में से कुछ बरस निकाल कर अपने दामाद के नाम लगा देंगे।

"इसका मतलब यह हुआ कि गुरू रामदास जी के पास अधिक समय बाक़ी नहीं है और अभी तो उन्हें ढेरों काम करने है।"

"सरोवर की ख़ुदाई तो शुरू हो ही गई है। और फिर इसके गिर्द पूरा शहर बसाना है।"

"जैसे गुरू अंगददेव जी ने खडूर साहब बसाया था। गुरू अमरदास जी ने गोइंदवाल बसाया है।"

"इसका यह मतलब हरगिज़ नहीं कि जनाब गुरू महाराज के साथ चल पड़ेंगे।" सुंदरी जो कुछ देर पहले ही लौटी थी। अमन और शैली का वार्तालाप सुन रही थी, एक दम भड़क कर उछल पड़ी।

सारे घर में एक सकता छा गया। इस घर में इस तरह तो कोई कभी नहीं बोला करता था।

सुंदरी का चेहरा तमतमा उठा था। जैसे दहाड़ कर किसी शेरनी की सांस फूल गई हो। शैली तो बस अमन के मुंह की तरफ़ ताके जा रहा था। अमन सुंदरी के चेहरे को ताक रहा था।

5

"वह झूठ बकती है।" पट्टी का कारदार अपनी सबसे छोटी बेटी राजी पर ख़फ़ा हो रहा था। अपनी बीबी के पास बैठा वह पूछ बैठा, "रज्जो कहाँ है ? यह लड़की तो कहीं दिखाई नहीं दे रही।" "अपनी सहेलियों के साथ सर पर नहाने-धोने गई है।" उसकी बीवी ने उसे बताया।

यह सुन कर पट्टी के कारदार के तन बदन में आग सी लग गई। सर तो सूखा पड़ा

था । अभी उस दिन तो वह अपनी घोड़ी पर सवार हो कर वहाँ से गुज़रा था । तालाब में एक बूंद भी पानी की कहीं न थी । इस साल सूखा भी तो क़हर का पड़ा था । कई हफ़्तों से वर्षा की एक बूंद तक नहीं बरसी थी ।

लेकिन यह कैसे हो सकता है ? इस लड़की ने तो कभी झूठ नहीं बोला ख़ुदापरस्त पाकदामन । पाँचों वक्त नमाज़ पढ़ने वाली । उसकी माँ ने सोचा, सर पर नहाने के बहाने किसी फ़कीर के आस्ताने पर गई होगी । और उसके भीतर की माँ जानबूझ कर ख़ामोश हो गई । जैसे अपनी जाई का पर्दा ढक रही हो ।

लेकिन होनहार देखिये उसी वक्त राजी सामने आंगन में आ घुसी । धोये हुए बाल कंधों पर बिखरे हुए । एक हाथ में गीला अंगोछा दूसरे में तसबीह । "तू कहाँ आवारागर्दी करने गई थी ?" कारदार बेटी को देख कर गरजा ।

सारे घर में सकता छा गया । नौकर चाकर-काँप उठे । राजी की चारों बहनें अपने अपने कमरों की खिड़कियाँ देख कर बाहर झाँकने लगीं । अब्बा सरकार किस पर ख़फ़ा हो रहे थे ?

"कमज़ात, तू मुझे कहकर गई थी, मैं सहेलियों के साथ सर पर नहाने धोने जा रही हूँ । सर तो सूखा पड़ा है ।"

"नहीं माँ जी, सर तो पानी से लबालब भरा हुआ है । हम लोगों ने बाल भी धोये और नहाती भी वहीं । मेरे साथ मेरी सहेलियाँ थीं ।"

यह सुनकर कारदार को जैसे और भी ग़ुस्सा आ गया । उसने उठ कर राजी को दायें-बायें दो थप्पड़ जड़ दिये । "मुझे उल्लू बनाती है ? मैं हर रोज़ उस तालाब के पास से गुज़रता हूँ । तालाब के तले की मट्टी पेपड़ी की तरह जम कर जगह जगह फटी पड़ी है ।" यह कहते हुए कारदार लड़की को बालों से पकड़ कर तालाब की ओर ले गया ।

वहाँ पहुंच कर वह अवाक् रह गया । हक्का बक्का होकर देखने लगा । सरोवर तो मोतियों जैसे पानी से भरा हुआ था । पुरवैया जैसे पानी से खेल रही थी ।

कारदार सोचने लगा यह करामात थी । उसे किसी ने बताया था कि उस सरोवर के किनारे शीशम के पेड़ के नीचे कभी बाबा नानक आकर विराजे थे । मरदाने ने रबाब के सुर छेड़े थे और गुरू नानक के मुख से इलाही बाणी का उच्चारण हुआ था । जिस पेड़ के नीचे बाबा बैठे थे वह सदा बहार हो गया था । जिस पानी में बाबा ने चरण डाले थे उस पानी में करामाती शक्ति आ गई थी ।

कारदार सुना करता था और इन बातों पर हँसता रहता था । उसने कई बार ख़ुद इस पेड़ को पतझड़ की मार से झुलसा देखा था । सूखा सरोवर तो उसे कई दिनों से परेशान कर रहा था । अगर सरोवर सूख गया था तो इलाके के कुँओं का पानी भी तो नीचे जा सकता था ।

कारदार को ब्राह्मण मत के देवी-देवताओं, कर्म-कांड, पूजा अर्चना से पक्का बैर था । हमेशा इन बातों की हँसी उड़ाया करता था । जो लोग यह मानते थे कि जिस पेड़ के

नीचे बाबा नानक आकर बैठे थे, वह हमेशा हरा भरा रहता था, गर्मी और सर्दी में सदा बहार पतझड़ के दिनों में जब शीशम के पेड़ के पत्ते झड़ रहे होते, तो वह लोगों को उधर चक्कर लगाने के लिये स्मरण कराता, बार बार लोगों को चिढ़ाता, बार बार श्रद्धालुओं का मज़ाक उड़ाता । लोग सुनी अनसुनी कर जाते, आसपास के गाँव हिंदुओं के थे । बाबा नानक के सिक्खों के थे, उसकी तो जैसे दाल ही नहीं गल रही थी । कभी कभी तो वह दाँत पीस कर रह जाता, इस्लाम में यह सब मना था ।

उधर उसकी सबसे छोटी बेटी राजी तो गुरू नानक की श्रद्धालु थी । ख़ुदापरस्त लड़की, वह तो फ़कीरों और सूफ़ियों के आस्ताने तलाश करती रहती थी । गाँव में आये-गये बुज़ुर्गों के चरण छूती रहती थी । उसकी माँ, लाख बहाने करती, बिटिया रानी की हरकतों पर पर्दे डालती रहती । लेकिन उसके फ़रऊन* मिज़ाज अब्बा को कहीं न कहीं से भनक मिल जाती और वह ख़फा होता रहता । क्रोध से उछलता रहता, मुंह से झाग फेंकता रहता, लेकिन अपनी जवान जहान संतान के सामने उसकी पेश न जाती ।

पाँचों वक्त नमाज़ पढ़ती थी । रमज़ान शरीफ़ के महीने पूरे के पूरे रोज़े रखती थी । और साथ ही वह पीरों-फ़कीरों, साधु संतों, जोगियों कलंदरों को भी आदर देती थी तो इसमें ग़ज़ब कौन सा हो गया था ? लेकिन यह बात उसके कारदार अब्बा की समझ में नहीं आ रही थी । वह हमेशा राजी को क़हर भरी नज़रों से देखता था, उसके साथ भेदभाव करता । बाहर जाता तो दूसरी बेटियों के लिये कोई न कोई सौग़ात लाता, लेकिन राजी के लिये उसके पास सिर्फ़ तनी हुई भृकुटियाँ थीं, नाराज़गी थी और डांट-फटकार थी ।

और समय बीता तो कारदार ने राजी के सिवा, चारों बड़ी बेटियों को बारी बारी से ऊँची पगड़ी वाले घरों में ब्याह दिया । लेकिन राजी पहले की तरह कँवारी बैठी थी । उसकी माँ बार बार अपने घरवाले को याद करवाती रहती । लेकिन मजाल है कि वह बीवी की बात सुनता । हमेशा सुनी अनसुनी कर जाता ।

आख़िर जब वह और न टाल सका तो कारदार ने कहा, जो आदमी अगली सुबह सबसे पहले हमारी हवेली के सामने दिखाई देगा, उसके साथ राजी की शादी कर दी जायेगी । अगली सुबह उन्हें एक पिंगला दिखाई दिया । सो राजी को एक कोढ़ी से ब्याह दिया गया । उसकी बहनें हाथ मल रही थीं । आसपास हर आदमी स्तब्ध रह गया । यह कैसा बाप था ! कारदार हर किसी से कहता फिरता- यह मेरी लड़की काफ़िर है । काफ़िर का यही इलाज होता है । राजी की माँ छाज छाज आंसू रोती रही लेकिन अपने घरवाले के सामने उसकी एक न पेश आई ।

उधर राजी रब्ब की रज़ा में राज़ी थी । मुँह सर लपेट कर अपने घर से निकल आई । पिंगले पति को एक ठेले में बैठा कर गाँव गाँव घूमती, भीख माँग कर गुज़ारा करती । कारदार ने उसके साथ घोर अन्याय किया था, लेकिन मजाल है राजी ने कभी

* प्राचीन मिश्र का आतताई निरंकुश राजा जिसने पिरामिड बनवाये थे । (अनुवादक)

शिकायत की हो ।

इसी तरह एक दिन घूमती फिरती, वह पट्टी गांव के नज़दीक उस सरोवर के पास आ निकली जिसकी एक तरफ़ उन दिनों गुरू रामदास जी खुदाई करवा रहे थे । अनगिनत सिक्ख कार सेवा में जुटे हुए थे ।

उस मनोरंजक और सुहाने स्थान पर राजी ने अपने पति को एक पेड़ के नीचे बिठाया और ख़ुद पड़ौस के एक गाँव में भीख मांगने चली गई । पिंगला पेड़ के नीचे बैठ कर सामने सरोवर के मोतियों जैसे पानी की रौनक का आंनद ले रहा था । क्षण भर बाद उसने देखा कि दो काले कोए उड़ते हुए आये । एक कोए की चोंच में रोटी का टुकड़ा था । रोटी के टुकड़े के लिये दोनों कौए लड़ रहे थे कि वह टुकड़ा सरोवर में गिर पड़ा । टुकड़े के पीछे काले कौए भी सरोवर में चले गये और राजी के पिंगले पति के देखते ही देखते वे दोनों के दोनों दूध जैसे सफ़ेद हंसों में बदल गये । और हंसों की तरह ही उड़ान भर के आकाश में लोप हो गये । पिंगला बार बार आँखें मलता, यह उसने क्या देखा था ? कहीं वह सपना तो नहीं देख रहा था ।

कुछ देर बाद पिंगला ख़ुद भी घिसटता हुआ सरोवर के किनारे जा पहुँचा । उसके अंदर एक व्याकुलता उठ रही थी । किसी न किसी तरह वह घिसटता हुआ पानी में उतर गया । सरोवर के पानी के स्पर्श से ही पिंगले को अपनी आंखों पर विश्वास न हुआ । वह नया-निरोग हो गया था । उसका अंग अंग जैसे नई कोंपल की तरह हो गया था, हष्ट पुष्ट, उसका शरीर दमक रहा था । यह तो करामात थी । सरोवर के पानी में तो कोई रब्बी तकसीर थी ।

पिंगला पेड़ के नीचे बैठ कर अपनी बीवी का इन्तज़ार करने लगा । कुछ देर बाद जब राजी गाँव से ख़ैरात लेकर लौटी, तो वह हैरान हुई, उसका पिंगला पति तो कहीं भी नहीं था । उसकी जगह हष्ट पुष्ट निरोग शरीर वाला एक नौजवान बैठा उसकी इन्तज़ार कर रहा था ।

"भागवान ! तूने मुझे पहचाना नहीं ।" अपनी बीवी को देखकर पति राजी को मुख़ातिब हुआ ।

राजी ने सुना और आँखें फाड़ फाड़ कर उस नौजवान की तरफ़ देखने लगी ।

यह तो उसका पति नहीं था । यह तो वह पिंगला नहीं था जिसके साथ उसके कारदार अब्बा ने उसका निकाह किया था । राजी को लगा जैसे उसके साथ धोखा हुआ हो । इस नौजवान ने उसके पिंगले को कहीं इधर उधर ग़ायब कर दिया था और उसकी जगह बैठ कर राजी को चकमा दे रहा था ।

राजी ने बावेला मचाना शुरू कर पेड़ के नीचे बैठे नौजवान को बुरा भला कहने लगी । नौजवान उसके आगे हाथ जोड़ता, उसे समझाने की लाख कोशिशों करता लेकिन राजी किसी तरह मान नहीं रही थी ।

आख़िर फ़रियाद लेकर वह गुरू रामदास जी के पास आई । सरोवर के पार, कुछ दूर

पर बैठे वे सरोवर की ख़ुदाई करवा रहे थे। गुरू महाराज ने उसकी व्यथा सुनी और उनका माथा खिल उठा। सचमुच यह वही करामाती सरोवर था जिसके बारे में उनके गुरूदेव श्री गुरू अमरदास जी ने उन्हें बताया था।

राजी को साथ लेकर वे उस पेड़ की तरफ़ आये जिसके नीचे वह नौजवान बैठा था। राजी बेचारी सच्ची थी, इतना सुन्दर नौजवान, ज़रूर यह कोई करामात थी। गुरू महाराज ने कारदार की बेटी को समझाने की लाख कोशिशें की लेकिन राजी के पल्ले कुछ नहीं पड़ रहा था। बस यही कहती जा रही थी कि इस आदमी ने मेरे पति का वध कर दिया है और धोखे से मुझे अपनाना चाहता है। उसके भीतर की ख़ुदापरस्त औरत को यह मंजूर नहीं था।

इस तकरार के दौरान गुरू महाराज ने देखा, शशोपंज में बैठे इस नौजवान के बांयें हाथ की एक उंगली ज्यों की त्यों टेढ़ी थी। लगता था सरोवर के पानी में उसने वह उंगली नहीं डुबोई थी। गुरू महाराज नौजवान को पकड़ कर सरोवर के किनारे ले गये। उन्होंने नौजवान की उस उंगली को सरोवर के पानी से छुआया ही था कि वह नई निरोग हो गई।

ये देखकर कारदार की बेटी राजी को तसल्ली हो गई कि पेड़ के नीचे बैठा नौजवान कोई और नहीं, उसका पति ही था।

इस सरोवर ने कभी राजी के अब्बा को झूठा साबित किया था। इसी सरोवर ने आज राजी को ख़ुद शर्मिंदा होने के लिये मजबूर किया था। लेकिन यह शर्मिंदगी कितनी सुखद थी !

6

सत्गुरू अभी उस पेड़ के नीचे खड़े कारदार की बेटी को सरोवर की करामाती शक्ति का निश्चय करवा रहे थे कि इतने में एक सिक्ख दूसरे किनारे से आया और गुरू महाराज से कहने लगा– "सच्चे पातशाह ! पहले सरोवर की जहाँ खुदाई हो रही है, मालूम होता है वहाँ धरती के नीचे कोई हुजरा सा बना है। काम रुक गया है। न कुदाल चलती है ना गैंती कारगर साबित हो रही है।"

यह सुनकर गुरू रामदास जी सिक्ख के साथ चल पड़े। सामने किनारे पर पहुंच कर उन्होंने देखा, वह तो किसी मंदिर या समाधि की बुर्ज़ी थी। आस पास खुदाई की गई तो पता चला उस जैसी तीन और बुर्ज़ियां थी। बुर्ज़ियां चूने की लिपाई वाली, डाट वाली छत पर बनी थी। जिसके नीचे मालूम होता था कोई स्तूप था, जिसमें या तो कोई मूर्ति स्थापित थी या कोई समाधि थी।

उस स्थान की खुदाई में सारा दिन लग गया। गुरू महाराज की निगरानी में बड़ी सावधानी से सैकड़ों बरस से पलटी गई मट्टी को हटाया जा रहा था। आख़िर जब उस हुजरे नुमा स्तूप के चारों तरफ़ मट्टी हटा दी गई तो सब यह देख कर हैरान हो रहे थे कि उसके भीतर जाने का कोई दरवाज़ा नहीं था। चारों तरफ़ दीवारें खड़ी थीं। और ध्यान से देखने

पर पता चला कि दरवाज़ा एक तरफ़ ज़रूर बना था, लेकिन बाद में उसकी चिनाई कर दी गई थी । चिनाई इस ढंग से की गई थी कि दीवार में कोई निशान नहीं रहने दिया गया था । देखने में दीवार सपाट लगती थी । बाकी तीन दीवारों की तरह उस दीवार पर भी पूरी लिपाई की गई थी ।

अब गुरू महाराज ने उस स्थान की खुदाई शुरू करवाई जहां कभी दरवाज़ा था । एक एक पत्थर को धीरे धीरे हटाया जा रहा था । हर आदमी अनुमान लगा रहा था । कोई कहता किसी महात्मा की समाधि होगी । इस तरह के स्थान को ज्यों-का-त्यों रहने देना चाहिए । कुछ लोग कह रहे थे कि पुराने वक्त में लोग इस तरह के हुजरों में हीरे, जवाहिरात, और सोना-चांदी दबा दिया करते थे । कुछ को डर था कि इस तरह की बंद पड़ी कोठरी में सांप और बिच्छु होंगे और न जाने कौन कौन सी बलायें हों । जितने मुंह उतनी बातें ।

लेकिन ज्यों ज्यों पत्थर हटाये जा रहे थे, त्यों त्यों जैसे छेद बड़ा होता जा रहा था, भीतर से एक सुहानी सुगन्धि आनी शुरू हो गई थी । पत्थर हटाने वाले सेवादार अब और ज़्यादा मुस्तैदी से हाथ चला रहे थे और फिर दरार इतनी चौड़ी हो गई कि गुरू महाराज ने आगे बढ़कर भीतर झांका ।

जैसे कोई मणि झिलमिला रही हो । हुजरे के भीतर एक चबूतरे पर कोई महात्मा समाधि में बैठे थे । अब गुरू महाराज ने बाक़ी पत्थर अपने कर कमलों से हटाये और भीतर जाकर नज़दीक से देखा, सचमुच कोई भगत था, युग युगांतरों से समाधि में लीन, वहाँ विराजमान था ।

अत्यंत सावधानी से गुरू महाराज ने अपने सिक्खों की सहायता से योगी महाराज को बाहर निकाला । शरीर ज्यों का त्यों था । एक भीनी भीनी सुगंधि आ रही थी । गुरू महाराज की निगरानी में सिक्ख उनकी मालिश करने लगे । हाथों को, तलुवों को सहलाने लगे ।

इतने में गुरू महाराज ने "धन्न निरंकार" "धन्न निरंकार" का जाप करना शुरू किया । आसपास खड़े सारे सिक्ख सेवक "धन्न निरंकार" का सिमरन करने लगे । मालिश से योगी के शरीर में गर्मी आनी शुरू हो गई थी । "धन्न निरंकार" की ध्वनि और ऊँची हो गई थी । और अब योगी की सांस चलनी भी शुरू हो गई थी । उस सरोवर के दांयें बांयें किनारों पर कार सेवा कर रहे श्रद्धालु यह ख़बर सुनते ही काम छोड़ कर वहां इकट्ठे हो गये थे । "धन्न निरंकार" "धन्न निरंकार" की ध्वनि और ऊँची हो रही थी ।

इस ध्वनि की गूंज में योगी महाराज के श्वासों में एक स्थिरता सी आ रही थी । गुरू महाराज अब स्वयं आगे बढ़े और उन्होंने अपना पवित्र हाथ योगी के माथे पर रखा । सत्गुरू का स्पर्श पाते ही समाधि में लीन योगी ने आँखें खोल दीं । "धन्न निरंकार" की संगीतमई ध्वनि और सत्गुरू के कर कमलों के स्पर्श से योगी ने नज़र उठा कर गुरू रामदास जी के दर्शन किये और सर निवा दिया, अपना सीस सत्गुरू के चरणों में रख दिया ।

यह योगी त्रेतायुग से उस हुजरे के भीतर समाधि में लीन था। उसके गुरू का आदेश था कि कलयुग में गुरू नानक के चौथे स्वरूप की तुझे प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। श्री गुरू रामदास जी के दर्शन से तेरा उद्धार होगा।

योगी के मुंह से उसकी व्यथा सुनकर गुरू महाराज ने उसके सर पर हाथ रखा, उसे आशीर्वाद दिया। उनके हाथ के स्पर्श से ही त्रेता युग से प्रतीक्षा कर रहे योगी महाराज ने अपने प्राण त्याग दिये।

अगले दिन योगी का विधिवत् संस्कार किया गया, जिसमें इलाके भर के लोग शामिल हुए। पट्टी के कारदार ने सुना तो वह भी आया, संस्कार में राजी भी अपने पति के साथ शामिल हुई।

एक और राजी के पिंगले पति का निरोग हो जाना और दूसरी ओर त्रेता युग के योगी की समाधि की घटना, इनके कारण सरोवर बनने से पहले ही वह तीर्थ स्थान बन गया। सैंकड़ों श्रद्धालु रोज़ाना वहाँ आते। कारसेवा भी करते और गुरू रामदास जी के दर्शन करके बलिहार होते।

कारसेवा के कारण सरोवर के इर्द गिर्द बेहद गहमा गहमी रहने लगी। कई श्रद्धालुओं ने वहीं रहना शुरू कर दिया। गुरू का लंगर चलने लगा। ज्यों ज्यों कारसेवा का काम तेज़ हो रहा था, इलाके के प्रवीन मिस्त्री और निर्माता वहाँ आकर बस गये। आबादी बढ़ने लगी तो बाज़ार लगने लगे। व्यापारी आने लगे।

सरोवर का निर्माण एक महान योजना थी। इसके लिए कारसेवा के अलावा बहुत से धन की भी ज़रूरत थी। गुरू महाराज ने जहाँ जहाँ भी मंजियाँ स्थापित की थीं, अपने श्रद्धालुओं को धन एकत्रित करने के लिये भेजा। इन टोलियों में हमेशा अमन का नाम शामिल होता, लेकिन ऐन वक्त पर कोई न कोई विघ्न खड़े हो जाता और उसका जाना रुक जाता।

बेशक इस तरह के जत्थों में न शामिल होने में किसी हद तक अमन की ज़िम्मेदारी थी ; अपने होने वाले बच्चे की माँ के नज़दीक रहना उसे आजकल अच्छा लगने लगा था। लेकिन अपने फ़र्ज़ से कोताही करने और गुरू महाराज की सेवा में अनुपस्थिति के बावजूद वह हर वक्त खिला खिला रहने लगा। कोई भी काम करता तो उसे महसूस होता कि उसे वह काम नहीं करना चाहिये था। कहीं भी जाता तो वहाँ पहुंच कर उसे महसूस होता कि उसे वहाँ नहीं आना चाहिये था। कोई भी बात उसके मुंह से निकलती, तो बात कहने के बाद उसका अत:करण कहता, उसे यह बात मुँह से नहीं कहनी चाहिये थी।

घरवाले उसके चेहरे की ओर ताकते रह जाते।

उधर पोथियों की नक़ल का काम भी ढीला रहने लगा। आजकल यह सेवा अधिकांश रूप से भाई मोहन जी के बेटे संसार राम ने संभाली हुई थी। उसकी लिखावट अमन जैसी तो नहीं थी लेकिन गुरुघर का काम नहीं रूक सकता था। यह एक और ग़म था जो आजकल अमन को खा रहा था।

7

वही बात हुई जिसका घर में मन ही मन सभी को इन्तज़ार था। सुंदरी ने बेटी को जन्म दिया। जैसे चांद का टुकड़ा हो। हू-ब-हू माँ की शक्ल सूरत। घर में बेहद गहमागहमी रहने लगी।

अमन तो जैसे बच्ची पर फ़िदा था, जिस दिन से बच्ची आई, उसने घर से बाहर पैर नहीं रखा। कहीं ज़रूरी काम से जाना होता तो घर लौटते ही वह बच्ची को गोद में ले लेता। सुंदरी की सारी चिंतायें ग़लत साबित हो रही थीं। कई बार जब उसका पति अपनी बच्ची को लाड़ कर रहा होता तो उसे देखकर सुंदरी को अपने ऊपर बेहद लाज आती।

कुछ दिनों बाद बच्ची के नाम की चर्चा छिड़ गई। इन मामलों में मुग़लानी की ज़्यादा चलती थी, उठते-बैठते वह यही कहती- माँ का नाम सुंदरी है, बेटी का नाम हम 'हुस्न' रखेंगे। बेटी अपनी माँ से सवाई सुंदर है। मालूम देता था, घर में और किसी को ऐतराज़ नहीं था, लेकिन अमन जब भी यह नाम सुनता, ख़ामोश हो जाता। मुग़लानी का सुझाया यह नाम उसे कुछ ज़्यादा ही मुसलमानी ढंग वाला लगता था। बच्ची के बाप की चुप्पी देखकर घर के बाकी लोग भी ख़ामोश हो जाते। मुग़लानी ने जब देखा कि यह नाम तो नहीं चल रहा तो उसने ख़ुद बख़ुद बच्ची को 'जन्नत' नाम से बुलाना शुरू कर दिया। इस नाम में तो मुग़लई झलक और भी ज़्यादा थी। अमन इस नाम को सुनता तो परेशान नज़रों से सब की ओर देखने लगता। लेकिन लगता था कि जैसे वह आजकल सोचने लगा था, घर में वैसे और कोई नहीं सोचता था।

बच्ची के जन्म के बाद आई तब्दीली की प्रशंसक सुंदरी उसकी हाँ में हाँ मिलाती रहती, जैसा वह सोचता, वैसे ही वह सोचने लगी थी।

"नाम में क्या रखा है ?" उस दिन अमन की अम्मी तेजी कह रही थी।

"हाँ, लेकिन उसके बाप को भी तो कोई नाम पसंद आये। हर नाम पर चुप्पी साध लेता है," मुग़लानी बोली।

"मैं तो सोचती हूं, गुरू महाराज से पूछ कर लड़की के नाम का फ़ैसला कर लेते हैं," सुंदरी कहने लगी।

"जैसे गुरू महाराज को और कोई काम नहीं रह गया। यही तो एक शाहज़ादी पैदा हुई है," अमन भीतर कमरे में आते हुए बोला।

"तो फिर शाहज़ादी नाम रख देते हैं।" मुग़लानी ने अमन के मुँह से निकले शब्द को दबोच लिया।

अमन फिर ख़ामोश हो गया। यह नाम भी तो मुग़लई था। इसमें भी तो मुसलमानी रंगत थी। मुसीबत यह थी कि अपने दिल की बात वह किसी को बताता नहीं था और घर में बाक़ी लोग उसकी तरह सोचते नहीं थे।

इस तरह कई दिन बीत गये, लड़की के नाम का कोई फ़ैसला नहीं हो सका।

लेकिन फ़ैसला तो करना था। लड़की बड़ी हो रही थी। सुंदरी को डर था कि कहीं

उसका "मुन्नी" नाम ही न पक्का हो जाये। नाम का फ़ैसला न होने के कारण हर आदमी उसे "मुन्नी" "मुन्नी" कह कर पुकारने लगा था। "मुन्नी" तो सरासर ब्राह्मणी नाम था और ब्राह्मणपने से जैसे अमन को कोफ़त होती थी।"

शैली कहता, "इसका नाम जमुना रख देते हैं।"

"तो फिर गंगा क्यों नहीं ? " नसरीन बोली।

"गंगा ठीक है।" 'गंगा' मुकदस दरिया हैं। शैली कहने लगा। "गंगा भी कोई नाम है ?" सुंदरी मुकद्दस शब्द सुन कर गुस्से में आ गई। पिछले कुछ दिनों से कोई भी बात कहने से पहले वह अमन के चेहरे की तरफ़ देख लेती थी। उसकी बच्ची की मां क्या बनी थी, जैसे उसकी हाथ बांधी ग़ुलाम हो गई हो।

कई नाम सुझाए गए, कई नाम रद कर दिये गये। कोई गार्गी, सावित्री, सुमित्रा, सुलक्खनी, इस तरह के नाम सुझाता, उन्हें एकपक्ष नामंजूर कर देता, कोई ज़ुबैदा, ज़ाहिरा, ज़रीना, ज़ुलफ़िया जैसे नाम सुझाता, इन्हें दूसरा पक्ष क़बूल न करता।

दिल की घुंडी न खोलते, लेकिन अपनी पसंद ना पसंद को कोई पक्ष भी छिपा न सकता।

दरअसल अमन को जिस नाम की तलाश थी, उसे कोई सुझा नहीं रहा था। वह चाहता था कि बच्ची का नाम ऐसा हो जिसमें से धरती की ख़ुशबू हो। ठेठ पंजाबी नाम हो। कोई ऐसा नाम जिसमें से ढोलक के गीत की ध्वनि सुनाई दे। जिसमें गिद्धे के ताल का एहसास हो। जैसे सिमटी हुई, सकुचाती हुई चिनाब नदी बह रही हो।

चिनाब का ख़्याल आते ही उसे सोहनी की याद आई। 'सोहनी' नाम ख़ूबसूरत था। सुंदरी की बेटी सोहनी। लेकिन फिर उसे महीवाल की याद आ गई। 'सोहनी महीवाल !' बेचारी सोहनी डूब मरी थी अपनी मुहब्बत की ख़ातिर।

इस तरह तो वह कभी भी फ़ैसला नहीं कर पायेगा। अमन अपने अंत: करण को टटोलने लगा। लड़की बड़ी हो रही थी और घरवालों ने अभी तक उसके नाम का फ़ैसला नहीं किया था। सुंदरी बेशक एक हसीन औरत थी, लेकिन माँ बनकर वह पहले से भी सुंदर लगने लगी थी। उसके मुंह-माथे पर एक निखार आ गया था। उसकी आँखों में ममता की झलक, उसके नारीत्तव नारीख को और भी दिलफ़रेब बना रही थी। उसका क़द जैसे एकदम ऊंचा हो गया हो। जैसे एकदम उसकी चाल में ठहराव आ गया हो। उसकी बाणी में जैसे एकदम आत्मविश्वास की गूंज सुनाई देने लगी हो। उसका पहरावा बदल गया था। रंगों का चुनाव और का और हो गया था। बच्ची को गोद में लेती तो ऐसा लगता जैसे फूलों से लदी चमेली की बेल हो, खिली हुई, ख़ुशबुऐं, फैलाती हुई।

आजकल उसके मुंह से बात पीछे निकलती, अमन पहले ही उसे पूरी कर देता। हर रोज़ घर से बाहर जाने से पहले उसकी ज़रूरतों के बारे में पूछ लेता। ऐसा तो उसने पहले कभी नहीं किया था। ऐसे भी दिन थे जब उसे दस बार याद करवाना पड़ता था, तब जाकर कहीं वह घर का कोई काम करता था। हर वक्त अपने काम से काम। और किसी के साथ

उसका कोई सरोकार नहीं होता था।

उस दिन मियाँ बीवी आँगन में बैठे सामने खेल रही बच्ची को देख रहे थे। बच्ची के हाथ में झुनझुना था जिसे वह कभी इधर कभी उधर झटकती थी। झुनझुने में से आवाज़ निकलती तो वह खिल जाती थी। कितनी देर से ऐसे खेल रही थी, कि सामने कमरे में से सुमन चुपके से आया और बच्ची के हाथ से झुनझुना लेकर भाग गया। सुमन ज्यों ज्यों बड़ा हो रहा था, नटखट होता जा रहा था, हर रोज़ दिलचस्प होता जा रहा था।

सुमन उसके हाथ से झुनझुना छीन कर ले गया और बच्ची एकदम चीख़ उठी। उसकी मां ही तो कुछ दिन पहले बाज़ार से ख़रीदकर वह झुनझुना लाई थी। अपने माता पिता के कहने पर सुमन ने ख़ुद उसे बच्ची को जैसे भेंट किया था। लेकिन उसे यह थोड़े ही पता था कि वह उसके साथ खेला करेगी और सुमन बस उसे सिर्फ़ देख सकेगा।

जिधर सुमन उसका झुनझुना लेकर भागा था, उधर ही बाहें फैलाये बच्ची रोये जा रही थी, कि इसी वक्त मुग़लानी कमरे से बाहर निकली। "अब उसका भाई होना चाहिये, जो बहन के हकों की रखवाली करे।" मुग़लानी ने सुंदरी की ओर देखकर अर्थपूर्ण लहजे में कहा, और झुनझुना फिर बच्ची के हाथ में पकड़ा दिया।

सुंदरी कभी अमन की तरफ़, कभी मुग़लानी की तरफ़ देखती। फिर ख़ुद बख़ुद उसकी मुस्कान फूट निकली।

थोड़ी देर बाद मियां बीवी उठ कर अपने कमरे की तरफ़ गये। अब बच्ची सुंदरी की गोद में थी। अमन कहने लगा, "मैं सोचता हूं इसका नाम वीरां वाली क्यों न रख दें ?"

जैसे वह इसी का इन्तज़ार कर रही थी। सुंदरी ने अमन की तरफ़ लाड भरी नज़रों से देखा और फिर गर्दन मोड़ कर अपना चेहरा उसकी तरफ़ किया। अमन ने उसके ओठ को चूम लिया।

बच्ची झुनझुने को दांये बांयें झटकती एक सांस में झुनझुना बजाये चली जा रही थी।

वीरा हौली हौली आ
तेरे घोड़ेआँ नूँ घाह*

कुछ देर बाद लोकगीत के यह बोल सुंदरी गुनगुनाने लगी। अमन उन्हें सुनकर सरशार हो रहा था।

8

पिछले बरस पूरा वक्त अकबर बादशाह ने लाहौर में गुज़ारा था। कुछ लाहौर शहर का जादू, कुछ सियासी मसलहतें। शहंशाह के पंजाब रूकने के दौरान आसपास के इलाके की आर्थिक हालत बहुत अच्छी हो गई। शहंशाह के साथ उसका दरबार था, उसका लश्कर था, बादशाह से मिलने वाले विदेशी मेहमानों की तो कोई गिनती ही नहीं थी।

---

* मेरे बीरन धीरे धीरे आना, तेरे घोड़ों के लिये घास (अनुवादक)

किसानों की उपज की कीमत डयोढ़ी–दुगुनी हो गई थी। व्यापारियों के रोज़ वारे–न्यारे होते रहते थे। मज़दूरों की, मेहनतकशों की हैसियत बढ़ गई थी।

शैली का शुमार अब शहर के धनाढ्य लोगों में होने लगा था। उसके खेत जैसे सोना उगल रहे थे। नदी के किनारे होने के कारण उसे पानी की कभी कमी महसूस नहीं हुई थी। उसके रहट दिन रात चलते रहते। अपने खेतों के साथ और ज़मीन शामिल करने से पहले पानी का प्रबंध कर लेता था। पहले उसका एक रहट चलता था, फिर दो, फिर अब बैलों की तीन जोड़ियाँ एक साथ जुटी रहती थीं।

"तेरा लड़का तो दीवानों की तरह ज़मीन बढ़ाये जाता था, अगर, गुरू महाराज गोइंदवाल छोड़ कर आगे चल पड़े तो फिर हमारा क्या बनेगा ?" एक दिन तेजी नसरीन से कह रही थी।

नसरीन ने तेजी की बात सुनकर कोई जबाब नहीं दिया। आजकल अक्सर ऐसा होता था कि नसरीन कई बातों को सुना अनसुना कर देती थी। पिछले कुछ दिनों से, जब से उनका हाथ खुला हो गया था, नसरीन में एक नई तब्दीली देखने में आ रही थी।

एक उसका कम बोलना, फिर गहनों से लदे रहना, तेजी की समझ में नहीं आ रहा था। गले में गोखरू और हमेलें, कानों में झुमके और बालियाँ, सोने से लदी रहती। कुर्ती में सीप के बटनों की बजाये सोने के बटन पिरोये होते।

यही हाल उसकी बहूरानी का था। ख़ैर नसीम की और बात थी। एक तो वह ऊँचे घराने से आई थी, दूसरे वह जवान थी। जोबन के शिखर पर। इस उम्र में वह जितना भी सजती, उसे शोभा देता था। लेकिन नसरीन का इस तरह अपने आप को सोने चांदी हीरे-मोतियों से लादना उसके सफ़ेद हो रहे बालों पर फबता नहीं था।

इससे उलट तेजी और उसकी बहू सुंदरी के नाक–कान ख़ाली थे, सादा पहनती सादा रहन सहन। ऐसा नहीं था कि भाई मूले की एकलौती बेटी के पास ज़ेवरों की कोई कमी थी। हर तरह के ज़ेवरों से उसकी संदूक भी ठसाठस भरी थी। लेकिन अमन की रूचि परमार्थ की तरफ़ हाने के कारण सुंदरी ने भी अपने आप को उसी साँचे में ढाल लिया था। ख़ास तौर पर जब से वह अमन के बच्चे की माँ बनी थी। कई महीनों से ये लोग दिन प्रतिदिन सादगी और विनम्रता अख़्तियार करते जा रहे थे। और उधर क्या शैली, क्या नसीम, सम्पन्नता के साथ दिन ब दिन और भी रंगीन होते जा रहे थे। आजकल ऐसा होता था कि तेजी और सुंदरी धर्मशाला, गुरद्वारे में कथा कीर्तन सुनने गई रहतीं, नसीम और नसरीन मंडी या बाज़ार की सैर पर गई रहतीं। कभी कपड़े ख़रीद रही होतीं, कभी गहने ख़रीद रही होतीं, कभी कुछ, कभी कुछ।

इतने दिनों में उनकी रसोई सांझी थी। एक ही जगह खाना पकता था। जबसे मुग़लानी आई थी, उसने चूल्हा चौका संभाल लिया था। आजकल उन लोगों के रहन सहन में और भी फ़र्क आ गया था। कई दिनों से उन्हें अजीब अजीब सा लग रहा था। मुर्ग़ा और कोरमे के बग़ैर शैली और नसीम के गले से खाने का कौर नहीं उतरता था। और इधर अमन

कभी से मांस-मछली छोड़ चुका था। सुंदरी और तेजी को बेशक इस तरह का कोई परहेज़ नहीं था। लेकिन घर का मर्द जब अंडे तक छोड़ चुका था तो उन्हें भी इसमें कोई दिलचस्पी नहीं रह गई थी।

खाना अभी उनका एक ही जगह पकता था। सांझा चूल्हा। एकाध हंडिया गोश्त की, एकाध सब्जी, तरकारी की। साथ में दूध, दही, मक्खन होता था। खीरे, ककड़ियों के मौसम में खीरे ककड़ियाँ, गाजरों, मूलियों के मौसम में गाजरें मूलियां।

लेकिन वक्त गुज़रने के साथ वैष्णव खाना खाने वालों का मांस-मछली के प्रति संकोच जैसे एक कट्टरपन का रूप अख़्तियार कर रहा था। अमन को यह भी बर्दाशत नहीं था कि मुग़लानी उसी करछुल का इस्तेमाल तरकारी की देगची के लिये करे जिसे वह गोश्त की हँडिया के लिए इस्तेमाल कर चुकी थी। इतने दिनों से गोश्त खाना छोड़ने के कारण अब उसे मांस के पकाने और परोसने, खाने से चिढ़ सी हो गई थी। शैली को मांस खाते देख कर उसकी आंखों के सामने कटे हुए बकरे की तस्वीरें, तड़प रहे मुर्ग़े की शक्ल घूमने लगती। उसे लगता जैसे मांसाहार वहशीपन हो। यह सोचते हुए उसे बार बार याद आती कि गुरू नानक देव जी ने किसी को मांसाहार से नहीं रोका था। न ही उनके बाद किसी गुरू महाराज ने मांसाहार से परहेज़ की बात कही थी। तो फिर गुर सिक्ख होने के नाते इस तरह के विचार उसे क्यों परेशान करते थे ?

इस बार उसकी कई बार अपनी माँ से बहस होती, सुंदरी से विचार विमर्श करता। हर तरह के तर्क उसकी सोचने के ढंग के ख़िलाफ जाते, लेकिन अमन अपनी 'कमज़ोरी' से मजबूर था।

उधर शैली था नसीम थी। मुग़लानी उनके लिये तीतर और बटेर बनाती, कबाब और कोरमे बनाती। कोई वक्त था जब विरियानी में से मांस की बोटियां निकाल कर अमन को पुलाव परस दिया जाता था। और अमन को इस तरह के चावल खाने में कोई एतराज़ नहीं होता था। यही नहीं, मांस की हांडी में पके हुए आलू का ठिप्पर निकाल कर कटोरी में उसे दिये जाते तो उसे कोई एतराज़ नहीं होता था। लेकिन अब कुछ दिनों से इस तरह की सब्ज़ी तरकारी उसके गले से नीचे नहीं उतरती थी।

कुछ और दिन बीतने पर हू-बहू अमन की तरह तेजी और सुंदरी का स्वाद भी बदलने लगा। अमन के परहेज़ उनके भी परहेज़ बन गये। उसका कट्टरपन उनकी मांस-मज्जा में भी रच गया।

इस तरह के हालात में पहली बात यह होती है कि चूल्हा चौंका अलग हो जाता है। यही बात तेजी और नसरीन के परिवारों में हुई। कभी वे लाखों भेदभाव मिटा कर बाबा नानक की शरण में एकमिक हुए थे। अब उसी घर के अनुयाई अपना चूल्हा चौका अलग कर रहे थे।

शैली और नसरीन अपनी जगह शर्मिंदा थे, वे अमन को समझाने की हर कोशिश करते लेकिन उसे किसी की कोई बात समझ में नहीं आती थी। आख़िर नसरीन ने शैली

से कहा- हम भी मांस-मछली खाना छोड़ देते हैं । शैली कहने लगा- अगर अमन गुरू महाराज से हमें यह फ़तवा दिलवा दे तो मैं ऐसा करने के लिये तैयार हूँ ।

यह सुनकर अमन से कोई जवाब न बन पड़ा । लेकिन वह अपने मन को कैसे समझाये ? बेचारा अपनी पसंद - ना-पसंद से तंग आया हुआ था ।

शैली के साथ उसकी उम्र भर की दोस्ती थी, सगे भाईयों जैसा प्यार था । शैली सदा अमन की इस इल्लत का मज़ाक उड़ाया करता था । एक दिन उसने पकौड़े में अमन को मछली खिला दी । अमन को पता नहीं चला । बल्कि उसे पकौड़े बहुत स्वाद लगे । उसने ढेर से पकौड़े खा लिये; पोदीने-प्याज़ की चटनी के साथ गर्मा गरम पकौड़े खाता रहा और मुग़लानी की तारीफ़ करता रहा ।

अगले दिन जब शैली ने उसे बताया कि उसने बेसन और मैदे में मछली वाले पकौड़े खाये थे तो अमन का चेहरा उतर गया, उसके मुंह का स्वाद कसैला कसैला हो गया । शाम तक उसका पेट भी ख़राब हो गया । बार बार उसे शौच के लिये बाहर जाना पड़ रहा था ।

9

गुरू महाराज कुछ दिनों के लिये लाहौर जा रहे थे, क्यों ? यह किसी को मालूम नहीं था ।

अमन उन श्रद्धालुओं में से था जो सत्गुरू जहाँ भी जाते, उनके साथ ही बांधे रहते । बस सत्संग की भूख । वे लोग जो गुरू महाराज के दर्शनों से ही तृप्त हो जाते थे । गुरूदेव की संगत में जिन्हें स्वर्ग का एहसास होता था । रोम रोम विभोर हुआ रहता था । ऐसा लगता जैसे जन्म जन्मांतरों की मैल उतर गई हो, आठों पहर बौछार लगी रहती, जैसे वे लगातार नहाते-धोते जा रहे हों ।

गुरू रामदास जी की शहद जैसी मीठी बानी, अमन की तो यही आकांक्षा रहती कि लोगों से कह सके कि फ़लो शब्द सबसे पहली बार गुरू महाराज के मुखारविंद से सुना था, पहली बार उसी ने उसकी प्रतिलिपि तैयार की थी । पहली बार ही सारा शब्द उसे कंठस्थ हो गया था । अमन की याद्दाश्त भी तो अद्भुत थी । ज्यों ज्यों वह गुरबाणी की पोथियां तैयार करता, बानी अपने आप उसे कंठस्थ होती जाती ।

यह सुनकर कि अमन गुरू महाराज के साथ जा रहा है, शैली भी तैयार हो बैठा । दरअसल कुछ दिनों से खेतीबाड़ी में मंदी आई हुई थी । साल भर लाहौर ठहरने के बाद अकबर बादशाह ने आगरे लौट जाने का फ़ैसला कर लिया था । शहंशाह के साथ पंजाब में आई फ़ौजों ने वापिस लौटना शुरू भी कर दिया था । कुछ दरबारी वापिस लौट चुके थे, कुछ लौट रहे थे । दरबारियों के साथ उनके दफ़्तर चलने लग पड़े, दफ़्तरों के साथ अहलकारों ने लौटना शुरू कर दिया ।

ज्यों ज्यों सरकार के लाहौर छोड़ने की ख़बर लोगों तक पहुँची, व्यापारियों ने अपने हाथ थामने शुरू कर दिये । न सौदे होते न पहले की तरह माल का लेन देन । मंडियों में

जमा अनाज तराजुओं का मुंह देखने के लिये तरस जाता। दलाल सारा सारा दिन मक्खियां मारते रहते। बड़े बड़े व्यापारी रूपोश हो रहे थे। न कोई अगाऊ सौदे करता, न कोई पहले से किये गये सौदों पर क़ायम रह रहा था। कोई वक्त था जब शैली जैसे किसानों की खेतों में खड़ी फ़सल ही व्यापारी ख़रीद कर ले जाते थे। अब किसानों का माल खुले स्थानों में, गोदामों में पड़ा पड़ा सड़ने लगा था। ख़ास तौर पर वे लोग जिन्होंने खेतों में कम अवधि की फ़सलें उगा रखी थीं, बर्बाद हो गये थे। उनकी सब्ज़ियां, तरकारियां, फल, सड़ जाते या मट्टी के भाव बिकते।

शैली की लहर बहर कभी की ख़त्म हो चुकी थी। लेकिन गुरू महाराज का आशीर्वाद प्राप्त की हुई उसकी मां ईश्वर की इच्छा को शिरोधार्य करने की आदी थी। ज़्यादा होता तो ज़्यादा खा लेती, थोड़ा होता तो थोड़ा खा कर सब्र, शुक्र कर लेती।

लाहौर में शहनशह अकबर के साथ अपनी मुलाक़ात के दौरान गुरू महाराज ने बादशाह का ध्यान इलाक़े के किसानों की आर्थिक दुर्दशा की ओर दिलाया। उसका एक मात्र कारण शाही दरबार का लाहौर से हट जाना था। बादशाह अकबर का अब लाहौर में रूकना मुमकिन नहीं था। जाड़ों में लाहौर उतना ही ठंडा होता था, जितना गर्मियों में गर्म। सबसे बड़ी बात सियासी मसलहतों की थीं, जिनके कारण मुग़ल शहंशाह का दिल्ली या आगरे में ही रुकना मुनासिब था।

अकबर ने गुरू महाराज के तर्क को बड़े ग़ौर से सुना। गुरू घर के लिये उसके दिल में पहले से ही अपार श्रद्धा थी। इसमें शक नहीं था कि शहंशाह के लाहौर से चले जाने से सपनों के जो महल पंजाब के लोगों ने खड़े किये थे, गिर कर ढेरी हो गये थे। कई व्यापारी ख़ाक में मिल गये थे। कइयों ने अपना लेन देन ठप्प कर दिया था।

अमन और उसके परिवार वालों के सामने शैली की मिसाल थी। उसके घर की शान-शौकत तो जैसे पंख लगाकर उड़ गई हो।

गुरू महाराज की पैरवी व्यर्थ नहीं गई। अकबर ने व्यापारियों और किसानों को अनेक सहूलतें देनी स्वीकार कर ली। एक बरस के लिये किसानों का लगान माफ़ कर दिया, आबयाना माफ़ कर दिया, इस तरह के अनेक और करों में छूट देने के फ़रमान जारी कर दिये।

इसके फलस्वरूप चारों तरफ़ लोग गुरू महाराज की स्तुति करने लगे। सिक्ख तो पहले से ही गुरू घर के श्रद्धालु थे। पंजाब के हिन्दू और मुसलमान भी अपने को गुरू रामदास जी के रिणी समझने लगे। उनके दर्शनों के लिये दल बांध कर आये रहते।

इसकी बदौलत सरोवर की कार सेवा में तेज़ी आ गई। रोज़ इतना चढ़ावा इकट्ठा होता था कि संभाले नहीं संभलता था।

इधर शैली के यहां तीतर-बटेरे पकने बंद हो गये थे। शैली को मजबूरी में बाद में ख़रीदी अतिरिक्त ज़मीन बेचनी पड़ी। जब बेचने निकला तो मंडी में मंदा होने के कारण उसे सोने जैसी ज़मीन मट्टी और कौड़ियों के भाव फेकनी पड़ी।

मालीये-लगान में माफ़ी और करों में छूट, शैली पहले से ही गुरू महाराज का अनुयाई था, अब और शुक्रगुज़ार महसूस करने लगा। वे कहीं और मकान लेकर अमन और उसके परिवार से अलग रहना शुरू कर देंगे- यह सब विचार भूल-भुला गये। फिर दोनों परिवार पहले की तरह घी-शक्कर हो गये थे। नसीम तेजी की रसोई में दिलचस्पी लेने लगी थी। सुंदरी की सादगी में उसे एक फबन दिखाई देने लगी थी।

मुग़लानी की आदत थी कि जब भी उसे फ़ुर्सत मिलती, वह सुंदरी की बेटी को नहलाती धुलाती और फिर उसे सजाने लगती। आँख में काजल, रंग बिरंगे चीरे।

"जैसे दुल्हन हो," बच्ची को इस तरह सजी देखकर एक दिन अमन ने कहा। उसके बोल में एक पिता का मान था। बच्ची इतनी सुंदर लग रही थी।

"दुल्हन तो है" मुग़लानी ने अर्थ भरे लहजे में कहा।

"किसकी दुल्हन ?"

"हमारी, और किसकी ?" नसीम बीच में बोल उठी।

"दुल्हन उनकी होती है जिनके घर में दूल्हा हो।" अब नसीम सामने खेल रहे अपने बेटे सुमन की ओर देख रही थी।

"आँगन में उस वक्त तेजी भी थी, नसरीन भी थी, सब एक दूसरे के मुंह की तरफ़ देखने लगे। कुछ देर की ख़ामोशी के बाद नसीम ने आगे बढ़ कर बच्ची को उठाया और छाती के साथ लगा लिया। और लगातार उसे चूमने लगी- चूमती जा रही थी।"

उस पल के बाद ऐसा लगता जैसे वे दो परिवार जो कुछ अरसे से दूर दूर होते जा रहे थे, एक झटके से नज़दीक आ गये हों। एक दूसरे के साथ फिर घुलमिल गये हों, जैसे वे कभी हुआ करते थे। एक जिंद- एक प्राण।

कुछ दिनों के बाद उनका चूल्हा चौंका फिर सांझा हो गया। न अमन और सुंदरी को शैली और नसीम का मासाहारी होना परेशान करता था न शैली और नसीम को अमन और सुंदरी का मास से परहेज़ अजीब लगता था। मुग़लानी की करछल हर देग़ची में चलती रहती, अब किसी को कभी कोई ऐतराज़ नहीं होता था।

10

शैली और अमन लाहौर गये हुए थे। घर में सुनसान सा हो गया था। बच्चों की रौनक बेशक थी लेकिन मर्दों के बग़ैर ऐसा लगता जैसे आँगन सूना-सूना सा हो गया हो। सारे काम निपटाने के बाद भी औरतों के पास काफ़ी समय बच जाता। ख़ाली बैठी वे एक दूसरे का मन लगाये रखतीं थीं।

मुग़लानी की अपने मज़हब के प्रति अक़ीदत सुंदरी को हमेशा से प्रभावित करती थी। अपना धर्म सुंदरी को बेशक अच्छा लगता था, धर्मशाला जाना, गुरबाणी से प्यार। लेकिन जिस लगन से मुग़लानी पाँचों वक्त नमाज़ पढ़ती थी, जिस अक़ीदत से वह रमज़ान के महीने की इन्तज़ार करती थी, जिस शौक से वह रोज़े रखती थी और दिन भर की भूख-प्यास के एहसास में आनंद लेती थी, उसे देखकर सुंदरी को कई बार उससे रश्क होने

लगता। उसके घर वाले भी अपने धर्म, अपने नित्तनेम के लिये असीम आदर रखते थे लेकिन मुग़लानी ने जिस ढंग से इतनी दूर से आये मज़हब को गले से लगा रखा था और रत्ती भर उससे विचलित नहीं होती थी, यह अपने आप में सचमुच एक चमत्कारी भावना थी। सुंदरी को यह सब अच्छा अच्छा लगता था।

उस दिन मुग़लानी सुमन को इस्लाम के अर्थ समझा रही थी। छोटे से बच्चे की समझ मे ज़्यादा नहीं आ रहा था, लेकिन अपनी ओर से मुग़लानी पूरी कोशिश कर रही थी। ''इस्लाम का मतलब है, 'अमन','' मुग़लानी ने सुमन को बताया। सुंदरी सामने सूत का अटेरन लिये बैठी सुन रही थी। वह पूछने लगी :

''अमन का भला क्या मतलब हुआ ?''

''अमन का मतलब है, 'आसती' 'दोस्ती' 'भाईचारा' यह अरबी ज़बान का शब्द है।'' इसका मतलब ''ताबेदारी'' और ''अधीनगी'' भी है। वह मज़हब जो लोगों में मुहब्बत और भाईचारे की भावना जगाता है। अल्लाह की अताइत में रहने की तलकीन करता है। मुसलमान वह है जो एक ईश्वर को मानता है।''

''तब फिर तो मैं भी मुसलमान हूँ।'' सुंदरी मन ही मन सोच रही थी।

''एक बार पैग़म्बर से किसी ने पूछा, इस्लाम का क्या मतलब है ?'' मुग़लानी की तशरीह जारी थी। ''हज़ूर ने फ़रमाया, इस्लाम का मतलब है अल्ला का हुक्म मानकर, उसके फ़रमान का पालन करना और अपने साथी जीवों से हमदर्दी करना।''

सुंदरी ने अपने आप से कहा– यही तो गुरू महाराज की शिक्षा है।

''किसी और ने हज़रत मुहम्मद रहमत उल्ला से पूछा– मुसलमान कौन है ?'' पैग़म्बर ने फ़रमाया– मुसलमान वह है जिसकी ज़बान से, जिसके हाथों से किसी को नुक्सान नहीं पहुंचता। जो किसी से बुरा नहीं बोलता, न किसी के साथ बुराई करता है। सच्चा मुसलमान हर काम अल्ला का नाम लेकर शुरू करता है अल्ला जो हर किसी का राज़क है और सभी पर मेहरबान है। मुसलमान जो एक दूसरे को इस्लाम अलेकम कह कर मुख़ातिब होते हैं, इसका मतलब है कि उसे अल्ला शान्ति बख़्शे। दुनियां में शांति का राज हो। मुसलमान आसमान की ओर हाथ उठा कर अमन और शांति की मांग करता है। इस्लाम शांति को बनाये रखने का एक वसीला है और यह शांति अल्ला की ही देन है।''

''ओम शांति'' सुंदरी के कानों में हिंदू पड़ौसियों की आरती के बोल गूंजने लगे।

मुग़लानी अपनी बात के तार को आगे चलाये ज़ा रही थी। ''इस्लाम अल्ला की वहदत में एतक़ाद सिखाता है। ख़ालिक एक है ...।''

''गुरू महाराज भी तो यही फ़रमाते हैं।'' सुंदरी के भीतर से जैसे कोई बोल उठा।

'' .... ख़ालिक एक है। उसी का राज है। रब ऊल आलमीन ! इसका नतीजा, इन्सान डर से, ख़ौफ से छुटकारा पा लेता है। जो अल्ला को हाज़िर नाज़िर समझता है उसे

डर काहे का। कायनात बनाने वाला उनकी रखवाली ख़ुद करता है। अल्ला की वहदत का मतलब है कि सारी दुनिया एक बिरादरी है। हम सब बहन भाई हैं। वही हमें पैदा करता है, पालनहार है। इस्लाम में किसी को ऊँचा और किसी को नीचा नहीं माना जाता। सब बराबर समझे जाते हैं। मुसावत ! अच्छे कर्म ही आदमी को अच्छा बनाते हैं- जन्नत का हक़दार बनाते हैं। इस तरह बंदे का रब्ब से सीधा रिश्ता कायम हो जाता है। किसी बिचोलिये की ज़रूरत नहीं रहती, क्योंकि अल्ला एक है ...।''

मुग़लानी बोल रही थी और सुंदरी के भीतर से ओंकार की ध्वनि गूँजने लगी।

''..... इस्लाम की सबसे अलग ख़ासियत इस मज़हब की सादगी है। इस्लाम क़बूल करने के लिये किसी तरद्धुद की ज़रूरत नहीं। बस कलमा, पढ़ो, अल्ला की वहदत में ईमान लाओ, पैग़ंबर को उसका रसूल मानो तो आप मुसलमान बन गये। न किसी मुल्ला की ज़रूरत होती है, ना किसी मौलवी की। कोई रस्म नहीं, कोई रिवाज नहीं। किसी मुनादी, किसी ढोल ढमाके की इस्लाम में जगह नहीं। हर इन्सान का अल्ला के साथ सीधा रिश्ता होता है।''

''और फिर हमारे गुरू महाराज !'' अब सुंदरी से न रहा गया और वह मुग़लानी से पूछने लगी।

''गुरू महाराज आप लोगों के रसूल हैं। जो काम हमारे रसूल ने एक जामे में पूरा किया, बाबा नानक एक से ज़्यादा जामों में पूरा कर रहे हैं। बाबा नानक का पैग़ाम, हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों के लिये सांझा है। उनका काम भी तो कोई आसान नहीं। इतनी दूर से सफ़र करके आये। इस्लाम में कई गिरावटें आ गई हैं। यहाँ आकर मुसलमानों ने हिन्दुओं से ज़ातपात के भेद भाव तक सीख लिये हैं। तकियों और ख़ानगाहों को पूजना शुरू कर दिया है। हिन्दु भाई तो पहले से कमज़ोर हो चुके थे। देवी-देवताओं के बंधनों में जकड़े हुए। कर्मकांड से ख़ौफज़दा। हमारे हज़रत ने फ़रमाया है कि जो लोग मढ़ी, मसानों में विश्वास रखते हैं, वे गुनाह के भागी होते हैं। शिर्क का मतलब 'गुनाह' है। इसका मतलब है कि हम अल्ला के साथ किसी और को शरीक कर रहे हैं। ऐसे हम अल्ला की वहदानियत को झुठला रहे होते हैं।''

''तू नहीं समझती कि बंदे को किसी की ज़रूरत होती है जो उसकी उँगली पकड़ कर उसे रास्ते पर डाल दे। सुंदरी अपने मन के संशय को दूर करना चाह रही थी।''

''बेशक ! मुग़लानी बोली।''

''वह कौन है जो आज हमें इस दुनियाँ में सही रास्ते पर डाल सकता है ?''

''वह तो बाबा नानक की गद्दी के उत्तराधिकारी गुरू रामदास ही हैं।'' मुग़लानी ने सहज भाव से कहा :

''हमारे लिये बेशक वे हैं, लेकिन तुम लोगों के लिये वे कौन है ?''

''इस ज़माने में, इस खित्ते में, बाबा नानक ही एक ऐसा रहबर हुआ है और अब उनके बाद उनके उत्तराधिकारी।''

"तेरा मतलब है, तू मुसलमान हो कर भी, पाँचों वक्त नमाज़ पढ़कर भी, हर साल रोज़े रखकर भी तू बाबा नानक को अपना पीर मानती है ?"

"बेशक ! इसमें ग़लत बात क्या है ? बाबा नानक ने तो हिन्दुओं को अच्छे हिन्दू और मुसलमानों को अच्छे मुसलमान बनने के लिये कहा था।"

"तेरा मतलब है, तू गुरू रामदास जी को वली अल्ला समझती है ?"

"बेशक ! मैं अच्छी मुसलमान हूँ, इसलिये कि मैं गुरू नानक के दर-घर की दीवानी हूँ। इस दहलीज़ की ख़ाक मैंने माथे पर लगाई है।"

सुंदरी सुन सुन कर हैरान हो रही थी कि गुरू नानक, गुरू अंगद, गुरू अमरदास, गुरू रामदास जितने सिक्खों के हैं, उतने ही हिन्दुओं और मुसलमानों के भी। यह बात उसकी समझ में नहीं आ रही थी। कहाँ आकर हिन्दू सिक्ख बन जाता है और कहाँ पहुंच कर मुसलमान, मुसलमान नहीं रहता या फिर शायद सच्चाई यह थी कि मुसलमान मुसलमान होकर भी गुरू नानक का सिक्ख कहलवा सकता था और हिन्दू, हिन्दू होने के बावजूद बाबा नानक का सिक्ख बन सकता था।

बाबा नानक शाह फ़कीर,
हिन्दू का गुरू, मुसलमान का पीर।

11

कई दिन बीत गये। अमन और शैली लाहौर से लौट भी आये थे।

इस्लाम के बारे मुग़लानी से हुई बातचीत के बाद सुंदरी को अपना यह ख़्याल कि मुसलमान कहीं बाहर से आये हों, उनका धर्म जैसे पराया धर्म हो, ग़लत लगने लगा। लेकिन मन के इतने पुराने संस्कारों के कारण उसका मन इसे मानने को तैयार नहीं था।

मुग़लानी उसे सब कुछ समझा रही थी। "बीबी सारे धर्म सांझे होते हैं। एक ही रास्ते पर डालते हैं, अल्ला की पहचान। हमारे बाबा जी ने भी कहा है :

"यक अरज़ गुफ़तम पेश तो दर गोश कुँन करतार।
हका कबीर तूँ बै अैब परवरदगार ......।"

"अल्ला पाक को "कबीर" और "करीम" हज़रत मुहम्मद, रहमतुल्ला ने भी कहा। "वह सबसे ऊँचा है, करम करने वाला है, कायनात को बनाने वाला है। ੧ਓ हैं। कर्ता पुरुख है।"

"अगर ईश्वर एक है। सारे धर्म उसे पाने के अलग अलग रास्ते हैं तो इस्लाम से पहले भी तो किसी ने इसका ज़िक्र किया होगा," सुंदरी की जिज्ञासा उसे परेशान कर रही थी।

"बेशक इस्लाम कोई नया मज़हब नहीं था। वहदत का जो पैग़ाम हमारे हजूर ने दिया, वह पहले भी अल्ला के भेजे पैग़ंबरों ने दिया था। सबसे पहले रसूल तो हज़रत आदम ख़ुद थे, जिन्हें अल्ला पाक ने ख़ुद बनाया। हज़रत आदम सारी ख़ुदाई के आक़ा हैं।"

"बाकी और पैग़ंबर ?"

"पैग़बरों का सिलसिला हज़रत इब्राहीम से शुरू होता है । हज़रत इब्राहीम के बेटे इसहाक के साथ जो टोली आनी शुरू हुई, वह हज़रत ईसा मसीह के साथ ख़त्म हो गई । ईसा मसीह यहूदियों का आख़िरी रसूल था ।"

"और हज़रत मुहम्मद ?"

"हमारे रसूल हज़रत मुहम्मद रहमत उल्लाह, हज़रत इब्राहीम के दूसरे बेटे इस्माईल के ख़ानदान में से थे । इस्लाम में जो आदर पाक कुरान को दिया जाता है, वही आदर बाईबल को दिया जाता है या उससे पहले हज़रत मूसा या हज़रत दाऊद के कथनों को दिया जाता है । इसाई मत के लोगों के तभी तो हम अहले-क़िताब कहते हैं ।"

"बेशक, लेकिन क्या हज़रत मुहम्मद साहब ने ख़ुद भी इस बात को परवान किया है ?" सुंदरी बात की तह तक पहुँचना चाहती थी ।

"हाँ, हज़ूर ने फ़रमाया है-

"ऐ मुसलमानो, मेरा एहतक़ाद बस एक अल्ला पर है, जिसका हम पर नाज़िल हुआ । वही अल्ला इब्राहीम, इस्माईल, इसहाक़ याक़ूब और उसके बच्चों और फिर मूसा और यसू मसीह पर भी नाज़िल हुआ । इन सब में हमने कभी फ़र्क नहीं किया । हम सारे एक ईश्वर के ताबेदार हैं ।"

"इसका मतलब हुआ ...."

"इसका मतलब यह है कि इस्लाम हज़रत मुहम्मद रहमत उल्ला के आने से पहले सब रसूलों को परवान करता है ।"

इससे पहले कि सुंदरी अपना संशय प्रगट करती, मुग़लानी ने उसका संशय दूर कर दिया । सुंदरी भी जैसे इसी बात की इंतज़ार कर रही थी । फ़ौरन बोल उठी, "तो फिर हमारे गुरू साहिबान की जगह कौन सी हुई- बाबा नानक, गुरू अंगद देव जी, श्री गुरू अमरदास और प्रत्यक्ष गुरू जी भी ?"

"यही तो समझने वाली बात है ।" मुग़लानी पूरी आस्था से सुंदरी को अपना दृष्टिकोण बता रही थी- "इस्लाम सारी क़ायनात को अल्ला की बनाई हुई मानता है । अल्ला पाक ही इसका मालिक है । इस सारे संसार के माँ-बाप हज़रत आदम और बीबी हउआ हैं । अल्ला ने सारी सृष्टि को बना कर इन्सान के हवाले कर दिया । इन्सान ही अल्ला का नुमाइन्दा है इस धरती पर । इस्लाम की नज़र में सारे इन्सान बराबर हैं । कोई बड़ा नहीं, कोई छोटा नहीं । हज़ूर ने फ़रमाया है :

"बनी-नौहे-आदम एक बिरादरी है । समय समय पर अल्ला ने रसूल भेज कर दुनियादारों के लिये अपनी नेक ख़्वाहिशें और सच्चाई के पैग़ाम भेजे हैं, ताकि अल्ला की मख़लूक में अगर कोई दूरी या कोई भेदभाव पैदा हो गया है तो उसे दूर किया जा सके । और यही होता रहा । अहले-किताब को हमेशा सही अगुआई मिलती रही । किसी को एक दूसरे में कोई फ़र्क नहीं मालूम हुआ, सिवाये अपनी अपनी क़ुदरत के । अल्ला ने अपनी

रहमत से ईमान रखने वालों को हमेशा सच्चे रास्ते पर डाला । उनके बीच के भेदभाव मिटाये । अल्ला जिस पर मेहरबान होता है, उसे नेक राह पर डालता है ।''

''वही नेक रास्ता बाबा नानक ने पकड़ा । उसी नेक रास्ते पर बाकी गुरू साहिबान चल रहे हैं ।'' सुंदरी के भीतर से जैसे रौशनी की किरण फूटती हुई महसूस हुई ।

''यही नहीं, उसी नेक राह पर आज हमारे गुरू साहिबान लोगों को डाल रहे हैं । तभी तो मक्के मदीने में बाबा नानक को याद किया जाता है । बगदाद में लोग उनका नाम लेकर रास्ता पकड़ते हैं । बाबा नानक ने अल्ला के घर जा कर लोगों को याद करवाया कि ईश्वर एक जगह नहीं चारों तरफ़ है । कण कण में बसता है । लोग जो कहते हैं कि बाबे ने मक्के का मुंह घुमा दिया था, इस बात में सच्चाई है । गुरू बाबे ने मक्का का मुंह नहीं घुमाया, इस तरह की करामात की उन्हें कभी ज़रूरत नहीं पड़ी थी । गुरू नानक ने वहाँ इकट्ठे हुए हाजियों और अहलकारों के नज़रिये को बदला । रौशनी के चमत्कार से उनके भीतर एक चकाचौंध पैदा कर दी । तभी तो चारों तरफ़ ''बाबा नानक'', ''बाबा नानक'' हो रही है ।

सुंदरी जैसे एक सकते में आ गई हो । बिट बिट मुग़लानी के चेहरे की तरफ़ देख रही थी ।

सुदंरी और मुग़लानी की बहस के दौरान अमन बाहर से लौटा, कुछ देर से वह उनकी बातचीत सुन रहा था । अब उससे रहा न गया और वह बीच में ही बोल उठा । ''अगर ईश्वर एक है, यह मख़लूक सारी उसकी बनाई हुई है तो फिर अलग अलग धर्मों ने क्यों लोगों में फूट डाल रखी है ? अगर ईसाई मत वालों को मुसलमान अहले-किताब मानते हैं तो फिर इसलाम की क्या ज़रूरत थी ? अगर हिन्दू धर्म में बुराई नहीं तो फिर बौद्ध मत की क्यों ज़रूरत पड़ी ?''

मुग़लानी की परिपक्व सूझ थी- वह समझाने लगी- ''क़ुरान शरीफ़ में कहा है कि धर्मों के मतभेद अल्ला के फ़ैसले पर छोड़ देने चाहिये । अल्ला ही क़यामत के दिन इसका फ़ैसला करेगा । लेकिन क़ुरान में भी कहा है कि अलग अलग मज़हब आपसी भाईचारे में रूकावट नहीं डालते । वक्त और हालात के तकाज़े अलग अलग धर्मों के क़ायम होने का कारण होते हैं । अगर मख़लकू ख़ुदा की है, तो मज़हब किसी और के नहीं हो सकते । अल्ला ने फ़र्माया है :

''दुनियांदारों, हमने तुम्हें अलग अलग कौमों, अलग अलग कबीलों में पैदा किया ताकि तुम एक दूसरे को पहचान सको, एक दूसरे में सांझ पैदा कर सको । अल्ला के सबसे नज़दीक वे लोग होते हैं, जिनमें अल्ला का ख़ौफ़ सबसे ज़्यादा होता है ।''

''अच्छा, अगर रब्ब चारों तरफ है, कण कण में मौजूद है तो फिर मुसलमान मक्के की ओर ही मुंह करके नमाज़ क्यों पढ़ते हैं ?'' अमन ने अपनी एक और शंका-निवृत्त करानी चाही ।

मुग़लानी की पाक क़ुरान के साथ वाकफ़ियत बहुत गहरी थी । कहने लगी,

"क़ुरान शरीफ़ के दूसरे सूरे की 177 वीं आयत में अल्ला ने फ़रमाया है- मशरक या मग़रिब की तरफ़ मुंह करना धर्म नहीं, धर्म है अल्ला में एहतक़ाद, "क़यामत के दिन, फ़रिशतों, मुक़दस किताब और पैग़बरों में भरोसा।" जो लोग ज़रूरतमंदों, यतीमों, मुसाफिरों, भिखारियों की मदद करते हैं, गुलामों को आज़ाद करते हैं, अल्ला का नाम लेते हैं, दान देते हैं, अपने वचन पर क़ायम रहते हैं और मुसीबत के वक्त में हौसला नहीं हारते, वे लोग मुसलमान माने जाते हैं, वही अल्ला के ख़ौफ़ में रहते हैं।"

"इस तरह तो मैं भी मुसलमान हुआ," अमन हंस कर कहने लगा।

"जैसे मैंने बाबा नानक का दामन थाम रखा है। मैंने, नसरीन ने, शैली, सुमन और सुमन की माँ ने," मुग़लानी बात ख़त्म करती हुई उठ खड़ी हुई। चूल्हे-चौके का ढेर सा काम उसकी राह देख रहा था।

12

अमन जैसे सक़ते में आ गया हो। इस तरह की सूझ बूझ और सोचने की ताक़त रखने वाली औरत बेशक कोई मामूली शख़्सीयत नहीं थी।

शैली की राय थी कि इस तरह की अक़ीदत अक्सर पंजाब के मुसलमान घरों में देखी जाती थी।

"मुझे तो अपने आप पर शर्म आ रही है।" अमन बोला।

"बेशक मुग़लानी जैसे लोग हमसे कहीं ज़्यादा आस्थावान हैं," शैली की राय थी।

"एक धर्म वह होता है, जिस धर्म में किसी का जन्म हुआ हो, एक धर्म वह होता है, जिसे कोई सोच समझ कर अपना ले। एक धर्म होता है जिसके लिये भीतर से उमंग उठती है, जिसके बारे में सोचकर मन प्रफुल्लित होता है, जैसे कोई छाँह किसी यात्री के साथ साथ चल पड़ती हो।"

"मैं अपने आप से अक्सर सवाल पूछता हूँ कि- हम लोग किस पक्ष के साथ खड़े हैं ?"

"चले तो ठीक थे, निशाना भी ठीक है, लेकिन बीच बीच में भटक जाते हैं।"

इस तरह अमन और शैली एक दूसरे से अपने दिल की बातों का आदान प्रदान कर रहे थे कि अचानक बाहर डयोढी में मुग़लानी की किसी से बहस करने की आवाज़ आई। इतनी ऊँची आवाज़ में तो मुग़लानी कभी भी नहीं बोली थी। जैसे किसी पर टूट पड़ी हो। अमन और शैली की तो जैसे जान ख़ुशक हो गई। वे फ़ौरन भाग कर बाहर ड्योढ़ी की तरफ़ गये। उनकी सांस फूल गई। मुग़लानी, जिसके साथ उलझ रही थी, वह कोई मौलाना क़िस्म का आदमी था।

"अगर मैंने फिर आपको इधर देखा तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा।" जब अमन और शैली ड्योढ़ी में पहुँचे तो क्रोध से मुग़लानी के मुंह से झाग निकल रही थी। उन्हें मौक़े पर पहुंचा देखकर मुग़लानी की आंखों से टपटप आँसू बहने लगे।

अमन और शैली सहम गये और फिर उनके देखते ही देखते मुग़लानी तेज़ क़दमों

से हवेली के भीतर लौट गई। उसका चेहरा लाल सुर्ख़ था, गला रूंधा हुआ था।

मौलाना सामने पहले की तरह अवाक् खड़ा था। सलीके से तराशी हुई दाढ़ी और मूछें। सर पर मशहद* का साफ़ा, कलियों वाला खुला कुर्ता। नीचे टख़नों तक ऊँची सलवार। पैरों में तिल्लेदार जूती। नाम इमाम बख़्श था।

दरअसल मुग़लानी की आप बीती एक दर्दनाक त्रासदी थी। अभी बच्ची ही थी कि उसके माँ बाप अल्ला को प्यारे हो गये थे। पीछे बस भाई भाभी रह गये थे, जिन्होंने बच्ची की देखभाल की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। मुग़लानी ख़ुशी ख़ुशी परवान चढ़ रही थी। इतने में फ़ैसला हुआ कि उसकी पढ़ाई का इन्तज़ाम होना चाहिये। यह सोच कर मुहल्ले के मौलवी साहब को यह ज़िम्मेदारी सौंपी गई। मौलवी साहब को क्या एतराज़ हो सकता था ? वे और घरों में भी पढ़ाने जाया करते थे।

कुछ हफ़्तों के भीतर ही मौलवी जी ने कँवारी कंजक पर डोरे डालने शुरू कर दिये। भोली, अनजान लड़की मौलवी जी के झाँसे में आ गई। वे ढेर सा पढ़े थे। कितना क़ुरान शरीफ़ उन्हें ज़बानी याद था, उनकी आवाज़ कितनी प्यारी थी। जब क़ुरान ख़्वानी करते, श्रोताओं के मन आंदोलित हो उठते। मुग़लानी, जिसका नाम बरकते था, उनके मुंह की तरफ़ देखती रह जाती। कुरान ख़्वानी करते वक्त मौलवी जी का चेहरा लाल सुर्ख़ हो जाता था। दमकने लगता था। जैसे उसमें से लाल चिनगारियाँ फूट रही हों।

उजले कपड़े पहनते। नमाज़ रोज़े के पाबंद। हर वक्त इस्लाम के गुण गाते रहते। वे कारनामें जो इस्लाम के दीवानों ने किये थे। जहाँ जाते, "अल्ला-हू-अकबर" का नारा लगाते और तहस नहस कर देते। कोई मुल्क कोई क़ौम उनके सामने नहीं खड़ी हो सकती थी। उनके घोड़ों की टाप, उनकी शमशीरों की चमक, उनके नेज़ों की फुंकार, उनके आधे चांद वाले झंडे, उनकी शहनाइयाँ और आनन्दित करने वाले वाजे........।

मौलवी जी जब इस तरह बोलते तो बरकते एकटक उनके चेहरे की तरफ़ देखती। जैसे पिघल पिघल जा रही हो। उसके अंग अंग में सिहरन होती, उस पर जैसे कोई टोना कर रहा हो, वह बिछ बिछ जाती।

इस तरह की एक शाम जब वे बैठक में अकेले थे, उसके भाई-भाभी पड़ौस में गये हुए थे, अछूती कली मौलवी जी के आलिंगन में मिश्री की डली की तरह घुल गई। उस दिन की मदहोशी के हर्जाने स्वरूप मुग़लानी अपनी ज़िन्दगी के कई बरसों से क्लेश भोग रही थी।

मौलवी तो बस इतना ही कर सकता था कि उसे अपने घर में बसा लेता। बेशक घर में पहले से उसकी एक बीवी थी। तीन बच्चों की माँ। इस्लाम एक से ज़्यादा बीवियों की छूट देता है। लेकिन जब निकाह का वक्त आया तो मौलवी ने अपनी जगह अपने एक शागिर्द को चकमा देकर बरकते के साथ निकाह करने के लिये राज़ी कर लिया। बरकते

---

* एक किस्म का रेशम (अनुवादक)

के भाई-भाभी किसी न किसी तरह इस मुसीबत से छुटकारा पाना चाहते थे। लड़की के पेट में बच्चा था। वे शर्मिन्दगी के मारे कुछ भी करने के लिये तैयार थे। बरकते बेज़ुबान गाय की तरह सारे सितम सह रही थी। उसके मुँह से एक बोल भी न निकला। लेकिन उसने मौलवी के मुलाज़िम को एक बार भी अपने नज़दीक फटकने नहीं दिया।

फिर बरकते की ज़िंदगी में एक ऐसा दिन आया जब वह अपनी कोख से जन्मी औलाद को उसके मौलवी बाप के आँगन में चुपके से छोड़कर निकल आई जैसे जल रहे गाँव में से जोगी निकल जाता है। उसने पलट कर उधर नहीं देखा।

मौलवी ने अमन और शैली की बड़ी मिन्नते कीं। कई बार चक्कर लगाये। कितने दिन उनके शहर में भटकता रहा, मुग़लानी थी कि टस से मस न हुई।

जब और कोई चारा न रहा तो मौलवी अपने शहर गया और मुग़लानी के बेटे को ले आया ओर उनकी ड्योढ़ी में छोड़ गया। हू-ब-हू उसी तरह जैसे मुग़लानी ने कभी उसके साथ किया था।

बच्चे का नाम कमाल था। सात आठ बरस की उम्र। सयाना बियाना। हू-ब-हू अपने मौलवी बाप की शक्ल सूरत थी। गोरा रंग, नीली आंखें, खिला चेहरा जैसे हाथ लगाते ही मैला हो जायेगा। जो भी कमाल को देखता उस पर फ़िदा हो जाता। इतना भोला, इतना मासूम, इतना सुशील लेकिन मुग़लानी थी कि उसे मुंह लगाने के लिये तैयार नहीं थी। जब भी बोलती यही कहती, मुझे इसमें से इसके बाप मौलवी की बू आती है। इसका चेहरा मोहरा हू-ब-हू उस दरिंदे जैसा है। मेरा इसके साथ कोई वास्ता नहीं। शैली के बेटे पर जान देती थी, लेकिन अपनी कोख से जाये को एक नज़र भी देखने के लिये तैयार नहीं थी।

अमन और शैली का ख़्याल था कि कुछ दिनों बाद मुग़लानी का दिल बदल जायेगा। घर के बाक़ी लोगों की भी यही राय थी। आख़िर उसका ही तो ख़ून था। कोई अपनी औलाद के साथ इतनी उदासीनता नहीं बरत सकता।

नसीम उसे बार बार समझाती थी :

"तूने नौ महीने इसे अपने पेट में रखा है।"

"तूने इसे अपनी छाती का दूध पिलाया है।"

"मर्द ज़ात हमेशा से ऐसा करती आई है। लेकिन एक माँ अपने जाये को कैसे भुला सकती है ?"

"ईसा के साथ क्या हुआ था ?"

"कैसा सुंदर जवान निकलेगा। बच्चे ज़िंदगी का सहारा होते हैं।"

"आख़िर इसका क़सूर क्या है ? बाप की बुराई की सज़ा बच्चे को क्यों दी जाये ?"

मुगलानी सुनती और कोई जवाब न देती।

जैसे मौलवी के बेटे के लिये उसने सारे किवाड़ बंद कर लिये हों। कमाल उसके कमरे में सो नहीं सकता था, उसे तो अभी तक यह भी ठीक से नहीं मालूम था कि मुग़लानी

उसकी माँ थी। घर में नसीम थी, सुंदरी थी, बच्चा सोचता, उनमें से कोई उसकी जाई थी। लेकिन वह कौन थी यह उसे निश्चित रूप से मालूम नहीं था।

बच्चे की इस तरह की दर्दनाक हालत देख कर अमन और सुंदरी ने उसे लाड़ करना शुरू कर दिया। उनके कमरे में ही वह सोता। उन्हीं के साथ खाता-पीता, उनके साथ उठता बैठता। सुंदरी के साथ, सुंदरी की बेटी के साथ इस तरह हिलमिल गया जैसे उसी आंगन में पैदा हुआ हो, बड़ा हुआ हो।

कुछ दिन बीतने पर ऐसा लगने लगा जैसे मुग़लानी नहीं, सुंदरी ही उसकी माँ हो।

13

सुंदरी भी कमाल को अपनी कोख जाये जैसा लाड़ देती। पिछले कई दिनों से अमन सरोवर की सेवा के लिये बाहर से आये किसी जत्थे के साथ गया हुआ था। जिस दिन से उसकी बच्ची आई थी, तबसे सुंदरी को अमन का बाहर दौरे पर रहना कभी नहीं खलता था। जब शहर में होता तब भी उसका वक्त बेवक्त लौटना उसे परेशान नहीं करता था। और अब जबसे कमाल उनके यहाँ आया घर तबसे सुंदरी को लगता था जैसे उसकी ज़िंदगी की कटोरी लबालब भर गई हो। कमाल उसकी बच्ची को गोद में लिये फिरता, उसे खिलाता, सुंदरी के दस और काम करता। यह पकड़ाना, वह करना, किसी की गोद में बच्ची को पहुंचाना होता, बाज़ार से कुछ लाना होता, कमाल हाज़िर रहता। सुंदरी को कितने सुंदर ढंग से "बीबी" कहकर पुकारता था। कमाल सोचता, सुंदरी ही उसकी माँ थी और सुंदरी को उसका ऐसा सोचना अच्छा अच्छा लगता था। एक दिन शैली ने उससे मज़ाक किया- "ले, तुझे न पैदा करने की मुसीबत झेलनी पड़ी न पालने की मुसीबत झेलनी पड़ी और बेटा तेरे आँगन में खेलने लगा है। ना हींग लगी न फिटकरी ....।"

"और स्वाद भी चोखा !" सुंदरी ने हंस कर उसका फ़िकरा पूरा किया।

कमाल, नसीम और मुग़लानी को मौसी कहकर पुकारता था। कुछ दिनों के बाद जब उसे इस बात का एहसास हुआ कि मुग़लानी तो उस घर में एक तरह की नौकरानी थी, कमाल ने उसके लिये मौसी शब्द बरतना छोड़ दिया। मुग़लानी की जूती से। उसे इसकी कभी परवाह नहीं थी, क्योंकि वह नौकरानी थी, कमाल मुग़लानी से कोई ख़ास वास्ता नहीं रखता था। यह बात मुग़लानी को और भी पसंद आती थी। उसे कमाल फूटी आंख नहीं सुहाता था। कमाल को देखते उसका ख़ून खौलने लगता। वह जिस दिन से उसके पेट में आया था, मुसीबतों का एक पहाड़ जैसे उस पर टूट पड़ा था। हंसती खेलती वह कांटों की झाड़ी में जा गिरी थी। उसका अंग अंग, रोम रोम दुख रहा था, दर्दों में पिरोया गया था। उसके भीतर की औरत का कितना निरादर हुआ था। जिस दिन से उसे एहसास हुआ कि उसके पेट में मौलवी का बीज था, उसे मौलवी से नफ़रत हो गई थी। उसका नाम तक सुनने के लिये वह तैयार नहीं थी। उसका जी चाहता उसकी तराशी हुई दाढ़ी को आग से झुलसा डाले। लुक छिप कर जब वह उल्टियां कर रही होती तो उसका जी करता कि वह अपनी क़ै को मौलाना के मुँह में जा कर उगल दे। प्रसूति की दर्दों में उसने मौलवी को

कैसी कैसी गालियां दी थीं। ऐसे ऐसे फ़कड़ तोले सुनाये कि रहे रब्ब का नाम। बच्चा होने के बाद दाई मां ने उससे पूछा, "बीबी ये सारी गालियाँ तू कहाँ से सीखती रही है ? वही भाई भाभी से जो उसकी इतनी ख़ुशी करते, अब उसे एक आंख नहीं देख सकते थे। उसमें से उन्हें बुदबू आती थी, जैसे किसी जानवर की सड़ रही लाश हो। रातों रात सब उसके लिये पराये हो गये थे। उसे अंधेरे से ख़ौफ़ आने लगा। उसे रौशनी शूलों की तरह चुभने लगी। कोई उसकी तरफ़ देखता तो उसे उसकी नज़रों में से सेक सा आता। कोई उससे बात करता तो उसके बोल उसे भंखड़े के कांटों की तरह चुभने लगते। उसका पेट जितना बढ़ रहा था, उतना ही उसका क़द बुत नीचा हो रहा था। हर बार जब वह नदी में नहाने जाती तो उसका जी चाहता कोई तेज़ लहर आये और उसे बहा कर ले जाये। हर बार जब कुँए से पानी भरने जाती, उसका मन करता, डोलची के साथ वह भी पानी में डूब जाये और फिर बाहर न निकले। घर की छत पर खड़ी होती तो उसका जी मिचलाने लगता। कितने कितने दिन लंघन काटती रहती। उसने लाख नमाज़ें पढ़ी लाख सिजदे किये, अल्ला ने उसकी एक न सुनी। लोग किस तरह उसकी तरफ़ देखते थे। उसे लगता जैसे हर किसी की ज़बान पर उसकी कहानी हो। हर कोई उसके राज़ को जानता हो। लाख अपने को समझाती कि उसके भाई, भाभी और मौलवी के सिवा किसी को उसकी भनक नहीं लगने दी गई थी, लेकिन उसे लगता जैसे हर ज़बान पर उसकी कहानी हो। जो उसके नज़दीक आना चाहते थे, वे हमदर्दी के कारण ऐसा करते थे। जो दूर दूर रहते थे, उन्हें उसमें से बदबू आती थी। जैसी बदबू सड़ रहे कूड़े में से आती है। फिर उसे यह बदबू अपने भीतर से भी आने लगी। अपने बढ़ रहे पेट से, अपनी हर हालत से, अपनी हर बात में से। अपनी हर सांस में से। कितने कितने दिन वह बिना नहाए बिता देती थी। कितने कितने दिन वह बाहर शक्ल नहीं दिखाती थी। किसी से कोई वास्ता नहीं। मैले खलवाट कपड़े। बिना धोये बाल। अनसंवरा नखशिख। एक एक करके उसकी सहेलियाँ उसके लिये पराई हो गई। एक एक करके अड़ौसी पड़ौसी दूर हो गये।

मुगलानी ने हरेक को देख लिया था। मौलवी, भाई, भाभी, भाईचारा किसी को किसी के साथ हमदर्दी नहीं थी। हर आदमी, अपनी आबरू बचाने के लिये परेशान था।

मौलवी ने बेशक शुरू में अपना क़सूर मान लिया था। उसका हर्जाना भरने के लिये भी तैयार हो गया था, लेकिन जब उसके बच्चों की मां ने सौतिन के साथ बसने से इन्कार कर दिया तो मौलवी ने हथियार फेंक दिये। वह तो कहती थी, अगर उसने मेरे आंगन में पैर रखा तो या मैं कुछ खाकर मर जाऊंगी या उसका गला घोंट दूंगी। मौलवी के छोटे छोटे बच्चे थे। उसने सोचा अगर उसकी बीवी कोई करतूत कर बैठी तो वह कहीं का नहीं रहेगा। और फिर उसने अपने एक शागिर्द को मना लिया। लड़की जवान थी, सुन्दर थी, अरबी फ़ारसी पढ़ी थी, अच्छे घर की थी और उसे क्या चाहिये था ?

लेकिन इन सब बातों से मुग़लानी को अनजान रखा गया। उसके भाई भाभी ने भी लड़की से कोई बात नहीं की। मुग़लानी तो सोच रही थी कि उससे ग़लती हो गई थी,

जिसकी सज़ा उसे भुगतनी पड़ रही थी। एक अधेड़ उम्र के आदमी से शादी करके वह अपनी जवानी गला बैठेगी। कोई बात नहीं, कितनी औरतों को अपने मन पसंद के ख़ाविन्द मिलते हैं ? मुल्क का बादशाह अकबर तो हिन्दुआनियों को ब्याह कर अपने महलों में डाल रहा था और वे लोग जो औरतों को मवेशियों के रेवड़ों की तरह हांककर ले जाते थे, चाहे बच्चे पैदा करने के लिये, चाहे बर्तन मांजने के लिये। अपने भाइयों बहनों के लिये चीत्कार करती रहतीं, अपने ईश्वर का नाम लेने के लिये तरसती रहतीं।

कुछ इस तरह सोच कर मुग़लानी ने अपने दिल को समझा लिया था।

लेकिन निकाह के वक्त जो उपद्रव हुआ उसे देखकर मुग़लानी किसी को माफ़ नहीं कर सकती थी, न मौलवी को, न अपने भाई भाभी को, न किसी और को।

शादी के लिये कपड़ों से ढंकी ढकाई को काज़ी पूछ रहा था- फ़लाने का बेटा फ़लाना तुझे मंज़ूर है ? उसे क्या पता मौलवी का नाम क्या था, वह किसका बेटा था। उसने मंज़ूर, मंज़ूर, कह दिया। और अगले क्षण जब उसने नज़रें ऊपर उठाई, मौलवी की जगह किसी दूसरे को अपने सामने खड़ा देखकर उसके दिल की धड़कन जैसे रुक गयी। उसका मुँह पीला ज़र्द हो गया। यह क्या अनर्थ हो गया था ? जिसका बीज उसके पेट में था, वह मौलवी कहीं भी नहीं था।

मुग़लानी अपने भाई भाभी से क्या कहती ? किसी और से क्या शिकायत करती ? सितम यह था कि जिस नौजवान से यह फ़रेब किया गया था, वह बेहद ख़ूबसूरत नौजवान था। दमकता चेहरा। आंखों में एक मासूमियत। ऊँचा लंबा जैसे सरू का पेड़ हो। नाम यूसफ़ था। यह तो अल्ला को धोखा देने वाली बात हुई। मुग़लानी शशोपंज में पड़ गई। उस दिन बार बार उसकी पलकें गीली गीली हुई जा रही थीं।

''बरकते, जो हो गया सो हो गया, उसकी भाभी घुन्ना सा मुंह बना कर बोली।''

''कुड़िये, इस सारी बात पर मट्टी डाल, नये सिरे से अपनी ज़िंदग़ी शुरू कर। इस तरह का लड़का किसी किस्मत वाली के हाथ आता है।'' मुग़लानी का भाई उसे समझाता।

मुग़लानी सुनकर अपने कानों में उंगलियां दे देती। ये सारे बोल गोलियों की तरह उसके सीने में लगते। उसे ऐसा महसूस होता जैसे उसे कूड़े के ढेर पर चटाई बिछा कर नमाज़ पढ़ने की सलाह दी जा रही हो।

यह कैसे हो सकता था ?

और उस रात जिसे सुहागरात कहा जाता है, मुग़लानी ने अपने पल्ले पड़े दूल्हे को सच सच सारी बात बता दी। वह अवाक् सुनता रहा। उसे उस्ताद मौलवी ने धोखा दिया था। उसके माँ-बाप, दोस्तों और रिश्तेदारों को धोखा दिया गया था। भोला भाला नौजवान लड़का क्या कहता, वह तो किसी को मुंह दिखाने के क़ाबिल नहीं रहा था।

सारी रात वह बिलखता, कलपता रहा। जब सुबह हो रही थी तो वह बरकते के पलंग के पास आया- तू जैसी भी है, मुझे मंज़ूर है।

मुग़लानी ने सुना तो उसके तन मन में आग लग गई । उठकर उसने ज़ोर का एक थप्पड़ दूल्हे को मारा और कहा, "लेकिन इस तरह का बेग़ैरत शौहर मुझे मंज़ूर नहीं ।"

14

जिस दिन से कमाल उनके घर आया था, मुग़लानी में एक अजीब तब्दीली आ गई थी । चिड़चिड़ी सी रहने लगी थी । जब फ़ुर्सत मिलती तो न जाने किन चिन्ताओं में डूब जाती । पहले भी उसे फ़ुर्सत नहीं थी । हर वक्त अपने को किसी न किसी काम में उलझाए रखती ।

कमाल उसे नहीं भाता था, सिर्फ़ इतनी ही बात नहीं थी । कमाल का सुमन के साथ खेलना, सुंदरी की बेटी को गोद में लिये घूमना भी पसंद नहीं था । उसे ऐसा करते देखती तो नाक चढ़ा लेती । भोले भाले लड़के की ग़लतियाँ निकालती रहती । उधर सुंदरी थी कि हर रोज़ कमाल की दीवानी होती जा रही थी । जबसे कमाल उनके आँगन में आया था, उसके भीतर अपनी कोख से जाये बेटे की तमन्ना एकदम ख़त्म हो गई थी । उसके लिये रोज़ नये जोड़े बनवाती, हर वक्त उसे उजला उजला, सजा धजा कर रखती । उसके बाप ने उसे अरबी, फ़ारसी पढ़ानी शुरू की थी, सुंदरी आजकल उसे गुरमुखी सिखा रही थी । एक एक पौढ़ी रोज़ सुना कर जपुजी का पूरा पाठ कंठस्थ करवा रही थी । यह सब देखकर, सुनकर मुग़लानी और भी चिढ़ जाती । उसका मुँह और भी सूज जाता ।

लगता था कि कमाल के आने से, उसके सुंदरी और अमन से इस तरह घुलमिल जाने से उन लोगों और मुग़लानी के बीच एक खाई बनती जा रही थी । यह खाई हर रोज़ गहरी होती जा रही थी । घर में एक ख़ास किस्म का तनाव रहने लगा । उधर मुग़लानी खिंची खिंची सी, उधर सुंदरी ऐंठी ऐंठी सी ।

एक उलझन और थी । मुग़लानी कमाल से जितनी नफ़रत करती थी, उतना ही वह सुंदरी की बेटी को चाहती थी । कभी कभी घर के लोग सोचते शायद यही कारण था कि कमाल उसे फूटी आँख नहीं सुहाता था । जिस दिन से वह आया था, बच्ची जैसे मुग़लानी से छिन गई थी । हर वक्त कमाल उससे चिपका रहता था । कभी उसे खिला रहा है, कभी उसे गीत सुना रहा है, कभी उसे गोद में लेकर बाहर सैर कराने ले जा रहा है ।

एक दिन ऐसा हुआ सुबह जब कमाल बच्ची को लेकर बाहर घूमने निकला, थोड़ी दूर पर ही सामने से आते एक मछरे हुए बछड़े ने कमाल और बच्ची को अपनी लपेट में ले लिया । दोनों औंधे मुंह जा गिरे । दोनों के चोटें आईं । सड़क के किनारे दोनों मट्टी में लथपथ हो गये ।

मुग़लानी ने सुना तो कमाल पर बरसने लगी । बेचारे का कोई कसूर नहीं था । सुंदरी ने जैसे उसे समझाया था, वह सड़क के किनारे किनारे जा रहा था । किसी को यह तो मालूम नहीं था कि कोई मछरा हुआ बछड़ा इस तरह आकर उन्हें चपेट मारता निकल जायेगा ।

बच्ची को मामूली चोट आई थी । बेशक वह चिल्ला रही थी, लेकिन उसकी वजह

बछड़े का अचानक उन्हें धकेल कर धरती पर गिरा देना था। कमाल की तो कलाई की हड्डी चटख़ गई थी । उसकी चीखें निकल रहीं थीं । उसे बेहद दर्द हो रहा था ।

अमन गाँव से बाहर गया हुआ था। शैली ने देखा तो कमाल को अपने एक परिचित नाई के यहाँ ले गया, जिसने लड़के की कलाई का मुनासिब उपचार कर दिया । कई दिनों तक कमाल की बांह में पट्टी बंधी रही और वह दर्द झेलता रहा । यह सब देखने के बावजूद मजाल है कि मुग़लानी ने कमाल की तरफ़ मुंह फेर कर देखा भी हो ।

मुग़लानी घर का एक अंग थी । उसे कुछ ऐसा वैसा कहने की किसी में हिम्मत नहीं थी । इधर कमाल ने भी मुग़लानी के सिवा घर में हरेक को अपना मुरीद बना लिया था । हरेक के दिल में उसके लिये हमदर्दी थी । हर कोई उससे लाड़ करता रहता था । दूसरे दो बच्चों के कपड़े के साथ उसके भी कपड़े सिलते, उनके खिलौनों के साथ इसके लिये भी खिलौने आते । मिठाईयां आतीं ।

घर में हरेक को विश्वास था कि कभी न कभी एक दिन मुग़लानी के भीतर की माँ का दिल पिघल जायेगा । किसी दिन वह मौलवी को माफ़ कर देगी नहीं तो कमसे कम अपने कोख जाये को तो अपना लेगी ।

उसका ख़ून कमाल की रगों में बहता था । ऐसी औरतें भी होती हैं जिनका अपहरण किया जाता है । ऐसी भी होती हैं जिनके साथ बलात्कार किया जाता है । कोई अपने जाये का इस तरह तिरस्कार नहीं करती ।

लेकिन दिन, हफ़्ते, महीने बीतते गये, मुग़लानी टस से मस नहीं हुई । उसने अपना व्यवहार नहीं बदला । एक ही ग़नीमत थी कि कमाल को इस बात का ज्ञान नहीं था कि मुग़लानी उसकी माँ थी । उसे यह अंदाज़ तो था कि उस घर की पांच औरतों में से कोई एक उसकी मां थी, लेकिन इस बात का आभास तक नहीं था कि वह मुग़लानी थी । और अब कुछ अरसे से सुंदरी ने उसे जिस तरह संभाल लिया था, वह सोचता था कि वह सुंदरी की ही औलाद है । सुंदरी उसे एक कोख जाये की तरह लाड भी तो करती थी ।

कमाल समझदार हो रहा था । हर बात की उसे समझ आने लगी थी । मुग़लानी उसे नफ़रत करती थी इस बात का उसे गहरा एहसास था । घर के बाकी लोग कम या ज़्यादा उसे प्यार करते थे ।

यह कोई ग़ैर मामूली बात नहीं थी । ज़िंदगी में अक्सर ऐसा होता है । कहीं धूप, कहीं छांव, कहीं बूंदा बांदी, कहीं बौछारा । लेकिन मुग़लानी के सलूक में कमाल के लिये एकदम सूखा था ।

पिछले कुछ दिनों से मुग़लानी सोचने लगी थी– उस परिवार के साथ कमाल का क्या रिश्ता था ? मान न मान मैं तेरा मेहमान । अगर किसी के साथ उसका रिश्ता था, तो वह मुग़लानी थी । और मुग़लानी ने उसे कभी मुंह नहीं लगाया था । तो फिर वह लड़का इस घर पर क्यों थोपा गया था ? ऐसे हंसता-खेलता, खाता-पीता, सोता-जागता था जैसे उसी आँगन में जन्मा-पला हो । मुग़लानी सोचती थी, यह सरासर ज़्यादती थी । और मन

ही मन वह अपने आप को इसके लिये ज़िम्मेदार ठहराने लगी। यह एक नई बीमारी उसने मोल ले ली थी।

कुछ दिनों बाद कमाल को सर्दी लग गई। वैसे घर में किसी का माथा भी गर्म हो जाता तो मुग़लानी के पैर ज़मीन पर न टिकते। कभी कोई उपचार करती, कभी कोई टोटका बताती। कमाल की बीमारी को तो जैसे उसने एक कान सुना और दूसरे कान निकाल दिया। उस रात बुख़ार बढ़ गया। घर का हर आदमी भाग दौड़ करने लगा। पहले वैद्य जी को बुलाया गया। बुख़ार नहीं उतरा। फिर शैली जाकर हकीम जी को बुला लाया। बुख़ार कम होने की बजाये बढ़ गया था। अगले दिन पता चला, यह तो निमोनियाँ था। बुख़ार जैसे बच्चे के सर पर चढ़ गया था। उसने बेहोशी में प्रलाप करना शुरू कर दिया। बार बार अपने अब्बा को पुकारने लगा। सुंदरी की बाँह कस कर पकड़ ली, उसे अपने पलंग से हिलने नहीं देता था। घर के सभी लोगों के हाथ पैर फूल गये। लड़का तो हाथ से चला जा रहा था। इस बार जब वैद्य जी आये तो जवाब दे गये। अमन घर में नहीं था, शैली अपनी पूरी कोशिशें करके थक गया था। बच्चे को बिलखता, प्रलाप करता देखकर घर में हर कोई कुछ न कुछ कर रहा था। कोई पाठ कर रहा था, कोई हाथ जोड़ रहा था। कोई जोशोंदा तैयार कर रहा था। कोई उसे दवा पिला रहा था। सिर्फ़ एक मुग़लानी थी, जो पहले की तरह निर्लिप्त थी। तेजी और नसरीन उसे देख देख कर अचंभित हो रहीं थीं। उसका बेटा कुछ घड़ियों, पलों का मेहमान था और यह औरत टस से मस नहीं हो रही थी। लेकिन मुग़लानी की छवि कुछ ऐसी बन चुकी थी कि उसे कुछ कहने की किसी में मजाल नहीं थी। घर में उसका इतना आदर था कि न तेजी, न नसरीन उसे टोक सकती थीं। और कोई ऐसे सलूक की बात सोच भी नहीं सकता था। पाक दामन, नमाज़, रोज़े की पाबन्द, सच्चाई का साथ कभी न छोड़ने वाली, उजली उजली औरत।

लेकिन इस सच्चाई को वह कैसे झुठला सकती थी कि कमाल उसका बेटा था, उसकी कोख से जन्मा था और सामने वाले कमरे में लेटा घड़ियों, पलों का मेहमान था। वह किसी वक्त भी दम तोड़ सकता था। अब शहर का सबसे मशहूर हकीम आया था। बेचारा बीमारी से जूझ रहा था। कमरा बंद करके बच्चे को भाप दी जा रही थी। सात बूटियों का कहवा उसे पिला चुका था। बच्चे की छाती पर रूई को गर्म करके सेंक दिया जा चुका था। घर सहम गया था।

मुग़लानी ने किसी को यह भी तो नहीं पता चलने दिया था कि वह किस शहर, या किस गाँव की रहने वाली थी; नहीं तो शैली और अमन कई बार सोचते और मौलवी को उसका बच्चा पहुँचा देते। आख़िर बेचारे मासूम बच्चे का क्या क़सूर था ? उसे क्यों सज़ा दी जा रही थी ?

कमाल का प्रलाप अब बंद हो गया था। उसके हाथ पैर ठंडे हो गये थे। वह बेहोशी की हालत में था। घर में हर कोई अपने आंसू पोंछ रहा था। मुग़लानी सुमन और सुंदरी की बच्ची को लेकर बाहर निकल गई थी। बस सिर्फ़ हकीम साहब ने अभी हिम्मत नहीं हारी थी।

इतने में अमन आँगन में आ घुसा। कार सेवा के जत्थे के साथ गया था। सरोवर की सेवा करके जत्थे के साथ वापिस लौटा था।

कमाल की हालत देखकर उसने अपनी बुगची में से गुरू महाराज का दिया प्रसाद निकाला और कमाल के ओंठों से छुआ दिया। फिर उसके पलंग के पास बैठकर पाठ करने लगा सब हैरान हो रहे थे। इतने दिन बाहर रहकर आया था। अमन ने अपनी बेटी के बारे में पूछा तक नहीं था। बार बार हाथ जोड़कर अरदासें करने लग जाता।

''सत्गुरू, यह बच्चा किसी की अमानत है। इसके सर पर हाथ रखना। एक बार यह ठीक हो जाये, हमारा सारा परिवार कार सेवा के लिये हाज़िर होगा।''

15

जैसे अमन के जोड़े गये हाथों की सुनवाई हो गई हो। कुछ देर बाद कमाल ने आँखें खोल दी। यह तो करामात थी। इधर अमन ने गुटके में से पाठ ख़त्म किया, उधर कमाल का बुख़ार कम होना शुरू हो गया। लगता था बीमारी अब उसका पीछा छोड़ देगी।

हकीम जी घर वालों की तसल्ली करवा कर चले गये। बच्चा बेशक कमज़ोर था, लेकिन हौसले में था।

''वीरो !'' कमाल ने आँखें खोलीं और सुंदरी की बेटी को आवाज़ देकर अपने पास बुलाया। दोनों में बड़ा स्नेह था। बच्ची उस वक्त मुग़लानी की गोद में थी। मुग़लानी बाहर आंगन में टहल रही थी। जब उसने सुना कि कमाल ने बच्ची को याद किया है, वह भड़क उठी। सुंदरी की बाँहों में से उसने बच्ची को छीन लिया। कहने लगी, क्या पता कमाल को किस किस्म की बीमारी है। मैं बेटी को उसके पास नहीं जाने दूंगी। सुंदरी ने लाख समझाया कि कमाल अब चंगा भला लग रहा था। हकीम जी पूरी तसल्ली करके गये थे। लेकिन मुग़लानी कुछ सुनने के लिये तैयार नहीं थी। सुंदरी ने बहुत ज़िद की तो वह बच्ची को लेकन बाहर निकल गई।

''वीरो कहाँ है ?'' कुछ देर बाद कमाल ने फिर वीरो को याद किया।

''बाहर गई है, सैर करने,'' सुंदरी ने बच्चे का मन रखने के लिये कहा। लेकिन आस पास जमा लोगों को कमाल पर बहुत तरस आया। कैसे लाड़ में वीरांवाली को याद कर रहा था। वह भी तो कितनी तोतली, ज़बान में उसे ''वीरी'' कहा करती थी।

आज कुछ और, कल और, दो चार दिन में कमाल भला चंगा हो गया। हमेशा की तरह बस्ता उठाकर पढ़ने के लिये मक़तब जाने लगा। पढ़ने लिखने में इतना तेज़ था। फ़ारसी, अरबी मक़तब में पढ़ता था, गुरमुखी उसे घर में पढ़ाई जा रही थी। गुरमुखी सीख कर उसने गुरबाणी पढ़नी शुरू कर दी।

मुग़लानी हमेशा कमाल की अरबी फ़ारसी की ग़लतियाँ निकालती रहती। सुंदरी को उसकी गुरमुखी की वाकफ़ीयत में, गुरबाणी के पाठ में कभी कोई नुक्स नज़र नहीं आता था। सुंदरी उसके मुंह से सुनती तो उसे कमाल पर ढेरों लाड आता।

मुग़लानी को यह शिकायत भी थी कि जब से कमाल आया था, सुंदरी की बच्ची

वीरां सुमन से जैसे दूर होती जा रही थी । जिन दिनों कमाल बीमार था, सुमन और वीरां कितने सुंदर ढंग से आपस में खेला करते थे । मुग़लानी ने तो मन ही मन सुमन और सुंदरी की बेटी की शादी भी कर दी थी । अब उसे लगता, जैसे कमाल बच्ची को छीन रहा हो, सुमन और बच्ची के बीच फ़ासला पैदा कर रहा हो ।

सोचने का कितना फ़िजूल ढंग था । लेकिन मुग़लानी की यह धारणा जैसे एक बीमारी बनती जा रही थी ।

और फिर एक रात को सोये सोये मुग़लानी हड़बड़ा कर उठ खड़ी हुई और प्रलाप करने लगी :

"ले गया ! ले गया ! ले गया !! मैं कहती थी न कि किसी दिन वह लड़की को निकाल कर ले जायेगा ।........ इस लड़के के लच्छन ही ऐसे थे ।....... रंडी छोड़ हू-ब-हू अपने बाप पर गया है । बाप जैसी बाते, बाप जैसे फ़रेब .... मीसना कहीं का ......"

आधी रात को घर वालों ने जब मुग़लानी को इस तरह ऊँची आवाज़ में वाही-तबाही बोलते सुना तो हर आदमी घबरा कर उसकी चारपाई के गिर्द आ खड़ा हुआ ।

"इस तरह खड़े होकर बिटर बिटर मेरे मुंह की तरफ़ देख रहे हो ? उसके पीछे जाओ । कहीं निकल जायेगा । कच्ची कली है, हमारी लड़की ......।"

किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था । वीरांवाली सामने वाले कमरे में अपनी मां के गले से लिपटी सो रही थी । सुमन अपने कमरे में सो रहा था । कमाल अपनी चारपाई पर सोया पड़ा था । किसे ले गया ? कौन ले गया ? सब एक दूसरे के मुंह की ओर ताक रहे थे ।

और फिर मुग़लानी सिरहाने पर सिर रख कर लेट गई । लेटते ही उसकी आँख लग गई ।

अगली सुबह जब घर वाले सो कर उठे, रात की घटना के बारे किसी ने किसी से बात नहीं की । लेकिन हर व्यक्ति मन ही मन चिन्तातुर था । हर कोई भांप गया था कि मुग़लानी को कौनसी बात परेशान करती रहती थी । इसका कोई इलाज होना चाहिये । अजीब बीमारी थी । दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही थी । उनका यह सोचना कि वक्त बीतने के साथ मुग़लानी अपना क्लेश भूल जायेगी, अपने कोख जाये के लिये उसके भीतर दबी मुहब्बत फिर उग जायेगी, निर्मूल साबित हो रहा था ।

उस दिन तो मुग़लानी ने हद ही कर दी थी । कमाल, सुमन और वीरां आँगन में खेल रहे थे । किसी बात पर आपस में झगड़ा हो गया । बच्चों में इस तरह की बदमज़गी अक्सर हो जाती है । बिना कारण पूछे, बिना सोचे समझे, चौके में काम कर रही मुग़लानी उठी और उसने कस कर तड़ाक से एक चपेड़ कमाल को जड़ दी । पाँचों उँगलियाँ बेचारे के गाल में धस कर रह गई । बच्चा चीख़ने चिल्लाने लगा । घर में जिसने देखा, स्तब्ध रह गया । हक्का बक्का एक दूसरे को ताकने लगा । लेकिन मुग़लानी को कुछ कहने की किसी में मज़ाल नहीं थी । सुंदरी तीर की तरह अपने कमरे से निकली और उसने कमाल को

छाती से लगा लिया। कमाल बहुत देर तक सिसकता रहा। फिर बिना कुछ खाये पीये उसी तरह सुंदरी की बाहों में उसकी आँख लग गई।

रात को जब अमन घर लोटा, उसने सारे परिवार को इकट्ठा करके उन्हें याद करवाया कि कमाल की सेहतयाबी के लिये उसने मन्नत मांगी थी कि सब लोग सरोवर की कार सेवा के लिये जायेंगे। उसकी ग़ैर हाज़री में घटी घटना से वह बिल्कुल नावाकिफ़ था। अगले हफ़्ते ही मन्नत पूरी करने का उसका इरादा था। पूरा महीने उन्हें कार सेवा करनी होगी। शैली को पीछे से खेतीबाड़ी की देखभाल करनी थी, इस लिये वह कुछ दिन सेवा में हाथ बंटा कर वापस लौट सकता है।

कोई फिरे नाक काटने को, कोई फिरे नथ पहनाने को। शाम की वारदात के कारण घर में ख़ामोशी छाई हुई थी। सब अपनी अपनी जगह दबे-घुटे बैठे थे। कमाल ख़ून के आंसू बहाता रहा था। फिर बहुत देर तक हिचकियाँ लेता हुआ भूखा प्यासा सो गया था। बच्चे को इस तरह क्लेश में सोया देखकर न सुंदरी से, न तेजी से कुछ खाया गया था।

कुछ देर बाद जब मुग़लानी चूल्हा चौका संभालने गई तो तेजी ने शाम को घर में जो घटना हुई थी, उसके बारे में शैली को बताया।

''आख़िर इस बात से इन्कार तो नहीं किया जा सकता कि कमाल मुग़लानी का बेटा है। माताएं कई बार बच्चों को मारती भी हैं।''

''लेकिन ऐसे तो नहीं मारतीं, जैसे मुग़लानी ने बच्चे को थप्पड़ मारा है। पाँचों की पाँचों उँगलियाँ बेचारे मासूम के गाल में धसकर रह गई हैं।''

''कितनी देर तक बच्चा मारे जा रहे बकरे की तरह डकारता रहा और फिर सिसकता-सिसकता सो गया।'' तेजी बोली।

''रो रो कर उसकी घिग्घी बंध गई थी,'' नसरीन अक्सर इन मामलों में दख़ल नहीं देती थी लेकिन आज उससे भी चुप नहीं रहा गया।

''आप कहना चाहते हैं कि अगर हम कार सेवा के लिये ताल पर जाते हैं तो क्या मुग़लानी हमारे साथ नहीं चलेगी ?'' अमन ने सवाल किया।

''हरगिज नहीं।'' शैली बोला।

''इसका मतलब हुआ कि मेरी अरदास की भी उसे परवाह नहीं ?''

''हम लोगों में से अगर एक बंदा न भी गया तो क्या फ़र्क पड़ता है ?'' मैं दोहरी सेवा कर लूंगी, तेजी कह रही थी।

''लो मौसी, अब ज़्यादा खेचल करने की भला तुम्हारी उम्र है ? शैली फ़िक्रमंद था।''

''यह तो अभी भी अपने को हृष्ट पुष्ट समझती है।'' नसरीन ने शैली की बात का समर्थन किया।

''मैं तो अभी भी सोचता हूं कि मुग़लानी माँ है, आज नहीं तो कल उसके भीतर की माँ जाग उठेगी अमन अपना विश्वास प्रकट कर रहा था।''

"इन तिलों में तेल नहीं," जिस तरह उसने कमाल को थप्पड़ मारा था, कोई माँ नहीं मार सकती। मैं अपनी आँखों से देख रहा था, शैली का कहना था।

16

सितम यह हुआ कि परिवार के लोग जब ये बातें कर रहे थे, सामने सुंदरी की चारपाई पर लेटे कमाल की आँख खुल गई थी। और उसने एक एक शब्द सुन लिया था। फिर पता नहीं कब दोबारा नींद ने आकर उसे दबोच लिया। नन्हीं जान !

अगली सुबह धूप चढ़ आई थी। अभी तक कमाल अपनी चारपाई पर लेटा था। एक अजीब सी अधसोई हालत में। सुंदरी ने या किसी और ने जानबूझ कर उसे जगाने की कोशिश नहीं की। फिर घर के सारे प्राणी अपने अपने कामों में लग गये। कुछ खेतीबाड़ी के लिये निकल गये, कुछ कथा कीर्तन सुनने के लिये गुरू जी के महलों के नज़दीक धर्मशाला में अपना नित्तनेम पूरा करने के लिये चल पड़े।

उस दिन घर में सिर्फ़ मुग़लानी और कमाल थे। सुमन और वीरां भी शायद किसी कोने में खेल रहे थे। पलंग पर लेटा नौ दस बरस का बच्चा सामने आँगन में मुग़लानी को चूल्हे चौके का काम करते हुए देख रहा था। जिस औरत को घर की नौकरानी समझ कर उसकी तरफ़ कभी ध्यान तक नहीं दिया था, वह तो उसकी माँ थी। लेकिन उसने माँ वाला प्यार क्यों नहीं दिया था ? वैसा प्यार जैसा वीरां की माँ सुंदरी उसे देती थी। वह तो कभी मुग़लानी की चारपाई पर सोया भी नहीं था जैसे सुंदरी बीबी की चारपाई पर उसके गले लगकर सो जाता था। एक तरफ़ वीरां, दूसरी तरफ़ कमाल और सुंदरी कैसी सुंदर कहानियाँ उन्हें सुनाया करती थी।

सामने चौके में कभी कुछ, कभी कुछ कर रही औरत उसकी माँ थी। एकदम कमाल को ऐसा लगा, मुग़लानी तो एक अत्यंत सुंदर औरत थी। पिछली शाम उसने उसे थप्पड़ मारा था, यह बात कमाल जैसे एकदम भूल गया हो। उसे लगा, उसकी शक्ल हू-ब-हू मुग़लानी से मिलती थी, उसका ख़ून जो ठहरा। अचानक उसे महसूस हुआ कि उसका शरीर मुग़लानी के शरीर से एकाकार हो गया हो, उसका ख़ून उसकी रगों में बह रहा था, उसका लहू उसकी नाड़ियों में बह रहा था। वह तो मुग़लानी के शरीर में समा रहा था, विलीन हो रहा था।

कितनी सुघड़ थी। घर का काम ऐसे कर रही थी जैसे कोई झूला झूल रहा हो। कई लकड़ियों को ठकोर कर चूल्हे की आग तेज़ करती, कभी घड़े का ढक्कन उतार कर पानी भरती, कभी हांडी में करघुल फेरती, आटा गूंध चुकी थी, सामने तंदूर में ईधन डाल कर उसने चूल्हे से एक जलती लकड़ी लेकर तंदूर की आग भी तपा ली थी। उधर तंदूर तप रहा था, उधर वह दो चार जूठे पड़े बर्तनों को मांजने में लग गई थी। हर तरह का छोटा बड़ा काम कर रही थी। लेकिन क्या मजाल कि उसके उजले पहरावे पर कोई छींट भी पड़ी हो। साफ़ सुथरे कपड़े, साफ़ सुथरा मुंह, माथा, हाथ, पैर। काम करती हुई साथ में कुछ गुनगुना भी रही थी। यह कोई हम्द थी या गुरबाणी का कोई शब्द था, मालूम नहीं।

गुनगुनाते हुए स्वाद से विभोर हो कर मुग़लानी का सर झूल रहा था। गांठ लगा कर बनाया बालों का जूड़ा, उसका दुपट्टा मज़ाल है उसके सर से सरक जाये, चाहे आँगन में कोई हो या न हो।

तंदूर गर्म हो गया था। गूँधे हुए आटे के उसने पेड़े बना लिये थे। एक एक पेड़े को फैला कर कितनी सुघड़ता से तप रहे तंदूर में अपनी बांह ले जाकर आँख झपकते ही रोटियाँ थाप रही थी, उतार रही थी। तंदूर के सेंक से उसका चेहरा लाल सुर्ख हो गया था; पसीना धार बन कर, टप टप गिर रहा था। फिर पता नहीं, क्या हुआ, कैसे हुआ, मुग़लानी के सर के दुपट्टे का छोर लटक कर शायद तंदूर में जा गिरा और उसे आग लग गई। कमाल ने देखा तो तीर की तरह पलंग से कूद कर बाहर आँगन के कोने में बने तंदूर की ओर भागा। उसने मुग़लानी का दुपट्टा खींच कर उसके सर से नीचे उतार दिया, आग उसके कपड़ों से लिपट रही थी। कमाल ने अपनी जान पर खेल कर मुग़लानी के कपड़ों की आग को तो बुझा लिया, लेकिन इस कोशिश में अपने हाथ और बाँहों को झुलसा बैठा। घर में उस वक़्त और कोई भी नहीं था। सुमन और वीरां बाहर गली में निकल गये थे।

मुग़लानी स्तब्ध खड़ी थी। फिर चीख़ कर सामने वाले कमरे में चली गई। कमरे में पहुँचते ही वह धड़ाम से पलंग पर गिरी और बेहोश हो गई।

कमाल उसी तरह झुलसे हुए हाथ और बाँहों के साथ अवाक खड़ा था कि इतने में परिवार के लोग धर्मशाला से लौट आये।

आँगन में हुई वारदात को देखकर सबके हाथ पैर ढीले हो गये। भीतर मुग़लानी झुलसी पड़ी थी, बाहर आँगन में कमाल हक्का बक्का खड़ा था। उसे इस तरह बेहाल देखकर सुंदरी उसकी ओर लपकी और कमाल गिर कर उसकी बाँहों में ढेरी हो गया। अमन और सुंदरी उसे अपने कमरे में ले गये। उसे चारपाई पर लिटा दिया गया। अब शैली हकीम साहब को बुलाने दौड़ा। उधर मुग़लानी की हालत चिंताजनक थी, इधर कमाल निढाल पड़ा था। कमाल के प्रति मुग़लानी का भाव जानते हुए हर कोई यह अंदाज़ा लगा चुका था कि उनके पीछे आँगन में क्या हुआ होगा। हर कोई सोचता था कि मुग़लानी ने अपने आप को और कमाल को आग लगा कर आत्म हत्या की कोशिश की थी।

सितम यह था कि न मुग़लानी न कमाल इस बात को झूठा बता रहा था। कोई उन्हें इस बात के झुठलाने का मौक़ा ही नहीं दे रहा था। वे लोग भी सच्चे थे, जिन हालात में माँ बेटा पाये गये थे, और छानबीन करने की गुंजायश भी कहां थी ?

किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। एक तरफ़ तंदूर तपा हुआ था, तंदूर में लगी रोटियाँ जल कर कोयला हो गई थीं। चौके में चूल्हे पर चढ़ी तरकारी जल कर कोयला हो गई थी। आँगन में एक तरफ़ मुग़लानी के झुलसे कपड़े पड़े थे। दुपट्टा तो पूरी तरह से राख हो चुका था।

हक़ीम साहब आये। मुग़लानी की हालत ज़्यादा ख़राब थी। कमाल के हाथों और कलाईयों में सेक लगा था। हकीम साहब अपने साथ लेप लेकर आये थे। अब मुग़लानी

और कमाल दोनों को जलने का भयंकर दर्द शुरू हो गया था । उधर मुग़लानी कराह रही थी । इधर कमाल हाय-हुक्कू कर रहा था । अब तो और भी किसी को मौक़ा नहीं मिला कि कोई किसी से पूछने की कोशिश करता कि यह सब कैसे हुआ था । हकीम साहब मामले की नज़ाकत को पहचानते थे । उन्होंने भी ज़्यादा पूछताछ नहीं की । इस तरह के हादसे का लोग अपने हिसाब से अलग अलग मतलब निकाल लेते हैं और फिर जितने मुँह, उतनी बातें । घर घर, गली गली बात फैल जाती है ।

यह सोचकर कि मुग़लानी ने कमाल को अपने साथ जलाने की कोशिश की थी, अमन और शैली मन ही मन कुढ़ रहे थे । जब से मुग़लानी उनके घर में आई थी, पहली बार ये लोग सोचने लगे थे कि मुग़लानी उनके लिये एक समस्या बन गई थी । और समस्या भी ऐसी जिसे सुलझाना उनके बस की बात नहीं थी ।

"चाहे कोई बच्चा किन्हीं भी हालात में जन्मा हो, अपनी कोख से जाया बच्चा आख़िर अपनी माँ की संतान होता है ।" अमन कह रहा था । "आख़िर ऐसी मांएँ भी तो होती है जिनके साथ लोग ज़बरदस्ती करके अपना बीज छोड़ जाते हैं ।" शैली अमन से सहमत थी ।

"लेकिन औरत औरत में फ़र्क होता है । मुग़लानी कोई आम औरतों जैसी औरत नहीं ।"

"औरतें फ़र्क क़िस्म की हो सकती हैं । लेकिन माँऐ एक सी होती हैं । हर माँ अपने जाये के लिये क़ुर्बान हो जाती है ।"

"मैं पूछता हूँ- कमाल का क्या क़सूर है ? उसे क्यों सज़ा दी जा रही है ?"

"पहली बात तो यह है कि कमाल को हक़ीकत का नहीं पता । वह तो सुंदरी को अपनी जाई समझे बैठा है । और जवाब में सुंदरी भी उसे कोख से जाये जैसा प्यार देती है । दूसरी बात यह है कि अगर बच्चे को इस बात का पता न हो कि उसकी जाईं कौन है तो जिससे उसे माँ जैसा स्नेह, माँ जैसी ममता मिलती है, वह उसी को अपनी माँ बना सकता है । तकलीफ़ तो माँ को होती है, जिसे यह बात मालूम होती है कि वह अपने जाये को लाड़ नहीं कर रही, या किसी और के जाये को अपना रही है । और अगर कोई माँ सुंदरी जैसी हो तो यह दुख भी एक उल्लास में, एक ख़ुशी में बदल जाता है ।"

शैली और अमन इस वार्तालाप में व्यस्त थे कि हकीम जी उनके पास आ बैठे । चिंतातुर लग रहे थे ।

"मुझे लगता है कि मुग़लानी को बचा सकना मुमकिन नहीं होगा," उन्होंने चिंता में डूबी आवाज़ में कहा ।

"नहीं, मुग़लानी को तो बचाना होगा । शैली और अमन दोनों ने एक स्वर में कहा ।"

17

कुछ दिन बाद मुग़लानी और कमाल दोनों भले चंगे हो गये ।

लेकिन सितम यह था कि मुग़लानी कमाल के प्रति पहले जैसी बेरुख़ी अपनाये थी। बेचारा बच्चा उसकी ख़ातिर जान पर खेल गया था लेकिन मुग़लानी थी कि टस से मस नहीं हो रही थी।

कमाल की मुसीबत यह थी कि जिस क्षण से उसे इस बात की जानकारी हुई कि सुंदरी उसकी माँ नहीं थी, सुंदरी की हर हरकत, उसका हर लाड़, उसकी हर हमदर्दी उसे फीकी फीकी लगती, बेजान, बेजान लगती। जैसे या तो यह सब बनावटी हो या उसके प्रति दया की भावना हो।

और उधर मुग़लानी थी– एक बर्फ़ जैसी ठंडी सिल। जैसे कमाल के लिये उसने अपने सारे दरवाज़े बंद कर रखे हों। और सबके लिये जान देने के लिये तैयार रहती, ख़ास तौर पर सुमन को दुलारती हुई नहीं थकती थी, लेकिन कमाल जैसे उसे फूटी आँख नहीं सुहाता था।

घर में परिवार के बाक़ी लोग अजीब सी शशोपंज में थे। हर किसी को शक था कि मुग़लानी ने अपने आप को आग में जलाने की कोशिश की थी। कमाल जब बताता कि वह तो मुग़लानी को बचाने गया था, यह बात भी किसी को जँचती नहीं थी।

अमन जब भी इस बारदात के बारे में सोचता, उसे ऐसा लगता कि यह हादसा इसलिये हुआ था कि उन लोगों ने कार सेवा की मन्नत पूरी नहीं की थी। जब कमाल बीमार था तो अमन ने अरदास की थी कि पूरा परिवार गुरू महाराज के तैयार हो रहे सरोवर की कार सेवा के लिये हाज़िर होगा, इतने दिन बीत गये थे उन्होंने अपनी मन्नत पूरी नहीं की थी, वह घरवालों को कई बार उसकी याद दिला चुका था। लेकिन ऐसी कहावत है कि मकान बनते ही लोग बढ़ई को भुला देते हैं– घर में कोई भी उसकी तजवीज़ पर ध्यान देने के लिये तैयार नहीं था। हर कोई अपने काम में मस्त था।

उस दिन अमन फिर घरवालों को कार सेवा की याद दिला रहा था। शैली की फ़सलों की कटाई हो रही थी। उसकी मजबूरी थी। अगर शैली नहीं जाता तो नसीम कैसे जा सकती थी ?

"आख़िर मन्नत, मन्नत होती है। मैंने अरदास की थी।" अमन ने चिढ़कर कहा।

"अरदास किस लिये ?" नसरीन पूछ रही थी।

"कमाल के लिये और किस लिये ?" सुंदरी ने जवाब दिया। "कमाल का हमारे साथ क्या रिश्ता है ?"

"रिश्ते बनाये जाते हैं।"

"उसकी माँ तो उसे मुंह लगाने को तैयार नहीं। वैसे हम लड़के से चिपके बैठे हैं।" नसरीन ने नाक चढ़ा कर कहा।

"हां, मैं अम्मा के साथ सहमत हूँ।" शैली बोला। "इस लड़के को इसके बाप के पास भेज देना चाहिये।"

"बाप तो अपना खोज खुरा छोड़े बग़ैर चला गया है ।"

"मुग़लानी से पूछा जा सकता है । आख़िर उसे तो पता होगा कि ये लोग किस शहर या किस गाँव में रहते थे ।"

"वह तो चुप्पी साध लेती है । जब भी इस बारे में कोई बात करता है ।" सुंदरी को शिकायत थी ।

"जो हम लोग सोचते थे कि वक्त बीतने पर मुग़लानी अपनी नाराज़गी भूल जायेगी, यह बात ग़लत साबित हुई है ।"

"ज़िद्दी औरत है ।"

"जिद्दी नहीं, असूल वाली औरत है ।"

"यह भी अच्छा उसूल है । भाई अगर तुझे नाराज़गी है तो लड़के के बाप से होगी । इस मासूम जान को क्यों तिरस्कारा जाये ।"

"उसे तो कमाल से जैसे नफ़रत है ।"

"नफ़रत जैसी नफ़रत । इतने महीने हो गये हैं । इस औरत के रूख में तिल भर फ़र्क नहीं पड़ा ।"

"मेरे लिये तो कमाल बेटे जैसा है ।" सुंदरी ने लाड़ से कहा ।

"बेटे ऐसे थोड़े ही बनाये जाते हैं," अमन ने नाक-भौं सिकोड़ ली ।

फिर वही सितम हुआ । जब परिवार के लोग बैठे कमाल के बारे में बातें कर रहे थे, बाहर से आकर, साथ के कमरे से कमाल बाहर निकल कर दीवार के पीछे खड़ा यह सब सुन रहा था ।

और फिर उसके मन में न जाने क्या आया, उन्हीं क़दमों से वह बाहर निकल गया ।

एक बार दहलीज़ से बाहर पैर रखने के बाद वह जैसे हवा में विलीन हो गया । फिर उसकी कोई खोज ख़बर नहीं मिली । घर वाले टक्करें मार कर थक गये । सुंदरी उसकी याद से परेशान होती फिर अपने आप से कहती- "आख़िर कमाल मेरा क्या लगता था ? जिसकी कोख से जन्मा है वह तो जैसे निश्चिंत हो गई है । एक बार भी उसने अपने जाये को याद नहीं किया ।"

और फिर जैसे सब कमाल को भूल गये । जिस तरह बुलाये अचानक आया था वैसे ही चुपचाप बिना किसी को बताये निकल गया था ।

कमाल चला गया और पीछे घर में जैसे ख़ामोशी छा गई । न अब कभी बच्चों का आपस में झगड़ा होता था, न बड़े मुग़लानी की नुक्ताचीनी करते थे, न मुग़लानी कमाल को देखकर नाक चढ़ाती थी, न ही उसके माथे पर त्योरियां बनती थीं । हंसी ख़ुशी से घर की गाड़ी फिर चल पड़ी ।

लेकिन एक अपराध भावना अमन को सदा खाती रहती थी । उन लोगों ने उसकी अरदास का पालन अभी तक नहीं किया था । बेशक कमाल चला गया था, लेकिन अमन

ने हाथ जोड़ कर अरदास की थी गुरू बाबे के सामने, कि बच्चे की सेहत फिर से ठीक हो जाये। अमन को इस बात का डर था कि मन्नत पूरी न करने पर उनके परिवार पर कोई संकट न आ जाये। मन ही मन वह चिंता करता रहता। लेकिन वह देख देख कर हैरान होता कि घर वाले इतने दिनों से इतने ख़ुश और प्रसन्नचित्त कभी नहीं दिखाई दिये थे जितने वे आजकल दिखाई देते थे। हर कोई अपने काम काज में लगा था। मुग़लानी सारे परिवार मे ख़ुशियाँ बिखेरती रहती। हर काम सलीके से, करीने से, ठहराव के साथ होता। कभी किसी को शिकायत का मौक़ा न दिया जाता।

फिर भी इस बात का एहसास कि उसने हाथ जोड़कर मन्नत मानी थी, जो अभी तक पूरी नहीं की थी, उसे कई बार परेशान करने लगता। मालूम होता था कि घर में किसी और को इसकी परवाह नहीं थी।

फिर एक दिन अमन यह किस्सा सुंदरी के साथ ले बैठा। "मैं तो ख़ुद कई बार इस बारे में सोचती हूँ। लेकिन मैं औरत ज़ात बेबस हूँ। मन ही मन गुरू बाबे से क्षमा याचना कर लेती हूं।" सुंदरी ने दिल की गांठ खोली।

"तो फिर हम दोनों जने कार सेवा के लिये हो आते हैं।" अमन कहने लगा।

सुंदरी ने हामी भर दी और पति-पत्नी तैयारी करने लगे। घर के बाक़ी लोगों को एतराज़ नहीं था। अमन तो वैसे भी कई बार ताल से हो आया था।

लेकिन जब चलने का वक्त आया तो मुग़लानी भी उनके साथ तैयार हो पड़ी। कहले लगी- मैं भी अपने हाथ सुच्चे कर लूँ। नसीम और शैली उसके मुंह की तरफ़ ताकते रह गये।

नसीम ने मुग़लानी को रोकने की एक बार फिर कोशिश की, "अम्मा, आजकल फ़सलों की कटाई के दिन हैं। हम लोग तो सारा दिन कुँए पर रहते हैं, पीछे सुमन को कौन संभालेगा ?"

"लड़के की दादी जो है।" मुग़लानी बोली। "अगर ये सब जा रहे हैं तो मैं भी जाऊँगी। मैं पीछे क्या करूँगी ? मुझे आगे जा कर क्या जवाब नहीं देना ? अमन की अरदास में मैं भी तो शामिल थी।" नसरीन अपने अंदाज़ में मन की इच्छा प्रकट कर रही थी।

नसीम चुप हो गई। कहने लगी "इसका मतलब है कि सुमन को इसी उम्र में खेती-बाड़ी के काम में पड़ना होगा।"

"मासूम जान ! लेकिन इसे हम लोग अपने साथ क्यों नहीं ले जा सकते ? वीरां भी तो जायेगी।" मुग़लानी बोली।

"वहाँ हम कार सेवा करेंगे या बच्चों की सेवा ?" सुंदरी ने एतराज़ किया।

"बच्चों की सेवा भी तो ...."

"कार सेवा होती है, " शैली ने तेजी मौसी का वाक्य पूरा किया।

18

अमन और शैली की बहस करने की कुछ आदत-सी ही हो गई । कुछ तो उनके दृष्टिकोण अलग थे, कुछ उनका काम काज अलग था । लेकिन सबसे बड़ा कारण उनकी संगत थी । शैली का ज़्यादा वक्त किसानों, खेतिहरों और मेहनत मशक्कत करने वालों के साथ बीतता था । अमन की संगत साधुओं, फ़कीरों, यात्रियों, अध्यात्मवादियों के साथ रहती थी ।

आज की बहस सरोवर के आसपास बिछाये जा रहे शहर की ज़मीन के बारे में थी । अमन का कहना था कि गुरू महाराज ने वह ज़मीन 700 अकबरी रूपये देकर गाँव वालों से मोल ली थी । लेकिन शैली ज़िद कर रहा था कि ये गाँव अकबर बादशाह बीबी भानी के नाम जागीर वाले हैं ।

कुछ देर से नसरीन उनकी बहस सुन रही थी, वह बीच में ही बोल उठी और उसने शैली को याद करवाया कि यह वह स्थान है जहाँ कभी बाबा नानक आ कर बैठे थे और उन्होंने भाई बुड्ढा से कहा था कि वे नज़दीक के बेरों के झुंड के क़रीब तालाब में से पानी का लोटा भी लायें । बुड्ढा जी जो उस इलाक़े के चप्पे-चप्पे से वाकिफ़ थे कहने लगे- बाबा जी वह ताल तो सूखा पड़ा है । गुरू बाबे ने कहा- "पुरखा, तू जाकर देख तो सही । और भाई बुड्ढा जी वहाँ पहुँचकर हैरान रह गये । जो तालाब सुबह सूखा पड़ा था, जल थल हो रहा था ।"

गुरू महाराज ने उसी स्थान की ज़मीन मोल लेकर अपना चक बसाने की बात सोची है । अमन बताने लगा ।

"बेटा, और तुझे यह बात भी नहीं भूलनी चाहिये" अब तेजी बोल रही थी, कि "बाबा नानक जी ने करतारपुर बसाया था, गुरू अगद देव जी ने खडूर साहब, गुरू अमरदास जी ने हमारा यह गोइंदवाल और अब गुरू रामदास जी ने नया शहर बसाना ही है ।"

"गोइंदवाल बेशक पवित्र स्थान है, और फिर हमारा अपना शहर भी ।" अमन कहने लगा, "लेकिन यह लाहौर और दिल्ली के रास्ते में है । आ जा रहा हर कोई इधर आ जाता है । गुरू महाराज ऐसा शहर बसाना चाहते हैं जो एक तरफ़ हट कर हो ।"

शैली इस तर्क से सहमत नहीं था । कहने लगा, "गुरू महाराज जहाँ भी होंगे, संगतें वहीं पहुँचेंगी । जहाँ रौशनी होगी, वहीं पतँगें जायेंगे । जहाँ फूल खिलेगा, वहीं भौंरे आयेंगे । सुना है अभी सरोवर की चिनाई पूरी भी नहीं हुई और सरोवर के गिर्द शहर बसना शुरू हो गया है । इसमें हर्ज भी क्या है ? श्रद्धालु तो गुरू महाराज के दर्शनों के लिये आते हैं ।"

"श्रद्धालुओं के साथ और लोग भी तो आ धमकते हैं ।" अमन जैसे नाक चढ़ा रहा हो ।

"तेरा इशारा शहंशाह अकबर की तरफ़ है ?" शैली ने पूछा ।

"बेशक ।"

"अकबर एक सुलहकुल हुक्मरान है । गुरू महाराज का प्रशंसक है ।"

"प्रशंसक होना ही तो काफ़ी नहीं ।"

"अकबर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच की दूरियों को कम कर रहा है ।"

"हिन्दू रानियों के डोले महलों में डलवा कर !"

"यह भी एक ढंग है आसती का, भाईचारे का ।"

"अगर कोई औरत अपनी मर्ज़ी से किसी के महल की ज़ीनत बनना चाहे, वह और बात है, लेकिन अगर बादशाह अपनी मन मर्ज़ी करने लग जाये तो यह प्रजा के साथ ज्यादती होती है ।"

"मसलन ।"

"मसलन नगरकोट की बेहुरमती को ही ले लो । अकबर ने हुसैन कुली ख़ान को हुक्म दिया कि नगरकोट का राजपाट राजा जयचंद के बेटे बिधी चंद से छीनकर बीरबल के हवाले कर दिया जाये । कुली ख़ान के फ़ौजियों ने महामाई के मंदिर की बेहुरमती की । कई पुजारियों और ब्राह्मण श्रद्धालुओं को तलवार के घाट उतारा । और तो और मंदिर की दो सौ काले रंग की गायों को काटा गया । यही नहीं उनके ख़ून से मंदिर की दीवारों पर लेप किया गया और फिर राजा बिधीचंद के साथ समझौते की पहली शर्त यह थी कि वह अपनी बेटी को शहंशाह के महल में भेजेगा ।"

"यह तो इसलिये ताकि बेटी का बाप बग़ावत न कर सके । और फिर जंग में इस तरह की ज़्यादतियाँ हो ही जाती हैं," शैली बोला ।

"और मासूम गायों का काटा जाना ?"

"आख़िर लड़ रहे फ़ौजियों को जश्न मनाने के लिये भी तो गोश्त दरकार होता है ।"

"और मंदिर की दीवारों पर लहू का लेप करके गोश्त खाने में ज्यादा मज़ा आता है ! " गुस्से से अमन झागो झाग हो रहा था ।

"लेकिन बेटा इस बात से तो इन्कार नहीं किया जा सकता कि अकबर अमन पंसद बाहशाह है । हमारे गुरू महाराज के दर्शनों के लिये आया था," तेजी कह रही थी ।

"वैसे तो हुमायूँ भी गुरू अंगददेव जी की दरगाह में हाज़िर हुआ था ।"

"अकबर आख़िर इतनी सारी ज़मीन भी तो भेंट करके गया था ।" शैली ने याद दिलाया ।

"मैं तो सोचती हूँ कि गुरू महाराज ने अच्छा ही किया कि बादशाह की दान की हुई ज़मीन पर अपना नया शहर नहीं बसाया, " तेजी फिर बोली ।

"मुझे यक़ीन है कि यह वही ज़मीन है," शैली अपनी बात पर क़ायम था ।

"अकबर की बीबी भानी को दी गई ज़मीन झबाल में हैं । गुरू रामदास जी का नया बसाया जा रहा शहर तुंग नाम के गाँव के नज़दीक है । मुझसे ज़्यादा इस बात की गवाही

कौन दे सकता है ? जब भाई बुड्ढा जी ने गुरू महाराज जी के आदेश पर टक लगाया, मैं खुद वहाँ हाज़िर था । सत्गुरू ने गुरू नानक, गुरू अंगद, गुरू अमरदास जी को याद करके अरदास की और फिर टक लगाया गया । हम लोग इसे गुरू का चक कहते हैं ।''

''तब तो अब वहीं जाकर बसना पड़ेगा ।'' करतारपुर से खूडूर, खडूर से गोइंदवाल और अब गुरू के चक में !'' शैली हंसने लगा ।

''इसमें हंसी की कोई बात नहीं ।'' नसरीन कहने लगी, ''अगर गुरू का चक बसने जा रहा है, ते फिर हम भी वहीं जा बसेंगे ।''

''अम्मा, आपका मतलब है कि यह ज़मीन, यह कुआं, यह खेत-खलिहान यहीं छोड़ जायेंगे ?''

''हम तो गुरू महाराज की शरण में आये थे, जब तक ये श्वास हैं, हम उन्हीं की शरण में रहेंगे ।''

''और अब हमारे दिन ही कितने रह गये हैं ? बुढ़ापे में जो श्वास बाक़ी हैं, गुरू महाराज के चरणों में ही गुज़रें, मैं यही हाथ जोड़ती हूँ ।'' तेजी बोली ।

''पहले कार सेवा करके आते हैं, फिर अगले क़दम के बारे में सोचेंगे, '' अमन कह रहा था ।

''बीबी तू भी गांठ-पोटली बाँधनी शुरू कर दे । कार सेवा के बहाने गये, ये फिर मुड़कर नहीं आने वाले ।'' शैली अपनी बीवी नसीम से कहने लगा ।

''नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं,'' अमन ने नसीम का मुंह उतरता हुआ देखकर उसे हौसला दिलाया ।

''हाँ, यह कोई गुड्डे गुड़िया का खेल थोड़े ही है । अगर जाना ही हुआ तो सब इंतज़ाम कर जायेंगे ।'' नसरीन अपनी बहू को हौसला दिलवा रही थी ।

''अगर मुग़लानी वहाँ रह गई तो मुझसे घर का काम अकेले नहीं संभलेगा ।''

''सुमन की तो मुग़लानी में जान है ।'' नसरीन कहने लगी । मालूम नहीं इतने दिन उसके बग़ैर कैसे रह सकेगा ?

''अगर यह बात है तो मैं नहीं जाती ।'' चौके में काम कर रही मुग़लानी ने सुना तो वह बोली ।

''यह औरत कुर्बानी का पुतला है ।'' तेजी ने दबी ज़बान में कहा ।

19

हवेली से बाहर दांयें हाथ खुली पड़ी जगह पर शैली कुआँ खुदवा रहा था, कहता था मुग़लानी को पानी भरने इतनी दूर जाना पड़ता है । अपना कुआँ होगा तो उसका समय बचेगा और इस्तेमाल के लिये खुला पानी मिलेगा । अमन मुग़लानी को पानी की बैरिन कहा करता था । और फिर गली-मुहल्ले वालों को भी पानी की सुविधा मिल जायेगी ।

अमन गुरू के चक सरोवर की कार सेवा के लिये ज़ोर दे रहा था। उसने सभी को चलने के लिये तैयार कर लिया था । इधर शैली ने अपनी कार सेवा शुरू कर दी थी । अमन

उसके मुँह की ओर देखता रह गया। कुँए की खुदाई ने इतना पसारा मचा रखा था कि इन हालात में कोई सामान समेट कर कैसे जा सकता था ? शैली का यह अनुमान कि आठ दस हाथ पर पानी निकल आयेगा, ग़लत साबित हो रहा था। कुँए की खुदाई कितने हाथ तक हो चुकी थी लेकिन अभी तक पानी का कहीं नामों निशान नहीं था।

शैली को अब चिन्ता हो रही थी कि कहीं नीचे पत्थर की शिला निकल आई तो क्या करेंगे ? और तो और गुरू महाराज की खुदाई बावली के नीचे भी शिला निकल आई थी।

अमन सुनता तो मन ही मन कहता, ज़रूर शिला होगी, ये लोग मन्नत माँग कर भी कार सेवा करने नहीं गये थे। इन्हें श्राप लगा है, ज़रूर पत्थर की शिला होगी।

शैली अमन से मज़ाक करता, "हमारा भाई कार सेवा के लिये तैयार हुआ था। पूरे परिवार को भी इसने साथ में बाँध लिया था। हमने सोचा इसकी मनोकामना पूरी की जाये। हमने घर में ही कार सेवा शुरू कर दी है।"

यह सुनकर अमन के तन मन में आग लग जाती। शैली की ओर इस तरह देखता जैसे उसकी ज़बान खेंच लेगा। "यह पाप है।" वह गुस्से से झागोझाग होकर कहता।

जवाब में शैली हंस देता।

"देखना बच्चू, तू बेशक लाख बार अपनी कार सेवा कर तेरे कुँए में से पानी नहीं निकलने वाला। शिला है, नीचे शिला है।" अमन जैसे उसे चुनौती दे रहा हो।

"फिर क्या हुआ, गुरू महाराज की बाउली के नीचे भी तो शिला थी। हम बारूद का पलोता लगा लेंगे।" शैली पहले की तरह तसल्ली से जवाब देता।

"पलीता लगाने वाले की जान पर भी तो आ पड़ती है।" अमन उसे याद करवाता।

"गुरू महाराज उसे दोबारा प्राण भी तो बख़्श सकते हैं।"

"तेरे कुँए के लिये वे ऐसा नहीं करने वाले।"

"कुआँ बेशक मैं खुदवा रहा हूं, पानी तो पूरा मुहल्ल भरा करेगा।"

बहस में शैली को मात देना हमेशा मुश्किल हुआ करता था।

अमन को दिन रात यह ग़म खाये जा रहा था कि इन लोगों ने उसकी मन्नत नहीं पूरी की थी।

और फिर एक के बाद दूसरी आफ़त आई, जब वह एक दिन शैली से बहस कर रहा था और जल भुन कर कह रहा था, तेरे कुएँ में पानी कभी नहीं निकलेगा, बाहर गली में शोर मच गया कुएँ में पानी निकल आया था।

शैली अपनी बहस बीच में ही छोड़ कर बाहर निकल गया और घर के लोग उसके पीछे चले गये। अमन भी खिझा खिझा उनके पीछे हो लिया।

मन्नत उन लोगों ने पूरी की नहीं थी और इधर कुएँ में पानी निकल आया था। बाक़ी घर में लहर बहर थी। इस बरस शैली की फ़सल भी दुगनी चौगुनी हुई थी। नसीम को एक

और बच्चे की आस लग गई थी। जबसे कमाल गया था, मुग़लानी हर वक्त खिली रहती थी, जैसे ख़ुशियाँ लुटा रही हो।

अमन की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। उसने सुन रखा था कि जो लोग गुरू महाराज के आगे अरदास करके फिर जाते हैं, उन्हें कहीं जगह नहीं मिलती, न इस जहान में न अगले जहान में। उस दिन अमन पूरी रात करवटें बदलता रहा। उसे नींद नहीं आई।

अगली सुबह वह अपनी बीवी और बच्चों को साथ लेकर गुरू के चक चला गया। तेजी की तबीयत ढीली थी। उसने कहा वह कुछ दिन रूक कर आयेगी।

सफ़र के दौरान अमन को यही भटकन सताती रही कि अरदास करके मन्नत ज़रूर पूरी करनी है। ऐसा न करने वालों को ईश्वर का क्रोध झेलना पड़ता है। ऐसा सोचते वक्त उसकी आँखें के सामने शैली की गोइंदवाल वाले घर की रौनक और सम्पन्नता एक तस्वीर की तरह घूमने लगती। उसके मुंह का स्वाद फीका फीका हो जाता। लेकिन गुरू घर में अमन का विश्वास, सिक्ख परंपरा में उसकी निष्ठा, वह गुरू घर की मर्यादाओं से, अपनी मान्यताओं से कभी न भटकता।

गुरू के चक पहुँचे, अमन और सुंदरी ने कार सेवा में अपने हाथ सुच्चे किये ही थे, उन्होंने क्या देखा, अनगिनत श्रद्धालुओं में कमाल भी सर पर टोकरी उठाये कहीं रेत पहुँचा रहा था। अमन और सुंदरी के देखकर टोकरी कमाल के सर से उछल कर सामने जा गिरी और वह दौड़कर सुंदरी की टांगों से आकर लिपट गया। उसकी आँखों से टप टप आँसू गिर रहे थे। फिर बिना कुछ कहे सामने एक कोने में बैठी खेल रही वीरां से लाड़ करने लगा।

जब बिछोड़े की उदासी कम हुई तो अमन ने उससे पूछा "तू कहाँ ग़ायब हो गया था।"

कमाल ने बताया कि जब वह घर से बाहर निकला तो एक जत्था कार सेवा के लिये गुरू के चक जा रहा था, वह भी उसमें शामिल हो गया। जिस दिन से वह गुरू के चक पहुँचा था, आठों पहर कार सेवा में जुट गया था।

यह सुनकर अमन खिल उठा। उसकी मन्नत तो पूरी की जा रही थी। तभी तो वे सब ख़ैरियत से थे।

चाहे उनसे बिछड़े कमाल को कुछ हफ्ते ही हुए थे। सुंदरी को कमाल पहले से लंबा दिखाई दे रहा था, पहले से भी सुंदर दिखाई दिया। भरा भरा चेहरा। वह सोचती थी बेचारा बच्चा कहाँ टक्करें मार रहा होगा, यह डर बिल्कुल ग़लत साबित हुआ।

सरोवर की खुदाई तो कभी की ख़त्म हो चुकी थी। अब तो चारों तरफ़ की मुंडेरे पक्की की जा रही थी। परिक्रमा में फ़र्श बिछाया जा रहा था। गुरू महाराज सुबह शाम चिनाई की देख रेख ख़ुद कर रहे थे। कई बार ख़ुद अपने हाथों से ईटों के रद्दे जोड़ने लग जाते।

कमाल शुरू के दिनों में ईटों के भटे पर नौकरी करता रहा था, उसने ढेर सारे पैसे भी कमा लिये थे। कुछ हफ़्तों से आकर कार सेवा में शामिल हो गया था। जब ईटें पकाने के लिये चिमनी जोड़ कर भट्टे में आग जलाई जाती तो वह कुछ दिन कार सेवा में लगा लेता, पुन्न का पुन्न फलियों की फलियां।

उस रात नींद में कमाल की आँख खुल गई और वह छलछल आँसू रोने लगा। बहुत देर तक उसकी आँखों से आँसू टपकते रहे। फिर उसकी सिसकी निकल गई। उसके पास सोये अमन और सुंदरी जाग उठे। सुंदरी कमाल के पास आकर उसे प्यार करने लगी।

कमाल बार बार कहता, "तू मेरी माँ क्यों नहीं ? तू मेरी माँ क्यों नहीं ?"

अब अमन और सुंदरी को एहसास हुआ कि कमाल को पता चल चुका था कि उसकी माँ सुंदरी नहीं, बल्कि मुग़लानी थी। और मुग़लानी उसे अपना बेटा मानने को तैयार नहीं थी।

"तू मेरा बेटा है, कमाल, तू मेरा बेटा है।" सुंदरी बार बार उसे धीरज बंधानें की कोशिश करती लेकिन जिस कमाल ने उस दिन का पूरा वार्तालाप सुन रखा था, वह अपने आपको और ज़्यादा धोखे में कैसे रखता ?

कुछ दिन बाद कमाल को यह चिंता खानें लगी कि अमन और सुंदरी तो कार सेवा करके गोइंदवाल लौट जायेंगे। यह सोच कर वह आठों पहर उदास उदास रहने लगा। हर वक्त रूआंसा रूआंसा। यह देखकर अमन उसे कहता, "हम कहीं नहीं जा रहे। यहीं रहेंगे।" अमन की बात पर कमाल को ऐतबार नहीं आता था।

20

ऐतबार आने की यह बात थी भी और नहीं भी थी। गुरू के चक में नया शहर बस रहा था, गुरू महाराज के श्रद्धालु गोल बांध कर यहाँ आ रहे थे। अपना अपना ठिकाना बना रहे थे। लेकिन अमन और शैली के परिवार की गोइंदवाल में इतनी बड़ी हवेली थी, ढेर से खेत थे। वे सब कुछ छोड़कर कैसे आ सकते थे ?

लेकिन चूंकि गुरू रामदास जी आजकल यहाँ आकर टिक गये थे, उनके रहने के लिये 'महल' का निर्माण भी शुरू हो गया था। देखा देखी अनेक श्रद्धालुओं ने, वाणिज्य व्यापार करने वाले भी अपना अपना ठिकाना बना रहे थे। यह देखकर गुरू ने शहर की निश्चित रूपरेखा बना दी ताकि हर व्यवसाय के लोग वहाँ आकर बस सकें। शहर को मुहल्लों और बाज़ारों में बाँटा गया। हर मुहल्ले, हर बाज़ार के लिये अलग कुआं खुदवा कर पहले से तैयार कर लिया गया, ताकि मकान बनवाने में शहरियों को कठिनाई न हो। गुरू महाराज का यह आदेश था कि जो नया शहर बसाया जा रहा है उसमें किसी क़िस्म का भेदभाव नहीं होगा। हर धर्म, हर ज़ात, हर भाईचारे का शहरी जहाँ चाहेगा, वहीं अपना घर बना सकेगा। व्यापार के लिये दूकान खोल सकेगा।

गुरू महाराज का इरादा था कि सरोवर के चारों तरफ़ बसाया जा रहा शहर काश्मीर

और अफ़गानिस्तान के साथ व्यापार का एक केंद्र बन जाये । सरोवर के बीचों बीच हरिमंदिर बनाया जाये ताकि वक्त बीतने के साथ नया शहर एक तरह से सिक्ख क़ौम की राजधानी बन जाये ।

लेकिन मन ही मन गुरू महाराज को इस बात का एहसास था कि उनके पास समय बहुत कम रह गया है । वही बरस बचे थे जो उन्हें उनके गुरूदेव, बीबी भानी के पिता जी ने अपनी जाई के सिदक पर प्रसन्न हो कर बख़्शे थे ।

सरोवर की चिनाई, शहर के निर्माण का काम लगातार चल रहा था। हर आदमी इसमें ज़्यादा से ज़्यादा योगदान दे रहा था । पट्टी का कारदार अपने अहलकारों के साथ हर तरह की सहायता के लिये हाज़िर रहता । जिस दिन से उसकी बेटी राजी का पिंगला ख़ाविंद नया निरोया हुआ था, उसकी जैसे आँखें खुल गई थी, हर दूसरे, चौथे रोज़ सारा परिवार अपने हाथ सुच्चे करने के लिये कारसेवा के लिये हाज़िर होता । राजी का घर वाला तो रहता ही वहीं था । असग़र नाम था । दिन में लोग काम करते, सुबह शाम साध-संगत जुड़ती, कीर्तन होता, गुरू महाराज के बचनों से श्रद्धालु निहाल होते रहते ।

श्रद्धालु बतौर चढ़ावे के बेहद धन चढ़ा रहे थे तब भी वह काफ़ी नहीं हो रहा था । यह देखकर गुरू महाराज ने फ़ैसला किया कि जहाँ जहाँ बाबा नानक के अनुयाई गुरसिक्ख बसते हैं वहाँ मसंदों को भेज कर और धन इकट्ठा किया जाये ताकि हरिमंदिर के निर्माण का काम भी शुरू किया जा सके ।

उधर गुरू महाराज ने इस योजना के लिये सहमति प्रदान की, इधर उनके बड़े साहबजादे पृथीचंद ने इस बात का फ़ैसला करना शुरू कर दिया कि अपनी जान पहचान के ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को मसंद बना कर बाहर भेजा जाये । और हर मसंद को वह हिदायत करता कि उगराही की रक़म केवल उसी को भेजी जाये । पृथीचंद का इस तरह के मामलों में ज़रूरत से ज़्यादा दख़ल देना गुरू महाराज को अजीब लगता । लेकिन बेटा था वो भी सबसे बड़ा, वे ख़ामोश रह जाते उनके मुँह का स्वाद फीका फीका हो जाता ।

सुबह शाम जब साध-संगत जुड़ती, कीर्तन होता, गुरू महाराज को एहसास होने लगा कि पृथीचंद बहुत कम दिखाई देता था । महादेव और अर्जुनदेव ज़रूर आते थे । लेकिन महादेव जब मर्ज़ी होती आता, जब मर्ज़ी होती उठकर चला जाता । बस, सब से छोटे साहबज़ादे अर्जुन देव एकाग्रचित्त से कीर्तन में लीन हो जाते । आँखें मूँदे, रसलीन हो जाते । गुरू महाराज को यह अच्छा लगता था ।

उस दिन कीर्तनिये गुरू रामदास जी के इस शब्द का गायन कर रहे थे :

दिनसु चढ़ै फिरि आथवै रैणि सबाई जाइ ॥
आव घटै नर, ना बुझै निति मूसा लाजु टुकाइ ॥
गुड़, मिठा माईआ पसरिआ मनसुखु लगि मारवी पचै पचाइ ।१।
भाई रे मै मीतु सखा प्रभु सोइ ॥
पुतु कलतु मोहु बिखु है अंत बेली कोइ न होइ ॥ रहाउ॥

श्री राग की मधुर धुन में शब्द का आनंद लेती हुई साध-संगत विभोर हो रही थी कि महादेव "पुतु कलतु मोह । बिखु है अंत बेली कोइ न होइ ॥" की तुक सुनते ही उछल कर खड़ा हो गया और मालूम नहीं क्या वाही तबाही बुड़बड़ाता हुआ साध-संगत में से उठ गया ।

शब्द का गायन पूर्ववत जारी रहा :

गुरमति हरि लिव उबरे अलिपतु रहे सरणाइ ॥
उनी चलण सदा निहालिआ हरि खरचु लीआ पति पाइ ॥
गुरमुखि दरगह मंनीआगि हरि आपि लये गलि लाइ ॥२॥
गुरूमुखा नो पंथु परगटा दरि ठाक न कोई पाइ ॥
हरि नामु सलाहनि नामु मनि नामि रहनि लिव लाइ ॥
अनहद घुनी दर वजदे दरि सचै सोभा पाइ ॥३॥
जिनी गुरमुखि नामु सलाहिया तिना सभ को कहै साबासि ॥
तिन की संगति देहि प्रभ मै जाचिक की अरदासि ॥
नानक भाग बडे तिना गुरमुखा जिन अंतरि नामु परगासि ॥

(श्री राग महला - 4)

लेकिन लगता था कि महादेव के भाग्य में इस इलाही वाणी का आनंद उठाना नहीं लिखा था ।

उस दिन बाहर जोड़ों की रखवाली का काम कमाल के ज़िम्मे था । कीर्तन में से उठकर महादेव को आते देखकर कमाल गुरू महाराज के साहबज़ादे को जोड़े पहना रहा था कि उसने सुना, महादेव ओठों में बुड़बड़ा रहा था, "पुतु कलतु मोहु बिखु है, अंत बेली कोइ न होइ ।" कमाल उसके मुँह की तरफ़ ताकने लगा । फिर महादेव ने कहा -"ना कोई किसी का पूत, ना कोई किसे की माँ, ना कोई किसी का प्यिो ।" ऐसे बुड़बड़ाता हुआ वह अपनी राह पर निकल गया ।

अगले दिन सुंदरी ने सुना, कमाल जैसे अपने आप को सुनाकर कह रहा था- "ना कोई किसी का पूत, ना कोई किसी की माँ ।" सुनकर सुंदरी को बेचारे लड़के पर बड़ा तरस आया ।

अमन और सुंदरी दोनों की समझ में नहीं आ रहा था कि मुग़लानी को कैसे मनाया ज़ा सकता था, उस दिन शाम के वक्त तेजी और मुग़लानी उन्हें तलाश करती हुई वहीं आ गई । उनके साथ कोई मेहमान था ।

"हमें रास्ते में मिल गया था," तेजी बता रही थी ।

"नाम क्या है ?" अमन बोला ।

"नाम तो हम लोगों ने पूछा नहीं । पिछले पड़ाव पर ही तो हमें मिला था ।" मुग़लानी ने बेध्यानी में कहा ।

"कबीशर है । तारा रानी के बारे में इसने बहुत सुंदर कविता सुनाई है," तेजी ने

अपने दुपट्टे की छोर से बंधा काग़ज़ का एक टुकड़ा अमन को थमाया।

"पर है कौन ?" सुंदरी पूछ रही थी।

"अमन ने एक नज़र कागज़ पर लिखी बार पर डाली और पुकार उठा, "वाह ! वाह !" फिर उसने पूरी वार पढ़कर सुनाई।

"सुख राजे हरीचंद घर नार सु तारा लोचन राणी।
साध संगति मिल गांवदे रातीं जाये सुणै गुरबाणी।
पिच्छों राजा जागिआ, अध्धीरात निखेंड विहाणी।
राणी दिस्स न आवई मन विच वरत गई हैराणी।
होरतु राती उठ के चलिआ, पिच्छे तरल जवाणी।
रानी पहुंची संगती राजे खड़ी खड़ाऊं निसाणी।
साध संगति अराधिआ जोड़ी जुड़ी खड़ाऊं पुराणी।
राजे डिट्ठा चलित एह एह खड़ाऊं है चोज विड़ाणी।
साध संगति विटहु कुरबाणी।"

"इतना बढ़िया कवि और आपने उसका नाम तक भी नहीं पूछा," अमन को हैरानी हो रही थी।

"सरोवर में स्नान करने गया है, जब लौटेगा तो बाबा तू ख़ुद ही पूछ लेना, नाम में क्या रखा है ?" तेजी कह रही थी।

इतने में कमाल सरोवर में काम ख़त्म करके लौटा। तेजी ने उसे देखकर पूछा, "यह लड़का यहाँ कैसे ?"

"हम लोग जब यहाँ पहुँचे, कमाल कार सेवा कर रहा था।" अमन ने बताया। "तभी तो मैं कहूँ हम लोग कुशलता से कैसे हैं। मन्नत तो पूरी की जा रही थी।"

कमाल को देखकर मुग़लानी का फ़ौरन नाक चढ़ गया।

21

अगले दिन साध संगत से क्या तेजी, क्या मुग़लानी क्या सुंदरी और क्या अमन सब की सांसे हैरानी से रुक गई। वही कवीशर जो तेजी और मुग़लानी के साथ आया था, जब श्री गुरू रामदास जी के चरण स्पर्श करने लगा तो गुरू महाराज ने उसे गले से लगा लिया था। कीर्तन समाप्त हो चुका था। श्रद्धालु महाराज के चरण स्पर्श के लिये अपनी बारी का इन्तज़ार कर रहे थे। उधर उन दोनों की बातें ही ख़त्म नहीं हो रही थीं।

"कवीशर है, कोई ऐरा ग़ैरा आदमी नहीं है। अमन ने ऐसे कहा जैसे उसकी बिरादरी का ही कोई हो।"

और फिर वे देखते ही रह गये। बीबी भानी जी आये और उन्होंने भी उस मेहमान को गले लगा लिया।

तेजी और मुग़लानी एक दूसरे की ओर इस तरह देख रही थीं जैसे उनसे भारी ग़लती हो गई हो। अमन और सुंदरी अपने मनों में शर्मिन्दा थे। उन्होंने इतने महत्त्वपूर्ण

मेहमान की वह ख़ातिर नहीं की थी, जैसी करनी चाहिये थी। लेकिन वह उनके यहाँ सिर्फ़ कुछ घंटे ही तो ठहरा था। नहाया धोया, कपड़े बदले, नाश्ता किया और चला गया। और फिर उनका वहाँ कौन सा ठिकाना बना था, अस्थाई तौर पर किसी के छप्पर में ठहरे हुए थे।

तेजी और मुग़लानी यह सोच सोच कर हैरान होती रहीं कि वह नम्रता का पुतला रास्ते में किस तरह उनकी खातिरें करता रहा था। जब मुग़लानी की नमाज़ का वक्त हुआ तो उस आदमी ने सड़क के किनारे कुएँ का रहट चला कर उसे वुजु करवाया। कितना मीठा बोलता था। अमन और सुंदरी का टिकाना ढूंढने में उनकी मदद की, कुछ घंटे उनके यहाँ टिका था उनका फ़र्ज था कि उसकी ख़ातिरदारी करतीं। लेकिन वे तो ख़ुद किसी की मेहमान थीं। अमन और सुंदरी को और भी शर्मिंदगी हुई जब उन्हें पता चला कि उस कवीशर का नाम भाई गुरूदास था, जिनकी लिखी वारों अक्सर कीर्तनिये गाया करते थे और फिर माता भानी जी का वह दूर का रिश्तेदार भी था।

तो फिर हमारे यहाँ क्यों आया ? सुंदरी अपने से जैसे सवाल पूछ रही थी।

"इसलिये कि एक नया निश्ता गांठा जा सके।" अमन की राय थी।

"मुग़लानी उसे अच्छी लगी थी।" तेजी ने सहज भाव से कहा।

राह में बार बार इससे लोक गीत सुनता रहा था।

"मुझे मालूम होता कि वह इतना बड़ा कवि है तो मैं उसे अपने मालवे के गीत गाकर सुनाती," मुग़लानी को जैसे अफ़सोस हो रहा था।

"कमाल को उसने अपने साथ कर लिया है। कितने सुंदर ढंग से उनका बस्ता उठा कर पीछे खड़ा था," सुंदरी ने कहा।

कमाल का नाम आया तो समझो मजलिस बर्ख़ास्त ! वही बात हुई, एक दम मुग़लानी का चेहरा उतर गया और बाकी लोग एक एक करके अपने काम में लग गये।

अमन और सुंदरी को यह सुनकर और भी शर्मिंदगी हुई कि भाई गुरूदास को गुरू महाराज मसंद बना कर आगरे भेज रहे हैं।

उस शाम कमाल उनके यहा नहीं आया। अगले दिन भी नहीं। सुंदरी को फ़िक्र होने लगी, यह लड़का फिर कहाँ ग़ायब हो गया है ? सिवा मुग़लानी के घर के सभी लोग जब भी बाहर जाते, आसपास कमाल को तलाश करते रहते। फिर तीसरे दिन उन्होंने देखा भाई गुरदास साध-संगत में आये तो उनके पीछे पीछे बस्ता उठाये कमाल था। भाई गुरदास जी गुरू महाराज से विदाई लेने आये थे। साध-संगत जुड़ी हुई थी और वे लोग माथा टेक कर चले गये। घर के लोगों ने सोचा था कि वे कीर्तन का भोग पड़ने के बाद कमाल को समझायेंगे, लेकिन उन्हें निराश होना पड़ा।

सरोवर की चिनाई ख़त्म होने वाली थी। मुग़लानी गोइंदवाल लौटने की सोच रही थी। पीछे शैली और नसीम अकेले थे। मुग़लानी कहती थी, सुमन उन्हें परेशान करता होगा। वे लोग चाहे कार सेवा करने आये थे, लेकिन अमन की इच्छा थी कि वे लोग वहीं

टिक जायें। गुरू महाराज के 'महलों' का निर्माण हो रहा था। जब "महल" तैयार हो जायेंगे तो गुरू महाराज भी वही निवास करेंगे। और फिर शहर में दिन रात लोग बाहर से आ कर बस रहे थे। अमन ने फ़ैसला किया कि कहीं वे पिछड़ न जायें, वह भी अपने परिवार के लिये उस शहर में टिकाणा बना लेगा। सुंदरी उससे सहमत थी। तेजी असमंजस में थी। इस उम्र में नसरीन का साथ छोड़ना उसे कठिन मालूम होता था। और फिर उसकी हमेशा से यही कोशिश होती थी कि अमन और शैली एक साथ रहें। एक दूसरे का साथ उनके लिये ज़रूरी था।

एक बार निश्चय करने के बाद अमन ने ढेर सी ज़मीन खरीद ली। अगर शैली का मन करे तो वह भी बेशक यहाँ आ जाये। हमारे पास जगह की कोई कमी नहीं। अमन खाना खाते वक्त मुग़लानी को समझा रहा था।

"अगर ऐसी बात है तो वे लोग भी बेशक यहाँ आ जायें। खेतों के बदले शैली यहाँ खेत मोल ले सकता है।" मुगलानी की राय थी।

"जो भी फ़ैसला करना हो, जल्दी करना चाहिये। शहर तो हर रोज़ नया रूप धारण कर रहा है।" सुंदरी बोली। "मेरी राय में मुग़लानी को गोइंदवाल जाकर उन्हें समझाना पड़ेगा। या मैं ख़ुद जाती हूं। हमारा कमरा भी तो सामान से भरा पड़ा है। वो सब कुछ ढोना पड़ेगा," तेजी मशविरा दे रही थी।

"सब से पहला काम तो यह है कि कमाल को ढूंढा जाये। कहीं वह कबि जी के साथ ही न चला जाये।" जब मुग़लानी बर्तन समेट कर चौके की तरफ़ गई तो सुंदरी ने धीरे से कहा, सचमुच उसे कमाल से लगाव हो गया था। अक्सर बैठे बैठे उसे उसकी याद आ जाती और उसका मन उदास हो जाता। वह सोचती मुग़लानी बेशक कमाल को मुंह न लगाये, सुंदरी उसे अपना बेटा बना लेगी।

जब अमन कार सेवा के लिये निकला तो उस दिन सुंदरी ने ख़ास तौर पर अमन को ताकीद की कि जैसे भी हो वह कमाल की खोज ख़बर निकाल कर लाये।

"कमाल के लिये ही तो कार सेवा की मन्नत मांगी थी। जब कार सेवा पूरी होगी तो कमाल घर आ जायेगा। अमन कुछ कुछ कट्टर विश्वासी होता जा रहा था और वही बात हुई, उसे तलाश कर करके थका हारा शाम को जब अमन घर लौटा तो क्या देखता है, कि सामने कमाल सुंदरी के साथ चारपाई पर बैठा था। भाई गुरदास आगरा चले गये थे। जाने से पहले कमाल को ढेर सी बाणी दे गये थे, मुग़लानी को देने के लिये। मुग़लानी ने उनकी वारों में ख़ास दिलचस्पी दिखाई थी। गुरू के चक जाते हुए रास्ते में मुग़लानी ने उन्हें अनेक लोकगीत सुनाये थे।"

कई वारें थीं। मुग़लानी बैठी एक एक करके उनका आनन्द ले रही थी। फिर मुग़लानी ने एक बार शुरू की :

अंज़न पुत गवांढनी कूड़ावा माना।

यह तुक जैसे उसके सीने में खुभ गई। वह बार बार इसे पढ़ती जा रही थी। उसे

लगा जैसे किसी ने उसके मुँह पर थप्पड़ जड़ दिया हो। बार बार इस तुक को पढ़ते हुए उसे लगता जैसे नसीम का बेटा सुमन, सुंदरी की बेटी वीरां, सिर्फ़ दिल बहलावा थे। वह अपने आप को धोखा देती रहती थी। और फिर उसने एक वार पढ़ी, जिसमें एक तुक आई, "पुती गंढ पवै संसार।" इसे पढ़ते ही मुग़लानी फ़ौरन उछल कर खड़ी हो गई। कोठरी से निकल कर वह आँगन में गई और कमाल को छाती से लगा कर प्यार करने लगी।

सुंदरी और तेजी दोनों उसे देखकर अचम्भित हो रही थी। इस औरत में किस तरह का परिवर्तन आया था।

उस रात कमाल माँ की छाती से लगकर सोया। जहाँ तक उसे याद था, पहली बार ऐसा हुआ था। उसे लगता जैसे देखते ही देखते उसका क़द बालिश्त भर बढ़ गया हो।

22

मुग़लानी ने कमाल को गले से क्या लगाया, उसे सर पर उठा लिया। जैसे उसकी दीवानी हो। उसे लाड़ करते हुए दुलारते हुए न थकती, न हारती। आठों पहर उसके साथ चिपकी रहती। सुबह अमृत वेला में उसे अपने साथ जगा लेती। अपने साथ सत्संग में ले जाती, अपने साथ कार सेवा के लिये ले जाती। अपने साथ वापिस लाती। कई बार कमाल भी परेशान हो उठता। लेकिन ऐसा लगता था जैसे मुग़लानी अपने भीतर की माँ के सारे दबे घुटे अरमान पूरे कर रही हो। पल भर के लिये उसे आँखों से ओझल न होने देती।

अजीब औरत थी, जिस तरफ़ मुंह करती थी, पूरी तरह उधर ही लुढ़क जाती थी। आजकल दो ही बातें थीं। एक तो कमाल, दूसरे भाई गुरदास की वारें। जो भी वार पढ़ती उसमें से बात बात पर प्रमाण देने लगती।

गुरसिक्खी बारीक है, खंडे धार गली आति भीड़ी।

... ...

हऊ तिस विटहूं वारिया होंदै ताणु जु होइ निताणा।

... ...

गुरमुख मारग चलना छड्ड खब्बे सज्जे।

... ...

गुर पूरे विण पार न पाही।

... ...

होछा शाह न कीचई, फिर पछोताईये।

... ...

साध संगति विटहु कुरबाणै।

मुग़लानी में आये इस नये परिवर्तन को देख देख कर हर कोई ख़ुश भी होता, अचंभित भी। कभी वे दिन थे जब अपनी कोख से जाये को कुछ घड़ियों और पलों का मेहमान देख कर भी उसने नज़र उठाकर उसकी तरफ़ नहीं देखा था। और अब उसके बग़ैर खाने का कौर तक उसके गले के नीचे नहीं उतरता था। फल, मिठाई जो चीज़ भी घर

आती उसका हिस्सा कमाल के लिये अलग कर दिया जाता चाहे वह घर में हो या न हो। सब मुग़लानी के चेहरे की तरफ़ ताकते रह जाते, कभी वह सुमन और वीरां पर जान देती थी, अब उसने सुमन को कभी याद तक नहीं किया था और वीरां तो जैसे उसके मुंह की ओर ताकती रह जाती थी।

तेजी और नसरीन के घर में इस तरह का भेदभाव कभी नहीं किया गया था। लेकिन इस सच्चाई से वो इन्कार नहीं किया जा सकता था कि मुग़लानी उनके यहाँ एक नौकरानी की हैसीयत से आई थी,बेशक आजकल वह कुनबे के एक सदस्य की तरह थी। लेकिन इस बात से भी तो इन्कार नहीं किया जा सकता कि ख़ून ख़ून होता है, पानी पानी होता है

इसका सबसे बढ़िया सबूत मुग़लानी ख़ुद थी। उस रात दिन भर के कढ़े हुए दूध की पूरी मलाई उतार कर वह कमाल की कटोरी में डाल रही थी कि सुंदरी का यह देखकर चेहरा उतर गया। ऐसा तो इस घर में पहले कभी नहीं हुआ था।

तेजी को मुग़लानी की जो हरकत सबसे ज़्यादा अजीब लगती थी वह थी रमज़ान के महीने में कमाल को रोज़े रखने के लिये मजबूर करना। नन्हीं सी जान, उसकी परवरिश ओर तरीक़े से हुई थी। गुरू घर का श्रद्धालु था, अब उसे रोज़ों के लिये मजबूर करना ज़्यादती मालूम होती थी। गुरू घर की श्रद्धालु तो मुग़लानी भी थी, लेकिन नमाज़ और रोज़े के लिये उसकी अक़ीदत जायज़ मानी जा सकती थी, इसलिये कि वह और किस्म की धार्मिक पाबदियों में परवान चढ़ी थी। देर रात बाकी रहने पर भी कमाल को जगा देना। नहाने के लिये कहना, नमाज़ के लिये मजबूर करना, कमाल जो इतने बरसों से इन सब बातों से आज़ाद रहा था, खीज खीज उठता, बुड़बुड़ाने लगता, लेकिन मुग़लानी की ज़िद ज़बरदस्त थी।

''यह औरत किसी दिन अपने मौलवी के पास भी वापिस चली जायेगी,'' एक दिन मुग़लानी की किसी ज़िद को देखकर अमन के मुंह से निकला।

''शादी तो इसने मौलवी के शार्गिद से ही की थी'' सुंदरी याद करने लगी।

''तो फिर क्या है ? बच्चा तो मौलवी का है। जब इसे मौक़ा मिला यह अपनी सौत की जगह छीन लेगी।''

''हाय मैं मरी। तुम मर्द लोग कैसी बातें करते हो ?''

''अगर यह औरत कमाल का इस तरह तिरस्कार कर सकती थी, और फिर दोबारा उसे अपना सकती है तो और जो कुछ करे वही मुमकिन हो सकता है।''

''कमाल ने उसकी कोख से जन्म लिया था, उसकी बात और है।'' सुंदरी मुग़लानी का पक्ष ले रही थी।

''रब्ब करे तू सही और मैं ग़लत होऊँ ,'' अमन बोला। वह इस रसहीन बहस को और जारी नहीं रखना चाहता था।

उस दिन वर्षा हो रही थी। सारी रात पानी बरसता रहा। जाड़ों का मौसम, बर्फ़ानी पुरवैय्या में हाथ पैर ठंडे हुए जा रहे थे। सुबह अमृतवेला में हर रोज़ की तरह मुग़लानी

अपने बेटे कमाल को जगा रही थी ताकि वह हाथ मुंह धोकर सहरी खा ले। बालक गहरी नींद में सोया था। सर्दी भी तो कितनी पड़ रही थी। पहले तो मुग़लानी उसे पुकारती रही फिर उसने जाकर बच्चे को झिझोड़ दिया लेकिन कमाल की तो जैसे नींद ही नहीं खुल रही थी। इधर से करवट बदल कर उधर हो जाता, उधर से करवट बदल कर इधर हो जाता। रोज़ा शुरू होने की साइत भी आ गई थी, तो भी वह सोया पड़ा था। यह देखकर मुग़लानी को सख़्त गुस्सा आ गया उसने बच्चे के चेहरे पर कस के थप्पड़ लगाया। कमाल चीख़ उठा। अमृतवेला में बदमज़गी हो गई, सब के मुँह का स्वाद फीका फीका हो गया।

कमाल रोये जा रहा था, रोये जा रहा था। और रोज़ा शुरू करने का वक्त हो गया था। गुस्से में आकर मुग़लानी ने सारा दिन कमाल को भूखा मारा, बग़ैर सहरी खिलाये पूरा रोज़ा रखवाया।

सुंदरी को बहुत बुरा लग रहा था और फिर दिन में जब वे दोनों घर में अकेली थीं, सुंदरी ने ताना दिया, "अरी बीबी, यूं मासूम बच्चे पर तू रोज़ों का भार क्यों डालती है ?"

"वाह, मुसलमान बाप का बेटा है !" मुग़लानी ने जवाब दिया।

"तो क्या हुआ ? गुरू महाराज का श्रद्धालु भी तो है।"

"इसका मतलब यह थोड़े ही है कि कोई नमाज़-रोज़े भी छोड़ दे।"

"बेचारा सारा दिन कार सेवा करता है। सुबह सत्संग से शामिल होता है।"

"सो तो मैं भी करती हूँ।"

"तेरी मेरी ओर बात है। अगली पीढ़ी को तो हम गुरू महाराज के सीधे रास्ते पर डाल सकते हैं।"

"बाबा नानक ने हिन्दुओं को अच्छे हिंदू और मुसलमानों को अच्छे मुसलमान बनने के लिये कहा था। बाबा जी को तो ख़ुद नमाज़ पढ़ने में कोई एतराज़ नहीं था। वे तो ज़ियारत के लिये मक्का मदीना भी गये थे।"

"हर कोई बाबा नानक तो नहीं बन सकता। हमारे गुरू महाराज ने कभी रोज़े रखने के लिये नहीं कहा।"

"लेकिन उन्होंने इसकी मनाही भी तो कभी नहीं की।"

"मेरे कहने का मतलब है कि दो बेड़ियों में पैर रखने वाला आदमी नदी में गिर कर डूब भी जाता है।" सुंदरी ने चिढ़ कर कहा।

मुग़लानी सुनकर एकदम चुप हो गई। इस तरह की चुप्पी का मतलब था कि वह ऐसी बहस को बेकार समझती थी। या इस चुप्पी का यह अर्थ भी था कि मैं जानती हूँ कि मैं क्या कर रही हूँ, या तुझे इन बातों की समझ नहीं, यह सब तेरी पहुँच से बाहर हैं।

सुंदरी भी इस बहस के बाद सोच में डूब गई। गुरू नानक ने बेशक हिंदुओं को अच्छे हिंदू और मुसलमानों को अच्छे मुसलमान बनने के लिये कहा था लेकिन उन्होंने एक नये पंथ की नींव भी तो रखी थी। और उनके बाद गुरू अंगद देव जी, फिर गुरू अमरदास जी, और अब गुरू रामदास जी महाराज उस पंथ की रूप रेखा उघाड़ रहे थे।

गुरू अँगद देव जी ने गुरमुखी लिपी को प्रचलित किया । गुरसिक्ख गुरबाणी को सरल लिपी में पढ़ने लगे थे । गुरू रामदास जी ने ज़ात पात का भेद भाव मिटा कर एक स्थान पर पंगत में बैठ कर लंगर खाने की प्रथा शुरू की थी । अमीर ग़रीब का भेद मिटाया । और अब गुरू रामदास जी सिक्ख संप्रदाय की राजधानी का निर्माण कर रहे थे । अमृत सरोवर तैयार करवाया जा रहा था । गुरसिक्ख यहाँ आकर अपना जीवन सफल किया करेंगे ।

मुग़लानी के चिंतन में कोई ख़राबी ज़रूर थी । कहीं न कहीं कोई ग़लती थी । सुंदरी अकेली बैठी बहुत देर तक यही सोचती रही । उस दिन सामने आँगन के एक कोने में बैठकर नमाज़ पढ़ रही मुग़लानी को देखकर उसका नमाज़ पढ़ना पहली बार सुंदरी को अजीब सा लगा ।

23

यह सोचकर कि शायद मुग़लानी को यह एहसास नहीं था कि सिक्ख पंथ इस्लाम और जिसे हिंदू मत कहते हैं, इन दोनों से फ़र्क था, सुंदरी ने उठते बैठते मुग़लानी को गुरू साहिबान के जीवन की घटनाओं का ज़िक्र सुनाना शुरू कर दिया, ताकि उसका चिंतन साफ़ हो जाये । ख़ास तौर पर श्री गुरू रामदास जी के बारे में, जिनके लिये मुग़लानी के दिल में अपार श्रद्धा थी । सुंदरी की धारणा थी कि सिक्ख धर्म बेशक कहीं इस्लाम जैसा मालूम होता था और कहीं हिंदू मत जैसा, लेकिन गुरसिक्ख का चरित्र अलग ही क़िस्म का होता है, फ़र्क होता है ।

उस दिन सुंदरी ने मुग़लानी को गोइंदवाल में एक मलंग की करतूत के बारे में बताया जो सड़क के किनारे बैठा गुरू अमरदास जी को कोसता रहता था । गुरू महाराज सुनी अनसुनी कर देते थे । फिर एक दिन एक श्रद्धालु- गुरसिक्ख ने गुरू अमरदास जी को सच्चे मोतियों की एक माला भेंट की । सत्गुरू जी ने वह माला पास बैठे जेठा जी को सौंप दी । माला सचमुच बहुत कीमती थी । घर लौटते वक्त जेठा जी की नज़र रास्ते में बैठे मलंग पर पड़ी । हमेशा की तरह गुरू घर के ख़िलाफ़ बके जा रहा था । जेठा जी के मन में न जाने क्या आई, उन्होंने सुच्चे मोतियों की वह माला मलंग को दे दी । माला पहन कर मलंग चकित रह गया । अब उसने गुरू महाराज की निंदा करनी बंद कर दी । दो दिन, चार दिन बीतने के बाद जब गुरू महाराज ने देखा कि मलंग ने बकना बंद कर दिया है । तो उन्हें बड़ी हैरानी हुई । और फिर उन्हें पता चला कि इसका कारण वह माला थी जो जेठा जी ने उसी दिन मलंग को दे दी थी । गुरू महाराज जेठा जी की उदारता पर ख़ुश हुए लेकिन उन्होंने जेठा जी को समझाया, अगर उन्होंने मलंग का मुंह बंद करने के लिये वह माला उसे दी है तो उन्हें निराश होना पड़ेगा । और यही बात हुई । कुछ दिनों बाद मलंग ने फिर बकना शुरू कर दिया । इस बार पहले से भी ज़्यादा ऊँची आवाज़ में वह कुफ्र तोलने लगा । गुरू महाराज और उनके श्रद्धालु सुन कर अनसुनी कर देते । मलंग दिन रात बकता रहता ।

मुग़लानी की एक और बात आजकल देखने में आ रही थी । उसे जब भी मौका मिलता इस्लाम के गुण गाने लगती । इसका बड़ा कारण उसकी तीव्रता थी कि उसके बेटे

कमाल की इस्लाम के बारे में जानकारी बढ़ाई जाये। लड़का बड़ा हो रहा था। यही वह उम्र थी जिसमें डाले गये संस्कार उम्र भर साथ देते हैं।

उस दिन मुग़लानी इस्लाम में मुसावात के अक़ीदे के बारे में कमाल को बता रही थी। "इस्लाम में कोई छोटी ज़ात का नहीं, कोई ऊँची ज़ात का नहीं। सब समान हैं। एक साथ खड़े होकर सारे मुसलमान नमाज़ पढ़ते हैं, चाहे कोई बादशाह हो, चाहे फ़कीर हो। एक जगह बैठकर खाना खाते हैं। चाहे कोई आलिम हो, चाहे कोई अनपढ़ हो। इस तरह की बराबरी का दावा और कोई मज़हब नहीं कर सकता।"

सुंदरी चौके में बैठी सुन रही थी। उसके तन मन में जैसे आग लग गई। "क्यों कमाल, कल कार सेवा के बाद तूने खाना कहाँ खाया था ? उसने पूछा।"

"लंगर में।" कमाल ने भोलेपन से जवाब दिया।

"कहा बैठ कर लंगर खाया था ?" सुंदरी ने दूसरा सवाल पूछा।

"पंगत में बैठकर जैसे लोग हमेशा बैठा करते हैं।" कमाल ने कहा और सुंदरी बिट बिट आँखों से मुग़लानी को ताकने लगी।

"मेरे कहने का मतलब था कि हिंदुओं में छुआछूत, ऊँच नीच अभी तक ज्यों की त्यों बनी हुई है।" मुग़लानी से कोई जवाब नहीं बन पा रहा था।

"बेशक, लेकिन बाबा नानक के अनुयाईयों में इस तरह का भेदभाव हरगिज नहीं है," सुंदरी ने फ़ैसला सुनाने के लहजे में कहा और कमाल को यह घटना सुनाने लगी। ज़्यादा तो यह मुग़लानी की जानकारी के लिये था :

गोइंदवाल में तेरी मां के आने से पहले हरी राम नाम का एक तपा रहता था। गुरू अमरदास जी ने जब लंगर में बैठकर खाने की प्रथा चलाई तो उसे बहुत गुस्सा चढ़ा। हर किसी से कहता फिरता– "यह कैसे हो सकता है कि हिन्दू और मुसलमान, ब्राह्मण और शूद्र धनी और निर्धन एक ही स्थान पर बैठकर भोजन करें। हमारे सनातन धर्म, हमारी मर्यादा का सत्यानास हो जायेगा।"

हर कोई आता, पंगत में बैठकर प्रसाद खाता, लेकिन हरीराम तपा कभी नहीं आया था। बल्कि लोगों को मना करता रहता। ज्यों ज्यों सुनता कि हर ज़ात, हर मज़हब के लोग एक ही स्थान पर बैठकर गुरू का लंगर ग्रहण करते हैं, वह विष घोलने लगता, गुरू महाराज तपे की मानसिक हालत से अनजान नहीं थे। आम जनता में छूआ छूत और ऊँच नीच के भेदभाव को मिटाने के लिये सत्गुरू ने ऐलान किया, जो भी लंगर का प्रसाद पंगत में बैठकर ग्रहण करेगा, उसे बतौर दक्षिणा के एक रूपया भी मिलेगा। यह सुनकर कई ऐसे लोग, तपे के पीछे लगे हुए थे, उसे छोड़कर लंगर खाने आ गये। लेकिन अभी भी कुछ लोग ऐसे थे, जो मर्यादा से बंधे, कर्मकांड के बंधनों में फंसे अपने पूर्वजों के संस्कारों से छुटकारा नहीं पा रहे थे। गुरू महाराज ने अब कहलवा भेजा कि जो लोग पंगत में बैठकर गुरू का लंगर ग्रहण करेंगे, उन्हें प्रति व्यक्ति पांच रुपये दक्षिणा दी जायेगी। यह सुनते ही शहर के, आसपास के गाँवों के लोग टूट कर लंगर खाने आ गये। सारे भेदभाव ख़त्म हो

गये । लेकिन एक तपा था जो अभी तक नहीं आया था । न ही उसके घर का कोई प्राणी आया था । गुरू महाराज तपे का अहंकार तोड़ना चाहते थे । उसे छूतछात के बंधन से मुक्त करना चाहते थे । अब गुरू अमरदास जी ने ऐलान किया कि जो प्राणी पहली बार पंगत में बैठकर लंगर ग्रहण करेगा उसे एक मोहर बतौर दक्षिणा के दी जायेगी । यह सुनकर तपे का मन विचलित होने लगा । वह ख़ुद तो नहीं आया लेकिन उसने अपने बेटे को लंगर का प्रसाद खाने के लिये भेज दिया । इस डर से कि लोग उसे देखकर उस पर हंसेगे । उसने अपने बेटे को लंगर के पिछवाड़े से भेजा ताकि वह दीवार फलांग कर लंगर में जा बैठे । रब्ब का संयोग, दीवार फलांगते वक्त तपे के बेटे की टांग टूट गई । सारे शहर में तपे की बदनामी हुई । लोग उस पर हंसने लगे । जगह जगह तपे को लांछित होना पड़ता ।

"अच्छा, तो इसी घटना के बारे में गुरू महाराज का वह शब्द है ।" खिसिआई हुई मुग़लानी गुरू रामदास जी के शब्द में से एक अंश सुना रही थी :

पंच लोक सब हसन लगे तपा लोभि लहर है गालिआ ।
भाई, एह तपा न होई बगला है
वह साध जना विचारिआ ।

"लेकिन यह बता बीबी, तुझे इतनी गुरबाणी कैसे याद है ?" सुंदरी ने अचम्भित होकर मुग़लानी से पूछा ।

"मैंने कुरान पाक के सिपारे के सिपारे याद कर रखे हैं । अब मैंने कमाल को भी इसी रास्ते पर डालना है । बिचारा पिछड़ गया है । जब मैं इसकी उम्र की थी, तो आधा कुरान शरीफ़ मुझे याद था ।"

"मैं तो यह भी भूल जाती हूँ कि कल मैंने क्या खाया था ।"

"हमारे तसब्वुफ़ की करामात है ।"

"बीबी यह बता, क्या यह सही है कि गुरू महाराज ने किसी माँ के मरे बेटे को ज़िंदा कर दिया था ?" करामात का ज़िक्र आया तो कमाल सुंदरी से पूछने लगा ।

"बात यूं हुई कि अपने बेटे की बिन आई मौत पर माँ का विलाप सुनकर गुरू महाराज का दिल इतना द्रवित हो उठा कि उन्होंने कह दिया, कि गोइंदवाल में किसी मां का जवान बेटा अब नहीं मरा करेगा और इतने बरस से उस शहर में किसी जवान जहान लड़के की मौत नहीं हुई ।"

यह कैसे हो सकता है ? मुग़लानी बोल पड़ी ।

"जब तू गोइंदवाल जायेगी तो लोगों से पूछ लेना ।" सुंदरी ने कहा ।

24

जैसे उस पर ज़िद सवार हो गई हो । जब भी सुंदरी देखती कि मुग़लानी अपने बेटे कमाल की शिक्षा दीक्षा ख़ास तौर पर इस्लामी ढंग से कर रही है, तो वह कमाल को गुरू घर की मर्यादा गुरू साहिबान के जीवन के बारे में वाकफ़ीयत देने लग जाती । दरअसल इसका बड़ा कारण यह था कि जिन दिनों मुग़लानी कमाल को मुंह नहीं लगाती थी तब

सुंदरी ने एक तरह से कमाल को अपना बेटा बना लिया था। गुरू घर का श्रद्धालु, उसे वही लाड प्यार देती जो अपनी बेटी वीरां को देती थी। बल्कि और भी ज़्यादा, इसलिये कि एक मासूम को बग़ैर उसके क़सूर के परेशान किया जा रहा था। अब कमाल को किसी और रूप में देखना मुश्किल हो रहा था। ख़ास तौर पर वह उसे छोटा मुल्ला बना नहीं देखना चाहती थी, जो उसकी माँ उसे बनाने जा रही थी।

ऐसा लगता था जैसे दोनों पक्षों में होड़ लग गई हो, और दोनों पक्षों को इस रस्साकशी का एहसास था। कमाल की मुसीबत यह थी कि मुग़लानी बेशक उसकी माँ थी, लेकिन जो प्यार उसे सुंदरी की तरफ़ से इतने दिन मिलता रहा था उसका निघ उसने सहेज कर दिल में रखा था। उसके लिये सुंदरी की बात को सुना अनसुना कर सकना मुश्किल हो जाता था। उसकी हर बात को पल्ले से बाँध लेता। उसकी हर बात पर फूल चढ़ाता।

उस दिन मुग़लानी कमाल को कह रही थी, "तू जल्दी जल्दी बड़ा हो जा। बड़े होकर ढेर सा धन कमा ताकि हम हज के लिये मक्का मदीना जा सकें, हज करके मैं अपना जीवन सफल करना चाहती हूँ। ज़िन्दगी में मेरी और कोई ख़्वाहिश नहीं।"

क्योंकि सुंदरी सामने बैठी अपने रेशमी बालों में कंघी कर रही थी कमाल ने कहा, "बीबी भी हमारे साथ चलेगी।"

मुग़लानी ख़ामोश हो गई, 'हाँ' या 'ना' कुछ नहीं बोली।

आँगन में क्षणभर के लिये ख़ामोशी छा गई।

यह देखकर सुंदरी मुग़लानी को सुनाकर कहने लगी, "हमारे गुरू महाराज ने कहा है कि गुरसिक्ख का हज परमात्मा का नाम है, ईश्वर की स्तुति है, वह हर प्राणी में भगवान का स्वरूप देखता है। जो कोई ऐसा कर सकता है, उसका हज घर बैठे ही हो जाता है।"

"तो भी हज की अपनी अहमीयत है।" मुग़लानी बोली।

"वह हज हमारा कभी से हो चुका है। हम सतगुरू के चरणों में आ बैठे हैं।"

"अगर यह बात होती तो बाबा नानक इतना लंबा सफ़र करके क्यों मक्का-मदीना जाते?"

"वे तो वहाँ मक्के को घुमाने के लिये गये थे।" कमाल बोला।

"यह तुझे किसने बताया है?" मुग़लानी ने इस तरह चिढ़ कर पूछा जैसे इसकी ज़िम्मेदार सुंदरी हो।

"उस दिन कार सेवा कर रहे कुछ लोग कह रहे थे।" कमाल ने अपनी माँ की शंका का निवारण किया।

सुंदरी ने कहा, "बेटे बाबे ने मक्का नहीं घुमाया था। उन्होंने मक्के के मुजावरों के सोचने का ढंग सुधारा था। बाबा जी इतना लंबा सफ़र करके मक्का शरीफ़ पहुँचे। थके टूटे थे। उनकी आँख लग गई। ईश्वर का संयोग नींद में उनके चरण मक्का की तरफ़ हो गये। यह देखकर बाबा जी जिस मस्जिद में रूके थे, उसके मुल्ला के मुंह से गुस्से से झाग

निकलने लगी। वह कड़क कर बोला, "यह कौन काफ़िर रब्ब के घर की ओर पाँव करके सो रहा है ? और बाबा जी उसी तरह अधसोये हुए बोले, "बंदे खुदा ! जिस तरफ़ रब्ब नहीं, उधर ही मेरे पाँव कर दे। क्रोध में मुल्ला ने बाबा जी के चरणों को पकड़ा ही था कि उसकी आँखें खुल गई। उसका सर चकराने लगा "जिस तरफ़ रब्ब नहीं, उधर मेरे पाँव रख दे। रब्ब किधर नहीं था ? रब्ब तो चारों तरफ़ था। धरती पर था, आसमान पर था और उसका सर बाबा नानक के चरणों पर गिर पड़ा।" यह तो कोई वली अल्ला है," वह पुकार उठा। सारे हाजी वहां इकट्ठे हो गये। मुल्ला की आँखों से झरझर बहते आँसू बाबा जी के चरणों को धो रहे थे।

"अब मेरी समझ में आया, कमाल कहने लगा मक्का नहीं फिरा, मस्जिद के मौलवी जी का सिर फिरा था।"

मैं तो कहूँगी उन लोगों की आँखें खुल गई थीं। सुंदरी बोली।

मुग़लानी के चेहरे से ऐसा लगा कि वह सिटपिटा कर रह गई हो।

कमाल की आवाज़ बड़ी सुरीली थी। कभी कभी वह अकेले में बैठा गाने लगता। उस दिन सत्ते और बलवंड की एक कृति बड़े आनंद से गा रहा था :

धंनु धंनु रामदास गुरू जिनि सिरिआ तिनै सवारिआ ॥
पूरी होई करामाति आपि सिरजनहारै धारिआ ॥
सिक्खी अतै संगती, पारब्रहमु करि नमस्कारिआ ॥
अटलु, अथाहु, अतोलु तू तेरा अंतु न पारावारिआ ॥
जिनी तूं सेविआ भाऊकरि से तुधु पारि उतारिआ ॥
लबु लोभु कामु क्रोधु मोहु मारि कढे तुधु सपरवारिआ ॥
धंन सु तेरा थानु है सच्चु तेरा पैसकारिआ ॥
नानकु तू लहिणा तू है गुरू अमरु तू बीचारिआ-गुर डिठा ताँ मनु साधारिआ ॥

कमाल को यह वार गाते हुए सुन कर सुंदरी विभोर हो रही थी। उसकी आँखें मुंदी हुई थीं। अंग अंग सरशार था। रोम रोम खिला हुआ था। मुग़लानी कुएँ से पानी भरने गई हुई थी। कमाल ने स्वाद स्वाद में यह तुक फिर गायी- नानकु तू लहणा, तू है गुर अमरु, तू बीचारिआ ॥ और फिर सुंदरी से पूछने लगा, "गुरू रामदास जी तो जेठा जी थे। जेठा जी से गुरू रामदास बनना भी समझ में आ सकता है, लेकिन वे गुरू नानक, गुरू अंगद और गुरू अमरदास कैसे हो गये ?"

इतने में मुग़लानी भी पानी का घड़ा भर कर आ गई थी। अपने बेटे का सवाल सुन कर वह भी सुंदरी के जवाब की इन्तज़ार करने लगी।

"गुरू नानक लोगों के कल्याण के लिये आये थे।" सुंदरी समझा रही थी। जैसे उनसे पहले ईसा मसीह आये, हज़रत मुहम्मद आये थे। काम कठिन था लेकिन इन्सान की ज़िन्दगी तो गिनी गिनाई तयशुदा होती है। बाबा नानक ने देखा, एक ज़िन्दगी में यह सारा काम निपटने वाला नहीं है। इसलिये उन्हें और और जामे धारण करने पड़ रहे हैं। जहां

बाबा नानक ने तार छोड़ी, गुरू अंगद देव जी के स्वरूप में उन्होंने फिर वह तार पकड़ ली । ऐसे ही जब गुरू अंगददेव जी के ज्योति जोत समाने का समय आया, इस ज़िम्मेदारी को गुरू अमरदास जी ने संभाला, लेकिन उसमें ज्योति गुरू नानक की ही थी । इसी तरह गुरू अमरदास जी के बाद गुरू रामदास जी उस काम को पूरा कर रहे हैं । अलग अलग जामों में गुरू नानक के बताये रास्ते पर भाईचारे को आगे चलाया जा रहा है । बदी का, अंध विश्वास का मुक़ाबला किया जा रहा है ।''

''ऐसा क्यों नहीं हो सकता था कि बाबा नानक अपनी उम्र को बढ़ा लेते । अपना काम अपने हाथों से पूरा करते ।'' मुग़लानी ने सवाल किया ।

''भला हज़रत मुहम्मद भी क्या अपना काम अपनी ज़िन्दगी में पूरा कर सके ?'' कमाल बोला ।

''वे पैगंबर थे । अल्ला के भेजे हुए थे । उन्हें इल्हाम होता था । ख़ुदा ख़ुद उन्हें फ़रमान करता था ।'' मुग़लानी आजकल के अपने अंदाज़ में ऐंठी हुई बोली ।

''गुरू नानक ने एक पटवारी के घर में जन्म लिया था, और अपनी ईश्वर भक्ति के सदके, अपनी जनता की ख़िदमत के सदके अवतार बन गये । जैसे माता की भेंटे गाने वाले गुरू के अंग लगे और अंगद बन गये ।'' सुंदरी बता रही थी, ''यह तो इसी तरह है जैसे किसी के लिये उसका पिता उसके लिये ढेर सी दौलत छोड़ जाता है, कोई ख़ुद मेहनत करके ढेर सी जायदाद बना लेता है ।''

मुग़लानी क्षणभर के लिये हारी हारी महसूस करने लगी, फिर जैसे भड़क उठी, ''अब तो ऐसा लगता है यह सारी जायदाद सोढी ख़ानदान में ही रहेगी । भानी बीबी ने अपने पिता से वर प्राप्त कर लिया है ।''

इससे पहले कि सुंदरी कुछ बोल सकती, मुग़लानी उठ कर चौके के काम काज में लग गई ।

25

जैसे किसी ने उसके गाल पर करारा तमाचा मार दिया हो । सारी रात सुंदरी का गाल दर्द से कल्लाता रहा । अगली सुबह घर के काम काज से फ़ुर्सत पाकर सुंदरी वही किस्सा मुग़लानी के साथ लेकर बैठ गई । ''बीबी बंदे को अपने को समेट कर रहना चाहिये,'' सुंदरी मुग़लानी को समझाने लगी । परिवार के बाक़ी लोग कार सेवा के लिये गये हुए थे।

''क्या मतलब ?'' मुग़लानी को जैसे बात की समझ न आई हो ।

''मतलब यह है कि गुरू घर की ग़लतियाँ निकालना गुरसिक्खों को शोभा नहीं देता ।''

''क्यों ? आपने यह शिकायत नहीं सुनी कि गुरू महाराज के बड़े साहबज़ादे पृथीचंद अमृत सरोवर के लिये उगराई रकम में हेरा फेरी करते रहते हैं । इसलिये तो सरोवर की चिनाई में ढील हो रही है ?''

''मैंने कभी इन बातों की तरफ़ ध्यान नहीं दिया ।''

"आपने यह भी नहीं सुना कि गुरू महाराज के दूसरे सुपुत्र महादेव जी बात बात पर अपने गुरू पिता की ग़लतियाँ निकालते रहते हैं ? उस दिन मैंने ख़ुद अपने कानों से उन्हें ऐसा करते हुए सुना था।"

"हो जाये। हमे इससे क्या लेना है ?" सुंदरी जैसे मुग़लानी की किसी शिकायत पर कान ही न धर रही हो।

यह सुनकर मुग़लानी को क्रोध आ गया। वह बुड़बुड़ाई, "यह तो अंध-विश्वास है।"

"मैं इसे गुरू भक्ति कहती हूँ।"

"अंध-विश्वास और क्या होता है?" मुग़लानी जैसे अपने से सवाल कर रही थी।

"अंध-विश्वास होता है फाके करवा कर किसी मासूम जान को भूखा मारना, जैसे रमज़ान के दिनों में तू बेटे के साथ करती रही है।"

"बेटा मेरा है, मैं जो चाहूँ, उसके साथ करूँ।"

"क्या हमारा कुछ नहीं लगता ? उन दिनों में जब तूने बेचारे बच्चे को दुत्कारा हुआ था, उसे किसने गले लगाया था ? मेरे पलंग पर, मेरी छाती से लगकर सोता था, और जब वह आग की लपटों में झुलसा हुआ कुछ पलों और घड़ियों का मेहमान था, हम मियाँ बीबी दोनों वैद, हकीमों के पास भागते रहे। हमने कहाँ कहाँ हाथ नहीं जोड़े ? कैसे कैसे मग़ज़ मारकर मैंने उसे गुरमुक्खी सिखाई है।"

"अपनी रूह की तस्कीन के लिये। अपने धर्म के प्रचार के लिये।"

"मुझे नहीं मालूम था, हमारा धर्म और है और तेरा धर्म और है।"

"मेरा मज़हब इस्लाम है।"

"उस तरह तो मैं भी हिन्दू हूँ। लेकिन हम गुरूसिक्ख हैं। गुरू घर के श्रद्धालु। हमने गुरू बाबे की शरण पकड़ी है।" सुंदरी के हाथ जुड़ गये। उसकी नज़रें दूर, जहाँ कारसेवा हो रही थी उधर फिर गई। "सुना है जब सरोवर बनकर तैयार होगा तो उसके बीचो बीच हरिमंदिर बनाया जायेगा।" वह एक नशे नशे में बोल रही थी।

"मुझे गुरू घर की हर बात अच्छी लगती है। हर बात पर मैं लाख बार क़ुर्बान हो सकती हूँ। लेकिन मुझे बीबी भानी का सोढ़ी ख़ानदान के लिये गुरुआई को वक़्फ़ करवा लेना समझ में नहीं आया।" आख़िर मुग़लानी ने अपने दिल की घुंडी खोली। "क्योंकि तेरे अंदर श्रद्धा की कमी है।"

"भला यह भी कोई बात हुई कि आने वाले गुरू सारे सोढी ही हों।"

"इसमें भी कोई भेद होगा। जिसे बीबी न तू समझती है न मेरी समझ में आता है।"

"इसी को तो अंध-विश्वास कहा जाता है।"

"हो जाये।"

"मैं तो छत पर चढ़ कर पुकार पुकार कर कहूँगी, यह बात ग़लत है ।"

"लेकिन सुना है कि गुरू रामदास जी ने ख़ुद इसे ग़लत बताया है ।"

"तो फिर उन्होंने इसे स्वीकार क्यों किया ?"

"क्योंकि वे वचन दे बैठे थे ।"

"दशरथ वचन दे बैठा था, इसलिए राम को चौदह बरस का बनवास भोगना पड़ा ।"

"हो सकता है, माता भानी की औलाद को भी इसी तरह भोगना पड़े । और बीबी भानी भी यह जानते हुए अपने सर पर कष्ट ले रही है । पराये दुख समेट रही है । गुरू घर में हमारी श्रद्धा कम नहीं होनी चाहिये ।"

"बाबा नानक, गुरू अँगद देव, गुरू अमरदास ने गुरुआई उनको बख़्शी, जिनका यह हक़ बनता था, जिनकी यह कमाई थी । जिन्होंने इसके लिये कड़ी मेहनत की थी ।"

"विश्वास, विश्वास, विश्वास ! बीबी गुरूघर में विश्वास होना चाहिये ।"

"अंध-विश्वास !" मुग़लानी बुड़बड़ाई । फिर और उन्होंने देखा, सामने अमन आँगन में घुस रहा था । दोनों ख़ामोश हो गईं ।

अमन कुछ ज़्यादा ही ख़ामोश था । ख्यालों में डूबा हुआ । चुपचाप सामने नंगी चारपाई पर आकर लेट गया । उसने वीराँ को भी नहीं बुलाया जैसा बाहर से आने पर वह अक्सर किया करता था ।

कुछ देर इन्तज़ार करके सुंदरी ने उससे पूछा, "क्या बात है, आज आप चुप क्यों हैं ?" उसे डर था कि घर से बाहर खड़े होकर अमन ने कहीं उसके और मुग़लानी के बीच में हो रही तक़रार तो नहीं सुन ली ।

"कुछ नहीं ।" उसका चेहरा और भी उतर गया था । कोई बात तो ज़रूर थी । सुंदरी पास की चारपाई पर बैठ गई ।

कुछ देर बाद अमन ख़ुद बख़ुद बोल उठा ।

"सुंदरी तुझे पता है न, हंदाल नामका एक गुरूसिक्ख, गोइंदवाल में गुरू दर्शनों के लिये आकर लंगर की सेवा किया करता था ।"

"हाँ, हमारे जंडियाले का है ।" मुग़लानी बीच में बोल उठी । और फिर एक दम चुप हो गई । वह यह क्या कह बैठी थी । यह भेद तो उसने सभी से छिपा कर रखा था । नसीम से भी ।

लेकिन ना अमन ने, न सुंदरी ने इस तरफ़ ध्यान दिया, अमन ने अपनी बात जारी रखी-

"गोइंदवाल में एक बार गुरू महाराज लंगर की तरफ़ आ निकले । सब उन्हें देखकर खड़े हो गये । हुंदाल उस वक्त आटा गूंध रहा था । परात में पड़े आटे से उसके हाथ सने हुए थे, जब उसे सतगुरू के दर्शन हुए । बाक़ी श्रद्धालु तो हाथ जोड़ कर सर निवा कर गुरू महाराज को आदर दे रहे थे, हुंदाल क्या करता । उसके हाथ तो आटे में सने हुए थे ।

उसे पता नहीं, क्या सूझी, आटे के हाथ पीछे छिपा कर वह सतगुरू के क़दमों में लोट गया जैसे दंडवत कर रहा हो । गुरु महाराज हुंदाल की नम्रता और श्रद्धा को देखकर गद्गद् हो गये उसे उठाकर छाती से लगा लिया और कहा, ''हुंदाल तेरी सेवा परवान हुई । अब तू अपने गाँव लौट सकता है । गाँव में धर्मशाला की स्थापना करके ख़ुद भी नाम जप, औरों को भी नाम जपाया कर । तेरा कल्याण होगा ।'' वही हुंदाल आज कार सेवा के लिये आया है । पहचाना नहीं जा रहा । रेशमी वस्त्र, हीरे मोतियों की माला, उसके आगे पीछे उसके प्रशंसकों की भीड़ का क्या कहना । सर पर छत्र । दूर से उसे आते देख कर मुझे लगा जैसे ख़ुद गुरु महाराज पधार रहे हों । और इधर कई गुरसिक्ख हुंदाल के ही चरण छू रहे थे । उसी को भेंट चढ़ा रहे थे ।

''लेकिन इसमें आप की कौनसी बिल्ली छींक गई है ?'' सुंदरी ने अपने पति को छेड़ा ।

''कोई बात भी हुई ? हुंदाल गुरु बन बैठा है । कल तक हमारे साथ धक्के खाता फिरता था ।''

''अपने अपने मकसूम होते हैं ।'' मुग़लानी बीच में बोल उठी ''जंडियाले में मनियारी की दुकान करता था ।''

''तुझे कैसे पता चला ? क्या तू पीछे से जंडियाले की है ?'' अमन ने पूछा ।

मुग़लानी झेप गई । ''नहीं नहीं, मैंने किसी से सुना था ।'' वह कहने लगी और बात आई गई हो गई ।

26

संग्रांद का दिन था । अमृतवेला के सत्संग में संगत हुम हुमा कर जुड़ी थी । अनेक भक्त भाट अपने अपने श्रद्धा के फूल चढ़ाने के लिये गुरु महाराज के यहाँ हाज़िर हुए थे । आज के दीवान की गहमा गहमी का एक और कारण भी था । श्री गुरु रामदास जी के कुछ संबंधी लाहौर से आये थे और वे सतगुरु को लाहौर चलने के लिये कह रहे थे । और सुनने में आया था कि गुरु महाराज ने उनका यह निमंत्रण स्वीकार भी कर लिया था । यह सोचकर कि गुरु महाराज लाहौर जा कर पता नहीं कब लौटेंगे, आसपास की संगतें ख़ास तौर पर इकट्ठी हो गई थीं ।

जब वे घर से चले तो मुग़लानी कतरा रही थी, उनके साथ नहीं गई । सुंदरी कुछ दिनों से महसूस कर रही थी कि वह कुछ दिनों से खोई खोई और विमुख सी लग रही थी । गुरु घर के प्रति पहले जैसे श्रद्धा उसमें दिखाई नहीं देती थी । कोई न कोई बहाना बना कर साध संगत में जुड़ने से कतराती थी । पहले गुरसिक्खों की जो बातें उसे अच्छी लगती थीं, जिनकी सराहना करते हुए उसका मुंह नहीं थकता था, आजकल दोष निकालती रहती थी । लेकिन उस दिन साध संगत को जुड़े थोड़ी देर ही हुई थी कि सुंदरी ने देखा दुपट्टे की बुक्कल मारे, कमाल को साथ लेकर मुग़लानी दीवान में एक कोने में आ बैठी ।

सामने गुरु महाराज के साथ भाई बुड्ढा जी विराजमान थे । गले में मलमल का

दुपट्टा। आज के कीर्तन में शामिल होने वाले भट्टों में कुछ प्रमुख नाम थे : कलसहार, कीर्ति, सल्ल, नल्ल, गयँद, मथरा, बल्ल, बलवंड और सत्ता। इतने सारे भट्ट एक साथ इकट्ठे हों, ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। बारी बारी से गुरू महाराज की महिमा गा कर पेश कर रहे थे। एक से बढ़कर एक श्रद्धा के फूल चढ़ा रहे थे। सारी संगत विभोर हो रही थी। मुग़लानी अभी पहुँची ही थी कि कल सहार जी ने सुर उठाई। कितनी मीठी कितनी सुरीली आवाज़ में वे गा रहे थे। पकी हुई उम्र थी, लेकिन आवाज़ में एक प्रफ़ुल्लता थी। कलसहार जी एक तरह से भट्टों के उस्ताद माने जाते थे :

सत्गुरि खेमा ताणिआ, जुग जूथ समाणे ॥
अनभऊ नेजा नामु टेक जितु भगत अघाणे ॥
गुरु नानकु अँगदु अमरु भगत हरि संगि समाणे ॥
इहु राज जोग गुर रामदास तुम्हू रसु जाणे ॥

यह सवैया ख़त्म हुआ तो सामने भट्टों की ओर से फ़र्मायश हुई कि कलसहार जी एक और सवैया पेश करें। कलसहार जी ने मंच पर विराजमान गुरु महाराज की ओर एक नज़र देखा और आज्ञा पाकर फिर सुर उठाई :

जनकु सोइ जिनि जाणिआ उनमनि रथु धरिआ ॥
सतु संतोखु समाचरे अभरा सरु भरिआ ॥
अकथ कथा अमरापुरी जिसु देइ सु पावै ॥
एहु जनक राजु गुरु रामदास तुझ ही बाणि आवै ॥

चारों तरफ़ से धन्न धन्न हो रही थी। कलसहार जी गुरु महाराज की तरफ़ हाथ जोड़कर, सर नवा कर अपने स्थान पर आ बैठे। अब कीर्ति जी की बारी थी। गुरु महाराज के सामने झुक कर उन्होंने प्रणाम किया और मंच पर विराजमान हुए। कीर्ति जी के बोलों में एक नम्रता थी जो बस उन्हीं के हिस्से में आई थी। आँखें मूंदकर हाथ जोड़ कर उन्होंने अपना सवैया शुरु किया :

हम अवगुनि भरे एकु गुणु नाही ॥
अंम्रितु छाड़ि बिखै बिखु खाई ॥
माया मोह भरम मै भूले सुत दारा सिऊ प्रीति लगाई ॥
इकु उत्तम पंथु सुनिउ गुर संगति तिह मिलंत जम त्रास मिटाई ॥
इक अरदासि भाट कीरति की गुरु रामदास राखहु सरणाई ॥

सारी संगत जैसे एक आवाज़ होकर पुकार उठी, "गुरु रामदास राखहु सरणाई"। बार बार श्रद्धालु यही गा रहे थे "गुर राम दास राखहु सरणाई।" हाथ जोड़े, जैसे दिल झुकाकर विनत्तीयां कर रहे हों। अचानक सुंदरी की नज़र उस तरफ़ गई जहाँ एक कोने में अपने बेटे कमाल के साथ मुग़लानी बैठी थी। मुग़लानी के हाथ जुड़े हुए थे, आँखों में आँसू, जैसे कोई माफ़ियां मांग रहा हो, मिन्नतें कर रहा हो, "गुर रामदास राखहु सरणाई।"

"गुर रामदास राखहु सरणाई" की धुन अभी भी चारों तरफ़ सुनाई दे रही थी कि

कीर्ति जी हाथ जोड़े, अपनी जगह पर आ बैठे और उनकी जगह साज़िंदों के बीच भट्ट सल्ल जी जाकर विराजमान हुए।

सल्ल भट्ट अधेड़ उम्र के थे, चेहरे पर नूर। उम्र भर की भक्ति, उम्र भर की कमाई के सदके माथे पर एक आभा। गुरु महाराज की महिमा गा गा कर जिह्वा में एक रस। कान पर हाथ रख कर उन्होंने सुर निकाली तो जैसे सारी साध-संगत को मुग्ध कर लिया। उनके सवैये में से श्रद्धा उमड़ उमड़ रही थी :

तूं सतिगुरु चहु जुगी आपि आपे परमेसुरु।
सुरिनर, साधिक सिद्ध सिक्ख सेव्रत धुरह धुरु ।
आदि जुगादि, अनादि, कला धारी त्रिहु लोअह ॥
अगम निगम उधरण जरा जमिहि आरोअह ॥
गुरु अमरदासि थिरु थपिअउ परगामी तारन तरन
अघ अंतक बदै न सल्ह कवि गुर रामदास तेरी सरण।

आख़िरी तुक उच्चारते हुए सल्ल जी सर निवा कर सतुगुरु के चरणों में जैसे गिर पड़े हों। साध संगत में कुछ देर तक चुप्पी छाई रही। गुरु महाराज ने आगे बढ़कर उन्हें आशीर्वाद दिया।

अब बारी भट्ट नल्ल जी की थी। नल्ल जी और उनके बाद मंच पर आकर कलाम पेश करने वाले अधिकांश भट्ट नौजवान थे। एक से बढ़कर एक गुरु घर के श्रद्धालु। नौजवान भट्टों में भट्ट नल्ल जी का दर्जा सबसे ऊँचा माना जाता था। उन्होंने गुरु रामदास जी की स्तुति में ढेर से सवैये कहे थे। एक से एक सुंदर, श्रद्धा से ओत प्रोत। लगता था कि भट्ट नल्ल जी साध संगत में बहुत लोकप्रिय थे। वे अपने स्थान से उठकर साज़िन्दों के बीच आकर विराजमान हुए ही थे कि साध संगत के बीच से फ़र्मायश हुई, "गुर बिन घोर अंधार ......" और फ़र्माइश करने वालों में मुग़लानी सबसे आगे थी। सुंदरी उसके चेहरे की तरफ़ देखती रह गई। इस औरत को आज हो क्या रहा था ? पिछले कुछ दिनों से सुंदरी तो उसके बारे में कुछ और ही राय बनाये बैठी थी। उधर भट्ट नल्ल जी ने साध संगत के आदेश के अनुसार गाना शुरू कर भी दिया था :

गुर बिनु घोरु अंधारु गुरु बिनु समझ न आवै ॥
गुर बिनु सुरति न सिद्धि गुरु बिनु मुक्ति न पावै ॥
गुरु करु सचु वीचारु गुरु करु रे मन मेरे ॥
गुरु करु सबद सपुंन अघन कटहि सभ तेरे ॥
गुरु नयणि बयणि बयाने गुरु गुरु करहु गुरु सति कवि नल्ल कहि ॥
जिनि गुरु न देखिउ नहु कीअउ ते अकयथ संसार महि ॥

भट्ट नल्ल जी का सवैया समाप्त हुआ तो चारों तरफ़ "धन्न निरंकार", "धन्न निरंकार" होने लगी। इतने में फ़र्माइश हुई- "गुरु मुख देखि गुरु सुखु पायौ ....." भट्ट नल्ल जी वापिस अपना स्थान ग्रहण करने के लिये उठ कर खड़े भी हुए थे, लेकिन साध

संगत के आग्रह पर वे फिर बैठ गये और सतगुरु की आज्ञा पाकर उन्होंने गाना शुरु कर दिया:

गुरुमुखु देखि गुरु सुखु पायउ ।
हुती जो पिअस पिऊस पिवन्न की बंछत सिधि कउ बिधि मिलायउ ॥
पूरन भो मन ठउर बसो रस बासन सिउ जु दर्हदिसि धायउ ॥
गोबिन्दवालु गोबिन्दपुरी सम जल्लन तीरि बिपास बनायउ ॥
गयउ दुखु दूरि बर्खन कोसु गुरु मुखु देखि गुरु सुखु पायउ ॥

लगता था भट्ट नल्ल जी बहुत ही लोकप्रिय थे । नौजवान भी और कितने सुंदर भी और गाते भी कितना प्यारा थे । अभी उनका पहला सवैया ख़त्म ही हुआ था कि एक और सवैये की फ़र्मायश हुई– "समरथ गुरु सिरि हत्थु धरउ ॥" भट्ट नल्ल ने गुरु महाराज की ओर फिर देखा और आज्ञा पाकर वे और ऊँचे स्वर में गाने लगे । आँखें मूँद कर जैसे विभोर हो रहे हों । सचमुच जैसे किसी के सर पर उसके इष्ट ने आकर हाथ रख दिया हो । उनकी आँखों में आँसू उमड़ आये थे । एक एक बोल जैसे कृतज्ञता में लिपटा हो :

समरथ गुरु सिरि हथ हरउ ॥
गुरि कीनी कृपा हरिनामु दीअउ जिसु देखि चरँन अधँन हरउ ॥
निसि बासुर ऐक समान धियान सुतु नाम सुने सुतुभान डरउ ॥
भनि दास सु आस जगत्र गुरु की पारसु भेटि परसु करउ ॥
रामदासु गुरु हरि सति कीयउ समरथ गुरु सिरि हत्थु धहरउ ॥

यह तीसरा सवैया था जो नौजवान भट्ट नल्ल जी ने पेश किया था, लेकिन ऐसा लगता था कि साध संगत की प्यास अभी भी नहीं मिटी थी । एक स्वर में साध संगत में से एक और सवैये की फरमाईश हो रही थी । नौजवान भट्ट ने फिर गुरु महाराज की तरफ़ देखा । साध संगत के आग्रह पर जैसे वे भी अपनी मजबूरी प्रगट कर रहे थे । नल्ल जी ने अपना एक सवैया और पेश किया जो साध संगत ने अनेक बार पहले भी सुन रखा था । उन्होंने अभी पहली तुक शुरु ही की थी कि साध संगत उनके साथ गाने में शामिल हो गई । एक अलौकिक समाँ बँध गया था । सारी साध संगत मिलकर गा रही थी :

अब राखहु दास भाट की लाज ॥
जैसी राखी लाज भगत प्रहिलाद की हरनाखस फारे कर आज ॥
फुनि द्रोपती लाज रखी हरि प्रभि जी छीनत बसत्र दीन बहु साज ॥
सोदामा अपदा ते राखिआ गनिका पढ़त पूरे तिह काज ॥
सी सतिगुर सु प्रसँन कलजुग होइ राखहु दास भाट की लाज ॥

इस बार भट्ट नल्ल जी हाथ जोड़े गुरु महाराज की ओर सर निवाये गाते गाते साध संगत में जा कर अपने स्थान पर बैठ गये ।

अब भट्ट गयँद जी की बारी थी । लगता था कि भट्ट गयँद जी भट्ट सल्ल जी की आयु के होगे, लेकिन उनसे कहीं अधिक लोकप्रिय थे । उन्हें मंच की तरफ़ बढ़ते देखकर

कई श्रद्धालु उठकर खड़े हो गये। कुछ लोग खिसक कर आगे बढ़ने की कोशिश करने लगे। गयँद जी पहले गुरु महाराज की गद्दी की तरफ़ पधारे। उनके चरणों का स्पर्श किया, आशीर्वाद लिया और फिर मंच की ओर आये। सवैया शुरु करने से पहले उन्होंने आँखें मूँदीं और गुरु बंदना में धीमें स्वर में उच्चारण किया :

गुरु जहाजु खेवटु गुरु गुर बिनु तरिआ न कोइ ॥
गुर प्रसादि प्रभु पाईऐ गुर बिनु मुकति न होइ ॥

फिर वे गुरु महाराज की ओर मुख़ातिब हुए, सर निवाये, हाथ जोड़ कर उन्हें आदर दे रहे थे। फिर यह सवैय्या गाया, लगता था उस सँग्राँद के लिये उन्होंने उसे विशेष रूप से रचा था :

गुरु नानकु निकटि बसै बनवारी ॥
तिनि लहणा थापि जोति जगि धारी ॥
लहणै पंथु धर्म का कीआ ॥
अमरदास भले कउ दीआ ॥
तिनि स्री रामदासु सोढी थिरु थपउ ॥
हरि का नामु अखै निधि-अपहउ ॥

भट्ट गयँद जी का सवैया ख़त्म हुआ तो साध संगत जैसे इसी इन्तज़ार में थी, उन्होंने मिलकर गयँद जी के एक लोकप्रिय सवैये का सहगान शुरु कर दिया :

वाहि गुरु वाहि गुरु वाहि गुरु वाहि जीउ ॥
कवल नैन मधुर बैन कोटि सैन संग सोभ
कहत मा जसोद जिसहि दही भात खाहि जीउ ॥
देखि रूपु अति अनुपू मोह महा मग भई
किंचनी सबद झनतकार खेलु पाहि जीउ ॥
काल कलम हुकमु हाथि कहहु कउनु मेटि सकै
ईसु बँमू गहान धानु धरत हीऐ चाहि जीउ ।
सति साचु सिरी निवासु आदि पुरुखु सदा तुही
वाहि गुरु वाहि गुरु वाहि गुरु वाहि जीउ ॥

यह सवैया ख़त्म हुआ तो सुंदरी, अमन, तेजी सब हैरान हो गये, मुग़लानी ने भट्ट गयँद जी का कँठस्थ किया हुआ एक सवैया गाना शुरू कर दिया। उसके साथ संगत में बैठी और औरतें भी शामिल हो गई। एक मस्ती में, एक उन्माद में वे गा रही थी :

सेवक कै भरपूर जुगु जुगु वाह गुरु तेरा सभु सदका ॥
निरँकारु प्रभु सदा सलामति कहि न सकै कोऊ तू कदका ॥
ब्रहमा विसनु सिरै तै अनगत तिन कउ मोहु भया मन मद का ॥
चवरासीह लख जोनि उपाई रिजकु दीआ सभहू कऊ तदका ॥
सेवक कै भरपूर जुगु जुगु वाहे गुरु तेरा सभ सदका ।

यह सवैया ख़त्म हुआ तो इस बार अमन ने मर्दों की तरफ़ से अगुआई की और गयंद जी के इस सवैये का गायन आरंभ कर दिया :

वाहु वाहु का बडा तमासा ॥
आपि हसै आपि ही चितवै आपै चंद सूर, परगासा ॥
आपे जलु आपे थलु थँमनु आपे कीआ घटि घटि बासा ॥
आपे नरु आपे फुनि नारी आपे सारि आप ही पासा ॥
गुरमुखि संगति सभै बिचारहु वाहु वाहु का बडा तमासा ॥

मुग़लानी कब हारने वाली थी, मर्दों की तरफ़ से गयँद का सवैया ख़त्म ही हुआ था कि उसने एक और सवैया शुरू कर दिया :

कीआ खेलु बड मेलु तमासा वाहिगुरु तेरी सभ रचना ॥
तू जलि थलि गगनि पयालि, पूरि रहा अंम्रित ते मीठे जा के बचना ॥
मानहि ब्रहमादिक रुद्रादिक काल का कालु निरंजन जचना ॥
गुर प्रसादि पाईऐ परमारथु सत संगति सेती मन खचना ॥
कीआ खेलु बड मेलु तमासा वाह गुरु तेरी सभ रचना ॥

गयँद जी के ये सवैये साध संगत ने खड़े हो कर गाये। इससे पेशतर कि कोई और सवैया शुरू कर दे, गुरु महाराज ने इशारे से साध संगत को बैठ जाने के लिये कहा। अभी भट्ट मथुरा जी और भट्ट बल्ल जी बाक़ी थे और कीर्तन का भोग भी पड़ना था। काफ़ी वक्त बीत गया था। सामने धूप निकल आई थी। कार सेवा भी शुरु होनी थी। भाई बुड्ढा जी, जिनकी अगुआई में कार सेवा शुरु होनी थी, बार बार सामने सरोवर की ओर झाँक रहे थे। मथुरा जी ने एक सवैया पेश किया :

नामु निधानु धिआन अंतरगति तेज पुँज तिहु लोग प्रगासे ॥
देखत दरस भटकि भ्रमु भजत दुख परहरि सुख सहज बिगासे ॥
सेवक सिक्ख सदा अति लुभित अलि समूह जिऊ कुसम सुबासे ॥
बिदहमान गुरि आप थपहउ थिरु साचउ तखतु गुरु रामदासै।

अब भट्ट बल्ल जी की बारी थी। अपना सवैया गाते हुए वे हाथ जोड़कर गुरु महाराज की ओर बढ़ने लगे और फिर उनके चरणों में गिर पड़े। जैसे सकते में आ गये हों।

सतिगुरु नानकि भगति करी इक मनि,
तनु मनु धनु गोबिन्द दीअउ ॥
अंगदि अनँत मूरति निज धारी अगम गहनि रसि रसहउहीअउ ॥
गुरि अमरदासि करतारु कीअउ वसि वाहु वाहु करि धाइयउ ॥
स्री गुरू रामदास जयो जय जग महि तै हरि परम पदु पाइयउ ॥

सवैया ख़त्म हुआ। धूप निकल आई थी। भाई बुड्ढा जी जो गुरु महाराज के पास मौजूद थे,,एक से ज़्यादा बार उचक कर बाहर देख चुके थे। हरिमंदर की कारसेवा चूंकि

उनके सपुर्द थी, उनका ध्यान उखड़ गया था, लेकिन गुरु रामदास जी के मुखारविंद से शब्द सुने बग़ैर सत्संग की समाप्ति कैसे होती । गुरु महाराज ने अवसर के अनुकूल राग गौड़ी बैरागनि में कुछ चौपदे प्रस्तुत किये :

जिउ जननी सुतु जणि पालती राखै नदरि मझारि ॥
अंतरि बाहरि मुखि दे गिरासु खिनु खिनु पोचारि ॥
तिउ सतिगुरु गुरसिख राखता हरि प्रीति पिआर ॥१॥
मेरे राम हम बारिक हरि प्रभ के है इयाणे ॥
धँनु धँनु गुरु गुरु सतिगुरु पाधा
जिनि हरि उपदेशु दे कीए सिआणे ॥रहाऊ॥
जैसी गगनि फिरती ऊडती कपरे बागे वाली ॥
ओ राखै चीतु पीछै बिचि बचरे नित हिरदै सारि समाली ॥
तिउ सतिगुरु सिख प्रीति हरि हरि की गुरसिक्ख रखै जीअ नाली ॥२॥
जैसे काती तीस बतीस है विचि राखै रसना मास रतु केरी ॥
कोई जाणहु मास काती है किछु हाथि है सभ वसगति है हरि केरी ॥
तिऊ संत जना की नर निंदा करहि हर राखै पैज जन केरी ॥३॥
भाई मत कोई जाणहु किसी कै किछु हाथि है सभ करे कराइआ ॥
जरा मरा तापु सिरति सापु सभ हरि कै वसि है
कोई लागि न सकै बिनु हरि का लाइआ ।
अैसा हरिनामु मनि चिति निति धिआवहु जन नानक
जो अंती अउसरि लये छड़ाइआ ॥४॥

इधर गुरु महाराज के आख़िरी चौपदे की समापित हुई उधर भाई बुड्ढा जी गले में पल्ला डाले अरदास के लिये खड़े हो गये । साध संगत भी "तिऊ सतिगुरु गुरसिख राखता हरि प्रीति पिआर" का उच्चारण करते हुए अरदास में शामिल हो गई ।

27

अमृत सरोवर के साथ साथ शहर भी बसना शुरु हो गया था । पहले इसे लोग गुरु का चक कहते थे । अब रामदासपुर के नाम से याद करने लगे । कई प्रमुख सिक्खों ने शहर में अपने घर भी बना लिये थे । इनमें बिशनदास, मानक चंद, मईया दास, कन्हैया लाल, धर्मदास, दुर्गादास, संसार चंद, तीरथ राम आपने समय के मशहूर श्रद्धालु थे । अमन ने भी कारसेवा छोड़कर अपना घर बनाना शुरु कर दिया था । और अब जब उसने सुना कि महाराज लाहौर जाने की सोच रहे हैं, वह भी साथ में तैयार हो गया । सुंदरी की मर्ज़ी नहीं थी । न ही तेजी सहमत थी । उनका कहना था कि जब गुरु महाराज इलाके का कर माफ़ करवाने के लिये अकबर के पास गये थे, अमन उनके साथ चक्कर लगा आया था । अब जब उसका अपना मकान बन रहा था तो सबसे पहले उसे अपने घर की तरफ़ ध्यान देना चाहिये था । लेकिन अमन की श्रद्धा, वह यह बात सुनने के लिये तैयार नहीं था । गोइंदवाल

से शैली और नसरीन ने भी उसे कहलवा भेजा कि उसे गुरु महाराज के साथ दोबारा लाहौर जाने की ज़रूरत नहीं थी। लेकिन अमन ऐसा था कि एक बार जिस बात का मन में फ़ैसला कर लेता था, वह बात पत्थर की लकीर बन जाती थी, वह किसी की नहीं सुन रहा था। यह देख कर सुंदरी और तेजी ख़ामोश हो गई। घर के मर्द की रज़ा में राज़ी।

लेकिन मुग़लानी जो इतने दिन से यह सब देख रही थी, सुन कर भी ख़ामोश रही थी, उस दिन भड़क उठी, "इसे अंधी श्रद्धा कहते हैं।" वह बड़बड़ाने लगी। "हमारे इस्लाम में इसे कुफ्र कहा जाता है।"

"क्या मतलब ?" अमन ने पूछा।

"मतलब साफ़ है, आपका घर बन रहा है। ढेरों रुपया ख़र्च हो रहा है। हम सब लोगों ने कार सेवा छोड़कर अपनी सेवा शुरु कर दी है। और आप हैं जो लाहौर चल पड़े हैं।" मुग़लानी अर्थपूर्ण ढंग से बोली।

"कार सेवा हमने इसलिये छोड़ी है क्योंकि अमृत सरोवर तकरीबन तैयार हो गया है।"

"लेकिन लाहौर में रखा क्या है ?" सुंदरी बीच में बोल पड़ी, "गुरु महाराज तो जा रहे हैं ताकि अपने चूना मंडी वाले घर को धर्मशाला बना कर वहां सत्संग शुरू करवायें।"

"और वे अपनी गली में कुआँ भी खुदवाना चाहते हैं।" मुग़लानी कहने लगी। "सुना है उस मुहल्ले में कोई कुआँ नहीं है। गुरु महाराज की माता जी अपने समय दो मुहल्ले दूर पानी भरने जाया करती थीं।"

"हाँ पूत्तर ! अगर इन लोगों की मर्ज़ी नहीं है तो तू क्यों ज़िद करता है ?" तेजी की राय थी।

अमन अपनी ज़िद पर अड़ा हुआ था। ऐसा तो उसने पहले कभी नहीं किया था। घरवालों को यही डर था कि लाहौर जा कर पता नहीं वह कब लौटे। पीछे घर बनने के काम में कोई विघ्न पड़ सकता था।

उसके लाहौर चलने से कुछ देर पहले फिर यह किस्सा छिड़ पड़ा "लेकिन तुझे गुरु महाराज ने क्या अपने साथ चलने के लिये कहा भी है ?" सुंदरी उससे पूछ रही थी।

उन्होंने तो कोई इशारा नहीं किया था।

"तो फिर तुझे लाहौर का इतना ही चाव आ चढ़ा है ?" तेजी बोली।

"अमन गुरु महाराज ने ख़ास तौर पर तुझे नहीं कहा तो जाने की कोई ज़रुरत नहीं।" सुंदरी ने फ़ैसलाकुन आवाज़ में कहा।

"गुरु महाराज ने पहले भी तो कभी मुझे साथ चलने के लिये नहीं कहा था। संगतें हमेशा अपने गुरु के साथ जाती हैं, ताकि उनकी सेवा में हाज़िर रहे" अमन अपना इरादा बना चुका था।

"आखिर घर की सेवा भी तो कोई चीज़ होती है।" मुग़लानी बोली, जैसे क़ायदे की बात कर रही हो।

"घर की सेवा तो रोज़ ही करते हैं ।" अमन बुड़बुड़ाया ।

"मैं नहीं लाहौर जाने दूंगी ।" सुंदरी की आवाज़ पहले से ऊँची हो गई थी ।

यह देखकर अमन का भी पारा चढ़ गया । सामने अपनी तैयार रखी गठरी उठाई और ज्यों का त्यों घर से चल पड़ा । सब उसके मुँह की तरफ़ ताकते ही रह गये । अमन ने रोटी का एक टुकड़ा भी नहीं खाया था । उसका इस तरह का तेवर तो सुंदरी ने पहले कभी नहीं देखा था । सुंदरी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था ।

फिर लाहौर से जो ख़बरें आने लगीं थी, वे हू-ब-हू वैसी ही थीं जैसा उन्होंने सुन रखा था । गुरु महाराज ने अपने पैत्रिक घर को धर्मशाला बना दिया था । घर के साथ एक कुंआँ भी खुदवा दिया था । नई धर्मशाला में संगतें सुबह शाम जुड़ती थीं । कीर्तन होता था, कथा वार्ता होती थी । हज़ारों लोग गुरु की शरण लग रहे थे । निहाल हो रहे थे ।

"ठीक है, सब कुछ ठीक है, लेकिन अमन अब लौटतें क्यों नहीं । उनके यहाँ न होने से लाख बगोचे पड़े हुए हैं । मुग़लानी ने यह सब इस ढंग से कहा कि सुंदरी उसके मुंह की तरफ़ देखने लगी । मुग़लानी फौरन संभल गई और बोली, "गुरु नानक देव जी ने आसा की वार की कुछ पौड़ियाँ दुनीचंद की हवेली में उच्चारी थीं । कोई कह रहा था उनकी नक़ल करके ला रहे हैं ।" उसके घरवाले में कोई और नुक्स निकाले, सुंदरी के भीतर की औरत को हरग़िज़ यह मंजूर नहीं था ।

और मुग़लानी के भीतर की चतुर औरत यह सब जानती थी, समझती थी ।

एकाध दिन रुक कर जब वे अकेली हुई, मुग़लानी पोपला सा मुंह बना कर कहने लगी, "सुना है, दुनीचंद तो कभी के नहीं रहे, और उनकी बीबी भी कई बरस पहले चली गई थी । अगर वे लोग गुरु घर के इतने पुराने श्रद्धालु हैं तो अपनी हवेली को धर्मशाला क्यों नहीं बना देते ? उस हवेली में तो बाबा नानक ख़ुद जा कर रुके थे ।"

"मुझे तेरी बात की समझ नहीं आई । सुंदरी को लगा कि मुग़लानी कोई पते की बात बता रही हो ।"

पते की बात तो वह कह रही थी ।

मुग़लानी जानबूझ कर कुछ देर तक ख़ामोश रही ।

सुंदरी की उत्सुकता बढ़ रही थी ।

"सुना है दुनीचंद जी की हवेली उनकी बेटी शक्ति के हिस्से में आई है और वह लाहौर आकर बस गई है । बेचारी का मर्द जो नहीं रहा ।" मुग़लानी ने हर बोल को दांत भींच कर कहा ।

सुंदरी ने सुना तो उसके जैसे किसी ने प्राण ही निकाल लिये हों । यह सब उससे कैसे छिपा रहा था ।

"तुझे कौन ये सारी बातें बताता रहा है ? जैसे उसने सटपटा कर मुग़लानी से पूछा ।"

"जब पिछली बार शैली और अमन गुरु महाराज के साथ लाहौर गये थे तो लौटकर

शैली ने हमें बताया था।''

''और मुझे क्यों नहीं किसी ने बताया ? मुझ से किसी ने क्यों बात नहीं की ?'' सुंदरी का गला भर आया था।

''बीबी, हमने सोचा कि अमन ने आपको सब कुछ बता दिया होगा।''

फिर थोड़ी देर बाद मुग़लानी जानबूझ कर बोली, ''लेकिन इसमें छिपाने वाली कौन सी बात है ?''

''है, है, है !'' कहकर सुंदरी तड़पती हुई, छल छल आँसू रोती सामने अपनी कोठरी में जाकर पलंग पर औंधी गिर पड़ी।

उस रात सुंदरी ने न कुछ खाया न कुछ पिया। पलंग पर लेटी मन ही मन विष घोलती रही। सिवाय मुग़लानी के, जिसने यह चिंगारी लगाई थी, किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

एक दिन, दो दिन, घर में ज्यों का त्यों कोढ़ मचा रहा। न खाना पकाने का स्वाद, न खाने पीने में स्वाद। और फिर सुंदरी मुग़लानी को साथ लेकर लाहौर के लिये चल पड़ी। मुग़लानी बोली, ''पहले गोइंदवाल वालों से पूछ तो ले।'' सुंदरी इसकी ज़रुरत नहीं समझती थी, एक बार जब वह फ़ैसला करती थी, तो सारे दरवाज़े बंद हो जाते थे।

चलते वक्त मुग़लानी कमाल को भी अपने साथ चलने के लिये कहने लगी। पीछे घर में तेजी अकेली रहेगी, इस बात की उसे कोई परवाह नहीं थी।

तेजी ने दुनियाँ देखी थी, उसे इस बात का एहसास था, कि कोई बात ज़रुर है कि सुंदरी बुझी बुझी रहने लगी है। लेकिन वह बात क्या हो सकती है, इस बुढ़ापे में उसकी समझ में नहीं आ रही थी।

28

अगली सुबह दोनों लाहौर के लिये चलने वाली थी। पौ फटते ही घोड़ियों की जोड़ी उनके यहाँ पहुंच जायेगी। साथ में घुड़सवार होगा। खुरलियों में भरने के लिये कपड़ा लत्ता सब भर लिया था। सारी शाम तेजी मठरियाँ, शक्करपारे और कई छोटी मोटी चीज़ें थैलियों में भरने के लिये तैयारी-करती रही थी। मुग़लानी कहने लगी, लाहौर पहुंचकर उन्हें धर्मशाला में रूकना चाहिये, सुंदरी की राय थी वे सीधी दुनीचंद के यहां जायेंगी।

फिर वही बात हुई, इधर सुंदरी ने दुनीचंद की हवेली में क़दम डाला, उधर सामने अमन संगमरमर के फ़र्श पर घुटनों के बल घोड़ा बना बैठा था। उसके गले में रस्सी थी और उसके पीछे चाबुक पकड़े शक्ति का बेटा लगाम खींच कर जैसे उसे हाँक रहा था। आँगन में दाँई तरफ़ खड़ी शक्ति खिल खिलाकर हँस रही थी। हँस हँस कर दोहरी हुई जा रही थी। लाल सुर्ख़ चेहरा, गालों पर गालें चढ़ी हुई, मोटी कितनी हो गई थी ! और कैसी सजी धजी थी ! इसे विधवा कौन कहेगा? विधवा औरतों के ऐसे लच्छन थोड़े ही होते हैं?

और अमन, शर्माया सा, ग़रीबड़ा सा, हाथ बाँधे ग़ुलाम की तरह घोड़ा बना हुआ,

शक्ति के बेटे का दिल बहला रहा था । तौबा तौबा ! शक्ति का नटखट बेटा कैसे चाबुक चला रहा था ! अगर कहीं चाबुक अमन को लग जाये तो उसके बदन पर लासें पड़ जायेंगी । तो क्या हुआ ? गुलाम तो मार खाते ही हैं । रेड़ियों के आगे, गाड़ियों के आगे जुड़ कर उन्हें माल ढोना पड़ता है । जब भी मलिकों का जी चाहे उन्हें सवारी देनी होती है ।

सुंदरी दहलीज़ पर ज्यों की त्यों खड़ी रही । बिट बिट आँखों से अपने मर्द को घुटनों के बल औंध लेटा देख रही थी । अब शक्ति का बेटा उसकी पीठ पर चढ़ बैठा था और उसे इस तरह हाँक रहा था जैसे कोई गधे को हाँकता है । लो अब शक्ति भी आकर उसकी पीठ पर बैठ गई थी । इतनी मोटी औरत खा खा कर अफ़री हुई । बेचारा अमन तो उनके नीचे पिचक जायेगा । सुंदरी के बदन का सारा लहू जैसे किसी ने खींच लिया हो । उसने प्राण ख़ुशक हो गये । उसे चक्कर आने लगे । उसकी आँखें ऊपर चढ़ गई । बदन को काटो तो ख़ून की एक बूंद न निकले ।

शायद सुंदरी बेहोश हो गई थी । उसकी पलकें जब खुलीं तो उसने अपने को एक बेहद ख़ुबसूरत अटारी में पाया । ऊँची ऊँची मीनारें, रंग बिरंगे गुंबद, गहमा गहमी, शदियानों की गूंज । ये हार सिंगार की हुई औरतें, ये सजे हुए मर्द, किसकी इंतजार में थे ? मर्दों के हाथ में गैंदे के हार, औरतों के हाथों में चमेली के गजरे । और फिर दूर से आती हुई तूतनियों की गूंज, शहनाइयों के सुर । फिर आवाज़ें नज़दीक आने लगीं । और नजदीक । यह तो कोई बारात थी । अटारी से बाहर खड़े मर्द औरतें किसी बारात की इंतज़ार में थे । कितना शोर था ! जैसे जैसे बारात नज़दीक आ रही थी, कोलाहल कितना बढ़ गया था । ये लोग नाच रहे थे, गा रहे थे, ऊधम मचा रहे थे । सबसे आगे घोड़ी पर सवार दूल्हा था, सेहरे से चेहरा ढका हुआ । कोई सुंदर जवान होगा । तूतनियों और शहनाईयों के संगीत के साथ नाचते गाते बराती क़दम क़दम आगे बढ़ रहे थे । अब वे अटारी के बिल्कुल सामने आ गये थे । दूल्हा घोड़े से नीचे उतर रहा था, हाये री तक़दीर ! यह तो अमन था ! कितना सुंदर दूल्हा बना था ! सर पर कलग़ी माथे पर टिक्का । ऐसा लग रहा था जैसे कोई राजकुमार हो । और अब वह सामने इन्तज़ार कर रहे दुल्हन के रिश्तेदारों की तरफ़ बढ़ा । औरतों के बीचों बीच गहनों से सजी हुई दुल्हन, यह तो शक्तिथी ! वे एक दूसरे को हार डाल रहे थे, जयमाला की रस्म । सुंदरी के जी में आया कि भाग कर जाये और अमन के हाथ में से उसका हार छीन ले । उसने एक बार कोशिश की, फिर दोबारा लेकिन उसके पैर तो मन मन के भारी हो रहे थे । लेकिन परियों जैसी, हीरे मोतियों से झमझम करती दुल्हिन ने अपने दूल्हे के गले में हार डाल दिया था । ये तो पति पत्नी बन गये थे । वह इसे मंजूर था, यह उसे मंजूर थी ।

नहीं नहीं, अमन ज़िद कर रहा था कि वह तो लावाँ लेगा । लावाँ के बग़ैर गुरसिक्ख की शादी की रस्म पूरी नहीं होती । उसके गुरु महाराज ने चार लावें उच्चारी थीं, सूही राग में । गुरु महाराज का फ़रमान था कि हर गुरु का सिक्ख श्रद्धालु इन चार लावों के उच्चारण

* शादी के फेरे (अनुवादक)

से फेरे लेकर गुरुमर्यादा के अनुसार शादीशुदा समझा जायेगा। घर वाले असमंजस में पड़ गये। इसके लिये तो धर्मशाला जाना पड़ेगा। इस बीच कोई विघ्न पड़ सकता था। भाई मूले की बेटी शहर में आई हुई थी।

तो क्या हुआ ? "बेशक, लावाँ के बग़ैर शादी कैसे हो सकती है ?" सुंदरी मन ही मन कह रही थी। "ना इनको कोई लावाँ पढ़ने वाला मिलेगा, न अमन की शादी हो सकेगी।" और फिर उसकी ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की सांस नीचे रह गई, लाहौर में तो उन्हीं दिनों गुरु महाराज विराजमान थे। भला आजकल लाहौर में लावाँ पढ़ने वालों की कौन सी कमी होगी। वह जा कर गुरु महाराज के आगे फ़रियाद करेगी। भाई मूले की जाई के साथ अन्याय होने जा रहा था।

"तू कौन होती है ?" मैं दूनीचंद की बेटी हूँ, जिसके घर बाबा नानक आकर विराजे थे, तेरी माँ ने तो झूठ बोला था कि मूला कहीं बाहर गया है, घट घट के ज्ञाता, गुरु बाबा के साथ कपट किया था।" यह तो शक्ति बोल रही थी जैसे सुंदरी को खाने को पड़ रही हो।

"लावें तो होंगी।" अमन कह रहा था।

"इसकी लावें हुई थीं ?" शक्ति पूछ रही थी। इसका अमन के पास कोई जबाब नहीं था। तत्काल उसे यह भी नहीं सूझा कि कह दे कि सुंदरी की शादी के वक्त भी तो लावों का उच्चारण नहीं हुआ था।

"लावें तो होंगी," अमन अपनी ज़िद पर क़ायम था।

"लावें तो होंगी !" सुंदरी ताली पीट कर आगे बढ़ी और नाचने लगी। "लावें तो होंगी" "लावें तो होंगी," सुंदरी गा रही थी और एक सुर, एक ताल नाच रही थी। यह तो कत्थक नाच था।

"मुसलमानी नाच !" शक्ति ने नाक चढ़ा कर कहा, "ऐसा नाच कंजरियां कोठों पर नाचती हैं।"

"ले भारत नाट्यम नाच कर दिखा देती हूँ। पर लावें तो होंगी।" और सुंदरी भरतनाट्यम् नाचने लगी।

"यह तो वह नाच है जो मंदिरों के रखेलें, देव दासियाँ नाचती हैं।"

"लड़के, लड़की ने एक दूसरे के गले में जयमाला डाल दी है। हमारी तरफ़ से शादी पूरी तौर पर संपन्न हो चुकी है। हम तो चलते हैं।" दूल्हे के साथ आये बाराती और उनके स्वागत के लिये खड़े बाराती यह कह कर अपने अपने रास्ते चल पड़े।

अब पीछे बस सुंदरी और शक्ति ही रह गई थीं। या फिर अमन था। अजीब शशोपंज की हालत में।

शक्ति कहने लगी- "इसे पहले मैंने देखा था। पहले मैंने इसे अपना दिल दिया था।"

सुंदरी कहने लगी- "मेरी माँ ने पहले इसे चुना था।"

"मैंने बाबाजी को साक्षी रखकर इसे अपना सरताज बनाया" शक्ति का दावा था।

"बाबा जी के कमरे में तू इसके साथ अकेली जा घुसी ? तुझे शर्म भी न आई ? तुझे चुल्लूभर पानी में डूब मरना चाहिये," सुंदरी ने उसे ताना दिया।

"और तूने एक ख़ाविंद को भोग कर इससे शादी कर ली।"

"जो अब तू कर रही है।"

"इस बात से तुझे काहे की जलन है ?"

"मेरा घरवाला है।"

"अगर घरवाला होता तो ऐसे तुझे छोड़कर यहाँ आता ही क्यों ?"

"हाय लुट गये ! क्या तू इसीलिये लाहौर आया था ?" सुंदरी अमन को गले से पकड़ कर उसका मुंह, सर नोचने लगी।

"तू कौन होती है मेरे दूल्हे को हाथ लगाने वाली ?"

"तू कौन होती है मेरे दूल्हे को हाथ लगाने वाली ?" आगे बढ़कर शक्ति सुंदरी के गले पड़ गई।

"तुम दोनों पहले लड़कर एक दूसरे के बाल नोच लो, फिर शादी होगी।" अमन बीच में बोल उठा।

"शादी कैसे होगी ? जब तक मैं जीती हूँ, यह शादी नहीं होगी।" सुंदरी एक दम अमन पर झपटी।

"मुझे लावें लेकर ही शादी करनी है।" अमन बोला, "जिसे लावें याद हैं, वही मेरी बीबी होगी।"

सुंदरी ने सुना और फ़ौरन लावों का पाठ करना शुरू कर दिया :

हरि पहिलड़ी लांव परविरती करम द्रिड़ाइआ बलिराम जीउ।
बाणी ब्रहमा वेदु धरमु द्रिड़हु पाप तजाइआ बलिराम जीउ।
धरमु द्रिढ़हु हरि नामु ध्आिवहु सिम्रिति नामु द्रिढ़ाइआ।
सतिगुरु पूरा आराधहु सभि किलविख पाप गवाइआ।
सहज अनंदु होआ बडभागी मनि हरि हरि मीठा लाइआ।
जनु कहै नानकु लाव पहिली आरंभु काजु रचाइआ।

(सूही महला ४)

अमन कब का लाहौर से लौट आया था। अब तो धूप भी निकल आई थी। सुंदरी नींद में जब लावों का पाठ उच्चारण करने लगी, उसकी चारपाई के पास आकर अमन ने उसे झकझोर कर जगाया, "तू कब तक सोई रहेगी ? और तू यह लावें किसकी करवा रही है ?"

सुंदरी आँखें मलती मलती जाग उठी। पसीने पसीने हो रही थी।

"तेरी मंगवाई हुई घोड़ियाँ बाहर इंतज़ार कर रही हैं।" अमन ने उससे छेड़खानी की।

"अब हम लाहौर जाकर क्या करेंगे ?" सुंदरी जैसे शर्मिन्दा हो रही हो।

29

सपना था। लेकिन कितना भयानक। अगले दिन और उसके बाद जब कभी सुंदरी इस सपने के बारे में सोचती तो उसे लगता कि उसका सुहाग ज्यों का त्यों इसलिये क़ायम है क्योंकि उसे श्री गुरु रामदास की उच्चारी लावें कंठस्थ थीं। इससे पहले वह महसूस करती थी कि मुग़लानी को गुरबाणी सुंदरी से कहीं ज़्यादा याद थी। मुग़लानी का क्या कहना, उस भलीमानस को तो क़ुरान शरीफ़ के सिपारों के सिपारे मुँह ज़बानी याद थे।

यह सोच कर सुंदरी ने अब गुरु रामदास जी की बानी की अलग पोथी तैयार कर ली। अमन जैसी न सही, लेकिन उसकी अपनी लिखावट कोई बुरी नहीं थी। और जब उसे फ़ुर्सत मिलती तो वह नित्तनेम के अलावा उसका पाठ करने बैठ जाती।

उनके घर में गुरबाणी की चर्चा अक्सर रहती थी। ख़ास तौर पर इसलिये भी क्योंकि पोथियों की प्रतिलिपियाँ तैयार करना अमन का पेशा था। लेकिन अब जबसे सुंदरी को गुरबाणी के महत्व का ऐहसास हुआ था, उसे इस तरह के वार्तालाप में अधिक निष्ठा और श्रद्धा का आभास होने लगा था।

आजकल सुंदरी उठते-बैठते गुरु रामदास जी का यह शब्द गुनगुनाती रहती थी :

रैणि दिनसू परभाति तूहै ही गावणा।
जीअ जंत सरबत नाउ तेरा धिआवणा।
तू दाता दातारु तेरा दिता खावणा।
भगत जना के संगि पाप गवावणा।
जन नानक सद बलिहारै बलि बलि जावणा।

(राग सोरठ)

उस दिन जब सुंदरी बैठी बैठी इस शबद का उच्चारण कर रही थी, पास खड़ा अमन कहने लगा, "शक्ति को तो गुरु रामदास जी का "सौ पुरखु" नाम का शबद ज़्यादा पसंद है। मैं भी सोचता हूँ........।"

सुंदरी ने सुना तो उसके तन मन में जैसे आग लग गई। एक दम भड़क उठी, "यह क्या आप उस मानस-पिट्टी का जिक्र हरदम ले बैठते हैं ? अगर इतनी ही याद आती है तो कुछ दिन और वहाँ रुक जाते। गुरु महाराज का बहाना बनाकर पहले भी गये थे, अब भी आप गये। उनके साथ ही लौट आना कोई ज़रुरी नहीं था। न ही पीछे कोई आपके लिये उदास बैठा था।"

इतना ज़हर ! दूनीचंद की बेटी के लिये इस तरह के कलमें ! इतने बरस बाद सुंदरी का किसी पराई औरत पर इस तरह तोहमत लगाना, अमन को अजीब लगा और वह उन्हीं क़दमों से बाहर चला गया। वह नहीं चाहता था कि यह मामला और बिगड़ जाये। और फिर घर में उस वक्त उसकी मां तेजी थी, मुग़लानी थी, उसका बेटा कमाल था। बाहर आंगन में वीराँ खेल रही थी।

उसकी बात पर ध्यान दिये बग़ैर अमन का इस तरह बाहर चले जाना सुंदरी को और भी बुरा लगा । उसे लगा जैसे चोर उसकी पकड़ में से निकल गया हो, वह कसमसा कर रह गई ।

औरत ज़ात की ख़ारबाज़ी, अब सुंदरी मौक़े की तलाश में रहती, कभी अमन उसके हाथ आ जाये तो वह अपने दिल का ग़ुबार निकाले । बेशक वह सपना था । लेकिन उसकी ख़राशें सुंदरी के एहसास पर पड़ गई थीं । उसे लगता था जैसे सपने की एक एक घटना उसके साथ बीती हो । जैसे सचमुच उसने वह सारा क्लेश झेला हो ।

उस दिन सत्संग से लौटते वक्त इस बात की चर्चा होने लगी कि गुरु रामदास जी ने लाहौर में अपने चूना मंडी वाले पुश्तैनी घर को धर्मशाला बना कर वहाँ की सिक्ख संगत पर बड़ा परोपकार किया था । अब श्रद्धालु सुबह शाम वहां जुड़ते थे । यही नहीं, लाहौर आने वाले गुरसिक्खों के लिये नई धर्मशाला में विश्राम स्थल भी था । बहुत बड़ा नहीं था, लेकिन इस बात का प्रबंध हो गया था कि यात्रियों को अब बाहर शहर की सरायों में नहीं भटकना पड़ता था ।

तेजी सहज भाव से बोली, "कितना अच्छा हो अगर शक्ति अपनी हवेली को धर्मशाला बना दे । उस घर में तो बाबाजी ने चरण डाले थे ।"

"सिर्फ़ चरण ही नहीं डाले थे, गुरु बाबा ने उस घर में आसा की वार की पंद्रह पौढ़ियों का उच्चारण किया था" अमन कहने लगा ।

"शक्ति के परिवार में उन पंद्रह पौड़ियों की नक़ल तो संभालकर रखी हुई है । मैं जब उनके यहां गई थी, तो मैंने ख़ुद उस हस्तलिपि के दर्शन किये थे ।" तेजी याद कर रही थी ।

ऐसे स्थान पर गुरद्वारा होना चाहिये । मुग़लानी की राय थी ।

"लेकिन दुनीचंद के ख़ानदान के लोग भला क्यों दान करने लगे ?" अमन बोला।

"सुना है वह हवेली शक्ति के हिस्से आई है । उसके नाम की गई है ।" तेजी बता रही थी ।

"वह बेचारी विधवा औरत अपने बच्चे को लेकर कहाँ जाये ?" अमन कहने लगा।

"मैं लाहौर में होती तो ज़बरदस्ती उस घर को छीन कर धर्मशाला बना देती," सुंदरी ने ज़हर उगला, "शहर के सभी सिक्ख मिल कर हम वहाँ जाते और कहते – यह घर हमारे गुरु बाबे की निशानी है, इसे हम धर्मशाला बनायेंगे । सुबह शाम जुड़ कर हम गुरु बाबे को ध्याया करेंगे ।"

"यह भी कोई बात हुई ?" अमन ने नाक भौं सिकोड़ी ।

"आप को बड़ा सेक पहुंचा है !" सुंदरी जैसे उस पर टूट पड़ी ।

अमन ने एक नज़र सुंदरी पर डाली । एक अजीब कड़वाहट थी उसके चेहरे पर । जैसे वह कह रहा हो, यह औरत तो बीमार है । और फिर जानबूझ कर उसने इस किस्से को तूल नहीं दिया । वह नहीं चाहता था कि बदमज़गी बढ़े । ख़ास तौर पर उस वक्त, जब

परिवार के बाक़ी लोग भी साथ बैठे थे ।

लेकिन सुंदरी को जैसे उन्माद का दोरा पड़ा था । पहली बार जब उन्हें एकान्त मिला तो वह घायल शेरनी की तरह अमन पर झपटी, "मैं पूछती हूँ उस कंबख़्त के साथ आपा का क्या रिश्ता है ?"

"तू किसकी बात कर रही है ?" अमन ने जान बूझ कर धीरज के साथ पूछा ।

"और कौन हो सकती है ? या आपने किसी और के साथ भी रिश्ता गांठ लिया है ?"

"सुंदरीये, तूझे क्या हो गया है ? तू पागल तो नहीं हो गई ?" अमन ने परेशान होकर पूछा ।

"अब आप मुझे पागल भी बना दीजिये । मैंने कौन सी बुरी बात कही थी कि दूनीचंद की औलाद को चाहिये कि अपनी हवेली को धर्मशाला बना दे ।"

"तेरी माँ ने क्या अपनी हवेली को धर्मशाला बनाया है ? कल गुरु बाबा तुम लोगों के यहाँ भी तो गये थे । एक बार नहीं, दो बार । उन्होंने तुम लोगों के यहाँ चरण डाले थे ।"

"मेरी माँ बेचारी विधवा है । उसका कोई और ठिकाना नहीं ।"

"शक्ति भी तो विधवा है ।"

"उसके बाप की चार और हवेलियाँ हैं ।"

"उसके और चार भाई भी तो हैं ।"

सुंदरी ख़ामोश हो गई । उससे कोई जवाब न बन पड़ा ।

लेकिन ऐसा लगता था कि जैसे कोई ज़हर उसकी नाड़ियों में जमकर रह गया हो।

अभी ज़्यादा दिन नहीं गुज़रे थे कि सुनने में आया, गुरु महाराज का एक संबंधी सिहारी मल लाहौर से आया था और गुरु महाराज को फिर लाहौर ले जाने के लिये ज़िद कर रहा था । उसके बेटे की शादी थी । गुरु महाराज राज़ी नहीं हो रहे थे । हर चौथे दिन वे लाहौर कैसे जा सकते थे ? पीछे कितना काम था । रामदास पुर शहर का निर्माण दिन प्रतिदनि ज़ोर पकड़ रहा था । बेशक अमृत सरोवर संपूर्ण हो गया था, उसके ठीक बीचों बीच हरिमंदिर साहब की स्थापना भी तो करनी थी ।

"यह वही सिहारीमल है, जिसने गोइंदवाल में जेठा जी को बाउली की सेवा करते देखकर ताना दिया था, कि वह गुरु अमरदास जी का दामाद था या काम करने वाले मज़दूर ?" अमन काम करते हुए सुंदरी को याद करवा रहा था । घर में वे अकेले थे ।

"कुछ भी हो, मैं नहीं सोचती कि गुरु महाराज को बार बार लाहौर जाना चाहिये । सुना है आजकल अकबर बादशाह भी लाहौर आया हुआ है । किसी पहाड़ी राजा का सर कुचलने के लिये । इन मुग़लों को ज़्यादा मुँह नहीं लगाना चाहिये, बेशक वह पातशाह है, गुरु महाराज "सच्चा पातशाह " हैं ।"

"मैं भी सोचता हूँ, गुरु महाराज लाहौर नहीं जायेंगे, अपने तीन बेटों में से किसी को भेज देंगे ।"

"साथ में आपको भी ?" सुंदरी ने व्यंग्य भरे लहजे में कहा।

30

वही बात हुई।

गुरु रामदास जी ने लाहौर जाने से अपनी मजबूरी प्रकट की। लेकिन सिहारीमल के ज़ोर देने पर गुरु महाराज इस पर राज़ी हो गये कि उनके साहबज़ादों में से कोई शादी में शामिल होने के लिये लाहौर चला जायेगा।

लेकिन कौन ?

क़ायदे से तो बड़े बेटे पृथी चंद को जाना चाहिये था। लेकिन जब उसे कहा गया तो वह टाल मटोल करने लगा। एक तो उसे मसंदों की भेजी हुई रक़म का लालच था, दूसरे वह सोच रहा था, कहीं उसे लाहौर भेज कर गुरु महाराज सबसे छोटे साहबज़ादे अर्जुनदेव को कहीं गुरुआई न बख़्श दें। अर्जुन उनके लाडले थे और गुरु महाराज दिन प्रतिदिन हर ज़िम्मेदारी का काम उन्हें ही सौंप रहे थे। फिर वे पढ़े लिखे भी तो कितने थे। फ़ारसी, अरबी, भाषा, संस्कृत चार ज़बानों के वे विद्वान थे। अब तो उन्होंने कविता कहनी भी शुरु कर दी थी। अक्सर बैठे टोटके जोड़ते रहते। स्वभाव के शांत और गंभीर, हमेशा संतों, साधों, सूफ़ियों का साथ रहता।

जब पृथीचंद किसी तरह राज़ी होते न प्रतीत हुए तो गुरु रामदास जी ने अपने मंझले बेटे महादेव जी को बुलवा भेजा। महादेव जी अपने आपको विरक्त बनाये हुए थे। उन्होंने वहीं कहलवा दिया कि उनका सगा संबंधी कोई नहीं। उन्होंने किसी से भी कोई वास्ता नहीं रखा था। वे लाहौर जाने के लिये तैयार नहीं थे। वे तो अपने आप को गुरु महाराज से भी अधिक पहुँचा हुआ बताते थे।

गुरु महाराज के सामने अब कोई चारा नहीं था, उन्होंने अपने सबसे छोटे बेटे अर्जनदेव जी को लाहौर जाने के लिये कहा। सुनते ही, हाथ जोड़ कर अर्जन जी ने अपने गुरुपिता का आदेश सर माथे पर स्वीकार कर लिया और घर जाकर लाहौर चलने की तैयारी में जुट गये।

साहिबज़ादा अर्जनदेव ख़ुश थे। लाहौर में मियाँमीर नाम के एक सूफ़ी फ़कीर थे। जिनकी चारों तरफ़ बड़ी चर्चा थी। पहले सुनने में आया था कि वे सरहंद जा बसे थे, लेकिन वहाँ की हवा पानी उन्हें माफ़िक नहीं आयी थी और वे फिर लाहौर लौट आये थे। कुछ लोग यह भी कहते थे कि सरहंद के लोगों का साँप्रदायिक कट्टरपन उन्हें रास नहीं आया। हमेशा उनके साथ खटपट लगी रहती। आख़िर उन्होंने फ़ैसला किया कि वे लाहौर वापिस आ जायेंगे। लाहौर में उनका अलग तकिया था, अलग उम्मत थी : जो लोग उन्हें औलिया मानकर आदर देते थे। अर्जनदेव सोचते थे, लाहौर में वे मियाँमीर जी के दर्शन भी कर सकेंगे।

और लाहौर में शाह हुसैन फ़कीर शायर भी थे, जिनका बड़ा चर्चा था। सुनने में आया था कि आजकल दुल्ला भट्टी के साथ उनका बड़ा याराना था।

वे चाहते थे कि चलने से पहले जितनी भी बाणी हो सके उसकी प्रतिलिपियाँ अपने साथ लेते जायें। इस काम में जो गुरसिक्ख उनकी मदद कर सकते थे, उनमें अमन भी था।

अमन दिन रात अर्जनदेव जी के लिये गुरबाणी की पोथियाँ तैयार कर रहा था। इतनी ढेर सी सामग्री थी। उसके साथ और भी कई सज्जन लगे हुए थे, लेकिन काम ख़त्म होने में नहीं आ रहा था। फिर गुरु महाराज का हुक्म था कि हर पोथी को बाहर भेजने से पहले भाई बुड्ढा जी को ज़रुर दिखाया जाये। उनके हस्ताक्षर के बग़ैर कोई पोथी बाहर नहीं जा सकती थी।

अर्जनदेव जी को हिदायत दी गई थी कि लाहौर की धर्मशाला में सुबह शाम कीर्तन का प्रबंध होना चाहिये, संगत जुड़नी चाहिये ताकि सिक्ख धर्म के बारे में जो भ्रम मुग़ल सरकार के दिल में डाले जा रहे हैं उन्हें मिटाया जा सके। गुरु महाराज उन सब बातों की शुरुआत ख़ुद कर आये थे।

अमन दिन रात गुरबाणी की पोथियाँ तैयार करने में जी जान से जुटा था। इस लिये भी कि कहीं उसे लाहौर न जाना पड़ जाये। सुंदरी की मर्ज़ी नहीं थी। न जाने उसने क्या क्या अंदेशे पाल रखे थे। घर में बेकार झगड़ा फ़साद खड़ा हो जाये, इसके लिये अमन बिल्कुल तैयार नहीं था।

साथ ही गोइंदवाल से ख़बर आई थी कि नसीम के दिन पूरे हो रहे थे। अगले महीने नसीम के दिन पूरे हो रहे थे। अगले महीने उसका बच्चा होने वाला था। ज़ाहिर है, मुग़लानी तब गोइंदवाल चली जायेगी। उसके साथ कमाल भी चला जायेगा। पीछे सुंदरी और तेजी अकेली होंगी। इन हालात में अमन का बाहर जाना मुनासिब नहीं होगा।

लेकिन सुंदरी को मन ही मन यह अंदेशा खाये जा रहा था कि अमन लाहौर ज़रुर जायेगा और वह पीछे अकेली रह जायेगी। लाहौर में शक्ति थी और वह सुंदरी से उसका मर्द छीन लेगी। लाहौरनों का जादू ग़ज़ब का ! उठते बैठते आजकल यह क़िस्सा मुग़लानी के साथ लेकर बैठ जाती। तीक्ष्ण बुद्धि वाली मुग़लानी सोचने लगी यह तो बीमारी थी। इससे छुटकारा पाना मुशिकल हो जायेगा। इस तरह तो अमन का घर बर्बाद होकर रह जायेगा। ख़ास तौर पर अब जबकि कुछ ही दिनों में वह गोइंदवाल लौट जायेगी।

मुग़लानी ने तेजी से बात की। तेजी मुग़लानी के साथ सहमत थी। पिछले कई दिनों से सुंदरी उखड़ी उखड़ी रहती थी।

"मैं सोचती हूँ सुंदरी के एक और बच्चा हो जाना चाहिये। वीराँ का वीरा होना चाहिये। बेटे माँ बाप का बड़ा सहारा होते हैं।"

"अगर होना होता तो हो चुका होता" तेजी निराश होकर बोली

"अभी कोई वक्त तो नहीं बीत गया।" मुग़लानी की राय थी, अगर नसीम के हो सकता है, तो सुंदरी के क्यों नहीं ?

"सुंदरी मेरी बहू नसीम से उम्र में कहीं बड़ी है।"

"तो क्या हुआ ?"

"यूँ तो बच्चे गुरु महाराज की देन होते हैं, अगर उनकी मेहर हो जाये तो यह कौन सी बड़ी बात है ?"

और तेजी गोइंदवाल में हुई घटना का ज़िक्र करने लगी । एक दिन सत्संग के बाद जब संगत बिखरने लगी तो बाहर से आया एक वृद्ध जोड़ा हाथ जोड़कर गुरु महाराज के हजूर में विनती करने लगा । इनके कोई औलाद नहीं हुई थी और मियाँ बीबी को यह चिंता खाये जा रही थी कि बुढ़ापे में उनकी देखभाल कौन करेगा । और उन्होंने जो हद से ज़्यादा धन जोड़ रखा था, उसका क्या बनेगा ? उनके सगे संबंधी तो सारे उनके बैरी थे । फूटी आँख भी ये लोग उन्हें नहीं सुहाते थे । उनकी गुरु भक्ति का वे मज़ाक उड़ाते थे । सभी शराबी कबाबी थे ।

लेकिन मुश्किल तो यह थी कि अधेड़ उम्र का जोड़ा, इनके औलाद हो तो कैसे हो?

"गुरु महाराज चाहें तो रेख में मेख मार सकते हैं ।" हाथ जोड़ कर वे विनती कर रहे थे ।

यह सुन कर गुरु महाराज मेहर में आ गये । कहने लगे, "रेख में मेख कोई नहीं मार सकता । ईश्वर की रज़ा में राज़ी रहना चाहिये । हाँ, मैं यह कर सकता हूँ, हमारे चार बेटे होने थे । तीन हो चुके हैं । चौथा मैं आपके नाम कर देता हूँ ।"

यह सुनकर अभ्यागत जोड़ा गद्‌गद् हो गया जब वे अपने शहर लौटे तो उनके घर बेटा जन्मा, और गुरु महाराज के यहाँ उसके बाद कोई औलाद नहीं हुई ।

सुनकर मुग़लानी कहने लगी, "कोई बड़ी बात नहीं । नसीम के दूसरे बच्चे की ख़बर सुनकर सुंदरी को भी आस लग जाये ।"

तेजी बोली "मैं कभी कभी यह सोचती हूँ कि क्यों न गुरु महाराज के आगे हाथ जोड़े जायें ?"

"गुरु महाराज एक बेटा पहले ही दान कर चुके हैं, अब तो ..... ।"

"ना बाबा, सुना है कि गुरु अमरदास जी ने अपने जीवन के बाक़ी बरस गुरु रामदास जी को दे दिये थे ताकि उनकी बेटी का सुहाग बना रहे ।"

"इसका मतलब यह हुआ, जब गुरु के सिक्ख अपने गुरु महाराज के आगे मनोकामना की पूर्ति के लिये हाज़िर होते हैं, तो उन्हें अपनी कमाई में से जो भी वे मांग रहे हों, बाँट कर देना होता है । जैसे कोई किसी को हुंडी पकड़ा दे ।"

"तब तो बंदे को उसी का दामन पकड़ना चाहिये जिसकी कमाई बड़ी हो ।"

"तभी तो लोग कहते हैं, धन्न गुरु नानक तेरी बड्डी कमाई ।"

31

लाहौर से जो सिक्ख गुरु महाराज के दर्शनों के लिये आये थे, उन्होंने बताया कि दुल्ला भट्टी को फांसी दे दी गई थी ।

यह सुन कर कई गुरसिक्खों ने सुख की सांस ली, कुछ दूसरे तोहे-तोहे करने

लगे। कुछ का कहना था कि दुल्ला भट्टी डाकू था। लाहौर के आसपास उसने आंतक फैला रखा था। लूट मार, क़त्लोग़ारत उसका पेशा था। कुछ कहते, बेशक दुल्ला अमीरों को लूटता था, लेकिन ज़रुरत मन्दों की मदद भी करता था। कई ग़रीब मां-बाप जो दहेज न दे सकने के कारण अपनी बेटियों की शादियाँ नहीं कर सकते थे, दुल्ला उनकी पैसे से, कपड़े लत्ते के साथ, गहनों के साथ, मदद करता था। और जब सरकार ने उसका सर कुचलने का फ़ैसला किया, तो उसने अपनी एक अलग फ़ौज खड़ी कर ली। लोग इकट्ठे कर लिये और मुग़ल फ़ौज के साथ झड़पें लेनीं शुरु कर दीं। लाहौर के सूबेदार की मजबूरी यह थी कि बादशाह के बेटे शेखू ने दूल्ले की माँ का दूध पिया था। एक तरह से वे भाई थे। कई बार ऐसा भी होता था कि एक स्तन में से शेखू दूध पी रहा होता, और माँ के दूसरे स्तन में से दुल्ला दूध पी रहा होता। और दुल्ले की मां लद्धी कभी एक का माथा चूमती, कभी दूसरे का माथा चूमती। और फिर उनमें से एक राजपाट का भागी बन गया था, दूसरा डाकू बन गया था।

मुग़लानी ने सुना तो कहने लगी "हाय ग़ज़ब, दुल्ला तो हमारे पीर शाह हुसैन का दोस्त था, हम प्याला, हम निवाला।"

"आपका पीर किसी डाकू का साथी है, यह कैसा मेल हुआ ?" अमन हैरान होकर पूछने लगा।

"शाह हुसैन को भी दुल्ले के साथ मुग़लों ने क़ैदी बना कर रख छोड़ा था।"

"अच्छा, तो यह वह शायर है जो काफ़ियाँ गाता है ?"

"वही, जिसने एक बार कहा था :

असां नित कु शेख़ सदाउना
घर बैठियाँ मँगल गाउना
असाँ टुक्कर मँग मँग खाउना
असाँ इहो करम कमाउना

"एक बार जब मैं लाहौर में था, उनके साथ हज़रत दाता गंज बख़्श के यहाँ मेरी मुलाक़ात हुई थी।" अमन याद कर रहा था। "तौबा ! तौबा ! मुझे कहना चाहिये था, उनके दर्शन हुए थे। वे तो बहुत पहुँचे हुए फ़क़ीर थे। दिर भर रोज़ा रखते, हज़रत दाता गंज बख़्श की दरगाह पर हाज़िर होकर तलावत-क़ुरान करते रहते और रातभर रावी के किनारे रेत पर पड़े "अल्ला" "अल्ला" का जाप करते रहते। जब मैंने उनके चरण स्पर्श कीये तो उन्होंने कहा :

इक शाह हुसैन फकीर है
तुसीं न आखो कोई पीर है।

"और फिर उनकी नज़र क़ुरान शरीफ़ की एक आयत पर पड़ी, जिसका मतलब है कि दुनियां में बँदे की हयाती खेल तमाशा ही है, और कुछ नहीं। उन्होंने यह आयत पढ़ी और वे शरह से नाबिर हो गये। किताबें फाड़कर कुएँ में फेंक दीं और छत्तीस बरसों की

रियाज़त को भूल भाल कर नाचने गाने लग पड़े। दारु पीते और रंगरलियाँ मनाते। कहाँ दाता गंज बख़्श के आस्ताने पर पड़े रहते थे, अब रंडियों के कोठों पर गाना सुनते रहते, नाच का लुत्फ़ उठाते।" मुग़लानी की वाकफ़ीयत का कोई जवाब नहीं था।

"कहीं ऐसा तो नहीं कि इस तरह बहुरुपीये का भेस शाह हुसैन ने जान बूझ कर धारण किया हो ताकि सरकारी ज़ुल्म से बचे रहें।" अमन कहने लगा।

"हो सकता है। दरअसल जैसे दुल्ला भट्टी मुग़ल सरकार के सियासी ढांचे को बदलना चाहता था, मसावात* का हामी था, इसी तरह शाह हुसैन अकबर की अख़लाकी क़द्रों की निंदा करने से भी संकोच नहीं करते थे। वे अक़बर के क़ायम किये इबादतख़ाने का मज़ाक उड़ाते थे। मख़दूम उल मुल्क अब्दुल्ला सुलतान पुरी सरकारी दरबार में बड़े मकबूल समझे जाते थे। एक बार जब वे लाहौर आये तो शाह हुसैन ने उनके घोड़े की लगाम पकड़ ली और कहने लगे "सुना है तू मुझे फासक कहता फिरता है, क्योंकि मैं नमाज़-रोज़े की पाबंदी से इन्कारी हो गया हूँ। लेकिन तू ख़ुद कौनसा कम फासक है ? न तूने ज़कात दी है, न हज करने गया है। मख़दूम उनका मुंह देखता रह गया।

चौंके में बैठी सुंदरी यह सारा वार्तालाप सुन रही थी। कहने लगी, "आप लोगों को पता है कि दुल्ले भट्टी की एक प्रेमण का नाम सुंदरी है।"

"क्या मतलब ?" अमन एक दम तड़प उठा।

"हाँ, वही जी गाने वाली के भेस में मुग़ल फौज के बीच गई थी," मुग़लानी बताने लगी, और उनके सारे भेद उसने लौटकर दूल्हे को बता दिये थे और इस तरह दूल्ले ने दुश्मन की पीठ पर वार किया।

यह सुनकर अमन की साँस में साँस आई। "लेकिन हम तो शाह हुसैन की बात कर रहे थे।" वह कहने लगा।

"मेरी राय में शाह हुसैन को सूफ़ी कहना शायद ठीक न हो, बेशक वह बार बार दुनियों को फ़ानी कहता है। उसके रहन सहन में भी सूफ़ियों वाला रंग आ गया है। लेकिन उनकी शायरी से नहीं लगता कि वे वहदत-उल-वजूद की धारणा में विश्वास रखते हैं। हालांकि उनके इन शेअरों में उनके सूफ़ी होने का भ्रम ज़रुर होता है :

अली हुसैन जुलाहा
न उस मूल न लाहा
ना घर बोहरी ना हीं मुसाफ़र
न ओह मोमिन न उह काफ़र
जो आहा सो आहा !

"मुझे तो इसमें बहुत गाढ़ा सूफ़ियाना रंग दिखाई देता है।" अमन कहने लगा।

"बेशक कहीं कहीं इसकी झलक पड़ती है, लेकिन असल में शाह हुसैन अपने वक्त

---

* समानता और भाईचारा (अनुवादक)

की रस्मों रिवाजों, रहन सहन का ज़िक्र करते हैं। उसकी सारहीनता पर करारी चोट करते हैं। खास तौर पर शाही बाठ बाठ से वे बड़े उदासीन मालूम होते हैं। ऐसा लगता है कि अकबर और उसके दरबारियों का धर्म-कर्म में दख़ल देना उन्हें गवारा नहीं। दीने इलाही दरअसल अकबर की नेक नीति का सबूत है, लेकिन अकबर के इर्द गिर्द उसके मुसाहिबों में मख़दूम-डल-मुल्क और शेख़ मुबारक पर एतबार नहीं किया जा सकता।''

तभी तो शाह हुसैन फ़र्माते हैं :

चोर करन नित्त चोरिआँ
अमली अमलाँ दीआं घोड़िआँ
कामी नूं चिंता काम दी
असां तलब सांईं दे नाम दी।
पतशाहावां नूँ पतशाहियाँ
ते शाहवाँ नूँ उगराहियां
मोहराँ नूँ पिंड गिराउन दी
लोकीं करन लड़ाईयाँ
मेरी शरम रखी तू साईआँ
सभ मर मर ख़ाक समाउँदी
इक शाह हुसैन फ़कीर है
तुसीं ना आखो कोई पीर है
असाँ कूड़ी गल न भांवदी।

ये लोग वार्तालाप में इस तरह मस्त थे कि गोइंदवाल से ख़बर आई, नसीम के बेटा हुआ था। लगता था कि बच्चा कुछ दिन पहले ही पैदा हो गया था। मुग़लानी ने सुना तो उसे बड़ी शर्म आई। कितने दिनों से वह जाने की बात सोच रही थी लेकिन रोज़ कोई न कोई बहाना बन जाता। इसलिये उसका जाना रुका रहा। अब वह उठी और गोइंदवाल चलने की तैयारी करने लगी।

तेजी कहने लगी, मुझे भी जाना चाहिये, कई बार मेरा मन उदास होने लगता है। लेकिन पीछे घर बन रहा था जिसकी बड़ी सरदर्द रहती थी।

फिर उन्हें याद आया कि सरोवर की कार सेवा संपूर्ण होने पर गुरु महाराज ने विशेष समागम का ऐलान किया हुआ था। मुग़लानी उसके लिये रुक गई।

32

सरोवर के संपूर्ण होने की ख़ुशी में आयोजित दीवान की तैयारियाँ कई दिन से हो रही थीं। स्थानीय और दूर की संगतें गोल बाँध कर आ रही थीं। कीर्तनिये बुलाये गये थे। भट्ट, कविशर, मसंद और मंजियों पर तैनात किये गये गुरसिक्ख विशेष रुप से आमांत्रित थे।

ज्यों ज्यों सरोवर की चिनाई मुकम्मिल हो रही थी, उसके नाम भी बदलते जा रहे

थे। पहले उसका ज़िक्र ''ताल'' के नाम से किया जाता था। फिर सरोवर, फिर अमृत सरोवर और अब गुरु महाराज और सभी ने उसे अमृतसर कह कर याद करना शुरु कर दिया था। स्थानीय और दूर की संगतों की यह धारणा थी कि इस जगह अमृत की बूंद टपकी थी। त्रेता युग में यह स्थान महान तपस्वियों का टिकाना था। तभी तो अब गुरु महाराज के ज़माने में ''कोआ'' इसके पवित्र जल में डुबकी लगाकर ''हंस'' हो गया था। पट्टी के कारदार की बेटी का पिंगला पति इस जल के कारण भला चंगा हो गया। यह करामात तो कई गुरसिक्खों ने अपनी आँखों से देखी थी।

ताल की खुदाई और चिनाई में कई महीने लग गये थे। बेअंत संगतों ने कारसेवा में हिस्सा लेकर अपने हाथ सुच्चे किये थे। धन भेंट करके अपने काम काज में बरकत के भागी बने थे। ख़ास तौर पर भाई बुड्ढा जी ने तो जिनकी निगरानी में यह महान काम पूरा हुआ था, दिन रात एक कर दिया था।

'आसा दी वार' की चौकी, गुरु रामदास जी की दी हुई शक्ल के मुताबिक, ख़त्म हो रही थी। कीर्तनिये गुरु महाराज के आख़िरी छंद का गायन कर रहे थे :

हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ पैज रखदा आइआ राम राजे ॥
हरणरवसु दुसटु हरि मारिआ प्रहलादु तराइआ ॥
अहंकाहरीया, निंदका पिठि देइ नामदेउ मुखि लाइआ ॥
जन नानक अैसा हरि सेविआ अंति लए छडाइआ ॥

(आसा महला ४ छंत घर ४)

दीवान संगतों से खचाखच भर गया था। गुरु महाराज सामने तख़्त पर विराजमान थे। उनके साथ भाई बुड्ढा जी बैठे थे। भाई गुरदास जी भी आगरे से आये हुए थे। एक के बाद एक कीर्तनिये अमृत बाणी के गायन से संगतों को निहाल कर रहे थे। अक्सर लोगों के नैन जुड़े हुए थे। कई गुरसिक्ख समाधि में थे।

अमन अपने परिवार के साथ एक तरफ़ बैठा था। आगे पीछे तेजी, सुंदरी और मुग़लानी थी। कमाल भाई गुरदास जी को जा मिला था। वीराँवाली अपनी दादी की गोद में बैठी कभी कुछ करती, कभी कुछ।

आसपास से अमन के ढेरों परिचित आये हुए थे। जहाँ उसकी नज़र आती, कोई न कोई परिचित चेहरा उसे नज़र आ जाता। फिर उनकी नज़रें मिलतीं और एक दूसरे की पहचान उनमें झलकने लगती। कभी कोई उसकी तरफ़ देखकर मुस्करा देता। कभी कोई हाथ जोड़ कर उसका अभिवादन करता।

''कौन था ?'' किसी की तरफ देखते हुए अमन के माथे पर पड़ी शिकत्र देख कर सुंदरी ने धीरे से पूछा।

''गंवार आदमी है। इस उम्र में इसे अक़ल आई है। बेहूदा कहीं का।'' अमन के स्वर में जैसे ज़हर घुला था।

''लेकिन है कौन ? आख़िर गुरु महाराज की शरण में आया है।'' सुंदरी अधेड़

उम्र के उस व्यक्ति की तरफ़ देखती जा रही थी। अच्छे खाते पीते घर का लगता था।

"यह मरवाहा है। इसे गुरु महाराज ने फांसी चढ़ने से बचाया था। और इसने वक्त पड़ने पर लाहौर के सूबेदार से शिकायत की कि गुरु रामदास ने इसकी ज़मीन पर बिना मुआवज़ा दिये कब्ज़ा कर लिया था। यह सुनकर लाहौर का नवाब ख़ुद गोइंदवाल आया और उसने इस बात की तसल्ली कर ली कि गुरु महाराज के ख़िलाफ की गई शिकायत में कोई सच्चाई नहीं थी। फिर यह कम्बख़्त आगरे जाकर शंहशाह अकबर के यहाँ हाज़िर हुआ। सारे रास्ते गुरु घर के ख़िलाफ़ वाही तबाही बकता रहा। अकबर के दरबार का यह दस्तूर था कि जिसे कोई शिकायत पेश करनी होती, उसे दरबार के बाहर रखा नीले रंग का चोग़ा पहनना पड़ता था। इसने वह चोगा पहना और फ़रियादी हुआ। अकबर के अहलकारों ने बादशाह को असलीयत की जानकारी दी। मामले की तफ़तीश हो चुकी थी। लाहौर का सूबेदार नवाब ख़्वाजा ख़ान ख़ुद गोइंदवाल गया था। यह सुनकर उस शख़्स को धक्के मारकर दरबार से बाहर निकाला गया और अब इसे कोई मुंह नहीं लगाता, न कोई रिश्तेदार, न कोई दोस्त-अहबाब।"

यह सुनकर पास बैठी मुग़लानी बोली, अच्छा तो गुरु महाराज ने इसी घटना का अपने इस शबद में ज़िक्र किया है :

मल जूई भरिया नीला काला खिधोलडा
तिनि वेमुखि वेमुखै नो पाइआ ॥
पासि न देई कोई बहिण जगत महि
गुर पड़ि सगवी मलु लाइ मनमुखु आइआ ॥
पराई जो निंदा चुग़ली नो वेमुखु करिके भेजिआ
उथै भी मुहु काला दुहा वेमुखा दा कराइआ ॥

मुग़लानी शबद का उच्चारण कर ही रही थी कि सामने गुरु महाराज ने मरवाहे को मुँह लटकाये शरण में आते देखकर आगे बढ़कर गले लगा लिया। अमन अपने सत्गुरु की उदारता देख कर शर्मसार हो गया। वह तो मरवाहे को अभी तक माफ़ नहीं कर सका था।

वीराँवाली अमन की झोली में आ बैठी थी। अमन उसे सामने की पहली पंक्ति में बैठे गुरसिक्खों के नाम गिनवा रहा था। तीरथदास, बिशनदास, मानकचंद, पारु मईया, जपा, कनईया, तुलसा, धर्मदास, डूगरदास, दीपा, जेठा, संसारी, बुला .....।

इतने में भाई भिखारी जी दीवान में शामिल होने के लिये आते दिखाई दिये। काफ़ी वृद्ध हो गये थे। एक बार पेशावर से आये एक गुरसिक्ख ने सत्गुरु के दर्शनों के लिये अपनी इच्छा प्रकट की। गुरु महाराज को फ़ुर्सत नहीं थी, उन्होंने उसे भाई भिखारी को मिलने के लिये कहा। गुरसिक्ख भाई भिखारी जी के पास गया। देखा तो उनके घर में शादी की तैयारियाँ हो रही थी। पूछने पर पता चला कि भाई भिखारी जी के बेटे की शादी थी। और फिर बाहर से आया गुरुसिक्ख यह देखकर हैरान हो गया था कि शादी के साथ एक कमरे

में चंदन की लकड़ियाँ भी जोड़ कर रखी जा रही थी। शादी संपूर्ण हुई। जब बहूरानी घर आई तो दूल्हे को ऐसा शूल उठा कि तुरंत उसके प्राण निकल गये। अब भाई भिखारी जी ने इक्ट्ठी कर रखी चंदन की लकड़ियों से अपने बेटे का दाह संस्कार किया। संस्कार करते वक्त वे उसी तरह शाँत थे जैसे शादी के समय थे। बाहर से आया गुरसिक्ख पूछने लगा, "अगर आपको इस बात का ज्ञान था कि आपका बेटा शादी के फ़ौरन बाद चला जायेगा तो आपने उसकी शादी ही क्यों की ?" भाई भिखारी जी ने फ़रमाया, "वह भी ठीक था; यह भी ठीक है। वह भी एक फ़र्ज़ था। यह भी एक फ़र्ज़ है।" बाहर से आया गुरसिक्ख कहने लगा, "लेकिन आप गुरु महाराज के इतने नज़दीक हैं, आप उनसे बेटे की आयू का वरदान ही माँग लेते।" भिखारी जी ने जवाब दिया, "बेशक, गुरु महाराज समर्थ हैं, लेकिन गुरु महाराज का यह भी तो आदेश है कि ईश्वर की रज़ा में रहना चाहिये।"

"तो फिर उस बेचारी विधवा का क्या होगा ?" मुग़लानी एकदम भड़क उठी। उसके मुंह का स्वाद ऐसा हो गया जैसे किसी ने तुम्में को मुंह से काट लिया हो।

मुग़लानी अपने मुंह में ख़ुद बुड़बुड़ाती जा रही थी कि सामने सोमा शाह आते दिखाई दिये। उन्हें कौन नहीं जानता था ? गुरु महाराज ने उनके बारे में फ़रमाया था :

सोमा शाह
बेपरवाह
गुरु का शाह।

बात यूँ हुई कि सोमा शाह ने सरोवर के नज़दीक अपनी दूकान जमा ली थी। सरोवर की कार सेवा के लिये सैकड़ों गुरसिक्ख आते थे। इस तरह सोमा शाह की दूकान ख़ूब चल निकली। एक दिन सतुगुरु सोमाशाह के पास आये और उसकी आमदनी के बारे में पूछने लगे। सोमा शाह ने गोलक में जो कुछ इकट्ठा कर रखा था, हजूर के आगे पेश कर दिया। सत्गुरु ने वह सारी रक़म सरोवर पर काम करने वाले मज़दूरों में बाँट दी। सोमाशाह ख़ुशी ख़ुशी से यह सब देखता रहा। अगले दिन गुरु महाराज फिर आये और फिर इसी तरह सोमाशाह की पूरे दिन की आमदनी उन्होंने मज़दूरों में बाँट दी। ऐसे ही वे लगातार पांच दिनों तक करते रहे। सोमाशाह ख़ुशी ख़ुशी अपनी आमदन को सफल करता रहा। छठे दिन गुरु महाराज को आते देखकर, सोमाशाह ने जो कुछ कमाया था पहले से ही निकाल कर बाँटना शुरु कर दिया। यह देखकर गुरु महाराज ने उसे असीस दी और उस असीस के सदके सोमाशाह अपने समय का धनी व्यापारी गिना जाने लगा।

अब भाई उदमू जी आ रहे थे। उन दिनों लंगर की सेवा उन्होंने अपने ज़िम्मे ली हुई थी। हर रोज़ जंगल में से लकड़ियाँ काट कर लाते। एक गट्ठर लंगर में पेश करते। दूसरा गट्ठर अपने घर में संभालकर रखते। ईश्वर की क़ुदरत, कुछ दिनों में वर्षा की झड़ी लग गई। अब भाई उदमू जी अपने घर में रखी लकड़ी लंगर के लिये लाने लगे। यह देखकर गुरु महाराज बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा, "भाई उदमू तेरी सेवा क़बूल हुई। बेशक तू कोई वर माँग।"

भाई उदमू सुनकर गद्‌गद् हो गया । लेकिन उसने कोई फ़र्माइश नहीं की । सत्गुरु का दिया सब कुछ था ।

लेकिन भाई उदमू के पास खड़ी उसकी बेटी ने कहा, ''मेरा कोई वीरा नहीं । हमें वीरा चाहिये ।''

गुरु महाराज की कृपा से उदमू के घर बेटा पैदा हुआ ।

''यह करामात नहीं तो और क्या है ?'' मुग़लानी फिर भड़क उठी । नुक़्स निकालने का जैसे मन बनाकर वह घर से निकली थी ।

मुग़लानी भरे दीवान में से उठकर चल पड़ी । उसने भोग पड़ने की भी इन्तज़ार नहीं की । न ही लंगर खाया ।

33

जैसे नागिनी ज़हर घोल रही हो । यह हालत थी मुग़लानी की । सत्संग से निकल कर अपने आप कुछ बुड़बुड़ा रही थी । जो भी मुंह में आता, वाही तबाही बके जा रही थी।

दीवान से निकल कर वह इस तरह कुछ सुलगी सुलगी थी कि उसे अपनी जूती नहीं मिल रही थी । जूती ने कहाँ जाना था, वहीं पड़ी थी, जहाँ वह उतार कर गई थी । फ़र्क सिर्फ़ इतना था कि जोड़ों की सेवा कर रहे श्रद्धालु हर जोड़े को झाड़ पोंछ कर क़तारों में रख देते थे । उसकी जूती भी इसी तरह सँवार कर रखी थी, लेकिन एक बेहूदा आवेश में मुग़लानी को ख़ुद अपनी ही जूती नहीं दिखाई दे रही थी, न ही परिवार में से किसी और के जोड़े ही दिखाई दे रहे थे ।

और मुग़लानी क्रोध में नंगे पैर ही घर चल पड़ी । चाबियाँ उसके पास थीं । जब परिवार ने बाहर जाना होता तो अक्सर घर को ताला मुग़लानी ही लगाती थी और चाबियां हमेशा उसी के पास रहती थीं ।

''चोर, सारे चोर हैं, जूती चोर !'' धूप निकली हुई थी और मुग़लानी को लगता था जैसे अँधेरा छा रहा हो । अँधेरे की दीवारें खड़ी होती जा रही थीं । उसकी आँखों के सामने, उसके दिल के गिर्द, उसके दिमाग़ में ।

जली भुनी घर की ओर जा रही थी, पगडंडी पर उसे ठोकर लगी और वह औंधी जा गिरी । जहाँ गिरी थी, कितनी देर तक ज्यों की त्यों पड़ी रही । आसपास के सभी लोग तो दीवान में सजे थे । कोई नहीं था जो उसकी मदद को पहुँच सकता । बहुत देर वह वैसे की वैसे पड़ी रही, ज़ख़्मी घुटने, हथेलियाँ छिली हुई, चक्कर चक्कर, अँधेरा अँधेरा, मुंह का स्वाद ज़हर की तरह कड़वा और यह ज़हर जैसे उसकी नस नस में फैलता जा रहा था।

घर पहुची तो उससे ताला नहीं खुल रहा था । ताला खुलता भी कैसे ? चाबियों के गुच्छे में से वह ग़लत चाबी निकालकर ताला खोल रही थी । चाबी ताले के छेद में अटक गई थी । न आगे बढ़ने के क़ाबिल, न पीछे जाने के क़ाबिल थी । बहुत देर तक जूझने के बाद चाबी किसी तरह बाहर निकली । उसने देखा कि वह ग़लत चाबी लगा रही थी । मुग़लानी को अपने ऊपर गुस्सा आया और उसने अपने ओंठों को काट लिया ।

और अब कमरे में पहुच कर अपने कपड़े लत्ते संभाल रही थी ताकि जो पहला साथ उसे मिले उसके साथ वह वहाँ से निकल जाये। छोड़ जाये उस सारे परिवेश को।

गोइंदवाल और गुरु के चक में अब क्या फ़र्क था ? वह भी गुरु का शहर, यह भी गुरु का शहर। अमन और शैली में, तेजी और नसरीन में, सुंदरी और नसीम में क्या फ़र्क था ? सारे एक ही मट्टी के बने थे, गुरु घर के सौदाई। गुरु महाराज के दीवाने।

"अंध-विश्वास की दलदल में धंसे हुए।" मुग़लानी ने जैसे अपने आप को सुना कर कहा और मुंह की कड़ुवाहट को थूकने की कोशिश की। लेकिन उसकी जीभ की कड़वाहट ज्यों की त्यों थी। किसी ज़हर की डली जैसे लगातार उसके तालू में घुल रही थी।

"धोखा है, झुठ है, मैं अपने आप को और फ़रेब नहीं दूँगी।" और मुग़लानी ने अपनी गठरी बाँध ली।

"करामात ! गुरु महाराज ने कभी करामात नहीं दिखाई। न अब, न इससे पहले किसी गुरु ने। मैं कहती हूँ बिना करामात के कभी कोई बात बनी है ? लोगों को विश्वास नहीं आता कि कंधारी सीधे रास्ते पर आने वाला था, अगर बाबा नानक उसके कुएँ का पानी न खेच लेते ? बाबे ने कहा आदमी अपने आप में एक बहुत बड़ी करामात है। बेशक, लेकिन करामात के बग़ैर कौनसे गुरु की गद्दी चली है ? हज़रत मुहम्मद को करामातें करनी पड़ी, यसू मसीह ने क़दम क़दम पर करामात दिखाकर अपने ज़माने की जनता को अपने पीछे लगा लिया। करामात एक जादू है। जो सर पर चढ़कर बोलता है।"

"नहीं चला तो इन लोगों का जादू अपने घर वालों पर नहीं चला। बाबा नानक की बड़ाई से कौन इन्कारी है, लेकिन अपने परिवार के लिये, अपने बेटों के लिये तो साधारण शहरी रहे। बेबे नानकी की बात दूसरी थी। बहनों के लिये भाई वली अल्लाह होता है चाहे वह कैसा भी हो। जब बाबा नानक लहणा जी पर मेहरबान नज़र आये तो घर वालों ने उनका वहाँ जीना हराम कर दिया। यह देखकर बाबा नानक ने लहणा जी को मशविरा दिया, "आप कुछ दिनों के लिये अपने घर लौट जाइये" मैं पूछती हूँ बाबा नानक को कितना बुरा लगा होगा। जिस शिष्य को वे गुरुआई देने की सोच रहे थे, उसे वे अपने पास अपने घर में रख तक नहीं सकते थे। उधर बाबा जी से बिछुड़ने के बाद बाबा जी की पलकें आठों पहर गीली रहती थी। ना खाना अच्छा लगता था, न पीना अच्छा लगता था। यह बात दूसरी थी कि बाबा नानक जानी जान थे, कुछ दिनों बाद भाई लहणा जी के क्लेश को महसूस करते हुए उन्होंने अपने महबूब शिष्या को बुला भेजा। और फिर गुरु अंगद देव जी को गुरुआई मिली तो घर में कितना फ़साद उठा होगा ? मरने मारने की नौबत आई होगी। बाबा नानक जी के बेटे गुरु अँगद देव जी के लिये कैसे दुर्वचन बोलते थे। उन्होंने उनका करतारपुर में रहना मुश्किल कर दिया था। तभी तो गुरु अँगद देव जी खडूर जा बसे थे। गुरु नानक जी की सारी विरासत उनके परिवार के लिये छोड़कर गुरु अंगददेव ने किनाराकशी कर ली थी। सारा संप्रदाय गुरु अँगददेव जी को गुरु के रूप में पूजने लगा, लेकिन बाबा नानक जी के बेटों ने उन्हें गुरु नहीं माना। बल्कि श्रीचंद जी ने तो अपना

अलग पंथ चला मारा। कभी ताँत्रिक बन जाते, कभी कुछ, कभी कुछ।

और फिर जब गुरु अंगद देव जी ने अपने बेटों को दरकिनार कर के गुरु अमरदास जी को गुरुआई सौंपी, दासू और दातू ने कितना फ़साद किया था। यह जानते हुए कि उनकी औलाद खडूर में है, गुरु अमरदास जी को सलाह दी कि वे गोइँदवाल जा बसें। कुछ दिनों बाद दातू गोइँदवाल में भी जा धमका। गुरु अमरदास जी की उम्र का भी लिहाज़ न करते हुए, उसने बदतमीज़ी की, गुरु महाराज को लात मार कर गद्दी से नीचे गिरा दिया। गुरु के महलों में जाकर जो उसे मिला लूट लिया और खडूर लौट गया। यह अलग बात है कि राह में डाकुओं ने उसके लूट के माल को उससे छीन लिया। साथ ही उसकी इतनी पिटाई की कि कई महीनों तक वह चारपाई पर पड़ा रहा।

जब गुरु अमरदास जी का जोती जोत समाने का समय नज़दीक आया तो उन्होंने अपने दामाद भाई जेठा जी को गुरुआई के योग्य समझा। गुरु अमरदास जी के छोटे बेटे मोहन ने गुरु रामदास जी को गुरु मानने से सिर्फ़ इंकार ही नहीं किया, अपनी सगी बहन, बीबी भानी और अपने बहनोई के ख़िलाफ दुर्वचन बोलने शुरु कर दिये।

और अब यही कहानी फिर दोहराई जा रहीं है। पृथीचंद और महादेव जो अपने पिता गुरु रामदास के कहने पर लाहौर जाने के लिये तैयार नहीं हुए थे, कल अगर उन्हें नज़रअंदाज करके सबसे छोटे साहिबज़ादे अर्जन जी को गुरुआई बख़्शी गई तो पृथीचंद जो भी करें सोई थोड़ा। महादेव जी की बात और है। वे मस्त मौला स्वभाव के हैं। निर्लिप्त रहते हैं। ना किसी से लेना ना किसी को देना।

लेकिन सवाल यह है कि बीबी भानी का अपने पिता से यह फरमाइश करना कहाँ तक जायज़ है कि गुरुआई सोढी ख़ानदान में रहे। और गुरु अमरदास का फ़ौरन मान जाना, मुझे और भी अजीब लगता है। बेशक उन्होंने कहा कि यह तो गुरुआई के बहते हुए प्रवाह को बांध से रोकने के समान है, लेकिन गुरु महाराज ने नाजायज़ माँग को मान तो लिया। ग़लत बात को मान लेना, गलत आदमी का साथ देना है।

"मैं ग़लत आदमी हां। कमज़ात।" बाहर गली में कोई गला फाड़कर किसी की तरफ झपटने के लिये बढ़ रहा था, क्रोध में फूलती हुई सांस, फुफकार कर आगे बढ़ा और अगले क्षण एक औरत की डरावनी चीख़ सुनाई दी जैसे किसी ने किसी का गला घोट दिया हो। मुग़लानी अंधाधुंध भागती हुई दरवाज़ा खोल कर बाहर देखने लगी। सचमुच एक डरावना वहशीनुमा आदमी ने किसी औरत को औंधा कर दिया था। गली में ज़मीन पर पड़ी एड़िया रगड़ रही थी, मुग़लानी के देखते ही देखते जैसे वह ठंडी पड़ गई हो।

हत्यारा उस औरत को इस तरह ढेरी हुई देख कर भागने ही लगा था कि उसकी नज़र मुग़लानी पर पड़ गई। उसने तो सोचा था कि गली सुनसान है, हर कोई दीवान में हाज़िरी भर रहा है। यह तो वह मौक़े पर रंगे हाथों पकड़ा गया था।

और अगले क्षण इसकी बजाये कि वह भाग कर अपनी जान बचाता, उसने दौड़ कर मुग़लानी को उसी के आँगन में घेर लिया। फटी फटी आँखों से ताकती मुग़लानी, ठंडी

सिल का बुत बनी खड़ी हो गई । उसके शरीर में शक्ति नहीं रही । काटो तो बदन में जैसे लहू की बूंद न हो । चेहरा ज़र्द, बिट बिट आँखों से हत्यारे को देखे जा रही थी ।

और अत्यारे ने आगे बढ़ कर गली के दरबाज़े को भीतर से कुंडी लगा दी ।

34

कुंडी लगाकर जब उसने पीठ फेरी तो मुग़लानी ने उसकी आँखों में देखा, जैसे दहक रहे अँगारे हों और मुग़लानी ने अकस्मात् अपने कान पकड़ लिये– "हे बाबा नानक, मुझे बख़्श दो ।" उसने मन ही मन अरज़ोई की । "हे गुरु बाबा, मुझसे भूल हुई, मुझे माफ़ कर दो । मैं भूलनहार हूँ, सतुगुरु बाबा !"

उसे अपने हाथों से कान पकड़ते देख कर हत्यारे ने ऊँचा क़हकहा लगाया ।

उसके चेहरे की वहशत, छत जितना ऊँचा क़द बुत, उसके अकड़े हुए, ऐंठे हुए पट्ठे और वह क़दम क़दम मुग़लानी की तरफ़ बढ़ रहा था । इस तरह अपनी तरफ़ आता देख कर मुग़लानी ने चीख़ मारी । हृदय विदारक चीख़ जो आसपास के वातावरण को चीरती हुई कहीं की कहीं निकल गई । इतनी ऊँची चीख़ के बाद की ख़ामोशी और भी भयानक, और ख़ौफनाक मालूम हो रही थी कि हत्यारा अब जैसे मुग़लानी के ऐन सर पर आ खड़ा हुआ हो ।

उधर सत्संग में कीर्तन पूर्ववत् जारी था । और संगत इकट्ठी हो रही थी । छोलदारी के गिर्द कनातों को हटा कर और जगह बढ़ाई जा रही थी, ताकि बाद में आने वाले गुरसिक्ख साध-संगत में शामिल हो सके ।

इससे पहले कि कोई और कविशर अपनी कृति पेश करता, गुरु रामदास जी ने साहबज़ादा अर्जन देव जी को इशारा किया । उन्होंने अमृत सरोवर पर कुछ विशेष शबद तैयार किये थे । (गुरु) अर्जन देव जी पिछले कुछ अरसे से कविता कह रहे थे और अपने गुरु पिता जी को दिखाते रहते थे । पहली चीज़ जो उन्होंने पेश की थी वह यह थी :

रामदास सरोवरि नाते । सभि उतरे पाप कमाते ।
निरमल होइ करि इसनाना । गुरि पूरै कीने दाना ।
सभि कुसल खेम प्रभि धारे । सही सलामति सभि थोक उबारे ।
गुर का सबदु वीचारे ।(रहाऊ)।
साध संगि मलु लाथी । पारब्रहमु भइओ साथी ।
नानक नामु धिआइआ । आदि पुरख प्रभु पाइआ ।

(सोरठ महला ५)

शबद के अंत में "नानक नाम" सुन कर गुरु महाराज के निकटवर्ती गुरसिक्खों के कान खड़े हो गये । "इसका मतलब है," "इसका मतलब है," हर कोई सोच में डूब गया । इतने में देखा गया कि साध संगत में एक कोना घेर कर बैठे हुए महादेव जी कुछ बुड़बुड़ाते हुए उठकर खड़े हो गये । उनकी आदत थी जब मर्ज़ी होती सत्संग में आ जाते, जब मर्ज़ी होती उठकर चले जाते । पहले भी कई बार ऐसा कर चुके थे । किसी ने उनकी

इस हरकत की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। लेकिन कुछ गुरसिक्ख इधर से उधर होने लगे। उनका अंदाज़ा ठीक था। पृथीचंद साध-संगत में कहीं भी नहीं थे। इतना भारी दीवान लगा था, लेकिन बड़े साहिबज़ादे को फ़ुर्सत नहीं थी। जहाँ गुरु के महल का निर्माण हो रहा था वे वहाँ खड़े देखे गये थे।

इतने में गुरु महाराज का इशारा पा कर साहबज़ादा अर्जनदेव जी ने एक और कृति पेश की :

विचि करता पुरखु खलोआ। वालु न विंगा होआ।
मजन गुर आँदा रासे॥ जपि हरि हरि किलविख नासे।
संतहु रामदास सरोवर नीका।
जो नावै सो कुलु तरावै ऊधारु होआ है जी का। (रहाऊ)।
जै जैकार जगु गावै॥ मन चिंदिअड़े फल पावै।
सही सलामति नाइ आए। अपणा प्रभु धिआए।
संत सरोवर नावै। सो जनु परमगति पावै।
मरै न आवै जाई। हरि हरि नामु धिआई।
एहु ब्रहम विचारु सु जानै। जिसु दइआलु होइ भगवानै।
बाबा नानक प्रभ सरणाई॥ सभ चिंता गणत मिटाई॥

(सोरठ महला ५)

साध संगत सुनकर जैसे मुग्ध हो रही हो। सब छोटे सहबज़ादे की प्रतिमा, कविशरी और श्रद्धा को देखसुन कर विभोर हो रहे थे कि साहिबज़ादा अर्जनदेव जी ने एक और शबद पढ़ना शुरु किया :

गुरि पूरै कीती पूरी। प्रभु रवि रहिआ भरपूरी।
खेम कुसल भइआ इसनाना। पारब्रहम विटहु कुरबाना।१।
गुर चरन कमल रिद धारे।
बिधनु न लागै तिलका कोई, कारज सगल सवारे।(रहाऊ)।
मिलि साधू दुरमति खोए। पतित पुनीत सभी होए।
रामदास सरोवर नाते। सभ लाथे पाप कमाते॥२॥
गुन गोबिंद नित गाईअै। साध संगि मिलि धियाईअै॥
मन बाँछत फल पाए। गुरु पूरा रिदै धिआए॥३॥
गुर गोपाल आनँदा। जपि जपि जीवै परमानँदा॥
जन नानकु नाम धिआइआ। प्रभ अपना बिरदु रखाइआ॥

(सोरठ महला ५)

अब भाई गुरदास जी की बारी थी।

उधर हत्यारे ने मुग़लानी को अपनी बाँहों में भरकर सामने कमरे की चारपाई पर ले जा कर पटक दिया था। जैसे कोई गठरी हो। मुग़लानी बेहोशी का बहाना करके बिना हिले

डुले पड़ी थी। लेकिन यह क्या ? हत्यारे के हाथ उसकी छातियों की तरफ़ बढ़ रहे थे। यह देखकर मुग़लानी ने आवेश में धक्का देकर उसे नीचे पटक दिया और ख़ुद उठकर बैठ गई। शेरनी की तरह फटी फटी नज़रों से उसकी तरफ़ देख रही थी। जैसे अगले ही क्षण उसके प्राण खेंच लेगी। इतने में हत्यारे ने क़हर में आकर एक ज़ोर का थप्पड़ मुग़लानी के मुंह पर जड़ दिया और उस पर दहसर की तरह छा गया। मुग़लानी मन मन भारी गालियाँ देती हुई अपना धर्म सत्त बचाने के लिये उससे जूझ रही थी।

हत्यारा एक एक करके उसके कपड़े उतार रहा था। उसने उसका दुपट्टा छीन कर नीचे फेंक दिया था और अब उसका हाथ मुग़लानी की चोली की तनियों पर था।

"कुत्ते, कमीने, तेरा नाश हो। तेरा कुछ न बचे। मर जाये, सूअरों के जन्में !"

हत्यारे ने मुग़लानी की चोली की तनियां नोंच लीं थीं और उसकी चोली को कमरे के एक कोने में फेंक दिया था।

मुग़लानी अपने नाखूनों से उसका मुंह सिर नोच रही थी। एड़ियों से मार रही थी। लेकिन हत्यारा एक दैत्य की तरह उसके ऊपर गिरा हुआ था। अब मुग़लानी ने ग़ौर से उसके चेहरे की तरफ़ देखा।

यह तो यूसफ़ था, जिसके साथ कई बरस पहले उसका निकाह हुआ था। यूसफ़ ही था, वही माथा, वहीं सघन भौंवें भागते हुए ख़रग़ोश की तरह झुके वही कान, वही लंबा तीखा नाक, गोरा चिट्टा। और मुग़लानी की साँस जैसे रुक गई। वह हर साँस के साथ जैसे किसी खाई में उतरती जा रही थी, इसी वक्त यूसफ़ ने आगे बढ़कर उसे अपनी बाहों में जकड़ लिया।

बेशक मुग़लानी ने उसे पहचान लिया था, लेकिन यूसफ़ ने उसे नहीं पहचाना था। मुग़लानी बदल भी तो कितनी गई थी।

बेबस, मुग़लानी ने जब देखा कि और कोई चारा नहीं था तो उसने हत्यारे को उसके नाम से पुकारा- यूसफ़ !

हत्यारा चौंक कर उठ बैठा, मुग़लानी के चेहरे की तरफ ग़ौर से देखने लगा। इस औरत को उसका नाम कैसे मालूम था ? अरे यह तो बरकते थी। अभी तक उसके निकाह में थी। इसने उसे तलाक का मौक़ा ही नहीं दिया था। न खुद कभी तलाक के लिये कहा था। और अपना घरबार छोड़ कर न जाने कहाँ लोप हो गई थी।

चारपाई पर बैठे वे दोनों एक दूसरे की तरफ़ देख रहे थे। मुग़लानी की साँस एक धौंकनी की तरह चल रही थी। उसने अपनी नग्नता को अपनी बाहों से ढंक लिया था।

बहुत देर तक स्तब्ध से हुए वे एक दूसरे की तरफ़ देखते रहे। मुग़लानी पसीने से तर हो रही थी। यूसफ़ पसीने से तर हो रहा था। उसकी पाँचों की पाँचों उँगलियां मुग़लानी के एक गाल में उतर गई थीं। यूसफ़ का अपना चेहरा मुग़लानी के नाखूनों से लहू लुहान हुआ पड़ा था। उसके कंधों पर, बाहों पर, छाती पर मुग़लानी ने खरौंचें मारी हुई थीं।

इतने में मुग़लानी ने बाँह बढ़ा कर नीचे ज़मीन पर पड़े अपने दुपट्टे को उठाकर

अपनी नग्नता ढंक ली। यह देखकर यूसफ़ उठा और उसने उसकी चोली उसे लाकर पकड़ा दी। मुँह से एक शब्द निकाले बग़ैर वह चोली पहनने लगी। यूसफ़ चुप था। मुग़लानी चुप थी।

35

लाहौर के अपने आँगन की गुनगुनी गुनगुनी धूप में बैठी बरकते रामदास पुर के उस दिन की नाटकीयता को याद कर रही थी।

उसके ओंठ सूख रहे थे। उसने चौके में रखे मटके पर रखी टास भर कर पानी पिया। प्याला में कुछ पानी बचा था, यूसफ़ ने उसके हाथ से प्याला पकड़ लिया और एक ही घूंट में ख़ाली कर दिया। यह देखकर मुग़लानी ने फिर प्याला भर कर उसकी तरफ़ बढ़ाया। यूसफ़ ने पानी पिया। बचे हुए पानी को फेंकने की बजाये मुग़लानी ने प्याले को मुंह से लगाकर घूँट भर लिया।

ऐसे में अचानक मुग़लानी को इस बात का एहसास हुआ कि तेजी, सुंदरी और अमन के साथ तो उसने ऐसा कभी नहीं किया था। उनके यहाँ रहते उसे कितने दिन हो गये थे। एक ही कटोरे में उसने किसी के साथ पानी नहीं पिया था।

यह इस्लाम का भाईचारा था। हर अहले सुन्नत दूसरे अहले सुन्नत का भाई होता है। उसका अंग अंग जैसे सरशार हो उठा हो।

मुग़लानी ने एक नज़र सामने खड़े हृष्ट पुष्ट मर्द की तरफ़ देखा। लगता था कि अगर वह दीवार को धक्का देता तो वह ढेरी हो जायेगी और सहसा मुग़लानी के मन में आया कि वह उसे अपनी बाँहों में लेकर जोर से भींच डाले। पीछे गाँव में उनकी गली में एक सांड घूमा करता था। उसका जहाँ जी करता, मुंह मार लेता, कोई उसे मना नहीं कर सकता था।

इस बार जब मुग़लानी ने उसकी तरफ़ देखा, यूसफ़ ने उसे अपनी बाँहों में भर लिया। उसके ओंठ इसके ओंठों पर थे। जैसे कोई बांध टूटता है, सागर की लहरें एक दूसरे के साथ टकराती हैं, थोड़ी ही देर में यूसफ़ से लिपटी मुग़लानी सामने पलंग पर ढेरी हो गई।

काफ़ी देर बीत गई।

"यूसफ़ !" मुग़लानी चहकी।

"बरकते !" यूसफ़ ने जैसे आधी नींद में गोशा किया।

दोपहर होने लगी थी। दीवान में जुड़े लोग किसी वक्त भी लौट सकते थे। बाहर गली में एक लाश पड़ी थी। हत्यारा साथ वाले घर में अपनी बीबी की बाहों में मदहोश पड़ा था।

उसे वहाँ से निकल जाना चाहिये था। किसी वक्त भी कुछ हो सकता था। उसे इस तरह खिसकता देख कर मुग़लानी भी उसके साथ हो गई। उसकी गठरी तो पहले से ही बंधी हुई थी। लेकिन जब वे बाहर निकले तो देखा, जिस औरत का यूसफ़ ने गला घोंटा

था, वह कहीं भी नहीं थी। यह तो और भी अनर्थ हो गया था। और वे फ़ौरन वहाँ से ग़ायब हो गये।

जहाँ तक मुग़लानी का संबंध था, फ़र्क सिर्फ़ इतना था कि गोईंदवाल जाने की बजाय वह लाहौर आ पहुंची थी। उसने अपने बेटे कमाल की भी इन्तज़ार नहीं की थी।

सरकारी अहलकार यूसफ़ के साथ वह ख़ुश थी। बहुत ख़ुश। उसकी पहली बीवी बिगड़ी हुई औरत थी। इतने साल उसने जीभर कर उसे खज्जल ख़्वार किया था। कभी उसकी कोई फ़र्माइश होती, कभी कोई। मज़ाल है जो उसे चैन से बैठने दे। और कुछ नहीं तो बीमार बन कर अपने मर्द को दौड़ाती रहती थी, कभी किसी हकीम के पास और कभी किसी वैद के पास। बेचारा यूसफ़ फ़कीरों के आस्तानों पर, दरगाहों की दहलीज़ों पर जा जाकर मन्नतें मांगता रहता। हाथ जोड़ता रहता। रामदासपुर भी वे लोग इसी चक्कर में गये थे। बजाय इसके कि वह सत्संग में शामिल होती, गुरु महाराज के आगे हाज़िर होती, उनसे असीस लेती, वह सराय में बैठी दिन रात हुक्का पीती रहती थी। यूसफ़ उसकी चिलमें भर भर कर थक जाता था। उस दिन गली में से गुज़रते हुए जब उसने यूसफ़ के साथ बदतमीज़ी की तो यूसफ़ से रहा न गया, वह क़हर में आकर आगे बढ़ा और दांत पीसते हुए उसने उसका गला घोंट दिया। उसकी समझ में ख़ुद नहीं आ रहा था कि उस वक्त उस पर कौन-सा जिन्न सवार हो गया था। सुबह से उसके साथ पंगा लेकर बैठी थी कि मैं सत्संग में नहीं जाऊँगी। अगर ऐसा ही करना था तो लाहौर से आई ही क्यों थी ? यहां पहुंच कर उसने अपना इरादा बदल लिया था। कहने लगी कि किसी काफ़िर के दरबार में मैं नहीं जाऊँगी। टुच्चे टुच्चे मलंगों और मौलानों से तावीज़ बनवाती फिरती थी, झाड़ फिराती रहती थी और गुरु महाराज के सत्संग में शामिल होने के लिये तैयार नहीं हो रही थी। इतने सारे ओर लोग नज़दीक और दूर दूर से दीवान में शामिल होने के लिये आये थे, वे क्या कहते होंगे ? बांझ औरत, कभी कोई मर्ज़, कभी कोई बीमारी उसे चिपकी रहती। और इतना टंगार !

बरकते अक्सर बैठी बैठी सोचती रहती, काश ! उसने उस वक्त यूसफ़ की बात मान ली होती तो इतने बरस वह क्यों ख़राब होती रहती ? पराये लोगों की ग़ुलामी क्यों करती ?

अजीब औरत थी। कोई वक्त था, वह नसीम के लिये जान दे सकती थी और आज इसे उनमें से किसी से भी विदा लिये बग़ैर आये कितने दिन हो गये थे और इसने एक बार भी उनमें से किसी को याद नहीं किया। नसीम के नये बेटे का मुंह तक नहीं देखा था। अब तो यह दिन रात उसी की इन्तज़ार में रहती कि वह कब यूसफ़ के बच्चे की मां बनेगी। एक फ़िक्र इसे बेशक लगी रहती। साहिबज़ादा अर्जन देव जी लाहौर आ रहे थे- क्या पता आ भी चुके हों - कहीं उनके साथ अमन न आ गया हो। लेकिन लाहौर शहर इतना बड़ा है, कोई ज़रुरी नहीं कि उनकी भेंट हो जाये।

सरकारी दरबार में अपने रसूख़ के बल से यूसफ़ को अपनी पहली बीबी के मामले

को रफ़ा दफ़ा करने में कोई दिक्कत पेश नहीं आई। न जाने कहां ग़ायब हो गई थी। सभी कहते थे कि उसका दिमाग़ ख़राब था। और फिर जो भी उसकी नई बीवी को देखता, उसका दीवाना हो जाता। इस्लाम के बारे में उसकी वाकफ़ीयत ख़ास तौर पर लोगों को उसका दीवाना बना देती और फिर सुंदर भी वह कितनी थी। जब से वह दोबारा बरकते कहलाने लगी, वह मुग़लानी नहीं रही थी, उसका व्यक्तित्व और भी निखर आया था।

अलग घर का एकान्त, नौकर चाकर, अड़ौसी पड़ौसी और फिर लाहौर शहर की रौनक़ बरकते को जैसे नसीम, शैली, अमन, सुंदरी सब भूल गये थे। उसने तो कमाल को भी कभी याद नहीं किया था। न ही सुमन के लिये ही कभी उदास हुई थी। उसकी यह पुरानी आदत थी, जिस तरफ़ लगती, उधर ही बह जाती।

उधर जब शैली और नसीम को मुग़लानी के इस तरह ग़ायब हो ज़ाने की ख़बर मिली तो वे बहुत परेशान हुए। नसीम की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। अमन और सुंदरी को तो दीवान में बैठे ही आशंका होने लगी थी कि वह औरत कोई हरकत करने जा रही थी। भरे हुए दीवान में से भोग पड़ने से पहले ही उसका यूं उठकर चले जाना हर किसी को अजीब सा लगा था।

बस एक तेजी थी जिसे मुग़लानी की कमज़ोरी का कुछ एहसास था। जब भी उसकी बात छिड़ती तो तेजी हमेशा यही कहती, उसे तो उसका इस्लाम खींच कर ले गया है। और इसका सबूत थी यूसफ़ की फतूही, जो उनके कमरे में रह गई थी। फतूही की एक जेब में उसकी तस्बीह थी। हरे रंग के मोतियों की तस्बीह जो किसी ऐरे ग़ैरे की नहीं हो सकती थी। उठते बैठते, तेजी यही कहती उसे आकर उसका मुणस ले गया है। वह अपने टिकाणे पर पहुँच गई होगी।

"दुष्ट अपने बेटे को भी पीछे छोड़ गई है।" अमन कहता था, "यह कैसी माँ है?"

"उसने पहले भी तो कई बरस कमाल को मुँह नहीं लगाया।" सुंदरी उसे याद दिलाती "इस औरत का कुछ ठिकाना नहीं, कोई भरोसा नहीं; जिधर मुँह किया उधर ही चल पड़ी।"

"कभी गुरु महाराज का, बाबा नानक के गुण का गुणगान करते उसका मुंह नहीं थकता था, कभी अपने इस्लाम को छाती से लगाये नमाज़ रोज़ों में खज्जल होती रहती थी।"

"यह बात नहीं। मुग़लानी तबियत की चटख़ोरी थी। जहाँ भी कोई अच्छी चीज़ देखती, झट उसे अपना लेती। अगर उसे पाक कुरान ज़बानी याद था तो साथ ही ढेरों गुरबाणी भी कंठसथ थी।" अमन हमेशा मुग़लानी की वकालत करता था।

"तुझे तो अपनी बीवी के सिवा हर औरत फ़रिशता लगती है।" सुंदरी ने अमन को छेड़ा।

"क्योंकि मेरी औरत देवी है।" अमन ने सुंदरी की तरफ़ लाडभरी नज़रों से देखते हुए कहा।

''लेकिन मैं आपको लाहौर नहीं जाने दूंगी ।'' सुंदरी फ़ौरन सावधान हो गई ।

''मैंने कहा है न, अगर मेरा लाहौर जाना ज़रूरी हुआ तो मैं तुझे साथ लेकर जाऊँगा।'' अमन ने उसे हौसला दिलाया ।

36

रामदासपुर से निकलते ही मुग़लानी में एक तरह से गुरु रामदास और उनके सिक्खों से जैसे अपने आपको अलग कर लिया था । यह था जो उसने पाया था, वह मुग़लानी से फिर बरकते बन गई थी । फिर अपने घरबार वाली खाते पीते, सरकारी दरबार में प्रतिष्ठित एक अधिकारी की बीवी । लाहौर में यूसफ़ एक हवेलीनुमा घर में रहता था । नौकर चाकर थे, आदर सम्मान था ।

शुरु में कुछ दिन कमाल की याद उसे परेशान करती थी, लेकिन अब जब दोबारा उसे बच्चा होने वाला था, तो फिर कमाल के ख़्याल को वह फिर मौलवी के साथ जोड़ने लगती, ज़लील मौलवी !

दिन ब दिन वह लाहौर शहर की तड़क भड़क में अपनी निदामत के, ग़रीबी के, ग़ुलामी के दिन भूल रही थी । अड़ौसी पड़ौसियों के साथ, दोस्तों रिश्तेदारों के साथ, उठने बैठने में, आये गये की ख़ातिर करने में उसके दिन मज़े से बीतने लगे ।

यूसफ़ कितना अच्छा पति था । उसका इतना ख़्याल रखता था और यह खटका भी कि उसकी पहली बीवी जन्नत कहीं आ न टपके दूर होता जा रहा था ।

''कहीं डूब मरी होगी ।'' उसका ज़िक्र आते ही यूसफ़ कहता और वहीं बात ख़त्म कर देता । सब जानते थे कि उसकी दिमाग़ी हालत ठीक नहीं थी । उसके मायके वालों को भी इसका एहसास था । शादी से पहले भी कभी कभी उसे पागलपन के दौरे पड़ते थे । उन्होंने शुक्र मनाया था कि यूसफ़ उसके साथ निकाह करने के लिये तैयार हो गया था । जिस दिन से हकीमों वैदों ने उसे बताया था कि वह बांझ थी, उसकी मानसिक हालत और भी ख़राब हो गई थी । अपने मियाँ को नचाये फिरती । कभी कुछ, कभी कुछ, उसके नख़रे ही ख़त्म होने में नहीं आते थे ।

यूसफ़ ख़ुश था कि उस आफ़त से छुटकारा मिला । और इस लिये भी बरकते सचमुच उसके आँगन में बरकत बनकर आई थी । उसके क़दम पड़ने की देर थी कि उसकी तरक्की के काग़ज़ आगरे भेजे गये । आगरे वालों को क्या एतराज़ हो सकता था । दो चार महीने बाद वहां से मंज़ूरी आ ही जायेगी । और फिर यूसफ़ लाहौर शहर का मुफ़्ती बनने वाला था ।

बरकते ख़ुश थी, बहुत ख़ुश । दुनियां की हर नेमत उसे मयस्सर थी । लेकिन ज्यों ज्यों समय गुज़रता जा रहा था, उसके दिल में एक ख़ालीपन सा महसूस होने लगा । घर के झमेलों में, लाहौर शहर की नई ज़िंदगी के उल्लास में उसकी पांचों वक्त की नमाज़ छूट गई थी । रोज़े रह गये थे । इस्लाम अच्छा था, बहुत अच्छा था, लेकिन काली कमली वाले का काबा इतनी दूर मक्के मदीने में था । गोइंदवाल क्या और रामदासपुर क्या, गुरु महाराज

के श्रद्धालु जब चाहें अपने इष्ट को दर्शन कर सकते थे। साध संगत में जुड़ बैठने का मज़ा बरकते को भी आने लगा था। वह तो चाहती थी जब उसका सर दुखे, दारु की दुकान उसके पड़ौस में हो, शहर के किसी दूर दराज़ हिस्से में उसे न जाना पड़े।

कुछ दिन बीतने पर इस लालसा ने उसके भीतर एक भटकन का रुप ले लिया। उठते बैठते उसे लगता इसका कुछ छिन गया है। जैसे उसकी कोई चीज़ गुम गई है। बैठे बैठे उसके दिल में बेचैनी उठ खड़ी होती। उसका जी चाहता कोई बाँह हो, जो बढ़ कर उसे संभाल ले। उसका मन करता कोई ऐसे ओंठ हों जिनसे वह ऐसे बोल सुने जो उसे कि रोम रोम को सरशार कर दे।

लाहौर में गुरु महाराज के चूना मंडी वाले घर को उन्होंने धर्मशाला बना दिया था, बरकते वहाँ जा सकती थी। लेकिन यह डर कि साहबज़ादा अर्जनदेव जी अब तक ज़रुर आ पहुँचे होंगे , और क्या पता अमन भी उनके साथ आया हो, उसे रोक रहा था। और फिर वह तो जान बूझ कर उन लोगों का साथ छोड़ आई थी। जो गाँव छोड़ दिया, तो फिर उसका नाम लेने से क्या फ़ायदा। कई बार बैठे बैठे कंठस्थ की हुई गुरबाणी के शब्द उसके ओंठों पर आने लगते, लेकिन वह उन्हें सुना अनसुना कर देती।

कुछ दिन और बीतने के बाद बरकते को महसूस होने लगा, बेशक दुनियाँ की हर नेमत उसे मयस्सर थी, मुहब्बत करने वाला मर्द, पेट में बढ़ रहा उसका बीज धन, दौलत, आदर सम्मान, लेकिन जो मज़ा मेहनत करने में आता था, वह मज़ा उससे छिन गया हो। जो मज़ा कीर्तन सुनकर आता था, साध संगत में हाज़िर होकर आता था, वह मज़ा कहीं खो गया हो। जो मज़ा गुरु महाराज के मुखारविंद से बचन सुन कर आता था, वह मज़ा अब कहीं भी नहीं था।

उस स्वाद के लिये बरकते तरसने लगी। कई बार एकान्त में उसकी आँखों से झर झर आँसू टपकने लगते। वह नसीम को भूल सकती थी, नसीम के बेटे सुमन को भूल सकती थी, अपने जाये कमाल को भूल सकती थी, लेकिन कार सेवा का स्वाद उसे नहीं भूलता था। मट्टी खोदना, टोकरी भरना, टोकरी उठा कर सर पर रखना और फिर उसे कहीं दूर जाकर ख़ाली करना और आसपास सैंकड़ों श्रद्धालुओं का भी यही करना, जैसे कोई किसी महानाच में भाग ले रहा हो।

युसफ़ के पास बैठकर बरकते घंटों तक लगातार उस स्वाद का स्वत: ज़िक्र करती रहती। उसका मर्द सोचता, उसकी क़िस्मत में पागल औरतें ही लिखी हैं। पहले एक पगली से उसने जान छुड़ाई थी, अब एक और पगली उसके पल्ले पड़ गई थी।

सोच सोच कर यूसफ़ ने एक तरकीब ढूंढी। उसने मियाँ मीर जी के बारे में सुन रखा था। बड़े पहुँचे हुए सूफ़ी फ़कीर थे। लाहौर शहर से बाहर उनका तकिया था। उस दिन शाम जब यूसफ़ घर लौटा तो बरकते को उखड़ी उखड़ी, उदासीन देखकर उसने मियाँ मीर जी के तकिये पर हाज़िर होने की बात छेड़ी। मियाँ मीर जी के बारे में बरकते ढेर सी जानकारी रखती थी।

''ये वही हैं जिनकी पैदायश सिंध के सीस्तान नाम के शहर में हुई थी ?'' बरकते ने दिलचस्पी दिखाई ।

''क़ादरी सिलसिले के सूफ़ी हैं । उनका असली नाम मीर मुहम्मद था । मियां जीव नाम से भी कई लोग उन्हें याद करते हैं ।'' ''यूसफ़ मियाँ मीर जी के बारे में जानकारी इकट्ठी करता रहा था ।'' उनके वालिद का नाम काज़ी सांईदाता था । दादा का नाम काज़ी फ़ारुकी था । अभी मुश्किल से सात बरस के थे कि उनके वालिद अल्ला को प्यारे हो गये और उनके पालन पोषण की ज़िम्मेदारी उनकी अम्मा के सर पर आ पड़ी ।

और अब बरकते अपने घर वाले को मियाँ मीर जी के बारे में बताने लग पड़ी । एक साँस में बोलती जा रही थी । यूसफ़ हैरानी से उसके चेहरे की तरफ़ देख रहा था :

''पंद्रह बरस की उम्र में मियाँ मीर जी सब कुछ छोड़ छाड़ कर जंगलों, चरागाहों, वीरानों की तरफ़ निकल गये, जहां उन्होंने जुहद* किया चिल्ले काटे । कई बरस इलाही रोशनी की तलाश में दीवानों की तरह घूमते रहे । फिर उनकी मुलाक़ात सूफ़ी फ़कीर शेख़ ख़िजर के साथ हुई । और मियाँ मीर उनके मुरीद बन गये । फिर एक के बाद एक मार्फ़त की मंज़िले लांघते हुए वे कहीं से कहीं पहुँच गये ।''

''लो, तुझे तो मियाँ जी के बारे में सब कुछ पहले से ही पता है ।'' यूसफ़ हैरान होकर कहने लगा ।

''फ़कीरों को फ़कीरों के बारे में वाकफ़ीयत होती है ।'' बरकते अपने अंदाज़ में बोली और यूसफ़ उसका मुंह ताकने लगा । ''हम उनके यहाँ चलेंगे ।'' यूसफ़ की राय थी।

''लेकिन वे तो किसी को पास नहीं फटकने देते ।'' बरकते कहने लगी, ''वे तो हमेशा यही कहते हैं- मारफ़त की राह बड़ी कठिन है । इसके लिये सब कुछ छोड़ना पड़ेगा । बड़े जुहद की ज़रूरत होती है । रब्ब को पाने के लिए इस दुनियाँ की हिरस और उस दुनियां का लालच दोनों छोड़ने पड़ते हैं ।''

''हमें तो उनकी ज़ियारत करने जाना है बस ।'' यूसफ़ कह रहा था ।

''और फिर ज्यों के त्यों कोरे लौट आना है ? ना बाबा मुझे इस तरह की ज़ियारत में कोई दिलचस्पी नहीं ।'' बरकते बोली ।

''और क्या, क्या तू इस दुनियाँ की हिरस और इस दुनियाँ का लालच छोड़ सकती है ?''

''इस दुनियाँ की हिरस तो शायद मैं छोड़ सकती हूं, लेकिन उस दुनियां के लालच के बारे में मैं कुछ नहीं कह सकती ।''

''चलो इतना ही सही । उनके यहाँ हाज़िर होकर देखेंगे ।''

और यह फ़ैसला हुआ कि वे मियां बीवी, हज़रत मियाँ मीर के आस्ताने पर ज़ियारत करने जायेंगे ।

---

* संसार के सुखों का परित्याग करना (अनुवादक)

37

साहिबज़ादा अर्जनदेव जी को लाहौर आये कई दिन हो गये थे। सिहारीमल के यहाँ ब्याह-शादी कभी की हो चुकी थी। बाराती, घराती सब अपने ठिकानों पर कभी के लौट चुके थे। लेकिन गुरु पिता जी का साहिबज़ादे के लिये आदेश था कि वे लाहौर में ही रहें जब तक उन्हें गुरु महाराज की ओर से लौटने का संदेश न मिले। शायद इसलिये कि वहां की धर्मशाला की देखभाल और वहाँ के श्रद्धालुओं को आत्मिक परवरिश की ज़रुरत थी।

चूना मंडी वाले घर में बनी धर्मशाल में दोनों वक्त संगत जुड़ती थी। लोग निहाल होते थे ओर ओर नये श्रद्धालु गुरसिक्खी के मार्ग को अपना रहे थे। इतना बड़ा शहर, साहबज़ादा अर्जनदेव जी ने आकर और भी स्थानों पर साध संगत के जुड़ने का प्रबंध किया था। बारी बारी से वे ख़ुद भी इस तरह के सत्संगों में शामिल होते थे। इस तरह का सत्संग कई बार दुनीचंद की हवेली में भी जुड़ चुका था। दुनीचंद की बेटी शक्ति अपार श्रद्धा से 'आसा दी वार' की 15 पौढ़ियों की हस्तलिपि के दर्शन संगतों को कराती थी। और फिर उन्हें आदर सहित रेशमी रुमालों में लपेट कर रख देती थी। इस मसविदे की नकल अमन द्वारा गुरु महाराज के हाथों में पहले से ही पहुँच चुकी थी।

लाहौर शहर उन दिनों में बेशक राजधानी नहीं था, लेकिन उसका महत्व राजधानी जैसा ही था। रावी के किनारे बसा यह शहर क़दीमी वक्त से सजाया संवारा जाता रहा था। इसकी गलियां, इसके मुहल्ले, इसके बाज़ार, इसके बाग़ीचे, इसके मंदिर और मस्जिदें, इसकी ख़ानगाहें और शिवालय, महल और हवेलियाँ, सबको अपनी ओर आकर्षित करते थे, हर किसी की दिलचस्पी का कारण बन जाते थे। लाहौर के मेले और लाहौर की महफ़िले सैलानियों को बाँध बाँध कर बैठा लेती थीं। तभी तो किसी ने कहा था- वाह रे लाहौर बनाने वाले !

शुरू शुरू में बेशक साहबज़ादा अर्जनदेव जी का लाहौर मे मन लग गया था। श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता था, शाम को वे रावी के किनारे सैर करने निकल जाते थे, नाव की सवारी करते थे, रावी पार बाग़ीचों का आनंद लेते थे। सूफ़ियों-साधुओं से उन का साथ रहता था। सबसे अधिक समय उनका मियाँ मीर जी के आस्ताने पर गुज़रता था। ज्यों ज्यों मियाँ जी के साथ उनका मेल जोल बढ़ रहा था। साहबज़ादा अर्जन देव जी को अपने गुरु पिता की याद और भी परेशान करने लगी। मियाँ मीर गुरु नानक के शैदाई (दीवाने) थे। उन्हें 'मर्दे कामिल' कहकर याद करते थे। गुरु रामदास जी की बाणी में सोज़ और गुदाज़ का अंग उन्हें ख़ासतौर पर मरऊब (प्रिय) था। अक्सर इसका ज़िक्र लेकर गुरु महाराज की बाणी में से तुकें गाने लग पड़ते। उनकी पलकें भीग भीग जातीं। कई बार हाल (तन्मयता) में आ जाते। कहते इस तरह के बोल मेरे मन को झकझोर डालते हैं :

हरि अमृित भिंन्ने लोइणा मनु प्रेमि रत्तना रामराजे।
मनु रामि कसवटी लाइआ कचनु सोविणा ॥
गुर मुखि रंगि चलूलिआ मेरा मनु तनो भिंन्ना ॥

जनु नानकु मुसकि झकोलिआ सभु जनमु धनु धन्ना ॥

...　　...　　...

हरि प्रेम बाणी मनु मारिआ अणीआले अणीआ राम राजे ॥
जिस लागी पीर पिरंम की सो जाणै जरीआ ॥
जीवन मुकति सो आखीअै मरि जीवै मरीआ ॥
जनु नानक सतगुरु मेलि हरि जगु दुतरु तरीआ ॥

...　　...　　...

गुरमुखि पिआरे आइ मिलु मै चिरी विछुन्ने राम राजे ॥
मेरा मनु तनु बहुतु वैरागिआ हरि नैण रसि भिन्ने ॥
मै हरि प्रभु पिआरा दसि गुरु मिलि हरि मन मन्ने ॥
हऊ मूरखु कारै लाईआ नानक हरि कम्मे ॥

...　　...　　...

कोई अणि मिलावै मेरा प्रीतम पिआरा ॥
हऊ तिसु पहि आपु बेचाई ॥1॥
दरसनु हरि देखण कै ताई ॥
क्रिपा करहि ता सतिगुरु मेलहि हरि हरि नामु धिआई ॥

...　　...　　...

रैणि दिनसु परभाति तूहै ही गावणा ॥
जीअ जंत सरबत नाऊँ तेरा धिआवणा ॥

साहिबज़ादा अर्जन देव जी मियाँ मीर की सादगी से भी प्रभावित हुए। हमेशा फ़र्श पर चटाई बिछाकर सोते थे। अपने पास बस एक प्याला और एक घड़ा रखते थे। सरमायदारों और ऊँची पगड़ी वाले जागीरदारों को, जहाँ तक उनका बस चलता, नज़दीक नहीं फटकने देते थे। इसके उलट, ग़रीबों, ज़रुरत मदों के लिये उनके दरवाज़े हमेशा खुले रहते थे। किसी बिगड़े हुए धनवान की पेश की गई किसी सौग़ात को क़बूल न करते। उनका डेरा साधारण जनता के तिल फूल की भेंटों से चलता था।

पिछले कुछ दिनों से साहिबज़ादा अर्जन देव जी बड़े उदास उदास से थे। उन्हें गुरु पिता की याद परेशान कर रही थी। परिवार से बिछुड़े उन्हें कई महीने बीत गये थे। बेशक लाहौर में श्रद्धालु भी थे, सगे संबंधी भी थे, धर्मशाला भी थी, सत्संग भी होता था लेकिन अमृत सरोवर का स्नान और गुरु पिता जी की हाज़िरी में सजे दीवान का आनंद कुछ निराला ही होता था। उठते बैठते उन्हें वह सब कुछ याद आता रहता था।

उस दिन मियाँ मीर जी के डेरे पर भंडारा था। सुबह से कव्वालियां गाई जा रही थीं। एक के बाद एक कव्वाल हाज़िर हो कर अपना हद्दीआ-ऐ-अक़ीदत (नज़राना) पेश कर रहे थे। मारफ़त का एक अजीब समाँ बँधा हुआ था। बीच बीच में पैरों से घुंघरु बांध कर हाल में आये कई मस्त सूफ़ी फ़कीर नाचने लगते थे।

फिर एक कव्वाल ने बाबा फ़रीद की बाणी में से ये सलोक पेश किये :

बिरहा बिरहा आखीऐ, बिरहा तू सुलतानु ॥
फ़रीदा जितु तनि बिरहु न ऊपजै सो तनु जाण मसान ॥
... ...
फ़रीदा तनु सुका पिंजर, थीआ तलीआ खुंडहि काग ॥
अजै सु रबु न बहुडिउ देखु बंदे दे भाग ॥
... ...
फरीदा रती रतु न निकलै जे तनु चीरै कोइ ॥
जो तन रते रब्ब सिउ तिन तनि रतु न होइ ॥
... ...
फ़रीदा रुति फिरी वण कंबिया पत्त झड़े झड़ि पाहि ॥
चारे कुड़ा ढूंढीआं, रहणु किथाऊ नाहि ॥

फिर एक क़व्वाल ने शाह हुसैन की काफ़ी गाई :

दरद विछोड़े दा हाल
नी मैं कीहनूं आखाँ ?
सूलाँ मार दीवानी कीती,
बिरहों पाइआ साडा ख़्याल
नी मैं कीहनूं आखाँ ।
दरद विछोड़े दा हालि ।

उस दिन मियाँ मीन जी के आस्ताने से लौटते वक्त साहिबज़ादा अर्जन देव जी को बार बार गुरु पिता की याद आ रही थी । उनकी पलकें भीगी भीगी जा रही थी, कुछ ही देर बाद उनके ओंठों पर ये बोल थिरक रहे थे :

मेरा मनु लोचै गुर दरसन ताई ॥
बिलप करे चात्रिक की निआई ।
त्रिखा न उतरै शाति न आवै बिनु दरसन सँत पिआरे जीउ ॥१॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई गुरु दरसन सँत पिआरे जीउ ॥

घर लौट कर पहला काम उन्होंने यह किया कि इस शबद को काग़ज पर उतारा और एक सिक्ख के हाथ गुरु महाराज को भेज दिया ।

सचमुच उन्हें अब न खाना अच्छा लगता, न पीना अच्छा लगता । आठों पहर गुरु पिता की याद में वे चुपचुप रहने लगे । जो उन्होंने सोचा था कि उनका भेजा संदेश पढ़ कर उन्हें तुरंत गुरु रामदासपुर बुलवा भेजा जायेगा, ग़लत प्रतीत हो रहा था । गुरु पिता जी की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं थी । अनेक सिक्ख वहाँ से लाहौर आ चुके थे । अक्सर श्रद्धालु लाहौर से गुरु महाराज के दर्शनों के लिये जाते थे और कुछ दिन गुरु के चक रह कर लौट आते थे । कुछ दिन और प्रतीक्षा करके साहिबज़ादा अर्जन देव जी ने एक रूक्के पर यह

चौपदा लिख कर गुरु पिता को भेजा :

तेरा मुखु सुहावा जीउ सहज धुनि बाणी ।
चिरु होआ देखे सारिंग पाणी ॥
धनु सु देसु जहा तूं वसिया मेरे सजण मीत मुरारे जीउ ॥1॥
हउ घोली हऊ घोलि घुमाई गुर सजण मीत मुरारे जीउ ॥2॥रहाउ॥

इस पत्र का भी कोई जवाब नहीं आया। साहिबज़ादा रामदास पुर से लौटने वाले हर सिक्ख के चेहरे की तरफ़ बेकार ही तरसी हुई नज़रों से देखते रहते ।

38

कई महीने बीत गये थे ।

गुरु पिता जी की ओर से लौटने का आदेश अभी तक नहीं आया था। राह देखते देखते साहिबज़ादा अर्जनदेव की आँखें पकने लगीं थी। चार क़दमों की दूरी पर ही तो वे थे। अच्छी सवारी मिल जाये तो कोई पौ फटने पर चलकर रात पड़ने पर गुरदासपुर पहुँच जायें। लेकिन आज्ञाकारी बेटे की मजाल नहीं थी कि ऐसा कर जाये ।

विह्वलता में कभी वे उपवास करते। कभी स्वत: करने लगते। रात रात भर समाधि में लीन रहते। दिन में श्रद्धालुओं की क़तारें लगी रहतीं। किसी की कोई समस्या होती, किसी की कोई और इस तरह उनका मन लगा रहता ।

उधर रामदास पुर से हर तरह की ख़बरें आती रहतीं–गुरु का महल तैयार हो गया था। पृथीचंद और महादेव ने अच्छे अच्छे कमरों पर कब्ज़ा जमा लिया था। शहर बढ़ता बढ़ता कहीं का कहीं जा पहुँचा था ओर ओर लोग नये शहर में आकर बस रहे थे। बाज़ार भरे भरे रहने लगे थे। व्यापारियों की भीड़ें लगी रहती थीं। अरबी घोड़ों और काश्मीरी पश्मीनों का तो कहना ही क्या। अब जब अमृत सरोवर तैयार हो गया था, गुरु के महलों का निर्माण हो चुका था, गुरु महाराज सोच रहे थे कि सरोवर के बिल्कुल बीचों बीच हरिमंदिर स्थापित किया जाये लेकिन इस बारे में अभी उन्होंने अपना मन पक्का नहीं किया था।

उस रात साहिबज़ादे अर्जनदेव जी ने एक अजीब सपना देखा। गुरु पिताजी की तबीयत ठीक नहीं। वे नितांत अकेले पलंग पर पड़े हैं। माता भानी जी कभी महादेव जी को आवाज़ें लगा रही हैं, लेकिन उनकी ओर से कोई जवाब नहीं आ रहा। आधी रात का समय है। और फिर गुरु महाराज बीबी भानी से कहते हैं, अर्जन कहाँ है ? उसे क्यों नहीं बुलाते ? ढेर सारा काम पड़ा है। हरिमंदिर को बनवाना शुरू करना है। अर्जन लाहौरिया होकर रह गया है ।

उनकी आँख खुली तो वे निश्चिंत और ख़ुश थे। यह तो सपना था। और फिर वे सारा दिन, उससे अगले, और कई दिन प्रतीक्षा करते रहे। गुरु पिता का कोई संदेश नहीं आया। जैसे वे उन्हें बिल्कुल भूल गये हों। सबसे छोटे साहिबज़ादे थे, इससे पहले कभी इतने दिनों तक वे माता-पिता से बिछुड़े भी नहीं थे। उस दिन वैराग में आकर उन्होंने एक

और चौपदे का उच्चारण किया :

इक घड़ी न मिलते तां कलिजुगु होता ॥
हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता ॥
मोहि रैणि न विहावै नीद न आवै,
बिनु देखे गुर दरबारे जीउ (३)
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई तिसु सचे गुरदरबारे जीउ ।रहाउ।।

यह शबद उन्होंने जिस गुरसिक्ख के हाथ भेजा, उसे आदेश दिया कि रुक्का केवल गुरु पिता जी को ही पेश किया जाये और किसी को न पकड़ाया जाये । न पृथीचंद, ना महादेव, न और किसी श्रद्धालु को ।

गुरु पिता को स्मरण कराने के लिये साहिबज़ादा अर्जनदेव द्वारा भेजा गया यह तीसरा पत्र था । यही नहीं, वे ख़ुद पत्र वाहक के साथ चल पड़े, बार बार उसे हिदायतें देने लगते । बार बार कहते- "पाती गुरु महाराज के कर कमलों में देनी है और किसी के हाथ नहीं पकड़ाना । और जब तक वे पाती को पढ़ न लें, उनके हजूर में ही खड़े रहना । हो सकता है पाती पढ़ के वे कोई हुक्म दें । उनका फ़र्मान ध्यान से सुनना है । और फिर उन्हीं क़दमों से लौट कर हम तक पहुँचना है ।" बार बार यही ताकीद करने लगते ।

इस तरह उस श्रद्धालु के साथ चलते चलते ढेर सा फ़ासला तय करके वह शहर से बाहर आ गये थे । पत्रवाहक अपने रास्ते चला गया तो साहिबज़ादे ने सोचा क्यों न मियाँमीर जी के भी दर्शन करते चलें । उनका आस्ताना नज़दीक ही था ।

जब वे मियाँमीर जी के पहुँचे, उनकी अर्दल में यूसफ़ और उसकी बीवी बरकते बैठे हुए थे । यूसफ़ को शहर का मुफ़्ती मुक़र्रर किया गया था । आगरे से हुक्म जारी हुए थे । बतौर शुक्राने वे मियाँजी के यहाँ शीरनी पेश करने आये थे ।

साहिबज़ादा जब मियांमीर जी के यहां पहुंचे तो उन्हें दूर से ही देख कर मियां जी उठ खड़े हुए, आगे बढ़ कर साहिबज़ादे के साथ दस्तपंजा लिया और आदर सहित उन्हें अपने साथ भीतर लाये ।

"ये गुरु रामदास जी के साहिबज़ादे हैं ।" मियाँ मीर जी ने शहर के मुफ़ती के साथ साहिबज़ादा अर्जनदेव जी का परिचय कराया । और फिर किसी शार्गिद को आवाज़ देकर उनकी ख़ातिर करने की हिदायत देने लगे । यूसफ़ जहाँ नया नया मुफ़ती नियुक्त हुआ था, इस सारे तकल्लुफ़ को देखकर जलभुन गया ।

उसे भूल कर मियाँजी अब साहिबज़ादा अर्जनदेव जी से बातचीत करने में व्यस्त हो गये थे । बार बार उन्हें कर रहे थे, "कुछ दिन आप हमारे यहां आकर ठहरिये । मुझे आपसे बहुत कुछ हासिल करना है । बाबा नानक की बातें किया करेंगे । हबसे-दम (योगियों की एक क्रिया) के बारे में भी मैंने आपसे बहुत कुछ सीखना है ।"

यूं जलता भुनता यूसफ़ अपनी बीवी को लेकर मियाँ जी के आस्ताने से चला आया।

"यह लड़का साहिबज़ादा कैसे हो गया ?" बाहर निकल कर वह बरकते से पूछने

लगा । वह तो गोइंदवाल और रामदासपुर रह कर आई थी ।

"वाह ! आपको यह नहीं मालूम कि गुरु रामदास अपने आप को "सच्चा पातशाह" कहलवाते हैं ? बरकते ने अपने घरवाले को बताया ।

"क्या मतलब ?" नया नया बना मुफ़ती और गर्म होकर पूछ रहा था ।

"गुरु के सिक्ख गुरु नानक की "पहली पातशाही", गुरु अंगद को "दूसरी पातशाही," गुरु अमरदास को "तीसरी पातशाही" और आज के गुरु रामदास को "चौथी पातशाही" के नाम से याद करते है ।" बरकते अपने इस्लामी अंदाज़ में बताने लगी ।

"इसका यह मतलब हुआ कि ये लोग मुल्क में बग़ावत के बीज बो रहे है । मुग़ल राज में अपना राज क़ायम करने के सपने देख रहे हैं ।"

"इसका फ़ैसला तो मुफ़्ती साहब ने करना है, लेकिन इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि न कर्तारपुर, न खडूर, न गोइंदवाल और न ही अब गुरु के चक में कोई मुग़ल कानून लागू होता है । वहाँ तो गुरु की पातशाही मानी जाती है । उसी का हुक्म चलता है । आपने कभी सुना है कि गुरु के शहर से किसी ने लगान, आबियाना, या तौज़ी बसूल की हो ?"

"यह तो हकूमत के भीतर हकूमत वाली बात हुई" मुफ़्ती यूसफ़ के मुंह से गुस्से में झाग निकल रही थी ।

"आपको यह भी मालूम है कि महाबली अकबर ख़ुद गोइंदवाल तशरीफ़ ले गये थे और ढेर सी ज़मीन गुरु अमरदास जी की बेटी भानी को बतौर तोहफ़े के दे आये थे ।"

"इसका यह मतलब तो नहीं कि ये लोग अपने आप को "सच्चा पातशाह" कहलाने लगें ।"

"और जो असली पातशाह है, वह झूठा पातशाह बन जाये !" बरकते ने ज़हर घोला । वह औरत जो कल तक मुग़लानी की हैसीयत में ग़ुलामी करती थी, एक शाही मुसाहिब की बीवी बन कर ओर की ओर बोली बोल रही थी ।

"अगर खुदा ने चाहिया, मैं इन्हें सीधे रास्ते पर डालूँगा ।"

"बाबा नानक की गद्‌दी बड़े पहुंचे हुए फ़कीरों की गद्‌दी है ।" अगले ही क्षण बरकते को अपने आप से डर लगने लगा । वह गुरु घर के ख़िलाफ़ भला कैसे बोल सकी थी ?

"जो भी हो । हैं तो ये लोग काफ़िर," मुफ़्ती यूसफ़ कह रहा था, "मुझे सरकारी दरबार में इत्तिला देनी होगी ।"

"इस तरह तो आपका रुतबा और ऊँचा हो जायेगा" बरकते जैसे गर्व से कह रही थी ।

39

वही बात हुई । गुरु रामदास जी को जब साहिबज़ादा अर्जुनदेव जी की पाती मिली, उसके नीचे अंग 3 देखकर वे पूछने लगे "पहली दो पातीयाँ कहाँ हैं ?" उन्हें तो पहले

कोई चिट्ठी नहीं मिली थी ।

और खोज करने पर पता चला कि पहली दो चिट्ठीआं पृथीचंद के हाथ आ गई थीं । गुरु महाराज को पेश करने की बजाये उसने उन्हें अपने पास ही रख लिया था ।

पृथीचंद को बुलवाया गया । गुरु महाराज के पूछने पर वह एक दम मुकर गया । झूठ बोलने लगा । ''मैंने तो किसी चिट्ठी को नहीं देखा ।''

घट घट के ज्ञाता गुरु महाराज ने भरी साध संगत में पृथीचंद से एक बार फिर पूछा, ''अर्जन की पहली दो चिट्ठियां कहां हैं ?''

''मुझे बिल्कुल ज्ञान नहीं ।'' पृथीचंद ने फिर ग़लतबयानी की ।

इधर गुरु महाराज नहीं चाहते थे कि पृथीचंद का निरादर हो । उधर पृथीचंद वैसे का वैसे था: गुरु महाराज ने एक सिक्ख को आदेश किया कि गुरु महलों में जाकर पृथीचंद के कमरे की सामने वाली खूंटी से टंगे कुर्ते की भीतरी जेब में जो दो चिट्ठियां रखी हैं, उन्हें पेश किया जाये ।

जैसे जलते हुए गाँव से कोई जोगी निकलता है, पृथीचंद उसी तरह तैश में आकर साध संगत में से निकल गया । और फिर कभी उस ओर रुख़ नहीं किया ।

जब चिट्ठिया लाईं गई, गुरु महाराज साहिबज़ादा अर्जन के माझ राग में लिखे पहले दो चौपदे पढ़कर विभोर हो उठे । लाहौर से जो सिक्ख चिट्ठी लाया था, उसी के हाथ संदेश भेज कर साहिबज़ादे को तुरंत वापिस बुलवा लिया गया ।

चार दिन बीतने पर साहिबज़ादा अर्जन देव गुरु पिता के हजूर में हाज़िर थे । ख़ुश, बहुत ख़ुश । चरण स्पर्श करने के बाद उन्होंने इस चौपदे का उच्चारण किया

''भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ ॥
प्रभु अबिनासी घर महि पाइआ ॥
सेव करी पलु चसा न विछुड़ा जन नानक दास तुमारे जीउ (४)
हऊ घोली जीउ घोलि घुमाई जन नानक दास तुम्हारे जीउ ॥

(माझ महला ५ चौपदे घर १)

इस घटना के बाद चारों तरफ़ चर्चा होने लगी कि गुरगद्दी सबसे छोटे साहिबज़ादे अर्जनदेव जी को बख़्शी जा रही थी । सभी कहते कि उनमें गुरु बाबा नानक का प्रकाश हो रहा था, जैसे वे गुरु अँगद, गुरु अमरदास और फिर गुरु रामदास जी में अपनी जोत जगाते आ रहे थे ।

भ्रष्टबुद्धि पिृथी चंद लाहौर जा पहुँचा । चूना मंडी वाली धर्मशाला में उसने डेरा जमा लिया । जिस दिन उसने सुना कि गुरु अर्जनदेव जी को विधिवत गुरगद्दी पर स्थापित कर दिया गया था, उसने अपने आपको गुरु होने का ऐलान लाहौर में कर दिया । संगतों को कहता फिरता कि पिछले कई बरसों से गुरु मर्यादा को तो वही जारी रखे हुए था । अमृतसरोवर की स्थापना तो उसी ने की थी । गुरु का महल बनवाने में जो भी रक़म ख़र्च हुई थी, उसने अपनी जेब से की थी । महल उसका था । उससे अन्याय करके उसे बेदख़ल

कर दिया गया था ।

अभी चार दिन भी नहीं बीते थे कि ख़बर आई कि गोइंदवाल में गुरु रामदास जी ज्योति ज्योत समा गये थे । यह सुनकर पृथीचंद और भी कलप उठा । तुरंत गोइंदवाल जाने की बजाये, वह लाहौर शहर के मुफ़्ती के पास शिकायत लेकर गया कि उसके पिता गुरु रामदास को उसके सबसे छोटे बेटे भाई की ग़ैर हाज़िरी में ख़ुद गुरगद्दी संभाल ली है ।

उस शाम घर लौट कर यूसफ़ ने इस क़िस्से का ज़िक्र अपनी बीवी बरकते से किया । उसने सुना तो क़हकहा मारकर हंसने लगी । हँसती जाये, हंसती जाये । और फिर हँसती हँसती वह रोने लग पड़ी । छल छल आँसू रो रही थी । यूसफ़ हक्का बक्का उसके मुंह की तरफ़ देख रहा था । आँसू थे कि थमने में ही नहीं आ रहे थे ।

उसके होने वाले बच्चे की माँ, इसे हो क्या रहा था, यूसफ़ की समझ में कुछ नहीं आ रहा था ।

और फिर बरकते अपने आप गाने लग पड़ी :

दिनसु चढ़ै फिरि आथवै रैणि सबाई जाइ ॥
आव घटै नरु ना बुझै निति मूसा लाजु टुकाइ ॥
गुड़ु मीठा माइआ पसरिआ मनसुखु लगि मखी पचै पचाई ॥ २॥
भाई रे मै मीतु सखा प्रभु सोइ ॥
पुतु कलतु मोहु बिखु है अंति बेली कोइ न होइ ॥

(सिरी रागु महला ४)

कभी रोती, कभी हँसने लगती । कभी गाने लगती, कभी चुप चाप घंटों तक पत्थर बनी बैठी रहती । न रांधने की होश । न पकाने की होश, न खाने की सुध, ना पीने की सुध ।

यूसफ़ परेशान था । परेशान होने वाली तो बात ही थी । उसके पेट में तीन महीने का बच्चा था । ऐसे हालात में तो कुछ भी हो सकता था । और उनके घर हकीम और वैद्य आने लगे । सभी सर पटक कर रह गये थे । किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था । मुफ़्ती की बेग़म का पागलपन दिन बदिन बढ़ता जा रहा था । उसकी हालत और भी बिगड़ती जा रही थी । फिर शहर का सबसे बड़ा वैद्य आया । पर्दे के पीछे बैठी बरकते को वैद्य ने सूत का एक धागा दिया । धागे को बरकते की कलाई के साथ बांध दिया गया । धागे का दूसरा सिरा वैद्य जी के हाथ में था, जिससे उन्होंने मुफ़्ती की बेगम की बीमारी की तशख़ीस करनी थी । बरकते ने यह सब कुछ देखा और सूत के धागे को खेंच कर परे फेंक दिया । पर्दा हटाकर वैद्य जी से कहने लगी– ''आपसे क्या पर्दा है । मैं बाबा नानक की दीवानी हूँ । मेरा पीर गुरु नानक है । गुरु अंगद, गुरु अमरदास, गुरु रामदास और अब गुरु अर्जन, इन सब में जोत बाबा नानक की है ।''

''बाबा नानक शाह फकीर
हिंदू दा गुरु मुसलमान दा पीर ।''

''लेकिन वे मुझे अपने गले क्यों नहीं लगाते ? मुझे अपना क्यों नहीं बनाते ? मैं

उनके दर पर सिजदे करती करती थक गई हूँ, हार गई हूँ। मेरी रातें तारे गिनते बीत जाती है, आंखें पकने लगती हैं उनकी राह ताकते ताकते।"

यह कहते हुए बरकते की आँखों से छल छल आँसू बहने लगे। जैसे कोई धारा बह निकली हो। आँसू थे कि थमने में नहीं आ रहे थे। वैद्य जी हार कर चल पड़े। बाहर मर्दानख़ाने में जाकर मुफ़्ती से कहने लगे, "इसका एक ही इलाज है, बेग़म को गुरु के चक भेज दिया जाये।"

यह कैसे मुमकिन था ? यूसफ़ अब शहर के सबसे बड़े हकीम को ले आया। सफ़ेद दाढ़ी वाले बजुर्ग हकीम साहब को साथ एकान्त में बैठी बरकते कहने लगी– "आप क्यों बेकार अपना वक्त बर्बाद कर रहे हैं ?" मुझे कोई बीमारी नहीं। मुझे तो बस यहीं फ़िक्र खा रही है कि ये लोग जो करतारपुर, खडूर, गोइंदवाल और अब रामदासपुर आकर बसे हैं ये हमारे भाईचारे का सत्यानास कर देंगे। इन्होंने बाबर को वर देकर बेवकूफ़ बनाया। हुमायूँ को वाद्रा करके टाल दिया। अब अकबर बादशाह से चिकनी चुपड़ी बातें करके उसका मुँह बंद कर दिया है। कभी किसी ने सुना है कि फ़कीर का महल हो। गुरु के चक में उन्होंने महल बनवा लिया है। गोइंदवाल में भी इनके तीसरे गुरु महल में रहते थे। चौथे गुरु अपने आप को "सच्चा पातशाह" कहलवाते हैं। और अब सुनने में आया है, पांचवें गुरु साहिब गुरु के चक में अपनी राजधानी स्थापित करने जा रहे हैं। इसका नाम अमृतसर होगा। उनके पिता उन्हें यह राजधानी क़ायम करने को कह गये हैं। अपनी राजधानी ! अपना पातशाह ! अपने महल ! और फिर हम तो ग़ुलाम होकर रह जायेंगे। मेरा मियाँ शहर का मुफ़्ती ज़रूर है लेकिन उसे इस बात की बिल्कुल समझ नहीं। मैं उसे समझा समझा कर थक गई हूँ।.......

बरकते कितनी देर इस तरह बोलती जा रही थी। बोलते बोलते उसकी आँखें तर हो गईं।

40

मुफ़्ती की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। सोच सोच कर उसने फ़ैसला किया कि वे बरकते को मियाँमीर जी के पास ले जायेगा। क्या पता वह ही उसके पागलपन का उपाय बता सकें। एक ओर वह गुरु घर के ख़िलाफ़ बोलती थी दूसरी तरफ़ अपने आप को गुरु घर की अनुयायी बताती थी।

वे मियाँमीर जी की दरगार पर हाज़िर हुए। उन्हें बताया गया, कि मियाँमीर जी तो उसी दिन तड़के अमृतसर के लिये चल चुके थे। गुरु अर्जनदेव जी ने सिक्ख क़ौम के काबे हरिमंदिर साहब की नींव का पत्थर रखने के लिये एक मुसलमान फ़कीर को बुलाया था।

ये सुनकर कभी मुफ़्ती बरकते की ओर देखता, कभी बरकते अपने मर्द की ओर देखती।

"ये कैसे लोग है ?" उनकी आंखों में यह सवाल चित्रित था। उनकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था।